University Grants Commission, New Delhi

Sponsored

Major Research Project

Project Title

"Hindi-Marathi Jivaniyon main Chatrapati Shivaji, Mahatma Fule, Rajrshi Shahu, Dr. Babasaheb Ambedkar ka Charitra aur Samajik Prabhav"

Subimetted by

Dr. Sudhakar Shendge

Professor,

Department of Hindi

Dr. Babasaheb Ambedkar Marathwada University,

Aurangabad – 431004 (M.S.)

2021

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

प्रतिज्ञापत्र

मैं प्रो. सुधाकर शेंडगे, हिंदी विभाग, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, प्रतिज्ञापूर्वक निवेदन करता हूँ कि, **''हिंदी-मराठी जीवनियों में छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र और सामाजिक प्रभाव''** इस विषय पर प्रस्तुत बृहद शोध परियोजना मेरी अपनी मौलिक कृति है। इस विषय पर अन्य किसी भी विश्वविद्यालय में शोधकार्य नहीं हुआ है। इस परियोजना को अन्य किसी भी संस्था के अनुदान के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है।

स्थान :

तिथि :

प्रो. सुधाकर शेंडगे

हिंदी विभाग,

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा

प्राक्कथन

महापुरुष अक्सर विपरित परिस्थितियों की ही देन होते हैं। छत्रपति शिवाजी का समय १७ वीं सदी का है। म. जोतीराव फुले तथा राजर्षि शाहू महाराजा को १९वीं शती ने जन्म दिया तो नई सदी के महानायक डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर २०वीं सदी की देन है। छत्रपति शिवाजी महाराज ने राजनीतिक परिवर्तन के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन की दिशा में काम किया। १९वीं सदी में महात्मा फुले ने अज्ञान तथा गुलामगिरी की शृंखलाएँ तोड़ने की दृष्टि से एक रास्ता तैयार किया और राजर्षि शाहू राजा ने यही रास्ता प्रशस्त करते हुए अस्पृश्योद्धार और सामाजिक समता की दिशा में अपना अनमोल योगदान दिया। डॉ. आंबेडकर का जन्म पिछड़े समाज में होने के कारण दीन-दलितों के दु;ख-दर्द को स्वयं भोगा था। अत: सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से उन्होंने अपने पूर्ववर्ती महापुरुषों छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू द्वारा बताये हुए रास्ते पर चलकर संविधान द्वारा दलित, पीडित, अल्पसंख्य, किसान-मजदूर, स्त्री शूद्रादि को हक़ और अधिकार प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ये चारों भी भारतीय समाज के प्रेरणा पुरुष हैं। इतिहास साक्षी है कि समाज निरंतर महापुरुषों को याद करता रहता है। उपरोक्त महापुरुषों ने महाराष्ट्र की पावन भूमि में जन्म लिया है लेकिन उन्होंने तमाम भारतीय समाज के लिए कार्य किया है। समूचे भारतीय समाज पर इन महानायकों का प्रभाव देखने को मिलता है। ये प्रभाव राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक-सांस्कृतिक, शैक्षिक और साहित्यिक आदि हरेक क्षेत्र पर दिखाई देता है।

प्रेरणा पुरुष के चरित्र से साहित्यिक प्रभावित होकर इन महानायकों के चरित्र लिखकर समाज के सामने प्रस्तुत करते हैं ताकि नये चरित्र निर्माण हो सके। एक महान चरित्र समाज का आदर्श बनकर कई नये चरित्रों को प्रेरणा देने का काम करता है। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र तथा कार्य भारतीय समाज को निरंतर प्रेरणा देते आया है। इन चारों चरित्रों से समाज इतना प्रभावित

है कि देश-विदेश में इनकी जयंती बड़े धूमधाम से मनायी जाती है। अनेक सामाजिक आंदोलनों को प्रेरणा देने का काम इन्हीं महापुरुषों ने किया है। हमारी राजनीति भी इन्हीं महापुरुषों से प्रभावित है। सांस्कृतिक दृष्टि से विचार किया जाय तो इन महापुरुषों पर अनेक नाटक, सिनेमा, गीत, धारावाहिक बनाये गये हैं। शिक्षा क्षेत्र में भी इन्हीं को आदर्श मानकर इनके नाम से कई शिक्षा संस्थान शुरु किये गये हैं। इनकी विचारधारा, इतिहास पाठ्यक्रम का हिस्सा है। साहित्य की हर विधा में इन चरित्रों पर खुलकर लेखन किया गया है। इन चारों महानायकों के चरित्र को पढ़ते समय, देश की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक परिस्थिति को देखकर इन महापुरुषों की जयंती-पुण्यतिथि के आयोजन को समझते हुए इन चरित्रों से प्रभावित होकर ही मैंने, ''हिंदी-मराठी जीवनियों में चित्रित छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का चरित्र और सामाजिक प्रभाव'' इस विषय को अपना शोध विषय बनाकर बृहद शोध परियोजना के अंतर्गत पूर्ण किया है।

इस विषय को हमने अपनी सुविधा के लिए सात अध्यायों में विभाजित कर प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत बृहद शोध परियोजना के प्रथम अध्याय ''हिंदी-मराठी जीवनी साहित्य का विकास'' में हिंदी और मराठी दोनों भाषाओं में जीवनी साहित्य की जो परंपरा है, इस बात का विवेचन-विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ'' में इन चार महापुरुषों को किन परिस्थितियों ने जन्म दिया है, इस बात की पड़ताल की गयी है।

तृतीय अध्याय ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण'' में इन महानायकों के चरित्र का उनकी चारित्रिक विशेषताओं के साथ मूलयांकन किया गया है।

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा आंबेडकर भारतीय समाज के महानायक हैं। देश और समाज के लिए इनका जो अनमोल योगदान है, इसे भुलाया नहीं जा सकता। उनके सामाजिक योगदान को रेखांकित करने का काम चतुर्थ अध्याय ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक योगदान'' में किया गया है।

पंचम अध्याय ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव'' के अंतर्गत सबसे पहले इन महानायकों के सामाजिक प्रभाव का मूल्यांकन किया गया है। उसके बाद इनके प्रभाव से हमारी राजनीति किस तरह से प्रभावित है, इस बात का विश्लेषण किया गया है। सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा साहित्यिक क्षेत्र पर भी किस प्रकार इन लोगों की गहरी छाप दिखाई देती है, इस बात का मूल्यांकन इस अध्याय में किया गया है।

षष्ठ अध्याय में ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर के प्रभाव का मूल्यांकन'' करते हुए कई नये तथ्य समाज के सामने प्रस्तुत किये गये हैं। उपरोक्त चार महापुरुषों का किस तरह से राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रभाव देखा जाता है, उसका हर क्षेत्र की दृष्टि से मूल्यांकन करते हुए निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये हैं।

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय चरित्र हैं। राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इनकी परख और पहचान है। महापुरुष के चरित्र और विचार समाज के लिए निरंतर प्रेरणादायी होते हैं। उपरोक्त चारों महानायक और उनके विचार वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कितने प्रासंगिक हैं, इस बात की छान-बीन सप्तम अध्याय ''छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर की प्रासंगिकता'' में की गयी है। अंत में उपसंहार के अंतर्गत शोध विषय के सभी अध्यायों का शोध सार और शोध-परियोजना के समन्वित निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये हैं। समाजशास्त्रीय,

सर्वेक्षणात्मक, तुलनात्मक, विश्लेषणात्मक, विवेचनात्मक आदि पद्धतियों के आधार पर प्रस्तुत शोध-कार्य संपन्न किया गया है।

प्रस्तुत शोध-परियोजना के अंतिम निष्कर्ष सामाजिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण निष्कर्ष हैं। यह शोध परियोजना छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर के चरित्र, विचार, कार्य से संबंधित अत्यंत महत्वपूर्ण और नये तथ्य प्रस्तुत करती है। मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि, इस शोध-परियोजना द्वारा किया गया शोध-कार्य समाज तथा इस दिशा में काम करनेवालों के लिए दिशादर्शक सिद्ध होगा।

इस शोध-विषय को मान्यता देकर उचित धनराशि उपलब्ध करानेवाले विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सभी पदाधिकारियों के प्रति में कृतज्ञ हूँ। यह परियोजना जिनके माध्यम से पूर्ण की गयी वह डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद के पूर्व कुलपति प्रो. बी. ए. चोपडे, वर्तमान कुलपति प्रो. प्रमोद येवले, पूर्व प्र-कुलपति प्रो. प्रवीण वक्ते, वर्तमान प्रति कुलपति प्रो. श्याम सिरसाठ, कुलसचिव डॉ. जयश्री सूर्यवंशी, वित्त एवं लेखाधिकारी राजेंद्र मड़के, लेखा विभाग के सभी कर्मचारी आदि के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद के हिंदी विभाग के पूर्वाध्यक्ष प्रो. माधव सोनटक्के, डॉ. गणेशराज सोनाळे, स्व. प्रो. संजय नवले, विभागाध्यक्षा डॉ. भारती गोरे, डॉ. संजय राठोड, डॉ. भगवान गव्हाडे, कार्यालयीन कर्मचारी श्री पवार, शिल्पा जिरे, श्री मस्के, श्री बचके आदि का भी मैं आभारी हूँ।

इस परियोजना के दरमियान अनेक लेखकों, चिंतकों, विद्वानों से चर्चा करते समय उनसे अत्यंत बहुमोल सुझाव मिले, उन सभी महानुभावों के प्रति मैं अपना श्रद्धाभाव रखते हुए नतमस्तक होता हूँ।

इस परियोजना के दरमियान मैं अपने घरवालों को ना समय दे पाया हूँ और ना ही अपनी जिम्मेदारियों को निभा पाया हूँ, यह सारा जिम्मा जिसने अपने कंधों पर उठाकर उसका निर्वहन किया वे मेरी अर्धांगिनी सौ. संध्या, पुत्र कॅप्टन प्रणव, इंजि. प्रतीक को भी साधुवाद देता हूँ। मेरा जीवन संवारकर मुझे यहाँ तक पहुँचानेवाली और मुझ पर सदा स्नेह बरसानेवाली पूज्य माताजी राजकवरादेवी तथा पूज्य पिताश्री स्व. रामभाऊ शेंडगे के चरणों में लीन होता हूँ। मेरे छात्र-मित्र डॉ. गोरख काकडे ने अपना अनमोल सहयोग दिया है, उनके प्रति आभार।

सर्वेक्षण तथा प्रूफ रीडींग के कार्य में अपना अनमोल सहयोग देनेवाले विभाग के छात्र डॉ. अनंत वडघने, संदीप चाळक, दत्ता किटाळे, गणेश दिवटे, योगेश राखुंडे, रामेश्वर वाढेकर, समाधान फदाट, मारुती शिंपले, भागीनाथ वाकळे आदि के प्रति मैं आभारी हूँ। इस परियोजना को मूर्त रूप देनेवाले डॉ. दत्ता कोल्हारे को भी मैं साधुवाद देता हूँ। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई, जे.एन.यू. दिल्ली, शासकीय ग्रंथागार, दिल्ली के ग्रंथालयों के प्रति आभार।

मुझे आशा नहीं बल्कि पूरा विश्वास है कि यह शोध-परियोजना इस क्षेत्र में काम करनेवाले तथा रुची रखनेवालों के लिए दिशादर्शक सिद्ध होगी। सधन्यवाद।

प्रो. सुधाकर शेंडगे
(मुख्य अन्वेषक)
प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा
विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

अनुक्रमणिका

अध्याय	अध्याय का नाम	पृ.सं.
❖	प्राक्कथन	i-v
प्रथम	हिंदी-मराठी जीवनी साहित्य का विकास	१-७५
द्वितीय	छत्रपति शिवाजी- महात्मा फुले-राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ	७६-१२९
तृतीय	छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण	१३०-२११
चतुर्थ	छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक योगदान	२१२-३६८
पंचम	छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव	३६९-४६९
षष्ठ	छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा एवं प्रभाव का मूल्यांकन	४७०-४८७
सप्तम	छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता	४८८-५६३
❖	उपसंहार एवं निष्कर्ष	५६४-५८७
❖	संदर्भ ग्रंथ सूची	५८८-६००

प्रथम अध्याय

हिंदी-मराठी जीवनी साहित्य का विकास

प्रथम अध्याय

हिंदी मराठी जीवनी साहित्य का विकास

भूमिका

१.१ जीवनी का अर्थ

१.२ जीवनी की परिभाषाएँ

१.२.१ भारतीय विद्वानों द्वारा जीवनी की परिभाषाएँ

१.२.२ पाश्चात्य विद्वानों द्वारा जीवनी की परिभाषाएँ

१.३ जीवनी का स्वरूप

१.४ जीवनी के तत्त्व

१.४.१ वर्ण्य विषय

१.४.२ चरित्र चित्रण

१.४.३ देश-काल-वातावरण

१.४.४ उद्देश्य

१.४.५ भाषा-शैली

१.५ हिंदी जीवनी साहित्य का विकास

१.५.१ भारत्तेन्दु पूर्व जीवनी

१.५.२ भारतेन्दु युगीन जीवनी

१.५.३ द्विवेदी युगीन जीवनी

१.५.४ छायावाद युगीन जीवनी

१.५.५ छायावादोत्तर जीवनी

१.५.६ समकालीन जीवनी

१.५.७ इक्कीसवीं सदी की जीवनी

१.६ मराठी जीवनी साहित्य का विकास

१.६.१ महानुभाव कालीन जीवनी साहित्य

१.६.२ वारकरी संप्रदाय कालीन जीवनी साहित्य

१.६.३ शिवकालीन जीवनी साहित्य

१.६.४ ब्रिटिशकालीन जीवनी साहित्य

१.६.५ स्वातंत्र्योत्तर जीवनी साहित्य

१.६.६ नयी सदी का जीवनी साहित्य

निष्कर्ष

प्रथम अध्याय

हिंदी मराठी जीवनी साहित्य का विकास

भूमिका :

अनादिकाल से देखा जाए तो यह कह सकते हैं कि मनुष्य ही मनुष्य के अध्ययन का केंद्र है। साहित्य के द्वारा मनुष्य के समस्त क्रियाकलापों का अध्ययन होता है। हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ आलोचक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी भी साहित्य का लक्ष्य मनुष्य को ही मानते हैं। यथा- ''वास्तव में हमारे अध्ययन की सामग्री प्रत्यक्ष मनुष्य है। अपने इतिहास में इसी मनुष्य की धारावाहिक उद्वेगों और उल्लासों का स्पंदन देखा है, राजनीति में इसी की लुकाछिपी के खेल का दर्शन किया है, अर्थशास्त्र में इसी की रीढ़ की शक्ति का अध्ययन किया है। यह मनुष्य ही वास्तविक लक्ष्य है।''[१] अर्थात यह कह सकते हैं कि साहित्य हो या अन्य विषय इसमें मनुष्य जीवन के संदर्भ में ही चिन्तन मनन होता है।

साहित्य की तरफ दृष्टिक्षेप डालें तो कह सकते हैं कि साहित्य में मनुष्य सदा ही प्रथम स्थान पर रहा है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि के द्वारा भी एक काल्पनिक पात्रों की रचना कर मनुष्य जीवन को ही रेखांकित किया जाता रहा है। किन्तु कथेत्तर साहित्य आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण जैसी विधाओं में इसी भूतल पर वास्तव करनेवाले व्यक्ति या मनुष्य के जीवन को यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति दी जाती है। जीवनी विधा भी इसी व्यक्ति का जीवन है जो इस समाज का एक हिस्सा होता है। इसके जीवन को तोड़ने-मरोड़ने का अधिकार जीवनीकार को नहीं होता। प्रेमचंद की जीवनी 'कलम का सिपाही' में जीवनीकार अमृतराय लिखते हैं कि ''यह भी एक उपन्यास ही है जिसका नायक प्रेमचंद नाम का एक आदमी है, फर्क इतना ही है कि यह आदमी मेरे दिमाग की उपज है, हाड-मांस का एक पुतला है जो इस धरती पर डोल चुका है, जैसे मन चाहे तोड़ने-मरोडने की आजादी मुझे नहीं है, कितने मोटे-मोटे रस्सों से मैं अच्छी तरह या बुरी तरह खुँटे से बँधा हुआ हूँ।''[२] इस तरह जीवनी लेखक को जीवनी में यथार्थता का ख़्याल रखना होता है जिसमें काँट-छाँट की कोई गुंजाईश नहीं होती है। हिंदी-मराठी का

जीवनी साहित्य अत्यंत समृद्ध है। देश के महानायकों पर कई जीवनियाँ मिलती हैं। ये सभी महानायक हमारे लिए प्रेरणादायी और आदर्श चरित्र हैं।

प्रस्तुत अध्याय में इसी जीवनी विधा के अर्थ, परिभाषा, स्वरूप, जीवनी के तत्त्व, विकास का अध्ययन किया जायेगा।

१.१ जीवनी का अर्थः

जीवनी शब्द की ओर देखें तो 'जीवनी' शब्द 'जीवन' से बना है। जिसे अंग्रेजी में 'बायोग्राफी' तो संस्कृत भाषा में इसे 'चरित' कहा जाता है। मराठी में इसे 'चरित्र' कहते हैं। अर्थात् जीवनी में व्यक्ति का समस्त जीवन होता है। जीवनी शब्द के अर्थ को जानने हेतु उसे हम निम्न शब्दकोशों के आधार पर देख सकते हैं :

१. राजपाल हिन्दी कोश :

राजपाल हिन्दी कोश में जीवनी को 'जीवन कथा', 'जिंदगीनामा' कहा गया है।'[३]

२. अभिनव हिन्दी कोश :

अभिनव हिन्दी कोश में जीवनी का अर्थ 'जीवनभर का वृत्तांत' दिया है।[४]

३. सहज समान्तर कोश :

सहज समान्तर कोश में जीवनी को 'जीवनवृत्त' कहा है।[५]

४. मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश :

मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश में जीवनी के लिए 'जीवन चरित', 'जीवन वृत्तांत', 'जीवनी साहित्य', 'किसी जीवन का क्रम' आदि नाम दिये हैं।'[६]

५. हिन्दी पर्यायवाची कोश :

हिन्दी पर्यायवाची कोश में जीवनी को 'जीवन चरित', 'जिन्दगीनामा', 'जीवनचरित्र', 'जीवनवृत्तांत', 'बायोग्रैफी', 'सवाने उम्री' आदि नाम दिये गये हैं।'[७]

इस तरह 'जीवनी' शब्द के विभिन्न अर्थ शब्द कोशों में दिए गये हैं। जो जीवनी को स्पष्ट करने में सफल हो जाते हैं। इसके अलावा बहुत सारे और भी पर्यायवाची शब्द हैं। जैसे 'चरित्र माला', 'चरितावली', 'जीवन संकलन', 'लीला', 'जगबीती', 'राम कहानी', 'जीवन कथा', 'मानस' आदि।

१.२ जीवनी की परिभाषा :

किसी भी विधा का परिचय प्राप्त करने के लिए हमें उसकी परिभाषा को देखना अनिवार्य होता है। इस तरह 'जीवनी विधा' को जानने के लिए भी उसकी विभिन्न विद्वानों ने दी हुई परिभाषाओं को देखना होगा।

१.२.१ भारतीय विद्वानों द्वारा जीवनी की परिभाषाएँ :

जीवनी विधा की परिभाषा जिस तरह भारतीय विद्वानों ने दी है। ये परिभाषाएँ निम्न रूप में हैं।

१. डॉ. अमरनाथ :

डॉ. अमरनाथ जीवनी को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि ''किसी व्यक्ति-विशेष का जीवन वृत्तांत ही जीवनी है।''[८]

२. डॉ. सीतारामदीन :

डॉ. सीतारामदीन जीवनी की परिभाषा देते हुए लिखते हैं कि ''जिस प्रकार सामान्य साहित्य हमारे समक्ष जीवन, समाज एवं आचार-विचार, चरित्रगत संस्कार, धर्म दर्शन, कार्य व्यापार आदि की कलात्मक समीक्षा प्रस्तुत कर जीवन के प्रति हमारे नूतन रुचि एवं दृष्टि जाग्रत करता है उसी प्रकार जीवनी साहित्य चरित्र एवं व्यक्तित्व निर्माण की दिशा में आदर्श प्रेरणा स्त्रोत बनता है।''[९]

३. डॉ. हरिमोहन :

जीवनी की सरलतम परिभाषा है- ''जीवनी का वर्णन। अथवा - व्यक्ति विशेष का जीवन परिचय।''[१]

४. प्रो. धर्मचन्द संत :

''जब लेखक जीवन की कुछ वास्तविक घटनाओं के आधार पर किसी श्रध्देय व्यक्ति की चारित्रिक विशेषताओं का काव्य रूप में प्रकथन करता है तब वह साहित्यिक रूप जीवनी कहलाता है।''[११]

५. माजदा असद :

''कलाकृति के रूप में लिखित व्यक्ति जीवन का सच्चा वर्णन जीवनी कहलाता है। व्यक्ति विशेष के जीवन की घटनाओं का आदर्श रूप में लिखा गया इतिहास जीवनी है।... दूसरे शब्दों में विशिष्ट व्यक्ति के उदात्त चरित्र की व्याख्या करनेवाला इतिहास जीवनी कहलाता है।''[१२]

६. बाबू गुलाबराय :

''जीवनी लेखक अपने चरित नायक के अंतर बाह्य स्वरूप का चित्रण कलात्मक ढंग से करता है। इस चित्रण में वह अनुपात और शालीनता का पूरा ध्यान रखता हुआ सहृदयता, स्वतंत्रता और निष्पक्षता के साथ अपने चरित्र नायक के गुण-दोष मय सजीव व्यक्तित्व का एक आकर्षण शैली में उद्‌घाटन करता है।''[१३]

७. डॉ. सभापति मिश्र :

''जीवनी किसी व्यक्ति के जीवन का शब्दचित्र है।''[१४]

८. मराठी विश्वकोष :

''जीवनी यह किसी एक व्यक्ति के पूरे जीवन की या उसमें से किसी विशिष्ट कालखंड की कहानी होती है।''[१५]

९. डॉ. श्रीमती चंद्रावती सिंह :

''जीवन चरित्र जीवन की ऐतिहासिक घटनाओं का स्थूल साहित्यिक उल्लेख भी नहीं है, जीवनी साहित्य एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन है। मनुष्य की मुद्रा और भावना उसके मन की क्रिया-प्रतिक्रियाओं और जीवन के क्रम में उसके मस्तिष्क के विकास का अध्ययन

एक गूढ़ विषय है। मनुष्य का व्यक्तित्व को मानसिक क्रियाओं का परिणाम है। इन मानसिक क्रियाओं का अध्ययन और उनका सफल चित्रण जीवनी साहित्य का अनिवार्य विषय है।''[१६]

१०. धीरेन्द्र वर्मा :

''जीवन चरित्र सारे जीवन में किसी के किए हुए कार्यों का वर्णन होता है।''[१७]

११. डॉ. सरला शुक्ल :

''जीवनी में व्यक्ति विशेष का जीवन दर्शन उसके आचार-विचार, गुणावगुणों का विवरण रहता है।''[१८]

१२. विष्णु प्रभाकर :

''जीवनी क्या है? अनुभवों का श्रृंखलाबध्द कलात्मक चयन। इसमें वे ही घटना पिरोई जाती हैं, जिनमें संवेदना को गहराई हो, भावों को आलोकित करने की शक्ति हो। घटनाओं का चयन लेखक किसी नीति, तर्क या दर्शन से प्रभावित होकर नहीं करता। वह गोताखोर की तरह जीवन सागर में डूब-डूब कर मोतियों को चुनता है। सशक्त और सच्ची संवेदना की हर घड़ी वही मोती है। श्रेष्ठ जीवनी अनुभूतियों का सौन्दर्य में विक्षेपण करता है। विशुध्द कला और मानदण्डों के बीच संतुलन और सामंजस्य का प्रणयन करता है।''[१९]

१.२.२ पाश्चात्य विद्वानों द्वारा जीवनी की परिभाषाएँ :

जीवनी साहित्य की परिभाषा जिस तरह से भारतीय विद्वानों ने दी है उसी तरह पाश्चात्य विद्वानों ने भी जीवनी की परिभाषाएँ दी हैं। जो निम्मरूप में हैं:

१. ड्राइडन :

ड्राइडन के मतानुसार- ''व्यक्ति विशेष के जीवन का इतिहास ही जीवनी है।'[२]

२. टी शिल्पे :

''जीवनी किसी व्यक्ति विशेष के जीवन की घटनाओं का विवरण है, अपने आदर्श रूप में वह प्रयत्नपूर्वक लिखा गया इतिहास है, जिसमें व्यक्ति विशेष के सम्पूर्ण जीवन या

उसके किसी अंश से सम्बन्धित बातों का विवरण प्राप्त होता है, यह आवश्यकता उसे एक साहित्यिक विधा का रूप प्रदान करती है।''[२१]

३. एडल :

''जीवनी शब्दों में ग्रहीत ज्ञात प्रमाण है जिसमें मानवीय स्वभाव एवं भावनाओं का ऐसा प्रवाहपूर्ण वर्णन होता है जैसे किसी पारे जैसे तरल पदार्थ का बहाव हो।''[२२]

४. कैनेथ सिल्वर मेन :

किसी अन्य व्यक्ति के जीवन की विश्वसनीय प्रमाणोवाली आख्यानात्मक नाटकीय प्रस्तुति को जीवनी कह सकते हैं।''[२३]

५. हेराल्ड निकोल्सन :

''किसी एक व्यक्ति के जीवन की घटनाओं को सत्य चित्रण करके उसे कलात्मकता से लिखा जाना ही जीवनी है।''[२४]

६. टामस कारलाइल :

इन्होंने जीवनी की अत्यंत संक्षिप्त परिभाषा देते हुए कहा है कि ''एक व्यक्ति का जीवन होता है।''[२५]

उपरोक्त सभी विद्वानों ने जो जीवनी की परिभाषाएँ दी है। उसके आधार पर जीवनी की परिभाषा इस रूप में दी जा सकती है कि ''जीवनी किसी व्यक्ति विशेष के समस्त जीवन का लेखा-जोखा होता है। जिसे अन्य लेखक साहित्यिक एवं कलात्मक ढ़ंग से प्रस्तुत करता है। जिसमें कल्पना के अलावा यथार्थ की गुंजाईश होती है।''

१.३ जीवनी का स्वरूप :

जीवनी साहित्य में किसी व्यक्ति के जीवन का समस्त लेखा-जोखा होता है। उसी तरह आत्मकथा में भी किसी व्यक्ति के जीवन का ही रेखांकन होता है। परन्तु उन दोनों में अन्तर है। आत्मकथा में लेखक स्वयं अपने जीवन को ही अभिव्यक्ति देता है बल्कि जीवनी किसी अन्य व्यक्ति द्वारा लिखी होती है। इसलिए जीवनी आत्मकथा से भिन्न कहीं

जा सकती है। स्वरूप की दृष्टि से भी इसमें कुछ मात्रा में अपनी अलग विशेषता नजर आती है। जीवनीकार जीवनी लेखन के समय जिस व्यक्ति के जीवन को लिख रहा है वह व्यक्ति सही रूप में समाज के लिए प्रेरणाप्रद हो सकता है। इस बात का वह ध्यान रखता है। मराठी कोश में जीवनी लेखन के संदर्भ में कहा गया है कि - ''इस साहित्य प्रकार की प्रेरणा आदर्श व्यक्ति की स्मृति जगाना है, उसी के साथ अपने आदर्श को बरकरार रखना इस तरह की रहती है। उसके पीछे कृतज्ञता, विभूतिपूजा की भावना प्रमुख होती है। धर्म, राजनीति, समाजनीति, साहित्य, कला, अनुसंधान आदि क्षेत्र के अलौकिक व्यक्ति को जीवनी का विषय बनाया जाता है।''[२६]

जीवनी लेखन कार्य अन्य गद्य विधा की तुलना में इस रूप में भिन्न है कि उसको लिखते समय जीवनीकार को जीवनी नायक के संदर्भ में परिचित होना आवश्यक होता है। उस व्यक्ति के संदर्भ में लिखे गये विभिन्न ग्रंथों को देखना पडता है। उस काल में घटित घटनाओं, जीवनी नायक से जुड़े हुए तथा उसके संदर्भ में जानकारी रखनेवालों से साक्षात्कार आदि का भी उपयोग करना आवश्यक है। ''उस व्यक्ति पर लिखी गई जीवनियाँ, संस्मरण अथवा उस व्यक्ति की आत्मकथा, उसके स्नेही जनों ने उसपर जो-जो भी लिखा है वह सब। उन व्यक्तियों से साक्षात्कार जो उस व्यक्ति के सम्पर्क में आए, उस व्यक्ति के पत्र, डायरी, उसके द्वारा दिये गये व्याख्यान आदि।''[२७] इन बातों का ध्यान रखना होता है। तभी तो हम उस जीवनी नायक के बारे में जान सकते हैं। उसके जीवन को सही मायने में लोगों के सामने ला सकते हैं।

जीवनी लेखन उपन्यास, कहानी, नाटक के समान नहीं होता। क्योंकि इस विधा में लेखक काल्पनिक पात्रों एवं घटनाओं के आधार पर कथानक प्रस्तुत करता है। जीवनी के अन्तर्गत किसी व्यक्ति के जीवन का यथार्थ चित्रण होता है इसलिए एक न्यायाधीश के समान वह तटस्थ रूप में लिखता है। वह जिस प्रकार उसके गुणों को उजागर करता है, उसी तरह दोषों पर परदा नहीं डालता। सभापति मिश्र उसके संदर्भ में कहते हैं कि- ''जीवनी किसी व्यक्ति के जीवन का शब्दचित्र है और इसीलिए जीवनी लेखक की लेखनी

से अंकित चित्र यथार्थ होना चाहिए और उसे निष्पक्ष रूप से न्यायाधीश की भांति जीवनी नायक के जीवन पर सम्मति देनी चाहिए।''[२८] इस तरह उपरोक्त बातों का महत्त्व जीवनी लेखन में रहता है। प्राय: महान पुरुषों को चरित्र नायक मानकर ही जीवनियां लिखी गयी हैं। इसलिए उसमें यथार्थ वर्णन किया जाता है पर आदर्शवाद एवं सुधारवादी दृष्टिकोण को भी ध्यान में रखा जाता है। जीवनीकार जीवनी नायक के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करने हेतु खोजबीन करता है और उपलब्ध तथ्यों को आकर्षक शैली में अभिव्यक्ति देता है। जीवनी नायक के संदर्भित समस्त सूत्र मिल भी जाए किन्तु कल्पना का आश्रय लेना पडता है। परन्तु वह कहां तक हो इस बारे में कहा जाता है कि ''मात्र टूटी कडियों को जोड़ने तथा रोचक बनाने के लिए कल्पना का आश्रय लिया जाना चाहिए।''[२९] इस विशेषता के कारण अन्य गद्य विधा की तुलना में यह विधा अपना अलग महत्त्व सिध्द करने में सफल होती है।

सामान्यतः देखा जाए तो जीवनी में व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन अंकित होता है परन्तु कई जीवनियां इसके लिए अपवाद भी हैं। कभी-कभी जीवनीकार जीवन के किसी विशिष्ट काल से जीवनी लेखन आरम्भ करता है और किसी विशिष्ट काल में उसे समाप्त करता है। कभी-कभी कोई जीवन का खण्ड भी जीवनी का रूप लेता है। तो किसी समय जीवनी नायक के अन्त समय पूर्व भी जीवनी लिखी जाती है। क्योंकि जीवनी नायक के कर्तृत्व में ऐसी महत्ता होती है कि पूरे जीवन से अधिक कुछ काल ही मनुष्य को प्रभावित करने में सफल सिध्द होता है। जीवनी साहित्य में यथार्थ का ध्यान रखा जाता है किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि जीवनी साहित्य एवं इतिहास में कोई भेद नहीं है। इतिहास में व्यक्ति साधन होता है, तो परिवेश प्रधान होता है बल्कि जीवनी के अन्तर्गत व्यक्ति साध्य है। परिवेश या परिस्थितियाँ केवल साधन होती हैं। ऐतिहासिक महापुरुषों की जीवनियां लिखते समय भले ही इतिहास के दर्शन हो जाते हैं किन्तु जीवनी में जीवनी नायक को ही प्रमुख स्थान दिया जाता है। इसीलिए जीवनी समस्त समाज का इतिहास नहीं बल्कि किसी व्यक्ति विशेष का इतिहास कहा जा सकता है।

जीवनी साहित्य के इतिहास को देखें तो हम कह सकते हैं कि ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन चरित्र को लेकर ही जीवनियाँ अधिकत्तर लिखी गई हैं किन्तु समय के साथ-साथ जीवनी लेखन में भी परिवर्तन दिखाई देता है। आज जीवनी केवल विशिष्ट बंधन में बंधी नहीं है बल्कि उसने भी अपना दायरा सर्वदूर तक फैलाया है। जीवनी अब ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन के साथ-साथ राजनेताओं के जीवन को, संत-महंतों के जीवन को, समाज सुधारकों के जीवन को, वैज्ञानिक जगत से जुड़े हुए विद्वतजनों को, उद्योग क्षेत्र से जुड़े हुई हस्तियों को तथा फिल्म जगत के अलावा शिक्षा एवं प्रशासकीय क्षेत्र से जुड़े हुए लोगों को लेकर भी जीवनी साहित्य लिखा जा रहा है। जीवनी साहित्य का क्षेत्र अब विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित नहीं बल्कि उसका विस्तार प्रदीर्घ रूप में हुआ दिखाई देता है।

१.४ जीवनी के तत्व :

हिन्दी गद्य विधा में जीवनी साहित्य महत्त्वपूर्ण विधा है। जिसके प्रमुख तत्व पांच हैं। जिनमें प्रथम वर्ण्य-विषय, चरित्र-चित्रण, देशकाल-वातावरण, उद्देश्य और भाषा शैली आदि। उनका विवेचन निम्नरूप में किया जा सकता है –

१.४.१ वर्ण्य विषय :

जीवनी साहित्य का प्रथम एवं महत्त्वपूर्ण तत्व वर्ण्य विषय है। इसके अन्तर्गत जीवनी नायक के जीवन का समस्त लेखा-जोखा होता है। जीवनी में जीवनीकार किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के जीवन को लेकर जीवनी लिखता है। क्योंकि जिस किसी की भी जीवनी को वह लिखता है। वह पाठक के लिए, समाज के लिए, पथदर्शक हो। उससे समाज को कुछ ज्ञान मिले। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर जीवनीकार जीवनी लिखता है।

जीवनी में जो वर्ण्य-विषय है वह उपन्यास, कहानी की भांति कल्पना को आधार बनाकर नहीं लिखा होता बल्कि यह जीवनी नायक का समस्त जीवन होता है। उसमें यथार्थता होती है। इसलिए सामग्री संकलन करते समय प्रामाणिकता का ध्यान रखना

होता है। साथ ही साथ उसका क्रमबध्द विवेचन करना पड़ता है। डॉ. जानसन वर्ण्य विषय के संदर्भ में कहते हैं कि ''जीवनीकार का लक्ष्य जीवन की उन घटनाओं और क्रियाकलापों का रंजक वर्णन करना होता है, जो व्यक्ति विशेष की बड़ी से बड़ी महानताओं से लेकर छोटी से छोटी घरेलू बातों से संबंधित होते है।''[३०] अन्य साहित्यिक विधाओं में कल्पना का सहारा लिया जा सकता है, लेकिन जीवनी में वस्तुपरकता के बिना काम नहीं चलता है। वस्तुपरकता तथ्यों से आती है इसलिए तथ्यों की अवहेलना या उसके साथ छेडछाड के कारण जीवनी में प्रामाणिकता के संदर्भ में संदेह निर्माण हो सकता है। कथाकार अरुण प्रकाश के अनुसार ''वस्तुपरकता ही अच्छी जीवनी का सबसे बड़ा निकष है, जिसका निर्वहन प्रमाण, तर्क और प्रस्तुति में संतुलन के जरिए किया जाता है।''[३१]

इस तरह वर्ण्य-विषय के अन्तर्गत जीवनी में वास्तविकता, ऐतिहासिक सत्यता, लेखक की तटस्थता, वैज्ञानिकता, रोचकता, संबंधता एवं संक्षिप्तता आदि गुणों की आवश्यकता होती है।

१.४.२ चरित्र-चित्रण :

जीवनी के प्रमुख तत्वों में दूसरा तत्व चरित्र-चित्रण है। जीवनीकार का प्रमुख उद्देश्य जीवनी नायक के चरित्र को प्रमुखता से उभारना है। इसीलिए जीवनी में जीवनी नायक ही प्रधान चरित्र होता है। इसी चरित्र को ही उजागर करने का मानस जीवनीकार का होता है। अन्य चरित्र केवल जीवनी नायक के जीवन से सम्बन्ध रखते हैं, इसीलिए उनको जीवनी में स्थान दिया जाता है। जीवनी में घटित घटनाएँ मात्र उसके चरित्र को उद्‌घाटित करने के लिए होती है। उपन्यास, नाटक, कहानी विधाओं के समान केवल पात्र कथानक प्रस्तुत करने के उद्देश्य से नहीं होते बल्कि इसमें चरित्र ही प्रमुख होता है। जो इस धरती पर अपना वास्तव कर चुका है। जिसने हर सामान्य इन्सान की तरह दुख-सुख, आशा-निराशा, मान-अपमान आदि बातों का सामना करते हुए किसी मंजील पर पहुँच चुका है। जीवनीकार इन समस्त बातों का ध्यान चरित्र-चित्रण करते समय रखता है। जीवनी नायक

का चरित्र-चित्रण करते समय उसे उसके बाह्य एवं आंतरिक चरित्र को उभारना पड़ता है। जैसे ''चरित्र नायक का बाह्य व्यक्तित्व इसके अन्तर्गत जीवनीकार अपने नायक के शरीर का, उसकी वेशभूषा का, उसके रहन-सहन का, खान-पान का, उसकी कलाप्रियता का वर्णन करता है। तो चरित्र नायक का आन्तरिक विश्लेषण : इसके अन्तर्गत वह चरित्र नायक के स्वभाव का, उसकी निर्णय क्षमता का, उसके अन्तरद्वंदों का, उसके विश्वासों का, मूल्यों के प्रति उसकी प्रतिबध्दता का वर्णन-विश्लेषण करता है।''[३२] इसलिए जीवनीकार को जीवनी नायक के चरित्र तक पहुँचने के लिए बाह्य-आवरण को भेदकर आन्तरिक रूप तक पहुँचने की आवश्यकता होती है। श्री. रामनाथ सुमन के अनुसार- ''लेखक जहाँ नायक के जीवन में छिपे उसके विकास को, उसके व्यक्तित्व के रहस्य को, उसकी मुख्य जीवन-धारा को खोलकर पाठकों के सामने रख देता है, वहाँ जीवनी लेखक कला सार्थक होती है। ऊपर से मनुष्य के दिखाई पडनेवाले रूप को दिखाकर ही जीवनी लेखक की कला संतुष्ट नहीं होती वह आवरण को भेदकर अन्त: स्वरूप और आन्तरिक सत्य को प्रत्यक्ष करती है।''[३३]

जीवनीकार को जीवनी में चरित्र नायक के गुण-दोष के संदर्भ में भी सजग रहना पड़ता है। वह जीवनी में चरित्र नायक के गुणों को स्पष्ट करता है उसी तरह से दोष को भी नजरंदाज नहीं करना पडता। क्योंकि हर एक व्यक्ति का व्यक्तित्व गुण-दोषों का ही संमिश्रण होता है। इसी बात को जीवनीकार को समझना चाहिए। तभी चरित्र-चित्रण में जीवनी सफल होती है।

१.४.३ देश-काल-वातावरण :

साहित्य रचना में देशकाल और वातावरण का महत्त्व अनन्यसाधारण होता है। क्योंकि कोई भी कृति समय सापेक्ष होती है। जीवनी साहित्य में भी देशकाल-वातावरण का महत्त्व विशेष रूप में है। क्योंकि हर व्यक्ति के जीवन में घटित घटनाओं के पीछे परिवेश या परिस्थिति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति जो भी अच्छे या बुरे कर्म करता है उसका कारण तत्कालीन वातावरण है। जीवनी साहित्य लेखक में भी देशकाल एवं

वातावरण का ध्यान जीवनीकार को रखना होता है। तब ही सही ढंग से वह उस चरित्र को समझ सकता है। उसको सही मायने में अभिव्यक्ति दे पाता है। चरित्र ऐतिहासिक हो, तो हमें तत्कालीन परिवेश को जानना है और उस चरित्र को जीवनी में रेखांकित करना होता है। क्योंकि-''जीवनी नायक के संस्कार एक विशेष सांस्कृतिक एवं सामाजिक वातावरण में रूपायित होते हैं। वह परिवेश ही उसकी चेतना को उसकी मनीषा को दिशाबोध कराता है।''[३४] इस बात से यह साबित होता है कि जीवनी की रचना में देशकाल एवं वातावरण का महत्त्व होता है। जोसेफ शिण्डर ने वातावरण का महत्त्व स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''युग, वातावरण एवं परिस्थितियाँ ही महत्त्वपूर्ण है जो विशेष व्यक्ति को जन्म देती है। वह लिखता है कि सांस्कृतिक पृष्ठभूमि प्रसिध्द व्यक्तियों की जन्मदाती है।''[३५] इस कारण देशकाल वातावरण यह तत्व जीवनी के अन्तर्गत महत्त्वपूर्ण है। इसी परिवेश को चित्रित करते समय नायक के पड़ोसी, मित्र, शत्रु, तत्कालीन राजनीति, अर्थनीति, धर्म, कर्मकांड आदि बातों का भी वर्णन होता है। जिसके द्वारा हम जीवनी नायक के जीवनी से अच्छी तरह से परिचित होते हैं।

१.४.४ उद्देश्य :

साहित्य की कोई भी विधा उद्देश्यहीन नहीं होती है। रचनाकार उसके माध्यम से कुछ न कुछ सम्प्रेक्षित करता है। साहित्य के उद्देश्य के संदर्भ में काव्यशास्त्र के श्रेष्ठ आचार्य मम्मट कहते हैं -

'काव्यं यशसेर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।

सद्य: परिनिर्वृत्तये कान्तासाम्मित्ततयोपरेशयुजे।'

अर्थात साहित्य का उद्देश्य यश प्राप्ति, धनप्राप्ति, व्यवहारज्ञान, लोकमंगल एवं विनाश की मुक्ति, कान्तासमान मधुर उपदेश आदि को माना है। इसी तरह जीवनी विधा भी निरुद्देश्य नहीं होती। ऐतिहासिक जीवनी को देखें तो जीवनीकार उसके माध्यम से उस चरित्र की महानता, तत्कालीन परिवेश, समाज के लिए प्रेरणा देना आदि उद्देश्य सामने रखता है। तो राजनीतिकों की जीवनी में उस राजनेता के कार्य, उसके संदर्भ में विभिन्न

शंका-कुशंका तथा भविष्य में जो राजनेता बननेवाले हैं उसके लिए एक मार्गदर्शन का कार्य यह जीवनी करती है। इस तरह हर क्षेत्र से जुड़ी हुई जीवनी अपना कुछ न कुछ उद्देश्य रखती है। समाज के सामने आदर्श प्रस्तुत करती है। डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे जी ने जीवनी के उद्देश्य के संदर्भ में कहा है कि ''आनेवाली पीढ़ी को संस्कारित करने के लिए ही जीवनियाँ लिखी जाती हैं। क्रांतिकारकों, समाज सुधारकों, वैज्ञानिकों, खिलाडियों, लेखकों, उद्योगपतियों आदि की जीवनियाँ आकाशदीप की तरह आनेवाली पीढ़ी को मार्गदर्शन करती है।''[३६] इस तरह जीवनीकार जीवनी नायक को समाज के सम्मुख आदर्श रूप में प्रस्तुत करता है। जिसमें पाठक जीवनी नायक के जीवन से अच्छा संदेश प्राप्त करता है और अपने जीवनी में सुख, समृध्दि के लिए उपयोग करता है। जैसे ''महान पुरुषों को चरित्र नायक मानकर ही जीवनियाँ लिखी गई है। इसके पीछे यही निहित रहता है कि उनके जीवन से प्रेरणा मिल सके।''[३७]

जीवनी लेखन की ओर नजर डालें तो हम देखते हैं कि किसी महान कार्य करनेवाले व्यक्तियों के जीवन को लेकर ही जीवनियाँ लिखी जाती है, क्योंकि वह व्यक्ति असामान्य कार्य करता है। जो आनेवाले पीढ़ी के लिए प्रेरणादायी हो सकता है। यथा ''दुनिया के सब लोगों की जीवनियाँ नहीं होती और जिन लोगों की जीवनियाँ लिखी जाती हैं, वे खास होते हैं। उनका जीवन समृध्द और खास, मतलब लीक से हटकर होता है। वे पारम्पारिक जीवन से हटकर अपने जीवन में कुछ ऐसा नया जोड़ते हैं, जो दूसरों के दैनंदिन जीवन से अलग और खास होता है।''[३८]

जीवनी साहित्य का उद्देश्य जीवनी नायक को समाज के सामने आदर्श रूप में प्रस्तुत करने के साथ-साथ उसके माध्यम से समाज में घटित तत्कालीन गतिविधियों को स्पष्ट करना है। आदर्श व्यक्ति की स्मृति को कायम रखना आदि उद्देश्य को सामने रखा जाता है। हिन्दी साहित्य में कुछ ऐसी जीवनियाँ भी है। जिसमें बेटे द्वारा पिता की, पत्नी द्वारा पति की, बहन द्वारा भाई की, या भतिजे द्वारा चाचा की जीवनियाँ लिखी गयी हैं। इस जीवनी के माध्यम से जीवनी नायक का आन्तरिक जीवन पर प्रकाश डाला जाता है।

जैसे वह अपने परिवार के साथ, रिश्तेंदारों के साथ, मित्रों के साथ, किस तरह रहता था। इन सभी बातों की जानकारी जीवनीकार समाज के सामने अपने जीवनी के माध्यम से ले आता है। जिससे समाज को जीवन जीने के लिए आदर्शवत साबित हो जाता है। जैसे कोकिला अंबानी ने धीरुभाई अंबानी की जीवनी लिखी है। जिसके अन्तर्गत धीरुभाई का पूर्ववृति जीवन के साथ जीवन के अन्त तक के जीवन प्रवास का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। जो उद्योग जगत में आनेवाले युवकों को मार्गदर्शक बन सकता है।

पाश्चात्य देशों में अन्य साहित्यिक विधा की भाँति जीवनी साहित्य का लेखन चरम उत्कर्ष पर पहुँच गया है। यहाँ पर जीवनी साहित्य के उद्देश्य के संदर्भ में कहा जाता है कि ''जीवनी व्यक्तित्व का यथार्थ या सत्य का दर्शन करानेवाली विधा है।''[३९] इस तरह से जीवनी साहित्य का उद्देश्य स्पष्ट होता है।

१.४.५ भाषा-शैली :

जीवनी के महत्त्वपूर्ण तत्वों में पाँचवा तत्व भाषा-शैली है। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के सौन्दर्य को द्विगुणीत करने के लिए उसकी बाह्य सजावट महत्त्वपूर्ण है। उसी तरह रचना के सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए भाषा-शैली का महत्त्व होता है। भाषा का प्रभावी रूप में प्रयोग करने पर ही उसमें रोचकता, प्रभाविता आ जाती है। बहुत बार ऐसा होता है कि रचनाकार के पास विषय बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है किन्तु भाषा की दृष्टि से असफल होने के कारण पाठकों के सम्मुख पहुँचने में नाकामयाब साबित हो जाता है। इसलिए रचनाकार को भाषा शैली की दृष्टि से अत्यंत सजग रहना पड़ता है। एक तरह से भाषा का स्थान रचना की कथावस्तु के समान ही महत्त्वपूर्ण होता है।

जीवनी लेखन में भी जीवनीकार के पास एक सशक्त भाषा की जरुरत होती है। तभी वह जीवनी में चरित्र नायक को प्रभावी ढ़ंग से समाज के सम्मुख रख सकता है। अन्यथा एक प्रभावी चरित्र भी भाषा शैली की निकृष्टता के कारण समाज के सामने प्रभावी रूप में नहीं आ सकता। जीवनी की भाषा के संदर्भ में कहा जाता है कि ''जीवनी साहित्य की भाषा जीवन की भाषा से भिन्न नहीं हो सकती। जीवनी की धारावाहिकता,

अन्तर्लय और संश्लिष्टता भाषा में उन्हीं विशेषताओं की मांग करती है। उसे कहीं नैसर्गिक और कहीं अलंकृत, कहीं चिन्तन प्रधान और कहीं अनुभूतिशील, कहीं चित्रण परक और कहीं वर्णन प्रधान, कहीं मन्थर और कहीं क्षिप्र होना पड़ता है तभी वह जीवन के विविध पार्श्वों, रूपछटाओं, भंगिमाओं और अभिप्रायों को व्यक्त कर पाती है। उसमें कहीं उमस और उदासी की धूरता रहती है, कहीं आल्हाद और उल्लास की भास्वरता, कहीं तड़प रहती है और कहीं तृप्ति''[४०] इस तरह जीवनी लिखते समय उपरोक्त बातों का ध्यान रखना पड़ता है। तभी हम प्रभावी जीवनी का गठन कर सकते हैं। इसलिए भाषा का महत्त्व अन्यसाधारण है क्योंकि वह हमारे संस्कृति की धरोहर है। इसलिए 'वार्षिक भारतीय साहित्य सर्वेक्षण' के अन्तर्गत भाषा की महत्ता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि ''भाषा के माध्यम से वह युग अपने सांस्कृतिक वर्चस्व के साथ पाठक के सामने रूपायित होता है। भाषा ही ऐसा तत्व है जो अतीत और वर्तमान को जोड़ती है।''[४१] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवनी लेखन में भाषा शैली महत्त्वपूर्ण तत्व है। भाषा लचीला तत्व है जो विषय के अनुरूप बदलता है। उसमें तत्सम, तद्भव, देशज एवं विदेशी शब्दों का प्रयोग जीवनीकार करता है। जिससे विचारों को या जीवनी नायक के चरित्र को प्रभावी रूप में प्रस्तुत कर सके। इसमें सहजता, तटस्थता, रोचकता आदि का प्रयोग किया जाता है। कहीं-कहीं जीवनीकार मुहावरें, कहावतें एवं विभिन्न अलंकारों का भी यथास्थान प्रयोग करता है। शैली भी घटनाओं के अनुरूप होती है। कहीं वर्णनात्मक, कहीं विवेचनात्मक, कहीं पूर्व दीप्ति, कहीं पत्रात्मक तो कहीं संवादात्मक शैली का भी प्रयोग जीवनी के अन्तर्गत होता है। जिससे जीवनी का कलापक्ष श्रेष्ठ बन जाता है।

१.५ जीवनी साहित्य का विकास :

आधुनिक गद्यत्तर विधा के अन्तर्गत जीवनी साहित्य एक प्रमुख विधा है। जिसका अविर्भाव मुख्यत: हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग से माना जाता है किन्तु उसके विकास की ओर दृष्टिक्षेप डालने का प्रयास करें तो एक तरफ आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक जो साहित्यिक धारा निरन्तर बहती आ रही है उसमें देख सकते हैं, तो दूसरी

तरफ पाश्चात्य जगत से अन्य गद्य विधा की भाँति आ गई विधा के रूप में देख सकते हैं। जीवनी साहित्य के आलेख की ओर दृष्टिक्षेप डालें तो कह सकते हैं कि वह निरन्तर विकास की ओर गतिमान है। जीवनी ने अपने आपको विभिन्न कोटियों में ढ़ालने का प्रयास किया है। इसलिए जीवनी के विकासक्रम की जो लम्बी यात्रा है। इस यात्रा को विशिष्ट काल में विभाजित कर देखा जा सकता है।

हिन्दी जीवनी के विकासक्रम को इस रूप में विभाजित कर देख सकते हैं :

१.५.१ भारतेन्दु पूर्व जीवनी :

आधुनिक गद्यत्तर विधा के अन्तर्गत जीवनी साहित्य एक प्रमुख विधा है। इस विधा की उत्पत्ति के संदर्भ में विवेचन करें तो कहना पड़ेगा कि जीवनी विधा की शुरुआत एक साहित्य विधा के रूप में पाश्चात्य जगत में हुई है। उसका विकासक्रम भी बहुत प्राचीन है। पर भारत में जीवनी नाम की विधा का प्रचलन नहीं था। प्राचीनकाल में राजा महाराजाओं की 'वंशावली' लिखने की परम्परा वैसे प्राचीन है। जिसमें किसी 'वंश' की वंशावली भाटों द्वारा लिखी जाती थी किन्तु उसमें प्रामाणिकता के संदर्भ में असंदिग्धता अधिक दिखाई देती है। क्योंकि जो 'भाट' थे वे उस राजा के आश्रय में रहते थे। इसलिए उनका सच्चा चरित्र लिखने से जादा उनकी प्रशंसा अधिक की जाती थी। जिसमें सच्चाई के अलावा अधिक कल्पना की उड़ान होती थी। क्योंकि इनकी तुलना विभिन्न देवी देवताओं के साथ या उसके पूर्व के महान राजाओं के साथ की जाती थी। उनके पराक्रम का गुणगान भी अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से किया जाता था तथा कालक्रम में भी बहुत सारी असंदिग्धता दिखाई देती है। जिसके पीछे प्रमुख कारण यह भी था कि जो 'भाट' हुआ करते थे वे राजाश्रय में थे। उनका समस्त जीवन राजाश्रय पर था। इसलिए वे राजाओं को खुश करने और अधिक से अधिक राजा की कृपादृष्टि पाने में ही अपने आपको सफल समझते थे। इनमें हम रासों ग्रंथों को देख सकते हैं।

इसी के साथ भारतीय जीवनदृष्टि व्यष्टिमूलक नहीं, समष्टिमूलक रही है। व्यक्तिवाद की प्रवृत्ति दूसरे के सम्मुख स्वयं को या दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व को उद्‌घाटित

करने में रुचि रखती है। यह जीवनी साहित्य का मूल है। जिसका भारतीय जीवन दृष्टि से कोई तारतम्य नहीं था। विश्वनाथ प्रसाद सिंह का मत है कि ''जीवनी और आत्मकथा के लिए लौकिक दृष्टिकोण के अतिरिक्त व्यक्ति मूलकता भी होनी चाहिए जिसका अभाव लौकिक संस्कृत में भी बना रहा। भारतीय मनीषियों की चेतना इस काल में भी समष्टिमूलक बनी रही। लौकिक ग्रंथों की रचना करते हुए भी इनकी दृष्टि परलोक से पूरी-पूरी हटी नहीं थी। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में वैयक्तिकता की आश्चर्यजनक उपेक्षा का मूल कारण विद्वानों ने पुनर्जन्मवाद और कर्मफलवाद में भारतीयों की अटूट आस्था को माना है। ये दोनों ही वैयक्तिता की महत्ता को घटाते हैं, मनुष्य को परलोकमुखी बनाते हैं। इन्होंने ही लेखकों को जीवनी और आत्मकथा को नहीं लिखने दिया। वे इस अतुल जीवन सागर और अनन्त कालप्रवाह में अपने को श्रुदकण मानते हैं।''[४२] इस तरह जीवनी लेखन में यह भी एक अवरोध रहा है। हमारे यहाँ जीवन चरित्र लिखने की परम्परा भले ही नहीं हो किन्तु पुराणों, महाकाव्यों, खण्डकाव्यों और नाटकों में राजपुरुषों, महापुरुषों और वीरों का वर्णन होता था। पर इसमें व्यक्तियों को अतिरंजित और अतिप्राकृत स्वरूप में अंकित किया जाता था। साथ ही पूर्व मध्यकाल में भक्ति की धारा सर्वदूर फैली थी जिसने सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान नाभादास कृत 'भक्तमाल' का है। जिसमें धर्म साधना तथा धर्म साधकों का स्थान प्रमुख है। जिसका वर्णन इसके अन्तर्गत आ गया है। इसमें चरित्र लेखक का प्रवर्तन एक तरह से किया है। कहीं-कहीं श्रद्धा के कारण चरित्र निरूपण में अतिशयोक्ति भी दिखाई देती है। प्रकाश नारायण दीक्षित के मतानुसार ''भक्तमाल में कवि ने भक्तों का महत्त्व सामान्य जनता के मध्य कुछ और अधिक बढ़ जाता है। साधारण रूप से इतना अवश्य कहा जा सकता है कि भक्तों का व्यक्तित्व सामान्य वर्ग से अधिक उच्च होता है। संसार में रहते हुए भी वे निरलिप्त रहते हैं। देह होते हुए भी उन्हें बिदेह कहा जा सकता है। भक्तों का जीवन पवित्रता और आदर्शों की ऐसी जलती हुई ज्वाला है जिनमें अनेक कलुषित तत्व भी जलकर भस्म हो जाते हैं। इन भक्तों के चरित्रों को लिपिबध्द करके नाभादास ने अज्ञान अन्धकार में निमग्न जनता को ऐसा मार्ग दिखाया जिसमें आलोक के सिवाय और कुछ न था।''[४३] इसी के साथ बहुत सारे संतों के चरित्र ग्रंथ भी मिलते हैं।

जिसमें कबीर की परचाई, नामदेव की परचई, रैदास कौ परचई, मलूकदास की परचई तो दूसरी ओर स्वामी गोकुलनाथ कृत 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता', 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा 'अष्टसखा की वार्ता' जैसे ग्रंथ सामान्य जनता के बीच विशेष विख्यात रहे हैं। भले ही इसमें तथ्यात्मकता का अभाव हो किन्तु यह ग्रंथ जो है वह भक्तों के प्रति आदर एवं उनकी प्रशंसा के उद्देश्य से लिखे हुए हैं। इसके अन्तर्गत कहीं-कहीं अलौकिकता का पुट भी दिखाई देता है किन्तु इसमें चरित्र ग्रंथ के प्राथमिक रूप के दर्शन होते हैं।

उत्तरमध्यकाल में रीतिकाव्य की प्रधानता रही है। साथ ही बहुत सारे प्रबंध ग्रंथ भी रचे गये जिसके अन्तर्गत विभिन्न राजा-महाराजाओं के चरित्रों को लिखा गया। केशवदास ने 'बीरसिंह देव चरित्र' १६०७ ई. जिसके अन्तर्गत बीरसिंहदेव के संदर्भ में विवेचन किया है। इसमें इन्होंने बीरसिंहदेव की दानवीरता, उनके द्वारा किये हुए युध्द की जानकारी, उनका विलासपूर्ण एवं वैभवशाली जीवन के साथ ही ओरछा नरेश के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। केशवदास द्वारा रचित दूसरा चरित्र काव्य 'जहांगीर जस चंद्रिका' १६१२ ई.। इसके अन्तर्गत जहाँगीर के चरित्र का निरूपण किया है, तो दूसरी ओर शासन व्यवस्था पर प्रकाश डाला है। गोरे लाल कृत 'छत्र प्रकाश', सुदन कृत ''सुजान चरित्र', पद्माकर भट्ट कृत 'हिम्मतबहादुर विरुदावली' १७९९ ई., सूर्यमल कृत 'वंश भास्कर' १८४० ई. तथा चन्द्रशेखर कृत 'हम्मीर हठा' १८४५ ई., भूषण कृत 'शिवराज भूषण', 'शिवा बावनी', 'छत्रसाल दशक', चिन्तामणि कृत 'कृष्णचरित्र' इस प्रकार के विभिन्न ग्रंथों की रचना रीतिकाल में हुई है। इसमें राजा-महाराजाओं के जीवन चरित्र तो है। लेकिन उसमें अतिशयोक्तिपूर्णता है तथा युध्दों का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया है। इसलिए इसे जीवन चरित्र तो नहीं कहा जा सकता किन्तु जीवनी लेखन की बाल्यावस्था माना जा सकता है। जिसका विकास आगे चलकर जीवनी साहित्य के रूप में हुआ।

१.५.२ भारतेन्दु युगीन जीवनी :

जिस तरह आधुनिक गद्य विधा का उद्‌गम भारतेन्दु युग से माना जाता है। उसी तरह हिन्दी जीवनी साहित्य का उद्भव भी भारतेन्दु युग से ही माना जा सकता है। क्योंकि इसी काल में जीवनी साहित्य एक 'विधा' के रूप में सामने आ गया। इसके पूर्व जो भी चरित्र लिखे गये थे। वे जीवनी के तत्व के अन्तर्गत समाविष्ट नहीं थे। इसलिए आधुनिक गद्य साहित्य का उद्गाता की संज्ञा जिस तरह भारतेन्दु हरिश्चंद्र को दी जाती है वही संज्ञा जीवनी के अन्तर्गत भारतेन्दु को ही दी जा सकती है। उन्होंने स्वयं जीवनियाँ लिखी हैं जिनमें 'विक्रम', 'कालिदास', 'रामानुज', 'जयदेव', 'सूरदास', 'शंकराचार्य', 'वल्लभाचार्य', 'मुगल बादशाहो', 'मुसलमान महापुरुषों' तथा 'लॉर्ड मेयाँ, 'रिपन' जैसे प्रभृति अंग्रेज शासकों के संबंध में महत्त्वपूर्ण जीवनियाँ लिखी। जो देशी-विदेशी तथा अलग-अलग क्षेत्रों से जुड़ी हुई महान विभूतियाँ हैं। भारतेन्दु जी के जीवनियों की विशेषता यह है कि इन्होंने बड़े ही संक्षिप्त रूप में जीवनियाँ लिखी हैं। जो एक निबन्ध समान प्रतीत होती है। इनकी जीवनियों में विषयानुकूल, भावानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। भारतेन्दु के अलावा इस काल में कार्तिकप्रसाद खत्री का भी नाम जुड़ता है। इन्होंने 'अहिल्याबाई का जीवन चरित्र' १८८७ ई. में लिखा है। जिसके अन्तर्गत अहिल्याबाई के जीवन तथा कार्य पर प्रकाश डाला गया है। इसी के साथ 'मीराबाई का जीवनी चरित्र' १८९३ ई., 'महाराज विक्रमादित्य का जीवन चरित्र'१८९३ ई., 'महाराज छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र' १८९४ ई., 'सूरदास का जीवनचरित्र'१८९४ ई. आदि जीवनियों का लेखन किया है।

काशीनाथ खत्री भी भारतेन्दु युग के महत्त्वपूर्ण जीवनीकार है। इन्होंने 'हिन्दुस्थान की रानियों का जीवन चरित्र' १८७९ ई. इसी के अलावा इन्होंने 'भारतवर्ष की विख्यात स्त्रियों के जीवन चरित्र' १८८३ ई. में लिखकर हिन्दी जीवनी साहित्य की श्रीवृध्दि करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

रमाशंकर व्यास ने युरोप को कुछ समय के लिए अस्थिर कर देनेवाले 'नेपोलियन बोनापार्ट' की जीवनी लिखी है। जिसमें उन्होंने नेपोलियन बोनापार्ट द्वारा युरोप में किये गये युध्दों का तथा उसके जीवन को समग्र रूप में उभारा है। यह जीवनी तत्कालीन युरोप के समग्र परिवेश को उभारने में सफल सिध्द होती है।

देवीप्रसाद मुंसिफ भी भारतेन्दु युगीन महत्त्वपूर्ण जीवनीकार हैं। इन्होंने 'महाराज मानसिंह कच्छवाल वाले अमीर का जीवन चरित्र' १८८९ ई., 'राजा मालदेव का जीवन चरित्र' १८८९ ई., 'उदयसिंह महाराजा' १८९३ ई., 'अकबरनामा' १८९३ ई., 'वर्माभीम' १८९३ ई., 'जसवंत सिंह' १८९६ ई. जैसी ऐतिहासिक जीवनियाँ इन्होंने लिखी हैं। यह जीवनियाँ इतिहास और जीवनी नायकों की वीरता को उजागर करती है।

राधाकृष्णदास ने जिस तरह कविता, नाटक, कहानी विधा में लेखन किया उसी तरह उन्होंने जीवनी साहित्य लेखन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इन्होंने 'आर्यचरितामृत बाप्पा रावल' १८८४ ई., 'श्रीनागरीदास जी का जीवन चरित्र' १८९४ ई., 'कविवर बिहारीलाल' १८९५ ई., 'सूरदास' १९०० ई. आदि जीवनियाँ लिखी हैं।

इन प्रमुख जीवनीकारों के साथ-साथ गोपाल शर्मा शास्त्री कृत 'दयानंद दिग्विजय १८८१ ई., प्रतापनारायण मिश्र कृत 'श्री देवीसहाय चरित्र' १८९७ ई., बलभद्र मिश्र कृत 'स्वामी दयानंद महाराज का जीवन चरित्र' १८९७ ई., अंबिकादत्त व्यास ने स्वामी भास्करानंद के संबध में 'स्वामी चरितामृत' १८९९ ई. , रामनारायण दगडू कृत 'पृथ्वीराज चरित्र' १८९९ ई. आदि जीवनियों की रचना इस काल में हुई। इसके अलावा इस काल में अन्य भाषाओं से भी हिन्दी में जीवनियों का अनुवाद हुआ है। जिसमें 'स्वामी चरितामृत' यह जीवनी जो है वह बांगला भाषा के 'आर्यचरितामृत' का अनुवाद है। साथ ही हिन्दी जीवनी लेखन में इस काल में विदेशी मिशनरियों ने बहुत बड़ा योगदान दिया है। इन मिशनरियों ने 'विक्टोरिया महारानी का वृत्तांत' १८९६ ई., 'सिकंदर महान का वृत्तांत' १८९९ ई. आदि जीवनियों का प्रकाशन कराया है।

इस तरह भारतेन्दु युगीन जीवनी को देखें तो इस काल में बहुत कम जीवनियाँ लिखीं हैं किन्तु यह वास्तव में जीवनी साहित्य की शुरुआत है। अधिकत्तर जीवनियाँ ऐतिहासिक राजा-महाराजाओं तथा संतों-महंतों को लेकर लिखी गई हैं। इससे प्रेरणा लेकर जीवनी लेखन की ओर साहित्यकार आकर्षित हुए। जिन्होंने जीवनी साहित्य को एक सशक्त विधा के रूप में आगे चलकर स्थापित करने का प्रयास किया।

१.५.३ द्विवेदी युगीन जीवनी साहित्य :

द्विवेदी युग वास्तव में नवजागरण का काल रहा है। इस कालखण्ड में जिस प्रकार गद्य की सभी विधाओं में प्रचुरमात्रा में लेखन हुआ उसी तरह जीवनी साहित्य में भी यह कालखण्ड लेखन की दृष्टि से उत्कर्ष का रहा है। भारतेन्दु युग जिस तरह गद्य के अविर्भाव का युग है उसी की भाँति द्विवेदी युग इसके विकास एवं परिष्कार का युग है। भारतेन्दु जी ने जिस तरह स्वयं जीवनियाँ लिखीं, उसी तरह द्विवेदी ने भी जीवनियाँ लिखी हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने 'प्राचीन पण्डित और कवि' १९१८ ई., 'सुकवि संकीर्तन' १९२४ ई., 'चरित्र चर्चा' १९२९ ई. आदि संकलनों में उनके द्वारा लिखी गई जीवनियाँ हैं। 'प्राचीन पण्डित और कवि' जीवनी में आठ प्राचीन विद्वानों से संबंधित लेख है; तो 'सुकवि संकीर्तन' में सात जीवनियाँ लगभग एक सौ पचास पृष्ठों में रचित है। इसमें महामहोपाध्याय पंडित दुर्गाप्रसाद, बंगकवि माइकेल मधुसूदन और कविवर रविन्द्रनाथ ठाकुर जैसे कवियों की जीवनियाँ हैं। 'चरित्र चर्चा' में बारह व्यक्तियों के जीवन चरित्र लिखे हैं। इनमें रामकृष्ण परमहंस, सीतारामशरण, भगवान प्रसाद, बाबू शिशिरकुमार घोष, प्रसिध्द नायक मौला बक्श आदि विद्वानों की जीवनियाँ हैं। इन जीवनियों में उपदेशात्मकता के दर्शन होते हैं। वे कहते हैं कि ''चरित्रमाला के आधार पर सत्पुरुषों में से दो एक को छोड़कर बाकी सभी आधुनिक कहे जा सकते हैं, इन सभी के चरित्रों में अनेक विशेषताएँ हैं वे सभी गेय है अनुकरणीय है।''[४४] महावीर प्रसाद की जीवनियाँ भले ही निबन्ध स्वरूप हो किन्तु फिर भी वैचारिकता, जीवन दर्शन, भाषा की दृष्टि से अत्यंत सफल सिध्द होती है।

द्विवेदी युग में स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी के साथ-साथ अनेक लेखक जीवनी लेखन की ओर अग्रेसर हुए। इस युग में जीवनीकारों ने विभिन्न विषयों से जुड़े व्यक्ति को लेकर जीवनियाँ लिखी हैं। 'आर्य समाज' के प्रवर्तक महर्षि दयानंद तथा अन्य महापुरुषों से सम्बन्धित जीवनियाँ, राष्ट्रीय महापुरुषों से सम्बन्धित जीवनियाँ, ऐतिहासिक महापुरुषों की जीवनियाँ, विदेशी महापुरुषों की जीवनियाँ, महिलाओं को लेकर लिखी गई जीवनियाँ आदि हिन्दी जीवनी लेखन के महत्त्वपूर्ण विषय इस काल की जीवनियों के रहे हैं। जिनमें रामविलास सारडा ने 'आर्य धर्मेन्द्र जीवन महर्षि' १९०१ ई., लज्जाराम शर्मा ने 'विक्टोरिया का चरित्र' १९०१ ई., कार्तिकप्रसाद ने 'छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र' १९०१ ई., सिध्देश्वर वर्मा ने 'गैरीबाल्डी' १९०१ ई., गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने 'कर्नल जेम्स टाड' १९०२ ई., बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पृथ्वीराज चौहान' १९०२ ई., काशिनाथ खत्री ने 'भारतवर्ष की विख्यात रानियों के जीवन चरित्र' १९०२ ई. तथा 'भारतवर्ष की विख्यात स्त्रियों के जीवन चरित्र' १९०२ ई., देवीप्रसाद ने 'महाराज प्रतापसिंह' १९०३ ई., माधव प्रसाद मिश्र ने 'स्वामी विशुध्दानन्द' १९०३ ई., क्षेत्रपाल शर्मा ने 'डॉक्टर हरनाम सिंह' १९०३ ई., लज्जाराम मेहता ने 'अमीर अब्दुर्रमान खाँ' १९०३ ई., कन्हैयालाल शास्त्री ने 'श्री वल्लभाचार्य दिग्विजय' १९०४ ई., गंगाप्रसाद सिंह ने 'राजा संग्रामसिंह' १९०४ ई., कार्तिकप्रसाद ने 'अहल्याबाई का जीवन चरित्र' १९०४ ई., सखाराम गणेश देवस्कर ने 'आनन्दीबाई' १९०४ ई., परमानंद ने 'पतिव्रता स्त्रियों के जीवन चरित्र' १९०४ ई., शिवव्रतलाल वर्मा ने 'भारत के प्रसिध्द वीरागंना-सती' तथा 'विदुषी स्त्रियों के जीवन चरित्र' १९०४ ई., देवीप्रसाद मुंसिफ ने 'संग्रामसिंह राणा' १९०४ ई., उमापतिदत्त शर्मा ने 'नेपोलियन बोनापार्ट! १९०५ ई., देवीप्रसाद मुंशी ने 'जहांगीरनामा' १९०५ ई., गंगाप्रसाद गुप्त ने 'दादाभाई नौरोजी' १९०६ ई., मुन्नीलाल ने 'बाबू तोताराम का जीवन चरित्र' १९०६ ई., बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'कविरत्न सत्यनारायणजी' १९०६ ई., चमनलाल ने 'स्वामी दयानन्द' १९०७ ई., ठाकुर प्रसाद खत्री ने 'हैदर अली' १९०७ ई., सतीशचन्द्र मिश्र ने 'रणधीर महाराज प्रतापसिंह जी' १९०७ ई., कुँवर कन्हैयालाल ने 'बुन्देलखण्ड केशरी' १९०७ ई.,

वामनाचार्य गिरि ने 'वीरेन्द्र बाजीराव' १९०७ ई., हनुमंत सिंह पन्नालाल ने 'रमणीरत्नमाला' १९०७ ई. और 'दुर्गाप्रसाद साहब बहादुर का जीवन चरित्र' १९०७ ई., रामाशंकर शर्मा ने 'गौरीशंकर' १९०७ ई., द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी ने 'गौरीशंकर उदयशंकर ओझा' १९०७ ई., महादेव भट्ट ने 'लाजपत महिमा' १९०७ ई., अनंतदास ने 'नामदेव की परिचई' १९०७ ई., नर्मदाप्रसाद मिश्र ने 'कलियुग के सतयुगी सपूत' १९०७ ई., वृंदावनलाल वर्मा ने 'भगवान बुध्द का जीवन चरित्र' १९०८ ई., बलदेवप्रसाद मिश्र ने 'तालिया भीम' १९०८ ई., रामजीवन नागर ने 'सती चरित्र संग्रह! १९०८ ई., महादेव भट्ट ने 'अरविन्द महिमा' १९०८ ई., रूपनारायण पाण्डेय ने 'गौरांग चरित्र' १९०९ ई., परमानन्द स्वामी ने 'बुध्द' १९०९ ई., सूर्यकुमार वर्मा ने 'मुगल सम्राट अकबर' १९०९ ई., ज्वालादत्त शर्मा ने 'सिखों के दस गुरु' १९०९ ई., बैजनाथ जी ने 'सच्चा साधू' १९०९ ई., पारसनाथ त्रिपाठी ने 'तपोनिष्ठ महात्मा अरविन्द घोष' १९०९ ई., किशोरीलाल गोस्वामी ने 'नन्हेंलाल गोस्वामी' १९१० ई., अखिलानन्द शर्मा ने 'दयानन्द-दिग्विजय' १९१० ई., सूर्यकुमार वर्मा ने 'बायजाबाई सिन्धिया' १९१० ई., तिलकसिंह ने 'राजपालसिंह' १९१० ई., सत्यानंद अग्निहोत्री ने 'मुझमें देव जीवन का विकास' १९१० ई., नारायण प्रसाद अरोड़ा ने 'स्वामी रामतीर्थ का जीवन चरित्र' १९११ ई., उदयनाराण तिवारी ने 'सम्राट जार्ज पंचम का जीवन चरित्र' १९११ ई., द्वारिकाप्रसाद शर्माने 'भीष्मपितामह' १९११ ई., 'आदर्श महात्मागण' भाग-१ और 'आदर्श महिला' भाग-१, ललिता प्रसाद शर्मा ने 'विदुषी स्त्रियां' भाग-२, देवेन्द्र प्रसाद जैन ने 'ऐतिहासिक स्त्रियाँ' १९११ ई., बैजनाथ शर्मा ने 'श्री गुरुचरित्र' १९११ ई., यशोदादेवी ने 'वीर पत्नी संयोगिता' १९११ ई., 'विदुषी स्त्रियाँ' भाग-२ १९१२ ई., 'भारतीय विदुषी' १९१२ ई., 'नूरजहां' १९१२ ई., चिंमनलाल ने 'राजा युधिष्ठिर का जीवन' १९१२ ई., परमानन्द स्वामी ने 'शंकराचार्य' १९१३ ई., मुकुन्दीलाल वर्मा ने 'कर्मवीर गांधी' १९१३ ई., लज्जाराम शर्माने 'उम्मेदिसिंह चरित्र' १९१३ ई., बलदेव प्रसाद ने 'हकीकतराय धर्मी' १९१३ ई., लक्ष्मीधर वाजपेयी ने 'स्वामी नित्यानन्द' १९१३ ई., आनन्द किशोर मेहता ने 'गुरु गोविन्द सिंह जी'१९१४ ई., बेनीप्रसाद ने

'गुरु गोविन्द सिंह' १९१४ ई., स्वामी श्रध्दानन्द ने 'आर्य पथिक लेखराम' १९१४ ई., सूर्यनारायण त्रिपाठी ने 'रानी दुर्गावती' १९१४ ई., रामानन्द द्विवेदी ने 'गांधी चरित्र' १९१४ ई., नन्दकुमार देवशर्मा ने 'महात्मा गोखले' १९१४ ई., 'लक्ष्मीधर बाजपेयी ने फैजिनी' १९१४ ई., बद्रीप्रसाद गुप्त ने 'दादाभाई नौरोजी' १९१४ ई., अखौरी कृष्णप्रसाद सिंह ने 'भनेलसन' १९१४ ई., रामचन्द्र वर्मा ने 'महादेव गोविन्द रानडे' १९१४ ई., ताराचरण अग्निहोत्री ने 'महाराष्ट्र केशरी शिवाजी' १९१४ ई., जैनेन्द्र किशोर ने 'रामदीन सिंह' १९१४ ई., पाण्डेय लोचनप्रसाद ने 'चरित्रमाला' १९१४ ई., केदारनाथ पाठक ने 'लक्ष्मण द्विवेदी' १९१४ ई., रघुनंदन प्रसाद मिश्र ने 'शिवाजी और मराठा जाति' १९१४ ई., सम्पूर्णानन्द ने 'धर्मवीर गांधी' १९१४ ई., ब्रम्हानंद ने 'जर्मनी के विधाता' १९१४ ई., ज्ञानचंद्र ने 'बीरांगना' १९१५ ई., लाला भगवानदीन ने 'श्रीमती ऐनी बेझेण्ट' १९१५ ई., द्वारिका प्रसाद शर्मा ने 'साक्रटीज महात्मा' १९१५ ई., किशोरीदास ने 'निम्बार्क महामुनीन्द्र' १९१५ ई., इन्द्र वेदालंकार ने 'प्रिंस बिस्मार्क' १९१५ ई., ओंकारनाथ बाजपेयी ने 'समर्थ रामदास' १९१५ ई., नरोत्तम व्यास ने 'प्रल्हाद' १९१५ ई., रामनारायण मिश्र ने 'महादेव गोविन्द रानडे' १९१६ ई., ब्रजबिहारी शुक्ल ने 'मदनमोहन मालवीय' १९१६ ई., संपूर्णानंद ने 'महाराज छत्रसाल' १९१६ ई., चंद्रशेखर पाठक ने 'नेपोलियन बोनापार्ट' १९१६ ई., शिवव्रतलाल ने 'सच्ची स्त्रियां' १९१६ ई., पधनन्दन प्रसाद मिश्र ने 'राजा राममोहन राय' १९१७ ई., शीतलाचरण वाजपेयी ने 'रमेशचंद्र दत्त' १९१७ ई., लक्ष्मीधर वाजपेयी ने 'छत्रपति शिवाजी' १९१७ ई., बेनीप्रसाद ने 'महर्षि सुकरात' १९१७ ई., बालमुकुंद वाजपेयी ने 'ऐनी बेझेन्ट' १९१७ ई., पूणसिंह वर्मा ने 'भीमसेन शर्मा' १९१८ ई., रामानंद द्विवेदी ने 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' १९१८ ई., मातासेवक ने 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' १९१८ ई., रूपनारायण पाण्डेय ने 'बंकिमचन्द्र चटर्जी की जीवनी' १९१९ ई., सत्यानंद स्वामी ने 'श्रीमद दयानंद प्रकाश' १९१९ ई., सुखसंपतिराय भण्डारी ने 'जगदीशचंद्र बसु और उनके अविष्कार' १९१९ ई., सम्पूणानंद ने 'चेतसिंह और काशी का विद्रोह' १९१९ ई., राजेन्द्रप्रसाद ने 'चंपारण्य में महात्मा गांधी' १९१९ ई., रामचंद्र

वर्मा ने 'महात्मा गांधी' १९१९ ई., कन्हैयालाल उपाध्याय ने 'कृष्णचरित्र' १९१९ ई., केदारनाथ गुप्त ने 'गुरुनानक' १९१९ ई., चन्द्रशेखर पाठक ने 'महादजी सिन्धियां' १९२० ई., 'वर्माप्रतापसिंह' १९२० ई., 'सिकन्दरशाह' १९२० ई., सम्पूर्णानन्द ने 'सम्राट हर्षवर्धन' १९२० ई., इंद्र विद्यावाचस्पति ने 'महावीर गैरीवाल्डी' १९२० ई., नन्दकुमार देव शर्मा ने 'पंजाब केसरी महाराज रणजीतसिंह' १९२० ई., रामदास गौड ने 'इटली के विधायक महात्मागण' १९२० ई., वेणीप्रसाद ने 'रणजीतसिंह' १९२० ई., सुखसंपतिराय भण्डारी ने 'महात्मा बुध्द' १९२० ई. आदि जीवनियाँ द्विवेदी काल में लिखी हैं।

इस तरह द्विवेदी युग में जीवनी साहित्य प्रचुरमात्रा में लिखा गया है। जिसके अन्तर्गत ऐतिहासिक महापुरुषों को लेकर लिखी गई जीवनियों की संख्या अधिक है। उसी के साथ-साथ संतों-महंतों, समाज सुधारकों, विदेशी महापुरुषों तथा तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़े नेताओं को भी जीवनीकारों ने अपने जीवनी लेखन में स्थान दिया है। इस तरह से कहा जा सकता है कि द्विवेदी युग जीवनी लेखन की दृष्टि से श्रेष्ठ युग है।

१.५.४ छायावाद युगीन जीवनी :

छायावाद युगीन समय पर राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव अधिक रहा है। इस काल के साहित्य में भी इसका प्रभाव परिलक्षित होता है। कविता, उपन्यास कहानी, नाटक के अलावा अन्य गद्येत्तर साहित्य में भी समाज जागृति के लिए लेखक लेखन कार्य कर रहें थे। इसलिए छायावाद युगीन जीवनी में भी राष्ट्रीय आन्दोलन से जुडे राजनेताओं की जीवनियाँ, ऐतिहासिक महापुरुषों की जीवनियाँ इस काल में अधिक पैमाने पर लिखी गई हैं। जिनमें नवयुवकों में राष्ट्रीय अस्मिता जगाना और उन्हें राष्ट्रीय आन्दोलन में सहभागी कराना यह प्रमुख उद्देश्य इस काल के जीवनीकारों के सामने रहा है। इस काल में जीवनियाँ इस तरह लिखी गई हैं - रामप्रसाद तिवारी कृत 'गांधी - मीमांसा' १९२१ ई., रामनरेश त्रिपाठी कृत 'गांधी जी कौन है' १९२१ ई., नरोत्तमदास कृत 'गांधीगौरव' १९२१ ई., शिवव्रतलाल वर्मा कृत 'सच्ची देवियाँ' १९२१ ई., सुरेन्द्रनाथ तिवारी कृत

'वैदज्ञ मैक्समूलर' १९२१ ई., नरोत्तम स्वामी कृत 'सती पंचरत्न' १९२१ ई., विश्वेश्वर नाथ कृत 'अब्राहम लिंकन' १९२१ ई., डॉ. राजेंद्रप्रसाद कृत 'चंपारण्य में महात्मा गांधी' १९२२ ई., नन्दकुमार देव शर्मा कृत 'भारतीय देशभक्तों के कारावास की कहानी' १९२२ ई., चन्द्रमणि विद्यालंकर कृत 'स्वामी दयानंद का वैदिक स्वराज्य' १९२२ ई., नवजदिकलाल श्रीवास्तव कृत 'श्रीकृष्ण १९२२ ई. बालकृष्ण वाजपेयी कृत 'ऐडम स्मिथ १९२२ ई., रामदुलारे लाल भार्गव कृत 'दिजेन्द्र लालराय' १९२२ ई., मथुरा प्रसाद दीक्षित कृत 'नादिर शाह' १९२२ ई., शिवव्रतलाल कृत 'प्राचीन हिन्दू माताएँ' १९२२ ई., नरोत्तम व्यास कृत 'महात्मा विदुर' १९२३ ई., सुखसंपतराय भण्डारी कृत 'जगदीशचन्द्र बसु १९२३ ई., नवजदिकलाल श्रीवास्तव कृत 'सती रुक्मिणी' १९२३ ई., मनोरमाबाई कृत 'विद्योत्तमा' १९२४ ई., जहुरबख्श कृत 'आर्य महिलारत्न' १९२४ ई., रामनारायण सिंह जायसवाल कृत 'स्वामी शंकराचार्य का जीवन-वृत्तांत' १९२४ ई., चन्द्रराज कृत 'भगवान महावीर १९२४ ई., अशर्फी मिश्र कृत 'धनकुबेर कानेगी' १९२४ ई., बनारसीदास चतुर्वेदी कृत 'महादेव गोविंद रानाडे' १९२४ ई., जयकृष्ण कृत 'भीमसेन से दो-दो बातें' १९२४ ई., प्रियंवदा देवी श्रीवास्तव कृत 'भक्त स्त्रियां' १९२४ ई., ललिता प्रसाद खत्री कृत 'भारतवर्ष की वीर माताएँ' १९२४ ई., विश्व कृत 'विदुषी गार्गी' १९२४ ई., सम्पूर्णानन्द कृत 'सम्राट अशोक' १९२४ ई., सुखसंपतिराय कृत 'शिवाजी' १९२५ ई., रामशंकर त्रिपाठी कृत 'बाप्पा रावल' १९२५ ई., रामवृक्ष शर्मा कृत 'शिवाजी' १९२५ ई., दलपतराय कृत 'भारत के स्त्रीरत्न' १९२५ ई., रामचंद्र टंडन कृत 'सरोजिनी टंडन' १९२५ ई., उमादत्त शर्मा कृत 'शंकराचार्य और शिवाजी' १९२६ ई., जटाधर प्रसाद शर्मा विमल कृत 'अहल्याबाई' १९२६ ई., रामवृक्ष शर्मा कृत 'लंगट सिंह' १९२६ ई., रामनाथ सुमन कृत 'माइकेल मधुसूदन दत्त' १९२६ ई., रामनरेश त्रिपाठी कृत 'जमनालाल बजाज' १९२६ ई., बनारसीदास चतुर्वेदी कृत 'कविरत्न सत्यनारायण की जीवनी' १९२६ ई., रामेश्वर प्रसाद शर्मा कृत 'उद्योगी पुरुष' १९२६ ई., व्यथितहृद्य कृत 'पं. जवाहरलाल नेहरु १९२६ ई., रामबृक्ष शर्मा कृत 'महावर्माप्रतापसिंह' १९२७ ई., जगन्नाथ शर्मा कृत 'रमणी नवरत्न' १९२७ ई., बाबू

शिवनन्दन सहाय कृत 'श्री. गौरांग महाप्रभु' १९२७ ई., भगवानदास केला कृत अबाल ब्रम्हचारिणी कुंती देवी' १९२७ ई., सूर्यदेव सिंह कृत 'महाराजा हम्मीर सिंह' १९२८ ई., कृष्णकांत मालवीय कृत 'हिन्द के सितारे' १९२८ ई., जयचन्द्र शास्त्री कृत 'अशोक' १९२८ ई., शिवकुमार शास्त्री कृत 'नेल्सन की जीवनी' १९२८ ई., मुकुंदराम शर्मा कृत 'वीर शिरोमणि यतीन्द्रनाथ दास' १९२९ ई., देवतास्वरूप भाई परमानन्द कृत 'वीर बैरागी' १९२९ ई., चतुर्भन सहाय कृत 'भक्तवर तुकाराम जी' १९२९ ई., जगपति चतुर्वेदी कृत 'अद्भुत महापुरुष' १९२९ ई., नन्दकिशोर कृत 'कांग्रेस के महापुरुष' १९२९ ई., मातासेवक पाठक कृत 'छत्रपति शिवाजी' १९२९ ई., प्रो. विश्वेश्वर सिध्दान्त शिरोमणि कृत 'महात्मा ईसा' १९३० ई., मन्मथनाथ गुप्त कृत 'चन्द्रशेखर आझाद' १९३० ई., कृष्णकुमार कृत 'योगीराज स्वामी सियाराम का जीवन चरित्र' १९३१ ई., प्रभुदत्त ब्रम्हाचारी कृत 'चैतन्य चरितावली' १९३१ ई., देवव्रत शास्त्री कृत 'गणेश शंकर विद्यार्थी' १९३१ ई., गणेश शंकर विद्यार्थी कृत 'श्री गांधी' १९३१ ई., चन्द्रशेखर शर्मा कृत 'सावित्री और गायत्री' १९३१ ई., गंगाप्रसाद मेहता कृत 'चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य १९३२ ई., नारायणप्रसाद अरोडा कृत ' डी वेलेरा का जीवन चरित्र' १९३२ ई., रूपनारायण पाण्डेय कृत 'ईश्वरचन्द्र विद्यासागर' १९३२ ई., रघुवंशभूषणशरण कृत 'रूपकला प्रकाश' १९३२ ई., प्रबोधचन्द्र मिश्र कृत 'महादेव गोविंद रानाडे' १९३२ ई., प्रबोधचन्द्र मिश्र कृत 'भक्त प्रल्हाद' १९३३ ई., बेनीमाधव अग्रवाल कृत 'इटाली का शहीद' १९३३ ई., सत्यदेव विद्यालंकार कृत 'स्वामी श्रध्दानन्द' १९३३ ई., सत्यभक्त कृत 'कार्ल मार्क्स' १९३३ ई., हर्षवर्धन शुक्ल कृत 'भक्त ध्रुव' १९३३ ई., इंद्र वाचस्पति कृत 'जवाहरलाल नेहरु' १९३३ ई., डॉ. धनीराम प्रेमी कृत 'देवी जोन' १९३४ ई.,श्री गोपाल नेवटिया कृत 'मुस्लिम संतों के चरित्र' १९३४ ई., वेंकटेश्वर नारायण तिवारी कृत 'चारु चरितावली' १९३४ ई., सदानन्द भारती कृत 'लेनिन' १९३४ ई., भगवानदत्त कृत 'भारतीय महिला' १९३५ ई., गणेशदत्त शर्मागौड कृत 'यशवंतराव होल्कर' १९३५ ई., अगरचन्द्र नाहटा कृत 'युग प्रधान जिनचन्द्र सूरि' १९३५ ई., बेचूनारायण कृत 'सम्राट जार्ज पंचम और सम्राज्ञी

मेरी' १९३५ ई., मुकुटबिहारी शर्माकृत 'भारत के स्त्री रत्न' भाग-३ १९३५ ई., चन्द्रशेखर शास्त्री 'हिटलर महान' १९३६ ई. आदि।

इस तरह छायावादी युग में जीवनियाँ लिखी गई हैं। इस काल के जीवनी साहित्य को देखें तो हम कह सकते हैं कि इन जीवनीकारों ने जीवनी लेखन में विभिन्न क्षेत्रों से जुडे महापुरुषों को लेकर जीवनियाँ लिखी हैं। जिसका मूल उद्देश्य पाठकों को इन चरित्रों की महत्ता से परिचित कराना रहा है। जो समाज को आदर्श एवं सफल जीवन जीने के लिए इनका जीवन-चरित्र मार्गदर्शक हो। इस तरह की उम्मीद इन जीवनीकारों में दिखाई देती है। इस काल के जीवनी की भाषा सरल, सहज है जो इस काल के जीवनी की विशेषता कहीं जा सकती है।

१.५.५ छायावादोत्तर जीवनी साहित्य :

छायावादोत्तर युग में जीवनी साहित्य का विकास प्रचुरमात्रा में हुआ है। इस काल के जीवनीकार ने किसी विशिष्ट नायक को अपने जीवनी साहित्य का नायक न मानकर उसने विभिन्न क्षेत्र से जुड़े हुए लोगों को जीवनी का नायक बनाया है। जिनमें लोकप्रिय नेताओं, संत-महात्माओं, साहित्यकारों, विदेशी महापुरुषों, वैज्ञानिकों, खिलाडियों, उद्योगपतियों आदि से सम्बन्धित जीवनियाँ इस काल में लिखी गई हैं। महात्मा गांधी जैसे जनप्रिय नेताओं को लेकर बहुत सारे जीवनीकारों ने जीवनियाँ लिखी हैं और उनके जीवनकार्य को आम जनता के सामने लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इसी के अलावा जीवनीकारों ने क्रान्तिकारियों को लेकर भी जीवनियाँ लिखी हैं। जिनमें भगतसिंग, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्रशेखर आझाद जैसे वीरों के जीवनकार्य को लेकर भी जीवनियाँ लिखी हैं तथा भारतीय नवयुवकों को स्वाधीनता आन्दोलन में उतरने के लिए प्रेरित किया है। इस काल के जीवनीकारों ने तत्कालीन नेताओं, क्रातिकारियों के चरित्र को उभारा है उसी तरह वे छत्रपति शिवाजी महाराज, महावर्माप्रताप जैसे भारत के महापुरुषों को भी जीवनी साहित्य में चरित्र नायक के रूप में उभारा है। जो भारत के वीरत्व की याद दिलाते हैं। इस काल का जीवनीकार यहाँ तक ही अपने-आपको सीमित नहीं करता है बल्कि वह इस

देश के उद्योगपतियों, वैज्ञानिकों तथा संत-महंतों के अलावा जिन-जिन लोगों ने अपने कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत एक सराहनीय कार्य किया है, समाज के सामने आदर्श प्रस्तुत किया है, उनको लेकर भी जीवनीकारों ने जीवनियाँ लिखीं हैं। इस काल के जीवनीकारों की दृष्टि नये-नये चरित्रों की खोज कर उनके कार्य से समाज को अवगत कराने की रही है। सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जी 'कुल्ली भाट' इस रचना के आरम्भ में कहते हैं कि ''बहुत दिनों की इच्छा-एक जीवन-चरित्र लिखुँ, अभी तक पूरी नहीं हुई; चरितनायक नहीं मिल रहा था, ठीक जिसके चरित में नायकत्व प्रधान हो। बहुत आगे-पीछे, दाये-बायें देखा कितने जीवन चरित पढ़े, सब में जीवन से चरित जादा..।''[४५] इस तरह छायावादोत्तर जीवनी में चरित्र की खोज की जाती थी। जो समाज उपयोगी चरित्र हो, समाज के लिए दिशादर्शक हो।

छायावादोत्तर युग में जो जीवनियाँ लिखी गई हैं उसका विकास अगर देखें तो इस तरह से है - देवदत्त शर्मा कृत 'समर्थ स्वामी रामदास' १९३७ ई., चन्द्रशेखर शास्त्री कृत 'सम्राट जार्ज षष्ट' १९३७ ई., 'मुसोलिनी' १९३७ ई., गोपिनाथ दीक्षित कृत 'जवाहरलाल नेहरु' १९३७ ई., परमानन्द त्रिवेदी कृत 'कामरेड एम.एन. राय' १९३८ ई., प्रतापनारायण चतुर्वेदी कृत 'पृथ्वीराज चौहान १९३८ ई., प्रतापनारायण चतुर्वेदी कृत 'स्वामी रामतीर्थ' १९३८ ई., बलदेव प्रसाद वाहीक कृत 'नामदेव चरितावली' १९३८ ई., जगतपति चतुर्वेदी कृत 'लाला लाजपतराय' १९३८ ई., बलदेव सिंह कृत 'देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद' १९३८ ई., मन्मथनाथ गुप्त कृत 'चन्द्रशेखर आझाद' १९३८ ई., द्वारिकाप्रसाद शर्मा कृत 'राबर्ट क्लाइव' १९३८ ई., रामनाथ सुमन कृत 'मोतीलाल नेहरु' १९३९ ई., लक्ष्मणप्रसाद कृत 'महात्मा गांधी' १९३९ ई., बनारसीदास चतुर्वेदी कृत 'अराजकतावादी लुई माइकेल' १९३९ ई., रामइकबाल सिंह कृत 'स्टालिन' १९३९ ई., लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज कृत 'महात्मा गांधी' १९३९ ई., त्रिमूर्ती कृत 'आजादी के शहीद' १९३९ ई., चन्द्रगुप्त वेदालंकार कृत 'स्वातंत्र वीर' १९३९ ई., लाला लाजपतराय कृत 'छत्रपति शिवाजी' १९३९ ई., प्रेमनारायण अग्रवाल कृत

'भवानीदयाल संन्यासी' १९३९ ई., बालमुकंद गुप्त कृत 'सती सावित्री' १९३९ ई., विश्वनाथ राय कृत 'चीन का क्रांतिकारी राष्ट्रनिर्माता सनयतसेन' १९३९ ई., घनश्यामदास बिड़ला कृत 'बापू' १९४० ई., जगदीश झा विकल कृत 'मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद' १९४० ई., भदंत आनंद कौशल्यायन कृत 'भगवान बुध्द' १९४० ई., सुंदरलाल कृत 'हजरत मुहम्मद' १९४० ई., द्वारकाप्रसाद शर्माकृत 'भीष्म पितामह' १९४० ई., लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज कृत 'इटली का तानाशाह मुसोलिनी' १९४० ई., जगदीशनारायण तिवारी कृत 'सुभाषचन्द्र बोस' १९४० ई., तारणीप्रसाद शर्मा कृत 'सती सुलोचना' १९४० ई., त्रिलोकीनाथ सिंह कृत 'स्टालिन' १९४० ई., रामचन्द्र वनौथा कृत 'आंबेडकर का जीवन संघर्ष, १९४० ई., ज्योतिप्रसाद मिश्र कृत 'महात्मा गांधी' १९४० ई., यदुनाथ सरकार कृत 'शिवाजी' १९४० ई., हरिकृष्ण त्रिवेदी कृत 'सुभाषचन्द्र बोस' १९४१ ई., जीवनशंकर याज्ञिक कृत 'महादेव गोविंद रानाडे' १९४१ ई., भवानीदयाल संन्यासी कृत 'स्वामी शंकरानन्द' १९४२ ई., अनंतप्रसाद विद्यार्थी कृत 'मि. चर्चिल' १९४२ ई., ईश्वरप्रसाद माथुर कृत 'तानसेन' १९४२ ई., घनश्यामदास बिड़ला कृत 'श्री जमनालालजी' १९४२ ई., चिरंजीवलाल एकाकी कृत 'भारत निर्माता' १९४२ ई., देवदत्त शास्त्री कृत 'धर्मशीला कौशल्या' १९४४ ई., 'महासती अनुसूया' १९४४ ई., जीवनलाल प्रेम कृत 'गुरु गोविंद सिंह' १९४५ ई., छविनाथ पाण्डेय कृत 'नेता जी सुभाष' १९४६ ई., गिरीशचन्द्र जोशी कृत 'नेताजी सुभाषचन्द्र बोस' १९४६ ई., रतनलाल बंसल कृत 'अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद' १९४६ ई., रामवृक्ष बेनापुरी कृत 'रोजा लुक्जेम्बुर्गी १९४६ ई., आत्मानन्द आनंदप्रिय कृत 'कृष्ण चरित्र' १९४६ कार्तिकेय चरण गुप्त कृत 'सती शकुंतला' १९४६ ई., कैलाशप्रसाद जैन कृत 'महामना पं. मदन मोहन मालवीय' १९४६ ई., रामगोविंद मिश्र कृत 'पं.मदन मोहन मालवीय' १९४६ ई., लक्ष्मणदास स्वामी कृत 'श्री जयदेवदास' १९४६ ई., सत्यप्रकाश कृत 'ऋषि दयानंद' १९४६ ई., सूर्यपाल आर्य कृत 'महात्मा गांधी घर और बाहर' १९४६ ई., कमलधारी सिंह कृत 'भारत की प्रमुख महिलाएँ' १९४६ ई., रत्नलाल बंसल कृत 'मृत्युंजय सरदार भगतसिंग' १९४६ ई., सत्यकाम विद्यालंकार कृत 'राष्ट्रपति कृपलानी'

१९४७ ई., शिवराम कृत 'विप्लव जयप्रकाश' १९४७ ई., चिन्तामणि कृत 'गुरु गोविंद सिंह और उनके पूर्वज' १९४७ ई., काका कालेलकर कृत 'बापू की झांकियां' १९४८ ई., मातासेवक पाठक कृत 'राष्ट्रनायक जवाहरलाल नेहरु' १९४८ ई., लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज कृत 'हमारे जवाहरलाल नेहरु' १९४८ ई. देवीप्रसाद धवन कृत 'पंडित नेहरु: १९४८ ई., इस तरह पंडित जवाहरलाल नेहरु पर लिखी जीवनियाँ उनके बहुमुखी व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। रामवृक्ष बेनापुरी कृत 'सरदार वल्लभभाई पटेल' १९४८ ई., दामोदरदास खंडलेवाल कृत 'बापू की बात' १९४८ ई., मन्मथनाथ गुप्त कृत 'पंडित रामप्रसाद बिस्मिल' १९४८ ई., ब्रजकृष्ण कृत 'बापू के चरणों में' १९४८ ई., सुंदरलाल कृत 'अमर बापू का बलिदान' १९४८ ई., विश्वम्भरनाथ जिज्जा कृत 'जवाहरलाल नेहरु' १९४८ ई.,जयंतीप्रसाद कृत 'सम्राट विक्रमादित्य' १९४८ ई., दीनानाथ व्यास कृत 'सरदार बल्लभभाई पटेल' १९४८ ई., नारायण स्वामी कृत 'श्री रामतीर्थ महाराज' १९४८ ई., शिवनारायण टंडन कृत 'पं.जवाहरलाल नेहरु १९४८ ई., स्वतंत्रानंद स्वामी कृत 'आर्य समाज के महाधन' १९४८ ई., रतनलाल बंसल कृत 'भगतसिंग' १९४९ ई., सुशील नायर कृत 'बापू के कारावास की कहानी' १९४९ ई., विमलकुमार जैन कृत 'सत्य हरिश्चंद्र' १९४९ ई., शारदाप्रसाद गुप्त कृत 'खुदीराम बोस' १९४९ ई., शिवनारायण टंडन कृत 'गोविंद वल्लभ पंत' १९४९ ई., जयरामदेव कृत 'क्रान्तिकारी भक्त ओमप्रकाश' १९४९ ई., सुमंगल प्रकाश कृत 'बापू के कदमों में' १९५० ई., अरुण कृत 'हमारा जवाहर' १९५० ई., बलदेव उपाध्याय कृत 'श्री शंकराचार्य' १९५० ई. इस जीवनी में शंकराचार्य के जीवन चरित्र, विचारधारा तथा व्यक्तित्व का प्रामाणिक एवं प्रभावी निरूपण है। इस के साथ रामनारायण यादवेंदु कृत 'हिटलर' १९५० ई., देवराज मिश्र कृत 'राजर्षि टंडन जी' १९५० ई., गौरीशंकर चटर्जी कृत 'हर्षवर्धन' १९५० ई., भीमसेन विद्यालंकार कृत 'शिवाजी' १९५१ ई., चंद्रबली त्रिपाठी कृत 'धर्मराज युधिष्ठिर' १९५१ ई., रामवृक्ष बेनापुरी कृत 'कार्ल मार्क्स' १९५१ ई., किशोरीदास वाजपेयी कृत 'श्री सुभाषचंद्र बोस' १९५१ ई., रामवृक्ष बेनापुरी कृत 'जयप्रकाश नारायण' १९५१ ई., नन्दकुमार देव

शर्मा कृत 'भारत का लौहपुरुष सरदार पटेल' १९५२ ई.,सुखरामदास चौहान कृत 'हनुमान जीवन चरित्र' १९५२ ई., राहुल सांकृत्यायन कृत 'स्तालिन' १९५३ ई., बालकराम योगीश्वर कृत 'भक्त पूरनमल' १९५३ ई., राहुल सांकृत्यायन कृत 'कार्ल मार्क्स' १९५४ ई., 'लेनिन' १९५४ ई., कृष्णकुमारी कृत 'भारत की विदुषी नारियां' १९५४ ई., कृष्णमोहन श्रीवास्तव कृत 'देश के अमूल्य रत्न' १९५४ ई., केशवकुमार ठाकुर कृत 'तात्या टोपे' १९५४ ई., 'नाना साहब पेशवा' १९५४ ई., क्षेमचंद्र सुमन कृत 'नये भारत के निर्माता' १९५४ ई., रतनलाल बंसल कृत 'सरदार भगतसिंग' १९५४ ई., विनायकराव कोरटकर कृत 'राष्ट्रपति लिंकन' १९५४ ई., शंभुनाथ सक्सेना कृत 'गणेश शंकर विद्यार्थी' १९५४ ई., नित्यानंद स्वामी कृत 'नए भारत के नेता' १९५४ ई., दिगंबर जैन कृत 'विश्वशान्ति के अग्रदूत वर्धमान महावीर' १९५४ ई., सत्यव्रत कृत 'अब्राहम लिंकन' १९५४ ई., रामचन्द्र दिवाकर कृत 'महायोगी' १९५५ ई., राहुल सांकृत्यायन कृत 'सरदार पृथ्वीसिंह' १९५५ ई., राहुल सांकृत्यायन कृत 'माओ त्से तुंग' १९५६ ई., शिवरानी देवी प्रेमचंद कृत 'प्रेमचंद घर में' १९५६ ई. यह जीवनी हिन्दी साहित्य सम्राट प्रेमचंद जी की पत्नी द्वारा लिखी गई है। जो उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण जीवनी है। इसी के साथ राहुल सांकृत्यायन कृत 'बीर चन्द्रसिंह गढ़वाली' १९५६ ई., 'महामानव बुध्द' १९५६ ई., 'घुमक्कडस्वामी' १९५६ ई., 'जिनका मैं कृतज्ञ' १९५६ ई., 'मेरे असहयोग के साथी' १९५६ ई., शम्भुनाथ सक्सेना कृत 'बालगंगाधर तिलक' १९५६ ई., गौरीशंकर गुप्त कृत 'बाबू की दिनचर्या' १९५६ ई., चन्द्रशेखर आचार्य कृत 'लोहपुरुष पटेल' १९५६ ई., पांडुरंग गणेश देशपांडे कृत 'लोकमान्य तिलक' १९५६ ई., पंडित ललिताप्रसाद कृत 'श्री हरिबाबा' १९५७ ई., शंकर सहाय सक्सेना कृत 'झांसी की रानी' १९५७ ई., वाल्मीकि चौधरी कृत 'राजेंद्र बाबू का व्यक्तित्व' १९५८ ई., बलराज मधोक कृत 'श्यामाप्रसाद मुखर्जी' १९५८ ई., दयानंद तथा अधिकारी कृत 'नेता जी सुभाषचन्द्र बोस' १९५८ ई., विजयकुमार पुजारी कृत ' डॉ. बाबासाहब आंबेडकर' १९५८ ई., विद्यानन्द 'विदेह' कृत 'दयानंद चरितामृत' १९५८ ई., देवब्रत शास्त्री कृत 'गणेशशंकर

विद्यार्थी १९५९ ई., कमलनारायण झा कमलेश कृत 'नाना साहब' १९५९ ई., कृष्णदत्त भट्ट कृत 'जाजूजी-जीवन और साधना' १९५९ ई., नरदेव शास्त्री कृत 'दर्शनानंद सरस्वती का संक्षिप्त जीवन चरित्र' १९५९ ई., पन्नालाल श्रीवास्तव कृत 'मौलाना आझाद' १९५९ ई., पूर्णचन्द्र सनक कृत 'चंद्रशेखर आझाद' १९५९ ई., प्रभाकर सदाशिव पंडित कृत 'महर्षि कर्वे' १९५९ ई., खुन्नीलाल शास्त्री कृत 'बुध्द जीवनचरित्र' १९६० ई., रंजन परमार कृत 'यशवंतराव चव्हाण-व्यक्ति और कार्य' १९६० ई., बरुआ कृत 'माखनलाल चतुर्वेदी! १९६० ई., लक्ष्मीशंकर व्यास कृत 'पराडकरजी और पत्रकारिता' १९६० ई. आदि जीवनियाँ छायावादोत्तर युग में लिखी गई हैं।

१.५.६ समकालीन जीवनी साहित्य :

समकालीन साहित्य की विशेषता किसी विशिष्ट एवं संकुचित क्षेत्र को छोडकर व्यापकता को अपनाना है। जिसमें साहित्य की सभी विधाओं ने व्यापक फलक पर वैचारिकता को अपनाया है। अपितु जीवनी साहित्य में भी नये-नये क्षेत्र से जुड़े हुए चरित्र नायक को जीवनियों के नायकों के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। इसके अन्तर्गत जिस तरह एक महापुरुष है, उसी के साथ-साथ एक आम आदमी भी, जिनको लेकर जीवनीकारों ने जीवनियाँ लिखी हैं। इसलिए इस काल के जीवनी साहित्य को विशिष्ट कोटियों की जीवनियाँ है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। इस काल में ऐतिहासिक महापुरुषों की जीवनियाँ, समाजासुधारकों की जीवनियाँ, वैज्ञानिकों की जीवनियाँ, खेलजगत से जुड़े हुए खिलाडियों की जीवनियाँ, फिल्मक्षेत्र से जुड़े हुए सिने हस्तियों की जीवनियाँ, उद्योगजगत से जुड़े हुए उद्योगपतियों की जीवनियाँ, राजनीति से जुड़े हुए राजनेताओं की जीवनियाँ, साहित्यकारों की जीवनियाँ, संत महंतों की जीवनियाँ जैसे विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को चरित्र नायक बनाकर जीवनियाँ लिखी गई हैं। जिसने जीवनी लेखन के सभी सिध्दांतों से ऊपर उठकर जीवनी नायक के कार्य को महत्त्व दिया। इन जीवनियों का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य के सामने उस चरित्र को प्रस्तुत करना है, जिसने अपने कर्तृत्व के धरातल पर एक उच्च शिखर प्राप्त किया है। इस काल के जीवनीकार समाज के सभी

क्षेत्रों से आम आदमी को परिचित कराना चाहते हैं ताकि वह निश्चित दिशा में पहल करे। एक तरह से मनुष्य की ज्ञानवर्ध्दन की दृष्टि से इस काल की जीवनियाँ महत्त्वपूर्ण कदम उठाती है। जिसमें देश-विदेश जैसी कोई सीमाएँ नहीं रहने दी बल्कि चरित्र नायक के कार्य से समाज को ज्ञात कराना यह प्रमुख उद्देश्य इन्होंने रखा है। इस काल में विभिन्न भाषाओं की जीवनियों को अनुवादित भी किया गया है। एक तरह से यह काल जीवनी लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

समकालीन जीवनियों के विकास को हम इस रूप में देख सकते हैं - राहुल सांकृत्यायन कृत 'कप्तान लाल' १९६१ ई., 'सिंहल के वीर पुरुष' १९६१ ई., डॉ.भवानी लाल भारतीय कृत 'विशुध्द श्रीकृष्ण चरित्र' १९६१ ई., आचार्य चंद्रशेखर शुक्ल कृत 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल जीवन और व्यक्तित्व' १९६३ ई., यह जीवनी उनके भतीजे द्वारा लिखी गई है। जो आ. रामचंद्र शुक्ल के जीवन को बड़े सशक्त रूप में उभारती है। इसके साथ हरि मोहन शर्मा कृत 'भारतीय क्रिकेट के नवरत्न' १९६४ ई., मदन गोपाल कृत 'क़लम का मजदूर' १९६५ ई. जो प्रेमचंद के जीवन को लेकर लिखी गई जीवनी है। योगीराज थानी कृत 'भारत की महान आत्माएँ' १९६५ ई., ओमप्रकाश सिंहल कृत 'हमारे वैज्ञानिक' १९६५ ई., डॉ. प्रेमनारायण टंडन कृत 'स्वतंत्रता-संग्राम के सैनिक' १९६५ ई., पारसनाथ त्रिपाठी कृत 'कबीर' १९६७ ई., गोपाल सिंह कृत 'गुरु गोविंद सिंह' १९६७ ई., श्रीकृष्ण नारायण रजनजनकर कृत 'पण्डित भातखंडे' १९६७ ई., राजेन्द्रशंकर भट्ट कृत 'महावर्मा प्रताप' १९६७ ई., ओंकार शरद कृत 'लोहिया' १९६७ ई., परमेश्वर प्रसाद सिंह कृत 'राष्ट्र विभूति भगिनी निवेदिता' १९६७ ई., विरेंद्र सिंधु कृत 'युगद्रष्टा भगतसिंह और उनके मृत्युंजय पुरखे' १९६८ ई. यह जीवनी उनके भतीजे ने लिखी है। जो भगतसिंह के क्रांतिकारी विचारों के साथ उनके बहुआयामी व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है। जैनेंद्र कुमार ने गांधीजी की जीवनी 'अकाल पुरुष' १९६८ ई., कमल गुप्त कृत 'अस्सी घाव' तथा 'कठपुतली नवाब' १९६८ ई., संतराम वत्स कृत 'जगदीशचन्द्र बसु' तथा 'स्वामी विवेकानंद' १९६८ ई., रामविलास शर्मा कृत

'जगदीशचंद्र बसु' तथा 'स्वामी विवेकानंद' १९६८ ई., रामविलास शर्मा कृत 'निराला की साहित्य साधना' १९६८ ई. में लिखी जिसमें शर्मा जी ने निराला के संदर्भ में विभिन्न किंवदंतियों का खंडन कर तथ्यपूर्ण घटनाओं की खोजबीन करते हुए निराला को प्रस्तुत किया है। डॉ. सुरेशचन्द्र गुप्त कृत 'भारत के प्रसिध्द खिलाडी' १९६९ ई., वियोगी हरि कृत 'ठक्कर बापा' १९७० ई., प्रो. धर्मबीर कृत 'लाला हरदयाल' १९७० ई., ब्रह्मचारी शिवानंद आंजनेय कृत 'हमारे श्री महाराज जी' १९७० ई., श्रीनिवास बालाजी हडीकर कृत 'नाना फडणवीस', 'रानी लक्ष्मीबाई' तथा 'तात्या टोपे' विशेष उल्लेखनीय जीवनियाँ हैं। शांति जोशी जी ने छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पंत की जीवनी 'सुमित्रनंदन पंत : जीवनी और साहित्य' १९७० ई.में लिखी। शांति जोशी सुमित्रानन्दन पंत की बहन होने के कारण सुमित्रानंदन पंत के निजी जीवनी पर दृष्टिक्षेप डालने की दृष्टि से यह जीवनी महत्त्वपूर्ण है। शिवकुमार कौशिक कृत 'प्रियदर्शिनी इंदिरा गांधी' १९७० ई., अनिता औलकी कृत 'युग चरण' १९७० ई., ओंकर शरद कृत 'लोहिया' १९७१ ई., यदुबंश सहाय कृत 'महर्षि दयानंद' १९७० ई., संतराम वत्स्य कृत 'मेरी क्यूरी' १९७१ ई., श्यामजी गोकुल वर्मा कृत 'स्वामी रामतीर्थ' १९७१ ई., मन्मथनाथ गुप्त कृत 'भगतसिंह और उनका युग' १९७२ ई. इस जीवनी में भगतसिंह का महत्त्व समाजवादी, धर्मनिरपेक्षतावादी तथा निरीश्वरवादिता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। शम्भुप्रसाद शहा कृत 'गोविंदवल्लभ पंत : एक जीवनी' १९७२ ई., शिवप्रसाद सिंह कृत 'उत्तरयोगी' १९७२ ई. इस जीवनी के अन्तर्गत अरविंद को कवि, पत्रकार, शिक्षाशास्त्री तथा क्रांतिकारी जैसे विविध आयामों पर प्रकाश डाला है। विष्णु प्रभाकर कृत 'आवारा मसीहा' १९७२ ई. यह जीवनी बंगला के प्रसिध्द उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के जीवन-कार्य को लेकर लिखी गई है। जो जीवनी साहित्य में एक मौलिक कृति मानी जाती है। जिसमें शरदचंद्र जी के बिहार से वर्मा तक फैले परिचितों से सम्पर्क कर बड़े ही अध्ययनपूर्ण ढंग से उनका जीवन परिचय दिया है। जो उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं पर सूक्ष्मता से प्रकाश डालता है। इसके अलावा सुरेंद्र जोशी कृत 'चंद्रशेखर आझाद' १९७२ ई., संतराम वत्स कृत 'मेघनाथ साहा' १९७२ ई., कृष्ण हठीसिंह कृत 'इंदु से

प्रधानमंत्री' १९७२ ई., कमलनयन बजाज कृत 'काकाजी बापू बिनोबा' १९७२ ई., गोकुलचंद्र जैन कृत 'चौबीस तीर्थकार' १९७३ ई., व्यथित हृदय कृत 'जागरण के अग्रदूत' १९७३ ई., आशारानी व्होरा कृत 'भारत के अग्रणी महिलाएँ' १९७३ ई., श्याम बहादुर वर्मा कृत 'महायोगी श्री अरविंद' १९७३ ई., प्रभाकर माचवे कृत 'छत्रपति शिवाजी' १९७५ ई., शिवानंदन सहाय कृत 'हरिश्चंद्र' १९७५ ई., लक्ष्मीनारायण लाल कृत 'जयप्रकाश नारायण' १९७५ ई., अमृतलाल नागर कृत 'चैतन्य महाप्रभु' १९७५ ई., डॉ. अमरनाथ सेठ कृत 'जयप्रकाश नारायण' १९७५ ई., सुरेश सलिल कृत 'अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी' १९७६ ई., सत्यकाम विद्यालंकार कृत 'अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी' १९७६ ई., सत्यकाम विद्यालंकार कृत 'अमर हुतामा स्वामी श्रध्दानंद' १९७६ ई., विष्णु प्रभाकर कृत 'सरदार वल्लभभाई पटेल' १९७६ ई., विष्णुचंद्र शर्मा कृत 'अग्नि सेतु' १९७६ ई. जो बंगला के विप्लवी कवि काजी नजरुल इस्लाम के जीवनपर हिन्दी में लिखी गई पहली तथा एकमात्र जीवनी है। साथ ही लक्ष्मीनारायण लाल कृत 'अंधकार में एक प्रकाश : जयप्रकाश' १९७७ ई., कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर कृत 'इंदिरा गांधी' १९७७ ई., रमेशचंद्र कृत 'जनमुक्ति जयप्रकाश' १९७७ ई., अक्षय कुमार जैन कृत 'जेल से जसलोक तक' १९७७ ई., उमाशंकर वर्मा कृत 'युगपुरुष जयप्रकाश' १९७७ ई., जगदीश चावला कृत 'लोकनायक जयप्रकाश नारायण' १९७७ ई., अवध बिहारीलाल कृत 'संपूर्ण क्रांति के सूत्रधार : लोकनायक जयप्रकाश' १९७७ ई., राजाराम आझाद कृत 'देश दिवाकर बापू जगजीवन राम' १९७८ ई., जयपालसिंह 'तरंग' कृत 'मिर्जा गालिब' १९७९ ई., नत्तन सिंह कृत 'इतिहास पुरुष महाराजा सूरजमल' १९७९ ई., यतींद्र भटनागर कृत 'युगपुरुष टीट' १९७९ ई., कमलारत्नम् कृत 'कमलादेवी : एक समर्पित व्यक्तित्व' १९७९ ई., हंसराज रहबर कृत 'योद्धा संन्यासी विवेकानंद! १९७९ ई., सोमदत्त पथिक त्रिपाठी कृत 'शक्ति पुत्र छत्रसाल' १९८० ई., हरिप्रसाद थपलियाल कृत 'श्यामा प्रसाद मुखजी' १९८० ई., मथुरादास थापर कृत 'अमर शहीद सुखदेव' १९८० ई., राजकुमार अनिल कृत 'देशभकत स्वामी', 'राष्ट्रनेता स्वामी दयानंद' १९८० ई., विजयदेव कृत 'ममतामयी माँ

मदर टेरेसा' १९८० ई., मधुरेश कृत 'देवकी नन्दन खत्री' १९८० ई., श्यामलला 'मधुप' कृत 'क्रांतिकारी कुँवरसिंह' १९८० ई., सुधा चौहान कृत 'प्रेमचंद विश्वकोश भाग १' १९८१ ई. इसके अन्तर्गत प्रेमचंद का कालाक्रमानुसार जीवनवृत दिया गया है। डॉ. रघुवंश कृत 'मानवपुत्र ईसा : जीवन और दर्शन' १९८५ ई., रामविलास शर्मा कृत 'मार्क्स, त्रोत्स्की और एशियाई समाज' १९८६ ई., राजकमल राय कृत 'शिखर से सागर तक' १९८६ ई., रामनिवास जाजू कृत घनश्यामदास बिड़ला को लेकर 'मरुभूमि का वह मेघ' १९८६ ई., मुकुटबिहारी लाल कृत 'आचार्य नरेंद्र देव : युग और नेतृत्व १९८७ ई., चंद्रशेखर कृत 'जीवनयात्रा : राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह का जीवनी चरित्र' १९८७ ई., डॉ. तेजबहादुर चौधरी कृत 'मेरे बड़े भाई शमशेर जी' १९९५ ई., कमला सांकृत्यायन कृत 'महामानव महापंडित' १९९५ ई. यह जीवनी राहुल सांकृत्यायन की पत्नी द्वारा लिखी हुई जीवनी है। विष्णुचंद्र शर्मा कृत 'समय साम्यवादी' १९९७ ई. यह जीवनी भी राहुल सांकृत्यायन को लेकर ही लिखी गई है। प्रतिभा अग्रवाल जी ने भारतेन्दु की जीवनी 'प्यारे हरिचंद्रजू' १९९७ ई., सुलोचना रांगेय राघव ने पति रांगेय राघव की जीवनी 'रांगेय राघव : एक अंतरंग परिचय' १९९७ ई., मनमोहन ठाकौर द्वारा राजेन्द्र यादव की जीवनी 'राजेन्द्र यादव : मार्फत मनमोहन ठाकौर' १९९९ ई., ज्ञानचंद्र जैन कृत अमृतलाल नागर की जीवनी 'शेष कथा' १९९९ ई., बिन्दु अग्रवाल द्वारा पति भारतभूषण अग्रवाल की जीवनी 'स्मृति के झरोखे से' १९९९ ई. में लिखी है। जो भारतभूषण अग्रवाल जी के जीवन को लेकर महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। राजकमल बोरा ने आचार्य रामचंद्र शुक्ल को लेकर 'चिंतामणि चिंतक : रामचंद्र शुक्ल' २००० ई., हरिश कुमार कृत 'युगपुरुष बाबू जगजीवन राम' २००० ई., पुष्पा भारती कृत 'अमिताभ आख्यान' २००० ई. आदि महत्त्वपूर्ण जीवनियाँ इस काल में लिखी हैं। इस काल के जीवनीकारों ने जीवनी लेखन के लिए विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े हुए जीवनी नायकों को लेकर जीवनी लेखन किया है।

१.५.७ इक्कीसवीं सदी की जीवनी :

महिमा मेहता ने नरेश मेहता को लेकर 'उत्सव पुरुष : श्री नरेश मेहता' २००३ ई. में जीवनी लिखी। जो उनके निजी जीवन एवं लेखन प्रक्रिया को लेकर बड़े ही यथार्थ रूप में प्रकाश डालती है। विष्णु प्रभाकर कृत 'अमर शहीद भगतसिंह' २००३ ई., हिमांशु जोशी कृत 'अमर शहीद अशफाक उल्ला खाँ' २००३ ई., नितीश विश्वास कृत ' डॉ. बी. आर. आंबेडकर' २००४ ई., गायत्री कमलेश्वर ने कमलेश्वर जी के जीवन को लेकर 'कमलेश्वर मेरे हम सफर' २००५ ई.में जीवनी लिखी है। अलोक भारद्वाज कृत 'अमिताभ महानायक का जीवन संघर्ष' २००८ ई., हिमांशु राय कृत 'युग पुरुष बाबा साहब डॉ. आम्बेडकर' २००८ ई., शान्ता कुमार कृत 'विश्व-विजेता विवेकानंद' २००९ ई., राजीव रंजन कृत 'युगद्रष्टा विवेकानंद' २००९ ई., हरीश भिमानी कृत 'लता दीदी' २००९ ई., कृष्णदेव झारी कृत 'युगकवि निराला' २०१० ई., वेद प्रकाश सोनी कृत 'आजाद हिंदी फौज और नेताजी' २०१० ई., विपुल विनोद तथा नमन विनोद कृत 'ऐल्बर्ट आइंस्टाइन' २०१३ ई., अरुण सिन्हा कृत 'नीतिशकुमार और उभरता बिहार', सुशीला कपूर कृत 'लौहपुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल', एम. आई. राजस्वी कृत 'क्रांतिकारी बिपिनचंद्र पाल' तथा 'शहीद-ए-वतन अशफाक उल्लाखाँ', तथागत राय कृत 'डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, विनोद विप्लव कृत 'हिन्दी सिनेमा के १५० सितारे', सुशील कपूर कृत 'महान अविष्कारक मार्कोनी', राकेश शर्मा कृत 'प्रथम अंतरिक्ष यात्री यूरी गागरिन', दिनकर कुमार कृत 'महान इंजीनियर विश्वेश्वरैया', सुशील कुमार फुल्ल कृत 'एक संवेदनशील राजनेता शान्ता कुमार, तारा अली बेग कृत 'सरोजिनी नायडू', डॉ. शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव कृत 'लोकनायक जयप्रकाश नारायण', श्रीवास्तव एवं चतुर्वेदी कृत 'शक्तिपुंज इंदिरा', डॉ. महेशचंद्र शर्मा कृत 'राष्ट्रपति जाकिर हुसेन', विश्वंभरनाथ पांडे कृत 'इंदिरा गांधी', माजदा असद कृत 'डॉ. जाकिर हुसैन', डॉ. मस्तराम कपूर कृत 'डॉ. राममनोहर लोहिया, सुबोध महंती कृत 'कल्पना चावला, विष्णुचंद्र शर्मा कृत 'मुक्तिबोध', डॉ. भगवान सिंह वर्मा कृत 'स्वामी विवेकानंद', राजशेखर व्यास कृत 'मृत्युंजय

भगतसिंह', रमेश अहसास कृत 'आधुनिक भारत के सपूत शहीद भगतसिंह', आर. एम. लाला कृत 'जे.आर.डी. टाटा', महेश शर्मा ने 'राष्ट्र गौरव ए.पी.जे. अब्दुल कलाम', 'सोनिया गांधी', 'अटल बिहारी' तथा 'लालकृष्ण अडवानी' की जीवनियाँ लिखी हैं। राजशेखर मिश्रा ने 'सौरवदा', 'सचिन', 'सेहवाग' तथा 'राहुल द्रविड' जैसे खिलाडियों की जीवनियाँ लिखी हैं। फिल्म अभिनेता राजकपूर की बेटी रितू नंदा ने 'राजकपूर' की जीवनी लिखी है। तो अभिनेता प्रेम चोप्रा की बेटी सुनयना ने 'प्रेम चोप्रा' की जीवनी लिखी है। इस तरह जीवनी लेखन के क्षेत्र में वर्तमान समय में देखे तो प्रचुरमात्रा में जीवनियाँ लिखी जा रही हैं और नये-नये प्रतिभाशाली व्यक्तित्व को जीवनी नायक के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। साथ ही दुनिया के विभिन्न भाषाओं में लिखी गई जीवनियों का अनुवाद भी बड़े पैमाने पर किया जा रहा है जो जीवनी विधा को सशक्त बनाने के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

१.६ मराठी जीवनी का विकास :

जीवनी जीवन का वृतांत होता है। यह साहित्य की एक पुरानी विधा है। यह भारत के लिए कोई नई साहित्य विधा नहीं है। पाश्चात्य देशों में जब साहित्य का जन्म भी नहीं हुआ था तब से भारत में जीवनी विधात्मक साहित्य सृजना हुई है। यह विधा हजारों वर्षों से भारत में रूढ़ है किन्तु उनमें से अधिकांश जीवनियाँ संस्कृत में हैं।

मराठी में जीवनी लेखक की एक सुदीर्घ परंपरा है। १३ वीं सदी के मध्य से हमें मराठी साहित्य का अस्तित्व मिलता है। १२ वीं १३ वीं सदी के महानुभाव साहित्य से ही मराठी में जीवनी लेखन हुआ है किन्तु अन्य गद्य विधाओं की तरह मराठी में जीवनी विधा का कलात्मक विकास भारत में अंग्रेजों के आगमण के बाद हुआ। ''अंग्रेंजी जीवनीकारों की राह पर चलकर मराठी जीवनीकारों ने सृजन किया है, बदलाव किए हैं किन्तु यह केवल अंग्रेजों का अंधानुकरण नहीं है। बल्कि तत्कालीन समय में अंग्रेजों की तरह भारत में भी सामाजिक बदलाव हो रहे थे। इन बदलावों के अनुरूप मराठी जीवनी साहित्य में बदलाव हुए हैं ऐसा कहना संयुक्तिक होगा।''[४६]

अन्य साहित्य विधाओं की अपेक्षा जीवनी विधा अत्यंत कठिन विधा है। जीवनी विधा में कालानुरूप परिवर्तन हुए हैं। मराठी में जीवनी विधा का विकास निम्न रूप से स्पष्ट होता है।

१.६.१ महानुभावकालीन जीवनी साहित्य :

जीवनी साहित्य के विकास का उपर्युक्त वर्गीकरण जीवनी विधा के अध्ययन की सुविधा के लिए किया गया है। इससे हम जीवनी विधा के विकास को सहजता से समझ सकते हैं।

महानुभाव संप्रदाय महाराष्ट्र का एक महत्वपूर्ण भक्तिसंप्रदाय है। कवि मुकुंदराज के पश्चात एवं संत ज्ञानेश्वर के पूर्व इस संप्रदाय का उदय हुआ। महानुभाव संप्रदाय हिंदु धर्म का ही एक संप्रदाय है जिसकी स्थापना स्वामी चक्रधर ने की है। महानुभाव काल में मराठी जीवनी विधा का आरंभ हुआ है।

लीळाचरित्र :

'लीळाचरित्र' मराठी की प्रथम जीवनी है। लीळा चरित्र अर्थात महानुभाव संप्रदाय के आद्यप्रवर्तक श्री चक्रधर स्वामी का जीवनचित्र है। प्रस्तुत जीवनी का लेखन चक्रधर स्वामी के शिष्य म्हाइंभट ने इ.स. १२७६ में किया है। जीवनी में म्हाइंभट ने अपने गुरू अर्थात चक्रधर स्वामी की लीळा यादों को चित्रित किया है।

महानुभाव साहित्य एवं तत्वज्ञान का मूलाधार 'लीळाचरित्र' है। मराठी की प्रथम जीवनी के रूप में 'लीळाचरित्र' का महत्व अनन्यसाधारण है। 'लीळाचरित्र' दो भागों में विभाजित है एकांक पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध। एकांक में श्री चक्रधर के प्रधानपुत्र के मृतदेह में प्रवेश से पैठण आगमण तक का चित्रण हुआ है। उत्तरार्ध में नागदेवता को किए बोधदानांतर श्री चक्रधर स्वामी के जीवन का उत्तरार्ध आरंभ होता है वह उनके प्रयाणकाल तक चलता है।

'लीळाचरित्र' में कुल लीळाओंकी संख्या १५०९ है। चक्रधर स्वामी का व्यक्तित्व एवं उनके जीवन के विविध पहलुओं के दर्शन प्रस्तुत जीवनी में होते हैं। जीवनी में

चक्रधरकालीन बाईसा, नागदेव, दादोसा, सारंग, पंडित, महदाईसा आदि का चित्रण हुआ है। १३ वीं सदी की सामाजिक, धार्मिक, राजकीय परिस्थिति का चित्रण 'लीळाचरित्र' जीवनी में हुआ है। ''महाराष्ट्रीयन समाज एवं संस्कृति के ऐतिहासिक अध्ययन के लिए 'लीळाचरित्र' जीवनी अत्यंत उपयोगी है। प्रस्तुत जीवनी ने मराठी के अनेक लेखकों को ग्रंथसृजना की प्रेरणा दी है।''[४७]

श्री गोविंदप्रभु चरित्र (१२८८)

महानुभाव संप्रदाय के संस्थापक श्री चक्रधर स्वामी के शिष्य म्हाईंभट का 'श्री गोविंदप्रभु चरित्र' यह दूसरा ग्रंथ है। प्रस्तुत ग्रंथ में म्हाइंभट ने परमगुरू गोविंदप्रभु के जीवन-कार्य को चित्रित किया है। महानुभाव पंथ में इस जीवनी का उल्लेख 'ऋद्धिपूरचरित्र' अथवा 'ऋद्धिपूर लीळा' के नाम से किया जाता है किन्तु वि. धि. कोलते ने इसका नामकरण 'श्री गोविंदप्रभूचरित्र' किया है।

श्रीगोविंद प्रभू वऱ्हाड प्रांत के थे। वे ऋद्विपूर आश्रम में रहकर लोगों को उपदेश करते थे। महानुभावों की दृष्टि से श्रीगोविंदप्रभू भगवान के अवतार थे। इसी कारण इस जीवनी को महानुभाव धर्म प्रवर्तकों में से एक ईश्वरी पुरूष की जीवनी की दृष्टि से देखा जाता है। प्रस्तुत जीवनी में गोविंदप्रभू की पसंद-नापसंद उनके समता विषयक विचार आदि का चित्रण हुआ है। गोविंदप्रभु के व्यक्तित्व के विभिन्न रूपों का दर्शन प्रस्तुत जीवनी से होता है। सागवती, दहिवडा, साकरमांडे आदि तत्कालीन वस्तुओं की जानकारी जीवनी से होती है। प्राचीन गद्य का ऐवज के रूप में भाषाविदों को यह जीवनी महत्वपूर्ण लगती है।

१.६.२ वारकरी संप्रदाय कालीन जीवनी विधा :

वारकरी संप्रदाय को 'भागवत संप्रदाय', 'भक्ति संप्रदाय' एवं वारकरी संप्रदाय में से किसी भी नाम से जाना जाता है। 'वारकरी संप्रदाय' में संत निवृत्तिनाथ, संत ज्ञानेश्वर, संत सोपानदेव, संत मुक्ताबाई, संत नामदेव, संत गोरोबा, संत चोखोबा, संत एकनाथ, संत तुकाराम आदि संतों ने अभंग रचना की है। वारकरी संप्रदाय में संत नामदेव ने संत ज्ञानदेव की जीवनी तीन प्रकरणों में लिखी है।

संत ज्ञानदेव की जीवनी :

संत नामदेव ने संत ज्ञानेश्वर की जीवनी तीन अध्यायों में लिखी है। प्रस्तुत जीवनी में ज्ञानेश्वर का चित्रण संत के रूप में हुआ है। संत नामदेव ने ज्ञानेश्वर के साथ तीर्थयात्रा की थी। संत ज्ञानेश्वर ने आळंदी में समाधि ली। ज्ञानेश्वर की समाधी लेने के समय नामदेव उनके साथ थे।

नामदेव ने संत ज्ञानेश्वर की जीवनी लिखी है किन्तु उसमें एकसंघता, श्रृंखलाबध्दता नहीं है। इसी कारण कुछ विद्वान यह प्रश्न उपस्थित करते हैं कि यह नामदेव द्वारा रचित जीवनी है या नहीं किन्तु यह ज्ञानदेव की ही जीवनी है। श्री सु. ति. अक्कोछे कहते हैं ''संत ज्ञानेश्वर के लौकिक एवं परमार्थिक जीवन को इतनी सुंदरता से चित्रित करनेवाली एक भी जीवनी नामदेव पूर्व समय में नहीं मिलती। ज्ञानेश्वर के पहले जीवनीकार नामदेव ही हैं यह सुयोग काफी बड़ा है।''[४८]

संत नामदेव ने संत ज्ञानेश्वर की जीवनी तीन भागों में लिखी है। 'आदि, समाधि एवं तीर्थावली' इन तीन अध्यायों में संत ज्ञानेश्वर उनके पिता, भाई एवं बहनों के संदर्भ की सूक्ष्म घटनाओं को प्रतिपादित करने की चेष्टा संत नामदेव ने की है।

अ. आदि :

आदि भाग में ज्ञानेश्वर के पिता विठ्ठलपंत के जन्म से ज्ञानेश्वर के ज्ञानेश्वरी लेखन तक की घटनाओं का चित्रण हुआ है। संन्यासी की संतान के रूप में ज्ञानेश्वर एवं उनके भाईयों की होनेवाली अवहेलना का ज्ञानेश्वर ने कैसे सामना किया, सभी भाईयों एवं बहनों ने इस समस्या पर धैर्यशीलता से कैसे मार्ग निकाला आदि घटनाओं का चित्रण नामदेव ने किया है। तत्कालीन कर्मठ ब्राम्हण पैठण जाकर शुध्दिपत्रक लाने को ज्ञानेश्वर से कहते हैं। ज्ञानेश्वर अपने भाईयों के साथ पैठण जाकर शुध्दिपत्रक लाते हैं और हम भी ब्राम्हण है यह सिध्द करते हैं।

ब. तीर्थावळी :

तीर्थावळी के रूप में नामदेव ने ६२ अभंगों की रचना की है। प्रस्तुत अभंगों से संत नामदेव के भाव कोमल मन के दर्शन होते हैं। ज्ञानप्राप्ति के पश्चात ज्ञानेश्वर की प्रेरणा, आग्रह से नामदेव ने उनके साथ तीर्थयात्रा की है। तीर्थयात्रा में उनमें नजदीकी बढ़ी है एवं हृदयसंवाद हुए हैं।

तीर्थावळी में संत नामदेव से मिलने आए संत ज्ञानेश्वर का प्रसंग मन को झकझोर देता है। तीर्थयात्रा में ज्ञानेश्वर ने संत नामदेव को भक्तियोग का रहस्य बताया है। तीर्थावळी में संत ज्ञानेश्वर के विचारों का विकास मिलता है।

क. समाधि :

संत ज्ञानेश्वर ने शके १२१८ में कार्तिक वद्य त्रयोदशी को आळंदी में समाधि ली। इस घटना को नामदेव ने महत्वपूर्ण माना है। नामदेव ने ज्ञानेश्वर की जीवनी 'समाधि' अध्याय से समाप्त की है। समाधि अध्याय में 'श्री ज्ञानेश्वर समाधि महिमा' एवं 'श्री ज्ञानेश्वर की समाधि' दो भाग है। इन दोनों भागों में २६६ अभंग है। अपने साथी तथा सखा के चले जाने के बाद मन की भावनाओं की अभिव्यक्ति 'समाधि' अध्याय में हुई है। ज्ञानेश्वर के समाधि वियोग का दुःख उनके गुरू एवं अग्रज निवृत्तीनाथ मूक रूप से व्यक्त करते हुए दिखाई देते हैं। समाधि अध्याय के संबंध में सुभाषचंद्र अक्कोछे कहते हैं 'व्यक्तिप्रसंग, चित्रण कौशल, रस, भाषा, कलात्मकता आदि सभी साहित्यिक विशेषताओं से नामदेव का समाधि अध्याय साहित्य में अपूर्व है।''[४९]

संत नामदेव ने 'सोपानदेव की समाधि, 'मुक्ताबाई की समाधि 'निवृत्तीनाथ की समाधि' आदि जीवनीपरक ग्रंथों की सृजना की है। नामदेव ने कबीर, कमाल, मीराबाई, भानुदास, नरसी मेहता आदि का चरित्र जीवनी के माध्यम से स्पष्ट किया है। सच्चिदानंद बाबा, सत्यमलनाथ, श्रीधर एवं निरंजनमाधव आदि ने नामदेव की जीवनी लेखन परंपरा आगे चलाई है। निळोबा ने तुकोबा की जीवनी लिखी है। आत्मादास महाराज शेळके हकलीकर, मेऊस्वामी, गिरीधर स्वामी ने रामदास की जीवनी लिखी है।

महीपती बुवा ताहराबादकर ने सबसे अधिक जीवनियाँ लिखी हैं। आपने 'भक्तिविजय', 'भक्तलीलामृत', 'संतविजय' जीवनियाँ लिखी हैं। इन जीवनियों की भाषा रसपूर्ण है। आपने इन जीवनियों के माध्यम से भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित किया है। अध्यात्मिक एवं धार्मिक दृष्टि से आपके ग्रंथ महत्त्वपूर्ण हैं।

श्री सरस्वती गंगाधर ने इ. स. १५५८ में 'गुरूचरित्र' जीवनी लिखी है। यह दत्त संप्रदाय का महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

हनुमंत स्वामी की श्री रामदास स्वामी की जीवनी भक्ति भावना से प्रेरित जीवनी है। प्रस्तुत जीवनी में रामदास स्वामी के चमत्कारों की अधिकता है। जीवनी से रामदास स्वामी के अलौकिक व्यक्तिमत्व के दर्शन होते हैं।

रामचंद्र पांडुरंग आजरेकर ने विष्णुबुवा ब्रम्हाचारी जीवनी सन् १८७२ में लिखी है। जीवनी में कई घटनाओं का चित्रण हुआ है किन्तु इन धारणाओं के गुंफण से एक अखंड व्यक्तिमत्व का चित्रण नहीं होता। इसीकारण जीवनी में विष्णुबुवा ब्रम्हचारी का व्यक्तित्व आकार नहीं लेता।

उपरोक्त रूप से प्राचीन मराठी साहित्य की जीवनी एवं जीवनीकारों की पंरपरा है। प्राचीन साहित्य के जीवनीकारों ने जीवनी लेखन किया है किन्तु उनके सामने जीवनी लेखन यह संकल्पना ही नहीं थी। जीवनी लेखन में चरित्रनायक के संबंधी अत्यंत जागरूकता जरूरी है। किन्तु प्राचीन जीवनी साहित्यकारों में जागरूकता की अपेक्षा भावूकता अधिक है। उनका उद्देश्य अपने श्रद्धेय महापुरूष एवं गुरूओं की यादों को अगली पीढ़ी तक ले जाना है। मध्ययुगीन जीवनी साहित्य संबंधी श्री व. रां. बोरगांवकर कहते हैं, 'जीवनी लेखन की प्रवृत्ति इतिहास लेखन से भिन्न है, उसकी प्रेरणा एवं उद्देश्य भी अलग है। महाराष्ट्रीयन समाज को जीवनीलेखन की रूचि होते हुए भी उन्होंने जीवनी लेखन करते समय सत्य-असत्य की पडताल नहीं की। इसके लिए कीर्तनकारों को दोषी मानना चाहिए क्योंकि उन्होंने चरित्रनायक संतों की जानकारी विकृत, मनोरंजन प्रधान, काल्पनिक एवं अलौकिक शैली में लोगों तक पहुँचाई है। इसीकारण ये जीवनियाँ सत्य की कसौटीपर नहीं टिक सकी।''[५०]

१.६.३ शिवकालीन जीवनी साहित्य :

बखर वाङ्मयकालीन जीवनी लेखन :

'बखर' मराठी साहित्य की एक विधा है। साहित्य एवं इतिहास दोनों की दृष्टि से बखर का महत्व अनन्यसाधारण है। बखर साहित्य को सुदिन पेशवाकाल में आए हैं। बखर साहित्य का आशय महाराष्ट्र के मराठवाडा के इतिहास से संबंधित है। इस बखर साहित्य के माध्यम से कई जीवनियों का सृजन हुआ है। जिस प्रकार वारकरी संप्रदाय के सामने जीवनी लेखन करते समय कोई संकल्पना सामने नहीं थी उसी प्रकार बखर साहित्य के सामने नहीं थी।

सभासद बखरकृत छत्रपति शिवाजी की जीवनी :

'सभासद बखर' में छत्रपति शिवाजी महाराज का चरित्र विश्वसनीयता से चित्रित हुआ है। प्रस्तुत बखर के रचनाकार कृष्णाजी अनंत सभासद हैं। सभासद (सभा सदस्य) उनकी उपाधि है। कृष्णाजी अनंत राजसभा में सल्ला-मसलत करनेवाले एक सभासद थे। छत्रपति शिवाजी के समय वे एक प्रांत के सुबेदार थे। प्रस्तुत बखर में बखरकार ने शिवाजी महाराज के आरंभ से लेकर अंत तक के सभी पराक्रमों का चित्रण किया है।

प्रस्तुत जीवनी में शिवजन्म, शिवाजी की बैंगलोर भेंट, जुन्नर शहर लूट, रायगड का निर्माण, चंद्रराव मोरे प्रकरण, अफजलखान वध, शाहिस्तेखान की उंगली कलम, मिर्झाराजे की भेंट, औरंगजेब की कैद से मुक्ति, सिद्दी जोहर प्रसंग, राज्याभिषेक, दक्षिण विजय आदि घटनाओं का चित्रण हुआ है। इस ग्रंथ में शिवाजी की जन्मतिथि मिलती नहीं है। संपूर्ण ग्रंथ में शिवाजी महाराज के बनाए गए तथाकथित गुरू रामदास स्वामी का कहीं पर भी उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत जीवनी में छत्रपति शिवाजी से संबंधित घटनाओं का चमत्कारपूर्ण चित्रण हुआ है। श्री. वि. का. राजवाडे कहते हैं, 'बखर साहित्य व्यक्तिगत तौर पर अविश्सनीय है किन्तु उसे बहुमत या सामूहिक रूप से विश्वसनीय नहीं मान सकते हैं।''[५१]

छत्रपति संभाजी की जीवनी :

बखर साहित्य का दूसरा महत्वपूर्ण चरित्र छत्रपति संभाजी महाराज का है। मल्हार रामराव ने मराठा साम्राज्य के संदर्भ में छत्रपति संभाजी की जीवनी लिखी है। बखरकारों को पता था कि छत्रपति संभाजी के चरित्र को चित्रित करना आसान काम नहीं था। बखरकारों ने संभाजी की उग्र प्रकृति के दर्शन उनके कृत्यों से चित्रित हुए हैं।

छत्रपति राजाराम की जीवनी :

मल्हार रामराव ने छत्रपति राजाराम का चित्रण बखर में किया है। मराठा साम्राज्य के सरदारों में एकता निर्माण करने में छत्रपति राजाराम को सफलता मिली हुई हम बखर में देखते हैं। मराठा साम्राज्य का कलुषित वातावरण छत्रपति राजाराम के कारण ही अच्छा हुआ था।

१.६.४ ब्रिटिश कालीन (आधुनिक) जीवनी साहित्य :

पेशवाकाल के पश्चात महाराष्ट्र में अंग्रेज काल आता है। अंग्रेज काल आधुनिक मराठी साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण काल है। अंग्रेजों की आधुनिक शिक्षा के कारण यहां का युवा वर्ग सुशिक्षित होने लगा था। अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन होने लगा। अंग्रेजी बायोग्राफी का पठन होने लगा। इन जीवनियों से सुशिक्षित युवा वर्ग को प्रेरणा मिलने लगी, वह प्रोत्साहित होने लगा और यहां पर आधुनिक ढंग से जीवनी लेखन का आरंभ हुआ।

जब मराठी में आधुनिक जीवनी लेखन आरंभ हुआ तब अंग्रेजी में जीवनी विधा पूर्ण विकसित एवं संपन्न थी। अंग्रेजी जीवनी साहित्य के संपर्क में आने पर यहां के युवा सुशिक्षित वर्ग में यह भावना जाग्रत होने लगी कि यहां के मनोरंजनात्मक, रहस्यमय, चमत्कारिक ग्रंथों से यह साहित्य अलग ही है। परिणामत: उन अंग्रेजी ग्रंथों का अनुवाद करने की स्फूर्ति आने लगी। आधुनिककालीन जीवनी साहित्य में पाश्चात्य जीवनियों का अनुवाद मराठी में काफी मात्रा में हुआ है।

इ.स. १८५२ में मराठी के जीवनीकार 'कृष्णशास्त्री चिपळुणकर' ने 'साक्रेटिस की जीवनी' का मराठी में अनुवाद किया है। यह जीवनी तत्कालीन पाठकों को पसंद आयी

थी। जीवनी के तीन संस्करण आए हैं। इ.स. १८४९ में महादेवशास्त्री कोल्हटकर ने 'कोलंबसाचा वृत्तांत' नामक जीवनी का मराठी में अनुवाद किया है। वि. मो. भिडे की 'खुसरू राजाचा इतिहास' १८५२, कृष्णाजीपंत जोगळेकर की 'रूस देशाच्या कथाथेरैन राणीचे चरित्र' १८६०, रा. गो. करंदीकर की 'बेंजामिन फांलिनचे चरित्र' १८७१, वि. प. रानडे कृत 'जार्ज वॉशिग्टनचे चरित्र' १८७२ आदि जीवनियाँ दक्षिण प्राइज कमेटी के बक्षिस के लिए बनी है। वि. को. ओक कृत 'पीटर दि ग्रेट' १८७४, 'सिकंदर' १८७५ एवं 'डयूक ऑफ बेलिग्टंन' ४८७६ जीवनियों को सरकार ने अपनी ओर से प्रकाशित किया है।

उपरोक्त जीवनियों में पाश्चात्य चरित्र नायकों का मराठी में अनुवाद हुआ है। इसलिए अपने लेखकों पर कर्तत्वहीनता का आरोप लगाना गलत है। 'तत्कालीन काल में अनूदित साहित्य का प्रचलन था। अंग्रेजी ग्रंथों के अनुवाद को बड़ा कार्य माना जाता था। स्वतंत्रता से स्वदेशी चरित्रों का चित्रण करने के लिए अध्ययन सामग्री उपलब्ध नहीं थी। अगर उपलब्ध होती तो भी उसे एकत्र कर, चुनकर जीवनी लेखन करने की प्रवृत्ति निर्माण नहीं हुई थी।''[५२]

विष्णुशास्त्री चिपळूणकर आधुनिक मराठी गद्य के जनक है। वे मराठी जीवनी साहित्य के आद्यलेखक है। तत्कालीन समय जीवनी अर्थात क्या है? आदर्श जीवनी किसे कहते हैं यह लोगों को पता नहीं था। ''विष्णुशास्त्री चिपळुणकर ने डॉ. जॉन्सन की जीवनी लिखकर सही मायने में आदर्श जीवनी लेखन का आरंभ किया है।''[५३]

सन १८७५-१९२० के बीच मराठी में कई प्रसिध्द जीवनियों का सृजन हुआ है। रांजु शालिग्राम ने 'बापू गोखले' जीवनी १८७७ में जीवनी लिखी, नागेश विनायक बापट ने 'थोरले बाजीराव साहब' जीवनी १८७९ में लिखी। भि. धो. निगडकर ने १८८२ में 'परशुराम पटवर्धन' जीवनी लिखी, लोकहितवादी ने दयानंद पर जीवनी लिखी, धोंडो बाळकृष्ण सहस्त्रबुध्दे ने एकनाथ महाराज पर जीवनी लिखी है।

आधुनिक मराठी गद्य के जनक विष्णुशास्त्री चिपळुणकर की डॉ. जॉनसन जीवनी 'निबंधमाला' में कमश: प्रकाशित हुई है। डॉ. जॉनसन जीवनी के प्रकाशन से पारम्पारिक

संकेतों पर बड़ा आघात हुआ। मराठी जीवनीकारों को बॉसबेल के लेखन के निरालापन की प्रचिति हुई। व्यक्तिदर्शन के उद्देश्य का एक निश्चित दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। व्यक्ति मुक्ति की अपेक्षा सत्य को महत्व प्राप्त हुआ। जीवनी में चरित्रनायक का व्यक्तित्व उसके गुण-दोष के साथ चित्रित हुआ है। जीवनी में चिपळुणकर ने जॉनसन की शैली का प्रयोग किया है। चरित्रनायक के दोषों पर पर्दा न डालते हुए इस जीवनी की सृजना हुई है। जॉनसन के चरित्र में हम क्या बोध ले सकते हैं यह भी चिपळुणकर स्पष्ट करते हैं। चिपळुणकर की दृष्टि बोधवादी थी।

बड़े-बड़े राजा-महाराजा, संत, तत्वज्ञ आदि के चरित्र को छोड़कर डॉ. जॉनसन जैसे लेखक को चिपळुणकर ने जीवनी का चरित्रनायक बनाया। जीवनी में उपदेश, चमत्कार, मनोरंजक तत्वज्ञान की अनिश्चतता नहीं है बल्कि यह जीवनी आम आदमी की जीवनी है। आम मनुष्य भी जीवनी का नायक बन सकता है यह चिपळुणकर ने डॉ. जॉनसन जीवनी से दिखाया है। चिपळुणकर के पूर्व जीवनी के संबंधी जीवनीकारों का कोई भी दृष्टिकोण नहीं था किन्तु चिपळुणकर ने बोधवादी दृष्टिकोण से डॉ. जॉनसन जीवनी लिखकर जीवनी लेखन का नया दृष्टिकोण बतलाया है।

विष्णुशास्त्री चिपळूणकर ने 'सॉक्रेटिस' की जीवनी लिखी है। विष्णुशास्त्री के सहयोगी शंकर तुलसीराम शालीग्राम ने सन १८७७ में 'सेनापति बापू गोखले' की जीवनी लिखी है। ना. वि. बापट ने सन १८७९ में 'थोरले बाजीराव साहब' की जीवनी लिखी है। भि. धो. निगुडकर ने 'परशुराम पटवर्धन' जीवनी सन १८८२ में प्रकाशित की है। धोंडो बाळकृष्ण सहस्त्रबुध्दे ने एकनाथ महाराज पर जीवनी लिखी है। इस जीवनी ने संत जीवनी लेखन का नया आदर्श निर्माण किया है।

विनायक कोंडदेव ने सिकंदर बादशाहा, पीटर दी ग्रेट, डयूक ऑफ वेलिंग्टन, आल्फ्रेड दि ग्रेट, सर टॉमस मनरो, वॉरन हेस्टिंग, अब्राहम लिंकन, ग्लेडस्टन, सॅम्यूअल जानसन की जीवनी का अंग्रेजी से मराठी में अनुवाद किया है। रावराजे दिनकरराव राजवाडे ने जावजी दादाजी, अमीर अब्दुल रहमान की जीवनी लिखी है। विनायक ओक की जीवनी में रसात्मकता दिखाई नहीं देती।

जीवनी लेखन में पाश्चात्य मुत्सद्दी, भारतीय मुत्सद्दी, पाश्चात्य देशभक्त, भारतीय देशभक्त, साधु-संत, नाटककार, अभिनेता, राजा, शूर स्त्रियाँ, न्यायाधीश, वकील, प्रवासी, शास्त्रज्ञ, शिल्पकार, मुद्रक आदि विविध विषयों का चित्रण हुआ है। सन१८८५-१९२० के बीच साहित्य की अन्य विधाओं की तरह जीवनी विधा में भी प्रभावी कार्य नहीं हुआ है। मा. व्यं. लेले की 'अकबर बादशहा की जीवनी' सन१८९८ में भाषातंरित रूप में थी। उन्होंने कर्नल मेलेसन के 'अकबर चरित्र' का भाषांतर किया है। मुरलीधर मल्हार अत्रे ने सन १८९२ में 'मल्हारराव होळकर' की जीवनी लिखी है। चि. ग. गोगटे ने बाळाजी बाजीराव, बाळाजी विश्वनाथ एवं जेष्ठ शाहु महाराज पर जीवनी लिखी है। राजाराम शास्त्री भागवत ने शिवाजी, संभाजी एवं अहिल्याबाई होळकर पर जीवनी लिखी है। उन्होंने सिधोजी निपाणकर एवं रत्नाकर पंत अप्पा की जीवनी लिखी है।

गो. ना दातार, कृ. अ. केळूसकर, मो. अ. सहस्त्रबुध्दे एवं सी. बा. पेंडसे ने शिवचरित्र पर जीवनी लिखी है। केळुसकर की जीवनी को तत्कालीन समय में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ था। उसके गुजराती, हिंदी भाषा में अनुवाद हुए हैं। केळुसकर ने गौतम बुध्द, तुकाराम, तुकाराम जावसी, चौधरी, रामचंद्र विठोबा धामणस्कर एवं रावबहादूर एल्लाप्पा बाळाराम पर जीवनी लिखी है।

विष्णु रघुनाथ नातु ने सन१८२४ में 'महादजी शिंदे' पर जीवनी लिखी है। चि. गं, भानू ने 'नाना फडणवीस' पर सन १९०० में जीवनी लिखी है। गोविंद नारायण काने ने The light of asia ग्रंथ का आधार लेकर सन १८९४ में 'गौतम बुध्द' पर जीवनी लिखी है।

बाळकृष्ण नारायण ने बाळशास्त्री जांभेकर, रामशास्त्री प्रभुणे, नाना फडणवीस, राजाराम शास्त्री भागवत पर जीवनी लिखी है। सदाशिव काशिनाथ धगे, आहिल्याबाई होळकर, सखाराम बापू, हरि केशवजी, त्र्यंबकजी डेंगले, शांताराम अनंत देसाई एवं रा. भिं जोशी पर देव ने जीवनियाँ लिखी हैं। देव ने बाळशास्त्री जांभेकर की जीवनी अत्यंत सरस एवं प्रभावी रूप में लिखी है। बा. ना. देव ने रामशास्त्री भागवंत की जीवनी लिखते समय मोर्ले साहब की जीवनी लेखन पध्दति का अवंलब किया है।

...दत्तात्रय बळवंत पारसनीस एक उत्तम जीवनीकार के रूप में ख्यात है। पारसनीस ने सन १८९४ में 'झाशी की राणी लक्ष्मीबाई की जीवनी' एवं सन १९०० में महापुरूष ब्रम्होंद्रस्वामी घावडशीकर की जीवनी लिखी है। यह जीवनी इतिहास प्रेमी एवं आत्मजनों में अत्यंत लोकप्रिय थी। इस जीवनी का हिंदी, कन्नड, गुजराती भाषा में अनुवाद हुआ है। पारसनीस की 'महापुरूष ब्रम्होंद्रस्वामी' की जीवनी को काफी लोकप्रियता मिली। इस जीवनी में ब्रम्होंद्रस्वामी का चित्रण उनके पत्र व्यवहार के साथ हुआ है। पारसनीस ने 'बायजाबाई शिंदे' की जीवनी लिखी है। यह जीवनी रसपूर्ण शैली के कारण लोकप्रिय रही है। महाराष्ट्र कोकिल मासिक से न्या. रानडे, दादाभाई नौरोजी, सर ए. ओ. ह्यूम, प्रि. वा. शि. आपरे की लघु जीवनी लिखी है।

धनुर्धारी उर्फ रामचंद्र विनायक टिकेकर (१८६२-१९०७) प्रसिध्द जीवनीकार थे। धनुर्धारी ने 'जवामर्द ब्राम्हणभाई', 'वीरस्नुषा राधाबाई', 'तंट्याभिल्ल', 'हरिपंत फडके', 'सूर अबला', 'जवान मर्द मराठे गडी', 'अहिल्याबाई होळकरीन', 'प्रौढ प्रतिनिधि माधवराव', 'रमाबाई दाभाडे', 'अलिजॉबहादूर शिंदे' आदि जीवनियों का लेखन किया है। ऐतिहासिक जानकारी की सूक्ष्मता एवं उत्कृष्ठ जीवनी के आवश्यक गुणों की कमी धनुर्धारी के जीवनी में मिलती है।

चिपळुणकर के सहयोगी 'शंकर तुकाराम शालिग्राम' ने 'बापू गोखले' जीवनी लिखी है। यह जीवनी सन १८८९ में लिखी है। धनुर्धारी की तरह शालिग्राम की जीवनी में स्वाभिमानी राष्ट्रवाद झलकता है।

इस कालखंड में संतोंपर जीवनी लिखनेवाले लेखक पांगारकर का उदय हुआ। आपने १८६२-१९४१ कालखंड में जीवनी लेखन कार्य किया है। लक्ष्मण रामचंद्र पांगारकर ने 'मोरोपंत' जीवनी में मोरोपंत की शुध्द पवित्र प्रकृति, परिवार पर सात्विक प्रेम, बहु बेटी को पढा-लिखाकर सुसंस्कृत करने की इच्छा, अतिथि प्रेम, उत्कृष्ट परमेश्वर भक्ति आदि को चित्रित किया है। पांगारकर ने 'एकनाथ महाराज की संक्षिप्त जीवनी १९१०, श्री ज्ञानेश्वर महाराज की जीवनी' १९१२, 'श्री तुकाराम महाराज'

१९२०, 'कविवर्य मुक्तेश्वर', 'काव्यविवेचन' १९१२ जीवनियाँ लिखी हैं। इन जीवननियों में संबंधित कवियों के जीवनचरित्र को स्पष्ट कर उनके काव्य का मार्मिक चित्रण किया है। उनमें से कुछ कवियों पर अन्य जीवनीकारों ने जीवनियाँ लिखी हैं किन्तु कोई भी पांगारकर की रसात्मकता, विवेचन कुशलता की बराबरी नहीं कर पाता। पांगारकर जैसे भक्त थे वैसे ही चिकित्सक, संशोधक भी थे। प्रा. अ. म. जोशी कहते हैं कि, ''संत जीवनी के क्षेत्र में पांगारकर ने इतना बड़ा कार्य किया है कि संत जीवनीकार के रूप में पांगारकर का नाम मराठी साहित्य में चिरस्थायी रहेगा।''[५४]

पांगारकर के पश्चात जगन्नाथ रघुनाथ आजगांवकर संत जीवनकार के रूप में लोकप्रिय है। सन१९०७ में आरंभ किए 'महाराष्ट्रीय-कवि-चरित्र माला' के नौ भागों में कई छोटे-बड़े कवियों की जीवनी व साहित्य संबंधी उपयुक्त जानकारी दी है। उनमें नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, रामदास की जीवनी विस्तृत रूप से चित्रित है। आजगावकर एक भक्त थे। उन्होंने 'संतश्रेष्ठ तुकाराम' १९३५ जीवनी प्रस्ताविक में कहा है ''महाराष्ट्र का जो बहुजन समाज ईश्वर को मानता है एवं साधुसंतों के बारे में पूज्यता का भाव रखता है उस समाज के लिए मेरा ग्रंथ लेखन है। ईश्वर को न माननेवाले, साधुसंतों का मजाक उडानेवाला जो समाज जो महाराष्ट्र में निर्माण हुआ है, उसके लिए मेरे ग्रंथ नहीं है।''[५५]

संत जीवनी एवं संत साहित्य संबंधी संशोधन परंपरा बाद में भी रही। श. वा. दांडेकर, स. खं. अळतेकर, न. र. फाटक आदि ग्रंथकारों ने संत साहित्य पर ग्रंथ रचना की है।

बाळकृष्ण अनंत भिडे ने 'तुकाराम', 'मुक्तेश्वर' एवं 'वामन' पर जीवनी लिखी है। उन्होंने 'चार वीर मुत्सद्दी' ग्रंथ १९२८ में लिखा है। प्रस्तुत ग्रंथ में शिवाजी क्रॉम्बेल, वांशिंग्टन एवं बोनापार्ट का जीवन चित्रित है। 'संत तुकाराम' पर केळुसकर १८९६, धावटे १९१३, माडगांवकर १८८६ ने जीवनी लिखी है। मा. अ. मुळे ने 'संत नामदेव' पर १९०१ में जीवनी लिखी है। शा. जि. नाईक ने सन १९०१ में 'आबाजी महाराज'

की जीवनी लिखी है। भी. स. पारछकर ने १९१८ में 'कुडोबा महाराज' की जीवनी लिखी है। गो. आ. देसाई ने 'बाळाभाऊ वारकरी जीवनी' सन१९०९ में लिखी है। रा. भि. चिंचोछे ने 'कोलबाजी बोवा' की जीवनी सन१९०९ में लिखी है। राजेश्वरराव त्रिपुराव ने सन१९१९ में संत गुलाबराव महाराज की जीवनी लिखी है। ना. र. केकरे ने सन१९०४ में गुलाबराव महाराज की जीवनी लिखी। ग. ब. मुठेकर ने सन१९१४ में 'श्री स्वामी समर्थ' की जीवनी लिखी है। क. ना. आठल्ये ने सन १९१२ में 'विवेकानंद' की जीवनी लिखी है। उन्होंने सन १९१० में 'आद्य गुरू शंकराचार्य' की जीवनी लिखी है। रा. ह. मणूरकर ने 'विद्यारण्यस्वामी चरित' एवं 'माध्वाचार्य चरित्र' जीवनी सन १९१६ में लिखी है। सन१९१६ में श्री. रा. आठल्ये ने 'श्रीमदपरमहंस परिव्राजकाचार्यवर्य श्रीमदशंकराचार्य' की जीवनी सन १८८९ में लिखीं है। बाबाजी काशिनाथ बक्षी ने सन १९१० में 'आद्य शंकराचार्य' की जीवनी लिखीं है।

इस कालखंड में पाश्चात्य महापुरूषों पर जीवनी लेखन हुआ है। न. चि. केळकर ने 'गॉरिबाल्डी' (१९०१), मुदू लेआहूर (१९१५), बिस्मार्क (१९१७) जीवनी लिखी है। वि. ल. भावे ने नेपोलियन (१९१७) टॉलस्टॉय (१९२०), रामतीर्थ चरित्र (१९१३) जीवनी लिखी है। इसी कालखंड में कृ. अ. गुरूजी ने 'टिळक' पर बा. व. पटवर्धन ने 'नामदार गोखले' एवं अवंतिबाई गोखले ने १९१८ में गांधीजी की जीवनी लिखी है।

इसी कालखंड में मान्यवर एवं प्रसिध्द नायकों की जीवनी लिखी है। मुजुमदार ने भाऊराव कोल्हटकर, बालगंधर्व की जीवनी लिखी है। बा. ना. देव ने बाळशास्त्री जांभेकर एवं वि. ज. किर्तने की जीवनी लिखी है।

वा. बा. जोशी ने १८९३ में महाराष्ट्र कोकिळकर्ते १८९२ में ना. सी. फडके ने १९२० में 'दादाभाई नौरोजी' की जीवनी लिखी है। ग. र. अभ्यंकर ने १९१५ में, श्री. ला. देसाई ने १९१६ में 'गोखले' की जीवनी लिखी है। १८९४ में ह. ना. गोखले ने ॲनी बेझंट की जीवनी लिखी है। वा. बा. रानडे ने सन१८९६ में सुरेंद्रनाथ बॅनर्जी की जीवनी लिखी है।

सरस्वतीनंदन ने १९१४ में अवंतिकाबाई, गोखले ने १९१८ में 'महात्मा गांधी' की जीवनी लिखी है। वा. वि. जोशी ने १९०५ में 'ईश्वरचंद्र विद्यासागर' की जीवनी लिखी है। ना. कृ. गद्रे ने १९०३ में प्रो. श्री. ग. जिनसीवाले जीवनी लिखी है। वि. मा. पितके ने १९१६ में 'नामदार जगन्नाथ शंकरसेठ' जीवनी लिखी। ह. ब. परचुरे ने १८९६ में एवं ज. धो. भांगले ने १८९५ में आगरकर की जीवनी लिखी है। रामचंद्र हरि ने १९१४ में हरि केशवजी जीवनी लिखी है। अ. गा. मुजुमदार ने १९१४ में शेठ करसनदास मुलठ्जी जीवनी लिखी है। रा. वि. रणजीत ने १९१६ में ल. य. कवी जीवनी लिखी है। गायकवाड ने १९११ में आबासाहेब कागलकर जीवनी लिखी है। गौतम ने १९०७ में खछतकर जीवनी लिखी है। मा. वा. घुमरे ने १८९८ में भ. वा. घुमरे जीवनी लिखी है। वि. को. ओक ने १९०६ में ह. कू. जोशी जीवनी लिखी है। वि. ग. पटवर्धन ने सन १८९७ में हरिभटबाबा पटवर्धन जीवनी लिखी है। द्वा. गो. वैद्य ने १९१३ में शेठ दामोदरदास गोवर्धनदास सुखडवाला जीवनी लिखी है। पोडंवाल ने १९२० में प्रो. वि. ना. हाटे जीवनी लिखी है। ल. कू. चिपळूणकर ने १८९४ में विष्णुशास्त्री चिपळूणकर जीवनी लिखी है। काशिबाई कानेटकर ने डॉ. आनंदीबाई जोशी जीवनी १९१२ में लिखी है। शंकर बापूजी मुजुमदार ने किर्लोस्कर कंपनी व अन्य महाराष्ट्रीय अभिनेताओं की जीवनी लिखी है। गद्रे ने १९०६ में विष्णुपंत छगे जीवनी लिखी है। शं. गो. डोंगरे ने १९१८ में बाळभट दादा देवधर जीवनी लिखी है।

द्वितीय कालखंड की जीवनी (१९२०-१९४०)

भारतीय स्वातंत्र्य समर में सन १९२० में लोकमान्य तिलक की मृत्यु के पश्चात गांधीयुग का आरंभ होता है। गांधीजी का तत्वज्ञान देश में प्रसारित हो रहा था। सन १९२० में तिलक की मृत्यु पश्चात उनपर कई जीवनीकारों ने जीवनियां लिखी हैं। महात्मा गांधी एवं उनके सहयोगी पं. नेहरू, मदन मोहन मालवीय, सुभाषचंद्र आदि पर जीवनी लिखी गई है।

सन १९२० में लोकमान्य तिलक की मृत्यु हुई। जैसे तिलक के सहवास में रहे श्रेष्ठ लेखक न. चि. केळकर ने तिलक की जीवनी लिखी। जीवनी का प्रथम भाग १९२३

में एवं अन्य दो भाग १९२८ में प्रकाशित हुए। जीवनी के तीन भाग मिलकर कुल पृष्ठ संख्या २००० है। किसी एक व्यक्ति की इतनी बड़ी जीवनी मराठी में दूसरी नहीं है। जीवनी के प्रास्ताविक में केळकर कहते हैं, ''मैंने जो लिखा है वह घटित इतिहास को क्रमश: बताने के दृष्टिकोण से लिखा है।'' इस जीवनी का महाराष्ट्रीय पाठकों ने बड़ा स्वागत किया है। ऐसी ही जीवनी सन१९३६ में दाजी नागेश आपटे ने श्रीमंत सयाजीराव महाराज पर लिखी है।

इस कालखंड की विशेष उल्लेखनीय जीवनी न. र. फाटक कृत 'न्यायमूर्ति रानडे' है। यह जीवनी सन १९२४ में प्रकाशित हुई है। प्रस्तुत जीवनी में फाटक ने रानडे के व्यक्तिजीवन एवं तत्कालीन परिस्थिति का सूक्ष्म चित्रण किया है किन्तु इस ग्रंथ में भी केळकर कृत 'तिलक' जीवनी जैसे दोष उत्पन्न हुए हैं। जीवनी में रानडे के व्यक्तित्व की अपेक्षा तत्कालीन राजकीय, धार्मिक, सामाजिक आंदोलनों का चित्रण अधिक मात्रा में हुआ है। जीवनी में चरित नायक रानडे का दैवीकरण हुआ है। इन दोषों के बावजूद उत्कृष्ट शैली में सृजित यह जीवनी मराठी साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

लोकमान्य तिलक की मृत्यु के पश्चात १९२० से भारत में महात्मा गांधी युग आरंभ हुआ। गांधीजी के सत्य एवं अहिंसा तत्व का महत्व समाज में बढ़ने लगा। गांधीजी के अनुयायी बढ़ने लगे। प्र. श्री. भसे ने सन१९२० में रशियन लेखक 'तोलस्ताय' की जीवनी लिखी। अवंतिबाई गोखले ने १९१९ में और सी. के दामले ने १९२४ में महात्मा गांधी की जीवनी लिखी है। साने गुरूजी ने १९२५ में, द. ग. येरवडेकर ने १९२६ में और श्री. रा. पारसनीस ने १९३३ में महात्मा गांधी के राजकीय गुरू ना. गोखले की जीवनी लिखी है। महात्मा गांधी के आंदोलन के कारण भारत में देशभक्ति की जबरदस्त लहर आयी थी। सारा वातावरण देशभक्तिमय हुआ था। परिणाम स्वरूप देशभक्तिपरक जीवनी लिखा जाना स्वाभाविक था। ना. सी. फडके ने १९२३ में 'हिंमत बहाद्दर टेरेन्स मेकस्विनी' इस आयरीश देशभक्त पर जीवनी लिखी है। इस जीवनी की शैली लालित्यपूर्ण है। ना. सी. फडके ने ही सन १९२० में दादाभाई नौरोजी पर जीवनी

लिखी है। ''सन १९३०-१९४५ कालखंड भारतीय इतिहास में स्वतंत्रता संग्राम का कालखंड है। इसी कारण स्वातंत्र्य वीरों की जीवनियां इस कालखंड में लिखी गई। जिसमें वासुदेव बळवंत फडके, भगतसिंग, सेनापति बापट, बॅ. सावरकर आदि। इन जीवनियों में चरित नायकों का इतिहास तो मिलता है साथ ही तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक घटनाओं पर प्रकाश भी डाला जाता है।''[५६]

इस कालखंड में महापुरूषों की मृत्यु स्मृतिदिन आदि प्रसंगों के औचित्य पर कुछ जीवनियां लिखी गई है। सन१९१९ में हरिभाऊ आपटे की मृत्यु हुई। बा. मा. आंबेकर ने १९२२ में हरिभाऊ आपटे की जीवनी लिखी है। लोकहितवादी गोपाळ हरि देशमुख की जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में ग. ह. केळकर ने जीवनी लिखी है। इस ग्रंथ में तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति, लोकहितवादी के विविध विचार, उनका परिस्थिति से संबंध आदि विषयों की प्रमुखता से चर्चा हुई है। सन १९२६ में कृ. ना. आठल्ये ने लोकहितवादी जीवनी लिखी है। १९२५ में डॉ. भांडारकर की मृत्यु हुई। १९२७ में श्री. ना. कर्नाटकी ने डॉ. भांडारकर जीवनी प्रकाशित की। कर्नाटकी ने आगे १९२९ में नया. तेलंग, १९३० में डॉ. भाऊ दाजी की प्रकाशित की है। वि. गो. विजापूरकर की मृत्यु के बाद १९२८ में रा. गो. कानडे एवं गं. दे. खानोलकर ने उनपर जीवनी लिखी है। लाला लजपतराय की मृत्यु के पश्चात स. कृ. फडके ने १९३१ में जीवनी लिखी है। ग. र. हवलदार ने सन१९२७ में वि. ना. मंडलीक पर जीवनी लिखी है।

विशिष्ट प्रसंग के औचित्यपर व्यक्ति सन्मानार्थ लिखी दो जीवनियां विशेष उल्लेखनीय है। सन१९२७ में पूना में आयोजित महाराष्ट्र साहित्य संमेलन के अध्यक्ष श्री. कृ. कोल्हाटकर बने तो ग. दे. खानोलकर ने उनकी जीवनी लिखी। १९३० में वा. म. जोशी मडगाव में आयोजित साहित्य संमेलन के अध्यक्ष बने तो रा. प्र. कानेटकर ने उनकी जीवनी लिखी है। दोनों जीवनियां विशिष्ट प्रसंग के औचित्यपर लिखी हुई है इसी कारण उनमें चित्रित वर्णन परिपूर्ण नहीं है।

रा. प्र. कानेटकर ने पं. मोतीलाल नेहरू' १९३१ एवं 'मदनमालवीय' १९३२ में जीवनी लिखी है। उस कालखंड में अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ अहिंसा के मार्ग से संघर्ष करनेवाले वीर पुरूषों पर ग्रंथ लिखना स्वाभाविक ही था।

१९२०-१९४७ में विभिन्न क्षेत्रों के कर्तृत्वान व्यक्तियों की जीवनी लिखी गई है। सुप्रसिध्द अभिनेता गणपतराव जोशी की मृत्यु के पश्चात ल. ना. जोशी ने १९२३ में जीवनी लिखी है। प्रसिध्द औषध निर्माता वि. कृ. पुराणिक की जीवनी स. कृ. फडके ने १९३३ में लिखी। अमेरिका के प्रसिध्द उद्योगपति हेन्री फोर्ड की जीवनी गो. वि. पेठे ने १९३१, रा. वि. खरे १९३१ एवं गु. प्र. ओगले ने लिखी है। प्रसिध्द जर्मन तत्ववेत्ता कार्ल मार्क्स की जीवनी वि. म. भुरकुटे ने १९३४ में लिखी है। ''कार्ल मार्क्स के तत्वज्ञान की पहचान भारतीयों को हो रही थी। इस औचित्यपर निर्मित यह जीवनी महत्वपूर्ण है।''[५७]

इस कालखंड में मराठी में कई ऐसे ग्रंथों की रचना हुई है जिसमें जीवनी और साहित्य की चर्चा हुई है। इन ग्रंथों में जीवनी का भाग थोडा ही रहता है अधिकतम साहित्य की ही चर्चा होती है। ग. ह. केळकर कृत लोकहितवादी ग. व्य. माडखोलकर कृत विष्णु शास्त्री चिपळुणकर, विणुबाई पानसे कृत ह. ना. आपटे, वि. स. खांडेकर कृत आगरकर व्यक्ति और साहित्य, गडकरी व्यक्ति और साहित्य, गं. दे. खानोलकर कृत वि. का. राजवाडे, मा. का. देशपांडे कृत ना. सी. फडके व्यक्ति एवं साहित्य, ना. बा. पराडकर कृत राजकवि तांबे १९४२ आदि जीवनीपरक साहित्य ग्रंथ है। इन ग्रंथों में संबंधित जीवनीकार एवं उनके साहित्य की चर्चा हुई है।

इस कालखंड में प्राचीन कवि पर जीवनियां लिखी गई है। रा. ग. हर्षे कृत तुकाराम महाराज, मा. द. आकतेकर कृत 'ज्ञानदेव' ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय है। के. ले. ओगले ने महाकवि कालिदास पर जीवनी लिखी है।

इस कालखंड में राजनेताओं पर जीवनियां लिखी गई हैं। ज. रा. जोशी कृत डॉ. भा. ना. खरे की जीवनी, बा. कू. परांजपे कृत शि. म. परांजपे की जीवनी, १९४७ में शि. ल. करंदीकर कृत सावरकर की जीवनी, राजनेताओं पर चर्चित जीवनियां है।

प्रसिध्द पुरूषों के निकटवृतियों ने लिखी जीवनी अपना विशिष्ट स्थान रखती है। विद्वानों के मतानुसार इनमें सत्यता की मात्रा अधिक होने की संभावना होती है। मराठी रंगभूमि के आद्य सूत्रधार विष्णुदास भावे की जीवनी वा. ग. भावे ने लिखी है। का. ह. खाडिलकर कृत 'नाटयाचार्य खाडिलकर' जीवनी, दुर्गा भागवत कृत 'रामशास्त्री भागवत' की जीवनी महत्वपूर्ण हैं। रमाबाई रानडे ने अपने पति न्या. रानडे पर 'आमच्या आयुष्यातील काही आठवणी' जीवनी का लेखन किया है। लीलाबाई पटवर्धन ने १९४५ में अपने पति माधवराव पटवर्धन पर 'आमची अकरा वर्ष' जीवनी का लेखन किया है। लक्ष्मीबाई तिलक ने अपने पति लोकमान्य तिलक पर स्मृति चित्रे' इस शीर्षक से जीवनी लिखी है। जिसमें पति-पत्नी के विकासशील प्रगल्भ हो रहे संबंधों का चित्रण सुंदर ढंग से हुआ है।''[५८] निकटवृत्तियों ने लिखी जीवनियां सत्य की परिधि में रहकर जीवनी को रसपूर्ण बनाने की श्रेणी में आती है। इन जीवनियों में कला और शिल्प दोनों का सुंदर मिलाप है। यह जीवनियां व्यक्ति की भाव-भावनाओं को गहराई से अभिव्यक्त करती है।

इस कालखंड की जीवनियों की ओर देखें तो पता चलता है कि मराठी में जीवनियों की मांग बढ़ रही है। विभिन्न विषयों पर आधारित जीवनियां लिखी जा रही थी किन्तु जीवनी एक साहित्यिक है, उसे कलात्मक दृष्टि से देखा जाना चाहिए यह भावना नहीं थी। जीवनी अर्थात किसी व्यक्ति का गुणगान करना, व्यक्ति के कार्य का अवास्त्व वर्णन करना अथवा व्यक्ति के विशिष्ट कार्य का समर्थन करना इतना ही अर्थ जीवनी लेखन को प्राप्त हुआ था। संत साहित्य पर जीवनी हो अथवा बखर कालीन जीवनी हो उसमें कहीं भी शास्त्रीय पध्दति से विवेचन दिखाई नहीं देता। १९ वीं सदी के अन्त में एवं २० वीं सदी के आरंभ में हमारा अंग्रेजी साहित्य से संपर्क होने लागा था, परिणास्वरूप मराठी जीवनी साहित्य में गुणात्मक एवं संख्यात्मक वृध्दि दिखाई देती है। 'मराठी जीवनी साहित्य की ओर देखें तो एक बात समझ में आती है कि, १९१८ से १९४७ कालखंड में मराठी जीवनी साहित्य का विकास जितना होना चाहिए था उतना दिखाई नहीं देता। ना. सी. फडके कृत 'दादाभई नौरोजी', साने गुरूजी कृत 'राजवाडे'

लक्ष्मीबाई तिलक कृत 'स्मृति चित्रे' आदि जीवनियों को छोड़ दें तो मराठी जीवनी अभी भी पारंपारिकता को चिपक कर बैठी हुई दिखाई देती है।''[५९]

१.६.५ स्वातंत्र्योत्तर जीवनी साहित्य :

स्वातंत्रता प्राप्ति से स्वतंत्र महाराष्ट्र राज्य की निर्मिति तक अर्थात १९४७-१९६० तक लिखी जीवनियों पर स्वतंत्रतापूर्व जीवनी लेखन का प्रभाव दिखाई देता है। इस कालखंड में न. र. फाटक, गं. दे. खानोलकर, द. न. भोसले, धनंजय कीर, साने गुरूजी, चा. ग. खैरमोडे, द. ना. शिखरे, भा. द. खरे, शि. ल. करंदीकर, वा. कृ. भावे, बा. मो. पुरंदरे, गो. स. सरदेसाई, दि. वि. काले, वा. सी. बेद्रे, अ. म. जोशी, के. सी. ठाकरे, पु. ब. कुलकर्णी, जावडेकर आदि ने जीवनियाँ लिखी हैं।

ना. सी. फडके ने 'महात्मा गांधी' एवं 'लोकमान्य तिलक' की जीवनी लिखी है। प्रस्तुत जीवनी संक्षिप्त रूप में है। वा. कृ. भावे ने १९५५ में 'युगप्रवर्तक शिवाजी महाराज' जीवनी लिखी है। इस ग्रंथ की कथन शैली मनमोहक है। गो. स. टेंबे ने गायन सम्राट 'अल्लदियाँ खां' की जीवनी लिखी है। इस जीवनी में व्यक्तिपूजा दिखाई देती है किन्तु लेखन शैली के कारण आकर्षक बनी है।

सन १९५६ में दा. न. शिखरे ने पंडित जवाहरलाल नेहरू पर 'राष्ट्रनायक नेहरू' जीवनी लिखी है। जीवनी में पंडित जवाहरलाल नेहरू पर उपलब्ध साधन सामग्री का औचित्यपूर्ण प्रयोग हुआ है। जीवनीकार शिखरे कहते हैं कि, 'जीवनी में नेहरू के सुसंगत एवं साधार निवेदन पर बल दिया गया है। नेहरू के जीवन की विशेष घटनाओं का कार्यकारण भाव दिखलाकर उसका मूल्यवान निष्पक्षता से करने की चेष्टा जीवनी में की गई है।' श्री जोशी कहते हैं कि, ''प्रस्तुत जीवनी श्रेष्ठ गुणवत्ता की कसौटी पर उतरती है किन्तु जीवनी लेखन में थोडी-सी जल्दबाजी हुई ऐसा लगता है।''[६०]

शं. गो. तुळपुळे ने सन १९५८ में सुप्रसिध्द तत्वज्ञ गुरूवर्य डॉ. रा. द. रानडे पर जीवनी लिखी है। उन्होंने इस ग्रंथ के माध्यम से रानडे के परमार्थिक जीवन एवं तत्वज्ञान का उल्लेख किया है। प्रा. तुळपुळे संत साहित्य एवं भारतीय तत्वज्ञान के

विचारक थे। डॉ. रानडे के ग्रंथ एवं जीवनी विषयक साधनों का अच्छा अध्ययन करने के कारण प्रस्तुत जीवनी में जीवंतता आयी है। डॉ. रानडे के परमार्थिक जीवन का चित्रण जीवनीकार ने बड़ी आत्मीयता से किया है। डॉ. रानडे के संपूर्ण व्यक्तिमत्व का चित्रण प्रस्तुत जीवनी में हुआ है।

शं. वा. किर्लोस्कर कृत 'यांत्रिकाची गाथा' १९५८, अ. म. जोशी कृत 'वडिलांचे सेवेसी' १९६० महत्वपूर्ण जीवनियां है। 'यांत्रिकाची यात्रा' प्रसिध्द उद्योगपति श्री लक्ष्मणराव किर्लोस्कर की जीवनी है। अपनी प्रतिभाशीलता एवं कृतत्वशीलता के आधार पर छोटे से प्रकल्प से आरंभ किया उनका कार्य जल्द ही बड़े कारखाने में तब्दील होता है। किर्लोस्कर की यह जीवनी युवा पीढी के लिए मागदर्शक है। 'वडिलांच्या सेवेसी' जीवनीपरक ग्रंथ में कै. प्रा. महादेव मल्हार, कै. नारायण मल्हार, कै. वामन मल्हार का जीवन-चरित्र प्रतिपादित हुआ है।

बा. मो. पुरंदेरे कृत 'राजा शिवछत्रपति' १९५८, गो. स. सरदेसाई कृत 'राजा शिवाजी' १९५८, दि. वी. काछे कृत 'छत्रपति शिवाजी महाराज' १९६० जीवनी में छत्रपति शिवाजी महाराज के जीवन-कार्य पर प्रकाश डाला गया है। बाळशास्त्री हरदास कृत 'छत्रपति शिवाजी' यह महत्वपूर्ण जीवनी है। जीवनी की लेखन शैली रसपूर्ण है। इस जीवनी में विभूतिपूजा दिखाई देती है। वा. सी. बेंद्रे कृत 'छत्रपती संभाजी महाराजांचे चरित्र' १९६० जीवनी परिश्रमपूर्वक लिखने के बावजूद विभूतिपूजन के कारण कमजोर लगती है। छत्रपति संभाजी महाराज से संबंधित साधनों की खोजबीन कर संभाजी महाराज की पूर्वग्रहदूषित प्रतिमा को भंग करने की बेंद्रे की चेष्टा निश्चित रूप से योग्य है किन्तु संभाजी महाराज के जीवन की कई घटनाओं के संबंधी स्वयं को अनुकूल अन्वयार्थ जोड़कर चित्रित करना जीवनी लेखक का कार्य नहीं है।

सन १९५७ में भारतवर्ष में १८५७ के स्वातंत्र्य संग्राम की शताब्दी बड़े जोरों से संपन्न हुई। इस औचित्य पर स्वातंत्र्य संग्राम से संबंधित प्रमुख व्यक्तियों की जीवनियां

लिखी गई। वि. स. गोखले कृत 'मर्दानी झाशीवाली' १९५८, म. श्री. दीक्षित कृत 'तात्या टोपे' १९५९ जीवनी प्रसिध्द है।

व. शा. देसाई कृत 'बालगंधर्व : व्यक्ति आणि कला' १९५७ जीवनी है। मराठी के कई अभिनेता, अभिनेत्रियों पर जीवनियों का लेखन हुआ है। अभिनेताओ के व्यक्तिगत जीवन, उनका दु:ख दर्द के संबंधी लोगों में हमेशा ही उत्सुकता है। बालगंघर्व के संबंधी प्रत्येक मराठी मनुष्य को प्रेम एवं उत्सुकता होती है। उनके व्यक्तित्व के चहुओर एक गूढ एवं रमनीय वलय है। जिस व्यक्ति ने जीवन के अनेक वर्ष मराठी रंगभूमि पर अधिराज्य किया है उसकी यह जीवनी मराठी मनुष्य को लुभानेवाली है। कलाप्रेमी के लिए द्रव्य एवं लोकोपवाद की चिन्ता न करनेवाले कलाकार की यह जीवनी है।

द. ना. गोखले ने सन १९५९ में ' डॉ. केतकर' जीवनी लिखी है। बाबूराव काळे ने सन१९५९ में 'यशवंतराव चव्हाण' जीवनी लिखी है। इस जीवनी में एक सामान्य परिवार में जन्मे किन्तु अपनी प्रतिमा, सामर्थ्य के बलबुतेपर उच्च पद पर विराजमान एक धुरंधर राजनेता का चित्रण हुआ है। दे. रामभाऊ मंडलिक पर लिखित मा. के. सहस्त्रबुध्दे की जीवनी, ना. ह. पालकर कृत 'डॉ. हेडगेवार' १९६० जीवनी ध्येयनिष्ठ देशभक्त के कार्य का परिचय देती है।

दे. ना. टिळक ने प्रसिध्द समाज सेविका 'पंडिता रमाबाई' की जीवनी १९६० में लिखी है। पंडिता रमाबाई बुध्दिमान एवं कर्तृत्वान थी किन्तु वे ख्रिस्ती होने के कारण उपेक्षा की पात्र बनी। उनके संबंधी समाज में गलतफहमी निर्माण हुई। समाज की अनश्रित स्त्रियों के लिए उन्होंने काफी बड़ा योगदान दिया है। प्रस्तुत जीवनी में जीवनीकार ने तत्कालीन समाज के अज्ञान, स्त्रियों की दयनीय स्थिति, आम जनता के धर्म विषयक विचार, अंधश्रध्दा आदि पार्श्वभूमिपर पंडिता रमाबाई का चित्रण किया है। इसी कारण रमाबाई के कार्य का अलग से समर्थन करने की जरूरत ही नहीं पड़ी।

१९६० के पहले की जीवनी और १९६० पश्चात की जीवनी में काफी अन्तर है। महाराष्ट्र की अस्मिता दिखानेवाली अनेक जीवनियों का लेखन इस कालखंड में हुआ

है। ग. दे. खानोलकर ने सन १९६१ में 'रवींद्रनाथ : जीवनकथा' जीवनी लिखी है। रवींद्रनाथ टैगोर पर कई ग्रंथों की रचना मराठी में हुई है किन्तु खानोलकर ने प्रस्तुत जीवनी में रवींद्रनाथ टैगोर के व्यक्तित्व एवं साहित्य के जो दर्शन कराए हैं वह मराठी साहित्य में बेजोड़ है। श्री खानोलकर गुरूदेव के सानिध्य में रहे हैं। इसी कारण प्रस्तुत जीवनी में चित्रित गुरू के चित्रण में जीवंतता आयी है। रवींद्रनाथ के जीवन के व्यक्तिगत एवं नाजुक प्रसंगों को लेखक ने बड़ी कुशलता से स्पर्श किया है। गुरूदेव जयंती समारोह के उपलक्ष्य में वि. स. सुकटणकर कृत 'रवीद्रनाथ दर्शन', गोपीनाथ तळवळकर कृत 'शांतिनिकेतन' ग्रंथों की सृजना हुई है।

हर कालखंड में संतपुरूषों की जीवनी लिखने का आकर्षण साहित्यकारों का होता है। इस कालखंड में भी संतों को आधार बनाकर जीवनियां लिखी गई हैं। श्रीपादशास्त्री किजवडेकर कृत 'श्रीवासुदेवानंद सरस्वती' १९६१, 'श्री अक्कोलकोट स्वामी की जीवनी' १९६२ जीवनी संतों पर आधारित है। रा. शि. सहस्त्रबुध्दे कृत 'अक्कलकोट स्वामी चरित्र' १९६२ जीवनी भी भक्तिभावना से प्रेरित होकर लिखी गई है। इन जीवनियों का उद्देश्य श्रेष्ठ संतों की महिमा का बखान करना इतना ही है। शं. गो. घैसास कृत 'ज्ञानेश्वर महाराज चरित्र' १९५९ जीवनी में ज्ञानेश्वर संबंधी रूढ़ अख्यायिकों का नया अन्वयार्थ लगाने की चेष्टा हुई है। भक्तिभावना से प्रेरित होकर लिखी हुई जीवनियों को छोड़ दें तो जीवनी लेखन के लिए जरूरी सामग्री इकट्ठा कर उसका विश्लेषण करने की प्रवृत्ति मराठी जीवनीकारों में बढ़ रही थी। कृ. बा. मराठे ने सन १९६२ में 'बालकवी' जीवनी परिश्रमपूर्वक लिखी है। रेव्ह तिलक, दे. ना. तिलक, कवि सोनाळकर, न. चि. केळकर आदि से बालकवि के पत्राचार जीवनीकार को उपलब्ध हुए उसका प्रयोग कर उन्होंने प्रस्तुत जीवनी का लेखन किया है। पत्राचार का प्रयोग कर बा. ग. खापर्डे ने सन १९६२ में दादासाहब खापर्डे जीवनी लिखी है। दादासाहब खापर्डे तत्कालीन विदर्भ प्रान्त के नेता थे। लोकमान्य तिलक के सहयोगी थे। जीवनीकार कहते हैं कि, ''यह दादासाहब की जीवनी नहीं है बल्कि उनकी डायरी से चित्रित साहित्य कृति है।''

पु. बा. कुलकर्णी ने सन१९५९ में 'नाना शंकरसेठ' एवं सन १९६३ में 'मामा परमानंद एवं उनका कालखंड' जीवनी लिखी है। श्री. कुलकर्णी ने अत्यंत परिश्रमपूर्वक यह कार्य किया है। दोनों जीवनियों में चित्रित महापुरूषों ने पिछली सदी में समाजसेवा का महान कार्य किया है। शंकरसेठ का नाम आज की पीढी को जितना परिचित है उतना मामा परमानंद का नहीं है। शंकरसेठ ने सौ साल पहले बढ़ रही मुंबई नगर की चालीस वर्ष सेवा की है। मामा परमानंद को न्या. रानडे ने 'राजकीय ऋषि' कहकर गौरवान्वित किया है। न्या. तेलंग एवं न्या. चंदावरकर उन्हें अपना गुरू मानते थे। शिक्षक, पत्रकार एवं समाजसेवक के लेख उनके संबंधी प्रकाशित लेख आदि सामग्री उपलब्ध कराकर उन्होंने जीवनी लिखी है।

भीमराव कुलकर्णी ने सन १९६३ में 'स्वामी विवेकानंद' जीवनी का लेखन किया है। इस जीवनी में स्वामीजी के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का चित्रण हुआ है। स्वामीजी का राष्ट्रजागृति कार्य, शिकागो में सर्वधर्म परिषद में कर्तबगारी, रामकृष्ण मिशन की स्थापना आदि घटनाओं का चित्रण जीवनी में हुआ है। जीवनी में लोकमान्य तिलक एवं स्वामी विवेकानंद की मुलाकात का प्रसंग अत्यंत नाटकीयता से चित्रित हुआ है।

सन १९६४ में हरिभाऊ आपटे जन्मशताब्दी समारोह संपूर्ण महाराष्ट्र में हर्षोउल्हास के साथ संपन्न हुआ। जन्मशताब्दी के औचित्य पर इनामदार कृत 'हरिनारायण आपटे : व्यक्ति और साहित्य' १९६४, नी. म. केळकरकृत 'हरिनारायण आपटे' १९६४, जीवनी की सृजना हुई है। इनामदार कृत जीवनी में पहले भाग में हरिनारायण आपटे का व्यक्तिजीवन : साहित्य सामाजिक कार्य आदि का वर्णन है तो उत्तरार्ध में हरिभाऊ के साहित्य के चुनिंदा परिच्छेद दिए गए हैं।

१९६४ में जवाहरलाल नेहरूजी का देहावसान हुआ। श्री. दीक्षित ने सन १९६४ में 'भारतरत्न नेहरू' जीवनी लिखी है। नेहरू के जन्म से मृत्यु तक चित्रण करनेवाली मराठी की यह पहली जीवनी है। श्री. दीक्षित ने पहले 'तात्या टोपे', 'जिजामाता', 'अहिल्याबाई होळकर' आदि इतिहास प्रसिध्द चरित्रों पर जीवनियां लिखी हैं। 'भारतरत्न

नेहरू' जीवनी लेखन हेतु साधन सामग्री खोजने में उनके परिश्रम एवं उसे आकर्षक ढंग से जीवनी में रखने की उनकी कुशलता प्रशंसनीय है।

१९७५-१९८५ के दशक को आपातकाल की पार्श्वभूमि थी। इस कालखंड़ में भी जीवनी लेखन कार्य चलता रहा। इस कालखंड में राजा मंगलवेढेकर कृत 'साने गुरूजी जीवनगाथा' जगन्नाथ सुगठकर कृत 'धर्मानंद', डॉ. उध्दव रसाळ कृत 'निष्काम कर्मयोगी' यह संत गाडगे महाराज पर आधारित जीवनी, प्रभाकर वैद्य कृत 'सरदार वल्लभभाई पटेल', धनंजय कीर कृत 'कृष्णराव अर्जुनराव केळुसकर जीवनी', नरेश कवडी कृत 'मोरारजी देसाई', म. श्री. दीक्षित कृत 'प्रतापी बाजीराव', धनंजय कीर कृत 'राजर्षी शाहू महाराज', पु. बा. कुलकर्णी कृत 'माऊली काशीबाई' आदि जीवनियां लिखी गई हैं। प्रसिध्द शास्त्रज्ञ अल्बर्ट आईन्स्टाइन की जीवनी माधव दळवी ने लिखी है। य. दि. फडके कृत 'केशवराव जेधे' भाऊराव धर्माधिकारी कृत 'मानवाचा पुत्र येशु', प्रा. श्रीधर हेरवाडे कृत 'छत्रपति राजाराम महाराज', डॉ. जयसिंगराव पवार कृत 'क्रांतिसिंह नाना पाटील', मा. भि. काटकर कृत 'कर्मवीर भाऊराव पाटील' चा. भ,. खैरमोडे कृत 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर' महत्वपूर्ण जीवनियाँ हैं।

सन १९८६-२००० कालखंड में कई महत्वपूर्ण घटनाएँ महाराष्ट्र में घटित हुई। इसी कालखंड में सहकार तत्व पर बनी शक्कर मील, विभिन्न सहकारी संस्थाएँ, ग्रामीण क्षेत्र में हुए विकास के कारण महाराष्ट्र में कई उद्योजक एवं कारखानदारों की जीवनियाँ लिखी गई। इस कालखंड में द. ना. गोखले ने 'एक चरित्राचे चरित्र' यह जीवनी लिखी। डॉ. यशवंत मनोहर कृत 'बाळ सीताराम मर्ढेकर', य. दि. फडके कृत 'शाहू छत्रपति एवं लोकमान्य', बा. ग. पवार कृत 'कांतिसिंह नाना पाटील' राघव शिवाजी कृत 'सातारचा सिंह' डॉ. पंडित विद्यासागर कृत 'सर सी. व्ही. रमण' आदि जीवनियाँ लिखी गई हैं। खैरमोडे कृत डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की जीवनी के भाग ८,९,१०,११ एवं १२ इसी कालखंड में लिखे गए हैं।

१.६.६ नयी सदी का जीवनी साहित्य :

महाराष्ट्र के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, वैचारिक उन्नति में जिन दिवंगत महापुरूषों ने अपना अनमोल योगदान दिया है ऐसे महापुरूषों के कार्य का परिचय कराने हेतु मराठी में प्रचुर मात्रा में जीवनी लेखन हुआ है। भ. ग. बापट कृत 'विनोबा' महत्वपूर्ण जीवनी है। ग. प्र. प्रधान कृत 'एस. एम. जोशी चरित्र', राजा मंगलवेढेकर कृत 'सेनानी साने गुरूजी', तारा धर्माधिकारी कृत 'दादा धमाधिकारी चरित्र, प्राचार्य व. न. इंगळे कृत 'कर्मवीर मामासाहेब जगदाळे चरित्र' एवं डॉ. भारत पाटणकर कृत 'कांतिसिंह नाना एक अखंड क्रांतिकारक' आदि उल्लेखनीय जीवनियाँ हैं। समकालीन जीवनी लेखन संबंधी विमल भालेराव कहती हैं, ''समकालीन जीवनी में अलग-अलग प्रवाह दिखाई देते हैं। जीवनी एक कला है एवं उसके हेतु मनुष्य के व्यक्तित्व का हुबहू चित्रण करना है। यह कल्पना काफी मात्रा में बनी हुई दिखाई देती है किन्तु जीवनी के संबंध में कई गलत फहमियाँ इस कालखंड में दिखाई देती हैं।''[६१]

'भारतीय समाज क्रांतीचे जनक-महात्मा जोतीराव फुले' जीवनी की सृजना प्रा. न. पवार एवं अविनाश वरोकर ने की है। यह केवल महात्मा जोतीबा फुले की जीवनी नहीं है बल्कि उनके सामाजिक आंदोलनों का भी इतिहास है। जोतीबा के लेखन के मर्म से यह जीवनी प्रतिपादित करती है। सामाजिक सुधारणा एवं सामाजिक क्रांति के मूल का अनुसंधान करते हुए जीवनीकार ने भारतीय समाजक्रांति के स्वरूप को प्रकट किया है। समता, न्याय, बंधुता महात्मा फुले का अंतिम स्वप्न था। उसका मूलगामी विवेचन प्रस्तुत जीवनी में हुआ है। 'सावित्रीबाई फुले अष्टपैलू व्यक्तित्व' जीवनी की रचना जीवनीकार प्रा. न. ग. पवार ने की है। सावित्रीबाई की पहचान महात्मा फुले की पत्नी इतनी ही नहीं है बल्कि आदर्श वैवाहिक जीवन की शिल्पकार, सत्यशोधक समाज की आधारस्तंभ, स्त्री मुक्ति आंदोलन की दिशादर्शक थी। लेखन, संपादन, भाषण, काव्य में उनकी प्रतिभा बेजोड थी। क्रांतिज्योति सावित्रीबाई के व्यक्तित्व के इन पहलुओं पर प्रस्तुत जीवनी प्रकाश डालती है।

'बॉबी फिशर' जीवनी के जीवनीकार वा. गी. लेले है। अमरिका का बॉबी फिशर शतरंज के इतिहास का ग्यारहवा विश्वविजेता है। सन १९७२ में रशिया के स्पास्की को हराकर वह विश्वविजेता बना है। शीतयुध्द के समय बॉबी फिशर की इस जीत ने हर तरफ हलचल मचा दी थी। शतरंज को ही जीवन कहनेवाले फिशर ने शतरंज के खिलाडियों के अधिकार प्राप्ति हेतु सतत संघर्ष किया है। इसी कारण बहुत बार उसका शतरंज का करियर खतरे में आया था किन्तु वह पीछे नहीं हठे। कास्पारॉव्ह आदि सभी शतरंज के खिलाडी आज फिशर को याद करते हैं। विश्वयुध्दोत्तर कालीन इस शतरंज के खिलाडी की जीवनी प्रथम बार मराठी में आई है।

'ज्ञानकोशकार ग. रं. भिडे' इस जीवनी की जीवनीकार 'प्रतिभा रानडे' है। कोशनिर्मिति अत्यंत कठिन कार्य है। स्वतंत्रतापूर्व कालखंड़ में अपने पास सत्ता, संपत्ति एवं अन्य कोई साधन न होने के बावजूद ग. रं. भिडे ने कोशनिर्मिति का ज्ञानकार्य अखंड ५० साल तक किया है। यह केवल ग. रं. भिडे की जीवनी नहीं है बल्कि उनके कार्य की महत्ता स्पष्ट करनेवाला ग्रंथ है।

रामचंद्र देखणे ने 'लोकशिक्षक गाडगेबाबा' जीवनी लिखी है। जनसेवा ही भगवान प्राप्ति का मार्ग है यह पहचानकर संत गाडगे महाराज ने पहाड जैसा विधायक कार्य किया है। उन्होंने एक ओर हाथ में झाडू लेकर गांवों को स्वच्छ किया तो दूसरी ओर कीर्तन के माध्यम से लोगों के मन को स्वच्छ करने का कार्य किया है। समाज में रहते समय जो-जो अनुभव प्राप्त हुए उसी को ही उन्होंने अपना तत्वज्ञान बनाया है। उन्होंने विचारों को कार्य से जोडा। जनभाषा में अपने विचार लोगों तक पहुंचाने का कार्य किया। गाडगेबाबा केवल एक संत नहीं थे बल्कि प्रबोधन का एक विश्वविद्यालय था।

'जीवानयोगी साने गुरूजी' इस जीवनी की रचना रामचंद्र देखणे ने की है। साहित्य, कला, संस्कृति, समाज, राजनीति, शिक्षण, अध्यात्म, प्रबोधन आदि जीवन के विभिन्न अंगों को प्रभावशीलता से स्पर्श करनेवाले साने गुरूजी का जीवन एक योगी का जीवन था। योगी परिपूर्ण रहते हैं किन्तु अलिप्त रहते हैं। साने गुरूजी भी ऐसे ही योगी

थे। वे अनासक्त रहे और समाज का देते-देते चले गए। इसी कारण पं. विनोबाजी ने साने गुरूजी को संत तुकाराम की पंक्ति में बिठाया है।

'जनमानसातील यशवंतराव' इस जीवनी के जीवनीकार डॉ. नागनाथ हेगे है। जीवनीकार को यशवतंतराव चव्हाण जैसे महान व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष सहवास मिला था। यह ग्रंथ यशवंतराव चव्हाण के व्यक्तित्व को समग्र व्यक्तित्व को चित्रित नहीं करता बल्कि उनके व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डालता है। यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र के प्रभावी राजनेता के रूप में परिचित है। उनके व्यक्तित्व को आनेवाली पीढ़ियां पहचान सके। प्रस्तुत जीवनी का यही उद्देश्य है।

'सैगल' जीवनी की रचना गंगाधर महाम्बरे ने की है। सैगल हमारे मन में हैं वह परदें के पीछे एवं परदे पर उनके कर्तृत्व के कारण। तंत्रविज्ञान की मर्यादाओं के बावजूद उपलब्ध स्थिति में उसका कार्य अवर्णनीय है। आज भी सैगल एवं उनके गीत सैगल प्रेमियों के लिए एक दैवी चमत्कार ही है। प्रस्तुत जीवनी सैगल प्रेमियों के लिए जानकारी का एक पिटारा है।

वीणा गवाणकर ने २०११ में 'डा. सलीम अली, २०१४ में ' डा. खानखोजे', २०१४ में 'डॉ. आयडा स्कडर' जीवनियों का लेखन किया। डॉ. सलीम अली जीवनी में अपना सारा जीवन पक्षियों के रंगीन दुनिया पर नौछावर करनेवाले ऋषीतुल्य पक्षीतज्ञ एवं जागृत पर्यावरणवादी व्यक्तित्व का चित्रण है। डॉ. खानखोजे ने लोकमान्य तिलक के कहने पर देश छोड़ दिया, अमरिका में कृषिशिक्षा लेते समय क्रांतिकेंद्र निकाले। गदर उठाव के नियोजन में खानखोजे आगे थे। सशस्त्र संग्राम के लिए खानखोजे ने जापान अमरिका, कनडा, इरान, मास्को, बर्लिन भ्रमण किया । डॉ. सन येत सेन एवं डॉ. जार्ज वाशिंग्टन उनके आदर्श थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बड़ी उम्मीद से वे भारत लौटे किन्तु यहां उन्हें उपेक्षा का जीवन सहना पडा। इसी का चित्रण वीणा गवाणकर ने डा. खानखोजे इस जीवनी में किया है। 'आयडा स्कडर' जीवनी में एक ऐसी स्त्री का चित्रण है जो अपने प्रगत देश को छोड़कर वेलुर को आती है। भूख, दरिद्रता, अकाल से त्रस्त प्रदेश को

अपना मानती है। यहां के दुःख को कम करते-करते उसके ५० वर्ष का समय बितता है। वह महान समाज सेविका होकर भी उपेक्षित रही। गवाणकर ने जीवनी के माध्यम से उपेक्षित पात्र पर यह जीवनी लिखी है।

सन २००५ में प्रकाशित 'माणिकरावाची चरित्रकथा' जीवनी रत्नाकर पटवर्धन ने लिखी है। यह जीवनी बडौदा के पूर्वज मल्यविद्या विशारद गजानन यशवंत माणिक की है। माणिक के पूर्वज सातारा के थे। वे बडौदा आकर बस गए। बड़ौदा में उन्हें 'माणिक' खिताब से गौरवान्वित किया गया। माणिक ने संस्थान में ऐतिहासिक शस्त्रागार निर्माण किया। गुरू जुम्मादादा के स्मरणार्थ जुम्मादादा व्यायाम मंदिर की स्थापना की। हकीम अब्दुल रहमान से युनानी वैद्यक विद्या प्राप्त की। अस्थिसंधान विद्या प्राप्त कर कई लोगों को व्याधिमुक्त किया है। 'प्रतापशस्त्रागार' ग्रंथ की रचना माणिक ने की है। उन्होंने मल्लखांब पथक की स्थापना की।

'गुरूवर्य लेखक' जीवनी की रचना डॉ. अविनाश जगताप ने सन २००५ में की है। बाबुराव जगताप पूना के शैक्षिक एवं नागरी जीवन का एक महत्वपूर्ण नाम था। उन्होंने पूना में मराठा स्कूल की स्थापना की एवं संस्था के लिए कठिन मेहनत की है। उन्होंने कोल्हापुर के शिक्षाधिकारी, मोनी विश्वविद्यालय के संचालक, शिक्षक मासिक के संपादक एवं टॉल्सताय की कथाओं का अनुवाद आदि महत्वपूर्ण कार्य करते समय सादगी से अपनी अलग पहचान बनायी है। प्रस्तुत जीवनी शिक्षा क्षेत्र में कार्य करनेवालों को प्रेरणादायी है।

'कायदेआजम' जीवनी आनंद हार्डीकर ने सन२००५ में लिखी है। यह जीवनी बॅ. महम्मद अली जिना पर लिखी गई है। हिंदु-मुस्लिम संघर्ष को हमेशा के लिए खत्म करने के लिए किए गए प्रयोग फंसने की कथा जीवनी में है।

'ज्ञात-अज्ञात' अहिल्याबाई होलकर की जीवनी विनया काडपेकर ने २००७ में लिखी है। जीवनी में अहिल्याबाई होलकर का व्यक्तित्व प्रतिपादित हुआ है। जीवनीकार कहते हैं कि अहिल्याबाई सत्ताधिकारी थी किन्तु सिंहासन पर कभी भी नहीं बैठी। राजनेता

थी किन्तु कभी भी सत्ता की भागदौड में नहीं थी। वह व्रतस्थ थी किन्तु सन्यासिनी नहीं थी। उन्होंने तालाब, अन्नछत्र, धर्मशाला की स्थापना का महान कार्य किया। अठारवीं शताब्दी में मराठा इतिहास के पटल पर उसका व्यक्तित्व चांदणी जैसा है।

'वासुदेव बलवंत पटवर्धन' २००७ में सरोजनी वैद्य ने लिखी है। 'भीमसेन' जीवनी का लेखन वसंत पोतदार ने किया। इस जीवनी में भीमसेन के नाट्यमय जीवन का चित्रण हुआ है। 'कहानी लंडनच्या आजीबाईची' इस जीवनी की रचना २०११ में सरोजीनी वैद्य ने की है। जीवनी में विदर्भ में जन्मी राधा डहाके नामक एक ऐसी स्त्री का चित्रण है जिसने लंदन में अपना स्वतंत्र अस्तित्व निर्माण किया था। आगे चलकर वह लंदन की सन्माननीय व्यक्ति बनती है। 'महर्षी ते गौरी' सन २०१२ में प्रकाशित मंगला आठलेकर की प्रसिध्द जीवनी है। इसमें गौरी देशपांडे का जीवन चित्रण है। 'मदर तेरेसा' जीवनी की रचना आशा कर्दढे ने सन २०१३ में की है। जीवनी में विश्व की महान समाजसुधारक मदर तेरेसा का चित्रण हुआ है। जीवनी में संत मदर तेरेसा का बचपन से मदर तेरेसा बनने तक का सफर चित्रित हुआ है। दुनिया में कहीं भी मनुष्य जाति पर संकट आता तो मदर तेरेसा वहां जाती थी। फिर वह बांग्लादेश की बाढ़ हो या ग्वाटेमाल का भूकंप हो अथवा इथियोपिया का अकाल। 'गार्गी अजुन जीवंत आहे' इस जीवनी का लेखन मंगला आठलेकर ने सन २०१४ में किया है। संपूर्ण ब्राम्हणवृंद के आगे याज्ञवल्क की बुध्दिमत्ता को आह्वान देनवाले प्रश्न पुछकर उन्हें सर्वश्रेष्ठत्व का प्रमाणपत्र देने के लिए मजबुर करनेवाली गार्गी का काल बीत चुका है किन्तु गार्गी अभी भी जिंदा है। १९१४ के आसपास उत्तरप्रदेश के छोटे से देहात में जन्मी गुलाब उम्र की ग्यारहवे साल में तत्कालीन ब्राम्हण वर्ग से प्रश्न पूछती है कि अंत्यविधि के कार्य करने की स्त्री को अधिकार क्यों नहीं है? गुलाब ने केवल प्रश्न उपस्थित नहीं किया बल्कि सारे विरोधों को ठुकराकर गंगा किनारे रसुलाबाद घाट बनाया। उसके तेजस्वी व्यक्तित्व का पूरे घाट पर प्रभाव था। उसके कार्य को देखकर कौन कहेगा गार्गी भूतकाल में जमा हुई? वह अभी जिंदा है।

'योध्दा संन्यासी' यह जीवनी वसंत पोतदार ने सन २०१४ में की है। जीवनी में स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व के विविध अंगों का चित्रण हुआ है। हिंदु रूढि, अंधविश्वासों पर किए प्रहार, धर्म, विज्ञान, संगीत, इतिहास आदि विषयों पर स्वामीजी के प्रभुत्व का चित्रण जीवनी में हुआ है। 'बाबा आमटे' का चित्रण हुआ है। 'चंद्रशेखर' जीवनी की रचना माधुरी शानबाग ने २०१५ में की है। भारत की प्रारंभिक शिक्षा से अमरिका में प्रगत संशोधन करनेवाला उनका सफर जीवनी में चित्रित है। पाठकों के लिए यह जीवनी निश्चित प्रेरणादायी है।

निष्कर्ष :

जीवनी साहित्य गद्येत्तर विधा में महत्त्वपूर्ण विधा है। जीवनी का अर्थ 'जीवन' से जुडा है। इसमें व्यक्ति के समग्र जीवन का लेखा-जोखा होता है। इसका अन्य व्यक्ति द्वारा साहित्यिक एवं कलात्मक ढ़ंग से चित्रण किया जाता है। इसलिए आत्मकथा की अपेक्षा उसमें तटस्थता होती है। जीवनी लेखक अपने लेखन के पूर्व जीवनी के तत्वों को मद्देनजर रखता है। इस कारण जीवनी में सत्यता, कलात्मकता आ जाती है। हिन्दी जीवनी के विकास के संदर्भ में देखें तो, भारतेन्दु पूर्व जीवनी नाम की विधा नहीं थी केवल चौरासी वैष्णव वार्ता तथा दो सौ बावन वैष्णव वार्ता जैसे ग्रंथ तथा अनेक राजा महाराजाओं की वंशावलियाँ लिखी गई थी। पर इसमें काल्पनिकता की उड़ान तथा ऐतिहासिकता का अभाव जैसी बाते प्रमुख थी। इसमें नायक को केवल देवता के या वीरत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता था। अपितु जीवनी विधा का विकास हम भारतेन्दु से ही मान सकते हैं। वर्तमान समय तक के जीवनी के प्रवास को देखें तो हम पाते हैं कि जीवनी विधा ने अन्य साहित्य की भांति अपने आपको सामान्यजन से जोड़ा है। आज वह एक समाज को दिशादर्शन करनेवाले के रूप में उभर रही है।

मराठी जीवनी साहित्य राष्ट्र समाज की उन्नति में मार्गदर्शक साहित्य है। देश, समाज के इतिहास में योगदान देनेवाले महत्वपूर्ण व्यक्तित्व का चयन कर उनके कर्तृत्व का पराकम का अनुकरण नयी पीढि में हो यही मराठी जीवनीकार का उद्देश्य है। मराठी में

जीवनी लेखन की एक सुदीर्घ परंपरा है। १३ वीं सदी के मध्य से मराठी साहित्य में जीवनी का अस्तित्व मिलता है किन्तु मराठी में जीवनी साहित्य का कलात्मक विकास अंग्रेजों के आगमण के बाद हुआ है। मराठी में जीवनी साहित्य प्रकार नब्बे के कालखंड के बाद अधिक लोकप्रिय हुआ है। नयी शिक्षा व्यवस्था, परिस्थिति एवं नये माध्यमों के कारण मराठी जीवनी साहित्य प्रकार का स्वरूप समयानुसार बदल रहा है। पिछले दो दशकों में मराठी में जीवनियों की संख्यात्मक वृध्दि हुई है। दिन-ब-दिन जीवनियों के बढ़ते पाठकों को देखकर प्रकाशकों का ध्यान जीवनियों की ओर अधिक मात्रा में जा रहा है। मराठी जीवनी का उद्देश्य आम मनुष्य को महापुरूषों के व्यक्तित्व से, जीवनतत्व से मार्गदर्शन कराना उनका आत्मविश्वास बढ़ाना है।

मराठी साहित्य में आरंभिक कालखंड में जीवनी विधा उपदेशात्मक थी किन्तु आधुनिक मराठी जीवनी परंपरागत उपदेशात्मक एवं भक्तिरस से बाहर आयी है। आरंभिक कालखंड में मराठी जीवनी के नायक, संत, राजा-महराजा, सरदार थे। बाद में महापुरूषों पर जीवनियाँ लिखी जाने लगी। आज विद्वान, समाजसुधारक, शास्त्रज्ञ, लेखक, कलाकार आदि पर जीवनियों का सृजन किया जा रहा है। मराठी में अन्य भाषाओं से जीवनियों का अनुवाद हुआ है एवं हो रहा है। जीवनी जीवन का वृत्तान्त होती है। मराठी जीवनी साहित्य समृध्द है। संत, राजा-महाराजा, ऐतिहासिक व्यक्ति, महापुरूष, लेखक, शास्त्रज्ञ, प्रेरणादायी व्यक्ति आदि पर मराठी में जीवनियों की सृजना हुई है। इन जीवनियों ने समय-समय पर समाज को मार्गदर्शन किया है। पाठकों को दिशा दिखलाने का कार्य किया है। आज मराठी या किसी भी भाषा में सबसे अधिक पाठक जीवनी विधा के होते हैं। भूमंडलीकरण के इस नैतिक अधःपतन के युग में नितिमत्ता की प्रेरणा देनेवाली ये जीवनियाँ हिंदी-मराठी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान निर्माण कर रही है। हिंदी-मराठी जीवनी साहित्य न केवल मराठी की जीवनी है बल्कि वह भारतीय साहित्य की अमूल्य निधि है। हिंदी-मराठी जीवनी साहित्य में छ. शिवाजी-म.फुले-रा.शाहू-डॉ. आंबेडकर के चरित्र पर खुलकर लेखन किया गया है। छ. शिवाजी तथा डॉ. आंबेडकर की तुलना में म. फुले तथा रा. शाहू पर मराठी की अपेक्षा हिंदी में बहुत कम जीवनियां मिलती हैं।

संदर्भ संकेत :

१. अशोक के फूल – आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ. १८०

२. हिंदी आलोचना की परिभाषिक शब्दावली – डॉ.अमरनाथ, पृ. २३२

३. राजपाल हिंद शब्दकोश – सं. डॉ. हरदेव बहारी, पृ. ३०६

४. अभिनव हिंदी कोश –सं. हरिशंकर शमा, पृ. १९१

५. सहज समान्तर कोश – सं. अरंबिद कुमार, कुसुम कुमार पृ. ८

६. मानक अंग्रेजी हिंदी कोश – सं. सत्यप्रकाश, बलभद्र प्रसाद मिश्र, पृ. १२७

७. हिंदी पयार्यवाची कोश – डॉ.भोलानाथ तिवारी, पृ. २१२

८. हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली – डा. अमरनाथ, पृ. २३१

९. साहित्यलोचना : सिध्दांत और अध्ययन – डॉ. सीतारामदीन, पृ. १४८

१०. साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार – डॉ. हरिमोहन, पृ. २३१

११. सिध्दांतालोचना - धर्मचन्द्र संत तथा बलदेव कृष्ण, पृ. २०२

१२. गद्य के विविध रूप-सं.माजद असद, पृ. २०

१३. http://madhavhada.blogspots.in/2009/blog-post.html

१४. भारतीय काव्यशास्त्र एवं पाश्चात्य साहित्य चिन्तन-डॉ.सभापति मिश्र, पृ. ५१७

१५. मराठी विश्वकोश (खंड-५) - तर्कतीर्थ श्री. लक्ष्मणशास्त्री जोशी, पृ. ६५७

१६. साहित्यशास्त्र-डॉ.माधव सोनटक्के, पृ. ८३

१७. हिंदी साहित्य कोश-डॉ.धीरेन्द्र वर्मा, पृ. २०

१८. ए.बैकग्राउण्ड टु दि स्टडी ऑप इंग्लिश लिटरेचर, पृ. १८६

१९. आवारा मसीहा (भूमिका) - विष्णु प्रभाकर, पृ. ११

२०. साहित्य विविधा - रमेशचन्द्र लवानिया, पृ. १४५

२१. लिटरेरी बायोग्राफी, पृ. १

२२. पाश्चात्य जीवनी कला (भूमिका)-डॉ.सरला शुक्ल, पृ. ३

२३. http://madhavhada.blogspots.in/2009/blog-post.html

२४. साहित्यशास्त्र-डॉ.माधव सोनटक्के, पृ. ८२

२५. http://hi.wikipedia.org/s/1yi3

२६. मराठी विश्वकोश (खंड-५) - तर्कतीर्थ श्री.लक्ष्मणशास्त्री जोशी, पृ. ६७५

२७. जीवनीपरक साहित्य-सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. ३३

२८. भारतीय काव्यशास्त्र एवं पाश्चात्य साहित्य चिन्तन-डॉ.सभापति मिश्र, पृ. ५१७

२९. पाश्चात्य जीवनी कला (भूमिका)-डॉ. सरला शुक्ल, पृ. ३-०

३०. साहित्यशास्त्र- डॉ. माधव सोनटक्के, पृ. ५४

३१. http://madhavhada.blogspots.in/2009/blog-post.html

३२. जीवनीपरक साहित्य-सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. २४

३३. साहित्यशास्त्र - डॉ.माधव सोनटक्के, पृ. ८४-८५

३४. वार्षिक भारतीय साहित्य सर्वेक्षण (१९७६-७७) - केंद्रीय हिंदी निदेशालय शिक्षा तथा सांस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. ७३

३५. पाश्चात्य जीवनी कला - डॉ.सरला शुक्ल, पृ. ७

३६. जीवनीपरक साहित्य - डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. २४

३७. साहित्यिक विधाएं पुनर्विचार - डॉ. हरिमोहन, पृ. २१८

३८. http://madhavhada.blogspots.in/2009/blog-post.html

३९. साहित्यशास्त्र-डॉ.माधव सोनटक्के, पृ. ८६

४०. हिंदी जीवनी साहित्य : सिध्दांत और अध्ययन - डॉ.भगवानशरण भारदाज, पृ. २८२ ४१. वार्षिक भारतीय साहित्य सर्वेक्षण(१९७६-७७) - केंद्रीय हिंदी निदेशालय शिक्षा तथा सांस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. ७३

४२. भारतीय साहित्य-परिशीलन तथा अन्वेषण, पृ. ४९

४३. नाभादास कृत भक्तमाल : एक अध्ययन-प्रकाशनारायण दीक्षित, पृ. ३

४४. आधुनिक हिंदी का जीवनीपरक साहित्य - शान्ति खन्ना, पृ. १०४

४५. हिंदी गद्य : विन्यास और विकास - रामस्वरूप चतुवेदी, पृ. १६२-१६३

४६. चरित्र-आत्मचरित्र - प्रा. अ. मा. जोशी, पृ. १२

४७. मराठी चरित्रलेखनाची परंपरा - डॉ. धनंजय कीर, पृ. ५५

४८. नामदेव गाथा - शासकीय मध्यवर्ती मुद्रणालय, मुंबई, पृ. ७३५

४९. श्री नामदेव दर्शन - इनामदार, रेळेकर मिरजकर पृ. २७८

५०. शकावली शिवचरित्र - प्रदीप शिवापूरकर पृ. ५३

५१. मराठी वाङ्मयेतिहास भाग-२ - रा. ना. घाटोळे पृ. १३०

५२. चरित्र-आत्मचरित्र - प्रा. अ. म. जोशी, पृ. १३२

५३. मराठी साहित्य पत्रिका-अंक २८३, १९९७

५४. चरित्र-आत्मचरित्र - प्रा. अ. म. जोशी, पृ. १४०

५५. वही, पृ. १४५

५६. आधुनिक मराठी वाङ्मयाचा इतिहास – प्राचार्य डॉ. वसंत बिरादार, पृ. ४७१

५७. चरित्र-आत्मचरित्र - प्रा. अ. म. जोशी, पृ. १४८

५८. मराठी चरित्र मूलतत्वे व समीक्षा - डॉ. ग. का. रावते, पृ. ३३१

५९. वही, पृ. २६२

६०. चरित्र-आत्मचरित्र - प्रा. अ. म. जोशी, पृ. १५७

६१. समकालीन साहित्य : प्रवृत्ती आणि प्रवाह - सं. मृणालिनी पाटील, पृ.१६४

द्वितीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ

द्वितीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी- महात्मा फुले- राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ

भूमिका

२.१ छत्रपति शिवाजी कालीन परिस्थितियाँ

२.१.१ राजनीतिक परिस्थिति

२.१.२ सामाजिक परिस्थिति

२.१.३ धार्मिक परिस्थिति

२.१.४ आर्थिक परिस्थिति

२.२ महात्मा फुले कालीन परिस्थितियाँ

२.२.१ राजनीतिक परिस्थिति

२.२.२ धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थिति

२.२.३ आर्थिक परिस्थिति

२.३ राजर्षि शाहू कालीन परिस्थितियाँ

२.३.१ राजनीतिक परिस्थिति

२.३.२ सामाजिक परिस्थिति

२.३.३ धार्मिक परिस्थिति

२.३.४ आर्थिक परिस्थिति

२.३.५ सांस्कृतिक परिस्थिति

२.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ

२.४.१ राजनीतिक परिस्थिति

२.४.२ सामाजिक परिस्थिति

२.४.३ धार्मिक परिस्थिति

२.४.४ आर्थिक परिस्थिति

द्वितीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी- महात्मा फुले- राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ

भूमिका :

अनुसंधान करते समय किसी भी व्यक्तित्व या घटनाओं का अध्ययन करते समय सबसे महत्वपूर्ण होता है उस समय की परिस्थितियों का अध्ययन करना। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर इन चारों महामानवों का काल उथल-उथल का रहा है। इन लोगों ने जीवन भर संघर्ष करके ही तत्कालीन जनमानस को अन्याय, अत्याचार, शोषण, जातिवाद, धर्मांधता, अंधश्रद्धा, रुढी-परंपरा की खायी से बाहर निकालने का कार्य अपने-अपने समय में किया है। बाहरी आक्रमणकारियों की सत्ता और ऐतदेशीय लोगों की रुढी-परंपरा के कारण तत्कालीन मानव जीवन तहस-नहस हो चुका था।

छत्रपति शिवाजी के समय देश यवनों के आक्रमणों से घिरा हुआ था। समाज केवल अन्याय, अत्याचार और शोषण का शिकार हो रहा था। अंधश्रद्धा और धर्मांधता भी बडी मात्रा में पनपी थी। ऐसे में छत्रपति शिवाजी ने इन सबका विरोध कर जनमानस को आधार देने का कार्य किया।

म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर के समय में यवनों की सत्ता तो अधिक नहीं थी लेकिन अंग्रेज काफी हद तक अपना विस्तार कर चुके थे। महात्मा फुले के समय में भी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थिति कुछ अच्छी नहीं थी। लेकिन महात्मा फुले ने समाज सुधार का कार्य करके समाज को नयी दिशा देने का कार्य किया।

राजर्षि शाहू महाराज के समय में बाहरी सत्ताधारियों की अपेक्षा देशीय शोषक या मनुवादियों का सामना ही उन्हें अधिक करना पडा। राजर्षि शाहू ने छत्रपति शिवाजी और

महात्मा फुले के विचारों को ही आगे बढाया। उन्होंने दलित-बहुजनों, वंचितों के लिए कार्य किया। जीवनभर इन लोगों के सुधार का ही कार्य करते रहे।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के समय भी जनता दोनों ओर से शत्रुओं का सामना कर रही थी। एक अंग्रेजी और दूसरे देशीय मनुवादी लोग। दलित-बहुजनों को हीनता से देखा जाता था। उनके साथ बुरा व्यवहार किया जाता था। इन सबका विरोध डॉ. आंबेडकर ने किया। राजनीति में भी इन लोगों को अधिकार नहीं था। जातीयता, धर्मांधता चारों ओर फैली थी। आर्थिक दृष्टि से भी जनता पिछडी हुई थी। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने इन बातों का विरोध करके आम जनता को संविधान के माध्यम से न्याय देने का महत्वपूर्ण कार्य किया। महापुरुषों को अक्सर परिस्थितियां जन्म देती है। छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू. डॉ. आंबेडकर जैसे महानायक भी तत्कालीन परिस्थितियों की उपज है।

२.१ छत्रपति शिवाजी कालीन परिस्थितियां :

छत्रपति शिवाजी महाराष्ट्र के ही नहीं अपितु संपूर्ण भारतवर्ष के मानदंड है। उन्होंनेसत्रहवीं सदी में स्वराज्य की स्थापना की। उनके असमय निधन से संपूर्ण भारत पर स्वराज्य की इच्छा अतृप्त रह गयी। उनके राज्य की सीमाएँ इस प्रकार थी-सालेरी के किले से गोदावरी नदी के इस पार का कुल प्रदेश, बरघाट तलघाट तक तथा तुंगभद्रा के उस पार, कोल्हार, बालापुर, चंदी, येलूर सदर कावेरी तक। इस प्रकार महाराष्ट्र से कर्नाटक और तामिलनाडु तक उनका राज्य स्थापित था। उनका राज्य महाराष्ट्र के विशिष्ट भूभागों तक सीमित होते हुए भी महाराष्ट्र की संस्कृति से संबंधित प्रदेश इस भूभाग से काफी बड़ा था। स्वराज्य के बाहर के इस प्रदेश पर परकीय सत्ता होते हुए भी वहां की संस्कृति नष्ट नहीं हुई थी। सत्रहवीं सदी में छत्रपति शिवाजी के रूप में एक असामान्य व्यक्तित्व महाराष्ट्र मेंनिर्माण हुआ था। अत: उनके समय का मानव जीवन, रीति परंपरा जानने के लिए आज के पाठक उत्सुक होते हैं।

२.१.१ राजनीतिक परिस्थिति :

सोलहवीं सदी में बहामनी राज्य के टुकड़े होकर पांच शाहियों का निर्माण हुआ था। बरीदशाही, आदिलशाही, कुतुबशाही, इमादशाही और निजामशाही आदि। यह कभी आपस में तथा विजयनगर के राज्य से युध्द करते रहे। तालीकोट युध्द के बाद इन शाहीयों के सामने दूसरा शत्रू नष्ट हो चुका था। इसका परिणाम यह हुआ कि आपसी कलह बढ़ने लगा। अत: विजयनगर के अनेक सुभेदारों ने अपने-अपने छोटे-छोटे राज्य निर्माण किए।

मराठी सत्ता के उदय समय में इन पांच शाहियोंमें युध्द होते रहे। इमादशाही को निजामशाही ने नष्ट किया तथा बरीदशाही को आदिलशाही ने नष्ट किया। उस स्थिति मेंमुगलों का उत्तर से आक्रमण होने लगा था। महाराष्ट्र के मराठों का निजामशाही और आदिलशाही से गहरा संबंध स्थापित हो गया था। इस मराठों की राजकीय स्वतंत्रता देवगिरी की हार के साथ ही उध्वस्त हो गयी। मराठों के जबरदस्त मुकाबले से इस्लामी सत्ता के पैर लड़खड़ाएं।

सोलहवीं शती के अंत में आदिलशाही में रहे अनेक मराठा सरदारों ने स्व कर्तत्व से अनेक इनाम तथा जागीर हस्तगत की थी। इस शती में अनेक मराठा सरदारों का उदय हुआ। इनकी जागीर को ही वे अपना राज्य मानने लगे। आदिलशहा के दरबार में भोसले, मोरे, निंबालकर, घाटगे, माने, घोरपडे, डफले, जाधव, जेधे, सांवत आदि मराठा सरदार थे। चंद्रराव मोरे को युसूफ आदिलशाह ने १२००० हिंदू सेना प्रमुख के रूप में नियुक्त किया था। भीमा-निरा नदियों के क्षेत्र में शिर्के के उपद्रव को नष्ट करने के उपलक्ष्यमें आदिलशाह ने मोरे को 'चंद्रराव' किताब दिया था। सन१६२६ में नागोजी घाटगे को इब्राहिम आदिलशाह ने 'झुंजारराव' किताब देकर सरदेशमुखी प्रदान की। इनके कब्जे में माण परगणा था। माण के समीप म्हसवड गांव की देशमुखी माने के कब्जे में थी। डफले के पास जत परगणा तथा वारणा नदी के तट पर कपाशी मुधोळ इन गांव की देशमुखी

घोरपडे के पास थी। मुधोळ के सरदार बाजी घोरपडे थे। शहाजी राजे आदिलशाह के साथ चार साल थे। उन्हें सरलष्कर किताब देकर पुणे तथा सुपा की जागीर प्रदान की।

अहमदनगर की निजामशाही में सेना तथा मुलकी सेवाओंमें मराठों ने अस्तित्व निर्माण किया था। इनमें भोसले, मोरे, यादव, शिंदे, सालुंखे, शिसोदे आदि थे। यह मूलत: रजपुत और क्षत्रिय थे। निजामशाही में कीर्ति प्राप्त कर चुके सिंदखेड के जाधवराव अपने गांव के देशमुख थे।

निजामशाही में मुस्लिमों के दो गट स्थित थे-एक दखनी तथा दूसरा परदेशी। अपना वर्चस्व सिध्द करने हेतु यह आपस में झगड रहे थे। इससे निराश होकर निजामशहाने अपना अस्तित्व मजबूत बनाने के लिए मराठों को साथ लिया। इससे ही मराठों की राजनीति की शुरूआत हो गयी। आगे चलकर मालोजी और शहाजी राजे जैसे पराक्रमी व्यक्तियों का उदय हुआ।

राजनीति में मराठा सक्रिय होने के बाद उन्हें अनेक अनुभूतियां प्राप्त हुई। इससे मराठों का आत्मविश्वास बढ गया तथा स्वराज्य स्थापन करने की जिज्ञासा निर्माण हो गयी। शहाजी राजे दक्षिण के कर्तृत्ववान सरदार थे। आदिलशाही तथा निजामशाही से प्राप्त पुणे, सुपा, चाकण और इंदापूर की जागीर इन्होंने प्राप्त की थी। आगे छत्रपति शिवराय ने इसका विस्तार किया और इससे ही मराठों का स्वराज्य निर्माण हुआ।

संगठन शक्ति, स्वाभिमान, चतुर वाणी, अपार बुध्दिमत्ता, वीरता, महा पराक्रमी, नैतिकता आदि गुणों से युक्त छत्रपति शिवराय का व्यक्तित्व था। इन्हीं गुणों के आधारपर शिवराय ने स्वराज्य की स्थापना की और विस्तार किया।

पश्चिमी सागरी तट पर सोलहवीं सदी में पोर्तुगीज और सिद्दीयों का प्रभाव था। स्वराज्य कार्य को उन्होंने विरोध किया। उनकी राजसत्ता गोवा, दमण, दीव, वसई तथा चौल में थी। उन्होंने ख्रिस्ती धर्म का प्रसार किया तथा जबरदस्ती धर्म परिवर्तन किया। उससे मराठा और पोर्तुगीज में बड़ा संघर्ष हो रहा था।

शिवराय ने अपने राजकीय जीवन का प्रारंभ अपने पिता से प्राप्त जागीर से किया, जो पुणे के आसपास फैली थी। इस प्रदेश की सीमा उत्तर में भीमा नदी तो दक्षिण में नीरी नदी तक थी। अत: स्पष्ट है कि शिवराय ने अपने राजकीय जीवन का प्रारंभ एक स्वतंत्र प्रदेश के स्वामी की हैसियत से किया था। शहाजी राजे आदिलशाह के सरदार होने से शिवराय की राजनीति में कुछ बंधन पड रहे थे। फिर भी उन्होंने स्वतंत्र जागीर का स्वामी होने के नाते अपने पैर जमाने शुरू किए तथा स्वराज्य निर्माण के कार्य को बढ़ावा दिया।

शिवराय ने जुन्नर, अहमदनगर, कोंकण में कल्याण-भिवंडी, जावली, श्रृंगारपुर आदि स्थानों को लक्ष्य किया। धीरे-धीरे यह स्थान अपने कब्जे में किए। कोंढाणा, माहुली, पुरंदर तथा प्रतापगड आदि किले भी उन्होंने फतह किए। मध्ययुग में ऐसा नियम था कि किसी सरदार को दी गयी जागीर में आनेवाले किलों पर बादशाह का ही स्वामित्व रहता था। लेकिन शिवराय ने इस नियम को ठुकराते हुए अपनी जागीर में आनेवाले कतिपय प्रमुख किलें जीत कर अपने कब्जे में किए थे। ''शिवाजी महाराज यह निरंतर लेकिन धीमी गति से अपनी सत्ता बढाने और मजबूत करने का उद्देश्य मन में रखे हुए थे। विजापुर के राजनैतिक परिस्थिति में विजापुर के अमीर उमराव भी चूप नहीं बैठे थे। शिद्दी सरकार रुस्मून जमान रायबाग, हुक्केरी और वेंगुर्ले इन प्रदेशों में अपना दबाव कायम कर रहा था। यही कार्य बहलोल खान यह पठाण सरदार धारवाड, बेळगाव क्षेत्र में कर रहा था। और एक सरदाद शिद्दी जौहर यह कर्नुल क्षेत्र में ऐसा ही आचरण कर रहा था। यह सभी लोग एक तरह से राजनीति कर रहे थे। उद्देश्य एक ही था पडोसियों पर आक्रमण करके अपना अधिकार और सत्ता बढावा, किलें जितों और उस पर अपना कब्जा करों। नाम के लिए किले बादशाह के है ऐसा दिखाते चलो जो कब्जे में है वह क्षेत्र अपने नाम से कायम करके वहां अर्ध स्वतंत्र की तरह अपना अधिकार रखों।''[१]

छत्रपति शिवाजी के राज्य के तीन प्रशासकीय विभाग थे। उन्होंने अपने मंत्रिमंडल के प्रत्येक प्रधान को हर विभाग के सरकारकून पद पर नियुक्त किया था तथा सौंपे गए

विभाग की पूर्णतः जिम्मेदारी निभाने का आदेश संबंधित मंत्री को दिया गया था। वह तीन विभाग इस प्रकार हैं -

१. मोरोपंत पिंगले, मुख्य प्रधान को कल्याण भिवंडी से लेकर कोलवण सालेरी तक का कोंकण और वरघाट का प्रदेश, लोहगड़ जुन्नर तथा बारह मावल तथा हाराले घाट तक का संपूर्ण प्रदेश सौंपा गया था। यह प्रदेश स्वराज्य की रीढ के समान था। इसे स्वराज्य का उत्तर भाग कहा जा सकता है।

२. आण्णाजी दत्तो मंत्रिमंडल के सुरनवीस के पद पर नियुक्त किए थे। उनको कोंकण के चेअल से दाभोल तक का प्रदेश एवं राजापुर, कुडाल, बांदा, फौंडा तथा कोप्पल तक का संपूर्ण प्रदेश सौंपा गया था। इस प्रदेश को 'तलकोंकण' या 'तलघाट' कहा जाता था। इस प्रदेश को स्वराज्य का दक्षिण भाग कहा जा सकता है।

३. मंत्रिमंडल के दत्तोजी पंत मंत्री या वाकनीस के पद पर नियुक्त किए गए थे। उनको वरघाट का वाई प्रांतों से कोप्पल, तुंगभद्रा तक का कर्नाटक का प्रदेश सौंपा गया था तथा पन्हाला किला उसका प्रमुख स्थान था। इस प्रदेश को 'देश' या 'नैऋत्य' विभाग कहा जाता था।

इन तीन प्रमुख विभागों के अलावा मराठी सत्ता के अंमल में आनेवाले प्रदेश को 'मोगलाई' कहा जाता था। उस पर पांच या सात ब्राम्हण सुबेदार की नियुक्ति होती थी। मुख्यमंत्री के मार्गदर्शन में उन्हें काम करना अनिवार्य था। इन्हें मुख्यतः वसुली का काम सौंपा गया था। शिवराय के राज्यभिषेक के समय तक स्वराज्य के तलघाट, वरघाट और देश यह तीन विभाग प्रमुख थे। आधुनिक महाराष्ट्र के कुलाबा (रायगड), रत्नागिरी, नाशिक, सातारा, पुणे और कोल्हापुर जिलों का लगभग संपूर्ण भूभाग स्वराज्य के अधीन था। सन१६७४ के बाद शिवराय ने कर्नाटक मुहीम हाथ ली थी। कोप्पल, बेलवंडी, होसपेट, शिरे कोलार, वेल्लोर तथा जिंजी आदि से युक्त महाराष्ट्र को कर्नाटक से जोडनेवाला प्रदेश जीत लिया और उसे 'चंदी का राज्य' यह नाम दिया।

शिवराय ने वैज्ञानिक दृष्टि रखते हुए नौसेना का निर्माण किया। विदेशी सत्ता का खतरा देखते हुए उन्होंने भिवंडी, कल्याण, पनवेल आदि जगहों पर जहाजों का निर्माण किया। उनकी नौसेना में पडाव, मयवा, गलबत, होडी, महागिरी, पाल, जुग, गुराबा, ऐसे कई प्रकार के छोटे-छोटे जहाज थे। इसके साथ ही उन्होंने विजयदुर्ग, सिंधुदुर्ग, सुवर्णदुर्ग, रत्नागिरी, पदमदुर्ग और खांदेरी दुर्ग बनाएँ। शिवराय ने परंपरागत रणनीति को त्यागकर नईरणनीति का अविष्कार किया उसमें छापामार, वेषांतर की चाल, एक कदम पीछे हटना,कूटनीति आदि का अविष्कार कर अलग राजनीति को प्रधानता दी।

२.१.२ सामाजिक परिस्थिति :

शिवराय के समय की सामाजिक स्थिति अत्यंत विषमतापूर्ण थी। उन्होंने बिखरे हुए हिंदुओं का मजबूत संगठन कर स्वराज्य की स्थापना की। तत्कालीन समय में भारतीय जन-मानस पर धर्म को महत्वपूर्ण स्थान था। धर्म के नामपर अनेक अनिष्ट परंपराओं का महत्व भी समाज में सर्वमान्य हो गया था। शिवराय ने धर्म की परंपरागत मान्यताओं को खंडित किया और समाज को नए विचारों की ओर अग्रेसर किया। तत्कालीन समाज यवनों की गुलामी करना अपना कर्तव्य मानता था। शिवराय ने इस भारतभूमि के लोगों का अध्ययन किया। भारतीय लोग शूर-वीर और संघर्षशील है तथा वह दूसरों की गुलामी कर रहे है। यह बात उनके मन को छू गयी। शिवराय ने इन लोगों का संगठन किया, उनको स्वराज्य की प्रेरणा दी। उन्होंने समाज रक्षा, समाज विकास और स्वराज्य रक्षा का महामंत्र देकर उसके प्रति प्रामाणिक रहे। ऐसे वीर योध्दा के संदर्भमें हिंदी विश्वकोश में लिखा है-''महाराष्ट्र नायक बड़ी वीरता एवं साहस से आत्मरक्षा व देश-रक्षा में समर्थ हुए थे।''[२]शिवाजी महाराज के समय में और सरंजामशाही के समय में स्त्रियों की इज्जत, विशेषत: गरीब स्त्रियों की इज्जत की कोई किमत नहीं थी। राजेरजवाडे और राजपुत्रों की बात तो अलग थी। लेकिन सरदार, वतनदार, जमीनदार, देशमुख, पाटील इनकी नजर में गरीबों की बहु-बेटियां यानि के उनको जब चाहे उपभोग लेने की चीज थी। दिन में उनकी इज्जत लुटीं जाती थी और उसके खिलाफ कुछ बात करने की भी हिम्मत नहीं थी।

क्योंकि जिनसे न्याय मांगना है, वही इज्जत लुटते थे।''[२] ऐसी शोषण की परिस्थिति तत्काल में थी। इस सबका विरोध शिवाजी महाराज ने किया था।

शिवराय स्वयं नैतिक राजा थे। उनके राज्य में स्त्री को आदर्श माना जाता था तथा शत्रु स्त्रियों को भी उनके राज्य में माँ-बहन माना जाता था। इसे अंमल में लाने के लिए उन्होंने कठोर नियम बनाएं। उनके समय शत्रु के अनेक जनानखाने, नर्तकियां होती थी। पर शिवराय ने इसको त्याग दिया था।

शिवराय को गौ-ब्राम्हण प्रतिपालक राजा माना जाता था। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज में रहनेवाले आम आदमी और पशु-पक्षियों का भी उन्होंने रक्षण किया। अपनी सेना की हानी न हो, इसलिए वह एक कदम पीछे हटने की नई रणनीति का स्वीकार करते थे। इसलिए उन्होंने पुरंदर संधि की थी। तत्कालीन समय में राजनीतिक उथल-पुथल हो रही थी। इसी कारण किसान का जीवन पिछड गया था। इसके अनेक कारण थे-युध्द, वर्षा की अनिश्चितता, असहाय राज्यशासन, आर्थिक सहायता का अभाव आदि। तत्कालीन किसानों को नए तालाब और कुओं का निर्माण शिवराय ने किया। युध्द समय उनके अनाज को क्षती न पहंचे इसके निर्देश सेना को दिए थे। किसान के पेड और पौधों की जरूरत सेना को हो तो उन्हें उचित मूल्य देने का नियम भी इस महान राजा ने निर्माण किया था।

सत्रहवीं सदी में गावों को ही व्यवहारों का केंद्र बिन्दु माना जाता था। जीवन यापन का प्रमुख साधन कृषि ही था। इसलिए बहुसंख्य लोग प्रमुखत: कृषी पर ही अवलंबित रहते थे। खास तौर पर यह कहा जा सकता है कि कुछ लोगों ने स्वयंस्फूर्ति से या राजाज्ञा से जंगल काट कर वहां की भूमि साफ तथा समतल कर खेती करना शुरू किया था और इसी प्रकार देहात में बसते रहे।

गांवों के अधिकार क्षेत्र में आनेवाले भूप्रदेश के दो विभाग किए जाते थे। प्रथम जहां बस्ती होती है उस विभाग को 'पांढरी माती' तथा दूसरा जहां खेती की जाती थी उस विभाग को 'काली माती' कहा जाता था। गांवों को तत्कालीन समय विभिन्न नामों से

जाना जाता था। जैसे-देहात, मौजा, ग्रामदे आदि। अंतर्गत छोटी-छोटी बस्तियों को वाडी, पाडी, मजरा और खारी आदि नामों से जानते थे। यदि दो गांव नजदीक और स्वतंत्र हो तो एक नाम से ही बडे गांव को बुद्रुक और छोटे गांव को खुर्द कहा जाता था।

कसबा का अर्थ-कारीगर लोगों का गांव। यहां साप्ताहिक बाजार भी होता था तथा आसपास के देहाती बाजारहाट के लिए कसबे में आते थे। कारीगर लोग स्वयं बनाई वस्तुएं बाजार में बेचने के लिए लाते थे। मंडी बसाने की जिम्मेदारी एकाध आदमी को सौंपी जाती थी और इस काम के इनाम हेतु उसे एकाध भूखंड दिया जाता था। बंदरगाह के नजदीक व्यापारी नगर को 'गिरे' कहा जाता था।

गांव के निवासी भूमि ही एक मात्र उपजीविका का साधन होने से जिनके पास जमीन हुआ करती थी उन्हें ही गांव का निवासी समझा जाता था। विभिन्न जाति-उपजाति के लोग इन गांवोंमें निवास करते थे। यह एक व्यवस्थित ढंग से चलाई जानेवाली इकाई थी। इनमें गांव की वंशपरंपरा से चले आए अधिकारियों, भूमि के मालिकों तथा ग्रामसेवकों को ही शामिल किया जाता था। मुख्यतः गांव में चार प्रकार से सत्ता चलाने की परंपरा का प्रचलन था। वह इस प्रकार है –

दीवानी सत्ता : इसमें कारकून, हवालदार आदि राजा के अधिकारी आते थे। इनके द्वारा राजा अपना शासन चलाते थे।

गोतसत्ता ग्रामाधिकारियों की सत्ता : इसे देशसत्ता भी कहा जाता था। इसमें गांव के अधिकारी, वतनदार, बलुतेदार, परंपरागत व्यवसायी, ग्रामसेवक आदि शामिल थे। समाजिक दृष्टि से इस सत्ता को अनन्यसाधारण महत्व था। यह सत्ता राजसत्ता से भिन्न, स्वतंत्र तथा सशक्त होती थी।

धर्मसंस्था /जाति सत्ता /जाति पंचायत : यह सत्ता श्रेष्ठ तथा स्वतंत्र मानी जाती थी। इनका मानना था कि 'हमारी जाति से संबंधित न्याय (कानून) का मामला सरकार (राजा) की ओर ले जाने का कोई मतलब ही नहीं।'

व्यापारी सत्ता : यह सत्ता भी स्वतंत्र और श्रेष्ठ मानी जाती थी। इनका भी यह कहना था कि- 'अपराधी व्यक्ति को सरकार की ओर से सजा फरमाई हो तो भी यदि बाजार की पंचायत ने उस व्यक्ति को छोड देने का निर्णय किया हो तो उसे मुक्त करना चाहिए।'

वतनदार वर्ग : शिवकालीन समय में मराठी समाज में वतनदार प्रतिष्ठित था। पाटील, कुलकर्णी, सर पाटील, सर कुलकर्णी, देशमुख, सरदेशमुख, चौगुले, शेटे आदि अनेक प्रकार के वतन थे। अपना वतन इन लोगों को अधिक प्रिय था। इसके लिए आपसी कलह होते थे। इसमें सच-झूठ का कोई मोल नहीं था। यह वतन इनाम या सरकार की ओर से दिए जाते थे। इनमें से देशमुख अपने आपको अलग और श्रेष्ठ समझते थे। यह लोग गांवोंमें गढी में या किसी गड पर निवास करते थे। इनके पास सेना भी रहती थी। वतनदार आम जनता को हानि पहुँचाते थे तथा सरकार के विरूध्द भी बगावत करते थे। इसलिए शिवराय ने वतनदार पध्दति नष्ट कर दी।

मिरासदार : वतनदार के बाद गांव का एक प्रमुख वर्ग मिरासदारों का भी होता था। जमीन पर लगाया गया लगान इनको बराबर देना पडता था। इनको 'थळकरी' भी कहा जाता था।

बलुतेदार : इन्हें गांव का प्रतिष्ठित व्यक्ति मानते थे। ग्रामपंचायत के काम में सक्रिय सहभाग लेने का इन्हें पूरा अधिकार था। यह लोग ग्रामपंचायत में वतनदारों तथा मिरासदारों के साथ समानाधिकार से बैठ सकते थे। कुम्हार, सुनार, नाई, धोबी, बढ़ई, लुहार, चमार, तेली आदि व्यावसायिकों का उल्लेख बलुतेदारोंमें होता था। अन्य बलुतेदारोंमें जोशी, मुलाणा, गुरव आदि भी अपने-अपने व्यवसाय करते थे। यह लोग समाज की धार्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने का काम करते थे तथा इस काम के बदले इन्हें नकद धन, अनाज और कभी-कभी लगान से मुक्त जमीन भी दी जाती थी। इनकी संख्या बारह होती थी। गांव की आवश्यकतानुसार यह संख्या कम-अधिक भी होती थी।

ऊपरी : मिरासदारों को उनकी जमीन संबंधी या अन्य कामोंमें मदद करने के लिए जो लोग शहर से गांव में आकर निवास करते थे। उन्हें'ऊपरी' कहा जाता था। गोसत्ता से इनका कुछ भी संबंध नहीं होता था। इनको सामान्यत: पराया समझा जाता होगा, इसलिए इन्हें गांव में किसी भी प्रकार का स्थान नहीं दिया जाता होगा। कभी-कभी यह लोग गांव की बंजर जमीन सरकार की ओर से निश्चित कालावधि के लिए लेते थे तथा कुछ वर्षों बाद उस जमीन के स्वामित्व के अधिकार उन्हें बहाल कर दिए जाते थे। तदनंतर उनकी गिनती मिरासदार वर्गमें की जाती थी। अत: यह कहना सही होगा कि वतनदार, मिरासदार, बलुतेदार और ऊपरी यह ग्राम चलानेवाले चार प्रमुख पहिए थे।

सेवक वर्ग : महार, मांग, तदाल, रामोशी आदि दूसरे वर्ग के ग्रामसेवक थे। गांव के छोटे-छोटे काम इन्हें करने पडते थे। महार गांव का वतनदार सेवक था। उसके वतन को हडोला, हडकी या पाडेवारी कहा जाता था। गांव के मरे हुए जानवर उठाने का इनका कार्य था। गांव में घटित घटनाओं की जानकारी इनके पास होती थी। 'पाडेवार' का मतलब गांव के कामों के लिए नियुक्त महार तथा 'राबता' का मतलब घर के काम संभालने के लिए नियुक्त महार। इस प्रकार गांवोंमें दो महारों की नियुक्ति की जाती थी। सरकार का संदेश लोगों तक पहुँचाने का काम 'तराल' को करना पडता था। रामोशी तथा मांग दलित जातियों के लोग चोरी तथा अन्य गुनाहों की खोज लेने का काम करते थे।

अत: कहा जा सकता है कि वतनदार, मिरासदार, बलुतेदार, ऊपरी तथा अन्य सेवक वर्ग इन सबके मेल से शिवराय के समय की ग्रामव्यवस्था का स्वरूप निर्धारित होता था तथा इस ग्रामव्यवस्था की प्रत्येक इकाई समाज के विकास के काम में लगन से जुटा हुआ था।

२.१.३ धार्मिक परिस्थिति :

हिंदू धर्ममें भक्ति को अनन्यसाधारण महत्व है। इसका महत्व पुराने समय से दृष्टिगत होता है। ईश्वर की आराधना करना और मोक्ष प्राप्त करना ही भक्ति का मुख्य उद्देश्य होता है। शैव और वैष्णव यह दो भक्ति के मार्ग रहे हैं। इन प्रवाहों में अनेक संतोंने

अपना योगदान दिया है। महाराष्ट्र में मध्ययुग में अनेक संत और पंथ हो गए हैं। वह इस प्रकार हैं- १. नाथ संप्रदाय, २. महानुभाव संप्रदाय, ३. वारकरी संप्रदाय, ४. दत्त संप्रदाय तथा ५. समर्थ संप्रदाय आदि।

नाथ संप्रदाय : शंकर भगवान ही इस संप्रदाय के प्रथम नाथ थे और उन्होंने ही इसकी स्थापना की ऐसा माना जाता है। नौंवी शती से यह संप्रदाय विकसित हो रहा है। मच्छिंद्रनाथ, गोरखनाथ, गहिनीनाथ, चर्पटीनाथ, चौरंगीनाथ, नागार्जुन आदि महापुरूषों ने इस संप्रदाय में अपना योगदान दिया है। इस संप्रदाय के बारह गुरू माने जाते हैं। भारत में विशेषत: महाराष्ट्र में इस संप्रदाय के अनेक स्थल विद्यमान है। इस संप्रदाय ने स्त्री और शुद्रों को अपने संप्रदाय में स्थान दिया था। आगे चलकर यह संप्रदाय पूर्णत: वारकरी संप्रदाय में विलीन हो गया। सत्रहवीं शती में महाराष्ट्र के अनेक स्थानोंमें इस संप्रदाय का अस्तित्व दृष्टिगत होता है।

महानुभाव संप्रदाय : तेरहवीं शती में इस संप्रदाय का उदय हो गया है। इसके आगे साधारणत: ३०० साल इस संप्रदाय का सुवर्णयुग माना जाता है। गोविंदप्रभु इस संप्रदाय के मुख्य पुरूष हैतो चक्रधर स्वामी ने इसकी स्थापना की है। इसके तत्वज्ञान का प्रचार-प्रसार केसोबास, म्हइंभट, महदंबा और भास्कर बोरीकर आदि ने किया। इन लोगों ने अनेक ग्रंथों का सृजन किया। केसोबास निर्मीत 'सूत्रपाठ' इस ग्रंथ में इस संप्रदाय का तत्वज्ञान के समान ही इस संप्रदाय मेंचक्रधर स्वामी ने सनातनी वैदिक धर्म पर टिप्पणी की है। स्त्री तथा पुरूष की देवता अलग होती है इस भ्रम को इस संप्रदाय ने नष्ट किया। सत्रहवीं शती में महाराष्ट्र में उस संप्रदाय का अस्तित्व दृष्टिगत होता है।

वारकरी संप्रदाय : महाराष्ट्र में यह संप्रदाय अत्यंत प्रसिध्द रहा है। इसे भागवत संप्रदाय और माळकरी भी कहते हैं। इस संप्रदाय के लोग नियमित रूप से पंढरपुर को विठ्ठल दर्शन के लिए जाते हैं। इस संप्रदाय को पांच खंड़ों में विभक्त किया जा सकता है। १. भक्त पुंडलीक से संत ज्ञानेश्वर का समय २. ज्ञानेश्वर से संत नामदेव का समय ३.

भानुदास और संत एकनाथ का समय ४. संत तुकाराम का समय ५. संत तुकाराम के बाद का समय आदि।

इस संप्रदाय को सही दिशा और गति सन १२१२ में संत ज्ञानेश्वर के 'ज्ञानेश्वरी' ग्रंथ के निर्माण से मिली। इस ग्रंथ के साथ ही ज्ञानेश्वर के साहित्य में अमृतानुभव, चांगदेव पासष्टी, हरिपाठ तथा अन्य अभंगों का समावेश है। इस संप्रदाय को शुध्द और सही दिशा देने का कार्य संत नामदेव ने किया। विठ्ठल भक्ति की लालसा उनके साहित्य में दृष्टिगत होती है। इस संप्रदाय को अत्यंत प्रभावशाली बनाने का कार्य उन्होंने किया। इस संप्रदाय का नवनिर्माण संत एकनाथ ने किया। उन्होंने ७५००० अभंगों (ओव्या) का निर्माण किया। इनका सामाजिक कार्य अत्यंत प्रभावी रहा। स्पृश्य-अस्पृश्य का भेद नष्ट करने का कार्य उन्होंने किया। इस संप्रदाय को सही गती संत तुकाराम ने दी। इसलिए कहते हैं कि 'ज्ञानदेवे रचिला पाया तुका झालासे कळस' इस उक्ती के समान ही संत तुकाराम ने साहित्य में सर्वोच्य स्थान प्राप्त किया है। उनके ४५०० अभंग अत्यंत महत्वपूर्ण सिध्द हो गए है। उन्होंने अंधश्रध्दा, वर्णद्वेश, जातिप्रथा आदि का कडा विरोध किया। साथ ही पंरपरागत रूढियां, पंडितोंद्वारा फैलाए जाल, अघोरी उपासना आदि को नष्ट किया। वैज्ञानिकदृष्टि संत तुकाराम ने समाज को प्रदान की। इनके बाद इस संप्रदाय को निळोबा का योगदान रहा।

इस संप्रदाय के सभी संतों के तत्व और कार्य का प्रभाव सत्रहवीं सदी में महाराष्ट्र के जनमानस पर रहा है और आज भी दिखाई देता है। इस संप्रदाय के धार्मिक कार्य से ही महाराष्ट्र में सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों को बढ़ावा मिला। संस्कृत को मराठी भाषा में साहित्य निर्माण करना, अंधश्रध्दा और कर्मकांड से समाज को मुक्त करना आदि इस संप्रदाय के महत्वपूर्ण कार्य रहे हैं। तत्कालीन परिस्थिति में लोगों को नया जोश और स्फूर्ति देने का कार्य इस संप्रदाय का रहा है।

दत्त संप्रदाय : इस संप्रदाय का प्रसार श्रीनृसिंह सरस्वती ने किया। 'गुरूचरित्र' इस ग्रंथ में इन्होंने अपने तत्वज्ञान का चित्रण किया है। इस संप्रदाय के गुरूचरित्र, दत्तबोध,

दत्तमहात्म्य, गुरूगीता आदि ग्रंथ रहे हैं। श्रीनृसिंह सरस्वती की शिष्य परंपरा अत्यंत व्यापक है। नृसिंहवाडी, गाणगापूर, माहूर, कारंजे, औदुंबर आदि इस संप्रदाय के क्षेत्र है। यह संप्रदाय वैदिक संस्कृति और कर्मकांड पर विश्वास रखता था। बहामणी सत्ता के अंत में इस संप्रदाय का विशेष महत्व रहा है। हिंदू-मुस्लिम संघर्ष कम करने का कार्य इस संप्रदाय का रहा है। साथ ही दोनों धर्मों के गलत वर्तन करनेवाले लोगों को इन्होंने निशाना बनाया। शैव तथा वैष्णव परंपरा को एकरूप करने का कार्य इस संप्रदाय ने किया। यह संप्रदाय मुस्लिम सत्ता का विरोध करता रहा। इससंप्रदाय ने ब्राम्हण धर्म को बढ़ावा दिया। इसलिए यह प्रसिध्द नहीं रहा। फिर भी सत्रहवीं शती में थोडे-बहुत लोग इस संप्रदाय में विद्यमान थे।

समर्थ संप्रदाय : इस संप्रदाय का कार्य अलग प्रकार का रहा है। इसके प्रवर्तक रामदास स्वामी थे। उन्होंने अनेक ग्रंथ लिखे हैं उसमें'दासबोध' प्रसिध्द रहा है। उनके विकास का केंद्र अध्यात्म था। राजधर्म, क्षात्रधर्म और देवधर्म आदि स्वधर्ममें निहित है, यह उनकी भावना थी।तत्कालीन समाज को नये विचार, उच्च आदर्शनिर्माण करने का कार्य इस संप्रदाय का रहा है। इस संप्रदाय ने महाराष्ट्र धर्म को बढ़ावा देने का महान कार्य किया। शिवराय के कार्य का गौरव इस संप्रदाय ने किया। अन्याय, अत्याचार, जुलूम आदि के विरोध करने का महामंत्र इन्होंने दिया। सत्रहवीं सदी में शिवराय के उदय के पूर्व मुस्लिम शासकों ने हिंदू के मंदिर उध्वस्त कर मस्जिदों का निर्माण, धर्मांतर, अधिक लगान लगाना आदि घटनाएँ हो रही थी। इस स्थिति मेंकिसी महान व्यक्ति के अविष्कार की जनता राह देख रही थी। इस अत्याचारियों से महाराष्ट्र को मुक्त करने के लिए शिवराय ने स्वराज्य निर्माण किया। शिवराय के राज्य में जोशी, गुरव, ठाकुर, जंगम, मुलाणा आदि धार्मिक कार्य करनेवाले लोग अपना-अपना कार्य करते थे। गांव निवासियों की धार्मिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति यह लोग करते थे। जोशी पत्रा (पंचाग) पढ़ाकर शादी-ब्याह, बुवाई, कटाई आदि केलिए अच्छा मुहूर्त निकालने का काम करता था। गुरव मंदिर का पुजारी था, उसे पूजा और देखभाल का काम करना पडता था। ठाकुर जंगम

मेंरहनेवाले लोगों को पुरोहित था। लिंगायतों के पुजारी को जंगम कहा जाता था। घर-घर में बेलपत्र देने का उसका कार्य था। मुलाणा को गांव की मसजिद और कब्रस्तान की देखभाल करने का काम था। साथ ही कसाई का काम भी उसे करना पडता था। मुस्लिम लोगों के सभी धार्मिक कार्य मुलाणा को ही करने की परंपरा थी। इनके अलावा सुनार, भिश्ती, दर्जी, तराल, माली, रामोशी, तेली, तंबोली, गोंधली आदि लोग भी अपनी जिम्मेदारियां निभाते थे।

धार्मिक इनाम : सत्रहवीं सदी में धर्म को विशेष स्थान था शिवराय धार्मिक वृत्ति के थे लेकिन अंधश्रध्दा का विरोध करते थे। इसलिए कई धार्मिक संस्थाओं या धर्मपरायण व्यक्तियों को गांव की जमीन का कुछ भाग इनाम में दिया जाता था। मठों, मस्जिदों, देवालयों तथा संतों की समाधियों की देखभाल की जाती थी। यह वंशपरंपरा के तहत दिए जानेवाले इनाम थे। 'देवस्थान' देवकार्य के लिए दिए जानेवाले इनाम थे। यह इनाम किसी दूसरे के नाम तबदील नहीं किए जाते थे।

शिवराय ने इस प्रकार के कई धर्मादाय इनाम दिए थे। इंदापुर के काजी, चिंचवड के मोरया गोसावी, आलंदी के ज्ञानेश्वर मंदिर, भांबोडे की मस्जिद के खिदमदगार, रामदास के चाफक मठ, पारगांव के मौनीबाबा, नींब के सदानंद मठ, सासवड की सोपानदेव समाधी आदि धार्मिक संस्थाओं को शिवराय ने इनाम दिए थे। छत्रपति शिवाजी के धार्मिक कार्य के संबंध में डॉ. गोविंद पानसरे लिखते हैं कि, ''शिवाजी के समय को ध्यान में रखें तो शिवाजी का कार्य और विचार अनन्य साधारण ही है। क्योंकि धर्म का लोकजीवन पर अधिक प्रभाव था। लेकिन अपने धर्मके साथ दुसरों का धर्म भी उतना ही श्रेष्ठ और उच्च है साथ ही उपासना पद्धति अलग-अलग होने के पश्चत भी उनका उद्देश्य एक ही है यह महत्वपूर्ण तत्व शिवाजी ने रखा।''[३]

धार्मिक कर : सिंहस्थ का पर्वकाल हर बारह साल बाद आता है। ऐसे समय नाशिक में गोदावरी के तटपर लोगों की भारी भीड होती थी। सिंहस्थ पर्वकाल में गोदावरी नदी के पवित्र जल में स्नान करने और पुण्य प्राप्त करने अनेक लोग गांव-गांव से नाशिक आते

हैं। इसे 'कुंभमेला' कहा जाता है तथा यह परंपरा आज भी कायम रही है। इस अवसर पर यहां यात्रियों का आना-जाना साल भर रहता है। स्थानीय लोगों को छोडकर आनेवाले यात्रियों को यात्राकर देना पडता है, उसे धार्मिक कर या सिंहस्थ पट्टी कहा जाता है। शिवराय के समय में भी यह कर वसुल करने की परंपरा थी।

शिवराय ने धर्म के संदर्भमें सहिष्णुता एवं उदारता की नीति अपनाई थी। किसी धार्मिक कार्यों पर खर्च करने के लिए उन्होंने अपने खजाने का उपयोग किया था। उन्होंने धर्म के नामपर जो दान दिया था, उसमें हिंदू-मुस्लिम भेद कभी नहीं किया। साधु पुरूषों को दिए गए दान तथा उसके नूतनीकरण यह उनका महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है।

२.१.४ शिवराय कालीन आर्थिक स्थिति :

महाराष्ट्र सह्याद्री पर्वत लकीरों का प्रदेश है। कृषि यह इस प्रदेश का प्रमुख व्यवसाय रहा है। पर्वत-खाईयों का प्रदेश होने से यहां उपजाऊ जमीन कम मात्रा में थी। साथ ही कुदरत की कृपा-अवकृपा पर यह व्यवसाय निर्भर है। यहां अकाल के बादल हमेशा मंडराते रहते थे। यहां के उद्योग भी कृषि पर निर्भर थे। कुदरत की अवकृपा से कृषि के साथ उद्योग भी नष्ट होते थे। मध्ययुग में कुदरत की आपत्ति के साथ सुलतानी आपत्ति से भी कृषि की हानी होती थी। सुलतान की नजर किसी गांव पर पडी तो, या तो अनाज काटकर ले जाते थे या उसमें सेना, घोडे घुसाकर उसे नष्ट किया जाता था। अत: यह कहना उचित होगा कि महाराष्ट्र की आर्थिक स्थिति अत्यंत शोचनीय थी।

महाराष्ट्र के लोगों का अपनी भूमि से अत्यंत लगाव था। अपनी जान से भी ज्यादा अपनी भूमि पर यह लोग प्रेम करते थे। इसलिए कितनी भी कठिनाइयोंमें यह लोग अपनी भूमि छोडकर स्थानांतर नहीं करते थे। परिस्थिति अनुरूप व्यवहार करने की आदत इन लोगों को पड गयी थी। अपनी भूमि से लगाव होने से यह लोग आत्मनिर्भर बन गए थे। अल्प उत्पाद से परिवार चलानेवाले इन लोगों की आवश्यकताएँ भी अल्प थी। स्वाभाविक है उनकी इन्हीं आदतों के कारण उन्हें आर्थिक विपन्नता तारक सिध्द हो गयी।

इन्हीं लोगों का संगठन कर उनके हाथ में शस्त्र देकर दक्षिण की यवनी सत्ता और मुघल सत्ता के विरोध में शिवराय ने स्वतंत्रता स्थापित की ।

शिवराय कालीन कृषि व्यवसाय :

गांव की संपूर्ण जमीन के दो भाग किए जाते थे। एक पांढरी जहां गाव होते थे, दूसरी 'काली' जहां कृषि की जाती थी। 'काली' जमीन को भी दो भागोंमें विभाजित किया जाता था एक उपजाऊ तथा दूसरी बंजर। शासन की ओर से बंजर जमीन को उपजाऊ बनाने के प्रयास किए जाते थे। संपूर्ण जमीन राजा के अधीन रहती थी। संपूर्ण जमीन की देखभाल तथा बुआई-जुताई राजा नहीं कर सकते थे इसलिए गांवों को प्रदान कर उनसे लगान वसूला जाता था। इस प्रकार वतनदार, सरदार मिरासदार और बलुतेदार भूमि के मालिक बनते थे। बंजर जमीन को उपजाऊ बनाने का कार्य ऊपरी लोग करते थे और कुछ दिन पश्चात वह भी उस जमीन के मालिक बनते थे।

किसान की आवश्यकताएँ : सत्रहवीं सदी में महाराष्ट्र का आर्थिक जीवन कृषि व्यवसाय के साथ पूरी तरह जुडा हुआ था। अन्य प्रकार के उद्योग तथा व्यापार का स्थान दुय्यम था। कृषि व्यवसाय ही उपजीविका का मुख्य तथा एकमेव साधन होने से लोग जमीन को 'काली माँ कहते थे और आज भी कहते हैं। गांव का संपूर्ण जीवन कृषि पर ही निर्भर होता था। किसान को कुणबी, मुजेरी, रया, कुलवाडी आदि नाम से भी जाना जाता था। इस समय राजनीतिक उथल-पुथल से किसान का जीवन प्रभावित हो गया था। इसका परिणाम यह हुआ कि किसान का जीवन पिछड गया था। इसके अनेक कारण थे जैसेअसहाय, राज्यशासन, वर्षा की अनिश्चितता, लडाई-झगडे आदि।

खेती करने के लिए मनुष्यबल आवश्यक होता है। संपूर्ण परिवार की सहायता इस काम के लिए आवश्यक थी। स्त्री-पुरूष, अबाल-वृध्द आदि। शिवराय के जन्म के समय ही बड़ा अकाल पडने से भारी मात्रा में मनुष्य हानि हो गयी थी। शिवराय ने स्वराज्य निर्माण कर अनेक युवकों को अपनी सेना में काम करने को प्रेरित किया और उनके सामने उपजीविका का नया मार्ग दिखाया। साथ ही बैल खरीदने के लिए किसानों को

उन्होंने आर्थिक सहायता की। कृषि के लिए तिसरी आवश्यकता इस व्यवसाय से संबंधित औजार जुटाने की थी। शिवराय ने औजार खरीदने के लिए सरकार की ओर से किसानों को कर्ज भी उपलब्ध कराया था। साथ ही उन्होंने बीज खरीदने के लिए किसान को आर्थिक मदद की। उपज न होने, अकाल पडने से अगर किसी के पास अनाज नहीं था तो सरकारी भंडार से सामान्य लोगों को अनाज देने का आदेश भी शिवराय ने दिया था।

शिवराय ने जिरायती जमीन को पानी की व्यवस्था के लिए नये बांध, नहरे, कुएंनिर्माण किए। गांवोंमें कुओं की संख्या सीमित थी। नदी-नाले पर बांध बांधने, नहरे खोदने और उनकी देखभाल का काम गांव के लोगों को करना पडता था। इस काम के लिए सरकार की ओर से कुछ हिस्सा या संपूर्ण खर्चा करने को शिवराय पीछे नहीं हटते थे।

शिवराय ने लगान लेते समय किसानों के हित को दृष्टि में रखकर नियम बनाये थे। लगान निर्धारण के लिए खेती को नापना अनिवार्य किया। इसलिए 'शिवशाही लाठी' से जमीन को नापा जाता था। इसके लिए पहली शर्त यह थी कि गांव की उपजाऊ जमीन की एक सूची निर्माण की जाती थी। जमीन के प्रकारानुरूप उसकी अव्वल, दूम, सीम तथा चारहम आदि प्रकारोंमें गिनती की जाए। इसके बाद जमीन से कौन-सी फसल उपजाई जाती है और फसल कितनी मात्रा में पैदा होती है। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर किसान पर लगान लगाया जाता था।

इस प्रकार शिवराय के राज्य में कृषि की स्थिति थी। समय-समय पर किसान की आर्थिक सहाय्यता कर विपरीत स्थिति में उनका मनोबल बढ़ाने का महान कार्य शिवराय ने किया है।

शिवराय के समय के उद्योग व्यवसाय :

मध्ययुग में कृषि ही प्रमुख व्यवसाय होने से उसके विकास में सहायक कई प्रकार के छोटे-छोटे व्यवसाय थे। गांव का प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे पर निर्भर था। इसलिए उन गांवों को स्वनिर्भर कहा जा सकता है। शिवराय के राज्यकाल में कतिपय व्यवसायों का

उल्लेख इतिहास में दृष्टिगत होता है। चमार, कुम्हार, ठकेरा, बढाई, बुनकर, तेली, मांग, महार, गडरिया, कोमटी, सुनार, लोहार आदि व्यवसायों का उल्लेख मिलता है। इनके अलावा नाई, धोबी, माली, दर्जी, धीवर, रंगरेज, मललाह आदि ग्रामीण कारगिरों के व्यवसाय का भी चित्रण दिखाई देता है। तत्कालीन गांवोंमें पखवाजी, बांसुरीवादक, सांजवादक, वीणावादक आदि वाद्य बनानेवाले व्यवसायी भी थे। मनोरंजन वाले व्यवसायियोंमें कीर्तनकार, गायक, नर्तक, मदारी आदि थे।

शिवराय के समय कुशल कारीगर अपनी-अपनी वस्तुएं गांव के बाजार में जाकर बेचते थे। सप्ताह में एक दिन तथा अलग गांव का बाजार अलग दिन था। इसलिए यह कारीगर लोग अलग-अलग गांवों से बाजार के दिन अपनी वस्तुएं बेचने जाते थे। इन वस्तुओंमें फेपडा, कंबल, जूते, लकडी की वस्तुएं आदि का समावेश होता था। तत्कालीन समय अलंकारोंके जो विविध रूप देखने को मिले इनका अध्ययन करने से यह पता चलता है कि उस समय सुतार का व्यवसाय अत्यंत प्रगत था। इन अलंकारोंमें शिवराय या उनके पारिवारिक व्यक्तियों के तथा राज्यभिषेक के समय दान दिये गए आदि का उल्लेख है। प्रति सप्ताह में एक दिन कसबों में बाजार या मंडियां लगाई जाती थी। इस बाजार में आवश्यक वस्तुओं को खरीदने के लिए आसपास के लोग आते थे। इस बाजार में कोई खास वस्तुएं बेचने के लिए बाहर के व्यापारी भी आते थे। यह बाजार शाम तक रहता था तथा शाम को व्यापारी अपने-अपने दुकान समेटकर दूसरे कसबे के व्यापार के लिए प्रस्थान करते थे। कसबें का बाजार अपेक्षाकृत बड़ा होता था और इसमें अनेक प्रकार की वस्तुएं होती थी। जैसे-अनाज, कपडा, मक्खन, पान, सुपारी, फल, नारियल, सब्जियां, गोश्त, मसाले आदि।

राज्य की सर्वांगीन उन्नति की ओर शिवराय पूरा ध्यान देते थे। उनको पूरा विश्वास था कि व्यापार की वृध्दि से ही राज्य समृध्द बन सकता है। इसी कारण उन्होंने व्यापारियों को कई प्रकार की सहूलियतें दी थी साथ ही उन्हें चुंगी में छूट भी देते रहे। उस समय मंडियां बाजार पर डकैत होती थी। इसलिए शिवराय ने सरकार की ओर से

इन मंडियों को सुरक्षा प्रदान की थी। इससे व्यापारी को सुरक्षा महसूस हो गयी और व्यापार व्यवसाय के विकास को गति प्राप्त हो गई। उन्होंने अपने राजगढ़ और रायगढ के किलों पर बड़ी-बड़ी मंडियों का निर्माण किया था।

सत्रहवीं सदी में यातायात के प्रमुख साधन, बैल, ऊंट, टटटू गधे, भैंसे, बैलगाडियां, पालकियां, घोड़ें, नौका, नावें घोडागाडियां आदि थे।

शिवराय के समय व्यापार के अनेक केंद्र कोंकण में थे। दाभोल, कल्याण, भिवंडी, चौल, वेंगुर्ला तथा पेन आदि व्यापार और उद्योग के केंद्र थे। इनके अलावा तारापुर, डहाणू, केलचे-माहीम, आगाशी, वसई, वांद्रे, माहीम नागोठणे, श्रीवर्धन, जैतापुर तथा खारेपाटण यह भी व्यापार के केंद्र थे। कोंकण में नमक पैदा करनेवाले ठाणे, रायगढ, कुलाबा, रत्नागिरी आदि जिलों का स्थान प्रमुख था। कल्याण तथा भिवंडी में जहाज निर्माण करने के कारखाने उस समय थे।

व्यापार की वस्तुओं का वर्गीकरण :

अनाज : गेहूं, दाले, मूंग, धान, मसूर, उडद, वर्णे, मक्का, नाचणी, तिल आदि ।

मसाले : प्याज, लहसून, सरसों, लौंग, इलायची, इमली, कपूर, केशर, पारा, गुड, मिसरी, काकवी, चंदन, शोंठ, अफीम, घी, शहद, सुवासिक तेल आदि।

कपडा : महाराष्ट्र के बाहर से कपडे यहां लाकर बेचे जाते थे। कपडों के प्रकार इस प्रकार थे - धोती, साडी, कंबल, ताफता, पाटव, मलमल, रेशम, पीतांबर, खारा, सखदल, पुर्तकाली, अष्टपुतली, घाटी, गुदडी, पासोडी, गलेफ, चिट, शाल, खंबायत, रूमाल, सूत, सन, मलमल की टोपियां आदि।

फल तथा अन्य पदार्थ : ईख, नारियल, तरबूज, कटहल, नींबू, केला, आम, अननस, काजू, बादाम, पान, सुपारी, दूध, मख्खन, गोश्त, सब्जियां आदि।

प्राणी : बैल, घोडा, गाय, भैंस, बकरी, उट आदि।

इस प्रकार शिवराय ने व्यापार का विकास करने के लिए अनेक नए नियम बनाएँ और इससे राज्य की प्रगति हो गयी।

स्वराज्य निर्माण करना, उसका विस्तार करना तथा उसकी देखभाल आदि को धन की नितांत आवश्यकता होती है। अपने राज्य को लोक कल्याणकारी बनाने के लिए शिवराय ने अष्टप्रधानों का मंत्रिमंडल निर्माण किया। इसके लिए लगनेवाला धन भी अधिक था। मंत्रियों, सैनिकों, अमात्यों और सचिवों को पंद्रह हजार होन एवं बाकी लोगों को दस हजार होन वेतन दिया जाता था। सेनापति और सैनिकों पर उन्हें बहुत भारी खर्च करना पडा। राज्य में मजबूत किलों का निर्माण करना, पुराने किलों की मरम्मत करना इसलिए धन आवश्यक था। पश्चिमी सागर तट पर नौसेना की निर्मिति के कारखाने निर्माण किए। मंदिर-मस्जिदों का निर्माण कर उनकी देखभाल करना राज्यभिषेक समारोह का खर्च आदि।

उपरोक्त सभी कार्यों के लिए बहुत सारे धन की आवश्यकता थी। शिवराय ने आय के विभिन्न स्त्रोत निर्माण कर सफलता प्राप्त की।

२.२ महात्मा फुले कालीन परिस्थितियाँ

२.२.१ राजनीतिक परिस्थिति :

म. फुले कालीन राजनीतिक परिस्थिति भी बड़ी उथल-पुथल की रही है। जोतीरावके जन्म से कुछ वर्ष पहले ही पेशवाओं का राज्य समाप्त हो गया था। छत्रपति शिवाजी महाराज ने महाराष्ट्र में जो स्वराज्य निर्माण किया था उस महाराष्ट्र की बागडौर सौ वर्षों तक पेशवाई के हाथोंमें रही। छत्रपति शिवाजी ने जिस न्यायोचित एवं गुणग्राही शासन प्रणाली की नींव रखी थी, उसे पेशवाओं ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। जाति विहीन व्यवस्था को जाति प्रधान बना दिया। परिणामस्वरूप आंतरिक कलह बढ़ते गये।

पेशवाओं का कार्यकाल ब्राम्हणों के एकाधिकार का घिनौना इतिहास है। जो राज्य समाजोन्मुख नहीं होता, उसका अस्त होते देर नहीं लगती। पुणे के शनिवारवाडे पर

अंग्रेजों का झंडा लहराया और एकाधिकारशाही, ऐय्यासी से बर्बर राज्य अस्तंगत हो गया। '१७ नवम्बर १८१८ को बालाजी नातू नामक गद्दार ने अपने हाथों से, पुणे के शनिवारवाडे पर लहरानेवाला पेशवाओं का ध्वज उतारा और उसके स्थान पर अंग्रेजों का झंडा फहराया। इसी के साथ पेशवा राज्य अस्तंगत हुआ।' इस संदर्भ में जियालाल आर्य लिखते हैं, ''पेशवा का शासनकाल १८१७ में निःशेष हो गया था। शोषण, अत्याचार और भेदभाव से युक्त एक बर्बर युग का पटाक्षेप हो गया इससे आम लोगों में प्रसन्नता होना स्वाभाविक था, परंतु पेशवा के कारिन्दों का आतंक लोगों के मन पर ऐसाघर कर गया था कि पेशवा के राज के बाद अंग्रेजों का शासन प्रारंभ हुआ। वे इंग्लैंड से भारत व्यापार करने आये थे, परंतु यहाँ की सामाजिक, प्रशासनिक स्थिति को देखकर उन्होंने पूरे देश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। यहाँ का समाज, पूरा भारत देश, वर्ग, वर्ण, जाति,उपजाति में विभाजित होकर एक नहीं था। आदमी-आदमी को अछूत समझता था, एक धर्म होते हुए भी ऊँच-नीच, छुआछूत का प्रचंड प्राबल्य था। ऐसे देश पर अधिपत्य स्थिर कर लेना बडा सुगम था। अंग्रेजों ने इस स्थिति का पूरा फायदा उठाया।''[४]

जिस समय पेशवाओं के राज्य का अस्त हुआ उस समय दूसरा बाजीराव पेशवा गद्दी पर थे। पेशवा शासन के उत्तर काल में शासन के सभी उँचे पद ब्राम्हणों को ही दिये जाते। अन्य जातियोंमें भले ही सक्षम व्यक्ति हो उनके लिए शासनमें कोई स्थान नहीं था। शासनकर्ता होने के कारण अधिक-से-अधिक लाभ ब्राम्हणों को ही मिलते। उनसे लगान या तो कड़ाई से वसूल नहीं किया जाता या अन्यों की तुलना में आधा ही लिया जाता था।

शासकीय व्यवस्था में'देशमुख' विशिष्ट क्षेत्र का अधिपति और 'पाटील' गाँव का राजा हुआ करता था। ये पद किसी योग्यता के बल पर नहीं बल्कि वंश परंपरा के अनुसार दिए जाते थे। भूमि के स्वामी तो किसान कहलाते परंतु अधिक से अधिक लगान वसूल कर उनका शोषण किया जाता। सरकारी कोश में जमा धन राजा-रजवाड़ों के आमोद-प्रमोद, सेना का खर्च, अमीर-उमरावों के स्वागत तथा अतिथ्य और शास्त्री

पंडितोंको पुरस्कार के रूप में ही खर्च किया जाता था। महाजन किसान-मजदूरों का ऋण देते, उनसे कागजात बनवाते और समय पर ऋण न चुकाने पर उनके बेटे-बेटियों को बंधुआ मजदूर बनाते।

पेशवाओं का कार्यकाल ब्राम्हणों के एकाधिकारशाही का घिनौना इतिहास है। पुणे के शनिवारवाड़े पर अंग्रेजों का झंडा लहराते ही पेशवाओं का राज्य समाप्त हुआ। इस समय जनता को दु:ख होना चाहिए था किन्तु जो बाजीराव से लाभान्वित हुए थे उनको छोड़कर किसी को भी इस बात का दु:ख नहीं हुआ। इस प्रकार अंग्रेजों का शासन आने से पहले ब्राह्मण तथा तत्सम उँची जातियों को छोड़कर बहुसंख्यक जनता अत्यंत कष्टदायी, अपमानजनक और घटिया स्तर का जीवन जी रही थी।

पेशवा-राज्य का अंत हो जाने पर अंग्रेजों का शासन शुरू हुआ। उन्होंने अल्पसमय में शासन व्यवस्था को सुचारू रूप दिया। यह काम उन्होंने बड़ी सतर्कता, दक्षता तथा चतुराई से किया। उन्होंने अनेक नये कानून बनाये जिससे आम जनता आश्वस्त हुई। अंग्रेजों के आगमन से पहले भारत में प्रजा को शिक्षा दिलाने सरकार का उत्तरदायित्व नहीं माना जाता था लेकिन ईस्ट इंडिया कंपनी ने सन१८१३ में निर्णय लिया कि भारत के बचे हुए राजस्व में हर वर्ष कम-से-कम एक लाख रू. गरीबों के लिए पाठशालाओं पर खर्च किये जाए। इस निर्णय से पहली बार सभी के लिए शिक्षा के द्वार खुले। इसी कारण सामान्य जाति में जन्म लेने के बावजूद जोतीराव को शिक्षा का सुअवसर मिला।

इससे न केवल सामान्य जनों के लिए शिक्षा के द्वार खुले बल्कि मिशनरियों के स्कूलों के कारण लोग अंग्रेजी पढ़ने लगे जिससे लोगों को नई दृष्टि मिली। अंग्रेजी शासन आने से अनेक दृष्टि से परिवर्तन होने लगा। संचार के नये-नये साधन उपलब्ध हुए। डाक, तार के संदेशों का आदान-प्रदान हुआ सन१८५३ में पहली रेलगाडी मुंबई से ठाणे शुरू हुई। लॉर्ड डलहौसी ने अनेक सड़कों, नहरों, सरकारी भवनों, निवास स्थान आदि बनाए। इस सभी सुविधाओं के कारण भारतियों के जीवन में एक नई लहर पैदा हुई।

'सन१८१८ में पुणे में अंग्रेजी शासन की नींव पक्की हो गई थी। उस्ताद लहुजी साळवे ने अंग्रेजी शासन का तख्ता पलट देने की ठानी। जोतीराव फुले, वासुदेव फडके और लोकमान्य तिलक ने स्वतंत्रता प्राप्ति के उद्देश्य से लहुजी सालवे से प्रशिक्षण लिया था। लहुजी सालवे अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ सीना तानकर खडे रहनेवाले, सशस्त्र कांति के पहले गुरू हैं।'

सन १८५२ में मुंबईमें'बॉम्बे असोसिएशन' की दादाभाई नौरोजी के नेतृत्व में स्थापना यह एक ऐतिहासिक कदम था। जिसके माध्यम से राज्यकारोबार और न्यायव्यवस्था में भारतीय प्रतिनिधियों को प्रतिनिधित्व दिया जाए। इस प्रकार की मांग की गई। आगे चलकर सन१८८५ में असंतोष के जनक लोकमान्य तिलक ने स्वतंत्र राजकीय दल की स्थापना की। १९ वीं सदी के अंत में स्वातंत्र्य प्राप्ति की दिशा में विभिन्न आन्दोलनोंद्वारा जनजागृति की गई। इस प्रकार उन्नीसवीं सदी में अंग्रेजों ने सत्ता के साथ-साथ लोगों का विश्वास भी संपादन किया। परंतु जब अंग्रेजों ने लोगों का विश्वासघात किया तो लोगों ने भारत की आजादी के लिए विभिन्न आंदोलन चलाकर स्वतंत्रता का बीजारोपण किया। इन सभी बातों को फुले ने अपनी आँखों से देखा था।

२.२.२ धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थिति :

राजनीतिक दृष्टि से भले ही अनेक सत्तांतर हुए हो किन्तु समाज व्यवस्था में कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता। 'रामायण एवं महाभारत में जो संदर्भ मिलते हैं, वहीं संदर्भ पेशवाई तक जैसे-के-वैसे दिखाई देते हैं।' वर्ण व्यवस्था, अस्पृश्यता, स्त्री-शूद्रों का ज्ञानग्रहण पाबंदी, सतीप्रथा, जाति व्यवस्था, धर्म व्यवस्था सबकुछ 'जैसे थे' ही थी। सामाजिक व्यवस्था के सारे सूत्र शास्त्री-पंडों के हाथ में थे। शास्त्रों-पंडों की वैचारिकता पुराणे धर्मग्रंथों पर आधारित थी। ''उत्तर हिन्दुस्थान में क्षत्रिय और शूद्र इनसे ब्राह्मण अलग नहीं थे। उनके कपडे, खानपान, आचरण एक जैसे ही था। किंतु नर्मदा की दक्षिण की ओर पश्चिम हिन्दुस्थान में ब्राह्मणों ने पूर्ण रूप से मांसाहार छोडकर वे शाकाहारी बन गये और बाकी जातियों को वे शूद्र मानने लगे। साथ ही जब उनकी हाथों में राजनीति का

कारोबार आ गया, तब से उन्होंने दूसरी जातियों का द्वेष करना शुरु किया। जोतीराव का जीवन इस सामाजिक परिस्थिति का और सामाजिक असंतोष का प्रतीक है।''[५]

अंग्रेजी सत्ता आयी और उसने परंपरा को तोड़ने की दिशा में पहल की। एक नया धर्म और उसका तत्वज्ञान भारत में आया। अंग्रेजों के आने से लोग भौतिक जीवन, शोधक वृत्ति, शिस्त प्रियता, कर्तव्यता, चिकित्सा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि बातों को समझने लगे। तत्कालीन समाज पौराणिक ग्रंथों और विभिन्न रूढियों केचंगुल में इस प्रकार फँसा था कि स्वतंत्र आचार और विचार बहुत दूर की बात थी। जिस महाराष्ट्र में फुले का जन्म हुआ उस महाराष्ट्र की स्थिति भी अलग नहीं थी। नारियाँ तो इतना बदतर जीवन व्यतीत कर रही थी कि, उनको शिक्षा का अधिकार ही नहीं था। वे कोई धर्मग्रंथ नहीं पढ़ सकती थी, बहुपत्नीत्व की प्रथा थी, सतीप्रथा का बोलबाला था। शास्त्री-पंडों द्वारा अज्ञानी समाज का शोषण किया जाता था। पेशवेकाल में इन लोगों को खुली छूट मिलने के कारण इनके द्वारा अधिक जादती की जाती थी।

अंग्रेज यहाँ आने से जनसामान्यों के लिए शिक्षा के द्वार खुल गए। लोग विश्व की कल्पना को समझने लगे। भौतिकशास्त्र, समाजशास्त्र, विज्ञान और भूगोल ने लोगों के ज्ञान में वृद्धि होने लगी। धीरे-धीरे लोगों को नया विचार मिलने लगा। फलस्वरूप पं. बंगाल के उपरान्त महाराष्ट्र में धर्म और समाजसुधार का आंदोलन शुरू हुआ।

बाळशास्त्री जांभेकर द्वारा संपादित 'दर्पण' पत्रिका ने इस दिशा में अच्छी पहल की। व्यक्ति विचार, जातिभेद, स्त्री-पुरूष समता, स्त्री शिक्षा आदि पर विचार होने लगा। ख्रिश्चन मिशनरी छुआछूत को महत्त्व नहीं देते थे। सभी लोगों को वे ईश्वर की संतान मानते थे। इस कारण अस्पृश्योंमें उनके प्रति सहानुभूति उत्पन्न होना सहज स्वाभाविक बात थी। कुछ रूप में धर्मांतर भी होने लगे। इससे हिंदू धर्म आहत हुआ। इसकी प्रतिकिया में धार्मिक सुधार और सामाजिक समता का विचार लोगों तक पहुचाने के लिए विभिन्न आंदोलनों की शुरूआत हुई। इसमेंसन १८२८ में'ब्राह्मो समाज' सन १८६७ में'प्रार्थना समाज' सन १८७३ में'सत्यशोधक समाज', सन १८७५ में'आर्यसमाज' आदि विभिन्न संस्थाएँ स्थापन हुई।

उपरोक्त संस्थाओंमें से 'ब्राह्मो समाज' की स्थापना राजा राममोहन राय ने की। उन्होंने अपने कार्य की शुरूआत पं. बंगाल में की। 'ब्राह्मों समाज' ने मूर्तिपूजा और बहुदेववाद का विरोध किया। सतीप्रथा बंद करने में उनका अमूल्य योगदान है। स्त्री शिक्षा, विधवा पुर्विवाह पर भी उन्होंने जोर दिया। 'ब्राह्मो समाज' से प्रेरणा ग्रहण कर महाराष्ट्र में भी कुछ संस्थाए शुरू हुई। सन १८४४ में दादोबा पांडूरंगजी ने 'मानवधर्म सभा' की स्थापना की। ईश्वर एक ही है, नीतिपूर्वक ईश्वर भक्ति ही सच्चा धर्म है, सभी को शिक्षा का अधिकार है, प्रत्येक मानव को विचार स्वातंत्र्य का अधिकार है आदि इस सभा के मुख्य तत्व थे। आगे चलकरदादोबा पांडूरंग ने १८४९ में'परमहंस सभा' की स्थापना की और उसके द्वारा सामाजिक सुधार की दृष्टि से कार्य किया।

दादोबा के बाद धर्म सुधारक लोकहितवादी का नाम आता है। विचार स्वातंत्र्य, ईश्वर भक्ति, स्वदेश सेवा, स्त्री-पुरूष समता, सत्याचरण, विद्यार्जन आदि धर्मतत्व को उन्होंने महत्व दिया। स्त्री-शिक्षा एवं पुनर्विवाह के वे हिमायती थे। अनुवादक से लेकर न्यायमूर्ति के रूप में कार्य करते समय उन्होंने वृत्तपत्र, ग्रंथालय और अन्य सामाजिक संस्थाएँ शुरू की और सामाजिक सुधार की दिशा में निरंतर अग्रेसर रहें। 'ब्राह्मो समाज' के एक प्रमुख कार्यकर्ताकेशव चंद्रसेन सन १८६४ में मुंबईमें आए। उनसे प्रेरणा ग्रहण कर डॉ. आत्माराम पांडूरंग ने १८६७ में'प्रार्थना समाज' की स्थापना की। आत्माराम पांडूंरगजी के साथ न्या. रानडे, डॉ. रामकृष्ण भांडारकर, नारायण केशव चंदावरकर, पंडित रमाबाई और विठ्ठल रामजी शिंदे भी थे। ईश्वर के अस्तित्व का स्वीकार, धार्मिक सुधार और समाजप्रबोधन इस त्रिसूत्री पर 'प्रार्थना समाज' काम करता रहा। 'प्रार्थना समाज' को मूर्तिपूजा मान्य नहीं थी। आत्मिक उन्नति के लिए वे प्रार्थना आवश्यक मानते थे। कर्मवाद और अवतारवाद पर उनका विश्वास नहीं था। उन्होंने संत साहित्य को ही आधार माना। विषमता का प्रखरता से विरोध किया। जातिगत भेदभाव, स्त्री शिक्षा का प्रसार, विधवा पुनर्विवाह और बालविवाह को रोकने की दिशा में'प्रार्थना समाज' ने अपनी अहम भूमिका निभायी है। 'प्रार्थना समाज' ने निराधार स्त्रियाँ एवं बालकों के लिए आश्रम भी चलाएँ।'

स्वामी दयानंद सरस्वती ने सन१८७५ में मुंबईमें'आर्य समाज' की स्थापना की। धर्मकार्य के लिए उन्होंने व्रत धारण कर संन्यास दीक्षा ली थी। आर्य समाज ने वर्णव्यवस्था को नकारा, वेदाध्ययन का सभी को अधिकार दिया, मूर्तिपूजा, बालविवाह, स्त्री-दासत्व, अस्पृश्यता आदि बातों का डटकर विरोध किया।

कुल मिलाकर महाराष्ट्र में जो समाज सुधार की लहर पैदा हुई उसमें म. फुले ने भी अपना योगदान दिया। सन १८७३ में म. फुले ने 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। इस संस्था के द्वारा फुले ने बहुजनों के लिए शिक्षा के द्वार खोले। सद्सद्विवेक बुध्दि से समाज और ईश्वर को समझने की दृष्टि से ही उन्होंने 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। मानवता ही सबसे बड़ा धर्म है, ईश्वर एक ही है वह सर्वव्यापी, निर्गुण निराकार है, सभी मानव ईश्वर की ही संतान है। जिस प्रकार माता-पिता की पूजा के लिए अन्य किसी की आवश्यकता नहीं उसी प्रकार ईश्वर की आराधना के लिए अन्य किसी दलाल की जरूरत नहीं, ऐसी उनकी धारणा थी। बहुजन समाज को धार्मिक मुक्ति दिलाने का काम म. फुले ने किया है। सामाजिक सुधार की दृष्टि से 'सत्यशोधक समाज' का काम म. फुले ने किया है। सामाजिक सुधार की दृष्टि से 'सत्यशोधक समाज' का काम अनन्य साधारण है। फुले के समकालीन गोपाल गणेश आगरकर की भी समाजिक सुधार के संदर्भमें आग्रही भूमिका रही है। ध्येयवाद, विवेकवाद, सदाचार, नीतिनिष्ठा, लोकसेवा, सत्यनिष्ठा इन्हीं तत्वों पर उनका मार्गक्रमण रहा है। बाळशास्त्री जांभेकर, लोकहितवादी, रानडे, भांडारकर, म. फुले इन सभी का उद्देश्य समाज परिवर्तन ही था।

इस प्रकार फुले कालीन धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति उथल-पुथल की ही थी। हाँ, यह कहा जा सकता है कि फुले कालीन अन्य विचारकों ने धर्म एवं समाज परिवर्तन की दिशा में महाराष्ट्र की भूमि उर्वर बनाने में अपना अमूल्य योगदान दिया है। इस भूमि पर ही म. फुले ने सामाजिक समता के बीज बोये।

२.२.३ आर्थिक परिस्थिति :

अंग्रेजों की सत्ता आने से पहले मुसलमान राजा-महाराजाओं की, शिवाजी महाराज की और पेशवाई की सत्ता महाराष्ट्र में रही। इनमें से छत्रपति शिवराय के स्वराज्य का अपवाद छोड़ दिया जाए तो हर सत्ता ने आम जनता का शोषण ही किया है। हमारे तत्वज्ञान में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पुरूषार्थों को महत्व दिया गया है। परंतु धर्म के तथाकथित ठेकेदारों ने मोक्ष को सर्वोच्च मानकर धर्म को उसका सहाय्यक माना। इस कारण अर्थ एवं काम का स्थान दुय्यम हो गया। परिणामस्वरूप 'ठेविले अनंते तैसेचि राहावे। चिती असू द्यावे समाधान' इस विचार तक ही जनता आ पहुंची।'

''महाराष्ट्र के जनता की आर्थिक स्थिति कभी भी अच्छी नहीं थी। खेती ही यहाँ का मुख्य व्यवसाय था। सारे लोग खेती पर निर्भर थे। लूट-पाट आम बात थी। ऐसी अवस्था में अंग्रेजों ने सत्ता की बागड़ोर संभाली। ब्राम्हणशाही से अंग्रेज अच्छे समझकर यहां की आम जनता आश्वस्त हुई ।''[६] लेकिन अंग्रेज यहां का धन ही विदेश ले गये। किसानों की स्थिति दयनीय बन गयी। इंद्रराज की वक्र दृष्टि होने से अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी।जिनके बलबूते पर किसान खेती करता है वे गाय-बैल विभिन्न रोगों का शिकार हो गये। लगान केनाम पर किसानों का शोषण किया जाता रहा। वह धान उगाता है लेकिन वही भूखा सोता है। उसे न रोटी मिलती है न कपड़ा और न ही मकान। पहले ही आम जनता की बदतर अवस्था और ऊपर से धर्म के नाम पर किया जानेवाला शोषण। इने-गिने लोगों को छोड़कर संपूर्ण जनता गरीबी में जीवनयापन कर रही है।

कुल मिलाकर आर्थिक दृष्टि से कोई आशादायक चित्र नहीं था। अंग्रेजों द्वारा हो रहा भारतीय जनता का शोषण धीरे-धीरे समाज सुधारकों के समझ में आ रहा था। इसी की प्रतिकिया के रूप में स्वदेशी आंदोलन जैसे आंदोलन बाद में शुरू होते हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि जिस समाज की राजनीतिक बागड़ौर विदेशियों के हाथोंमें हो, उनसे आम जनता के सुख-दुःखों का ध्यान रखनेवाली नीति की अपेक्षा निरर्थक होगी। जो समाज आर्थिक स्थिति से संघर्ष करते-करते ही जीवन यापन कर रहा हो उस समाज की

उन्नति की आशा कैसे की जा सकती है। समाज की बदतर स्थिति और उसके कारणों की खोज ही म. फुले के चिंतन का विषय बना। फुले का संपूर्ण साहित्य इन्हीं परिस्थितियों की उपज है।

२.३ राजर्षि शाहू कालीन परिस्थितियाँ

२.३.१ राजनीतिक परिस्थिति :

आधुनिक काल राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल का काल रहा है। १८५७ से पहले अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी सरकार ने राजपूत, सिख, मुस्लिम, मराठा शासकों की सत्ता को ध्वस्त कर दिया था। देशी राजाओं की बची-खुची शक्ति १८५७ की लड़ाईमें खत्म हुई। यह विद्रोह नाकाम रहा। इसका परिणाम केवल ईस्ट इंडिया कंपनी का अंत और रानी व्हिक्टोरिया सरकार की शुरूआत के रूप में हुआ। अंग्रेजों के अधीन संपूर्ण भारत और अंत में महाराष्ट्र भी चला गया। ब्रिटिशों के आतंक से सारा हिन्दुस्तान हतबल और बेजान हो गया।

मुस्लिम राजा की दृष्टि धार्मिक एवं राजनीतिक थी जबकि अंग्रेज राजाओं की दृष्टि आर्थिक थी। दोनों राज्यकर्ताओंमें सिर्फ यही अंतर है। अंग्रेजों की यह नीति 'आधुनिक साम्राज्यवाद' कही जाती है। रानी शासन एक सुनियोजित शोषणतंत्र की कड़ी थी। कंपनी तथा रानी दोनों ने भारतीयों की लूट-खसोट का पूरा फायदा उठाया। सन १८५७ के बाद अंग्रेजों ने राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक, प्रशासनिक नीतियोंमें बदलाव किया। भारतीयों का विद्रोह ठंडा करने के लिए उन्हें अनेक लुभावने सपने दिखाए गये। धर्ममें हस्तक्षेप न करने फी गवाही दी गयी। अंग्रेजों के लिए यह काल सुवर्णकाल था क्योंकि भारतीय धन लूट से उन्होंने अपना राजकोश भर लिया था। ब्रिटिश संस्कृत-सभ्यता के बीजारोपण हेतु मेकाले ने अंग्रेजी शिक्षा का प्रचलन किया।

एक वक्त दिल्ली के तख्त पर अपना झंडा फहरानेवाले मराठों की सत्ता पेशवाई का अंत होने के बाद खत्म हो गई। मराठा सरदार सिंधिया, भोसले, होळकर, गायकवाड एक-दूसरे से झगड़ते रहे। एक-दूजे को लूटते रहे। उनके अंतर्गत कलह के कारण मराठा

सत्ता की राजधानी पुना का भी कोई संकटमोचक नहीं रहा। पेशवा अंग्रेजों के स्वामीत्व को स्वीकारने लगे। अंग्रेज बड़े मुत्सद्दी थे। पेशवा की गद्दी एकाएक खत्म ना हो जिससे मराठा सरदारोंमें राजनीतिक रिक्तता निर्माण हो जाएगी और मराठा समाज भडक उठेगा। यह देखअंग्रेजों ने सातारा के छत्रपति की गद्दी को पुनर्जीवित किया। मराठी राज्यमूल छत्रपति का था, जो धोके से पेशवाओं ने हड़प लिया था। वह राज्य हम फिर मराठों को बख्श रहे हैं ऐसा नारा अंग्रेजों ने लगाया। मराठा राजगद्दी पर प्रतापसिंह छत्रपति को बिठाया। इससे मराठों को अंग्रेज भले लगे। पर उन्होंने मराठों को यह भी अहसास कराया कि यह छत्रपति शिवाजी के राज्य की पुनरावृत्ति नहीं है। उन्होंने समयानुरूप किया हुआ समझौता था। यह उनका राजनीतिक दाँव-पेच था। सन१८९३ ई. में अंग्रेजों ने छलकपटद्वारा छत्रपति प्रतापसिंह को पद से हटा दिया और सातारा का राज्य खारिज कर दिया।

छत्रपति भोसले घराने की दो राजगद्दियाँ थी। एक सातारा और दूसरी कोल्हापुर। अब सतारा राज्य खारिज करने के बाद केवल कोल्हापुर की राजगद्दी शेष बच गयी थी। पेशवा जरूर छत्रपति को भूल गये थे पर मराठा नहीं। मराठों को छत्रपति शिवाजी के उत्तराधिकारी वंशजों के प्रति और राजगद्दी के प्रति विशेष सहानुभूति थी। दक्षिण में कोल्हापुर को छोड़ अनेक रियासतें थी। जिसमें भोर, औंध, सांगली, कुरूंदवाड, मुधोळ, जमखंडी आदि। ऐसी रियासतोंमें अनेक जागीरदार थे। देशी नरेश और जागीरदार सभी अंग्रेजों के साथ हुए करारनामों से बंधे हुए थे। अपने धंधों के वे खुद मालिक थे पर अंग्रेजों के साथ हुए करारनामों के कारण वे आजाद नहीं थे। ब्रिटिशों के शासन युग में भारत दो टुकडों में बंट चुका था। एक अंग्रेजों के अधिकारों पर स्थित खालसा भूभाग और दूसरा देशी नरेशों के अधीनस्थ रियासत भूभाग। इन दोनों की शासन प्रणाली अलग-अलग थी, किन्तु दोनों पर अंग्रेज अपने लोगों द्वारा खालसा और रियासती प्रदेशों पर अपना खास नियंत्रण रखते थे। उन्हें देशी नरेश और जागीरदार को पद से हटाने का पूरा अधिकार था। १९ वीं शती में बड़ोदा नरेश मल्हारराव गायकवाड को उन्होंने पदच्युत कर दिया था।

१८५७ के विद्रोह के बाद रानी सरकार ने भारतीय जनता को अनेक अभिवचन दिए। इस विद्रोह में महाराष्ट्र का शिक्षित वर्ग शामिल नहीं था। छत्रपति शिवाजी के लोकराज्य जैसी भूमिका रानी सरकार अदा नहीं कर पायी। सामान्य जनों की आशा पर पानी फिर गया। उनके दुःख और दर्द अधिक बढ गए। ब्रिटिश सल्तनत के खिलाफ समय-समय पर छोटे-छोटे सशस्त्र क्रांति के प्रयास होते रहे। १८७९ ईमेंक्रांतिकारी वासुदेव बळवंत फडके ने अपने साथियों को लेकर पुणे क्षेत्र में सशक्त विद्रोह किया। इसका दूरगामी परिणाम हुआ। क्योंकि वासुदेव बळवंत फडके अंग्रेजों के हाथ आए और विद्रोह दबा दिया गया। परंतु इस घटना से ब्रिटिश सरकार के अधिकारी अलन हयूम अत्याधिक अस्वस्थ हुए। उनमें भारतीय समाज की नाराजी और आशा-आकांक्षाओं को मार्ग दिखानेवाली राजनीतिक मंच की जिजीविषा जगी। आगे १८८५ ई. में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना हुई।

१९ वीं सदी के अंतिम चरण में दहशतवादी गुटों का उदय हुआ। पहले वासुदेव बळवंत फडके के विद्रोह से अंग्रेज आतंकित हो उठे थे। यह जख्म भरा ही नहीं था कि १८९७में चाफेकर भाईयों ने रैंड की हत्या कर अंग्रेजी हुकूमत को आघात पहुँचाया। उस वक्त पुणे मेंप्लेग की घातक बीमारी फैल चुकी थी। और उसके प्रबंध हेतु रैंड को नियुक्त किया गया था। पर उसने रोगमुक्ति छोड हांहांकार मचाया था। इसलिए रैंड की हत्या कर दी गई थी। इस घटना से महाराष्ट्र के लोगोंमें देशभक्ति की भावना बढ़ रही थी। तो दूसरी ओर भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस राष्ट्रव्यापी संगठन बन धीरे-धीरे राष्ट्रवादी भावनाओं को बढ़ा रहा था। इस वक्त काँग्रेस के अधिवेशन महाराष्ट्र के नागपुर, मुंबई, पुना, में आयोजित किए गए थे। काँग्रेस के गठन में महाराष्ट्र के नेताओं का महत्वपूर्णयोगदान था।

अंग्रेजी राजसत्ता महाराष्ट्र में जब स्थापित हुई तब पहले पहल ब्रिटिश राज और विदेशी ज्ञान विज्ञान से महाराष्ट्र की जनता प्रफुल्लित हुई। इस दौर के आंग्लविभूषित लोगों को अंग्रेजी राज हिंदी समाज को ज्ञानी कराने की ईश्वरीय कल्पना है, ऐसा लगता था। न्या. रानडे उन्हींमें से एक थे। वे अंग्रेज सरकार के खिलाफ देशी जन 'यथा राजा तथा प्रजा' बनेरहे कहते थे। अंग्रेजों के छत के नीचे रह 'भारतीय स्वातंत्र्य की परिकल्पना

उनकी राजनीति का आखरी लक्ष्य था। महाराष्ट्र में खासकर पुना में तिलक, आगरकर, चिपलूनकर के नेतृत्व में राष्ट्रसभा के नेताओं की सुधारवादी राजनीति को न माननेवाला युवकों का उग्रवादी संगठन खड़ा हुआ। १८७० के बाद प्राकृतिक आपदा, सरकार की लगान वसूलने की क्रूर नीति, साहूकारों का निर्दयी शोषण से रियासत की जनता गरीबी की सीमा पार कर चुकी थी। १८७६-७७ में भयावह अकाल पड आदमी-जानवर भूखें मरने लगे। तब दिल्ली में लिटनसाहब लाखोंरूपये हिन्दुस्तान की सम्राज्ञी' होने के जश्नमें उड़ा रहा था। इससे जनता आक्रोश व्यक्त कर रही थी। लिटन ने देशी समाचार पत्रों की जुबान बंद करने का कानून बना दिया था। १८८० के समय में तिलक-आगरकर ने महाराष्ट्र में उग्रवादी राजनीति विचारों को अपने केसरी पत्र में छपवाना शुरू कर दिया था। तिलक अंतिम समय तक राजनीतिक प्रश्नों को ही लेकर चले। उन्होंने अपनी लेखनी द्वारा भारतीयों को अंग्रेजी शोषण और अन्याय नीति से सचेत कर दिया था।

संपूर्ण हिन्दुस्तान की तरह कोल्हापुर रियासत भी अंग्रेजों की छत्रछाया में थी। छत्रपति शाहू से पूर्व अंग्रेजों द्वारा नियुक्त दीवान द्वारा ही कोल्हापुर का कारोबार चलता रहा। ये दिवान जालिम और धर्मांध थे। उन्होंने राजगद्दी पर स्थित छत्रपतियों का छल-कपट किया था। आखिर कोल्हापुर रियासत की राजगद्दी पर 'शाहू छत्रपति महाराज' १८८४ को विराजित हुए। १८९४ में उन्हें इस रियासत के संपूर्ण हक प्राप्त हुए। उन्होंने अंग्रेजों की राजभक्ति स्वीकार कर महाराष्ट्र उन्नति का मार्ग अपनाया। अपने राजकार्यमें उन्होंने बहुजन समाज को ५० प्रतिशत आरक्षण लागू किया। राजनीतिक दृष्टि से छत्रपति का योगदान महत्वपूर्ण है। वे सच्चे अर्थो में दिन-दलितों के राजा थे। इस संदर्भ में यशवंत दिनकर फडके लिखते हैं, ''डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने मार्मिक अभिव्यक्ति की थी, शाहू छत्रपति सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से गरम लेकिन राजकीय दृष्टि से नरम अथवा शांत विचार प्रवाह के संवाहक थे ऐसे कहा तो वह गलत नहीं हो सकता।''[७]

२.३.२ सामाजिक परिस्थिति :

शाहू कालीन मराठी भाषिक प्रदेश अंग्रेजों के कब्जे में था। इस प्रदेश में विभिन्न जाति तथा धर्म के लोग अधिक थे। ब्राम्हणों का प्रमाण अत्यल्प था। एक अठराह प्रकारकी जातियां महाराष्ट्र के गांव-शहर में थी। ग्रामीण क्षेत्र में कृषि प्रमुखतः कुणबी और मराठा समाज का प्रमुख व्यवसाय था। ग्रामीण समाज में बारह बलुतेदारी पध्दत थी। इस समाज की जीविका भी कृषि पर ही निर्भर थी। ग्राम में प्रशासक के रूप में पाटील और कुलकर्णी कार्यरत थे। गांव में ग्रामपंचायत थी जो गांव समाज की न्याय प्रकिया को संभालती। पाटील गांव का प्रतिष्ठित व्यक्ति था। सामाजिक मेल-मिलाप का काम वह संभालता था। देशमुख या दीवान किसानों से लगान वसुली का कार्य करते थे। किसानों से अधिक लगान वसुली किया जाता था। नतीजा किसान सदा ऋण से दबे रहते थे। निजी साहूकार भी उन्हें ब्याज से पैसे देकर अधिक सुद लेते थे। तत्कालीन समय में गांवों का कृषक समाज अल्पभूधारक तथा भूमिहीन एवं गरीबी में जीवन बीता रहा था।

सामाजिक संरचना की दृष्टि से महाराष्ट्र प्रदेश में सम्मिलित परिवार व्यवस्था रूढ़ थी। समाज में विभिन्न जाति-धर्म के लोग रहते थे, उनमेंछुआछूत, वर्णभेद बरकरार था। यह सामाजिक संरचना हिंदू धर्म के अनुसार जातिय विभेद पर अवलंबित थी। हिंदू समाज इसे ईश्वर निर्मित कल्पना मानता था। समाज में अंधश्रध्दा, अनिष्ट रूढि-प्रथाओं, हिंदू-मुस्लिम विवाद, जातिभेद आदि प्रवृत्तियां मौजूद थी। बाल-विवाह, सतीप्रथा, पर्दा प्रथा, विधवा विवाह निषेध, लिंगभेद, बहुपत्नी प्रथा जैसी विकृत प्रथाओं ने स्त्री को जकड़ रखा था। स्त्री केवल उपभोग की वस्तु मानी जाती थी। समाज में पुरूषप्रधान संस्कृति प्रचलित थी। पुरूषों ने वेश्यागमन, बहुविवाह करें या रखैल रखने पर भी समाज में उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा कम नहीं होती थी। डॉ. रमेश जाधव लिखते हैं कि, ''दुर्बल जाति आर्थिक-सामाजिक और राजकीय दृष्टि से जब तक शक्तिशाली नहीं बनती, तब तक जातीय संस्था जड से खत्म नहीं हो सकती, यह शाहू छत्रपति जातीय संस्था खत्म करने के संघर्ष का सूत्र था।''[८]

समाज में शिक्षा उच्चवर्ग तक ही सीमित थी। दलित, शोषित, वंचित और खासकर स्त्री शिक्षा के रास्ते बंद थे। महात्मा फुले जैसे समाज सुधारक ने स्त्री शिक्षा की नींव रखीं। उन्होंने पुना में १८४१ में लड़कियों के लिए पाठशाला शुरू की। उनकी पत्नी सावित्रीबाई ने स्त्री समाज शिक्षा सुधार का बीड़ा उठाया। इसके लिए उन्हें समाज के कंटकों की गालियां तथा किचड-गोबर को भी सहना पडा। फुले पति-पत्नी ने सामाजिक समता प्रस्थापित करने का कार्य किया। स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह, बाल विवाह, केशवपन जैसे सामाजिक प्रश्नों को उन्होंने सुलझाया। फुले ने न्याय और समता वाली समाज रचना निर्माण करने का प्रयत्न किया। 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। समाज के उच्च वर्ग ने प्रमुखतः ब्राम्हण वर्ग ने शूद्रातिशूद्र वर्ग पर जो गुलामी लादी थी तथा जिन बुरी एवं अन्यायकारी रूढि-परंपरा का प्रचलन किया उनका पर्दाफाश करने का काम फुले ने किया।

तत्कालीन महाराष्ट्र प्रान्त भारत के अन्य प्रान्तों से अधिक वर्णभेद, वर्णद्वेष, जातिभेद, धर्मद्वेष के रूप में जकड़ा हुआ था। समाज में निम्न वर्गीय दलित, अस्पृश्य समाज को उच्चवर्ग के पंक्ति में बैठना, उनके साथ खाना-पिना मना था। अछूतों को मंदिरोंमें प्रवेश नहीं था। हिंदू समाज कर्मकांड एवं अंधश्रध्दा का पूजक था। अंग्रेज आर्थिक शोषण ने समाज में वर्णीय संरचना को और भी मजबूत किया। सामंत सभ्यता नष्ट हो जमींदार, महाजन वर्ग की निर्मिती हुई। यह अभिजात वर्ग किसान और निम्न समाज घटकों का अधिक शोषण कर रहा था। इसलिए सामान्य समाज वर्ग और शोषक वर्गमें अनबन पैदा होने लगी। वर्गसंघर्ष शुरू हुआ। कर्णधार अंग्रेज और उनके सारथी चिबईयों ने लगान वसुली के समय समाज के दीन-दलित व्यक्तियों पर अन्याय-अत्याचार किया। इस वक्त एक ओर अंग्रेजों और उनके दलालों का शोषण तो दूसरी ओर सामाजिक असमानता, कुप्रथाओं एवं परंपरा से महाराष्ट्र की सामाजिक स्थिति सोचनीय बन चुकी थी। सामाजिक अधःपतन हो रहा था। इस समय महाराष्ट्र का सामाजिक वातावरण मटमैला भले ही हुआ था पर मराठी समाज होले-होले आधुनिकता से सचेत हो गया था।

अंग्रेजों की शिक्षा-दीक्षा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, उनकी लोकतांत्रिक प्रणाली, उनकी समाज व्यवस्था, प्रशासन, लष्कर आदि से देशी समाज प्रभावित हो रहा था। इस वक्त संपूर्ण भारत के साथ महाराष्ट्र में भी अनेक पाठशालाएँ खुल गयी थी। मुंबई, पुना में अंग्रेजी पाठशालाएँ शुरू हुई थी। मुंबई, पुना जैसे महानगरोंमें कॉलेज स्थापन हुए। मुद्रण कला और समाचार पत्र आरंभ हुए। पाश्चात्य शिक्षा से महाराष्ट्र का समाज शिक्षित होने लगा। इससे अंग्रेजों के साथ-साथ अपने निजी शोषकों के शोषण का अहसास भी लोगों को हुआ। समाज में स्वाधीनता और समाजसुधार की भावना पनपने लगी। अंग्रेजों द्वारा भारत में किए विकास कामों से हिंदी समाज में सामाजिक-सांस्कृतिक अभिसरण शुरू हुआ। आत्मशोध की प्रकिया तेज हुई। समाज प्रबोधन की संवेदनात्मक लहर गुंज उठी। अनेक सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों का प्रारंभ हुआ। ब्राम्हों समाज, आर्यसमाज, थियॉसॉफिकल सोसायटी के तर्ज पर महाराष्ट्र में प्रार्थना समाज और सत्यशोधक समाज जैसे समाजसुधार संघटक आंदोलन शुरू हुए। इनका लक्ष्य समाज में समरसता निर्माण कर उनकी आस्मिता को जगाना। नवसमाज निर्माण करना।

शुरूआती समय में पुणे, मुंबई पाश्चात्य शिक्षा के कारण सामाजिक जागरण के केंद्र बने। मेकाले का शिक्षा का 'रिसाई' सिध्दांत केवल उच्चवर्ग तक ही सीमित रहा। इसमें ब्राम्हण, पारसी, प्रभू तथा उनके पीछे-पीछे मराठा सरदारों के घराने के लोगों को भी इसका लाभ मिला किन्तु बहुसंख्य खेतिहर मराठा-कुणबी समाज तथा बहुजन वर्ग इससे वंचित रहा।शिक्षा से संपूर्णतः वंचित रयत तथा शूद्रातिशूद्रों का समाज अंधश्रध्दा, अज्ञात एवं दरिद्रता से परेशान था। बहुजन समाज चुपचाप पडे-पुरोहित, साहूकार, सरकार का शोषण सह रहा था। मूक था और आवाज भी नहीं उठा सकता था। ऐसे शिक्षा, संपत्ति और सत्ता से वंचित बहुजन समाज की त्रासदी के उध्दारक के रूप में महात्मा फुले खड़े हुए। उन्हें सामाजिक न्याय और हक दे गुलामी से उबरने का प्रयास किया। मानवतावाद का प्रचार-प्रसार किया।

तत्कालीन समय में महाराष्ट्र में समाज सुधार के लक्ष्य से सराबोर प्रगतिशील समाज सुधारकों की पीढ़ी सामने आयी। उन्होंने समाचार पत्र, किताबों को समाज प्रबोधन का जरिया बनाया। इसमें ब्राम्हण-ब्राम्हणेत्तर समाज सुधारकों का भी योगदान है। हिंदू धर्म एवं समाज में स्थित अनिष्ट प्रथा-परंपरा, अंधश्रध्दा, पाखंड को नकारते और विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा, प्रौढ विवाह जैसे सुधारणाओं को स्वीकारने का समाजकार्य उन्होंने किया। जिसमें म. फुले, बाळशास्त्री जांभेकर, भाऊ महाजन, विष्णुशास्त्री पंडित, दादोबा पांडुरंग, डा. आत्माराम पांडुरंग, रामकृष्ण भांडारकर, न्या. रानडे, आगरकर आवदियों ने लोगों के ताने-बाने सुन समाज सुधार के महत प्रयास किए। तत्कालीन महाराष्ट्र के समाज प्रबोधन आंदोलन ने समाज प्रगतिको अलग दिशा दी। शाहू ने सामाजिक समता, न्याय प्रस्थापित करने का प्रयास किया। स्पृश-अस्पृश्य की खाई को मिटाया। अंतरजातीय विवाह का समर्थन किया। इस प्रकार शाहूकालीन सामाजिक परिस्थिति का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जा सकता है।

२.३.३ धार्मिक परिस्थिति :

धर्म का मूल आस्था और अध्यात्म में है। भारत में विभिन्न समय में आये मुस्लिम धर्मीय आक्रमणकारी तथा व्यापार के बहाने आए अंग्रेज मिशनरी दोनों के धर्म को यहॉ जगह मिली।शाहूकालीन महाराष्ट्र में भी ख्रिश्चन और मुस्लिम धर्म पनप चुका था। बाहरी धर्म के साथ-साथ धार्मिक व्यवस्था की चतुर्वर्ण पध्दति यहां पर प्रचलित थी। हिंदू धर्म के साथ बौध्द, जैन धर्म भी महाराष्ट्र के विभिन्न गांव-शहरोंमें कार्यरत था। ब्राम्हणों का ही एकाधिकार था और शासन पर भी। ब्राम्हणों के अलावा क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों ने शिक्षा ग्रहण करना पाप माना जाता था। बहुसंख्य मराठा, दलित बल्कि बहुजन समाज इस कारण अज्ञात, अंधश्रध्दा, दरिद्रता से त्रस्त था। धर्म और विद्या की एकाधिकारशाही से भट-पुरोहितों द्वारा जप-तप, पूजा-अर्चा, अंत्यविधि, श्राध्द, व्रत-उपवास, मोक्ष-पुनर्जन्म, होम-हवन, शादी-ब्याह, अनुष्ठान के जरिए जनता की लूट जारी थी। धर्म और ज्योतिष के नाम पर सांस्कृतिक उत्सवोंमें भी धन-अन्न से झोलिया गर्म की जाती थी।

ब्राम्हणों ने झूठा धर्म, धर्मशाला, कायदे-कानून अपना स्थायित्व निर्माण करने के लिए किया। समाज में मनुष्य को उंच-नीच जातियोंमें बांधकर जातिभेद निर्माण किया। स्वयं भूदेवता बन बहुजन समाज को गुलाम बनाया। उन्होंने कर्मकांड के अनेक पाखंड इस समय फैला रखे थे। धनंजय कीर लिखते हैं, ''शाहू ने जब ख्रिश्चन लडकों को स्कूल में प्रवेश दे दो ऐसे आदेश दिया ब्राह्मणों ने उनके विरोध में अपप्रचार किया था। गाय के मांस की बाजार में बिक्री रोक दो ऐसा आवेदन ब्राह्मणों ने किया, तब उन्होंने ब्राह्मणों को कहा कि अपने राज्य में ख्रिश्चन, महार, मुसलमान होने के कारण हम गाय के मांस को बंद नहीं कर सकते उनको सभी धर्मों के लोग समान लगते थे।''[९]शाहू महाराज को भी वेदोक्त मंत्रोच्चार पाखंड का शिकार बनाया गया था। ब्राम्हण अपने आपको सर्वेसर्वा मानने लगे थे। ब्राम्हणों ने स्त्री को भी शूद्र वर्गमें धकेल दिया था। हिंदू धर्म अनेक गलत रूढि-परंपरा में जकड़ा हुआ था। इसका समर्थन करनेवाला एक ब्राम्हण वर्ग १८७४ में महाराष्ट्र में उदित हुआ। अपने धर्म को श्रेष्ठ और दूसरे के धर्म को नीच समझने तथा धर्मांधता के कारण विभिन्न जाति-धर्मोंमें संघर्ष होने लगा। मुंबईमें १८९३ ई. में पहले हिंदू-मुस्लिम दंगे-फसाद हुए। छत्रपति शाहू हिंदू-मुस्लिम एकता का समर्थन करते रहे तो लोकमान्य तिलक ने हिंदुओं का पक्ष लिया। उन्होंने गणेशोत्सव, शिवजयंती के रूप में धार्मिक उत्सव का आरंभ किया।

अंग्रेजों के आगमन से ही भारत के विभिन्न क्षेत्रोंमें उनका इसाई धर्म प्रचार-प्रसार का कार्य शुरू था। उन्होंने भारतीयों की अंधभक्ति और अज्ञान का फायदा उठाकर अपने धर्म को श्रेष्ठ मान यहां उसका बीजारोपण किया। भारतीय धर्म खत्म न हो इसलिए सर्वप्रथम उत्तर भारत में धर्म एवं समाज सुधार आंदोलन खड़ा हुआ। उसका प्रभाव महाराष्ट्र के सुधारकों पर भी पड़ा। महाराष्ट्र में समाज प्रबोधन के साथ धर्म प्रबोधन का उत्तान कार्य आरंभ हुआ। महात्मा फुले ने सत्यधर्म की बात उठायी। सार्वजनिक सत्यधर्म' किताब से सच्चे और झूठे धर्म की आलोचना कर मानवताधर्म का पक्ष लिया। छत्रपति शाहू ने अपने राज में जातिभेद रहित मानवता धर्म के जरिये धर्मद्वेष को कम करने का

प्रयास किया। उस समय वे केवल मराठों के राजा नहींथे तो सब जाति-धर्मों के लोगों के राजा थे। उन्होंने अनेक प्रतिबंध कायदे के साथ देवदासी प्रथा का कानून बनाकर उसे समाप्त किया।

महाराष्ट्र में धार्मिक वातावरण ब्राम्हणों ने दूषित कर दिया था। धर्म संप्रदाय के रूप में बंटने लगा था। धर्म के नाम पर भोली जनता को ठगा जा रहा था। धार्मिक स्थलों पर भी लूटपात जारी थी। धर्म, कर्मकांड, पाखंड, अंधश्रध्दा के रूप में प्रचलित हो रहा था। ब्राम्हण, मठ-मठाधीश आरामदायी जीवन जी रहे थे। अंधभक्ति के नाम पर आमजनों का आर्थिक शोषण किया जा रहा था। महाराष्ट्र में धर्म विकृत हो चुका था। फुले-शाहू-आंबेडकर जैसे समाज सुधारक धार्मिक एकता, समानता, न्याय की प्रस्थापना कर रहे थे। इस समय धर्म बिगाड़ने के प्रयास हो रहे थे तो दूसरी ओर धर्म संघार के भी प्रयत्न जारी थे।

२.३.४ आर्थिक परिस्थिति :

१८५७ के बाद अंग्रेजी सत्ता की जड़े यहां मजबूती से जम गयी। इस संग्राम में भारतीय छोटे-मोटे रियासतों और लोगों की आर्थिक शक्ति खर्च हुई। नयी आर्थिक संरचना का श्रीगणेश हुआ। तत्कालीन महाराष्ट्र की आर्थिक परिस्थिति भी देश के अन्य भूभागों से अलग नहीं थी। महाराष्ट्र पर भी अंग्रेजों का राज कायम हुआ था। नया आर्थिक ढॉचा खड़ा होकर पुराना आर्थिक ढाँचा टूट गया था। समृध्द गांव की बची-खुची अर्थव्यवस्था अंग्रेजी उद्योग धंधों की वजह से खत्म हुई। देशी लघु उद्योगों का ऱ्हास हुआ। अंग्रेजों की अर्थनीति 'धनलूट तंत्र' पर आधारित थी। 'आधुनिक व्यापारी साम्राज्यवाद' के वे सम्राट थे। १८७१ में दादाभाई नौरोजी ने भारत से इंग्लंड जानेवाले धन पर प्रक्षेप डाला था। अंग्रेज कच्ची सामग्री खरीदते और पक्की सामग्री बनाकर बेचते। उनका यह धंधा खूब फला-फूला। इससे महाराष्ट्र निर्धन हो गया।

१८८५ में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना हुई। अंग्रेजों का अधिराज्य था। आमजन आजादी की भूख से अधिक पेट की भूख से पीडित थे। दरिद्रता चरम सीमा पर

थी। अंग्रेजों ने अपनी कुटिल नीतियोंद्वारा आर्थिक संरचना को बरबाद कर दिया। गांव का आर्थिक ढाँचा टूट गया, गांव बिखरने लगे। शहरीकरण तेजी से बढ़ने लगा। किसानों पर मालगुजारी, लगान डाला गया। नई प्रशासन यंत्रणा-कानून बने। जमींदारी व्यवस्था शुरू हुई। कच्चा माल की जरूरत हेतु अंग्रेजों ने व्यावसायिक खेती को बढ़ावा दिया। महाराष्ट्र में कपास की खेती जोरों पर होने लगी। मुंबईमें कपडा मील शुरू हुई। अंग्रेजों के औद्योगिक और आर्थिक विकास का हेतु स्पष्ट था। उन्होंने अपनी सुविधा और धन प्राप्ति हेतु कपडा मील, कारखाने, रेल, तार डाक, टेलिफोन का विकास किया। आर्थिक सुशासन व्यवस्था और राजनीतिक सुशासन व्यवस्था वे निर्माण करना चाहते थे। वह उनकी सुनियोजित आर्थिक शोषणतंत्र की कड़ी थी। शहरों का विकास और औद्योगिकीकरण से कामगार वर्ग का उदय हुआ।

अंग्रेजों की आर्थिक नीति महाराष्ट्र के कृषकों के लिए घातक साबित हुई। अंग्रेजों के दलालों ने लगान वसूली करते समय ज्यादती की। उससे किसान ऋणग्रस्त हो गरीबी, भूख, महँगाई से त्रस्त हुए। १८७१ में महाराष्ट्र के अकाल पीडित किसानों ने दंगे-फसाद किए। फिर भी उनकी आर्थिक गुलामी और परिस्थिति सुधरी नहीं। अंग्रेजों की महाराष्ट्र की प्रजा के लिए कुछ न करने की नीति थी। उनकी मुख्य अर्थनीति थी प्रजा का शोषण। महाराष्ट्र के किसान और कृषि पिछड़ी हुई थी। जमीन टूकडों में बंटी हुई थी। क्षत्रिय खेती करना अपमान समझते थे। ऐसे वक्त छत्रपति ने राज्यधिकार प्राप्ति के बाद कृषि सुधार का महत्वपूर्ण कार्य किया। तत्कालीन अधिकतम खेती बीना पानी की थी इसलिए छत्रपति शाहूने राधानगरी बांध की निर्मिती की। इससे कोल्हापुर में'हरितक्रांति' हुई। खेती के लिए पुराने औजार थे। कृषि अनुसंधान और प्रदर्शनियाँ नहीं होती थी। पुरानी फसले ही बोई जाती। इसमें उन्होंने नवीनता लायी।

उस वक्त उद्योग-धंधे शुरू करना, व्यापार, व्यवसाय को बढ़ावा देना सरकार का कर्तव्य था। पर अंग्रेजों की नीति यही थी। पर शाहू ने राजा की दृष्टि से इसमें प्रगति की। सहकारी संस्था नहीं थी उनका निर्माण किया। रस्ते, रेल, व्यापार को बढ़ावा दिया।

अकाल नियोजन का काम किया। अंग्रेजों ने महाराष्ट्र की अर्थ व्यवस्था को जर्जर कर दिया था छत्रपति शाहू महाराज ने उसको मजबूत बना दिया था।

२.३.५ सांस्कृतिक परिस्थिति :

महाराष्ट्र का संस्कृति का काल उथल-पुथल का रहा है। जब-जब देश मेंमुस्लिम आक्रमण हुए तब उन्होंने अपनी धर्म-संस्कृति का रोपण करने का प्रयास किया। औरंगजेब ने महाराष्ट्र के मंदिर शिल्पकला का ऱ्हास किया। यह समय हिंदू-मुस्लिम संस्कृति के टकराहट का समय था। बाद में इसमें समन्वय हुआ। उसी प्रकार अंग्रेजों की संस्कृति भी यहां पनपती गयी। अंग्रेजों का शासनकाल का वातावरण दो संस्कृतियों के अनबन का समय था। अंग्रेज सत्ता के व्यवहार से महाराष्ट्र के सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य में अनेक बदलाव हुए। वे व्यापार के साथ धर्म-संस्कृति को रोपणा चाहते थे। इससे पहले भारत की महान संस्कृति मेंमुस्लिम संस्कृति को पचा लिया था। अंग्रेज इससे परिचित थे। इसलिए उन्होंने अपने धर्म संस्कृति को फैलाने की दृष्टि से नीतियाँ बनायी। मेकाले ने पाश्चात्य संस्कृति के बीजारोपण हेतु अंग्रेजी शिक्षा का आरंभ किया। इस वक्त दो विचार और संस्कृति में भिड़ंत हुई। मिशनरियों ने पुणे, मुंबई जैसे महानगरोंमें अंग्रेजी पाठशालाएँ शुरू की। उनका उद्देश्य धर्म-संस्कृति का प्रचार-प्रसार करना था। पाश्चात्य संस्कृति की अंग्रेजी विद्या १९ वी शती में यह सवाल खडा हुआ।

इस वक्त इसाई धर्मांतरण केद्वारा पश्चिमी संस्कृति को भारतीयोंमें फैलाने का कार्य जोरों पर रहा। उन्होंने कुटिलता से देशी संस्कृति को हेय माना। वे वैज्ञानिक दृष्टिकोणवाले थे। भारतीय समाज अज्ञान के कारण अंधश्रध्दा, पुरानी रूढि-परंपरा, रहन-सहन, खान-पान, बोली-भाषा तथा कर्मकांड से ग्रासित था। उन्होंने भारतीयों को मूर्ख समझा। उन्होंने भारतीयों की मूर्खता, जड़तावादिता और पिछड़ापन देख अपनी संस्कृति उनपर थोंप दी। पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने से भारतीय समाज आत्मचिंतन करने लगा। अंग्रेजी और भारतीय संस्कृति का तुलनात्मक परीक्षण होने लगा। महाराष्ट्र के सुधारकों ने संस्कृति सुधार के प्रयास किए। लोकमान्य तिलक ने गणेशोत्सव और शिवजयंती उत्सव

शुरू किए। छत्रपति शाहू ने संगीत, नाट्य, शिल्पकला, मल्लविद्या को प्रोत्साहन दिया। धनंजय कीर लिखते हैं, ''शाहू यह लोककल्याणकारी व व्यवहार कुशल शासनकर्ता होने के कारण वे अपने पारिवारिक कार्य या राजेशाही दिखावे में अधिकांश खर्च नहीं करते थे। लेकिन जिन्हें अवश्यकता है उन्हें पैसों की सहायता वे अवश्य करते थे। कला, रंगभूमि, संगीत, शिल्प, लोकगीत, पोवाडा, और मल्लविद्या आदि को प्रोत्साहन देने के लिए जितना पैसा शाहू छत्रपति ने खर्चकिया उतना भारत में और किसी समकालीन राजा ने या किसी अमीर ने नहीं किया है। इसकारण कोल्हापूर यह भारत का सबसे प्रसिद्ध सांस्कृतिक केंद्र बना और शाहू छत्रपति का नाम इन सभी क्षेत्रों में भारतभर फैल गया।''[१०] इस प्रकार शाहू कालीन सांस्कृतिक परिस्थिति को उजागर किया जा सकता है।

२.४ डॉ. बाबासाहब आंबेडकर कालीन परिस्थितियाँ :

२.४.१राजनीतिक परिस्थिति :

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर पूर्व की राजनीतिक स्थिति पूरी तरह से वर्णवादी व्यवस्था से प्रभावित थी। जहाँ उच्चवर्णियों का बोलबाला था। राजसत्ता पर सिर्फ क्षत्रिय ही अपना अधिकार मानते थे। शूद्र तथा अतिशूद्र जातियाँ तो यहाँ गुलामी की जिंदगियाँ जी रही थी। यहाँ तक कि छत्रपति शिवाजी महाराज को भी अपने-आपको महाराजा साबित करने के लिए शिवराज्याभिषेक काशी के गागा भट्ट द्वारा करवाना पड़ा। इतनी दयनीय तथा शोचनीय स्थिति थी। बाद में धीरे-धीरे अंग्रेजों ने व्यापार के माध्यम से भारतीय राजसत्ता पर कब्जा कर लिया। परिणामत: भारतीयों का आर्थिक शोषण बढ़ता चला गया। अपनी राजसत्ता को अधिकाधिक मजबूत करने के लिए अंग्रेजों ने नोकर-वर्ग में बढ़ोत्तरी की। इसलिए कहना होगा कि, ''ब्रिटिशों की राजसत्ता शुरु हुई थी और परिणामत: अस्पृश्यता की गहरी अमावस लुप्त हो रही थी। अस्पृश्य वर्ग की स्थिति में शैक्षिक दृष्टि से धीरे-धीरे फर्क पड़ रहा था। पहले-पहल नये राजकर्ताओं का रुख थोडा सावधानी का ही था। पेशवाई में ब्राह्मणों के हाथ में राज्यकारोबार की बागडोर थी। उन्होंने इस तरह की सावधानी बरत ली थी कि उन्हें असंतुष्ट नहीं रखा जाए, उन्हें पश्चिमी पद्धति की शिक्षा

देकर राज्यकारोबार में लगायें रखना ताकि उनकी तरफ से कोई विरोध होगा, ऐसी बात बहुधा नहीं करना।''[११] अंग्रेजों की इन नीतियों से हम देख सकते हैं कि अब शिक्षा के दरवाजे कुछ हद तक क्यों ना हो लेकिन खुल रहे थे। आहिस्ता-आहिस्ता शिक्षा का प्रचार-प्रसार अस्पृश्य तथा शूद्रों तक पहुँच रहा था। जिस कारण राजनीतिक सत्ता में परिवर्तन होता दिख रहा था।

अंग्रजों ने अछूतों, दलितों को सेना में प्रवेश देना शुरु किया था। इतना ही नहीं उन्होंने छावनियों में स्कूलों की सुविधाएँ भी उपलब्ध करा दी। इन स्कूलों में सैनिकों के लड़के-लड़कियों को अनिवार्य रूप से प्रवेश दिया जाने लगा। परिणामत: इस तबके के लड़के-लड़कियों को पहली बार आधुनिक शिक्षा मिलने लगी। शिक्षा की इस सुविधा के परिणाम स्वरूप इस तबके में स्वतंत्र चिंतन-शक्ति का विकास होने लगा। अपनी स्थिति को लेकर वे सोचने लगे। इस कारण हम कह सकते हैं कि, ''राजसत्ता जब तक इस प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं कराती, तब तक ये सारा सुधार कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रह जाता है। अंग्रेजों की बदलती नीति के परिणाम स्वरूप शिक्षा की सुविधाएँ देश के अनेक शहरों में उपलब्ध होने लगी।''[१२] सन १८५७ के बाद समाज के सभी तबकों में बहुत धीमें परिणाम में क्यों न हो शिक्षा का प्रचार-प्रसार होने लगा। आर्य समाज, सत्यशोधक समाज, ब्रह्म समाज अपने तरीके से समाज-सुधार की कोशिश कर रहे थे। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण व्यक्ति अपने परिवेश के प्रति अधिक सजग हो गया था। अपने व्यापार को फैलाने के लिए अंग्रेजों ने देशभर में रेल का जाल बिछाना शुरु किया। इससे लोगों के बीच संपर्क बढ़ने लगा। देहातों की स्वयंपूर्ण उदासीनता रेल के कारण टूटने लगी। वास्तव में अंग्रेज यह सब अपने स्वार्थ के लिए कर रहे थे।

राजनीतिक सुधार पहले या सामाजिक सुधार पहले इस बात को लेकर हमारे भारतीय नेता लोग सोचने में परेशान थे। ''समाजसुधार कार्य के प्रति राजनीतिक सुधारवादियों का जो विरोध था, वह इसलिए नहीं था कि उन्हें राजनीतिक सुधारों के साथ

समाज सुधार कार्यान्वित करना असंभव था। यह भी नहीं माना जा सकता कि राजनीति और समाज सुधार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, यह उनके ध्यान में नहीं आया होगा। तथापि, उन्हें इस बात का डर लगता था कि समता के विशाल और उदात्त विचारों की नींव पर अधिष्ठित होनेवाले नवसमाज में अपनी पारंपरिक, जन्मत: प्रतिष्ठा और विशेषाधिकार ही खतरे में आ जायेंगे।''[१३]इस तरह की राजनीतिक स्थितियाँ हमें देखने को मिलती है। इन स्थितियों में आगे चलकर म. फुले के विचारों से कोल्हापुर के महाराजा राजर्षि शाहू महाराज अत्याधिक प्रभावित थे। वर्ण और जाति व्यवस्था के विरोध में आक्रमक भूमिका धारण करनेवाला इस देश का यह पहला शासक था। परिवर्तनवादी आंदालनों को राजाश्रय देनेवाला यह पहला विवेक-संपन्न राजा था। इस प्रकार दिन-ब-दिन राजनीतिक स्थितियाँ बदल रही थी।

२.४.२ सामाजिक परिस्थिति :

डॉ. आंबेडकर पूर्व की सामाजिक परिस्थिति अत्यंत दयनीय तथा बिकट थी। भारतीय समाज में चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का दौर था। श्रमविभाग के तत्व के अनुसार हरेक अपनी रुचि-अरूचि के अनुसार व्यापार करता था। जो अध्ययन और अध्यापन करते थे, उन्हें ब्राह्मण नाम से संबोधित किया जाता था। जो राज्य का कारोबार चलाते थे। उन्हें क्षत्रिय कहा जाता था। जो व्यापार करते थे, उन्हें वैश्य कहते थे। तथा जो इन तीनों वर्णों के लोगों की सेवा करते थे, उन्हें शूद्र माना जाता था। श्रम के आधार पर निर्मित इस सामाजिक जातिव्यवस्था को चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था कहा जाता था। इस कारण, ''गुणवाचक वर्ण संज्ञा आगे जातिवाचक मानी गयी। इसलिए ब्राह्मण में आवश्यक गुणों को पूरी तरह से अभाव होने पर, तथा वह मूर्ख और भ्रष्ट होने पर भी तीनों लोकों में श्रेष्ठ माना जाता था। क्षत्रिय कुल में पैदा हुआ व्यक्ति क्षात्रगुणविरहित होने पर भी शस्त्रधर या शासक हो जाता था। साथ ही शूद्रकुलोत्पन्न व्यक्ति ज्ञान-संपन्न होने पर भी शूद्र और हीन ही माना जाता था।''[१४] इस प्रकार हम देखते हैं कि अंत में चार वर्णों की चार जातियाँ बन गयी। आगे चलकर प्रांतभेद, पंथभेद और वंशभेद की संख्या अनगिनत हो गयी। विभिन्न

रीतिरिवाज, विभिन्न आहार तथा संकर के कारण इन अनेक जातियों से सैकड़ों जातियाँ, निर्मित हुई।

इन सब अनिष्ठ रुढ़ियों का निर्मूलन करने का प्रयास भारत के अनेक समाजसुधारकोंने किया। गौतम बुद्ध ने जाति-व्यवस्था को धक्का देकर अस्पृश्यों को अपने धर्म की दीक्षा दी। उन्हें अपने भिखु संघ में शामिल कर लिया। तत्पश्चात ११वीं शती में रामानुजाचार्य ने स्वयं स्थापित किये मठ और मंदिर अस्पृश्यों के लिए खुले कर दिये। उनका एक मुख्य शिष्य तो अस्पृश्य जाति का ही था। इसी परंपरा में बसवेश्वर ने अस्पृश्यता नष्ट करने का कार्य जोरों से किया। इसलिए कहना होगा कि संतों की केवल आर्द्रता और सहृदयता से हिंदू धर्म पर लगा हुआ अस्पृश्यता का दाग दूर नहीं हुआ। अपितु हमें कहना होगा कि, ''अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए प्रत्यक्ष कार्य महात्मा जोतीराव फुले ने किया। अस्पृश्यता का उन्मूलन करके आधुनिक भारत में सामाजिक समता निर्माण करने का महान संदेश महात्मा जोतीराव ने दिया। उन्होंने दुर्जनों और पुराणमतवादियों की निंदा तथा छल-छद्म का अलौकिक धीरज के साथ डटकर मुकाबला किया।''[१५] म. फुले ने अस्पृश्य समाज की मुक्ति के लिए अभूतपूर्व विद्रोह किया। जिसे उन्होंने 'किसान का कोडा', 'गुलामगिरी', 'ब्राह्मणाचे कसब' आदि तथा अन्य ग्रंथों के माध्यम से अभिव्यक्त किया। इतना ही नहीं उन्होंने अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को सुशिक्षित कर अस्पृश्य भारत में सामाजिक क्रांति का बीज बोया।उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि अंग्रेजों के आगमन के पश्चात ही यहाँ सामाजिक ढाँचे को लेकर गंभीरता से सोचा जाने लगा। उसके पहले की स्थिति जडवत् थी। ''संतों की सामाजिक दृष्टि का हम बार-बार उल्लेख करते हैं उनके प्रति अभिमान भी व्यक्त करते हैं, उन्होंने अपने तरीके से वर्ण और जाति-व्यवस्था के विरोध में आवाज बुलंद भी की है। परंतु चातुर्वर्ण्य व्यवस्था से निर्मित सामाजिक चौकट के विरोध में संतों ने कोई व्रिदोह नहीं किया है। स्त्रियों के प्रति अनुदारता और उनकी गुलामी हजारों वर्षों से यहाँ कम-अधिक मात्रा में थी ही।''[१६]सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि आंबेडकर पूर्व परिस्थिति जो कि सामाजिक

तौर पर बहुत ही दयनीय थी, जिसे महात्मा फुले ने सैद्धांतिक पृष्ठभूमि तैयार कर डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के लिए अगला रास्ता तैयार किया।

२.४.३ धार्मिक परिस्थिति :

भारत में वर्ण और जाति-व्यवस्था कब से प्रचलित रही है, इसे लेकर विद्वानों में अनेक मतभेद रहे हैं। अत: यह मतभेद केवल काल के संदर्भ में है। म. बुद्ध ने वर्ण यज्ञ-व्यवस्था का कड़ा विरोध कर मनुष्य मात्र को केंद्र में रखकर अपना दर्शन प्रस्तुत किया था। इस बात से स्पष्ट होता है कि वर्ण तथा जाति की क्रूरता से यहाँ का पददलित मानव करीब तीन हजार वर्षों से कुचला जा रहा था। इसलिए ''बुद्ध ने वर्णव्यवस्था को चुनौती देकर, एक नयी 'समतावादी व्यवस्था' स्थापित करने की कोशिश की है। परंतु यह स्थिति सौं से अधिक वर्षों तक टिक नहीं पायी। वर्ण व्यवस्था में जिनके हित सुरक्षित थे, वे बौद्ध धर्म को स्वीकार कैसे करते? बौद्ध धर्म इतना तर्कशुद्ध और मानवीय था कि उसका विरोध भी संभव नहीं था।''[१७] इसलिए बौद्ध धर्म के श्रेष्ठ मूल्यों को स्वीकार कर उसे अपने अनुकूल ढालने का प्रयत्न यहाँ हुआ। जब यह सहन नहीं हुआ तो हिंदू धर्म को ही बौद्ध धर्म के अनुकूल बनाने का प्रयत्न हुआ। इसी कारणवश शंकराचार्य जी को 'प्रच्छन्न बुद्ध' कहा जाता है।

अंग्रेजों के शासनकाल में भी निम्न जाति तथा धर्म को विशेषाधिकार नहीं थे। शिक्षा का अधिकार ब्राह्मण केवल अपना ही मानते थे। इस कारण ब्राह्मणेत्तरों और विशेषत: अस्पृश्यों की शिक्षा की समस्या जटिल हो गयी थी। ब्राह्मणों की ऐसी स्वार्थी वृत्ति के कारण निर्मित हुई उस प्रतिकूल परिस्थिति का लाभ इसाई धर्म प्रचारकों और संस्थाओं ने बड़ी कुशलता से उठाया। इसलिए, ''इसाई धर्मप्रचारकों ने धर्मांतर का उद्देश्य अपने दिल में रखकर शूद्रों और विशेषत: अतिशूद्रों की शिक्षा की समस्या हाथ में ले ली। इसाई धर्मप्रचारकों का बर्ताव, दयालु और कार्यप्रवणता आकर्षक थी। वे उनका अशौच नहीं मानते थे। इसलिए उनकी भूतदया से युक्त कार्यप्रणाली का असर शूद्रों के मन पर अधिक पड़ा। उनकी ऐसी धारणा बन गयी कि ब्राह्मण समाज की अपेक्षा विदेशी

इसाई धर्मप्रचारक अधिक अच्छे थे।''[१८] इस तरह विदेशी धार्मिक सत्ता भी भारतीय धार्मिक परिस्थिति का लाभ उठा रही थी।

आगे चलकर राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना सन् १८२८ में की। ब्रह्म समाज पर इसाई धर्म का प्रभाव था। इसाई धर्म के संपर्क के कारण हिंदू धर्म की सीमाएँ स्पष्ट हो रही थी। वर्ण तथा अछूत समस्या को लेकर चर्चा का अभाव इस समय था। सति प्रथा विरोध तथा विधवा विवाह की बात अपने में क्रांतिकारी थी। हजारों वर्षों की जड़ता को तोड़ने का काम ब्रह्म समाज ने किया। इस काम को आर्य समाज ने और आगे बढ़ावा दिया। स्वामी दयानंद ने वर्णव्यवस्था पर सीधे तौर पर प्रहार किये। बाद में म. फुले ने पुणे में १३ सितंबर, १८६३ को 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। म. फुले का मानना था कि, ''केवल ब्राह्मणी धर्म पर टूट पड़ना यही जोतीबा का लक्ष्य नहीं था। वे एक ऐसी व्यवस्था के लिए छटपटा रहे थे जिसमें शोषण और अवहेलना न हो। जाति और वर्ण के परे जाकर मनुष्य सत्यधर्म ही अपनाए ऐसी उनकी धारणा थी।''[१९] इस प्रकार धार्मिक नीति परिस्थितियों का बदलाव हो रहा था।

२.४.४ आर्थिक परिस्थिति :

आर्थिक स्थितियों में सवर्णों की स्थिति कमजोर थी लेकिन अस्पृश्य तथा पददलित और अछूत समाज इन परिस्थितियों में सबसे अधिक मात्रा में पिसता रहा। सवर्ण हिंदूओं की निर्दयता और अछूत जाति में जन्म लेने की वजह से अनपढ़ तथा अछूत समाज का जीवन हेय बन गया था। इसलिए ''अच्छी सरकारी नौकरियाँ, इज्जतमंद धंधे या पुलिस विभाग में उन्हें प्रवेश नहीं मिलता था। इसके विपरीत रास्ते पर झाडू लगाना, शौचालय साफ करना, जूते बनाना, मृत पशुओं की खाल छीलना, बाँस की चीजें बनाकर बेचना आदि मामूली काम उन्हें विवश होकर करने पड़ते थे।''[२०] इस प्रकार उन्हें अपना जीवन-यापन करने के लिए मामूली काम भी करने पड़ते थे। उनमें से कुछ लोगों को सवर्ण हिंदूओं के खेत में बहुत कम रोजाना वेतन पर जी तोडकर काम करना पड़ता था। ये लोग दास की तरह खेत में जी-तोड़ मेहनत करते थे। इतना ही नहीं गांव

के बाहर गंदे रोगदायी कूड़ेखाने पर उनकी नंग-धडंग झोपड़ियाँ बडी मुश्किल से खड़ी रहती थी। उनकी आर्थिक विपन्नता इतनी लाचार बन गयी थी कि उन्हें अंग ढकने के लिए न पूरे कपडे मिलते थे, न पेट भर खाना, न रहने के लिए मकान मिलता था। इसी दरिद्रावस्था में उन दीन-दलितों को बड़ी मुश्किल से अपना जीवन-यापन करना पड़ता था।

भारत में जब अंग्रेजों की सत्ता थी तब यह व्यवस्था ऐसी ही थी। अंग्रेज भी आर्थिक शोषण किया करते थे। अंग्रेज अस्पृश्य तथा दलित समाज की अंतर्गत बातों पर अधिक गौर नहीं करते। ब्राह्मण वर्ग शूद्र समझे जानेवाले लोगों को उँचे दर्जे का काम नहीं करने देते थे। बाद में फिर १९ वीं शती में म. फुले के महान कार्य की वजह से अंग्रेज सरकार थोडा-बहुत ध्यान इन पिछड़े समाज के तबके की ओर देने लगी। म. फुले ने 'गुलामगिरी' नामक ग्रंथ लिखकर अपने प्रश्न तथा समस्याओं को लोगों के सामने रखा। सन् १८७३ में 'किसान का कोड़ा' के माध्यम से किसानों की समस्याओं को जनता के सामने लाया। वे संभवत: देश के पहले व्यक्ति थे जिन्होंने उपेक्षित भारतीय किसानों की ओर बुद्धिजीवियों तथा अंग्रेज सरकार का ध्यान खींचा। ''किसानों की आर्थिक परवशता से वे बहुत दु:खी थे। उन दिनों उन्होंने किसानों के अनाज की दरें निश्चित करने का आग्रह सरकार से किया। भारतीय किसानों की दुर्दशा के लिए अज्ञान, अंधश्रद्धा और धर्मांधता ये तीन प्रमुख कारण हैं – ऐसा वे मानते थे। १८८५ में प्रकाशित 'इशारा' नामक पुस्तिका में उन्होंने शूद्रातिशूद्रों की असहाय स्थिति का विश्लेषण किया है।''[२१] इस तरह म. फुले ने आर्थिक दृष्टि को मद्देनजर रखते हुए उसे अपने कार्य तथा साहित्य के माध्यम से प्रकट किया।

अंग्रेजों की सैनिक नीति के कारण महाराष्ट्र में स्थित दलितों की महार नामक जाति को सेना में अधिकाधिक प्रवेश मिलने लगा। सन् १८५७ के बाद सेना में 'महार बटालियन' विकसित की जाने लगी। हजारों वर्षों से उपेक्षित समाज को जीवन जीने का एक नया आर्थिक क्षेत्र प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना के बाद सन् १८८६ में

'गोपालबुवां वलंकर' नामक एक व्यक्ति सेना से निवृत्त हो गये। इन्होंने अपनी बाद की सारी जिंदगी समाज-कार्य के लिए समर्पित कर दी। उन्होंने 'आचार्य दोष संहार' नामक संस्था की स्थापना की। गोपलबुवां दलितों को उनके मानवीय हक दिलाने के लिए मृत्यु तक संघर्षरत रहे। इसी परंपरा में शिवराम ज्ञानबा कांबले भी एक थे। कांबले दक्षिण महार परिषद के सचिव थे। कांबले ने अनेक प्रकार के अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह किया। १ जुलाई, १९०८ को कांबले ने 'सोमवंशीय मित्र' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन शुरु किया। ''अस्पृश्य वर्ग की शैक्षिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक प्रगति हेतु उन्होंने अनेक लेख लिखें। अनेक रुढ़ियों के खिलाफ वे जनजागरण करते रहे। उनके 'सूचीपत्र' पुस्तक में अस्पृश्य जाति पर होनेवाले अन्यायों की सूची दी गयी है।''[२२] इस प्रकार कांबले ने अपनी लड़ाई जारी रखी। उनको यह विश्वास था कि वर्णव्यवस्था का नाश तथा अस्पृश्यता का संपूर्ण रूप से निर्मूलन किये बगैर प्राप्त स्वतंत्रता बेमतलब की ही होगी। इन्हीं कारणों की वजह से आर्थिक स्थितियाँ भी बिकट बन गयी थी।

ऐसी थी आंबेडकर पूर्व महाराष्ट्र और भारत के प्रदेशों की कुल राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियाँ।

निष्कर्ष :

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर इन सभी महापुरुषों के समय में परिस्थितियाँ काफी उथल-पुथल की रहीं है। समाज सत्ताधारियों, पूजीपतियों और मनुवादियों के अन्याय-अत्याचार और शोषण से त्रस्थ था। अनेक स्थापित रुढी, परंपराओं, अंधश्रद्धा, धर्मांधता, जातिवाद का शिकार भी आम जनता हो रही थी। एक तो विदेशी सत्ताधारियों का शोषण और दूसरी तरफ देशी पूजीपतियों, मनुवादियों की शिकार जनता हो रही थी। छ. शिवाजी ने अत्यंत विपरित परिस्थिति में सामान्य जनों के लिए 'स्वराज्य' का निर्माण कर आम जनता के साथ न्याय करने का प्रयास किया।

अंग्रेजों द्वारा हो रहा भारतीय जनता का शोषण धीरे-धीरे समाज सुधारकों के समझ में आ रहा था। जिस समाज की राजनीतिक बागडौर विदेशियों के हाथों में हो, उनसे आम जनता के सुख-दुःखों का ध्यान रखनेवाली नीति की अपेक्षा निरर्थक होगी। जो समाज आर्थिक स्थिति से संघर्ष करते-करते ही जीवन यापन कर रहा हो उस समाज की उन्नति की आशा कैसे की जा सकती है। समाज की बदतर स्थिति और उसके कारणों की खोज ही महात्मा फुले के चिंतन का विषय बना। फुले का संपूर्ण साहित्य इन्हीं परिस्थितियों की उपज है।

शाहू कालीन मराठी भाषिक प्रदेश अंग्रेजों के कब्जे में था। इस प्रदेश में विभिन्न जाति तथा धर्मके लोग अधिक थे। ब्राह्मणों का प्रभाव अत्यल्प था। अठारह प्रकार की जातियाँ महाराष्ट्र के गांव-शहर में थी। समाज की जीविका भी कृषि पर ही निर्भर थी। समाज के विभिन्न जाति-धर्म के लोग रहते थे, उनमें छुआछूत, वर्णभेद बरकरार था। यह सामाजिक संरचना हिंदू धर्म के अनुसार जातीय विभेद पर अवलंबित थी। समाज में अंधश्रद्धा, अनिष्ट रुढि-परंपराएँ, हिंदू-मस्लिम विवाद, जाति भेद आदि प्रवृत्तियाँ मौजूद थी।

राजर्षि शाहू का मानना था कि दुर्बल जाति, आर्थिक-सामाजिक और राजकीय दृष्टि से जब तक शक्तिशाली नहीं बनती तब तक जातीय संस्था जड से खत्म नहीं हो सकती। समाज में प्रचलित सभी पारंपरिक अनिष्ठ रुढियों का विरोध राजर्षि शाहू ने किया और राजनीतिक, शैक्षिक, सामाजिक, धार्मिक, आदि सभी क्षेत्र में कार्य किया।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का समय स्वाधीनता आंदोलन का होने के कारण तत्काल में भारतीय समाज, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक और शैक्षिक दृष्टि से परिवर्तन का काल रहा है। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू की तरह डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने भी समाज सुधार का कार्य किया। उन्होंने राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षकि और सामाजिक क्षेत्र में विशेष कर सुधार का कार्य

किया।संविधान का निर्माण कर डॉ. आंबेडकर ने स्वातंत्र्य, समता और बंधुता की नींव रखकर सामाजिक न्याय का महत्वपूर्ण कार्य किया।

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर आदि महापुरुषों के समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों ने ही इन महापुरुषों को जन्म दिया है।

संदर्भ संकेत :

१. छत्रपति शिवाजी - सेतुमाधव पगडी, पृ. १५-१६

२. शिवाजी कोण होता? - कॉ. गोविंद पानसरे, पृ. २४

३. वही, पृ. ५२

४. जोतीपुंज महात्मा फुले - जियालाल आर्य, पृ. २२५

५. महात्मा जोतीराव फुले - धनंजय कीर, पृ. १५६

६. युगपुरुष म. फुले - मुरलीधर जगताप, पृ. १२

७. लोकराजा शाहू छत्रपति - डॉ. रमेश जाधव (भूमिका-य.दि. फडके, पृ. १५)

८. वही, पृ. २७

९. राजर्षि शाहू छत्रपति - धनंजय कीर, पृ. ४९७

१०. वही, पृ. २०३

११. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ.सं. ४

१२. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. २९९

१३. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ.सं. ७

१४. वही, पृ.सं. २

१५. वही, पृ.सं. ४

१६. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३००

१७. वही, पृ.सं. २९५

१८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ.सं. ५

१९. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३०२

२०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ.सं. १

२१. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३०२

२२. वही, पृ.सं. ३०४

तृतीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण

तृतीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण

भूमिका

३.१ छत्रपति शिवाजी का चरित्र-चित्रण

३.१.१ जन्म

३.१.२ बचपन तथा शिक्षा

३.१.३ माता-पिता

३.१.४ परिवार

३.१.५ गुरु

३.१.६ छत्रपति शिवाजी की चारित्रिक विशेषताएँ

३.१.६.१ कार्यक्षमता

३.१.६.२ स्वाभिमानी

३.१.६.३ जनप्रेमी

३.१.६.४ कुशल राजनीतिज्ञ

३.१.६.५ दानवीर

३.१.६.६ प्रखर राष्ट्रभक्त

३.१.६.७ नीतिमान

३.१.६.८ आदर्श राजा

३.२ महात्मा फुले का चरित्र-चित्रण

३.२.१ परिवार

३.२.२ माता-पिता और भाई

३.२.३ जन्म

३.२.४ शिक्षा-दीक्षा

३.२.५ विवाह

३.२.६ संतान

३.२.७ गुरु

३.२.८ उपाधि

३.२.९ मृत्यु

३.२.१० महात्मा फुले की चारित्रिक विशेषताएँ

३.२.१०.१ सादगीभरा जीवन

३.२.१०.२ निष्काम सेवा

३.२.१०.३ ध्येयवादी

३.२.१०.४ समताधिष्ठित

३.२.१०.५ मानवतावादी

३.२.१०.६ अस्पृश्य उद्धारक

३.२.१०.७ कुशल नेतृत्व

३.२.१०.८ प्रखर चिंतक

३.२.१०.९ समाज शिक्षक

३.२.१०.१० स्त्री उद्धारक

३.३ राजर्षि शाहू का चरित्र-चित्रण

३.३.१ कागल राजघराना

३.३.२ जन्म

३.३.३ माता-पिता और भाई

३.३.४ बचपन

३.३.५ राजगद्दी

३.३.६ शिक्षा

३.३.७ अध्ययन यात्रा

३.३.८ संस्कार

३.३.९ विवाह

३.३.१० राज्यारोहण

३.३.११ ईश्वर से प्रार्थना

३.३.१२ उपाधियाँ

३.३.१३ मृत्यु

३.३.१४ राजर्षि शाहू महाराज की चारित्रिक विशेषताएँ

३.३.१४.१ स्पष्टवादिता

३.३.१४.२ न्यायप्रियता

३.३.१४.३ संवेदनशीलता

३.३.१४.४ कार्यक्षमता

३.३.१४.५ निःस्वार्थता

३.३.१४.६ पारदर्शिता

३.३.१४.७ निडरता

३.३.१४.८ संयमी

३.३.१४.९ आदरभाव

३.३.१४.१० दृढता

३.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण

३.४.१ जन्म

३.४.२ बचपन

३.४.३ परिवार

३.४.४ पितामह

३.४.५ माता-पिता

३.४.६ चाचा और बुआ

३.४.७ भाई-बहन

३.४.८ वैवाहिक जीवन

३.४.९ शैक्षिक जीवन

३.४.९.१ प्रारंभिक शिक्षा

३.४.९.२ हायस्कूल शिक्षा

३.४.९.३ उच्चतम शिक्षा

३.४.१० डॉ. आंबेडकर पर प्रभाव

३.४.११ डॉ. भीमराव आंबेडकर की चारित्रिक विशेषताएँ

३.४.११.१ अध्ययनशीलता

३.४.११.२ ध्येयवादी

३.४.११.३ तर्क संगत विचार

३.४.११.४ प्रगतिशीलता

३.४.११.५ मानवतावादी व्यक्तित्व

३.४.११.६ कुशल राजनीतिज्ञ

३.४.११.७ अस्पृश्य उद्धारक

३.४.११.८ संविधान निर्माता

निष्कर्ष

तृतीय अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण

भूमिका :

भारतीय समाज सदियों से जातीयता, धर्मांधता, अंधश्रद्धा तथा रुढी-परंपराओं से घिरा हुआ है। वर्णभेद, उंच-नीच और शोषण की परंपरा भी हमेशा से वैसे ही रही है जैसे पहले थी। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जैसे चरित्र का निर्माण शायद ही समाज से ऐसी अनिष्ठ प्रथाओं को खत्म करके एक परिवर्तनवादी समाज स्थापित करने के लिए हुआ है।

छत्रपति शिवाजी महाराज के समय में भारत के साथ-साथ महाराष्ट्र की भूमि भी यवनों के कब्जे में थी। अनेक आक्रमणकारियों के आक्रमण की परिपाटी में आम जनता पिस रही थी। तत्काल में हिंदूओं की स्त्रियां, मंदिर, फसल के साथ-साथ गांव के गांव भी सुरक्षित नहीं थे। लोगों को कुछ कहने का अधिकार नहीं था। सभी अधिकार यवनों के हाथों में थे। उनके साथ मिलकर कुछ हिंदू राजा भी जनता का शोषण करते थे। ऐसे समय में ही छत्रपति शिवाजी जैसे चरित्र का जन्म शहाजी राजे भोसले के पुत्र के रूप में होता है। बचपन से ही यवनों के विरोध की भावना परिवार और समाज में होने के कारण छत्रपति शिवाजी का निर्माण भी माँ जिजाऊ ने उसी रूप में किया। इसकारण नैतिकता, बुद्धिमत्ता, परिश्रमशीलता, दूरदर्शिता, नि:स्वार्थ भावना, साहसी, सहनशीलता, सदाचारी जैसे अनेक गुणों से संपन्न व्यक्तित्व का निर्माण हो सका। भारतीय नौसेना के संस्थापक, हिंदू उद्धारक, छापामार रणनीति के प्रवर्तक, स्त्री उद्धारक, दुष्ट संहारक, भारतीय राष्ट्रवाद के जनक आदि उपाधियाँ से भी उन्हें नवाजा गया। क्योंकि उनका कार्य ही उतना महान

है। हिंदवी स्वराज्य की स्थापना करके यवनों की सत्ता को नष्ट करने का कार्य छत्रपति शिवाजी ने किया।

यवनों के पतन के पश्चात अंग्रेजों ने भारत को अपने कब्जे में लिया। महात्मा फुले के समय में समाज अंग्रेजों के शोषण तथा समाज में प्रचलित रुढी-परंपराओं का सामना लोग कर रहे थे। ऐसी परिस्थितियों से समाज को बाहर निकालने का कार्य म. फुले ने किया।

महात्मा ज्योतिबा फुले ने मराठी स्वाभिमान की 'ज्योति' को अपने कार्यशीलता से निरंतर प्रज्वलित रखा जो कई वर्षों के बाद आज भी जनसाधारण को प्रेरणा दे रही है। महात्मा फुले ने शैक्षिक और सामाजिक कार्य को बडी एहमता से निभाया है। चिमणाबाई और गोविंदराव फुले यह उनके माता-पिता थे। समाज में स्थित अनिष्ठ परिस्थितियों के कारण ही महात्मा फुले का चरित्र समाज सुधारवादी बना। वे जीवनभर बहुजन और स्त्रियों की शिक्षा के लिए संघर्षरत रहे। साथ ही वे ध्येयवादी, नि:स्वार्थी, समताधिष्ठित, मानवतावादी, अस्पृश्य उद्धारक, कुशल नेता, प्रखर चिंतक और स्त्री उद्धारक आदि गुणों का भंडार लेकर अपना जीवन प्रवास करते रहे।

राजर्षि शाहू महाराज एक सच्चे प्रजातंत्रवादी और समाजसुधारक थे। कोल्हापुर रियासत के अमूल्य मणि राजर्षि शाहू महाराज का जन्म २६ जून, १८६४ में आबासाहब और राधाबाई के पुत्र के रूप में हुआ। शुरुआत में उनका नाम 'यशवंतराव' रखा वही भविष्य में राजर्षि शाहू महाराज एक आदर्श राजा के रूप में निर्माण हुए। शाहू महाराज पर परिवारजनों के पश्चात गुरुजनों के महत्वपूर्णसंस्कार थे। फ्रेजर साहब ने पाठ्यक्रमाँ के विषयों की शिक्षा शाहू को तो दी थी, पर इसके अलावा अपना शिष्य एक आदर्श राज्यकर्ता कैसे बनेगा? इसके प्रयास किए थे। इसी कारण सुसंस्कृत, चतुरता, दुरदर्शिता, अनुशासन, सतर्कता, कर्तव्यनिष्ठा, उदारता, न्यायप्रियता, व्यावहारिकता, सहिष्णु, देशकाल का सम्यक ज्ञान आदि गुणों से राजर्षि शाहू संपन्न थे।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का जन्म भीमाबाई की कोख से १४ अप्रैल, १८९१ को हुआ। वे उनकी चौदहवी संतान थी। उनके पिता का नाम रामजी सकपाल था। जिन दलितों ने महाराष्ट्र के लिए योगदान दिया, कुछ समय के पश्चात उन्हें ही राजनीतिक धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक गुलामी का शिकार होना पडा। इसमें से एक रामजी सकपाळ का परिवार था। डॉ. बाबासाहेब का नाम अपनी माता के नाम पर ही भीवा रखा गया। जिसेसंसार बाद में भीमराव के नाम से जानने लगा। यही डॉ. भीमराव आंबेडकर बाद में अस्पृश्यों के उद्धारक, समाजसुधारक, संविधान के निर्माता, तथा गरीब-शोषित पीडित जनता के मसीहा साबित हुए।

३.१ छत्रपति शिवाजी का चरित्र-चित्रण :

छत्रपति शिवाजी भारतीय जनमानस के हृदय सम्राट हैं। भोसले कुल का चरित्र राष्ट्रीय मानबिंदु है। समाज विकास के लिए उन्होंने जो भी कार्य किया है उस कार्य पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव डाला। सात सौ सालों की पराजय की अपमानजनक परंपरा को खंडित कर हिंदुओं के पुरुषार्थ को जगाया तथा एक नए युग का निर्माण किया। शिवाजी महाराज द्रष्टा पुरुष तथा महान शक्तिशाली वीर, हिंदू उद्धारक, भारतीय नौसेना के संस्थापक, छापामार रणनीति के प्रवर्तक, भारतीय राष्ट्रवाद के जनक, दुष्ट संहारक, स्त्री उद्धारक आदि श्रेष्ठ कार्यों से उन्होंने अक्षय कीर्ति प्राप्त की है। भारतीय इतिहास को नया मोड़ देने वाले वह अमर महानायक रहे हैं। जब तक विश्व का अस्तित्व रहेगा उन्हें याद किया जाएगा।

शिवाजी महाराज में नैतिकता, सदाचार, स्वाभिमान, सहिष्णुता, परिश्रमशीलता, दूरदर्शिता, अपार बुद्धि, गुलामी से नफरत आदि ऐसे महत्वपूर्ण गुण थे, जिसके बल पर उन्होंने स्वतंत्र मराठा राज्य की स्थापना की। उनकी शक्ति, युक्ति,साहस, सूचिंतित, सुनियोजित योजनाएँ उनके सफलता की कार्यकारण शृंखलाएँ थी, जिसके कारण शत्रुओं की विराट शक्ति के समक्ष भी उनका मनोबल, बाहुबल और आत्मबल कभी क्षीण नहीं हुआ। कठिन से कठिन प्रसंग का सामना करने में भी वह धैर्य नहींखोते थे,वेअत्यंत

सूक्ष्मता से सोच-समझकर कार्य करते थे। संकट तथा परिस्थिति के बीच में वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति का सफल मार्ग जिस ढेंग से निकालते थे, वह अद्भुत था।

३.१.१ जन्म :

छत्रपति शिवाजी का जन्म माता जीजाबाई तथा पिता शाहजी भोसले के परिवार में १९ फरवरी १६३० में शिवनेरी दुर्ग पर हुआ। उनकी जन्मतिथि के बारे में इतिहासकारोंमें मतभेद थे, लेकिन महाराष्ट्र सरकार ने ऐतिहासिक तथ्य तथा विद्वानों से विचार विमर्श करने के पश्चात १९ फरवरी १६३० इस तिथि को मान्यता दी। छत्रपति शिवाजी राजा की यह जन्म तिथि अब सर्वमान्य हो गई है। जन्म से ही छत्रपति शिवाजी होनहार, चपल तथा साहसी प्रकृति के थे। उनके जन्म के समय शिवनेरी दुर्ग पर बड़ा उत्सव मनाया गया। भोसले परिवार का यह पुत्र भारतवर्षमें ही नहीं विश्व में प्रसिद्ध हो गया।

३.१.२ बचपन तथा शिक्षाः

छत्रपति शिवाजी का जन्म शिवनेरी दुर्ग पर हुआ, लेकिन १२ साल तक वे बेंगलोर तथा बीजापुर में रहे। तदनेंतर पुणे में उनका निवास रहा। माता जीजाबाईस्वयं यवनों के अत्याचारों से अनुभूत थी इसलिए उन्होंने बालक छत्रपति शिवाजी की शिक्षा एक विशेष हेतु मन में रखकर की थी। अपने पिता और भाइयों की हत्या का प्रतिशोध वह लेना चाहती थी। माँ का शिक्षा रूपी दूध पीकर छत्रपति शिवाजी राजा नीडर और साहसी बने। छत्रपति शिवाजी ने जैसे ही यौवनावस्था में पदार्पण किया वैसे ही विद्रोह का झेंडा फहरा दिया। बचपन में ही माता जीजाबाई ने 'रामायण', 'महाभारत' की विविध कहानियाँ छत्रपति शिवाजी को सुनाकर वीरता उनके मन में निर्माण की। जीजाबाई ने अत्याचार-विरोध, स्वातंत्र्य लालसा, साहस, स्वधर्म तथा स्वदेश निष्ठा के संस्कार छत्रपति शिवाजी राजा पर किए थे।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी महाराज का बचपन शिवनेरी, बेंगलोर, पुणे जहांगीरमें बीता।उनकी शिक्षा का भार माता जीजाबाई पर ही रहा।

३.१.३ माता-पिताः

छत्रपति शिवाजी मातृ-पितृ भक्त थे। माँ जीजाबाई वीरमाता थी। अपने बेटे का लालन-पालन उन्होंने ही किया। शहाजी उस समय दक्षिण में व्यस्त थे। लेकिन पिता की कमी जीजाबाई ने उन्हें महसूस नहीं होने दी। माँ की देख-रेख में ही छत्रपति शिवाजी बड़े हो गए। वही उनकी माँ, पिता तथा गुरु थी। शहाजी ने भी पुत्र की शिक्षा दीक्षा के लिए कुछ लोगों को नियुक्त किया था।

३.१.४ परिवारः

छत्रपति शिवाजी एक दूरदर्शी राजा थे। अपने माता-पिता शहाजी और जीजाबाई के आदर्शों को लेकर अपना राजकाज चला रहे थे। छत्रपति शिवाजी के विवाह के संदर्भमें विद्वानों की विविध मान्यताएँहैं। छत्रपति शिवाजी महाराज के आठ विवाह हुए थे, उनकी आठ पत्नियों इस प्रकार थी - सईबाई, सगुणाबाई, सोयराबाई, सकवारबाई,काशीबाई, पुतलाबाई, लक्ष्मीबाई, गुणवंताबाई यह शिवाजी महाराज की पत्नियाँ थी। शिवाजी महाराज का प्रथम विवाह सईबाई निंबालकर से १७ अप्रैल १६४० में हुआ था। और सईबाई से १ पुत्र संभाजी तथा तीन पुत्रियों सखूबाई, राणुबाई, अंबिकाबाई आदि संताने थी। छत्रपति शिवाजी महाराज का दूसरा विवाह बेंगलोर में मोहिते परिवार की 'सोयराबाई' से १६४१ में हुआ। महारानी सोयराबाई से एक पुत्र राजाराम तथा पुत्री बालाबाई उर्फ दीपाबाई हुए। इनके अतिरिक्त छत्रपति शिवाजी महाराज के परिवार में एक बड़े भाई भी थे। जीजाबाई के बड़े पुत्र संभाजी थे। जिनका जन्म सन १६२१ में हुआ था।

छत्रपति शिवाजी के परिवार में शहाजी और जीजाबाई दो प्रमुख व्यक्ति थे। शहाजी राजा के निधन के बाद परिवार का भार जीजाबाई ने भली-भांति संभाला। छत्रपति शिवाजी महाराज स्वयं अपने परिवार में आज्ञापालन करवाने वाले पुत्र, प्रेमी पति तथा कर्तव्यनिष्ठ पिता यह तीनों प्रकार की भूमिका निभाते थे। छत्रपति शिवाजी अपने कार्य की सफलता का पूरा श्रेय माता जीजाबाई को देते थे।

३.१.५ गुरूः

छत्रपति शिवाजी ने स्वकर्तृत्व से स्वराज्य स्थापना का महान कार्य किया था। इस महान कार्यमें माता जीजाबाई ने ही छत्रपति शिवाजी को मार्गदर्शन किया था। ऐसा होते हुए भी बहुत से हिंदी तथा मराठी साहित्यकारों ने समर्थ रामदास तथा दादोजी कोंडदेव को छत्रपति के गुरु के रूप में चित्रित किया है। लेकिन छत्रपति शिवाजी के जन्म के १७ साल बाद दादू जी का देहांत हो गया था। इससे स्पष्ट होता है कि छत्रपति शिवाजी के कार्यमें उनका योगदान अधूरा था। कुछ इतिहासकार और साहित्यकार शिवाजी महाराज के गुरु समर्थ रामदास थे ऐसी उनकी धारणा है, जो तथ्यहीन है। कहींभी ऐतिहासिक दस्तावेजों में स्पष्ट दिखाई देता है कि शिवाजी और रामदास की भेंट नहीं हुई। रामदास ने शिवाजी को ३ अप्रैल १६७२ को सिर्फ एक खत लिखा था। शिवाजी और रामदास की प्रथम भेंट १६७२ की पूर्व नहीं हुई जिसके ८ साल बाद छत्रपति शिवाजी की मृत्यु हो गई।

इससे स्पष्ट होता है कि दादोजी कोंडदेव और समर्थ रामदास शिवाजी के गुरु नहीं थे। छत्रपति शिवाजी महाराज के गुरु में उनकी माता जीजाबाई ही मुख्य है। गर्भावस्था से ही माँ जीजाबाई ने यह तय किया था कि छत्रपति शिवाजी को वीर पुरुष बनाना है क्योंकि वह यवनी अत्याचारों को सह चुकी थी। अपने पिता और भाइयों की दुर्दशा यवनों ने किस प्रकार की थी, यह भी वह भली-भांति जानती थी। इस अत्याचार की बदले की भावना उनके मन में थी। याकूत बाबा छत्रपति शिवाजी के अध्यात्मिक गुरु थे।

छत्रपति शिवाजी कीचारित्रिक विशेषताओं को यहां निम्न नुसार देख सकते हैं -

३.१.६ छत्रपति शिवाजी की चारित्रिक विशेषताएँ :

३.१.६.१ कार्यक्षमता :

भारत कृषि प्रधान और कठोर परिश्रम करनेवालों का देश रहा है। यह परिश्रमशीलता प्राचीन काल से ही भारतीयों में रही है। परिश्रम का ही भगवान महावीर, श्रीकृष्ण और राम ने समर्थन किया था। उन्हें अपने-अपने समय में बहुत श्रम करना पडा।

अंग्रेजों के शासन में पढने-लिखने का महत्व बढ गया। इससे समाज में बुद्धिवादी और श्रमजीवी ऐसे दो वर्ग निर्माण हो गए। व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के विकास, उद्धार के लिए किया जानेवाला कोई भी कार्य समाज प्रतिष्ठा का होता है। ऐसा ही आचरण प्रत्येक व्यक्ति का होना चाहिए जिससे देश प्रगति पथ पर अग्रेसर हो सके। इसी प्रकार की कार्यक्षमता महान युग-पुरुषों में होती है।

किसी भी महान कार्य की सिद्धि के लिए बुद्धिमत्ता, चतुरवााणी तथा कार्यक्षमता की नितांत आवश्यकता होती है। इसके अभाव में कार्य की केवल योजना हो सकती है, पूर्ती नहीं। शिवाजी राजा में इन तीनों गुणों का अत्यंतसुंदर समन्वय था। उन्होंने राज्य निर्माण के लिए, अविश्रांत कार्य किया। अपना सर्वस्व मातृभूमि को समर्पित कर उनकी कार्यक्षमता का प्रमाण दिया। इसके संदर्भ में विलास सोनावणे अपने ग्रेंथ रयतेचा राजा छत्रपति शिवाजी महाराज में कहते हैं - ''छत्रपति शिवाजी महाराज ने शिवनेरी किला हासिल करने का निश्चय किया। उसके लिए सही तरीके से तैयारी की और अपने बुद्धिकौशल का इस्तेमाल करके मुगलों को गाफिल रखा। इसके लिए महाराज ने कोकण में साथ ही सुरत यहां पर पच्चीस हजार सैनिकों को इकट्ठा किया। यह सैनिक किसके लिए है, यह किसी को समझ नहीं दिया। इसीलिए कोकण में सिद्धी बहुत घबरा गया। किन्तु यह बडे सैनिकों की फौज के साथ महाराज जुन्नर की ओर रवाना हुए और मुगलों के बडे सैनिकों का पर्दाफाश किया। मुगल सैन्य घबराकर इधर-उधर भागने लगा। जुन्नर शहर और शिवनेरी किला महाराज के कब्जे में आ गया।''[१]

इस प्रकार इन सभी बातों से शिवाजी महाराज की दूरदृष्टि और कार्य काने की क्षमता का एहसास होता है।

३.१.६.२ स्वाभिमानी :

स्वाभिमान व्यक्तित्व का सबसे श्रेष्ठ गुण है। स्वाभिमान रहित मानव पशु समान होता है। सीना झुकाकर चलना आसान है, लेकिन सीना तानकर चलना अत्यंत कठिन है, और उसके हजारों दुश्मन पैदा होते है। स्वाभिमान से जीना खतरे से खाली नहीं है। स्पष्ट

है कि पराक्रम संपन्न वीर पुरुष ही इस खतरे के रास्ते पर चलने का साहस कर सकते हैं। वीरों में स्वाभिमान की आवश्यकता जरुरी है। ऐसे वीर स्वाभिमान के कारण ही समाज और देश की सेवा कर सकते हैं। स्वाभिमानी व्यक्ति ही श्रेष्ठ कार्य कर सकता है। इस प्रकार स्वाभिमानी व्यक्ति सुख चैन का न होकर कठिन तथा अेंगारों पर चलने के समान होता है। ऐसे व्यक्ति मर मिटने को तैयार रहते हैं, लेकिन अपना अपमान नहीं सहन करते। ऐसे व्यक्ति अपना समाज, धर्म तथा देश का उद्धार करते हैं।

छत्रपति शिवाजी महाराज धर्मनिरपेक्ष स्वाभिमान संपन्न महापुरुष थे। स्वातंत्र्य-लालसा से छत्रपति शिवाजी में स्वाभिमान जागृत हो गया था। शिवाजी गुलामी से नफरत करते थे। इसलिए उन्होंने सुख चैन को त्याग कर खतरों से भरा रास्ता अपनाया। किसी की अधीनता में रहना उन्हें मंजूर नहीं था। छत्रपति शिवाजी जबऔरंगजेब के दरबार में जाते हैं, तो उनके स्वाभिमान को चोट पहुँचती है। तब शिवाजी कहते हैं - ''मुझे तुम्हारे सरोव्य की वेशभूषा नहीं चाहिए। मैं ऐसा अपमान सहनेवाला व्यक्ति लगता हूँ क्या? मुझे आपकी पातशाही मनसुबा नहीं चाहिए। मुझे मारना है, तो मार डालो। कैद करना हो, तो कैद करो, लेकिन मैं आपके सरोव्य की वेशभूषा धारण नहीं करुंगा, मैं तुम्हारा गुलाम नहीं बनूंगा।''[२]

इसी तरह छत्रपति शिवाजी के प्रखर स्वाभिमान का एहेसास होता है।

६.१.६.३ जनप्रेमी :

छत्रपति शिवाजी जनप्रेमी होने के कारण जनता पर अन्याय-अत्याचार नहीं देख सकते थे। इसलिए उन्होंने गुलामी का विनाश कर लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना की। उन्हें अपनी जनता से बहुत प्रेम था। वे जानते थे कि कर्तव्य और त्याग की जननी प्रेम की भावना ही होती है। जनप्रेम से ही किसी व्यक्ति के मन में जनहित और जनरक्षा की भावना निर्माण होती है तथा कर्तव्य के मार्ग पर अग्रेसर करती है। इसी भावना ने तो शिवाजी को स्वराज्य और त्याग के मार्ग पर अग्रसर किया था। शिवाजी ने लोगों को दुःख तथा अपमानित जीवन देखा और उनके मन में अपार जनप्रेम निर्मित हुआ। इसी

दुखी और त्रस्त जनता को कुशलता से सेंघटित कर उन्होंने स्वराज्य की स्थापना की। शिवाजी महाराज का प्रजा पर अपार प्रेम था। उसे निभाने के लिए वे तंत्र शास्त्र के अनुसार दूसरा राज्याभिषेक करवाते हैं। तंत्र शास्त्र को शिवाजी महाराज नहीं मानते थे। उन्होंने हमेशा अंधश्रद्धा का विरोध ही किया है। लेकिन स्वराज्य की कुछ प्रजा को अपेक्षित था इसलिए जनप्रेम और लोकहित के कारण उन्होंने दूसरा राज्याभिषेक करवाया है। इस बारे में उपन्यासकार लिखते हैं कि - ''तंत्रशास्त्र के अनुसार दूसरा राज्याभिषेक करने के लिए स्वयं गागाभट्ट को भी कोई एतराज नहीं किन्तु इस कारण हमारे राज्य की कुछ जनता का समाधान अगर होनेवाला है तो राजा होने के नाते ऐसा संस्कार करवाने के लिए हम किंचित भी आगे-पीछे नहीं देखेंगे।''[३]

३.१.६.४ कुशल राजनीतिज्ञ :

छत्रपति शिवाज महाराज कुशल राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने अपने शौर्य तथा कुशल राजनीति से दुश्मनों को हक्का-बक्का किया। शिवाजी महाराज की बुद्धि अद्‌भूत थी। वे जानते थे कि, युद्ध में विजय पाना जितना महत्वपूर्ण होता है, उतना ही महत्वपूर्ण है युद्ध टालना। कुशल राजनीतिज्ञ प्रथम युद्ध टालने की सोचता है और जब युद्ध को नहीं टाला जा सकता तब उसे अपने कुशल राजनीति से योग्य समय तक रोखता है। जब युद्ध अनिवार्य होता है, तब अनूठी रणनीति अपनाकर अपनी कुशलता से विजय प्राप्त करता है। जिस तरह शिवाजी महाराज की राजनीतिक चाल समझने में दुश्मन कभी कामयाब नहीं हुए। शिवाजी ने युद्ध के प्रत्येक समय में नई रणनीति का प्रयोग किया। इसलिए शत्रू उनसे चकमा खाते थे। जैसे छत्रपति शिवाजी को आगरा में कैद होने पर उससे मुक्त होने की नीति को कोई समझ नहीं पाया। आज भी उस संदर्भ में कोई सबूत नहीं है। जिससे सिद्ध हो जाए कि छत्रपति शिवाजी आगरा कैद से मुक्त हो गये। आगरा भेट के पूर्व राजा जयसिंग शिवाजी के कुशल राजनीति के संदर्भ में औरंगजेब से कुछ महत्वपूर्ण बातें अपने पत्र में लिखता है। उस संदर्भ में सर जदुनाथ सरकार लिखते हैं - ''राजा जयसिंग ने औरंगजेब को लिखे पत्र में कहा था कि शिवाजी को कैद करके या

उसे मारकर कोई फायदा नहीं होगा, क्योंकि शिवाजी ने आगरा आने के पूर्व ही अपने राज्य की अच्छी व्यवस्था कर रखी है। उनका प्रधानमंडल उनके पीछे भी अच्छी तरह से राजकाज को संभाल सकते है।''[४]

इस प्रकार शिवाजी महाराज की कुशाग्र बुद्धि और कुशल राजनीति से परिचित होते हैं।

३.१.६.५ दानवीर :

व्यक्ति अगर किसी याचक से प्रसन्न होता है, तो उसे कुछ धन देना आवश्यक समझता है। यही धन अपेक्षित न मिलने पर याचक नाराज होता है। अपने हेतु को सफल बनाने वाले योग्य व्यक्ति को दान देना आवश्यक है। अयोग्य व्यक्ति को दान देने से दुर्जनों का फायदा होकर समाज का नुकसान होने की संभावना अधिक होती है। योग्य व्यक्ति को दान देने से उसमें नई स्फूर्ति निर्माण होती है वह कठिन से कठिन कार्य की ओर अग्रेसर होता है। योग्य और अयोग्य व्यक्ति की पहचान बुद्धिमान पुरुष ही कर सकता है। ऐसे बुद्धिमान पुरुष अपने कार्य सिद्धि के लिए भेद रहित दान देते रहते हैं। छत्रपति शिवाजी ऐसे ही बुद्धिमान राजा थे। वह महादानी भेद रहित दानी, सत्पात्र दानी, श्रेष्ठ दानी महापुरुष थे। उन्होंने कईमंदिरों, मस्जिदों को दान दिया। हिंदू प्रजा के लिए मंदिर तो मुस्लिम प्रजा के लिए मस्जिदे बनवाने में सहायता की। साथ ही उनकी देखभाल के लिए दानस्वरूप कुछ भूमि भी दी ताकि उस पर उसका खर्च किया जा सके। इतना ही नहीं तो उन्होंने अपने राज्याभिषेक के समय में बहुत सारा दान देने का जिक्र आया हुआ है। इसके संदर्भ में ऐतिहासिक उपन्यासकार भगवतीशरण मिश्र लिखते हैं कि - ''महाराज का तुलादान हुआ – अन्न, फल, मधु, शर्करा, तांबा, कर्पूर, चोंदी आदि से और फिर स्वर्ण-मुहरों से।''[५]

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी महाराज के चरित्र में दानवीर यह विशेषता हमें यहां नजर आती है।

३.१.६.६प्रखर राष्ट्रभक्त :

किसी भी राष्ट्र के निर्माण के लिए इतिहास और जाति की एकता की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक भौगोलिकता, एक इतिहास, एक भाषा, समाज साहित्य और संस्कृतिएवं समान मंत्री अथवा शत्रुता आदि पांच सिद्धोंतों पर एकमत रहने की इच्छा से संगठित जनसमूह को राष्ट्र कहते हैं। इन सब सिद्धोंतों में एकीकरण की भावना प्रधान होती है।

वेद, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रंथों की रचना भारत देश में हुई। भारत को आज भी अध्यात्मिक भूमि मना जाता है। आठवीं शताब्दी से भारत का पतन शुरु हुआ। भारत से क्षत्रिय निर्वंश हुए तथा केवल ब्राह्मण और शूद्र दो ही वर्ण बचे। ऐसी भ्रामक कल्पना भारतीयों में निर्माण की गई। इसी दौर में कर्मकांड का महत्व बढ गया और अंधश्रद्धा बढाने वाले पुराणों की भरमार हुई। यवनों के आक्रमण के लिए अनुकूल वातावरण भारत में निर्माण हो गया। गजनी ने भारत पर आक्रमण कर पृथ्वीराज चौहान को हराया। राजा जयचंद ने गजनी का साथ दिया। जयचंद में राष्ट्रीयता का अभाव था। राजपूतों में राष्ट्रप्रेम होते हुए भी संगठित न होकर विरोध किया इसलिए उनकी हार हुई।

छत्रपति शिवाजी महाराज भी प्रखर राष्ट्रभक्त थे। उन्हें गुलामी और अन्याय से नफरत थी। उनमें राष्ट्राभिमान और अपार देशप्रेम था। छत्रपति शिवाजी महान राष्ट्रपुरुष थे। महान व्यक्ति ही ऊंचे सपने देख सकता है। सपना देखना आसान है, लेकिन उसे साकार करना कठिन कार्य होता है। छत्रपति शिवाजी ने कठोर परिश्रम कर यह कठिन कार्य किया। उन्होंने अपनी पैनी बुद्धि, वीरता, दूरदृष्टि, संगठन चातुर्य, नई युद्धनीति से यह कठिन सपना साकार किया। छत्रपति शिवाजी ने भारतीय इतिहास को एक नया मोड दिया।

शिवाजी का स्वराज्य यह किसी सरदार, वतनदारों का राज्य नहीं था बल्कि वह किसान, मजदूर और धर्मनिरपेक्षों का राज्य था। जिसमें किसी भी तरह का धार्मिक भेदा-भेद नहीं था।

छत्रपति शिवाजी व्यापक दृष्टि से सहिष्णु और उदार राजा थे। उन्होंने अपनी दृष्टि केवल महाराष्ट्र और मराठों तक ही सीमित नहीं रखी बल्कि वह संपूर्णहिंदुस्थान को स्वतंत्र करना चाहते थे। सही अर्थ में छत्रपति शिवाजी भारतीय राष्ट्रवाद के आद्यजनक है। इस संदर्भ में नाटककार पातराम भट्ट 'छत्रपति शिवाजी' नाटक में लिखते हैं कि - ''शिवाजी : महाराष्ट्र में हिंदू-राष्ट्र की स्थापना और धीरे-धीरे उसका पूरे भारत में प्रसार दिल्ली और उससे भी परे।''[६]

इस तरह शिवाजी महाराज के व्यक्तित्व में राष्ट्रभक्ति के दर्शन और श्रद्धा का भाव दिखाई देता है।

३.१.६.७ नीतिमान :

शासन कोई भी हो उसमें नीति और सदाचार इन्हीं गुणों के कारण राज्य का विकास और विस्तार होता है। शासक और जनता की नीतिमत्ता से ही यह कार्य सफल हो सकता है। अत: शासन का नेता नैतिक होना नितोंत आवश्यक है, नहीं तो राज्य की हानि हो सकती है। किसी भी बलवान और विशाल राज्य का नाश अनैतिकता, दुराचार, विलासिता तथा सुख-लोलुपता के कारण होता है। नैतिकता की जिम्मेदारी जनता के साथ-साथ राजा की सर्वाधिक होती है। जनता राजा का ही अनुकरण करते हुए व्यवहार करता है। छत्रपति शिवाजी ने नैतिकता के आधार पर दृढ राज्य की स्थापना की थी। छत्रपति शिवाजी के समय मुगलों ने अपने पराक्रम के साथ ही अनैतिकता मचा दी थी। उनके दुराचारी कर्मों का नाश करने और नैतिकता से संपन्न राज्य का निर्माण करने का संकल्प छत्रपति शिवाजी ने किया था।

आज भारत वर्ष में कई राजा महाराजा हुए किन्तु वह केवल इतिहास का एक पन्ना बनकर रहे किन्तु उस छत्रपति शिवाजी राजा के शौर्यगीत (पवाडे) २१वीं सदी में भी गुंज रहे है। इसका कारण उनमें नैतिकता थी, उन्होंने जनकल्याण का कार्य किया था। छत्रपति शिवाजी को नैतिकता की शिक्षा माँ जिजाबाई ने बचपन से ही दी थी। जिसके संदर्भ में डॉ. वसंत मोरे लिखते हैं - ''माता जिजाबाई ने बचपन से रामायण, महाभारत

के नैतिक आदर्शों का संस्कार शिवाजी के बालपन पर किया था। परिणामस्वरूप शिवाजी नैतिकता को सर्वश्रेष्ठ मानने लगे। महिला का अवमान उन्हें पसंद नहीं था।''[७]

इस तरह से छत्रपति शिवाजी को समय-समय पर माँ जिजाबाई नीतिमत्ता के पाठ पढाती थी और शिवाजी उस पर अंमल करते थे।

३.१.६.८ आदर्श राजा :

आदर्श राजा वही होता है, जो प्रजा द्वारा सराहा जाता है। छत्रपति शिवाजी का समय १७वीं सदी का है किन्तु आज भी शिवाजी राजा के प्रति लोगों में उतना ही आदर है। आज भी कई घरों में शिवाजी की प्रतिमा देखने को मिलती है। इसके अलावा महाराष्ट्र में कोई भी ग्रंथालय देख लीजिए जिसमें एक ना एक छत्रपति शिवाजी को लेकर किताब होगी ही। आज भी हरेक गांव में कम से कम एक माता अपने बेटे का नाम 'शिवाजी' रखती है। यह सभी द्योतक शिवाजी के आदर्श राजा होने के ही है।

२१वीं सदी में भी छत्रपति शिवाजी के आदर्श राज्य का उल्लेख बडे आदर के साथ किया जाता है। छत्रपति शिवाजी ने जिस प्रकार न्याय व्यवस्था, कुशल प्रशासन, प्रभावी सैन्य व्यवस्था, उकृष्ट आरमार, प्रजा का कल्याण, दीन-दलित एवं नारी सम्मान, धार्मिक उदारता का मार्ग अपनाया वहाँ हमें उनके 'आदर्श राजा और आदर्श राज्य व्यवस्था के दर्शन होते हैं। छत्रपति शिवाजी अपने स्वराज्य की प्रजा का तो रक्षण करने के लिए तत्पर रहते थे ही किन्तु शत्रु पक्ष के राज्य में जाकर भी उनके मस्जिद, धर्मग्रंथ एवंस्त्रियों का रक्षण तथा आदर करते थे। इस संदर्भ में मुस्लिम इतिहासकार खाफीखान कहता है कि - ''शिवाजी ने सक्त ताकीद दी थी कि जब उनके सैन्य शत्रू के यहां लूट-मार करेंगे तब मस्जिद, कुरान तथा किसी भी स्त्री को कोई भी हानि न हो। जब चढाई के दौरान हिंदू अगर मुस्लिम नारियोंबंदी बनायी जाती थी। तब उनके-रिश्तेदार आने तक स्वयं शिवाजी उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी लेते थे।''[८]

संक्षेप में कहा जा सकता है कि शिवाजी के चरित्र में महानता दिखाई देती है। उनके चरित्र में बुद्धिमत्ता, कर्तव्यदक्षता, स्वाभिमानी, कार्यक्षमता, कुाश्ल राजनीतिज्ञ,

नैतिकता, आदर्श राजा जैसी अनेक विशेषता दिखायी देती है। जो उन्हें आदर्श बनाने में सार्थक हैं।

३.२ म. फुले चरित्र-चित्रण :

महाराष्ट्र की भूमि संत महात्माओं,राष्ट्र पुरूषों, राजनीतिज्ञों,साहित्य, कला, संस्कृति के मनस्वियों और समाज सुधारक तपस्वीयों की भूमि के रूप में जानी जाती हैं। महात्मा ज्योतिबा फुले ने मराठी स्वाभिमान की 'ज्योति' को अपने कार्यशीलता से निरंतर प्रज्वलित रखा जो कई वर्षों के बाद आज भी जनसाधारण को प्रेरणा दे रही है। महाराष्ट्र ने सामाजिक सुधारों से क्रांति की दिशा भारत को दिखाईहैं। महाराष्ट्र के सामाजिक और शैक्षिक आंदोलन की नींव महात्मा फुले ने डाली है।

महात्मा ज्योतिबा फुले १९वीं सदी में महाराष्ट्र की भूमि से उभरनेवाले एक रत्न थे, जिन्होंने महात्मा गांधी, डॉ. आंबेडकर और लोहिया के पहले भारतीय समाज मेंवंचितों-शोषितों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया। इसलिए महात्मा फुले को आधुनिक काल में दलित चेतना का नायक माना जाता है। उन्होंने स्त्रियां और दलितों की बेबसी और सामाजिक उत्पीडन से मुकाबला करने के लिए समाज को तैयार किया। धर्म और समाज सुधार आंदोलनों के इतिहास में पहले संघर्षशील व्यक्तित्व के रूप में महात्मा फुले अग्रणी है।

महात्मा फुले समग्र सामाजिक क्रांति के द्रष्टा ऋषि थे। आज भी जाति,वर्ण,राज्य,राष्ट्र के लिए झगड़े हो रहे हैं। मानवता और मानवीय मूल्यों का ऱ्हास होने की आज की स्थिति में फुले के सुलझे हुए विचारों का मूल्य बहुत बडा है।

३.२.१ परिवार :

ज्योतिबा के पूर्वज (परदादा) सातारा जिले के कटगुण गांवके निवासी थे ।वहांवे खेती करने के साथ-साथ चौगुला (सहायक) का काम भी करते थे। लेकिन वहां के कुलकर्णी के साथ अनबन होने के बाद विवश होकर उन्होंने उस कुलकर्णी को मौत के

घाट उतारकर कटगुण गांवसे हमेशा के लिए विदा हुए और पुणे जिले के खानवडी नामक गांव से होकर अंतमेंपुणे शहर में आकर बसे।

पुणेमें आने के बाद ज्योतिबा के दादा के तीन पुत्र हुए - राणोजी,कृष्णा और गोविंद । अपना मूल गांव छोडकर आने की वजह से उनकी माली हालात ठीक नहीं थी। चारों ओर अभावों का घेरा था लेकिन उस अभावों से जूझने का साहस भी उनमें था। उन तीनों भाईयों ने तनतोड मेहनत की, फूलवारी सजाने - सेंवारने का काम सीखा।''धीरे-धीरे उनकी कीर्ति पेशवाओं तक पहुँच गयी और उन्हें पेशवाओं की फूलवारी में काम करने का मौका मिला। वे अपने काम में इतने प्रवीण थे कि बढिया ढेंग से काम करते देख तत्कालीन पेशवाने प्रसन्न होकर उन्हें इनाम के रूप में पैंतीस एकड जमीन दे दी थी जो आज भी उनके वेंशजो के पास है। फूलों के व्यवसाय के कारण ही उनका गोऱ्हे यह कुलनाम लुप्त होकर फुले बन गया।''[९]

३.२.२ माता-पिता और भाई :

आर्थिक स्थिति में सुधार आने के बाद गोविंदराव का विवाह पुणे के ही निकट के धनकवडी इस गांव के निवासी श्री झगडे पाटील की कन्या चिमणाबाई से हुआ। विवाह के बाद इस दंपत्ति के दो पुत्र हुए जिनका नाम राजाराम और ज्योतिबा था।''ज्योतिबा जब एक वर्ष आयु के थे तब उनकी माता चिमणाबाई की मृत्यू के पश्चात सगुणाबाई नामक दायी ने उनका लालन-पालन किया।''[१०]

३.२.३ जन्म :

महाराष्ट्र की संतपरंपरामें एक श्रेष्ठ नाम - संत सावता माली का भी आता हैं। वे संत नामदेव के समकालीन थे। इसी संत सावता माली की जाति में महात्मा ज्योतिबा फुले का सन १८२७ में जन्म हुआ। उन्हें १९ वीं सदी का सबसे अधिक निर्भय समाज सेवक के रूप में जाना जाता है।

३.२.४ शिक्षा-दीक्षा :

जब ज्योतिबापांच वर्ष आयु के हुए तब गोविंदराव ने उन्हे स्कूल में दाखिल कराने के बारे में सोचा था लेकिन उस समय ज्योतिबा के समुदाय के लोग प्राय: शिक्षा ग्रहण नहीं करते थे। दरअसल उस समय सभी ब्राह्मणेतर जातियों के लिए शिक्षा के दरवाजे बंद थे। हालोंकि अंग्रेजों का राज कायम होने के बाद वैधानिक रूप से शिक्षा के दरवाजे सबके लिए खुल गए। तब काफी सोचने के बाद सात वर्ष की उम्र मेंज्योतिबा को प्राथमिक शिक्षा हेतु एक निजी मराठी स्कूल में दाखिल करवाया। उन दिनों निम्न जातियों के लिए शिक्षा ग्रहण करना धर्म विरुद्ध कार्य समझा जाता था। ऐसे अंधकारपूर्ण युग मेंगोविंदराव फुले ने अपने पुत्र ज्योतिबा को शिक्षा दिलाने का जो साहस दिखाया था वह वास्तव में एक हिम्मत का काम था। लेकिन इस निर्णय से आस-पडोस के तथा अपने-पराए सभी गोविंदराव का विरोध करने लगे।ज्योतिबा को स्कूल से हटाने के लिए उनपर दबाव लाया जा रहा था। इसी दबाव के कारण ज्योतिबा को स्कूल से हटा दिया गया।

वस्तुत: प्राथमिक स्कूल की पढाई करने के बाद ज्योतिबा के मन में और अधिक पढने की रूचि उत्पन्न हो गई थी।ज्योतिबा की पढने-लिखने की लगन को देखकर उनके प्रबुद्ध पडोसी गफ्फार बेग मुंशी और लिजीटसहाब ने गोविंदराव को ज्योतिबा को फिर से स्कूल में दाखिल कराने के बारे में समझाया। तब कहींगोविंदराव ने बात मान ली और लगभग तीन चार साल के अंतराल के बाद ज्योतिबा को फिर से पुणे के एक 'स्कॉटिश मिशन स्कूल' में सन १८४१ में दाखिल करवाया। तब ज्योतिबा लगभग चौदह वर्ष के थे।''अंग्रेजी शिक्षा का आरंभ ज्योतिबा के जीवन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना हैं।''[११]

३.२.५ विवाह :

सगुणाबाई की रिश्तेदारी सातारा जिले के नायगांवमें थी।वहांखंडूजी नेवसे नामक उनके दूर के रिश्ते के मामा थे। उनकी पुत्री सावित्री एक सुशील लडकी थी। सगुणाबाई ने ही ज्योतिबा के लिए सावित्री का सुझाव गोविंदराव को दिया। सगुणाबाई का सुझाव गोविंदराव कैसे नकारते? उन्होंने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया और ''ज्योतिबा के साथ सावित्री का विवाह बडी धूमधाम से संपन्न हुआ। उस समय ज्योतिबाकी उम्र थी तेरह

वर्षएवं सावित्री की उम्र थी नौ वर्ष। इस प्रकार अल्पायु में ही ज्योतिबा ने गृहस्थाश्रम में कदम रखे।''[१२]

३.२.६ संतान :

विवाह के बाद ज्योतिबा और सावित्री को कोईसंतान नहीं हुई तो उनके रिश्तेदारों ने उनके सामने दूसरे विवाह का प्रस्ताव रखा लेकिन उसे ज्योतिबा ने ठुकरा दिया।ज्योतिबा ने दूसरी शादी तो नहीं की लेकिन काशी नामक विधवा ब्राह्मणी के बेटे को गोद ले लिया और अपने बेटे की तरह उसका लालन-पालन किया उस बेटे का नाम रखा गया –यशवंत । अपनी वसीयत मेंयशवंत को ही उन्होंने अपनी संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाया। वसीयत में यह भी लिखा गया कि,अगर यशवंत पढाई छोड दे और आवारा निकले तो सत्यशोधक समाज के सदस्यों के बहुमत से यशवंत के बदले माली, कुनबी, गडरिया आदी शूद्र समाज में जो बालक समझदार और लायक होगा, उसे मेरी संपत्ति का स्वामी बनाया जाए और सत्यशोधक पद्धति से उसके हाथों से सभी कार्य करवाये जाए यही उनकी कामना थी।

यह अलग बात हैकि यशवंत ने उनका विश्वासघात नहीं किया ना वह रास्ता भटक गया। उसने पूरी लगन के साथ अध्ययन कर डाक्टरी की परीक्षा भी पास की और अपना सारा जीवन गरीबों की सेवा-सुश्रूषा में ही लगा दिया।यशवंत का विवाह सत्यशोधक समाज के ग्यानबा कृष्णराव ससाणे की लडकी राधा के साथ हुआ।ज्योतिबा-सावित्री ने राधा को भी पढने का पूरा अवसर प्रदान किया।''इस प्रकार कबीर की तरह ज्योतिबा फुले भी अपनी 'कथनी और करनी' अंतर नहीं रखते थे बल्कि हर क्रांतिकारी कार्य की शुरुआत अपने घर से ही करते थे। इसीलिए ही महात्मा फुले को महाराष्ट्र का पहला क्रांतिकारी महापुरुष कहा जाता है।''[१३]

३.२.७ गुरू :

महात्मा ज्योतिबा फुले ने भगवान गौतम बुद्ध,तीर्थकर,रामानुज,रामानंद,महात्मा बसवेश्वर,संत तुकाराम आदी महानुभावों का साहित्य पढकर उनसे प्रेरणा ग्रहण की है।

लेकिन महात्मा फुले के समताधिष्ठित विचार,भाषा की प्रखरता एवं स्पष्टता,साहित्य लेखन की शैली आदी बातों पर कबीर का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस संबंध में डॉ.मु.ब.शहा लिखते हैं कि,''फुले के साहित्य की मूल प्रेरणा वैचारिक प्रबोधन की हैं। सदियों से सोए हुए समाज को जगाना और उसे उसकी अस्मिता की पहचान करवा देना उनका मुख्य उद्देश्य था। यह कार्य करने की उनकी शैली 'कबीर की शैली' थी। अत: स्पष्ट है कि, कबीर को ही फुले ने अपना आदर्शएवं गुरु माना था।''[१४]

३.२.८ उपाधि :

ज्योतिबा की आयु के साठ साल पूरे होने के अवसर पर उन्हें मानने वाली जनता ने यह तय किया कि उनका 'भव्य नागरीअभिनंदन' किया जाए।''११ मई १८८८ को मांडवी के कोलीवाडा सभागार में'जीवन भर गरीबों की भलाई के लिए संघर्षकरने वाले उस साहसी,त्यागी और सच्चे नेता को जनता श्रद्धा,विश्वास और आदर से निहार रही थी। सैंकड़ों की आंखोंमें पानी झलक रहा था। उपस्थितों ने कृतज्ञपूर्वक ज्योतिबा की अपरंपार प्रशंसा की और सम्मान के साथ उन्हें'महात्मा' पदवी से विभूषित किया।''[१५]

३.२.९ मृत्यू /देहावसान :

१८९० के प्रारेंभ में उन्हें लकवे की बीमारी ने घेर लिया था। उस बीमारी से जूझते-जूझते इस महान युगपुरुष की २८ नवेंबर १८९० को मृत्यु हुई।

''दलितों, गरीबों और अछूतों का मसीहा उन्हें छोड़कर चला गया था। उनकी ओर से अन्याय के खिलाफ लड़ने वाली 'ज्योति' बुझ गयी थी अपने देहांत से पूर्व उन्होंने समाज में जो जागृति पैदा की वह अविस्मरणीय हैं।''[१६]

३.२.१० महात्मा फुले कीचारित्रिकविशेषताएँ :

३.२.१०.१ सादगीभरा जीवन :

महात्मा फुले इस देश के माली जाति के परिवार से होने की संकल्पना भी की जाए तो उनका जीवन स्तर कितना सरल था यह दिखाई देता है। वे तत्कालीन समय

मेंविदेशी अंग्रेजी फैशन का अनुकरण करने के खिलाफ थे। अपनी भारतीय परंपरा और संस्कृति से ही वे जुड़े रहे। महात्मा ज्योतिबा फुले के जीवन स्तर के बारे मेंपंढरीनाथ सीताराम पाटील कहते हैं कि,''महात्मा ज्योतिबा फुले हमेशा धोती,कुर्ता,सिरपर पगड़ी,रुमाल और पैरोंमें हमेशा जूते इसी साधारण पेहराव में रहते थे।''[१७]

इस प्रकार महात्मा ज्योतिबा फुले संपूर्ण जीवन भर साधारण जीवन जीकर समाज के हित के लिए निरंतर कार्य करते रहे।

३.२.१०.२ निष्काम सेवा :

महात्मा फुले के नि:स्वार्थ भाव के बारे में इतना ही कहा जा सकता है कि,ज्योतिबा अपने समय में सरकारी नौकरी कर तथा फूल बेचकर कमाई हुईपूंजी के माध्यम से और उस समय सम्मान के बदले में दिये जानेवाले पद,प्रतिष्ठा,अधिकार और धन के आधार पर अपना जीवन यापन कर सकते थे लेकिन उसे ठुकराकर पीडित-शोषित समाज का हित और उनकी सेवा करने की प्रतिज्ञा लेकर उसे वे सर्व साधारण जीवन जी कर ही पूरा करने में जुटे रहे।''लेकिन उनकी उस पुण्यकर्मों लोगों को परख ना होने की वजह से ज्योतिबा को धर्म-मार्तड लोगों से काफी पीड़ा सहनी पडी फिर भी उन्होंने अपनी लोकहित की प्रतिज्ञा को खंडित होने नहीं दिया।''[१८]

इस तरह ज्योतिबा फुले अपने समाज के प्रति आस्था रखकर निरंतर और नि:स्वार्थ भाव से समाज सेवा का कार्य करते रहे।

३.२.१०.३ ध्येयवादी :

महात्मा ज्योतिबा फुले का विवेक जागृत था। उनके विचारों के प्रेरणा स्त्रोत पाश्चात्य जगत के महान दार्शनिक मार्टिन लूथर,थॉमस पेन जैसे लोग थे जिनका उन्होंने अध्ययन किया था। थॉमस पेन की 'राइट्स ऑफ मैन' पाश्चात्य जगत की चर्चित रचना थी। उसी का अधिक प्रभाव फुले के ध्येयवादी विचारों पर पड़ा हुआ दिखाई देता है।''उन्होंने अपनी दूर दृष्टि से यह समझ लिया था कि,जब तक हम स्त्रियां और पिछडी

हुईजातियों को शिक्षा के माध्यम से आगे नहीं बढ़ाऐंगे तब तक समाज में व्याप्त अंधविश्वास और अन्याय की जो कडियां है वह नहीं टूटेगी।''[१९]

इस प्रकार महात्मा फुले ने अपने क्रांतिकारी विचारों के माध्यम से साहस और धैर्य के साथ पिछड़े हुए समाज को उन्नति की ओर लाने का अविश्वसनीय कार्य किया है।

३.२.१०.४ समताधिष्ठित :

महात्मा फुले के विचारोंमें व्याप्त धार्मिक कट्टरता और अंधविश्वास,सामाजिक एकता और बंधुता में सबसे बड़ी रुकावट है। उनका मानना था कि तब तक समाज में प्रचलित वर्ण-धर्म और जाति प्रथा का उन्मूलन नहीं किया जाता तथा समाज का संगठन समानता के आधार पर नहीं किया जाता तब तक सामाजिक एकता नहीं हो सकती तथा एकता के अभाव में समाज तथा देश का संपूर्ण विकास नहीं हो सकता। उन्होंने कहा कि, यदि ब्राह्मण विद्वानों को वास्तव में सभी लोगोंमें एकता स्थापित करने तथा देश का उत्थान करने की चिंता है, तो सर्वप्रथम उन्हें वर्ण - धर्म को जल समाधि दे देनी चाहिए तथा सभी के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए। तभी समाज में वास्तविक एकता स्थापित की जा सकती है और देश का उत्थान हो सकता है। महात्मा फुले ने अपने क्रांतिकारी विचारों के माध्यम से रूढि-परंपरा तथा सामाजिक विषमता के चंगुलमेंफंसी व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण और समताधिष्ठित व्यवस्था बनाने का यशस्वी प्रयास किया था। मानव निर्मित विषमता के प्रति फुले का विरोध हमेशा रहा है वे सामाजिक समता प्रस्थापित करने के आग्रही थे।

३.२.१०.५ मानवतावादी :

ज्योतिबा फुले का चिंतन मनुष्य केंद्रित था। ईसाई धर्म की मानवतावादी विचार धारा का प्रभाव फुले के विचारों पर अधिक रूप में दिखाई देता है और इसी प्रभाव के कारण उनके विचारोंमें और मुख्यत: आचारोंमें मानव मात्र को समान माननेवाली नीति का अंश प्रधान रहा है। फुले के इस मानवतावादी दृष्टिकोण के संदर्भमें डॉ.मु.ब.शहा कहते हैं

कि, 'जिस तरह पशु पक्षियोंमें कोई जातिभेद नहीं उस तरह मानवों की भी कोई जातिभेद नहीं। वे सर्वथा समान हैं।'

महात्मा फुले ने मानवो में किसी भी प्रकार की जाति भेद को पूर्णता असत्य,मूर्खतापूर्ण और मानवता के विरुद्ध बताया है। उन्होंने कहा कि, हमारे निर्माता ने सभी मानवों को समान बनाया है। उनमें किसी प्रकार का भेद नहीं है। सभी मानव समान है।

३.२.१०.६ अस्पृश्य उद्धारक :

महात्मा फुले ने दलितों - शोषितों पर लगे अछूत के लांछन को मिटाने और उन्हें बराबरी का दर्जा दिलाने का भी प्रयत्न किया है। शूद्रों और महिलाओंमेंअंधविश्वास के कारण उत्पन्न हुई आर्थिक और सामाजिक विकलांगता को दूर करने के लिए भी उन्होंने आंदोलन चलाया। उनका मानना था कि,आजादी,समानता,मानवता,आर्थिक न्याय,शोषण रहित मूल्यों और भाईचारे पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है तो असमान और शोषक समाज को उखाड़ फेंकना होगा।

इस तरह सदियों से सोए हुए समाज को जगा कर उन्हें उन्नति (ज्ञान) के मुख्य प्रवाह में लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य महात्मा ज्योतिबा फुले ने किया है।

३.२.१०.७ कुशल नेतृत्व :

''जब कोई नेता अपने विचार प्रणाली के रूप में या विचारों के स्तर पर किन्हीं बातों को अपनाता है तो व्यक्तिगत जीवन में उनका प्रयोग करने,व्यवहारिक जीवन में अपने विचारों के प्रति ईमानदार रहने का उदाहरण हमारे इतिहास में बिरला ही पाया जाता है इसी दृष्टिकोण से विचार करने पर १९ वीं शताब्दी के सभी महापुरुषोंमें ज्योतिबा का व्यक्तित्व प्रभावशाली है ।''[२०]

महात्मा ज्योतिबा फुले ने राजनीति के माध्यम से भी पीडित-शोषित,शूद्रों तथा स्त्रियां के लिए भी कार्य किए हैं।''तत्कालीन शासन द्वारा उन्हेंपुणे नगरनिगम के सदस्य के रूप में चयन करने के बाद आगे चलकर अन्य कई समितियों के सदस्य होकर महात्मा

फुले ने अपने समाज के लिए उनकी समस्याओंमें सुधार लाने के साथ-साथ शिक्षा और उन्नति के प्रवाह में समाज को लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।''[२१]

इस प्रकार महात्मा ज्योतिबा फुले एक प्रखर समाज चिंतक होने के साथ-साथ उनमें एक कुशल राजनीतिज्ञ होने की झलक भी दिखाई देती है।

३.२.१०.८ प्रखर चिंतक :

सामाजिक क्रांति का निर्धार करने वाले और उसके लिए कार्यशील जीवन जीनेवाले व्यक्तित्व के रूप में महात्मा फुले को जाना जाता है। अपने जीवन के लगभग २५ वर्ष समाज सेवा में बिताने के बाद जोतीराव को समाज सुधार के कार्यमें आने वाली कठिनाईयों प्रतीत हुई थी।''उन्होंने नारी दास्य-विमोचन और अछूतोद्धार के साथ-साथ ब्राह्मणी शास्त्रों की मानसिक तथा धार्मिक गुलामी से लोगों को मुक्त करना,पुरोहित द्वारा किए जाने वाले शोषण को रोकना,शिक्षा का प्रचार प्रसार करना,महिलाओं को शिक्षित करना,अछूतों का उद्धार कर छूआछूत को मिटाना,महिलाओं के मानवाधिकारों की रक्षा करना, दीन - शिशुओं तथा अंधो - लूलों के प्रति सहानुभूति रखना,सत्याचरण और सत्यनिष्ठा अपनाना आदी उद्देश्यों को अपना प्रमुख लक्ष्य बनाकर उसे पूरा करने के लिए वे आगे बढ़ते रहें।''[२२]

३.२.१०.९ समाज शिक्षक :

''ज्योतिबा फुले का धर्मचिंतन मनुष्य केंद्रित था। धर्म मानव की नैतिक उन्नति के लिए प्रेरक एवं पोषक होना चाहिए। वे यह मानते थे कि,दीन-दुर्बलों का अज्ञान और असहायता दूर न करते हुए धर्म के नाम पर काल एवं शक्ति का अपव्यय करना ईश्वरोपासना नहीं है।''[२३]

शूद्राति-शूद्रों के प्रबोधन के लिए ज्योतिबा फुले प्रयत्नशील थे। धर्म क्षेत्र की अंधश्रद्धा,भावविवशता, शुष्क कर्मठ वृत्ति उन्हें स्वीकार नहीं थी। जाति व्यवस्था,वर्ण व्यवस्था,कर्मकांड की वजह से समाज में विषमता फैलने लगी थी।''उन्होंने 'सत्यधर्म' के

माध्यम से समाज में समानता और सुधार लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।' वे अपने सत्यधर्म को वैश्विक धर्म बनाना चाहते थे।''[२४]

३.२.१०.१० स्त्री-उद्धारक :

''नवसमाज निर्मिति का एकमात्र प्रमुख और प्रभावी साधन है - शिक्षा। जो ज्योतिबा के समय निम्नस्तरों के योन शूद्रों,दलितों और स्त्रियां को अप्राप्य थी। इसका कारण यह था कि शिक्षा ही उन्नति का कारण है इसका उन्हें ज्ञान ही नहीं था।''[२५] महात्मा फुले का यह मानना था कि, सारा समाज उन्नति,अभ्युदय की क्षितिज की ओर अग्रसर होने के लिए शिक्षा की बुनियाद होना जरूरी है। इसलिए उन्होंने धर्मद्वारा लगाये गए निर्बंध तोड़कर नारीयों और अछूतों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये।

ज्योतिबा स्त्रियां और निम्न वर्गको ऐसी शिक्षा देने के आग्रही थे, जो उन्हें सामाजिक समता का पाठ पढाए तथा व्यक्ति की स्वतंत्रता के लिएसंघर्ष करना भी सीखाए।

इस प्रकार ज्योतिबा फुले ने स्त्रियों तथा नारियों की शिक्षा के लिए प्रबल समर्थन देकर उन्हें शिक्षित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। यह उनके चरित्र की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता रही है।

३.३ शाहू महाराज का चरित्र-चित्रण :

३.३.१ कागल राज घराणा :

कोल्हापुर संस्थान कागल का घाटगे घराना एक प्रसिद्ध सरदार घराना था। इस घराने में भानजी घाटगे, विठोजीराव घाटगे, यशवंतराव घाटगे, नारायणराव घाटगे, जयसिंगराव उर्फ आबासाहब घाटगे जैसे वीर पुरुष हुए। इसमें भानजी घाटगे ने अपनी वीरता के बल पर आदिलशहा से 'सर्जेराव' उपाधि प्राप्त की थी। विठोजीराव घाटगे ने

शिवछत्रपति को स्वराज्य स्थापना हेतु अपना योगदान दिया था और जयसिंगराव ने कोल्हापुर के जागीरदारों में अपनी प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

जयसिंगराव यानी आबासाहब घाटगे शिवछत्रपति के भोंजे थे। इस कारण उनका अधिकतर बचपन कोल्हापुर के राजमहलों में बीता। इस बीच ''उनका विवाह उम्र के आठवें बरस में मुधोल की राजकन्या राधाई के साथ हुआ। अपनी उम्र के बारहवें वर्ष में वे कागल सीनियर नामक घाटगे के अधिपति हुए।''[२६]

आबासाहब जन्म से ही अत्यंत बुद्धिमान और फुर्तीले थे। इसी वजह से उन्होंने कागल में एक मजबूत यंत्रणा राजकारोबार के लिए निर्माण की थी। इस यंत्रणा के द्वारा उन्होंने एक आदर्श तथा कार्यक्षम प्रशासक के रूप में कोल्हापुर रियासत के जागीरदारों में अपनी प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

३.३.२ जन्म :

छत्रपति शाहू महाराज जिन्हें भारत में एक सच्चे प्रजातंत्रवादी और समाजसुधारक के रूप में जाना जाता है, ऐसे कोल्हापुर रियासत के अमूल्य मणि राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज का जन्म २६ जून १८७४ ई. को लक्ष्मी-विलास राजवाडा कागल, कोल्हापुर में हुआ। आबासाहब और राधाबाई दंपति को जब यह पुत्र प्राप्ति हुई, तब उन्होंने अपने ''इस पुत्र का नाम 'यशवंतराव' रखा। यही यशवंतराव चरित्र नायक शाहू महाराज हैं।''[२७]

आबासाहब घाटगे की तीव्र इच्छा थी कि उनका सुपुत्र कोल्हापुर रियासत का छत्रपति बने। शिवाजी चतुर्थ की मृत्यु के पश्चात् उनकी यह इच्छा भी पूरी हो गई।

३.३.३ माता-पिता और भाई :

उनके पिता कागल घराने की शाखा के जागीरदार थे। उनका कोल्हापुर के छत्रपति घराने से खून का रिश्ता था। आबासाहब अंग्रेजी विद्याभूषित, रौबदार व्यक्तित्व के विद्वान, बुद्धिमान तथा अत्यंतमहत्वाकांक्षी पुरुष थे। उनकी माता मुधोल राज्य की राजकन्या राधाबाई थी। साथ ही शाहू महाराजा के दत्तक पिता शिवाजी महाराज चतुर्थ और दत्तक

माता रानीसाहिबा आनंदीबाईथी। आनंदीबाई ने नारी शिक्षा के लिए काफी सराहनीय कार्य किए थे। शाहू महाराज के भाई बापूसाहब उर्फ पिराजीराव थे। उनका जन्म ३ जनवरी, १८७६ ई. में हुआ था। बापूसाहब ने अपने भाई शाहू का आखिर तक लक्ष्मण की तरह साथ दिया था।

३.३.४ बचपन :

छत्रपति शाहू महाराज का बचपन अत्यंत अभाव भरा रहा था। जब वे मात्र तीन साल के थे, तभी उनकी माता राधाबाई २० मार्च, १८७७ ई. को इस दुनिया से चल बसी थी। राजकुमार विद्यालय, राजकोट में पढ़ाई के समय पिता आबासाहब घाटगे के बिमार होने की खबर उन्हें मिली और जब-तक वे राजकोट से कोल्हापुर पहुँचते तब तक आबासाहब की हृदय की गति थम जाने से मृत्यु हो चुकी थी। ''कोल्हापुर में आबासाहब बीमार पड़े और उसी में उनकी २० मार्च, १८८६ ई. में तीस वर्ष की उम्र में मृत्यु हुई। शाहू महाराज त्वरित अपने भाई के साथ कोल्हापुर लौटे। उन पर बड़ा संकट गुजरा था। उनकी माताजी तो पहले ही उनके तीसरे बरस की उम्र में गुजर गयी थी। अब बारह बरस की उम्र में पिताजी गुजर गए थे।''[२८]शाहू महाराज दो दिन विलंब कोल्हापुर पहुँचने के कारण पिता का मुंह भी नहीं देख पाये थे। स्नेहशील और कर्तृत्ववान पिता का छत्र छीन जाने से दोनों भाई अनाथ हो गये थे। दुख की कोई सीमा नहीं रही थी। अब परिवार में महाराज का साथ देनेवाला उनके कनिष्ठ बंधू बापूसाहब के अतिरिक्त कोई नहीं था।

एक दिन की बात है शाहू महाराज अस्वस्थ थे। बापूसाहब अपने इस बड़े भाई की अस्वस्थता को समझ रहे थे। किंतु दोनों नासमझ कौन किसे समझाये? आबासाहब की यादों ने दोनों को व्याकुल कर दिया था। शाहू महाराज अपने छोटे भाई को कहते हैं, ''बापूसाहब, कहां होंगे आबासाहब? ऐसा केसे हो गया?... बापूसाहब कुछ न बोलते हुए शाहू महाराज के गले लिपट गये। वे अंदर से बेचैन हुए। शाहू महाराज की आंखों से आंसू गिरने लगे। बहुत समय तक दोनों ही शांत बैठे रहें।''[२९] आबासाहब की प्रतिमा उनकी आंखों से दूर नहीं हो रही थी। अपने पिताजी नहीं रहे यह मन मानने को तैयार

नहीं था। किंतु इस पर विश्वास करना आवश्यक था क्योंकि, आबासाहब इस दुनिया को छोड़कर अंतिम यात्रा पर निकल गये थे।

छत्रपति शाहू के दत्तक पिता शिवाजी चतुर्थ का भी अंग्रेजषडयंत्र और दीवान ब्राह्मण की गद्दारी के कारण २५ दिसंबर, १८८३ को करुण अंत हो गया। दत्तक माता आनंदीबाई का सहयोग उन्हें मिलता रहा। उन्हीं की छाया में वे बड़े हुए थे। उनकी माता की मृत्यु सन् १९०२ ई. में हुई थी।

संक्षेप में, माता-पिता के स्नेही ममता से वंचितशाहू को बचपन में ही जीवन की कड़ी वास्तविकता और दुख को नजदीक से अनुभव करना पड़ा। इस वजह से उनके मन में गरीब, वंचित और अनाथ तथा आधारहीन जीवन जीनेवालों के प्रति बड़ी हमदर्दी निर्माण हुई। बचपन में वे अक्सर अकेले ही रहा करते, अपने अभाव भरे जीवन की चिंता में खोये रहते। इस चिंतन से उनमें साहस और धैर्य का निर्माण हुआ और संकट की हर घड़ी में हर स्थिति का मुकाबला करने का सामर्थ्य उनमें निर्माण हुआ।

३.३.५ राजगद्दी :

शिवछत्रपति के द्वितीय पुत्र राजाराम महाराज थे। बाबासाहब महाराज की असमय मृत्यु होने से छोटी उम्र में ही राजाराम को राजगद्दी पर बिठाया गया था। परंतु ''कोल्हापुर के लिए एक सूज्ञ तथा मर्मज्ञ राजा प्राप्त होने की परिस्थिति निर्माण हो भी गयी तथा दुर्भाग्य से युरोप की यात्रा के दरमियान इटली के फ्लोरेन्स शहर में उनकी मृत्यु हुई।''[३०]

राजाराम महाराज की मृत्यु के पश्चात् छत्रपति शिवाजी महाराज प्रथम के दूसरे पुत्र के वेंशज शिवाजी चतुर्थ को कोल्हापुर राज्य की राजगद्दी पर विराजित किया गया। तब उनकी उम्र थी केवल नौ साल। छोटी उम्र होने से अंग्रेजों द्वारा नियुक्त दीवान से कोल्हापुर रियासत का कारोबार चलाया जाता रहा। इस बीच अंग्रेजषडयंत्र और महादेव वासुदेव बर्वे नामक अत्यंत कट्टर तथा घमेंडी ब्राह्मण दीवान की गद्दारी की वजह से छत्रपति को मनोरुग्ण ठहराकर बंदी बनाया गया और अहमदनगर के किले में अंग्रेज सैनिकों के अत्याचार से वही पर उनका शोकदायी अंत हो गया। ''एक दिन सार्जंट ग्रीन

इस निरंकुश गोरे अंग्रेज अधिकारी ने छत्रपति पर अन्याय-अत्याचार शुरु किये। छत्रपति ने असहाय होकर उसका प्रतिकार भी किया, किंतु वे अकेले थे, दुर्बल थे। इसी बीच सार्जंट ग्रीन के जुतों की लात शिवाजी चतुर्थ को पेट में जोर से लगी जिसमें शिवाजी चतुर्थ की तिल्ली फुटी और उनका अंत हो गया।''[३१]

कोल्हापुर रियासत की राजगद्दी पुन: एक बार खाली हो गयी। कारण था कोल्हापुर रियासत के चतुर्थ शिवाजी की मृत्यु। महारानी आनंदीबाई को कोईसंतान न होने से कोल्हापुर रियासत पर विधवा रानीयों की प्रधानता आ गई। तब राजाराम महाराज के मौसेरे भाई तथा कागल घराने के जागीरदार आबासाहब घाटगे को अंग्रेज सरकार ने कोल्हापुर रियासत के राजप्रतिनिधि के रूप में नियुक्त किया। इस बीच शिवाजी चतुर्थ की विधवा आनंदीबाई ने अपने इस राजप्रतिनिधि जागीरदार से उनके जेष्ठ सुपुत्र यशवंतराव को दत्तक ले लिया और उसका नाम रखा शाहू। शाहू की उम्र उस समय केवल पावने दस साल थी। ''छत्रपति की रिक्त हुई राजगद्दी पर खून के रिश्तें में सबसे नजदीक के वारिस के रूप में ब्रिटिशों की संपत्ति से रीजेंट आबासाहब के जेष्ठ पुत्र अर्थात यशवंतराव का चयन किया गया। चौथे शिवाजी महाराज की रानी साहिबा आनंदीबाई ने १७ मार्च, १८८४ ई. में यशवंतराव को विधिवत गोद लिया। कागल के घाटगे घराने के यशवंतराव 'शाहू छत्रपति' के रूप में कोल्हापुर की राजगद्दी पर विराजित हुए। ब्रिटिश पोलिटिकल एजेंट कर्नल रीव्हज् ने दत्तक विधान सम्पन्न कराया और शाहू छत्रपति अब कोल्हापुर के 'राजा' हुए, ऐसा घोषित किया।''[३२]

शाहू को राजा घोषित करते ही सैनिकों ने उन्हें उन्नीस तोफों की सलामी दी। जिसकी आवाज से करबीर नगरी को नया छत्रपति मिलने का शुभ सेंकेत दसों-दिशाओं में फैल गया। यशवंतराव को बाल्य अवस्था में ही कोल्हापुर रियासत की राजगद्दी संभालनी पड़ी। किंतु रियासत के राजकारोबार का अधिकार उन्हें काफी समय बाद अर्थात २ अप्रैल, १८९४ को प्राप्त हुए। राजतिलक से सन् १९२२ तक वे कोल्हापुर रियासत के एकछत्र राजा बने रहे।

३.३.६ शिक्षा :

कर्नल रीव्हज् ने शाहू महाराज को कोल्हापुर रियासत का राजा घोषित किया। उसी समय उसने शाहू को शिक्षा हेतु इंग्लैंडभेजने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा, ''शाहू छत्रपति के मनोविकास के लिए उन्हें कुछ समय बाद शिक्षार्जन हेतु इंग्लैंड भेजने की ब्रिटिशों की इच्छा है।''[३३]

शाहू महाराज की प्रारंभिक शिक्षा अंग्रेज अधिकारी फिट्झिराल्ड के देखभाल में शुरु हुई। उनके साथ बंधु बापूसाहब, चाचा काकासाहब और दत्ताजी इंगले थे। शिक्षक के रूप में कृष्णाजी गोखले और हरिपंत गोखले की नियुक्ति की गई थी। इस कालावधि में शाहू महाराजा के पिताजी आबासाहब घाटगे इंग्लैंड जाकर आये। उन्होंने वहों की परिस्थितियों का ध्यानपूर्वक परीक्षण किया, ''अत: उन्होंने अपने बच्चों को इतनी कच्ची उम्र में इंग्लैंड न भेजने का निर्णय लिया।''[३४]

अत: यह तय हुआ कि, वैसे ही आधुनिक शिक्षा शाहू महाराज को भारत में ही दी जाए। इसके लिए राजकोट के राजकुमार महाविद्यालय का चयन किया गया। ''शाहू महाराज को उनके साथियों के साथ जनवरी १८८६ ई. में राजकोट के राजकुमार कॉलेज भेजा गया। उनके साथ उनके शिक्षक गोखले और आबासाहब के विश्वास के सरदार बुवासाहब इंगले को भेजा गया। उन्हीं पर बच्चों के पालकत्व की जिम्मेदारी थी। इसी कॉलेज में भावनगर के राजपुत्र भावसिंहजी के साथ शाहू महाराज की मित्रता बनी तथा आगे भी वह आजन्म बनी रही।''[३५]शाहू महाराज ने राजकोट की पढ़ाई के अतिरिक्त, निशानेबाजी, कुश्ती, अश्वारोहण आदि क्रीड़ा प्रकारों को भी सीख लिया।

आबासाहब घाटगे शाहू महाराज के राजकोट की पढ़ाई से संतुष्ट नहीं थे। उनका कहना था कि राजपुत्र की पढ़ाई अपनी रियासत में अन्य बच्चों के साथ तथा प्रजा के बीच हो। यह बात वे अंग्रेज अधिकारी विल्यम ली वार्नर के सामने प्रकट करते रहे, जो उनके गहरे मित्र तथा उदारमतवादी और सुसंस्कृत व्यक्ति थे। विल्यम ली वार्नर को कोल्हापुर रियासत के राजनीतिक सलाहकार के पद पर नियुक्त किया गया था। उनसे

आबासाहब ने मरणासन्न अवस्था में होते हुए भी शाहू महाराज के भविष्य की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्णसूचनाएँ दी थी। ''उनकी इच्छा थी कि उनके बच्चों की शिक्षा किसी विद्वान तथा होशियार ब्रिटिश पालक के मार्गदर्शन में हो। उनकी इच्छानुसार ली वॉर्नर ने ब्रिटिश आय.सी.एस. अधिकारी स्टुअर्ट मिटफोर्ड फ्रेजर को शाहू महाराज तथा उनके साथियों के शिक्षक के रूप में नियुक्त किया। शाहू महाराज को राजकोट में इस वार्ता से परिचित कराया गया। तब शाहू महाराज अपने सहाध्यायियों के साथ राजकुमार कॉलेज छोड़ कोल्हापुर वापिस आए। (अप्रैल, १८८९) शीघ्र ही फ्रेजर के मार्गदर्शन में धारवाड़ में राजकुमारों की शिक्षा प्रारंभ हुई। उस समय भी भावनगर के राजकुमार भावसिंहजी उनके साथ थे। देशी शिक्षक के रूप में केशवराव गोखले नामक चारित्र्य संपन्न तथा ध्येयवादी शिक्षक की नियुक्ति हुई थी। पालक के रूप में बुवासाहब इंगले भी धारवाड़ में बच्चों के साथ थे। उन्होंने शाहू महाराज को घुडसवारी तथा शिकार जैसी कलाओं में कुशल बनाया। स्वयं फ्रेजर ने भी बुवासाहब की सच्चाई, स्वामिनिष्ठा तथा प्रामाणिकता आदि गुणों का गुणगान किया ऐसे दिखाई देता है।''[३६]

स्टुअर्ट मिटफोर्ड फ्रेजर ने धारवाड़ में राजकुमारों को अेंग्रेजी, अर्थशास्त्र, गणित, इतिहास, भूगोल आदि विषयों की संपूर्ण शिक्षा दी। वे अपने इन विद्यार्थियों की प्रगति रिपोर्ट कोल्हापुर के राजनीतिक सलाहकार विल्यम ली वॉर्नर के पास भेजा करते। ''दिखने में शाहू राजा कुशाग्र बुद्धि के नहीं लगते; पर व्यवहार ज्ञान और स्मरणशक्ति में वे बेजोड़ हैं। शिक्षा प्राप्त करने में उन्हें विशेष रुचि है और उसके लिए खास कष्ट उठाने की वे इच्छा रखते हैं। उनका व्यवहारज्ञान-विशेषकर राजनीतिक अर्थशास्त्र में-लक्षणीय है। इस विषय में उन्होंने अपने सभी सहपाठियों को पीछे छोड़ दिया है।''[३७]

शाहू के लिए फ्रेजर सिर्फ अध्यापक नहीं थे। वे उनके सबसे बड़े हितचिंतक और मित्र थे। एक राजकुमार में सत्ता का सेंचलन करने हेतु जिस प्रकार के योग्यता की आवश्यकता होती है, उसकी संपूर्ण शिक्षा फ्रेजर ने शाहू को दी थी। यही से एक उदारमतवादी राजा छत्रपति शाहू के चरित्र का निर्माण हुआ था।

३.३.७ अध्ययन यात्रा :

गुरु फ्रेजर के साथ शाहू महाराज ने अखंडभारत की यात्रा की। यह यात्रा अध्ययन हेतु थी। जिसे फ्रेजर साहब ने निकाला था। जहाँ जो इतिहास घटित हुआ था, उन स्थानों तथा प्रदेशों कापरीक्षण करना, साथ ही देश की स्थिति, सामाजिक-धार्मिक आचार-विचार आदि को समझना यात्रा का मुख्य उद्देश्य था। ''गुरुवर्य फ्रेजर ने अपने पाठ्यक्रम में राजकुमारों की उत्तर तथा दक्षिण हिंदुस्थान की यात्राओं का आयोजन किया था। तद्नुसार नवम्बर १८९० ई. में उनकी उत्तर हिंदुस्थान की यात्रा नासिक से प्रारंभ हुई। वे नासिक के बाद बनारस, इलाहाबाद, कलकत्ता, दार्जिलिंग, आग्रा, फतेहपुर शिक्री, दिल्ली, जयपुर, अजमेर, मुंबई से होते हुए कोल्हापुर पहुँचे। कुल मिलाकर पांच हजार मीलों की इस यात्रा में उनके ज्ञान तथा अनुभव में बड़ी वृद्धि हुई।''[३८]

शाहू महाराज ने यात्रा के समय नासिक और बनारस तीर्थक्षेत्रों में धार्मिक काम करनेवालों द्वारा धर्म का बाजार देखा। यह देखकर वे बेचैन हुए। पश्चात् उन्होंने दक्षिण भारत की यात्रा की। श्रीलेंका में एक प्रसन्न मुद्रावाली विशाल बुद्ध रूप मूर्ति और बौद्ध भिक्खुओं को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। ब्राह्मण पंडित और बौद्ध भिक्खू के रहन-सहन में कितना बड़ा अंतर है इसे उन्होंने अनुभव किया।

सन् १८९३ ई. में शाहू महाराज अपने बंधु बापुसाहब और उनके सहाध्यायियों के साथ धारवाड़ से कोल्हापुर आये। तब भी उनकी शिक्षा और प्रशिक्षण जारी था। वे प्रत्यक्ष राजकारोबार एवं न्यायदान की शिक्षा ले रहे थे। उन्हें फ्रेजर साहब हिंदीकानूनसंहिता, राजकारोबार के तत्व आदि विषयों के ज्ञान से अवगत करा रहे थे। महत्वपूर्ण बात यह थी कि, ''फ्रेजर साहब के मार्गदर्शन में शाहू महारज ने अपने बंधु के साथ अपने राज्य की यात्रा प्रारंभ की। सह्याद्री के पहाड़ों-खाइयों से लेकर पूर्व की ऊपजाऊ काली मिट्टी के प्रदेश तक उन्होंने अपने राज्य के भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिति का अवलोकन किया। जिन प्रजाजनों पर वे शीघ्र ही

राज्य करनेवाले थे, उनकी अवस्था कैसी है, इसका उन्होंने अवलोकन किया। इस तरह कोल्हापुर के इतिहास का यह पहला राजा था।''[३९]

संक्षेप में, शाहू महाराज की यह यात्राएंमनोरंजन के लिए न होकर शिक्षा, प्रशिक्षण और प्रत्यक्ष ज्ञान से उन्हें अवगत कराने के लिए थी।

३.३.८ संस्कार :

संस्कार से समाज के हर व्यक्ति का विकास होता है। यह संस्कार उसे अपने माता-पिता, परिवारजन, आप्तस्वकीय, घराने की परंपरा तथा समाज से मिलते हैं। शाहू महाराज को अपने माता-पिता का साथ बहुत कम मिला था। केवल तीन वर्ष की आयु में वे मातृ सुख से वंचित हुए थे। अत: पितृ छाया में वे बड़े हुए।

शाहू का मन अत्यंत स्वस्थ तथा अंत:करण संवेदनशील था। बाल्यावस्था में मौन रहने से वे मितभाषी बन गये। पिता आबासाहब अपने इस बेटे का वर्णन विचारशील, आज्ञाधारक, उदारमन तथा संवेदनशीलअंत:करण का करते हैं तथा स्वस्थ स्वभाव का, सरल मन का, साधा, दिलदार, सत्यनिष्ठ और नि:स्वार्थी ऐसा वर्णन गुरुवर्य फ्रेजर साहब करते हैं।

आबासाहब घाटगे प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे। उन्होंने कागल में लड़कों और लड़कियों के लिए अलग-अलग से अंग्रेजी विद्यालयों की स्थापना की थी। साथ ही किसानों में पशुसंवर्धन तथा आधुनिक खेती करने की रुचि निर्माण हो, इसलिए जानवरों तथा खेतीमाल की प्रदर्शनी वे लगवाते थे। वेस्वयं भी एक उत्कृष्ट अखाड़ेबाज थे। कुश्ती और शिकार करना उनका शौक था। जब शाहू शिक्षा ग्रहण करने हेतु राजकोट गये थे, तब उन्होंने शाहू के साथ दो मल्ल तथा एक उस्ताद भेजने की व्यवस्था की थी। स्पष्ट है कि, ''शिक्षा विषयक प्रेम, किसानों के संबंध में आस्था, कुश्ती-शिकार खेलने की रुचि इन बातों के संस्कार अपने पिताश्री द्वारा महाराज पर बाल्यावस्था से ही हुए थे।''[४०]

अति मद्यसेवन के कारण आबासाहब घाटगे की युवावस्था में ही मृत्यु हुई थी। बारह साल के संस्कारक्षम आयु में शाहू के कोमल मन पर यह क्रूर आघात हुआ था। जिससे उन्होंने सीख लिया था कि, आबासाहब को निगलनेवाली और हमें अनाथ बनानेवाली शराब की एक बूंद नहीं लेंगे और शिवशंकर का स्मरण करते हुए मन ही मन शपथ ले ली कि, ''जिस मदिरा से मेरे पिता आबासाहाब की मौत हुई, जिस मदिरा ने मुझे अनाथ किया, उस शराब की एक बूंद को भी मैं जिंदगीभर स्पर्श नहीं करुंगा। जिंदगीभर शराब का तिरस्कार करता रहूंगा...।''[४१] साथ ही शराबी मित्रों की छाया से दूर रहुंगा।

शाहू महाराज के दत्तक विधान के समय कुल चार विधवा रानियों ताईसाहब, अहिल्याबाई, सकराबाई और आनंदीबाई राजमहल में थी। इन रानियों से बने राजपरिवार पर पुरातन रुढ़ि-परंपराओं तथा जातिधर्म का काफी वर्चस्व था। इसलिए जाति धर्मानुसार रहने की सीख रानियोंशाहू को देती थी। शाहू ने उन पर हुए इस कर्मठ संस्कारों का जिक्र अपने नासिक भाषण में किया था। ''हम पहले एकदम कान्झर्व्हेंटिव्ह अर्थात् पुराने मतों के कट्टर अभिमानी थे। हमारा मतऐसा रहता था कि जाति-पोंति का भेदभाव रहना चाहिए और उसका पालन भी होना चाहिए। हमें इस बात का ध्यान नहीं रहता था कि हमारे ऐसे दुराग्रह से हम अन्यों की उन्नति में रोडे अटकाते थे। दूसरी जाति के लोगों द्वारा आयोजित सभा में जाकर अध्यक्ष पर विराजित होने में अपना धर्म बाह्य आचरण समझते थे।''[४२]किंतुशाहू महाराज इस कर्मठ संस्कारों को तोड़कर जल्द ही बाहर आ जात हैं।

धार्मिक संस्कार भी शाहू महाराज पर हुए थे। इसका कारण था – शिवाजी तृतीय की रानी अहिल्याबाई का अत्यंत धार्मिक होना। साथ ही राजमहल में अन्य धार्मिक कार्य भी निरंतर चलते थे, जिसका प्रभाव बाल्यावस्था में शाहू पर हुआ। परिणाम स्वरूप शाहू महाराज आखिर तक मूर्तिपूजा करते रहे।

छत्रपति घराने के संस्कारशाहू महाराज पर हुए थे। इसका विवेचनात्मक वर्णन करना यहां आवश्यक है। शिवछत्रपति ने स्वराज्य की स्थापना की थी। ''ऐसे महान पुरुषों

के हम वारिस हैं, उनके पदस्पर्श से पवित्र हुई छत्रपति जी की राजगद्दी पर हम विराजित हुए हैं तो उनकी कीर्ति तथा विरासत कलेंकित हों जो ऐसा कोई बुरा कर्म अपने हाथ से न हों, इस बात का आत्मभान शाहू महाराज ने आखिर तक रखा था। छत्रपति घराने द्वारा उन पर हुआ यह सबसे महत्वपूर्णसंस्कार था।''[४३]

शाहू महाराज पर परिवारजनों के पश्चात् गुरुजनों के महत्वपूर्णसंस्कार हुए थे। फ्रेजर साहब ने पाठ्यक्रमों के विषयों की शिक्षा शाहू को तो दी थी, पर इसके अलावा अपना शिष्य एक आदर्श राज्यकर्ता कैसा होगा? इसके लिए काफी मेहनत की थी। ''गुरु ने भविष्य के राज्यकर्ता के रूप में महाराज का व्यक्तित्व सुसंस्कृत, व्यावहारिक चतुरता, दूरदृष्टि, अखंड सतर्कता, कर्तव्यनिष्ठा, न्यायप्रियता, संयम अनुशासन, विपत्तियों में भी अविचल रहने की प्रवृत्ति, उदारबुद्धि, देशकाल का सम्यक ज्ञान आदि अनेक गुणालंकारों से मंडित हो,इसलिए अथक परिश्रम लिए थे।''[४४]

संक्षेप में छत्रपति शाहू महाराज को सुयोग्य ऐसे संस्कार पिता, परिवारजन, गुरु और समाज के द्वारा मिले थे।

३.३.९ विवाह :

शाहू महाराज देखते-देखते सतरह साल के हो चुके थे। उनकी शक्ति दिन-ब-दिन अटूटता के साथ बढ़ रही थी। उनका वजन नब्बे किलो के आस-पास तथा ऊंचाईपांच फीट ग्यारह इंच हुई थी। ऐसे शाहू के लिए सुयोग्य वधू की खोज दो सालों से चल रही थी। वधू को पसंद करते समय उसकी उम्र, सुदृढ़ शारीरिक स्थिति, सौंदर्य, बुद्धिमत्ता, शिक्षा, परिवार-परंपराएवंसंस्कार आदि का पूर्णत: ध्यान रखकर पसंद करने का निर्देश था। साथ ही वधू सावंतवाड़ी, धार, बडौदरा, तंजावर और ग्वालियर क्षेत्र से हो यह भी निर्देश था। लड़की को देखने शाहू के अलावा चुने हुए लोग, जिसमें बुजुर्गों, नौकर-चाकरों, फोटोग्राफर आदि का समावेश था, जाते थे। ''धारवाड में शाहू राजा की शिक्षा चल रही थी, उसी समय १ अप्रैल, १८९१ ई. को उनका विवाह बडोदरा के गुणाजीराव खानविलकर की कन्या के साथ संपन्न हुआ। गुणाजीराव की इस कन्या का नाम

लक्ष्मीबाईथा। उनका जन्म १ जनवरी, १८८० ई. को जिस खानविलकर घराने में हुआ वह घराना मूलत: रत्नागिरी जिले का था। रत्नागिरी जिले के पांचगांवों की सरकारी आय की ठेकेदारी उस खानविलकर घराने के पास थी।''[४५]

विवाह के पश्चात् विल्यम ली वॉर्नर नामक अंग्रेज अधिकारी ने भारत छोड़ने से पहले शाहू को एक पत्र लिखा था। जिसमें उसने शाहू महारज को बताया था कि, ''शरीर और स्वास्थ्य को हानि पहुँचे बिना प्रसूति ठीक से हो ऐसी शारीरिक क्षमता आपकी पत्नी को जब तक प्राप्त नहीं होती, तब तक आप उनके साथ हम-बिस्तर न हों, ऐसी आपके पिता की तीव्र इच्छा थी। ऐसी बदनसीब बाल-माताओं की हृदय-द्रावक कथाएँ आपको अच्छी तरह मालूम हैं।... आपकी पत्नी के अल्पवयस्क होने पर उसके साथ शरीर-संबंध रखना न केवल उसके लिए खतरनाक है, बल्कि पैदा होने वाले बालक के लिए भी खतरनाक है। वैवाहिक जीवन का जी भर आनंद उठाने के लिए भगवान ने आपको आगे लंबी उम्र बख्शी है। तब भी भोग-लालसा से और अनावश्यक उतावलेपन से अपनी पत्नी का शारीरिक नुकसान करने में उसकी जान लेने में आपको कैसा आनंद, सुख-समाधान मिलेगा? आपकी पहली संतान अगर वह पुत्र हो तो वह आपकी गद्दी का वारिस और भविष्यकालीन राजा होगा। आपके पूर्वज, आपका कीर्तिशाली घराना और आपके प्रजाजन आपसे ऐसी चाह रखते हैं कि छत्रपति की गद्दी के लिए आरोग्य संपन्न वारिस प्राप्त हो।''[४६]

गुरवर्य फ्रेजर साहब ने भी शाहू महाराज को इस संबंध में सलाह देकर उनसे वचन माँगा था। ''आप की महारानी चौदह साल की होने से पहले यानी १८९४ के पहले आप उनसे शरीर-संबंध नहीं रखेंगे। ऐसा वचन मुझे दीजिए।''[४७] और महाराज ने गुरु को वचन दिया था कि, महारानी लक्ष्मीबाई जब तक चौदह साल की नहीं होती, उन्हें मैं स्पर्श नहीं करुंगा। स्पष्ट है कि यह सलाह और वचन महारानी लक्ष्मीबाई के स्वास्थ के लिए, निरोगी संतति के लिए और लंबी उम्र के लिए था।

शाहू महाराज ने महारानी लक्ष्मीबाई के अतिरिक्त बाबलीबाई, तानीबाई और लच्छीबाई आदि उपपत्नीयों का स्वीकार किया था। इन्हें स्वीकार करने का कारण था, महारानी लक्ष्मीबाई का शरीर स्वस्थ ठीक न रहना। डॉ. टेंगशे ने इसी कारण से शाहू महाराज को दूसरे विवाह की सूचना दी थी। यह सूचना राज्यकारोबार करते समय शरीर स्वस्थ रहे, उस पर लैंगिक दुष्परिणाम न हो इसके लिए थी। शाहू महाराज ने इसी शरीरधर्म का पालनकरने के लिए बाबलीबाई, तानीबाई और लच्छीबाई का उपपत्नी के रूप में स्वीकार किया था। यह तीनों उपपत्नीयों एक ही समय नहीं थी। एक की मृत्यु के बाद दूसरी और दूसरी की मृत्यु के बाद तीसरी इस क्रम से वे उनके साथ रहे थे।

३.३.१० राज्यारोहण :

राज्यारोहण के कुछ पहले की बात है, जब शाहू महाराज अपने राज्य की यात्रा कर रहे थे। प्रजा के साथ निकट राजा थे। कोल्हापुर के इतिहास में ऐसा करनेवाले शाहू पहले राजा थे। कोल्हापुर रियासत की प्रजा भी पचास वर्षों के पश्चात् अपने राजा के इस रूप को प्रत्यक्षदेख रही थी। ''शाहू महाराज का राज्यारोहण गव्हर्नर लॉर्ड हॅरिस की उपस्थिति में २ अप्रैल, १८९४ में आयोजित विशेष दरबार में हुआ। नवीन राजा ने करवीर राज्य के अधिकार सूत्रों को संभाल लिया। विगत अनेक दशक कोल्हापुर की प्रजा इसी बात की प्रतीक्षा कर रही थी।''[४८]

इस घटना से समस्त मराठी प्रदेश आनेंदित हो उठा। केसरी के सेंपादक लोकमान्य तिलक इसके वर्णन में लिखते हैं, ''यह दिन समस्त महाराष्ट्र के लिए तो आनंददायी है ही, परंतु कोल्हापुर की प्रजा के लिए तो यह एक अपूर्व दुर्लभ सुयोग है।''[४९]

राज्यारोहण के कुछ समय पश्चात् राज्य की प्रजा ऐसी परिस्थिति का अनुभव करने लगी थी कि, छत्रपति शाहू केवल नाम के राजा है। क्योंकि प्रत्यक्ष कारोबार रियासत के बाहरी लोगों के हाथ में था। सभी प्रमुख पदों पर युरोपियन तथा पारसी लोग विराजित हुए थे। ''रियासत के एक्झु. इंजिनिअर थे शेनोंन, दरबार के सर्जन थे सिंक्लेअर, राजाराम

कालेज के प्रिन्सिपॉल थे केंन्डी, शिक्षा विभाग की लेडी सुपरिटेंडेंट थी मिस लिटल, अल्बर्ट एडवर्ड अस्पताल में स्टेट मिडवाईफ थी सारा साईक्स सब युरापियन्स थे। पारसियों में से दीवान (प्रबंधक) थे मेहरजी तारापूरवाला तो पुलिस प्रमुख थे दोराबजी पालान जी। शेष सभी राजस्व के स्थानों पर थे ब्राह्मण। ये सभी पोलिटिकल एजंटसाहब के हुक्म के आदी थे। अब उनके लिए छत्रपति के आदेश का पालन करना मुश्किल हुआ था।''[५०]

अंग्रेज अधिकारी स्वयं को कोल्हापुर रियासत के सर्वाधिकारी समझते थे। छत्रपति के हाथ रियासत जाने से वे बेचैन थे। ऐसा ही एक अंग्रेज अधिकारी कर्नल विल्यम रे जो अत्यंत घमेंडी था, उसने शाहू महाराजा पर विष प्रयोग का आरोप लगाया। मुंबई सरकार ने अंग्रेज अधिकारी लाकर इसकी निष्पक्षता से जाँच करवाई। जिसमें शाहू ने अपने आपको निरापराध सिद्ध किया। इस पूरे मामले में महाराजा को बहुत बड़ी मानसिक पीड़ा से गुजरना पड़ा।

स्पष्ट है कोल्हापुर की राजगद्दी शाहू के लिए गुलाब पुष्पों का बिछौना नहीं था। फिर भी उन्होंने अपना सही राजपद निर्माण किया। साथ ही गुरु की सलाह सर आंखों पर लेकर उस दृष्टि से यानी ''कोल्हापुर राज्य के आप मालिक हैं, प्रारंभ से ही इस बात को हर एक के मन में बैठा दीजिए तथा आपकी अच्छाई का फायदा नौकरों को मत उठाने दीजिए।''[५१] इस दृष्टि से धीरे-धीरे आत्मविश्वासपूर्ण मार्गक्रमण करते हुए उन्होंने अपने पद के प्रभाव को वृद्धिंगत किया। तीन-चार साल के पश्चात् युरोपियन और पारसियों का एक के बाद एक पतन होता गया। जिससे महाराजा को आगे का मार्गक्रमण करने में और अधिक सुलभता निर्माण हुई। उन्होंने तुरंत बाद पहला राजप्रतिनिधि मंडल खारीज कर प्रशासन मंडल की नियुक्ति की। प्रशासन मंडल में दीवान सबनीस, भास्करराव विठोजी जाधव और दाजीराव अमृत विचारे आदि उच्च शिक्षित तथा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण सुविद्य लोगों को लिया। इन बुद्धिमानी लोगों के कारण शाहू महाराज को प्रशाासन चलाने में काफी सुविधा निर्माण हुई।

३.३.११ ईश्वर से प्रार्थना :

शाहू महाराज का राज्यारोहण संपन्न हुआ। अब उनसे अपेक्षा थी कि वे प्रजा के लिए कुछ करें। प्रजा भी उनसे यही अपेक्षा लगाए बैठी थी। इसका कारण था शाहू का शिवछत्रपति के वंशज होना। जिस तरह शिवछत्रपति ने स्वराज्य स्थापना में अपनी कीर्ति स्थापित की थी, प्रजा कल्याण हेतु अनेक कार्य किये थे। उसी तरह के कार्य निष्काम भाव-बुद्धि से, काया, वाचा, मन से शाहू महाराज करें। उनके कल्याण हेतु राज्यकारोबार करें। उनके दैन्य को तथा दरिद्रता को दूर करे ऐसी अपेक्षा कोल्हापुर प्रजा की शाहू महाराज से थी। स्वाभाविक रूप से शाहू ने भी अपने पहले ही घोषणापत्र में प्रजा के सुख तथा कल्याण के ध्येय को स्पष्ट किया। साथ ही इसके लिए ईश्वर से प्रार्थना की, ''हमारी ऐसी उत्कट इच्छा है कि हमारी सारी प्रजा हमेशा तृप्त होकर सुखचैन से रहें, उसके कल्याण में वृद्धि होती रहें और हमारी रियासत का हर तरह से निरंतरउत्कर्ष होता रहें। हमारी आकांक्षा है कि हमारा यह हेतु परिपूर्ण करने के लिए हमारे सभी छोटे-बड़े जागीरदार, रिश्तेदार, सरदार, इनामदार, कामगार, व्यापारी आदि के साथ सारी प्रजा शुद्ध मन से तथा गहरी राजनिष्ठा से हमारी सहायता करेंगे। हमारा कार्यकाल दीर्घजीवि कर सफल बनाया जाए, ऐसी मैं एकाग्रता से उस जगन्नियेंता की प्रार्थना करता हूँ।''[५२]

स्पष्ट है कि शाहू महाराज अपने परिवार की तथा स्वयं की सुख, शांति तथा कल्याण के लिए ईश्वर की प्रार्थना नहीं करते, वे अपनी प्रजा सुखचैन से, आनंद से रहें इसके लिए प्रार्थना करते हैं।शाहू महाराज राज्यारोहण के पश्चात् रजवाडे की विलासिता में लीन नहीं हुए। उनहोंने अपने राज्य का भ्रमण किया। ''दाजीपुर पन्हाला के दुर्गम प्रदेशों से लेकर शिरोल तहसील की नरसोबावाडी तक अपने प्रजाजनों से मिलते, उनसे बातचीत करते, उनका सुख-दुःख समझते, अथक कष्ट लेते हुए दिखाई देते थे। उन्हें रैयत की दरिद्रता, दुःख, वेदना, अज्ञान तथा अंधश्रद्धा पग-पग पर दिखाई देती थी। उनके मन में यही प्रश्न उठ खडा होता था कि इस बात के लिए कौनसी तथा कैसी योजना बनाई जाए।''[५३]

शाहू महाराज प्रजाहित तथा रक्षा के लिए रात-दिन काम करते थे। सदा उन्हीं की चिंता में व्यग्र रहते थे। उन्होनें इसका जिक्र अपने मित्र को लिखे पत्र में किया था। ''हम पन्हाला के राजमहल का उपयोग केवल सोने के लिए करते हैं। अन्य सारा समय हम कार्यालय में काम करने में बीताते हैं। हम सुबह के समय इस बात पर ध्यान देते हैं कि शहर में प्लेग निर्मूलन कार्य कैसा चल रहा है। कुछ दिन पूर्व हम ग्रामीण क्षेत्र के धान को स्वयं परखने के लिए घोडे की सवारी से चालीस मैलअंदर गए थे। उसके लिए हमने एक ही घोडा लिया था तथा घंटे में तीन मैल जाते थे। सवारी से गुजरते पूछताछ करते थे। इसी कारण हम बहुत थके हुए हैं।''[५४]

संक्षेप में शाहू महाराज के समान प्रजाहितकारी राजा जो प्रजा के कल्याण हेतु दिन-रात, हर-समय मेहनत करता है, राजमहल का उपयोग केवल सोने के लिए करता है तथा प्रजा की सेवा ही ईश्वर की सेवा समझता है।ऐसा राजा कोल्हापुर रियासत में न इसके पहले हुआ था और न इसके बाद अब-तक हुआ है।

३.३.१२ उपाधियाँ :

छत्रपति शाहू महाराज को अपने कार्य के गौरव हेतु विविध उपाधियाँ से सम्मानित किया गया था। वह उपाधियाँ थीं –

१. महाराजा – अंग्रेज सरकार के द्वारा
२. राजर्षि - कुर्मि क्षत्रिय परिषद (उत्तर प्रदेश) के द्वारा
३. लोकराजा – प्रजा के द्वारा
४. एल.एल.डी. – विश्वविख्यात केंब्रिज विश्वविद्यालय इंग्लैंड के द्वारा
५. जी.सी.एस. आय. - सम्राज्ञी विक्टोरिया द्वारा
६. रैयत का राजा – प्रजा के द्वारा
७. एम.ई.ओ.सी. – ब्रिटीश सरकार के द्वारा
८. अखिल भारतीय ब्राह्मणेत्तरों का अत्यंत महान नेता – मद्रास के ब्राह्मणेत्तर के द्वारा

९. दीनदलितों का उद्धरकर्ता - मद्रास के ब्राह्मणेत्तर के द्वारा

१०. जनतंत्रवादियों में जनतंत्रवादी – मद्रास के ब्राह्मणेत्तर के द्वारा

११. The Piller of Social democracy (सामाजिक लोकतंत्र का आधार स्तंभ), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के द्वारा

३.३.१३ मृत्यु :

छत्रपति शाहू महाराज कोल्हापुर रियासत के एक बड़े आधार स्तंभ थे। किंतु दुर्भाग्यवश यह आधार स्तंभ केवल अड़तालीस वर्ष टिक सका। शारीरिक स्वास्थ्य का उचित साथ न मिलने से उनकी मृत्यु हुई। उन्हें शरीर का साथ न मिलने के कारण एक नहीं अनेक थे। लाडले सुपुत्र प्रिन्स शिवाजी की दुर्घटना में हुई मृत्यु, उनके जीने का आनंद खत्म कर गई। एक ओर बहुजनों के हितों की चिंता उन्हें सताती थी तो दूसरी ओर सिर्फ बारह वर्ष की उम्र में पति-सुख से हमेशा के लिए वंचित हुई अपनी बहु की जिंदगी कैसी कटेगी? उसे धीरज कैसे बंधाया जाए? आदि अनेकानेक प्रश्न उन्हें सताते थे। पुत्र शिवाजी की मृत्यु का असहाय दु:ख वे भूलने की कोशिश कर ही रहे थे तभी भावनगर के मित्र भावसिंह महाराज की अचानक मृत्यु हुई, जिसने उन्हें और अधिक अस्वस्थ कर दिया। इसका जिक्र शाहू महाराज ने बंबई के राज्यपाल सर जॉर्ज लॉइड और उनकी पत्नी के स्वागत पश्चात् दिए भावातुर भाषण में किया था। ''मेरे युवा पुत्र की मृत्यु हुए एक वर्ष भी नहीं हुआ तभी मुझ पर दुख का दूसरा यह महाघात हुआ है। यह दूसरा दुख असीम है, अटल है।''[५५]

शाहू महाराज ने कई दुखों का सामनाकरते हुए अपने कार्य को डॉक्टरों, मित्रों, परिवारों और नजदीकी रिश्तेदारों के विरोध के पश्चात् जारी रखा था। अप्रैल में वे सयाजीराव गायकवाड की नातिन लक्ष्मीबाई के विवाह में उपस्थित रहे थे। एक मई को बडोदरा में हाथी के साथ लडने का खेल उन्होंने देखा और उद्मत्त हाथी से घोडे स्वार की जान बचाई। इसका परिणाम उनके शरीर पर हुआ। जिससे उनका स्वास्थ्य बिगड गया। दूसरे दिन स्वास्थ्य ठीक न होने के पश्चात् भी उन्होंने शिकार का भरपुर

आनंदलिया। तीन मई को शाहू बडोदरा से बंबई आए। दूसरे दिन छाती में हुई असहाय वेदनाओं को उन्होंने सहन किया। ''बंबई की खेतवाडी का पन्हाला लॉज शाहू छत्रपति का निवास स्थान था। स्वास्थ्य ठीक न होने की खबर पाकर डॉ. शिरगांवकर, डॉ. देशमुख और डॉ. ट्रेकर ने शाहू छत्रपति को जोंचा-परखा। डॉ. ट्रेकर हृदयरोग तज्ञ थे। उन्होंने छत्रपति की गंभीर बीमारी का स्वरूप स्पष्ट किया। शाहू छत्रपति को मालूम हो चुका था कि उनका अंतकाल समीप आ चुका है। दीवान सबनीस को इच्छापत्र लेकर तुरंत आने का तार कोल्हापुर भेजा गया।''[५६]

शाहू छत्रपति के सीने में असीम वेदना हो रही थी। मृत्यु सामने मुंह फाडे खड़ी थी। इसी स्थिति में महाराज ने प्रबोधनकार ठाकरे को मिलने बुलाया और उन्हें सातारा का इतिहास लिखने को कहा। पांच मई की काली अंधीयारी रात में छत्रपति शाहू महाराज बता रहे थे कि उनकी छाती में ऐसा दर्द है, जैसे कोई भाले चुभा रहा हो। उसी समय एकाएक शय्या पर लेटे-लेटे उनकी आंखों के सामने आबासाहब की मृत्यु, गुरु फ्रेजर, एक विशाल हरा स्वप्न, राधानगरी, लक्ष्मी जलाशय, मजबूत भालू से हुई लढ़ाई, तिलक की मृत्यु, दृढ़निश्चयी राजाराम, साहसी मर्दानी राजकन्या आक्कासाहेब और अचानक लुप्त हुआ लाडला प्रिन्स शिवाजी आदि पूरा का पूरा जीवनपट सामने आ गया। ''पन्हाला लॉज में उस समय उनके साथ उनके छोटे भाई बापूसाहब, जो उनके साथ जीवनभर रहे, वे तो थे ही; साथ ही जिनसे अपनी कन्या के समान प्रेम किया वे इंदुमति रानीसाहिबा, बाबासाहब खानविलकर आदि रिश्तेदार भी थे। छह मई का वह सबेरा! पलंग पर लेटे हुए छत्रपति यकायक उठ बैठे और बोले, 'मैं जाने के लिए तैयार हूँ। डर कुछ नहीं। सबको सलाम बोलो।' ये शब्द उनके मुंह से बाहर निकलते-निकलते ही उन्होंने सामने के सिरहाने परअपना सिर रखा वह फिर कभी ऊपर उठाने के लिए नहीं! इस तरह शाहू छत्रपति ने बड़े धैर्य के साथ इस दुनिया से हमेशा-हमेशा के लिए विदा ली। उस समय सुबह के पांच पचपन का समय था। ६ मई, १९२२ ई.।''[५७]

युवराज राजाराम, बापूसाहब महाराजा, इंदुमति रानी साहिबा, बाबासाहब खानविलकर आदि रिश्तेदारों के बीचमहाराज शाहू ने अपनी ओखे हमेशा-हमेशा के लिए बंद कर ली। पश्चात्शाहू महाराज का कलेवर बंबई से पुणे, सातारा होते हुए कोल्हापुर लाया गया और सात मई की सुबह पांच बजे महाराजा का शव पंचगंगा नदी के तट पर लाकर चंदन की चिता पर रखकर अग्नि दी गई। जवानों ने अपने महाराज को अडतालीस तोफों की अंतिम सलामी दी। ''लोगों के दुख की कोई सीमा नहीं रही। पितृछत्र खोए जाने की भावना उनके मन में घर कर बैठी थी। उन्हें ऐसा महसूस होने लगा मानो वे निराधार हो गए हों। पंचगंगा नदी के किनारे शमशान भूमि पर शिवाजी वैदिक स्कूल के छात्रों द्वारा अंत्येष्टि संस्कार करवा लिए गए। ७ मई, १९२२ ई. को कुछ ही घंटे पहले राजकारोबार की बागडोर हाथ में लिये हुए राजाराम छत्रपति ने अपने पिता की मृतदेह को अग्नि दी। उस समय सूर्य का उदय हो रहा था। परंतु उसी समय लाखों बहुजनों, दलितों, दुर्बलों के जीवन में सूर्यास्त होकर सब कुछ अंधकारमय हो गया।''[५८]

संक्षेप में, लोकराजा, रैयत का राजा, दीन दलितों का उद्धारकर्ता राजर्षिशाहू अपने विचारों, कार्यों को जनता के लिए छोड़कर अनंत में विलीन हो गये।

३.३.१४ शाहू महाराज के चरित्र की विशेषताएँः

३.३.१४.१ स्पष्टवादिता :

स्पष्टवादिता शाहू महाराज के चरित्र की एक विशेषता रही है। किसी बात को निःसंकोच और स्पष्ट शब्दों में कहना या बताना ही स्पष्टवादिता है। शाहू महाराज को इंग्लैंड में राज्यारोहण समारोह के लिए जाना था। जब वे दीवान सबनीस से कहते हैं, ''हम राज्यारोहण समारोह के लिए जा तो रहे हैं; किंतु आपको अंग्रेज शासन को एक बात बता देनी चाहिए कि, भारत के अन्य संस्थान है उनसे हमारे रियासत का स्थान अलग है। हम शिवछत्रपति के प्रत्यक्ष वंशज है। राज्यारोहण समारोह में अंग्रेजों ने हमें

अग्रमान देना चाहिए।''[५९]यहांशाहू महाराज की स्पष्टवादिता सिद्ध होती है। वे अपनी बात को अंग्रेज शासन के सामने रखने में बिलकुल संकोच नहीं करते हैं।

शाहू महाराज ब्राह्मण, मराठा, जैन, कुणबी, महार, माँग आदि सभी लोगों के राजा थे। किंतु एक दिन मराठों का एक मंडल महाराज को आकर कहता है कि, आप जैन छात्रावास के लिए जो जगह दे रहे हैं वह यदि मराठा छात्रावास के लिए देते तो अच्छा होता। जैन छात्रावास के लिए इतनी जगह की क्या आवश्यकता है? आप मराठा छत्रपति है, हम मराठा प्रजा। इसलिए आपको मराठा के लिए कुछ अधिक करना चाहिए। तब शाहू महाराज ने उस शिष्टमंडल को स्पष्टता के साथ उत्तर दिया था। ''यह देखिए नेताओं, आप मराठों की नेतागिरी करते हो तो करो, किंतु हम केवल मराठों के छत्रपति नहीं है। सभी के छत्रपति है। सभी प्रजा हमारी है... हमें ऐसा करके नहीं चलेगा। हमने जो जगह दी है उसी पर माणिकचंद सेठ इमारत खडी करनेवाले हैं, खुद के खर्च से... तब उनका खर्च हमसे बड़ा होगा... आप वैसा कुछ करेंगे तो बताईए?''[६०]

संक्षेप में इन संदर्भों के माध्यम से शाहू महाराज के चरित्र की स्पष्टवादिता सामने आती है।

३.३.१४.२ न्यायप्रियता :

राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज एक न्यायप्रिय राजा थे। न्यायप्रियता उनके चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषता थी। सरकारी अश्वशाला का अश्वपालक गेंगाराम भूख से व्याकुल होकर मराठों के पानी के हौज को स्पर्श करता है। यह देख मराठे क्रोधित होते हैं। एक महार ने हौज से पानी निकालकर पानी को भ्रष्ट कर दिया। यह समझकर गंगाराम को मराठों के लोग गाली-गलोच करते हैं। उस पर चोरी का आरोप लगाते है और बहुत पीटते हैं। चोरी का आरोप इसलिए लगाते है, क्योंकि उन्हें पता था शाहू महाराज दलित हितैषी है। यह घटना जब हुई तब शाहू महाराज दिल्ली में थे। उनके आने के पश्चात् गंगाराम अपने अस्पृश्य बंधुओं के साथ सोनलती पहुँचता है। घटित घटना का सारा वृत्तांत महाराज को सुनाता है और अपनी रक्त से रंजित पीठ दिखाकर उनसे न्याय की माँग करता है।

शाहूइस घटना को सुनकर अस्वस्थ हुए, दुखी हुए। ''उन्होंने जिन लोगों ने गंगाराम को पीटा था उन्हें अस्पृश्य लोगों के सामने बुला लिया। हाथ में घोड़े की छड़ी ली तथा उन सभी की पीठ पर बहुत मारा। उन्होंने यह मराठा है, अपना नजदीकी संबंधी,ऐसा अंतर नहीं किया।''[६१]

संक्षेप में शाहू महाराज की न्यायप्रियता किस प्रकार की थी, इस घटना से समझ में आती है।

३.३.१४.३संवेदनशीलता :

संवेदनशीलता का मतलब है – भावूकता, सहृदयता या भावप्रधानता। शाहू महाराज संवेदनशील व्यक्ति थे। किसी के दुख को देखकर उनके मन को वेदनाएँ होती थी। अस्पृश्यों पर होते अन्याय-अत्याचार को देखकर वे अस्वस्थ होते थे। तिलक ने वेदोक्त प्रकरण के कारण उन पर कई आरोप लगाए, किंतु जब उनकी मृत्यु की खबर महाराज ने सुनी तो उन्हें काफी दुख हुआ। ''दोपहर के भोजन का समय था। शाहू महाराज के सामने खाने की थाली आयी। उन्होंने निवाला उठाया। तभी सबनीस ने उनको तिलक का निधन होने की वार्ता सुनायी। शाहू महाराज ने थाली को दूर किया और वे उठ खड़े हुए। तिलक की मृत्यु का दुख उनके चेहरे पर साफ दिखाई दे रहा था।''[६२]

संक्षेप में दूसरों के दुख को देखकर अथवा सुनकर दुखी होनेवाले संवेदनशील राजा शाहू महाराज थे।

३.३.१४.४ कार्यक्षमता :

कार्यक्षम होने की अवस्था, गुण या भाव शाहू महाराज के चरित्र की एक विशेषता थी। उन्हें सतत अपने काम में व्यस्त रहना अत्यंतपसंद था। साथ ही किसी कार्य को किस तरीके से संपन्न करा लेना है, इसकी योग्यता उनमें थी। वे खुद की परवाह किये बिना बीमारी के बाद भी काम करते थे। एक बार उनके दाए हाथ को कुत्ते ने काटा था। तबीयत ठीक न थी, ''फिर भी काम शुरु था। टायपिंग मशिन पर खुद एक हाथ से टायपिंग

करने का उनका प्रयास जारी था। बेंबई राज्यपाल के कार्यवाह क्लोंड हिल्ल को भेजनेवाले पत्र का लिखीत विवरण वे अपने बाए हाथ से सावधानी के साथ टाईप कर रहे थे...''[६३]

३.३.१४.५ नि:स्वार्थता :

शाहू महाराज के चरित्र की यह एक विशेषता रही थी कि, वे मन के बिलकुल साफ थे। नि:स्वार्थता उनके स्वभाव का महत्वपूर्ण गुण था। वेएक दिलदार व्यक्ति थे। घमंड या अहं की उनमें गुंजाईश न थी। दीन-दुर्बलों के प्रति उनके हृदय में असीम प्रेम और सहानुभूति थी। इसी वजह से वे अपने जीवन के अंतिम क्षण तक उन्हीं के लिए नि:स्वार्थता के साथ काम करते रहें। गुरुवर्य फ्रेजर साहब एक शैक्षिक प्रगति पुस्तक में शाहू महाराज में स्थापित इन गुणों को बड़े गर्व से लिखते हैं कि, ''शाहू राजा स्वभाव के निर्दोष, मन के सरल, दिलदार और सत्यनिष्ठ हैं। अपना ही कहा सत्य ऐसा कहने वाले वे दुराग्रही नहीं हैं। उनके स्वभाव की नि:स्वार्थता और विचारशीलता के जो उदाहरण मैंने स्वयं देखे हैं उसके आधार पर में कह सकता हूं कि वे जैसे दिखते हैं, वैसे ही सुस्वभावी भी हैं।''[६४]

शाहू महाराज मराठा थे। इसलिए उन्होंने केवल मराठा और कुणबी समाज के लिए कार्य किया ऐसा नहीं, तो उन्होंने नि:स्वार्थता के साथ सभी महार, मांग, जैन, मुस्लिम, मराठा, कुणबी आदि समाज के लिए अपना योगदान दिया था। मुस्लिमों, जैनों, मराठों तथा इतर समाज के लिए शिक्षा का प्रबंध किया था। छात्रावासों का निर्माण किया था। दलितों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की थी। अन्य पिछड़ी जाति के शिक्षित लोगों को डॉक्टर, तलाठी, शिक्षक के रूप में नियुक्त किया था। गंगाराम कांबले को व्यवसाय करने हेतु प्रोत्साहित किया था। ऐसे असाधारण कार्य केवल और केवल एक नि:स्वार्थी व्यक्ति ही कर सकता है, जो शाहू महाराज ने बडी योग्यता के साथ किये थे।

३.३.१४.६ पारदर्शिता :

जन हितैषी का आधार स्तभ पारदर्शिता है। यही पारदर्शिता शाहू महाराज के चरित्र में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। रियासत का राजकारोबार करते समय इसका उन्होंने योग्य प्रकार से ध्यान रखा था। उन्हें भ्रष्टाचारी, अहम्वादी, कपटी लोगों से अत्यंत घृणा थी। इसलिए वे इन लोगों को राजकारोबार से निकालते हैं। उनकी जगह सुज्ञ और मेधावी लोगों की नियुक्ति करते हैं। ''चीफ इंजिनियर पद पर दाजीराव अमृतराव विचारे की नियुक्ति होने से सलाहगार मंडल में बहुत हलचल मच गयी।''[६५]

शाहू महाराज की पारदर्शक दृष्टि से कुछ छिप पाना असंभव था। वे दलितों के हितचिंतक थे। उन्होंने दलितों के उद्धार हेतु अपना बहुत-सा योगदान दिया था। किंतु अब उन्हें दलित नेता की तलाश थी जो दलितों के प्रश्न छुड़ाने की दूरदृष्टि हो। ऐसे व्यक्ति का शाहू महाराज की पारदर्शक नजर से बच पाना असंभव था। डॉ. आंबेडकर दलित थे, अध्ययनशील थे तथा विलायत से उन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी। यह व्यक्ति भविष्य में दलितों का ही नहीं, देशका बडा नेता होगा, ऐसा विश्वास शाहू महाराज को था। ''क्योंकि भीमराव आंबेडकर यह उद्धार की भाषा नहीं बोलते, दलितों की जागृति की भाषा बोलते हैं। दलितों को शिक्षित और जागने को कहते है, जो नेता अपने लोगों को जागृत करता है, वह बड़ा होता है। क्योंकि कुछ देकर किसी के प्रश्न खत्म नहीं होते। स्वयं के प्रश्न छुडवाने की शक्ति निर्माण करनी पड़ती है। यह शक्ति दलितों में आंबेडकर निर्माण कर सकते हैं इसलिए भीमराव आंबेडकर दलितों के सच्चे नेता हैं।''[६६]

इस प्रकार शाहू महाराज पारदर्शकता के साथ शासन करते हुए दिखाई देते हैं और पारदर्शक दृष्टि से सुयोग्य लोगों की खोज भी।

३.३.१४.७ निडरता :

निडरता शाहू महाराज के व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण विशेषता थी। वे अपनी किसी भी बात को निडरता के साथ करते थे। राजकोट में शिक्षा लेते समय फ्रेजर साहब ने अभ्यास काएक विस्तृत विवरण तैयार किया था। जिसमें प्रतिदिन आठ-आठ घेंटे उन्हें अध्ययन करना पड़ता । जिससे वे नीरस हो जाते। इसलिए एक दिन निडर होकर गुरुवर्य

फ्रेजर से वे पूछ ही लेते हैं कि, ''सर सुबह साडे पांच बजे से रात साडे दस बजे तक हमें रोक रखनेवाला कार्यक्रम आपने क्यों तैयार किया? हम ऊब जाते हैं। विश्राम करने को नहीं मिलता।''[६७] स्पष्ट है इस बात को अपने गुरु से करना आसान काम नहीं था, पर महाराज की निडरता उसे आसान बनाती है।

शाहू छत्रपति अंग्रेंजों से निडर थे। राज्यारोहण के पश्चात् उन्होंने अंग्रेजों के साथ मिलकर राजकारोबार किया था। एक बार उन्हें सातवें एडवर्ड के राज्यारोहण समारोह के लिए इंग्लैंड जाना था। उनके रहने का प्रबंधअंग्रेज सरकार ने क्लोंड हिल को सौंपा। वहां वे तीन सप्ताह रहनेवाले थे। जाने से पहले शाहू महाराज निडर होकर क्लॉड हिल को पत्र लिखते हैं औरअपने रहने और काम के सिलसिले में कुछ महत्वपूर्णसूचनाएँ देते हैं। ''मेरा प्रबंध करते समय ध्यान रखा जाए कि रात के समय मुझे कोई काम न करना पड़े, क्योंकि रात के समय जागने की हमें आदत नहीं है। खेती-बाड़ी, जानवरों, मुर्गी-बतखों की पैदाईश, दूध और दूध से बनी हुई चीजें आदि के साथ खेती से संबंधित व्यवसाय जहाँ छोटे-बड़े पैमाने पर चल रहे हों ऐसा एकाध स्थान देखूं, ऐसी मेरी इच्छा है। इससे संबंधित कार्यक्रम मेरे वहां आने पर अवश्य ही करवाएं।''[६८]यहांशाहू महाराज की निडरता स्पष्ट रूप में दिखाई देती है।

संक्षेप में निडर व्यक्तित्व के धनी शाहू महाराज थे। उनकी यह निडरता अंग्रेजों से भी थी और शिकार खेलते समय भी। शिकार खेलना उनका शौक रहा था। आमने-सामने मर्दानगी अंदाज में शिकार करना उनहें पसंद था। वे कहते शिकार के लिए मर्दानगी आवश्यक है, क्योंकि खरगोश जैसे हृदयवाला शिकार नहीं कर सकता।

३.३.१४.८संयमी :

संयम चरित्र की एक विशेषता है। यही संयमशाहू महारज में था। वेदोक्त कांड में ब्राह्मणों से उन्होंने जो संयम दिखाया वह अद्वितीय था। तिलक का ब्राह्मणों को समर्थन करके शाहू के विरुद्ध जाना, अंग्रेजों की कुटनीति, केसरी के अग्रलेख में उन पर किया गया स्वराज्यद्रोही छत्रपति का आरोप आदि विविध घटनाओं के बावजूद उन्होंने अपना

संयम नहीं खोया। इस संयमता का जिक्र वासुदेव तोफखाने करते हैं कि, ''महाराज अनेक सालों से मेरे सघन परिचित रहे हैं। फिर भी मेरे निदर्शन में कभी नहीं आया कि अत्यंत क्रोधित मन:स्थिति में भी महाराज का संयम टूटा है।''[६९]

३.३.१४.९ आदरभाव :

आदरभावशाहू महाराज के चरित्र की एक विशेषता रही है। दूसरों का आदर करना, सम्मान करना, इज्जत करना उनका स्वभाव था। उन्होंने कोल्हापुर रियासत पर एकछत्र शासन किया, पर किसी अधिकारी का, प्रजा का अनादर नहीं किया। ''अपने अधिकारियों से आदर के साथ बोलना राजा का स्वभाव था। नौकर हो तो भी जिसकी जो योगयता वह उन्होंने पूरी तरह से जानी थी।''[७०]

आदरभाव किस प्रकार का होनी चाहिए इसी का आदर्शशाहू छत्रपति थे।

३.३.१४.१० दृढ़ता :

दृढ़ता शाहू महाराज के व्यक्तित्व में सबसे अधिक थी। वेदोक्त प्रकरण के कारण उन पर चहु ओर से आलोचना हो रही थी किंतु इस परिस्थिति में भी वे अपने विचारों पर अड़िग थे। साथ ही उन्होंने अपने रियासत का कारोबार करनेवालों को भी चुप रहने का आदेश दिया था। ''वेदोक्त प्रकरण में ब्राह्मणों द्वारा कितनी भी मनमानी क्यों न हो और वृत्तपत्रों में कितना भी विष क्यों न उबाला जाय, तब भी आपको चुप रहना है...।''[७१]

इसका मतलब यह नहीं कि वे इस प्रकरण से डर गये थे। बल्कि उन्हें इस प्रकरण को अपने तरीके से दृढ़ निश्चयता के साथ सुलझाना था। उन्हें इस लड़ाई को किसी भी हालत में जीतना था। पीछे हटना उनका उद्देश्य कतई नहीं था।

संक्षेप में शाहू महाराज के चरित्र की एक नहीं अनेकविशेषताएँ हैं। इन विशेषताओं के अलावा चतुरता, कुशलता, देशप्रेमी, निपुणता, आदर्शवादिता, शुरवीरता, स्पष्टवक्ता तथा त्याग की भावना आदि अनेक विशेषताएँशाहू महाराज केचरित्र में हमें दिखाई देती हैं।

३.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का चरित्र-चित्रण :

३.४.१ डॉ. भीमराव आंबेडकर का जन्म :

ऐसा कहा जाता है कि महाराष्ट्र के लिए दलितों ने भी योगदान दिया है। महाराष्ट्र में कुछ समय के पश्चात इन्हीं दलितों को राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक गुलामी का शिकार होना पड़ा। इस गुलामी की यातना सबसे ज्यादा कोंकण के महारों को भुगतनी पड़ी। ऐसा ही एक परिवार रामजी सकपाल का था, वे सेना में थे। उन्हें सन् १८९० तक तेरह संतानें हुई। इसके बाद उन्हें जो पुत्र हुआ वह चौदहवा रत्न तथा विश्वरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के रूप में। उनका जन्म ''जब रामजी सुबेदार की फौजी टुकडी मध्यप्रदेश में स्थित महू की छावनी में थी, तब १४ अप्रैल १८९१ को भीमाबाई को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। उस नवजात शिशु का नाम भीम रखा गया। परिवारजन उसे 'भीवा' कहकर पुकारा करते थे।''[७२] अपनी माता के नाम से ही उनका नाम 'भीवा' रखा गया। जिसे बाद में सारा संसार भीमराव के नाम से जानने लगा। यही डॉ. भीमराव आंबेडकर बाद में अस्पृश्यों के उद्धारक, समाजसुधारक, संविधान के निर्माता तथा गरीब-शोषित पीड़ित जनता के मसीहा साबित हुए।

३.४.२ बचपन :

जब भीम ढाई-तीन वर्ष का था तब उसके पिता फौज से सेवानिवृत्त हुए। कुछ समय महू में बिताने पर रामजी अपना परिवार लेकर रत्नागिरी तहसील के कापदापोली गांव मे रहने आये। भीमा के पिता रामजी कबीरपंथी थे। वे रोज सुबह-शाम पूजा-अर्चना, भजन, अभंग और दोहों का पाठ किया करते थे। लेकिन इन सारी बातों में भीमा को कभी विशेष रूचि नहीं आयी। खेलना-झगड़ना इन्हीं बातों में भीमा को मजा आता। बचपन में भीमा बहुत शरारती था। ''पास के वटवृक्ष पर रोज ही 'सूर पारंब्या' का खेल खेलने और झगड़े मोल लेने, मारपीट करने, उधम मचाने और बखेड़े खड़े करने के मारे, घर के लोगों को भी भीम के इन झमेलों को सुलझाते-सुलझाते मुसीबत हो जाती

थी।''[७३] इन बातों से स्पष्ट होता है कि भीम बचपन में अन्य बच्चों की भांति मस्ती करता था।

रामजी अपने बेटे भीमा को बहुत प्रेम करते थे। वे उसपर कभी गुस्सा तक नहीं होते थे। भीम उनका लाड़ला था। लेकिन माता उस पर गुस्सा होती थी। माँ ने मारने के बाद भीमा पिता रामजी से उनकी शिकायत करते। भीम बचपन से ही जिद्दी लड़का था। ''भीमा स्कूल जाने लगा, लेकिन कुछ पढ़ने की अपेक्षा उसका खेल-कूद की तरफ ही अधिक ध्यान होता! सारे बच्चों के साथ वह खेल नहीं पाता, ऐसे समय वह उस खेल को देखने में ही मश्गुल होता! गली के बच्चों के साथ खेलने के लिए स्कूल की छुट्टी कब होगी, इसके लिए वह आतुर रहता।''[७४] स्कूल की पढ़ाई में उसका मन लगता ही नहीं था वह बच्चों की तरह इधर-उधर भटकता तथा मस्ती करते रहता। भीम स्वभाव से स्वतंत्र, धैर्यशील, निर्भिक तथा शरारती और जिद्दी था। इसी दौरान भीम जब पांच साल के थे, तभी उनकी माता भीमाबाई का सरदर्द के कारण स्वर्गवास हो गया। इन हालात में भीमा को बुआ मीराबाई ने खूब स्नेह के साथ संभाला। उनके पिता रामजी ने दूसरी शादी की थी। सौतेली माँ ने जब भीम कीमाँ (बय) के गहने पहने तो भीमा गुस्सा हो गये।

भीम स्कूल जाते लेकिन पढ़ाई की तरफ उनका ध्यान कम ही रहता। एक दिन स्कूल जाते हुए आवाज दी। तब उस बच्चे ने भीम से कहा कि, ''तू मुझे छू मत! यदि मेरी माँ को मालूम हो गया कि तूने मुझे छू लिया है तो इस भयेंकर सर्दी में मुझे वह न केवल नहलाएगी बल्कि पीटेगी भी। तू दूर ही रह।''[७५] इस व्यवहार को देखकर भीमा के बाल मन में यह सवाल पैदा हो रहा था कि ऐसा हम जैसे महार जाति के लड़कों के साथ ही क्यों होता है? मुझ में ऐसी कौन-सी बात है जो द्वेष करने लायक है। इतना ही नहीं एक बार उन्हें गाड़ीवान ने उनकी जात पता चलने पर गाडी से उतार दिया था। ऐसे अनेक बिकट प्रसंग उनकी जिंदगी में आये, जिससे वे भविष्य में मुक्ति पाना चाहते थे।

३.४.३परिवार :

डॉ. आंबेडकर का परिवार अपने पुरखों से लेकर पिता तक फौज में सेवारत था। वे मूलत: रत्नागिरी जिले के खेड़ तहसील के अंतर्गत आनेवाले 'आंबावडे' इस छोटे से गांव के निवासी थे। मालोजीराव सकपाल यह उस गांव के वतनदार महार थे। लेकिन वह कभी उस गांव में अधिक दिनों तक नहीं रहे। वे कंपनी की फौज में अपनी सेवा करते थे। यही मालोजीराव सकपाल भीमराव आंबेडकर के पितामह थे। इन्हें तीन लड़के और एक लड़की थी, जिसका नाम मीराबाई था। रामजी मालोजी आंबेडकर उनके पिता तथा भीमाबाई उनकी जननी माता थी। डॉ. भीमराव आंबेडकर को १३ भाई-बहन थे। परंतु कुछ बिमारियों की वजह से चल बसे। उनके परिवार की जानकारी हम निम्न प्रकार से विस्तृत रूप में ले सकते हैं –

३.४.४ पितामह :

डॉ. भीमराव आंबेडकर के पितामह का नाम मालोजी सकपाल था। जो रत्नागिरी के अंबावडे नामक एक गांव में रहते थे। युवावस्था को प्राप्त करते ही इन्होंने कंपनी सरकार के फौज में सेवारत होने का निर्णय लिया। तब से वे अपने इस अंबावडे गांव से फौज में होने के कारण दूर ही रहते थे। पहले 'महार' जाति के लोगों के नाम देवी-देवताओं के नाम पर होते, किंतु लिखित रूप में उसका उपयोग नहीं किया जाता था। उस नाम का भ्रष्ट रूप एवं उसके आगे 'नाक' यह शब्द प्रयोग किया जाता। मालोजीराव का नाम फौज में तथा सरकार दफ्तर में मालनाक ऐसा लिखा गया। महार लोगों के उपनाम दफ्तर में लिखे नहीं जाते थे। मालोजी का सकपाल यह उपनाम दफ्तर में दर्ज ही नहीं था। ''मालोजीराव को चार अपत्य हुए – तीन लड़के एवं एक लड़की। दो भाईयों के बाद बहन ने जन्म लिया उसक नाम था – मीराबाई। यह जन्म से ही अपाहिज थी। उसके बाद रामजी का जन्म हुआ। यही चरित्रनायक के पिताजी थे। इनका जन्म १८४८ के आसपास हुआ होगा।''[७६] इस तरह हम देख सकते हैं कि मालोजीराव कंपनी की फौज में होने के कारण उन्हें अपने मूल गांव में रहने के लिए वक्त ही नहीं मिला। इसलिए उन पर कभी वतनदारी तथा खेतीबाड़ी के काम करने की नौबत ही नहीं आयी।

३.४.५ माता-पिता :

मालोजीराव सकपाल को तीन बेटे थे, उसमें से एक रामजी थे जो डॉ. भीमराव आंबेडकर के पिता थे। सही मायने में यह वह समय था, जब अछूतों के प्रति किसी भी प्रकार की आत्मीयता किसी के मन में नहीं थी। ''सड़कों की सफाई, सिर पर मैला ढोना, मृत जानवरों की चमड़ी निकालना इसी प्रकार के काम करके उन्हें अपने अस्तित्व को बनायें रखना पड़ता था। ऐसी स्थिति में स्कूल और शिक्षा की कल्पना तक संभव नहीं थी।''[७७] रामजी के सौभाग्य से उन्हें शिक्षा की सुविधायें प्राप्त हुई थी। उनके पिताजी जब सेना में थे, तब कंपनी सरकारने सेनाओं की छावनियों में स्कूल शुरु किये थे। इस स्कूलों में सैनिकों के बच्चों को अनिवार्य रूप से शिक्षा दी जाती थी। इसके अलावा सैनिकों को भी शिक्षा दी जाती थी। ऐसी ही एक छावनी के स्कूल में रामजी ने पढ़ाई की।

रामजी सकपाल उद्यमी, महत्वाकांक्षी और स्वतंत्र वृत्ति के इंसान थे। वे क्रिकेट, फूटबॉल आदि खेलों के क्षेत्र में प्रवीण थे। रामजी की उद्यमशीलता, कर्तव्यतत्परता और क्रीडा प्रवीणता देखकर एक सेनाधिकारी का उनसे स्नेहबंदा हो गया। उसने रामजी की सिफारिश करके उन्हें पुणे के पंतोजी स्कूल में अध्यापक बनने के लिए मदद की। ''पुणे के पंतोजी स्कूल की परीक्षा में उत्तीण होकर रामजी अध्यापक बने और धीरे-धीरे फौजी छावनी के स्कूल के प्रधान अध्यापक भी हो गए। उन्होंने प्रधानाध्यापक का कार्य लगभग चौदह साल तक किया। उनकी इस सेवा की कद्र करते हुए उन्हें सुबेदार-मेजर के ओहदे तक पदोन्नति प्राप्त हुई।''[७८] इस उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि उनकी अध्यापन कला अवश्य सराहनीय होगी। शिक्षा का महत्व ज्ञात होने के कारण उन्हें शिक्षा के प्रति बड़ा लगाव और प्रेम था। उन्होंने खुद की कर्तव्यपरायणता से यह सिद्ध किया कि व्यावसायिक स्वतंत्रता प्राप्त होने पर महार भी अध्यापक हो सकता है। ''रामजी मालोजी सकपाल जब सेना में भरती हो गये तब संयोग से उनकी भेंट एक दिन सुबेदार धर्मा मुरबाडकर से हो गयी। मुरबाडकर भी कोंकण के ही थे। धर्मा मुरबाडकर की भीमा नामक लड़की थी। वे वर की खोज में थे। रामजी सकपाल के व्यक्तित्व से वे प्रभावित हुए। परंतु

मुरबाडकर सुबेदार मेजर और रामजी मामूली सैनिक। मुरबाडकर की आर्थिक स्थिति सकपाल की तुलना में बहुत संपन्न थी, परंतु मुरबाडकर ने किसी की नहीं सुनी और रिश्ता पक्का हो गया। १८६५ में धर्मा मुरबाडकर की लड़की भीमाबाई के साथ रामजी सकपाल का विवाह हो गया। इस समय रामजी की आयु थी बीस और भीमाबाई की आयु थी तेरह।''[७९] इस प्रकार शादी के बाद इनकी पारिवारिक समस्यायें बढ़ती गयी, जो मूल रूप से आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण थी। लेकिन भीमाबाई व्यवहारकुशल होने के कारण वह उस स्थिति में भी रुखी-सूखी रोटी में भी खुश रहती थी।

रामजी को पुणे शहर में शिक्षण-प्रशिक्षण केंद्र में शिक्षक का काम करते समय बहुत कम वेतन मिलता था। उसमें से कुछ ही वे भीमाबाई को मुंबई भिजवा सकते थे। इस कारण भीमाबाई को अभावग्रस्त स्थिति में दिन बिताने पड़े। इतना ही नहीं उन्होंने कई बार मजदूरी करके घर चलाया। रामजी और भीमाबाई को कुल मिलाकर चौदह संतानें थी। भीमराव अपनी माता को 'बय' कहकर बुलाया करते। रामजी को सातारा में नौकरी मिलने के कारण वे पूरे परिवार के साथ सातारा में जाकर बसनेवाले थे। लेकिन उससे पहले बहुत दिनों से भीमाबाई को सरदर्द की पीड़ा थी। इसी बीच रामजी और भीमाबाई परिवार के साथ सातारा आकर बसे। कुछ दिनों के बाद रामजी को नौकरी के कारण सातारा से बाहर जाना पड़ा। इन्हीं परिस्थितियों के बीच ''भीमा की तबियत दिन-ब-दिन बिगड़ रही थी। १८९६ में अचानक उनका देहांत हुआ। इस समय बाबासाहब आंबेडकर की आयु केवल पांच वर्ष की थी।''[८०] इस तरह बचपन में ही भीमराव का मातृत्व छिन गया था। ऐसे दु:ख के माँके पर सभी मानसिक रूप से बीमार पड़े थे। इन हालातों में भीमराव को उनकी बुआ मीराबाई ने प्यार और ममता का सहारा दिया।

भीमाबाई की असमय मृत्यु के कारण रामजी हताश हो चुके थे। घर की जिम्मेदारी तथा बच्चों की देखभाल के कारण वे दूसरे विवाह के बारे में सोच रहे थे। यह बात बहन मीराबाई को पसंद नहीं आयी। लेकिन तमाम स्थितियों को देखते हुए रामजी ने पुनर्विवाह करने का निश्चय कर लिया और वे मुंबई आये। ''उनकी पलटन के एक जमादार पेन्शनर

मुंबई में रहते थे। उनका उपनाम शिरकावले था। उनकी जिजाबाई नामक विधवा बहन थी। सुबेदारने जिजाबाई के संग पुनर्विवाह किया और उन्हें लेकर सातारा आये।''[८१] इस बात का पता भीमराव को चला तो वे अपनी माँ के गहने क्यों पहने? ऐसा कहकर रोने लगा। तब भीमराव बच्चे ही थे। इस तरह हम देख सकते हैं कि भीमराव आंबेडकर की सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक स्थिति ठीक न होकर भी उनके पिता ने उन्हें पढ़ाने में अपनी जी-जान लगा दी।

३.४.६ चाचा और बुआ :

मालोजी सकपाल के तीन बेटे और एक बेटी थी, जिसका नाम था – मीराबाई। रामजी को दो भाई थे, जिसमें से एक ने संन्यास लेकर गुसाई का रूप धारण किया था। वह गुसाई परिवार तथा सांसारिक मोह से दूर चला गया। एक दिन वह गुसाईबंधु भीमराव मालोजी को नदी किनारे अचानक से मिले। भीमाबाई ने उन्हें घर बुलाकर उनका यथोचित आदर सत्कार किया। तब भीमराव का जन्म भी नहीं हुआ था। गुसाईबंधु ने रामजी को कहा कि आपको किर्तीमान स्थापित करनेवाला पुत्र होगा। उसके एक साल पश्चात भीमराव का जन्म हुआ। रामजी के दूसरे भाई के बारे में वे कहां गये? क्या किया? इस बात की कोई जानकारी नहीं मिलती। मीराबाईअपाहिज होने के कारण अपने भाई रामजी के घर ही रहती थी। मीराबाई और भीमाबाई की जोड़ी खूब जमती थी। दोनों में काफी प्रेम और लगाव था। भीमाबाई के देहांत के बाद भीमा की देखभाल तथा घर की पूजा-अर्चना की जिम्मेदारी उन्होंने बखूबी निभाई। ''मीरा बुआ ने घर की पूजा-अर्चना-भजन की दोनों समय की प्रथा शुरु रखी थी। रामजी के मुंह से सुने संस्कृत श्लोक, अभंग, कबीर के दोहे जैसे याद आते वैसे वह बोलती। बच्चे भी उन्हें अच्छा साथ देते थे। भीवा तो मीरा बुआ का शब्द कभी नहीं ठुकराते । इसलिए वह भजन के लिए भाई-बहनों के संग न चूकते हुए हाजीर रहता; लेकिन उसका ध्यान भजन की अपेक्षा भजन खत्म होने के पश्चात मिलनेवाले प्रसाद की ओर अधिक होता।''[८२] इस तरह हमें देखने को मिलता है कि भीमराव को उनकी बुआ मीराबाई ने खूब प्यार दिया तथा उनका अच्छे से ख्याल भी

रखा। अत: हमें ध्यान में आता है कि रामजी को दो भाई होने के बावजूद उनके साथ अधिक संबंध था ही नहीं। लेकिन रामजी की बहन तथा भीमराव की बुआ मीराबाई ने हमेशा उन्हें पारिवारिक दु:खों को झेलने में काफी मदद की।

३.४.७ भाई-बहन :

रामजी और भीमाबाई इस दांम्पत्य को सन् १८९१ तक चौदह संतानें हुई। भीमराव उनके अंतिम अपत्य थे। इसलिए भीमराव अपने-आपको चौदहवों रत्न कहते है, इस बात से हम सब परिचित हैं। चौदह संतानों के बारें में हम जान ले तो - ''उनमें से बालाराम, गंगा, रमाबाई, आनंदराव, मंजुला, तुलसा जीवित रहे। शेष संतानें बचपन में ही मर गयी।''[८३] इससे हमें ज्ञात होता है कि डॉ. भीमराव आंबेडकर को लेकर कुल चौदह संतानों में से कुछ एक-दो साल के थे, तभी उनका निधन हुआ और कुछ बहुत ही कम उम्र में चल बसे। अंतत: तीन बेटे एवं चार बेटियों मिलाकर सात भाई-बहनों का इतिहास हमें देखने को मिलता है।

भीमराव के सबसे बड़े भाई थे – बालाराम। प्रथमत: बालाराम बैंड मास्टर के रूप में सेना में और बाद में सातारा के पुलिस दल में नौकरी में थे। इसलिए उन्हें अपने परिवार को लेकर अलग रहना पड़ा। दूसरे बड़े भाईआनंदराव ने भीम के लिए बहुत कष्ट उठाये। इतना ही नहीं उन्होंने भीमराव के लिए कपड़ों से लेकर पढ़ाई के खर्च तक मदद की। आनंदराव को भी नौकरी मिलने पर पिता रामजी सुबेदार ने उनकी भी शादी कर दी। उसके बाद - ''गंगा, रमाबाई, मंजुला व तुलसा इन चार लड़कियों का भी सही समय विवाह हुआ। गंगा की शादी लाखावडेकर परिवार में हुई। रमाबाई की शादी मावलनकर परिवार में हुई। लाखावडेकर तथा मावलनकर दोनों ही परिवार फौज की पलटन में थे। मावलनकर सेना के बैंड फोर्स में थे। आगे चलकर वे हवालदार के रूप में निवृत्त हुये। सेवानिवृत्त होने पर भी वे जी.आय.पी. के आंक्झिलियरी फोर्स में बैंड-मास्टर थे। मंजुला का विवाह येसू रामजी पंदीरकर के साथ हुआ। पंदीरकर २२वीं पलटन में थे। तुलसाबाई का विवाह धर्मा कांतेकर के साथ हुआ। धर्माजी १०९ वीं पलटन में थे।''[८४] उपर्युक्त

बातों से स्पष्ट होता है कि रामजी ने अपने बेटियों के विवाह फौजी के साथ ही गठित किये। भीमराव को जब कभी किताब तथा पढ़ाई के लिए पैसे न होते, तो भीमराव के पिता इन्हीं भीमराव की बहनों के जेवर गिरवी रखकर पढ़ाई का खर्चा चलाते। बहने भी प्रेम से अपने गहने देती। इस तरह का प्रेम और लगाव इन भाई-बहनों के बीच था।

३.४.८ वैवाहिक जीवन :

भीमराव के बडे भाई बालाराम, आनंदराव तथा चारों बहनों का विवाह होने के पश्चात भीमराव का विवाह भी कर दिया जाय और अगर भीम को पढ़ना है, तो वह विवाह के बाद भी पढाईजारी रख सकता है। ऐसा सोचकर भीमराव के पिता रामजी ने भीम के लिए लड़कियों देखना प्रारंभ कर दिया। इसी बीच ''एल्फिॅस्टन हाईस्कूल में पढ़ते समय ही उसके पिता रामजी सुबेदार ने भीवा की शादी भिकू वलंगकर की पुत्री रमाबाई के साथ संपन्न की। विवाह के समय रमा की उम्र ९-१० साल थी और भीवा १७ साल का था।''[८५] इस तरह से रमाबाई के साथ भीमराव का विवाह संपन्न हुआ। रमाबाई का मायके का नाम रामीबाई था। उनके पिता भिकू वलेंगकर पलटन में नहीं थे। वे दापोली में मजदूरी करके अपना परिवार चलाते थे। बचपन में ही रमाबाई की माँ चल बसी। कुछ दिनों बाद पिता का भी निधन हो गया। इसलिए रमाबाई तथा उनकी बहन गांवबाई और भाईशंकर छोटे होने के कारण उनका लालन-पालन चाचा और मामा ने किया। विवाह के पश्चात भीमराव ने आगे की शिक्षा हेतु एल्फिस्टन महाविद्यालय में प्रवेश लिया। उन्हें इस पढ़ाई के लिए बडौदा के नरेश सयाजीराव गायकवाड की ओर से प्रतिमाह २५ रुपये छात्रवृत्ति मिलती थी। भीमराव के पिता रामजी शिक्षा का महत्व समझते थे। इसलिए उन्होंने भीमराव को उच्च शिक्षा के लिए प्रोत्साहन दिया। साथ ही भीमराव की पत्नी रमाबाई ने भी इस कार्य में कभी बाधा न डालकर भीमराव के लक्ष्य को अपना लक्ष्य मानकर उनका कंधे-से-कंधा मिलाकर साथ निभाया।

डॉ. भीमराव आंबेडकर जब एक महाविद्यालय में नौकरी करते थे, तब उन्हें बहुत कम मासिक वेतन मिलता था। इन स्थितियों में वे स्वयं कम खर्चे अपना निर्वाह कर कुछ

रकम पत्नी रमाबाई को भेजते थे। ऐसी बिकट परिस्थितियों में भी रमाबाई ने कभी उनसे शिकायत नहीं की। रमाबाई स्वभाव से ही कम बोलनेवाली, दृढ निश्चयी और स्वाभिमानी महिला थी। उन्होंने अपने वैवाहिक जीवन के शुरुआती दौर में काफी बुरे हालात औरआपदाओं का सामना किया था। इस मुसीबत में भी उन्होंने अपने मत की शांति और घर की व्यवस्था को बनाए रखा। इतना ही नहीं, ''जब उनके पति विदेश में थे, उन दिनों उन्होंने अपनी विधवा भौजाई और उसके बेटे को कभी अपने से अलग नहीं होने दिया। उन्होंने अपनी तकलिफों और मुसीबत में कभी उफ तक नहीं की। यहां तक कि किसी के लिए उन्होंने कभी कठोर बात तक नहीं कहीं।''[८६] इस बात से हमें रमाबाई के व्यक्तित्व का परिचय दखेने को मिलता है। जब डॉ. आंबेडकर अमेरिका गये थे, उस समय रमाबाई गर्भवती थी। उनकी कोख से जिस संतान ने जन्म लिया, उसका नाम गंगाधर था। किंतु वह ज्यादा दिन जीवित न रह सका, जल्द ही वह परलोक सिधार गया। उनकी केवल एक ही संतान शेष थी – यशवंत। इसलिए भीमराव और रमाबाई को हमेशा अपने बेटे की तबीयत के बारे में चिंता रहती थी।

भीमराव आंबेडकर ने अपनी पत्नी रमाबाई के निधन के बाद अपना जीवन ही समाज के लिए अर्पण किया। इस भागदौड भरी जिंदगी का उनके व्यक्तिगत जीवन पर बुरा असर पड़ा। जिससे उन्हें शुगर, ब्लड प्रेशर तथा मज्जातंतू की बीमारी भी हुई। इन बीमारियों से वे काफी आहत थे। उनकी सेवा तथा सुश्रुषा करने के लिए और उन्हें इन्सुलीन देने के लिए तथा उनके खान-पान की जिम्मेदारी के लिए एक महिला का साथ होना जरुरी बन गया था। इसलिए डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने एक सारस्वत ब्राह्मण महिला डॉ. कु. शारदा कबीर से १५ अप्रैल १९४८ में अपने दिल्ली स्थित 'हार्डिज अँव्हिन्यु' निवासस्थान पर विवाह किया। विवाह के पश्चात डॉ. शारदा कबीर का नाम बदलकर डॉ. सविता आंबेडकर रखा गया। डॉ. सविता ने बाबासाहब की छत्रछाया बनकर उनकी जीवनभर सेवा की। अपने दूसरे विवाह को लेकर बाबासाहब ने स्पष्ट किया कि, ''पहली पत्नी के निधन के उपरांत दुबारा विवाह न करने का निर्धार मैंने किया था। परंतु आजकल मेरी तबीयत ठीक न होने के कारण दूसरा विवाह करने का निर्णय मैंने लिया

है। जो सुगृहिणी होकर वैद्यकशास्त्र में निपुण है, ऐसी ही पत्नी की मुझे आवश्यकता है। दलित समाज में ऐसी स्त्री मिलना असभंव है, इसलिए मैंने एक सारस्वत ब्राह्मण महिला को चुना है।''[८७] इस तरह बाबासाहब ने अपनी बात साफ-साफ रखी। इसके बाद वे फिर से सामाजिक कार्य के लिए जुट गये। अनेक महान कार्य बाबासाहब ने बाद में किये।

३.४.९डॉ. भीमराव आंबेडकर का शैक्षिक जीवन

३.४.९.१प्रारंभिक शिक्षा :

भीमराव के पिता रामजी शिक्षा को लेकर बहुत दक्ष थे। रामजी जब सातारा आकर बस गये, तभी उन्होंने भीमराव को फौजी छावनी के स्कूल में प्रवेशित किया। इसी दौरान उनकी माता भीमाबाई का देहांत हो गया। स्कूल के अन्य बच्चों के साथ जान-पहचान होने के बाद भीमराव उन्हीं के साथ मटरगश्ती करते, मार-पीट करते। लेकिन यह झगड़े कभी उनके घर तक नहीं पहुँचे। ''अपने चुलबुले एवं दंगाखोर लेकिन होशियार तथा तेज तर्रार स्वभाव के कारण और दिलफेक बातों की निपुणता से भिवा ने अपने शिक्षकों का प्रेम संपादन किया।''[८८] इस उदाहरण से हमारे समझ में आता है कि भीमराव शिक्षा के प्रारंभिक दौर में अन्य बच्चों की तरह साधारण विद्यार्थी थे।

कँम्प स्कूल में होते हुए भीमराव को अध्ययन तथा पढ़ाई नाम की बात ही पता नहीं थी। कक्षा में जितना पढ़ाया जाता उतनी ही पढ़ाई भीमराव करते थे। घर आने पर अपना स्कूल बैग वे किसी कोने में फेंक देते। इन्हीं दिनों उन्हें आंबेडकर नाम के एक शिक्षक ने भीमराव का आंबावडेकर यह उपनाम संयुक्तिक न लगने के कारण अपने नाम की तरह ही आंबेडकर कर दिया और यही नाम आगे चलकर उपयोग में लाया जाय ऐसा कहते हुए उन्होंने स्कूल के दफ्तर में भी यह नाम दर्ज किया। इसी समय जब आंबेडकर स्कूल जाते तो उन्हें समाज द्वारा अस्पृश्य कहकर अपमानीत किया गया। इस वजह से उनके मन में प्रारंभिक शिक्षा के समय ही प्रश्न खड़ा होने लगा कि ऐसा मेरे साथ क्यों हो रहा है? इन बातों को लेकर वे सोचते रहते।

३.४.९.२ हायस्कूल शिक्षा :

अस्पृश्य जाति में जन्म लेकर भीमराव दिन-ब-दिन पढ़ते जा रहे थे और साथ ही साथ हर कक्षा में पास भी हो रहे थे। यह बहुत ही गौरव की बात थी। इस समय भीमराव सरकारी एल्फिॅस्टन हायस्कूल में पढ़ रहे थे। मुंबई के डबक चाल में वे रहते थे। उन्हें पढ़ाई के लिए न अलग कमरा था, न ही बिजली की व्यवस्था थी। इन हालातों में वे लालटेन की रोशनी में पढ़ाई करते थे। ऐसी मुश्किल परिस्थितियों के बीच वे कभी हारे नहीं, बल्कि पढ़ाई के प्रति उनका जज्बा बढ़ता ही जा रहा था।

भीमराव अब मैट्रिक में प्रवेश कर चुके थे। इस कारण उन्हें अधिकाधिक मेहनत करने की आवश्यकता थी। अब उनके स्वभाव में थोड़ा बदलाव नजर आ रहा था। उनका जिद्दीपन, उतावलापन और शरारतीपन कम होने लगा था। पाठ्यक्रम के अलावा वे अन्य किताबें अधिक पढ़ा करते थे। पिताजी की उत्तेजना और कुछ उदार मतवादी लोगों की सहानुभूति से अपना अध्ययन अच्छी मेहनत से कर भीमराव ने १९०७ में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। इस बात से भीमराव के पिता का आनंद परमोच्च शिखर पर था। भीमराव ने सफलता की एक सीढ़ी पार की यह देखकर उन्हें बहुत संतोष हुआ। उन दिनों मैट्रिक की परीक्षा बहुत कठीन मानी जाती थी। ''अस्पृश्य छात्रों में मैट्रिक की परीक्षा पास करनेवाला भीमराव पहला विद्यार्थी था। डबक की चाल के निवासियों ने उसका अभिनंदन करने के लिए एक समारोह का आयोजन किया था। इस सत्कार समारोह में केलुसकर गुरुजी ने मराठी में स्वरचित भगवान बुद्ध के आत्मचरित्र की पुस्तक भीवा को पुरस्कार के रूप में भेंट की।''[८९] इस तरह से भीमराव ने अपने पिता का सर गर्व से ऊंचा किया। केलुसकर गुरुजी ने भीमराव के भावी शिक्षा के लिए उनकी बडौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड से भेंट करवा दी तथा उनको गायकवाड की ओर से छात्रवृत्ति भी मंजूर करवा दी।

३.४.९.३ उच्चतम शिक्षा :

३ जनवरी १९०८ के दिन भीमराव को एल्फिस्टन कॉलेज में प्रवेश मिल गया। अब उसे अपनी जिम्मेदारी का एहसास होने लगा था। इन दिनों एल्फिॅस्टन कॉलेज में धनी और उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों की सेंख्या बहुत अधिक रहती थी। भीमराव ने अंग्रेजी और फ़ारसी पर अच्छी प्रवीणता हासील की थी। इस कारण फ़ारसी के उप-आचार्य के. वी. इरानी और अंग्रेजी के आचार्य प्रो. मूलर का भीमराव के प्रति इतना स्नेह था कि मूलर अपनी शर्ट तक भीमराव को देते थे। इतना होते हुए भी वे भीमराव के जीवन में नयी चेतना निर्माण न कर सके। ''जब भीमराव महाविद्यालय में पढ़ते थे तब वहों भी उन्हें पीने के लिए पानी नहीं मिल सकता था; इस इर्द-गिर्द के वातावरण से वे दु:खी होते थे। दलितों की दीनावस्था देखकर और उनकी करुणाजनक चीत्कार से उनका मन मर्माहत हो जाता था।''[९०] अपने अस्पृश्य होने का दर्द अब उन्हें समझने लगा था। इस महाविद्यालय के जीवन में योग्य मार्गदर्शन न मिलने पर भी उनका पठन एक विशिष्ट ध्येय से प्रेरित होकर चल रहा था। भावी जीवन में संघर्ष के लिए बुद्धि को, मन को समृद्ध और सामर्थ्यशाली बनानेवाले जो भी साधन थे, उन्हें प्राप्त करना मानों उन्होंने शुरु किया था।ऐसी विपरीत परिस्थितियों के बीच भीमराव सन् १९१२ में बी. ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

स्नातक होने के पश्चात भीमराव ने बडौदा रियासत में अपने पिताजी के मन के विरुद्ध नौकरी करने का निर्णय लिया। भीमराव बडौदा रियासत में नौकरी के लिए जाने के बाद उनके पिताजी को अस्वस्थ लगने लगा। वे बीमार पड़ गये। इस बात की खबर भीमराव को मिलते ही वे तुरेंत घर वापिस आये। उस वक्त पिताजी मृत्यु से जूझ रहे थे, भीमराव से मिलन के बाद उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। भीमराव ने अब अपने पैरों पर खड़ा होने का फैसला किया। इन दिनों कुछ विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका भेजने का निर्णय बडौदा नरेश ने किया। इस बात का पता चलते ही भीमराव ने उनसे भेंट की तथा उनकी अर्जी मंजूर हो गई। इस तरह आंबेडकर के ज्ञानयज्ञ का प्रारंभ अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में हुआ। ''हर रोज १८ घण्टे अनुपात में कुछ महीने

अध्ययन चलता रहा। आखिर दो वर्षों की निरंतर तपस्या के बाद सफलता ने उनके गले में माला पहनाई। प्राचीन भारत का व्यापार (एशंट इंडियन कॉमर्स) विषय पर उन्होंने सन् १९१५ में प्रबंध लिखकर एम. ए. की उपाधि प्राप्त की।''[९१] इस तरह सफलता मिलने के बाद उन्होंने 'भारत के राष्ट्रीय मुनाफे का बंटवारा एक ऐतिहासिक और विवेचनात्मक अध्ययन' (The National Divident of India : A Historical and Analytical Study) नामक प्रबंध से संबंधित उनका अध्ययन और विचार विमर्श उपर्युक्त प्रबंध के साथ ही चल रहा था। बहुत दिनों की कड़ी मेहनत के बाद यह कार्य उन्होंने पूर्ण किया। जून १९१६ में कोलंबिया विश्वविद्यालय ने उनके प्रबंध को स्वीकार किया। लेकिन कुछ कारणवश उन्हें यह पीएच.डी.उपाधि १९२७ में प्राप्त हुई।

अमेरिका से पीएच.डी. प्राप्त करने के बाद उन्हें पुस्तकें पढ़ने का तथा इकट्ठा करने का शौक हो गया था। अमेरिका में रहते हुए अध्ययन, मनन और चिंतन के कारण उनकी दृष्टि विशाल हो गई। अब वे अगली शिक्षा के लिए लंदन जाना चाह रहे थे। कानून और अर्थशास्त्र का अध्ययन करने हेतु उन्होंने बडौदा नरेश से छात्रवृत्ति मंजूर करवा ली थी। १९१६ में वे लंदनपहुँचे और 'लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स एण्ड पॉलीटिकल साइंस' में प्रवेश लिया। लेकिन छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त होने के कारण उन्हें वापिस भारत लौटना पड़ा। सन् १९२० में वे दुबारा लंदनपहुँचे। यहां पढ़ाई करते हुए भी वे भारत में चल रहे विभिन्न आंदोलनों की जानकारी लेते रहते तथा अपने साथियों को बराबर मार्गदर्शन करते थे। ''अक्तूबर १९२२ में 'दि प्राब्लेम ऑफ दि रूपी' विषय पर प्रबंध लिखकर उन्होंने डी.एस्सी. उपाधि प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत किया। इस तरह उन्होंने ढाई साल में ही एम.एस्सी. और डी.एस्सी. दोनों ही उपाधियाँ प्राप्त कर ली। इन दिनों वे यह चाहते थे कि बैरिस्टरी की परीक्षा भी दे दे, मगर उस साल वे यह परीक्षा नहीं दे पाये। वे अप्रैल और मई महीने में जर्मनी हो आए। फिर एक बार बौन विश्वविद्यालय जाकर तीन माह तक संस्कृत का अभ्यास करते रहे।''[९२] इस प्रकार हम देखते हैं कि अब डॉ. बाबासाहब आंबेडकर अमेरिका से पीएच.डी., लंदन से डी.एस्सी.

और बैरिस्टर की उपाधियाँ प्राप्त कर चुके थे। वे अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र और विधिशास्त्र में अपना अधिकार जमा चुके थे। इस तरह उन्होंने विपरीत स्थितियों में प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च तथा विदेशी शिक्षा हासिल करने का सफर तय किया।

३.४.१०डॉ. भीमराव आंबेडकर पर प्रभाव :

भीमराव ने बचपन से अस्पृश्य होने का दु:ख सहन किया। ऐसी पीड़ा अस्पृश्यों को पुन: न हो इसके लिए वे जीवनभर प्रयासरत रहे। अपनी हायस्कूल की शिक्षा के दौरान उन्होंने भगवान बुद्ध का चरित्र पढ़ा। म. फुले ने ब्राह्मणेत्तर और अस्पृश्य लोगों की शिक्षा और सामाजिक समता के लिए जो विद्रोह किया, उसका उनके मन पर काफी गहरा प्रभाव पड़ा। इस बात से प्रेरित होकर उन्होंने समाज के इस तबके को दु:ख से दूर करने का निश्चय किया। इसलिए वे म. फुले तथा भगवान बुद्ध को आदर्श मानने लगे ताकि वे उनके दिखायें मार्ग पर चल सके।

मुंबई के एल्फिंस्टन कॉलेज के संकोचपूर्ण वातावरण से वे उच्च शिक्षा के लिए कोलेंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क गये। अमेरिका में उनके विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जॉन ड्यूई, जेम्स शाटवेल, एडविन सेलिग्मन, फ्रेंकलिन, गोल्डन वेझर के विचार उन्होंने सुने थे। ऐसे महान विद्वानों के बीच उन्हें प्रगतिशील तथा व्यापक विचारों की दीक्षा मिलना स्वाभाविक ही था। अत: हम इस बात को नकार नहीं सकते कि, ''जॉन ड्यूई के विचारों की छाप उनकी अनेक पुस्तकों में दृष्टिगोचर होती है। वे कक्षा में अध्यापन करते समय भी जॉन ड्यूई की शैली का अनुकरण करते थे।''[९३]डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने 'अनहिलेशन आफ कास्ट' जात-पात तोड़ने के विषय पर लिखी गयी अपनी किताब में स्पष्ट रूप से लिखा कि जॉन ड्यूई मेरे अध्यापक थे। मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा है। इस प्रकार डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के विचारों पर तथा उन पर प्रगतिशील विचारों की छाप तथा प्रभाव दिखाई देता है।

३.४.११ भीमराव आंबेडकर की चारित्रिकविशेषताएँ :

३.४.११.१ अध्ययनशील :

भीमराव बचपन में बहुत जिद्दी और शरारती थे। परंतु धीरे-धीरे वे अपने इस स्वभाव से अलग करने की कोशिश कर रहे थे। अस्पृश्य होने के कारण उन्हें कई बार स्कूल में सवर्ण बच्चों ने अपमानीत किया। इसलिए अब वे पढ़ाई की ओर अधिक ध्यान देने लगे। इतना ही नहीं वे हर कक्षा में पास भी हो रहे थे। सातारा से मुंबई में आने के बाद उनके अध्ययन में गति आ चुकी थी। अब वे खेल के बजाय पढ़ाई में अधिक ध्यान देने लगे। रेल किराया का खर्च बचाकर भीमराव ने उन पैसे से नयी-पुरानी किताबें खरीद ली थी। स्वयं पढ़ने के बाद वे वह किताबें अपने साथियों को भी पढ़ने के लिए देते थे। इन किताबों की महत्वपूर्ण बातों को वे लिखा करते थे। भीमराव स्कूल तथा कक्षा की किताबों को छोड़कर अन्य किताबें खूब पढ़ा करते थे। किताबें पढ़ना अब उनका शौक बन गया था।

भीमराव हमेशा एक बात सोचते कि अधिकाधिक अध्ययन के लिए अपने पास एक स्वयं का ग्रंथालय होना चाहिए। उन्होंने बाद में पढ़ाई के दोरान इतनी किताबें खरीदी की उनका एक छोटा-सा ग्रंथालय बन गया। अध्ययन के प्रति उनकी उत्कटता बढ़ने के बाद उनके विचारों की कक्षायें भी विशाल होती गयी। ''पुस्तकों के लिए वे अपने पिताजी से जिद्द करते। एकाध अच्छी पुस्तक देखते तो खरीद लेने का आग्रह करते। रामजी उसकी इस भूख की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहते।''[१४] इस प्रकार वे पाठ्यक्रम के अतिरिक्त भी पुस्तकें पढ़ा करते। इसी अध्ययन की लालसा के कारण वे केवल बी.ए. तक नहीं रुकें तो सात समंदर पार अमेरिका तथा लंदन जाकर कड़ी मेहनत तथा अध्ययन के बलबूते पर उन्होंने अनेक उपाधियाँ प्राप्त की। अब वे अपने अध्ययन का फायदा समाज के हर शोषित-पीडित व्यक्ति को कैसे होगा? यह सोचकर कार्य करने लगे। इस प्रकार उनमें गहरी अध्ययनशीलता दिखाई देती है।

३.४.११.२ ध्येयवादी :

डॉ. भीमराव आंबेडकर ध्येय से प्रेरित व्यक्ति थे। जिस समय अन्य विद्यार्थी सिनेमा, शराब सिगारेट पर पैसा बहाते थे, तब भीमराव पुस्तकें खरीदने के सिवा अन्य कोई खर्च नहीं करते थे। शराब और सिगारेट को उन्होंने कभी स्पर्श तक नहीं किया। इन दिनों में उन्होंने एक बात पक्की की कि उन्हें एक दिन बड़ा बनकर समाज के लिए कुछ करना है, इसी उत्कट ध्येयवाद से प्रेरित होकर वे विभिन्न प्रकार की शिक्षा ग्रहण करने लगे। एक बार शिक्षा में व्यवधान आने पर पुन:लंदन जाकर अपनी पढ़ाई पूरी करने का कार्य भीमराव ने किया। डॉ. भीमराव आंबेडकर का कहना था कि, ''मैंने अगर मुझे प्राप्त मौकों का फायदा उठाया तो मैं अपना नाम रोशन कर पाऊँगा। केवल उपाधियाँ प्राप्त करना ठीक नहीं होगा। सभी विषयों का अमूलाग्र अध्ययन किया, तो ही मैं विश्व के पंडितों में गिना जाऊँगा। केवल उपाधियों प्राप्त करने के लिए अध्ययन किया तो सामान्य जिंदगी गुजारनी होगी।''[१५]इस बात से स्पष्ट होता है कि बाबासाहब केवल उपाधियाँ के लालची नहीं थे, बल्कि वे अपनी शिक्षा के बल पर समाज को क्या दे सकते हैं? तथा समाज का उत्तरदायित्व निभाने के लए हर संघर्ष करना चाहते थे। ताकि समाज को अपनी शिक्षा का फायदा हो। ऐसे ध्येय लेकर डॉ. आंबेडकर ने राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में भारत को एक सही दिशा देने का कार्य किया।

३.४.११.३ तर्कसंगत विचार :

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने मूलत: अपने विचार तार्किक आधार पर सिद्ध किये हैं। जब भीमराव छोटे थे, तब वे अपने सहपाठियों से तर्क देकर अपनी बातें मनवा लेते थे। एक बार बचपन में उन्होंने बच्चों से शर्त रखकर पड़ोसी चाची से अंडे हासिल किये थे। तब उन्होंने चाची से कहा कि सात दिनों तक मुर्गी अंडे पर बैठी रहेगी तो अंडे खराब हो सकते है। क्यों ना पहले ही उसे निकाला जाय। यह आपने सोचा नहीं क्या? भीमा की इस तर्कपूर्ण बात को मानकर उन्होंने कुछ अंडे भीमा को दिये। इस प्रकार उन्होंने आगे चलकर बडौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड से वार्तालाप करते हुए अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विधिशास्त्र का महत्व विभिन्न तर्क देकर उन्हें समझाया और अपनी विदेश

की शिक्षा के लिए बडौदा रियासत से छात्रवृत्ति प्राप्त की। इन बातों से डॉ. आंबेडकर की तर्क संगत बातों का अंदाजा हम लगा सकते हैं।

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने एक बार महाराष्ट्र एकीकरण के मुद्दे को लेकर कहा कि, 'हमें अब केवल महाराष्ट्र को नहीं अपितु समूचे देश को एक करना होगा।' भाषा, प्रांत, जाति-पाति को भूलकर एक होना पड़ेगा। तभी हम प्रगति की ओर चल सकेंगे। इतना ही नहीं वे शिक्षा-व्यवस्था को लेकर कहते हैं कि शिक्षक और अध्यापक पर समाज का अगला भविष्य बनाने की जिम्मेदारी होती है। इस कारण, ''प्रोफेसर केवल विद्वान होकर नहीं चलेगा। वह सर्वश्रुत भी होना चाहिए, वह स्वयंअत्यंत उत्साही होना चाहिए और अपना विषय दिलचस्प बनायें, ऐसी उसमें हिम्मत होनी चाहिए, तो ही विद्यार्थी भी अत्यंत उत्साही होंगे, इसमें कोई शक नहीं।''[९६] इस तरह डॉ. आंबेडकर अपनी तर्कपूर्ण बात को रखकर शिक्षा तथा विद्यार्थी को लेकर अपनी बात स्पष्ट करते हैं।

३.४.११.४ प्रगतिशीलता :

डॉ. आंबेडकर जैसे-जैसे शिक्षा हासिल करते गये, वैसे-वैसे वह विज्ञानवादी तथा प्रगतिशील भूमिका में नजर आने लगे। धर्म के आडंबर को अच्छी तरह से वे समझ चुके थे। भारतीय जनता धार्मिकता के झेंडे में बंटी है, इस बात का उन्हें दु:ख था। जातीयता खत्म करने के लिए वे जिंदगीभर प्रयासरत रहे। हिंदू धर्म में कुछ लोगों को किसी कारणवश धर्म से बेदखल किया जाता है, लेकिन पुन: उन्हें धर्म शुद्धि के नाम पर धर्म में प्रवेश मिलता है। इन सारी खोखली बातों से उनका मन भर आया था। ऐसी बातों का वे विरोध करते थे। उनका कहना था कि हिंदू चातुर्वर्ण्य समाज व्यवस्था खत्म करके एक ही वर्ण का समाज स्थापित किया जाय।

एक दिन डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने सुना कि महाड़ का जो तालाब है, वह सबके लिए खुला होकर भी वहाँ अस्पृश्यों को पानी नहीं दिया जाता। इसलिए बाबासाहब को महाड़ का 'तालाब का आंदोलन' करना पड़ा। उन्होंने महाड़ के तालाब का पानी पिकर आंदोलन सफल भी किया, परंतु उसके कुछ दिनों बाद ब्राह्मणों ने 'मीठे पानी के

तालाब' को गोबर तथा गोमूत्र डालकर शुद्ध करने का निर्णय लिया। इस बात से बाबासाहब जान गये कि यह बीमारी साधारण उपचारों से दूर होना संभव नहीं है। उन्हीं दिनों महाराष्ट्र के ब्राह्मणों के अतिरिक्त समाज के नेतागण जेधे और जवलकर डॉ. आंबेडकर से मिले और उन्होंने कहा, ''अगर वे अपने इस आंदोलन में ब्राह्मणों को भाग न लेने दे तो ये सारे अब्राह्मण आपके आंदोलन में शामिल हो जायेंगे। तब आंबेडकर जी ने उत्तर दिया, मेरा यह आंदोलन ब्राह्मणों के विरुद्ध नहीं है बल्कि ब्राह्मणवाद के विरुद्ध है। सारे ब्राह्मण दलितों का विरोध करते है, यह बात नहीं है और अब्राह्मण समुदाय में भी ऊँच-नीच का भेद पालने वाले लोग हैं, यह न भूलिए।''[९७]डॉ. आंबेडकर के इस स्पष्टीकरण से साफ होता है कि उनके विचारों की प्रगल्भता तथा प्रगतिशीलता किस प्रकार की थी। वे ब्राह्मणों को नहीं, अपितु ब्राह्मणवादी विचारधारा का विरोध करते थे और उसे नष्ट करना उनका लक्ष्य था।

३.४.११.५ मानवतावादी व्यक्तित्व :

डॉ. भीमराव आंबेडकर समाज में सामाजिक समता प्रस्थापित करने के लिए अंत तक प्रयासरत रहे। समाज द्वारा वे मानवतावादी भूमिका का प्रचार-प्रसार कर रहे थे। अपने एक भाषण में वे कहते हैं कि पूंजीवादी संसदीय प्रजातंत्र व्यवस्था में दो बातें अवश्य होती है। जो काम करते है उन्हें गरीबी में रहना पड़ता है और जो काम नहीं करते उनके पास असीमित पूंजी जमा हो जाती है। एक तरफ राजनीतिक समस्याएँ हैं और दूसरी तरफ आर्थिक विषमताएँ हैं। यह उनके मानवतावादी विचारों को हजम नहीं होता था। इसलिए हर मजदूर को सुरक्षा और राष्ट्रीय संपत्ति में शामिल करने का आश्वासन मिलना चाहिए, ऐसा उनका मानना था।

अस्पृश्यता, छूत-अछूत यह शब्द उन्हें अमानवीयता के द्योतक प्रतीत होते थे। अस्पृश्यों के साथ जानवरों की तरह जो व्यवहार किया जाता था, उसे लेकर वे काफी दु:खी थे। ये बातें उन्हें मानवता के विरुद्ध लगती। इसलिए उन्होंने जो अस्पृश्य नाम का कलेंक लगा है, उसे धो डालने की दिशा में कदम उठायें। अस्पृश्यता का निवारण करने

के लिए म. गांधी से उनकी बात चल रही थी। इसलिए म. गांधी ने अस्पृश्यों के लिए मंदिर खुला करने का आंदोलन चलाया। इसके बाद एक पत्रक निकालकर बाबासाहब ने स्पष्ट किया कि, ''हमारी अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए मंदिर प्रवेश जरुरी है, ऐसी बात नहीं। हमें हिंदू धर्म में समता चाहिए और चातुर्वर्ण्य नष्ट होना चाहिए। तो ही हिंदू धर्म हमें स्वीकार करता है, ऐसा हम समझेंगे और हमें हिंदू धर्म मान्य होगा।''[९८] इस तरह हिंदू धर्म में सुधार किया जाय ऐसा वे चाहते थे। तभी मानवतावादी को हिंदू धर्म में स्थान मिलेगा, ऐसा उनका मानना था। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर मानवतावादी तथा संवेदनशील व्यक्ति थे। इसलिए उन्होंने दो कदम पीछे लेकर 'पुणे करार' में समझौता किया। मानवतावादी समता हिंदू धर्म में संभव न होगी, इसलिए डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धम्म की दीक्षा लेकर मानवतावादी विचारों को प्रचारीत तथा प्रसारीत करने की बात ठान ली।

३.४.११.६ कुशल राजनीतिज्ञ :

जिस समय डॉ. आंबेडकर अपनी अधुरी पढ़ाई के लिए पुन: लंदन चले गये, उस वक्त से उनका भारतीय राजनीति पर ध्यान था, ऐसी बात नहीं है। बचपन से ही वे राजनेता, समाजसुधारक आदि के बारें में जानकारी लिया करते थे। वे लंदन में अपने मित्रों द्वारा पत्र से राजनीतिक जानकारी हासिल करते थे। उन्हें वे पत्र लिखकर मार्गदर्शन भी करते थे। लंदन से वापिस आने के पश्चात उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक कार्य में सक्रिय हिस्सा लिया। अस्पृश्य समाज के लिए राजनीतिक हक मिलने चाहिए, इस बात को उन्होंने डंके की चोट पर कहा। इसी के साथ विधानसभा, विधानपरिषद में अपने हक तथा दलित, पीड़ित जनता के लिए उन्होंने आवाज उठायी। अन्याय-अत्याचार के खिलाफ वे अपनी राजनीतिक निपुणता से लड़ रहे थे। वे यही नहीं रुके, उन्होंने कालाराम मंदिर प्रवेश, महाड का तालाब का आंदोलन, पुणे करार तथा गोलमेज परिषद जैसे कई अन्य जगह पर अपनी राजनीतिक कुशलता का परिचय दिया। अपने राजनीतिक विचार आम जनता तक पहुँचाने के लिए डॉ. आंबेडकर ने 'मूकनायक, बहिष्कृत भारत, जनता' तथा अन्य पत्र निकालकर अपनी बात जनता के सम्मुख रखी।

सन् १९३५ में डॉ. आंबेडकर ने दलितों की लड़ाई अधिक क्रियाशील तथा गतिमान करने के लिए 'स्वतंत्र मजदूर पार्टी' की स्थापना की। डॉ. आंबेडकर की विद्वत्ता, कुशल राजनीति तथा अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विधिशास्त्र जैसे विभिन्न विषयों में उनकी प्रकांड पंडितता को ध्यान में रखते हुए, ''२९ अगस्त, १९४७ को संविधान समिति ने संविधान प्रारूप बनाने हेतु एक लेखन समिति बनायी। इस समिति का अध्यक्ष पद डॉ. बाबासाहब को दिया गया। उनकी विद्वत्ता और अब तक के कार्य का यह गौरव था।''[९९] इस तरह डॉ. आंबेडकर को मसौदा समिति का प्रमुख बनाया गया। इस काम को विद्वत्ता से अंजाम देकर उन्होंने हम सब भारतीयों के लिए 'संविधान' की रचना की। इतना ही नहीं स्वतंत्र भारत के पहले कानून मंत्री के रूप में भी उन्होंने कार्य किया। वे किसी भी पद पर प्रतिष्ठित रहे लेकिन हमेशा उन्होंने जनता की बात को माना। कुछ समय के पश्चात किसी कारणवश उन्होंने अपने मंत्री पद से इस्तिफा दिया। फिर भी उनका महत्व कम नहीं हुआ। वे समाज के प्रश्नों के लिए अपनी पूरी ताकद के साथ लड़ते रहे।

३.४.११.७ अस्पृश्य उद्धारक :

डॉ. बाबासाहब को अपने शैक्षिक जीवन से ही अस्पृश्यता के कारण अनेक बार अपमान सहना पड़ा था। तब वे समझ नहीं पा रहे थे कि मैं अन्य लोगों की तरह मनुष्य ही हूँ फिर मेरे साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया जाता है? इस समस्या को जड़ से मिटाने के बारे में वे बचपन से ही सोच रहे थे। इसलिए आगे चलकर बाबासाहब ने अस्पृश्य वर्ग के लिए अपने तरीके से हर संभव कोशिश की तथा उनकी उन्नति और उत्तान के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। डॉ. आंबेडकर ने कहा कि अस्पृश्य बनना किसी ईश्वर का प्रकोप नहीं है, यह भावना अपने मन से निकाल दो। दलितों के पास जमीन नहीं है इसका कारण भी ईश्वर या कोई अन्य शक्ति है, ऐसा नहीं है। केवल इतना ही नहीं वे कहते हैं कि ईश्वर पर भरोसा मत करो, जो काम करना है वह अपने बाजुओं के बलबूते पर करो।

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने अनेक सभा तथा परिषद के माध्यम से अपने समाजोद्धार का कार्य शुरु रखा। विभिन्न प्रकार की पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने दलित समाज पर होने वाले अन्याय को उजागर किया। पत्रों के माध्यम से अपनी भूमिकाओं को वे जन-जन तक पहुँचाने लगे। धर्म के आडंबर में वे फंसना नहीं चाहते थे। एक सभा में वे अपने समाज बांधवों से कहते हैं कि गाय, बैल, भैंस तथा मरे हुए जानवरों का माँस खाना वे छोड दें। गांव की वतनदारी के साथ किसी भी नीच काम को न करने हेतु बाबासाहब ने अपने दलित समाज को मार्गदर्शन कर उन्हें प्रेरित किया। बाबासाहब यही नहीं रुके बल्कि मुंबई के कामठीपुरा में जाकर वेश्या व्यवसाय करनेवाली महिलाओं को भी इस घिनौने काम से मुक्ति पाने के लिए प्रोत्साहित दिया। शिक्षा व्यवस्था में उन्होंने पीपल्स एज्युकेशन सोसायटी की स्थापना कर शिक्षा का दीन-दलितों तक विस्तार तथा प्रसार किया। अनेक छात्रावास तथा विभिन्न कार्य उन्होंने किये। इन सारी यातनाओं से छुटकारा पाने के लिए तथा एक नया अध्याय शुरु करने के लिए १४ अक्तूबर १९५६ को बाबासाहब ने बौद्ध धम्म की दीक्षा ली। ''तालियों की गड़गड़ाहट के बीच ओंबेड़कर जीवन के ठीक साढे पैंसठ वर्ष पार कर हिंदू से बौद्ध बन गए। साथ में करीब तीन लाख अनुयायियों ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली।''[१००] इस तरह बाबासाहब ने धर्म परिवर्तन कर अपने दीन-दलित और अस्पृश्य समाज को एक नयी दिशा दी।

३.४.११.८ संविधान निर्माता :

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर का नाम सामने आते ही भारतीय संविधान हमारे सम्मुख खड़ा हो जाता है। संपूर्ण विश्व में आमतौर पर उन्हें या तो भारतीय संविधान के निर्माण में अहम भूमिका अदा करने के नाते याद करते हैं या फिर भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाने वाले योद्धा के रूप में। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अछूतोद्धार,स्त्रियों के हक, कामगार कानून, शिक्षा तथा सामाजिक क्षेत्र में भी बहुत अधिक मात्रा में योगदान दिया है। इतना ही नहीं वे एक कुशल राजनीतिज्ञ, समाजशास्त्रज्ञ, अर्थशास्त्रज्ञ, विधिज्ञ और दलित पीडित समाज के उद्धारक भी थे। डॉ.आंबेडकर ने न सिर्फ आर्थिक सिद्धांतों और

विश्लेषण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान किया अपितु स्वतंत्रता के बाद सरकार का हिस्सा बन कर भी उन्होंने कई ऐसे काम किए, जिसमें उनकी गहरी आर्थिक सूझबूझ का लाभ देश को मिला। श्रम कानूनों से लेकर रिवर वैली प्रोजेक्ट्स और देश के तमाम हिस्सों तक बिजली पहुँचाने के लिए जरूरी बुनियादी ढांचे के विकास तक कई ऐसे काम है जो डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर के मार्गदर्शन में हुए। सबसे विख्यात और अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य जो उन्होंने किया वह है- संविधान के निर्माण के रूप में। भारतीय संविधान का निर्माण करने से पूर्व बाबासाहेब ने किसी एक या दो राष्ट्र के संविधान का अध्ययन नहीं किया अपितु विश्व के महान राष्ट्र अमेरिका, ब्रिटन,फ्रेंच तथा अन्य राष्ट्र के संविधान का अध्ययन कर भारतीय संविधान को उत्कृष्ट बनाने का प्रयास किया। इसी कार्य के कारण वे संवैधानिक तौर पर दलित,पिछड़े, स्त्री तथा आदिवासी और अन्य भी समाज के कोने-कोने में प्रकाश लाने का कार्य कर सके।

डॉ.आंबेडकर न्याय के प्रहरी थे। वे दलित मानव कल्याण के मूलभूत सिद्धांत को अपनाकर,उनमें जागृति पैदा कर समाज के प्रतिनिधि बन गए। स्वतंत्रता,समता, बंधुता,न्याय, विधि का शासन,विधि के समक्ष समानता, लोकतांत्रिक प्रक्रिया और धर्म,जाति, लिंग और अन्य किसी भेदभाव के बिना सभी व्यक्तियों के लिए गरिमामय जीवन भारतीय संविधान का दर्शन एवं आदर्श है। इसकी छाप हमें भारतीय संविधानमें दिखाई देती है। आंबेडकर महिलाओं की उन्नति के प्रबल पक्षधर थे। बाबासाहब ने अपने किए प्रयासों से संवैधानिक प्रावधानों के रूप में''नारी को स्वतंत्रता,समता,संपत्ति में उत्तराधिकार,तलाक,विधवा विवाह,गर्भवती महिलाओं को प्रसूति अवकाश जैसे मानवीय अधिकार दिलाएं।''[१०१] इस संदर्भमें'विशेष विवाह अधिनियम १९५४', 'हिंदू विवाह एवं विवाह-विच्छेद अधिनियम १९५५' विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

बाबासाहब मजदूरों की पीड़ा को समझते थे। इसीलिए उन्होंने उनकी आवाज बुलंद कराने हेतु राजनीतिक हस्तक्षेप का समर्थन किया तथा उन्होंने इस रूप में मजदूरों के पहले राजनीतिक दल 'इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी' की भी स्थापना की। बाबासाहब ट्रेड

यूनियन आंदोलन के समर्थक और प्रणेता थे। बाबासाहब कहते हैं- ''यदि कोई ऐसा देश है जहां ट्रेड यूनियनवाद की पक्की जरूरत है, तो मेरी राय में, वह भारत है। लेकिन जैसे कि मैंने बताया, भारत में ट्रेड यूनियनवाद एक ठहरे हुए सडन से भरे तालाब की तरह है। इसकी सारी वजह ट्रेड यूनियन के नेतृत्व का डरपोक,स्वार्थी या बहकावे में आना है।''[१०२] ट्रेड यूनियनों के गठन के द्वारा ही मजदूर अपनी आवाज को सत्तापक्ष के समक्ष अपनी मानवीय व भांतिकी मांगों की पूर्ति के लिए रख सकते थे। संविधान का अनुच्छेद १९(१)(ग) मूल अधिकार के तौर पर मजदूर संगठन गठित करने की इजाजत देता है। इस प्रकार हमारे पास मजदूर संगठन अधिनियम है, जो इन कर्मचारी संगठनों के गठन और परिचालन के लिए प्रक्रियाएं निर्धारित करता है। इस तरह बाबासाहब ने मजदूरों के हितोंमें संवैधानिक तौर पर महत्वपूर्ण कानून किया।

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर ने अस्पृश्यता तथा जाति-भेद को लेकर काफी समस्याएं झेली। इस कारणवश उन्होंने अस्पृश्यता तथा जाति-भेद का उन्मूलन करने हेतु संविधानमें मुख्यत: प्रावधान किया। भारतीय संविधान स्पष्ट रूप से भारत में जातिवाद के विरुद्ध कुछ खास उपबंध स्थापित करता है। ''संविधानमें निहित अनुच्छेद-१४ कहता है : राज्य, भारत के राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। अनुच्छेद-१५ के अनुसार, धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं होगा। साथ ही भारतीय संविधान का अनुच्छेद १७ अस्पृश्यता का अंत करता है। जिसमें'अस्पृश्यता' से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।''[१०३] इस प्रकार अस्पृश्यों के लिए तथा जाति-भेद निर्मूलन के लिए बाबासाहब ने संवैधानिक स्तर पर उल्लेखनीय कार्य किया है।

संक्षेप में कहें तो डॉ.आंबेडकर ने संविधान का निर्माण करते समय भारत के हर कोने का, हर तबके का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक सांस्कृतिक, वैज्ञानिक दृष्टि से ध्यान रखते हुए भारतीय संविधान का निर्माण किया है।

निष्कर्ष :

अंतत: हम कह सकते हैं कि इस अध्याय के अंतर्गत छत्रपति शिवाजी महाराज के चरित्र का चित्रण किया गया है। साथ ही उनके जन्म से उनके कार्यक्षम होने तक का जीवन प्रवास और उनके चरित्र की विशेषताओं को प्रस्तुत किया गया है। वे एक महान इतिहास पुरुष हैं। कार्यक्षमता, स्वाभिमानी, उदारता, जनप्रेमी, कुशल राजनीतिज्ञ, दानवीर, प्रखर राष्ट्रभक्त, नीतिमान, आदर्शराजा आदि विशेषताओं से परिपूर्ण उनका चरित्र है।

महान समाजसुधारक महात्मा फुले का चरित्र भी एक महान चरित्र है। उनके जन्म से लेकर संघर्षमयी जीवन प्रवास को और चरित्र निर्माण को प्रस्तुति दी गयी है। फुले ने अपनी पत्नी सावित्रीबाई के साथ मिलकर स्त्री शिक्षा की नींव रखी। बहुजनों को अन्याय, अत्याचार और शोषण का विरोध करना सीखाया। सरल जीवन, नि:स्वार्थ भाव, कुशल राजनीतिज्ञ, प्रखर समाजचिंतक, धर्मसुधारक, स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक, मानवतावादी, समाज शिक्षक, अस्पृश्योद्धारक, समताधिष्ठित, ध्येयवादी आदि विशेषताओं को फुले के चरित्र के अंतर्गत देखा जा सकता है।

आरक्षण के जनक राजर्षि शाहू महाराज का जन्म २६ जन्म १८६४ में हुआ था। छत्रपति शाहू का बचपन अत्यंत अभाव भरा रहा। इस कारण उनके मन में गरीब, वंचित और अनाथ तथा आधारहीन जीवन जीनेवालों के प्रति बडी हमदर्दी निर्माण हुई। साथ ही साहस और धैर्य के साथ संकट की हर घडी में हर स्थिति का मुकाबला करने का सामर्थ्य उनमें निर्माण हुआ। स्पष्टवादिता, न्यायप्रियता, संवेदनशीलता, कार्यक्षमता, पारदर्शीता, निडरता, संयमता, आदरता, दृढता, चतुरता, कुशलता, देशभक्ति, शूरवीर जैसी अनेक विशेषताएँ राजर्षि शाहू महाराज के चरित्र में थी।

संविधान निर्माता, महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जन्म के समय में समाज अनेक रुढी परंपराओं से जूझ रहा था। उसका परिणाम बालक भीमराव पर हुआ और उन परिस्थितियों का विरोध करते-करते डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के चरित्र का निर्माण हुआ।

अध्ययनशीलता, ध्येयवादिता, तर्कसंगत विचार, प्रगतिशीलता, मानवता, कुशल राजनीतिज्ञ, अस्पृश्यों के प्रति उदारता, आदि विशेषताओं ने डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के अंतर्गत विशेष रूप धारण किया। जिनके सहारे उन्होंने भारत देश के लोकतंत्र का निर्माण संविधान के रूप में किया। इसी के आधार पर डॉ. आंबेडकर नयी सदी के महानायक बनें है।

इस तरह से छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर आदि महापुरुषों का जीवन चरित्र समाज के लिए निरंतर प्रेरणादायी और आदर्श चरित्र हैं।

संदर्भ संकेत :

१. रयतेचा राजा छत्रपति शिवाजी महाराज, विलास सोनावणे, पृ. १३१

२. छत्रपति शिवाजी, निनाद बेडेकर, पृ. ७९

३. राजेश्री, ना. श. इनामदार, पृ.

४. छत्रपति शिवाजी महाराज स्मृतिग्रंथ – प्र.सं. जयसिंगराव पवार, पृ. ४९

५. पहला सूरज, भगवतीचरण मिश्र, पृ. २७०

६. छत्रपती शिवाजी, पातीराम भट्ट, पृ. ४९

७. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा कितनी सही-कितनी प्रेरक, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ६१३

८. छत्रपति शिवाजी महाराज स्मृतिग्रंथ, प्र.सं. जयसिंगराव पवार, पृ. ५३

९. महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे चरित्र, पंढरीनाथ सीताराम पाटील, पृ.४२

१०. खरा महात्मा ज्योतिबा, अजित पाटिल, पृ.१३

११. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु. ब. शहा, पृ.२१

१२. वही, पृ. २१

१३. खरा महात्मा ज्योतिबा, अजित पाटील, पृ.११५

१४. महात्मा फुले साहित्य और विचार, सं. हरि नरके, पृ. २३२

१५. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु. ब. शहा, पृ.३९

१६. वही, पृ. ३९

१७. महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे चरित्र, पंढरीनाथ सीताराम पाटील, पृ.१९३

१८. वही, पृ. १९३

१९. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु. ब. शहा, पृ. २४

२०. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप, पृ. ९७

२१. वही, पृ. ९४

२२. वही, पृ. ८४

२३. महात्मा ज्योतिराव फुले व्यक्तित्व एवं कृतित्व, डॉ.शोभा हनवते, पृ.४७

२४. वही, पृ. ४९

२५. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु. ब. शहा, पृ. ६९

२६. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १९

२७. वही, पृ. १९

२८. वही, पृ.२०

२९. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. ६०

३०. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १७

३१. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. २५

३२. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २०

३३. वही, पृ. २०

३४. वही, पृ. २०

३५. वही, पृ. २०

३६. वही, पृ. २१

३७. लोकराजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाधव, पृ. ३३

३८. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २१

३९. वही, पृ. २२

४०. वही, पृ. ३२

४१. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. २६१

४२. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ३२

४३. वही, पृ. ३३

४४. वही, पृ. ३४

४५. लोकराजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाधव, पृ. ३६

४६. वही, पृ. ३७-३८

४७. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. ४५-४६

४८. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २२-२३

४९. वही, पृ. २३

५०. वही, पृ. २८

५१. वही, पृ. २९

५२. वही, पृ. २४

५३. वही, पृ. २६

५४. वही, पृ. २७

५५. लोकराजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाधव, पृ. ३३८

५६. वही, पृ. ३४२

५७. वही, पृ. ३४३

५८. वही, पृ. ३४४

५९. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. ११३

६०. वही, पृ. १२२-१२३

६१. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ९९

६२. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. १९७

६३. वही, पृ. ११२

६४. लोकराजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाधव, पृ. ३५

६५. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. ७५

६६. वही, पृ. १९९

६७. वही, पृ. ४४

६८. लोकराजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाधव, पृ. १३७

६९. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ३०३

७०. शाहू, श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. १४९

७१. वही, पृ. १२०

७२. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. २

७३. वही, पृ. ३

७४. असे घडले ज्ञानसूर्य : डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, प्राचार्य व. न. अिंगळे, पृ. ३७

७५. कर्मयोगी अम्बेडकर, के. एल. कमल, पृ. ७

७६. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर,(खंड१), चांगदेव भ. खैरमोडे, पृ. १९

७७. डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. ३०९

७८. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ. ९

७९. डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. ३१०

८०. वही, पृ. ३११

८१. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर,(खंड १), चांगदेव भ. खैरमोडे, पृ. ५१

८२. असे घडले ज्ञानसूर्य : डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, प्राचार्य व. न. अिंगळे, पृ. ४०

८३. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ. १०

८४. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर,(खंड १), चांगदेव भ. खैरमोडे, पृ. २८

८५. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. ५

८६. वही, पृ. २१

८७. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर (चरित्र व विचारधन), विवेक सौताडेकर, पृ. १०४

८८. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर,(खंड १), चांगदेव भ. खैरमोडे, पृ. ४९

८९. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. ५

९०. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन-चरित, धनंजय कीर, पृ. २५

९१. वही, पृ. ३०

९२. डा. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. २३

९३. वही, पृ. १०

९४. डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. ३१६

९५. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर,(खंड १), चांगदेव भ. खैरमोडे, पृ. ७९

९६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर योंची आत्मकथा, संपा.शंकरराव खरात, पृ. २७२

९७. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. ४२

९८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची आत्मकथा, संपा.शंकरराव खरात, पृ. १९५

९९. डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली (खंड १), संपा. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. ३३७

१००. कर्मयोगी आंबेडकर, के.एल.कमल, पृ. १६९

१०१. डॉ.आंबेडकर और नारी चेतना, कुसुम मेघवाल,पृ.३६५

१०२. दस स्पोक आंबेडकर, भगवान दास, पृ.४५-४६

१०३. आरक्षण नीति : प्रासंगिकता एवं प्रभाव, शशि प्रभा, पृ.१४५-१४६

चतुर्थ अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक योगदान

चतुर्थ अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक योगदान

भूमिका

४.१ छत्रपति शिवाजी महाराज का योगदान

४.१.१ सामाजिक योगदान

४.१.१.१ बहुजन प्रतिपालक

४.१.१.२ किसान हितैषी

४.१.१.३ स्वभाषा शुद्धिकरण

४.१.१.४ अंधश्रद्धा का विरोध

४.१.२ आर्थिक योगदान

४.१.२.१ महसूल पद्धति

४.१.२.२ व्यापार उद्योग

४.१.२.३ कर प्रणाली

४.१.२.४ अर्थ निर्माण के अन्य स्त्रोत

४.१.३ धार्मिक योगदान

४.१.३.१ सर्वधर्म समभाव

४.१.३.२ धर्म रक्षक

४.१.३.३ धर्म उद्धारक

४.१.३.४ समताधिष्ठित समाज का निर्माण

४.१.४ सांस्कृतिक योगदान

४.१.४.१ हिंदू संस्कृति रक्षक

४.१.४.२ उदात्त सांस्कृतिक नीति

४.१.४.३ लोककला का जतन

४.१.५ राजनीतिक योगदान

४.१.५.१ लोकराज्य का निर्माण

४.१.५.२ जनसंघटन

४.१.५.३ अष्टप्रधान मंडल

४.१.५.४ नौसेना निर्माण

४.१.५.५ रणनीतिकार

४.२ महात्मा फुले का योगदान

४.२.१ सामाजिक योगदान

४.२.१.१ स्त्री-शिक्षा तथा नारी मुक्ति

४.२.१.२ विधवा-विवाह को प्रोत्साहन

४.२.१.३ बाल-हत्या प्रतिबंधक गृह की स्थापना

४.२.१.४ अछूतों के लिए पानी की व्यवस्था

४.२.१.५ सत्यशोधक समाज की स्थापना

४.२.१.६ सत्यशोधक समाज की मान्यताएँ

४.२.२ शैक्षिक योगदान

४.२.२.१ प्राथमिक शिक्षा

४.२.२.२ शिक्षकों की नियुक्ति तथा वेतन

४.२.२.३ पाठ्यक्रम में सुधार

४.२.२.४ पाठशालाओं की निरीक्षण योजना में सुधार

४.२.२.५ देशी पाठशालाओं की स्थिति

४.२.२.६ उच्च शिक्षा

४.२.३ धार्मिक योगदान

४.२.३.१ ईश्वर के स्वरूप के बारे में

४.२.३.२ एकेश्वरवाद का समर्थन

४.२.३.३ बुद्धिप्रामाण्यवाद पर बल

४.२.३.४ इहवादी जीवन मार्ग

४.२.३.५ न-स्वर्ग न-नरक

४.२.३.६ धर्म ग्रंथों के प्रमाण के संदर्भ में

४.२.३.७ सार्वजनिक सत्यधर्म की संकल्पना

४.२.४ राजनीतिक योगदान

४.२.४.१ किसानों के शोषण का विरोध

४.२.४.२ मिल-मजदूरों का संगठन

४.२.४.३ पुणे नगर निगम के सदस्य के रूप में

४.२.४.४ शराबखानों पर सरकार का विरोध

४.२.५ साहित्यिक योगदान

४.२.५.१ तृतीय रत्न (नाटक)

४.२.५.१ पोवाडा राजा शिवाजी भोसले का

४.२.५.३ ब्राह्मणों की चालाकी (ब्राम्हणांचे कसब)

४.२.५.४ गुलामी (गुलामगिरी)

४.२.५.५ किसान का कोडा (शेतकऱ्यांचा आसूड)

४.२.५.६ सार्वजनिक सत्यधर्म

४.२.५.७ अन्य साहित्य

४.३ छत्रपति शाहू महाराजा का भारतीय समाज के लिए योगदान

४.३.१ शिक्षा के क्षेत्र में योगदान

४.३.२ अस्पृश्योंद्धार में योगदान

४.३.३ कृषि क्षेत्र में योगदान

४.३.४ भारत स्वतंत्रता में योगदान

४.३.५ आरक्षण और शाहू महाराजा

४.३.६ छात्रालय स्थापना में योगदान

४.३.७ अकाल तथा प्लेग हेतु योगदान

४.३.८ विविध कार्य के लिए आर्थिक योगदान

४.३.९ मल्ल निर्माण में योगदान

४.३.१० उद्योग क्षेत्र में योगदान

४.३.११ अन्य क्षेत्रों में योगदान

४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का भारतीय समाज के लिए योगदान

४.४.१ अस्पृश्यता तथा अछूत समाज के लिए योगदान

४.४.२ सामाजिक योगदान

४.४.३ राजनीतिक योगदान

४.४.४ आर्थिक एवं वित्तिय क्षेत्र में योगदान

४.४.५ धार्मिक योगदान

४.४.६ शैक्षिक योगदान

४.४.७ संवैधानिक योगदान

४.४.८ अन्य क्षेत्रों में योगदान

निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का सामाजिक योगदान

भूमिका :

भारतीय संस्कृति हमेशा से उदारमतवादी रही है। यहाँ जितने भी महान व्यक्तित्वों का निर्माण हुआ सभी नि:स्वार्थी और उदारमतवादी हैं। जिस परिवार ने उन्हें जन्म दिया समाज ने आचार-विचारों की शिक्षा दी उनके प्रति दायित्व निभाने की भूमिका उन्होंने हमेशा से अदा की है। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर ने भी अपने समाज और देश के प्रति अपना दायित्व निभाया है। जब हिंदुस्थान यवनों के कब्जे में था, उनके अन्याय-अत्याचारों से पीडित था, तो छत्रपति शिवाजी महाराज ने स्वराज की स्थापना करके हिन्दुस्थान को यवनों के चंगुल से छुडाने के भरसक प्रयास किए और अधिकांश रूप में मुक्त भी किया। इससे तत्कालीन भारतीयों को एक नयी प्रेरणा मिली। छत्रपति शिवाजी ने एक नया आदर्श युग निर्माण करके स्वतंत्रता की प्रेरणा दी। तत्काल में स्वतंत्रता की बात करना भी बहुत कठीन कार्य था। ऐसी स्थिति में छत्रपति शिवाजी ने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जैसे क्षेत्रों में अपना योगदान दिया।

भारत सदियों से आक्रमणकारियों का शिकार रहा है। यवनों के साथ, डच, पोर्तुगीज, अंग्रेज भी यहां अपनी सत्ता जमाने के लिए प्रयासरत थे। जैसे ही यवनी सत्ता का पतन हो रहा था अंग्रेजों ने अपनी सत्ता का विस्तार भारत में किया और फिर वहीं अन्याय-अत्याचार, शोषण का सामना भारतीय जनता को करना पडा। ऐसी परिस्थितियों में महात्मा फुले जैसे महामानव का निर्माण होना बडे गौरव की बात है। वंचित, पीडित, शोषित बहुजन वर्ग को इस खाई से बाहर निकालने का कार्य महात्मा फुले ने पत्नी सावित्रीबाई के साथ मिलकर किया। उन्होंने शिक्षा जैसे कार्य को लेकर समाजसुधार का

कार्य किया। उन्होंने सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक के साथ साहित्यिक क्षेत्र में भी अनमोल कार्य किया।

उपरोक्त दो महापुरुषों की तरह ही राजर्षि शाहू के समय में बाहरी सत्ताधारियों के साथ ऐतदेशीय समाज कंटकों का सामना भी राजर्षि शाहू को करना पडा। फुले द्वारा उठाए गए शिक्षा के कदमों को बढावा देने का काम शाहू ने किया। साथ ही समाज में स्थित अनिष्ठ रूढी परंपराओं को तोडने का कार्य भी महाराजा ने किया। वंचित, बहुजनों को आरक्षण देने का महत्वपूर्ण निणर्य भी शाहू ने अपने समय में किया। विधवा-विवाह अंतरजातिय विवाह को भी प्रोत्साहन देने का काम किया। साथ ही विविध कलाओं को वृद्धिंगत किया।

उपरोक्त तीनों महापुरुषों को आदर्श मानकर डॉ. आंबेडकर ने अपने जीवन की दिशा तय की और उसी तरह से जीवन भर दलित, वंचित और बहुजनों के लिए जिते रहे। जानवरों जैसे जीवन जीनेवाली आम जनता को केवल उनके अधिकारों से ज्ञात नहीं किया बल्कि उन्हें मनुष्य जैसा जीवन जीने का अधिकार 'संविधान' के माध्यम से दिया। इसकारण वे अस्पृश्यों के मसीहा बनें। छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू की विचारधारा को अपनाकर समाजसुधार का कार्य करते-करते साहित्यिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया। साथ ही सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक और साहित्यिक आदि क्षेत्र में उनका योगदान अनमोल है।

४.१ छत्रपति शिवाजी महाराज का सामाजिक योगदान :

छत्रपति शिवाजी जनमानस के हृदय में बसनेवाले राजा थे तथा महान राष्ट्रपुरुष थे। उनका कर्तृत्व महान और प्रेरणादायी था। यवनों के राज्य में भारत वर्ष की जनता त्रस्त थी। यवनों के राज्य को ललकारना यह साधारण कार्य नहीं था। सदियों तक अत्याचारी यवनों का भारत पर राज था। यवनी सत्ता को ललकारने वाले भारत माता के सुपुत्र छत्रपति शिवाजी के उदय से अंधकार से ग्रस्त भारतीयों को नयी प्रेरणा मिली। उन्होंने एक नया आदर्श युग निर्माण किया, स्वतंत्रता की प्रेरणा देकर समाज को नये

तत्वों से आलोकित किया। तत्कालीन परिस्थिति में स्वतंत्रता निर्माण करना अत्यंत कठोर परिश्रम को कार्य था। छत्रपति शिवाजी ने यवनों के बंधन को नष्ट किया। जो कार्य असंभव था उसे संभव कर दिखाया तथा अंधकार रूपी परतंत्रता को प्रकाशमान स्वतंत्रता का रूप दिया। कठोर परिश्रम, वीरता, दूरदर्शीता, चतुराई से छत्रपति शिवाजी ने यवनों का नाश किया। छत्रपति शिवाजी की इस नयी दृष्टि सेसमाज में नवचेतना, नया जोश, नये विचार की भावना जागृत हुई। उनका कार्य लोकोत्तर तथा समाज का भविष्य उन्नत करनेवाला था।

छत्रपति शिवाजी का कार्य दूरदर्शी था।परकीय शत्रुओं की भनक उनको महसूस हो गयी थी। अंग्रेज, डच, पोर्तुगीज उस समय भारत में व्यापार के उद्देश्य से आए थे। छत्रपति शिवाजी ने उन्हें कभी पास आने नहीं दिया, यह बात शिवाजी महाराज को सत्रहवीं शती में ही ज्ञात हो गयी थी। इससे ही अनुमान लगाया जा सकता है कि छत्रपति शिवाजी की बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता, साहस अत्यंत प्रभावी, आदर्श और प्रेरक था। इतना ही नहीं तो छत्रपति शिवाजी के असामान्य तथा अद्वितीय कार्य को देखकर राजाभोज तथा विक्रमादित्य आदि प्रतापी राजा को भी लोग भूल गए। बलि तथा वेणु जैसे महादानी राजाओं की कीर्ति भी निस्तेज हो गयी।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी का कार्य तथा योगदान महान, सर्वव्यापी, असाधारण और आदर्शहै। उसका अध्ययन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आदि मुद्दों से किया जा सकता है।

४.१.१ सामाजिक योगदान :

छत्रपति शिवाजी का सामाजिक कार्य बडा अनमोल रहा है। उस समय समाज और लोग अशिक्षित अनपढ थे। छत्रपति शिवाजी के उस समय की सामाजिक स्थिति विषमता से ओतप्रोत थी। लोगों के मनोबल की कमी के कारण समाज की विचारशक्ति का स्तर बहुत गीर गया था। तत्कालीन समाज को कई महामारियों के प्रकोप को सहना पडा। जनता प्राय: अशिक्षित होने की वजह से अंधविश्वास का बोलबाला ज्यादा तर उनके

दिमाग पर हावी था। समाज की उन्नति और रक्षा के प्रति शासकों का ध्यान नहीं था, जनता अंधविश्वास तथा शकुनशास्त्र के प्रति आकर्षित थी। अंधविश्वास तथा शकुनशास्त्र के संदर्भ में डॉ. शिवकुमार शर्मा लिखते हैं, ''जन-सामान्य में अंधविश्वास तथा रुढियाँ घर कर गई थी। ज्योतिषियों की वाणी, शकुनशास्त्र पर उनका अगाध-विश्वास था।''[१]

शासक वर्ग प्राय: विलासिता में डूबे रहते थे। उन्नति और प्रगति अपना सिर ऊपर नहीं उठा पाती थी। इसका अधितर प्रभाव आम आदमी और गरीब शोषित लोगों पर होता था। जनता को गुलाम समझा जाता था। इसी गुलामी से छत्रपति शिवाजी को नफरत थी। इसलिए उन्होंने समाज में उन्नति हेतु कई नियम और योजनाएँ बनाई और धीरे-धीरे जनता शांत, सुखी और उन्नति के कदम चुमने लगी। छत्रपति शिवाजी ने पहले जनता को समझा उनकी समस्याओं को जानने का प्रयास किया। अपने राज्य में जनता बहुत परेशानियों कासामना कर रही है। ऐसा उन्होंने महसूस किया और जनता के हित के लिए कई ठोस कदम और बहुत सारी योजनाएँ और नियम बनाएँ। छत्रपति शिवाजी महाराज का उद्देश्य था कि, अपने राज्य में जनता दु:खी नहीं होनी चाहिए, वह हमेशा अपने कार्य के प्रति उत्साहित और सुखी होनी चाहिए। इसलिए छत्रपति शिवाजी ने समाज में कई बदलाव लाकर जनता को खुश रखा है।

४.१.१.१ बहुजन प्रतिपालक :

भारती जनता मुस्लिम शासक में असंतुष्ट थी। जनता के मन में विद्रोह की भावना थी लेकिन कोई कुशल नेतृत्व करनेवाला वीर नहीं मिल रहा था। छत्रपति शिवाजी ने बहुजन प्रतिपालन के लिए अपनी जान की बाजी लगाई, अविश्रांत मेहनत की और चतुराई से जनता के इस विद्रोही भाव का नेतृत्व किया। समस्त प्राणिमात्र को सुखी बनाना उनका उद्देश्य था।

इतना ही नहीं तो स्वराज्य की स्थापना कर शिवाजी राजा ने तत्कालीन समाज में अनेक महत्वपूर्ण सुधार किए। उस समय आम समाज का बादशाह के साथ-साथ जागीरदारों द्वारा भी शोषण होता था। उस काल के समाज में सामंतवाद पूर्ण रूप से

प्रतिष्ठित था। जीवन के किसी संघर्ष से उसका कोई सरोकार नहीं था। ''सामाजिक व्यवस्था का केंद्र हिंदु बादशाह था और उसके अधीन थे मनसबदार अथवा अमीर-उमराव। इनके बाद ओहदों के अनुसार दूसरे कर्मचारी आते थे और सबका कर्तव्य कर्म अपने से उपरवालों को प्रसन्न करना था – नीचेवालों को ये मात्र अपनी संपत्ति समझते थे, उनका अस्तित्व केवल अपने लिए मानते थे।''[२] श्रमजीवी किसानों का निम्नवर्ग सभी प्रकार से शोषित, पीडित तथा उपेक्षित था। सेनाओं के प्रयाणों, युद्धों, अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि के कारण इस वर्ग की आय के एकमात्र साधन कृषि की हानि होती थी। यह स्थिति समाज के लिए अत्यंत कष्टप्रद थी। इसका निराकरण छत्रपति शिवाजी ने किया।

शिवकालीन समाज में बहुपत्नीत्व की प्रथा सर्वमान्य थी। इसके पीछे समाज का उद्देश्य रहा होगा कि अपना परिवार बना रहे तथा संततियों, रिश्तेदारों से भरा-पूरा रहे और वंश सातत्य रहे। तत्कालीन समाज में सती प्रथा थी लेकिन छत्रपति शिवाजी ने इसका विरोध किया। स्वयं अपने पिता की मृत्यु पर जीजाबाई को सती जाने से रोकने में छत्रपति शिवाजी सफल रहें। उनका यह कार्य अद्वितीय है। उस समय स्त्री को केवल भोग-विलास का साधन माना जाता था। निम्नवर्ग की लडकियों का अपहरण आसानी से हो रहा था। इसी कारण अल्पायु में लडकियों का विवाह अधिक प्रचलित था। गृहस्थी चलानेवाले आम कुलीन स्त्रियों की इज्जत भी खतरे में थी। इसका छत्रपति शिवाजी ने विरोध किया और अपराधी को शासन भी किया। इसके संदर्भ में श्री कोकाटे लिखते हैं, ''शिवाजी महाराज अत्यंत शील तथा नीति संपन्न राजा थे। इसलिए उन्होंने नारी से बदसलुखी करनेवाले रांझे नामक स्थान के एक पाटील के हाथ-पैर तोडने की कठोर शिक्षा दी थी।''[३] स्त्री केवल भोग की वस्तु न होकर आदर्श तथा पूज्यनीय है। छत्रपति शिवाजी के इस कार्य से महिलाएँ निर्भीड हो गयी। शत्रु स्त्री को भी छत्रपति शिवाजी पूज्यनीय मानते थे। छत्रपति शिवाजी का तत्कालीन समाज में स्त्रियों की इज्जत की सुरक्षा का काम ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

स्वराज्य निर्माण में छत्रपति शिवाजी को वतनदारों का प्रचुर मात्रा में विरोध था। देशमुख, देशपांडे, देसाई, जागीरदार, कुलकर्णी, पाटील अदि वतनदार मुसलमानी शासन में अपने-अपने प्रदेशों पर स्वतंत्र राज करते थे। यह वतनदार सामान्य जनता पर जुल्म करते थे, उन्हें गुलाम समझते थे। जनता किसी भी प्रकार से सुरक्षित नहीं थी। इसके संदर्भ में प्रभाकर माचवे लिखते हैं, ''उनके अनियंत्रित कारोबार में सब तरह के अत्याचार क्षम्य थे। जनता का वित्त सुरक्षित नहीं था, आबरू सुरक्षित नहीं थी।''[४] छत्रपति शिवाजी ने इन वतनदारों का विरोध किया। बाहर के शत्रुओं के साथ-साथ इन घर के शत्रुओं से भी छत्रपति शिवाजी को संघर्ष करना पडा। तत्कालीन समाज में ऊँच-नीचता का भेदभाव था। ऐसी स्थिति में छत्रपति शिवाजी एक मात्र राजा थे, जिन्होंने सब को समान दृष्टि से देखा।

इस प्रकार पूरे समाज को एक सूत्र गूँथने का सफल प्रयास शिवाजी राजा ने किया और समाज को सुव्यवस्थित करने में हर प्रकार के प्रयत्न किए। साथ ही वह सभी प्रजाजनों को अपने साथ ले जानेवाले राजा थे। इस प्रकार यह कहना पडेगा कि वह प्रजाहित दक्ष, बहुजन प्रतिपालक तथा श्रीमान योगी राजा थे। उन्होंने गुणीजनों के लिए विविध प्रकार के मार्ग उपलब्ध कराएँ तथा वह आम जनता के आश्रय स्थान थे।

४.१.१.२ किसान हितैषी :

सत्रहवीं सदी में महाराष्ट्र का आर्थिक जीवन कृषि-व्यवसाय से पूरी तरह जुडा हुआ था। कृषि-व्यवसाय ही उपजीविका का प्रधान एवं एकमेव साधन होने से लोग जमीन को 'कालीमाता' कहते थे। गांव के अधिकारी, मिरासदारों, बलुतेदारों तथा सामान्य लोगों का जीवन प्रमुखत: कृषि की उपज पर ही निर्भर था। उस समय राजनीति की उथल-पुथल हो रही थी तथा स्वाभाविक है कि इसका परिणाम किसानों के जीवन तथा व्यवसाय पर पडा। महाराष्ट्र का किसान इन्हीं कारणों से पिछड गया। इस पिछडेपन के कई कारण थे – वर्षा की अनिश्चितता, असह्य राज्यशाासन,लडाई-झगडे, आर्थिक सहायता का अभाव आदि।

छत्रपति शिवाजी ने किसानों की दृष्टि से अनेक कानून बनाये और उनको समृद्ध बनाया। यवनों को किसानों की कोई पर्वाह नहीं थी। उनके मुक्त सैन्य संचलन से तथा युद्धों से किसानों की अपरिमित हानि होती थी। लेकिन छत्रपति शिवाजी के स्वराज्य स्थापना से गांव की युवा पीढी स्वराज्य के निर्माण में जुट गयी। छत्रपति शिवाजी की सेना में मुख्यत: किसान ही अधिक थे। अत: उनको ज्ञात था कि किसानों को किस प्रकार ही हानि न पहुँचे। इस संदर्भ में गोविंद पानसरे लिखते हैं, ''शिवाजी की सेना बारह माह सिपाही सेना नहीं थी। कुछ खडी सेना थी, लेकिन ज्यादातर शिपाई कृषि व्यवसाय करते थे। पत्नी और बच्चों के साथ रहते तथा सेना में भी काम करते थे।''[५] इस प्रकार खेती तथा परिवार से जुडे होने के कारण शिवाजी की सेना के मन में परिवार तथा खेती के प्रति प्रेम था। वह सैन्य संचलन में खेती तथा स्त्री को आंच नहीं आने देते थे। अत: छत्रपति शिवाजी ने सेना तथा जनता का समन्वय किया और किसान हित दक्ष राजा बनें।

छत्रपति शिवाजी जानते थे कि अगर किसान समृद्ध हैं तो अपना राज्य भी उन्नत होगा। किसानों से किसी भी वस्तु को खरीदना है तो उसकी पर्ची लेना आवश्यक था। किसान की अनावश्यक वस्तु भी मुफ्त में लेने का अधिकार नहीं था। किसान के घास की पत्ती को हाथ लगाने की अनुमति नहीं थी। इस संदर्भ मे ंप्रदीप सोळुंके लिखते हैं, ''जहाँ सेना की छावणी हो, वहाँ के किसान से सब्जी, अनाज तथा घास खरीदने के बाद उस किसान को रकम मिलने की पर्ची लेने का आदेश दिया जाता था। इसके पहले ऐसा नहीं होता था।''[६] इससे छत्रपति शिवाजी का किसान के प्रति दृष्टिकोण स्पष्ट होता है।

छत्रपति शिवाजी ने प्रथम ही जमीन नापने का तंत्र विकसित किया। इसका प्रमुख कारण यह था कि महसूल पद्धति के दोष को मिटाना। भूमि नापने के लिए लडकी की उपयोग किया। उस लकडी को 'शिवशाही लाठी' कहते थे। गांव की उपजाऊ जमीन की एक सूची बनाई तथा उसके १२ भाग निश्चित किये। जो जमीन उपजाऊ नहीं है उसके दो भाग किये। इसकी जानकारी प्रत्येक अधिकारी के पास रहती थी तथा वह जानकारी राजा के पास भेजने की व्यवस्था थी। जमीन में कौनसी फसल है, उपज का उत्पन्न कितना है

आदि जानकारी अधिकारियों ने सरकार को देना अनिवार्य था। इसके आधार पर महसूल पद्धति तय की जाती थी। उसके तीन नियम थे। उसके संदर्भ में डॉ. साहेबराव गाठाळ लिखते हैं, ''१) उपजाऊ जमीन का ही विचार किया गया। २) जमीन का स्तर ध्यान में लेकर ही महसूल तय किया जाय। ३) फसल संबंधित निरीक्षण करके ही (उपजाऊ/बंजर) महसूल तय किया जाय।''[७] छत्रपति शिवाजी के समय रुपयों में अनाज के रूप में महसूल लेने की पद्धति थी। कभी-कभी किसान शिकायत करते थे कि अधिकारियों ने उनकी उपजाऊ जमीन का क्षेत्र अधिक दिखाया है। इसलिए उसे ज्यादा महसूल भरना पडता था। किसान की इस शिकायत की खोज-बीन की जाती थी तथा उसकी जमीन 'शिवाशाही लाठी' से नापी जाती थी। यदि शिकायत सच साबित होती तो गांव के पाटील को आदेश दिया जाता था कि दफ्तर में यथोचित फेरबदल किया जाए।

जमीन की सिंचाई के लिए पानी की आवश्यकता होती है। छत्रपति शिवाजी के समय में देश में अकाल पडते थे। खाने के लिए अन्न तथा पीने का पानी नहीं होने से लोग स्थलांतरित हो जाते थे। उनका पुनर्वसन छत्रपति शिवाजी महाराज ने किया। अ. व. कुलकर्णी के शब्दों में, ''अकाल के कारण कहीं दूर चले गए लोगों को वापिस अपने गांव बुलाकर उनके पुनर्वसन के प्रयत्न शिवाजी के काल में लगातार जारी थे।''[८] आगे चलकर अपनी दूरदृष्टि से छत्रपति शिवाजी ने अनेक तालाब बनावाएँ।

छत्रपति शिवाजी अपने अधिकारियों को आदेश देते थे कि किसान की हर प्रकार से मदद के लिए उनका सर्वेक्षण करना चाहिए। किसान किस प्रकार खेती कर रहा है, उसके पास साधन की क्या कमी है, पानी की व्यवस्था किस प्रकार है आदि का विवरण गांव-गांव जाकर देखना और राजा को बताना। छत्रपति शिवाजी अपने सुभेदार को पत्र लिखते हैं, ''आप गांव-गांव घूमकर तथा किसानों की स्थिति की जानकारी देते रहना।''[९] जिन किसानों के पास खेती करने के लिए बैल नहीं तथा खाने के लिए अनाज नहीं वह खेती कैसे कर सकते थे। उन्हें कर्ज के रूप में पैसा देने की व्यवस्था छत्रपति शिवाजी ने की। वह कर्ज किसान की उपज से धीरे-धीरे वापिस लेने का नियम था। अगर खेती में उपज नहीं हुई तो उसका कर्ज माफ किया जाता था।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी का किसानों के प्रति दृष्टिकोन अत्यंत आदर्शमय था।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि छत्रपति शिवाजी किसानों की उन्नति ही देश की उन्नति मानकर कार्य करते थे। छत्रपति शिवाजी ने अनेक नियम बनाएँ तथा अनेक योजनाओं से किसानों का जीवन समृद्ध किया। किसानों के प्रति उनकी दृष्टि अत्यंत आधुनिक, आदर्श और वैज्ञानिक थी।

४.१.१.३ स्वभाषा शुद्धिकरण :

बचपन से हम जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, उसके प्रति अपना प्रेम होता है। अपनी भाषा में दूसरी भाषा के शब्दों का आक्रमण व्यक्ति के स्वभाव को ललकारता है। छत्रपति शिवाजी को गुलामी से नफरत थी। स्वाभाविक है कि अपनी भाषा में दूसरी भाषा के शब्दों के प्रति उन्हें नफरत थी। अपने जीवन काल में छत्रपति शिवाजी ने गुणीजनों को आश्रय दिया था।इन गुणीजनों में अनेक विद्वान-पंडित थे। इनके द्वारा छत्रपति शिवाजी ने जिन ग्रंथों की रचना की थी, उन ग्रंथों से उनका स्वभाषा-प्रेम, अभिरुचि की दृष्टि स्पष्ट होती है। उनके आदेश से ही कवींद्र परमानंद ने 'शिवभारत' नामक संस्कृत ग्रंथ की रचना की। उस समय महाराष्ट्र भाषा में बहुत से फारशी के शब्द थे। उन शब्दों को हटाकर स्वभाषा के शब्दों का प्रयोग करने का आदेश दिया। इसके संदर्भ में डॉ. वसंत मोरे कहते हैं, ''फारसी भाषा के इस आक्रमण को हटाने के लिए शिवाजी ने संस्कृत भाषा के विद्वानों को प्रोत्साहित किया। छ. शिवाजी के प्रोत्साहन से ही धुंडीराज लक्ष्मण व्यास ने ''राजव्यवहार कोश'' नाम से एक संस्कृत ग्रंथ की रचना की। कृष्णाजी भट्ट द्वारा 'करण-कौस्तुभ' नामक जोतिर्गणित विषयक संस्कृत ग्रंथ की रचना हुई।''[१०] इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने परकीय भाषा का आक्रमण रोका तथा स्वभाषा को महत्व प्रदान किया। छत्रपति शिवाजी के इस भाषा शुद्धिकरण से सामान्य जनता को यह भाषा समझने लगी। राजकाज में क्या चल रहा है, यह समझने लगा। अत: सामान्य जनता को अपनी भाषा का महत्व समझा और छत्रपति शिवजी की भाषा तथा स्वराज्य अपना ही है यह भावना उनके मन में जागृत हो गयी।

छत्रपति शिवाजी ने हमेशा स्वभाषा का ही प्रयोग किया। अपने पत्र-व्यवहार की भाषा तथा बोलचाल की भाषा में स्वभाषा को ही स्थान दिया। विदेशियों के सामने भी उन्होंने स्वभाषा का ही आग्रह किया।

अत: हम यह कह सकते हैं कि भाषा की गुलामी छत्रपति शिवाजी को उचित नहीं लगी और स्वभाषा का विकास किया। स्वभाषा को सरल बनाया तथा उसका उपयोग उन्होंने राजकाज में किया।

४.१.१.४ अंधश्रद्धा का विरोध :

छत्रपति शिवाजी धार्मिक थे लेकिन अंधश्रद्ध नहीं। उन्होंने धर्म के नाम पर चलनेवाले बाह्यांडबर का तीव्र विरोध किया। ईश्वर के प्रति श्रद्धा तथा उससे निर्मित अंधश्रद्धा को शिवाजी राजा ने समाज के सम्मुख रखा। अंधश्रद्धा से समाज विकास में किस प्रकार की कठिनाईयाँ आती हैं यह सिद्ध किया। तत्कालीन समाज में सिंधुबंदी का नियम था। छत्रपति शिवाजी ने इस बाह्यांडबर रूपी नियम को खंडित करके आदर्श नौसेना का निर्माण किया। इस संदर्भ में चंद्रशेखर शिखरे लिखते हैं, ''हिंदू धर्म शास्त्र के अनुसार सागर मंथन पाप था। सन् १६५९ से शिवाजी महाराज ने नौसेना तथा बंदरगाह खडे करने का प्रारंभ किया। उन्होंने पश्चिम सागर तट पर विजयदुर्ग, सुवर्णदुर्ग बंधवाएँ।''[११] भारतीय नौसेना के वह जनक रहे। नौसेना से व्यापार की वृद्धि हुई तथा प्रजा की आर्थिक स्थिति सुधर गयी।

छत्रपति शिवाजी आधुनिक दृष्टि रखते थे। आधुनिक दृष्टिकोन को ध्यान में रखकर समाज में जो रुढि परंपराएँ थी उनका नाश किया तथा नया आदर्श स्थापित किया। इतना ही नहीं तो अपने पिता की मृत्यु के बाद उनकी माता जीजाबाई सती जाने का निश्चय करती है, तथा परंपरा का पालन करना चाहिए ऐसा मानती है, लेकिन छत्रपति शिवाजी इसका विरोध करते हैं।

इतना ही नहीं धार्मिक बाह्यांडबरों का छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक को विरोध था। धर्म के प्रचारक ब्राह्मणों ने छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक को कडा विरोध किया।

उनका मानना था कि पृथ्वी पर एक भी क्षत्रिय नहीं है। छत्रपति शिवाजी ने ऐसे धार्मिक बंधन को ठुकराकर अपना राज्याभिषेक किया। छत्रपति शिवाजी का मानना था कि अगर अत्याचारी मुस्लिम राजा बन सकते हैं, तो मराठा को भी राजा बनने का अधिकार है। डॉ. वसंत मोरे इस संदर्भ में लिखते हैं, 'परशुराम ने २१ बार पृथ्वी को नि:क्षत्रिय किया। अत: क्षत्रिय न होने से हमारा राजा होना संभव नहीं था। भारतीय क्षत्रियों का मनोबल टूटा था। शिवाजी ने अपना राज्याभिषेक संपन्न करके इस अंधश्रद्धा का नाश किया और भारत में फिर से क्षात्र तेज में उत्साह भर दिया।'[१२]

छत्रपति शिवाजी ने प्रत्येक कार्य श्रद्धा, बुद्धि तथा विवेक से किया। अंधश्रद्धा रूपी सामाजिक बंधनों को तोडकर समाज को एक नई दिशा, नई प्रेरणा, नई चेतना प्रदान की। इतना वैज्ञानिक दृष्टिकोन रखनेवाले छत्रपति शिवाजी एकमात्र राजा थे। उनका सामाजिक योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण तथा पथ दर्शक है।

४.१.२ आर्थिक योगदान :

स्वराज्य निर्माण करनाअसाधारण कार्य होता है। स्वराज्य व्यवस्थित चलाने के लिए बहुत धन की आवयकता होती है। केवल धन होने से काम नहीं होता। उसकी आय-व्यय का नियोजन करना पडता है। कुशल स्वराज्य निर्मिति में जिस प्रकार नेता में बुद्धि, वीरता, संगठन कौशल्य, दूरदर्शिता , कुशल राजनीतिज्ञ आदि गुणों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार अर्थनीति नियोजन को भी अत्यंत महत्व है। अर्थ से ही सेना और जनता का विकास होता है। छत्रपति शिवाजी ने अर्थ का नियोजन अत्यंत सफलता से किया था। छत्रपति शिवाजी के समय महाराष्ट्र की आर्थिक स्थिति अत्यंत विपरीत थी। खेती के अलावाआय का दूसरा साधन नहीं था। लेकिन अपनी बुद्धि से शिवाजी राजा ने आय के अनेक साधन निर्माण किये और राज्यकोष हमेशा भरा रखा। उन रुपयों को नियोजित व्यय भी किया।

४.१.२.१महसूल पद्धति :

छत्रपति शिवाजी के राज्य के आय का एकमात्र साधन महसूल था। उसके बाद अनेक मार्गों से अर्थ निर्माण का कार्य छत्रपति शिवाजी ने किया। किसानों की जमीनदेखकर उसकी उपजाऊ ताकद देखकर ही महसूल तय किया जाता था। शिवकालीन महाराष्ट्र में उपजाऊ जमीन काफी कम थी। छत्रपति शिवाजी ने जमीन की उपजाऊ क्षमता बढाने के लिए प्रयत्न किये। जो बंजर जमीन थी उसे उपजाऊ बनाने को प्रोत्साहन दिया। छत्रपति शिवाजी जानते थे कि किसान राज्य की अर्थ-व्यवस्था का प्रधान अंग है। इसलिए छत्रपति शिवाजी ने भूमिहीन को जमीन, बुआई के लिए बीज, खेती का महत्वपूर्ण साधन बैल, पैसा आदि देकर किसानों का हौसला बढाया। किसानों को अनेक प्रकार की सुविधाएँ दीं।

सेना संचलन में किसानों की फसल को क्षति न पहुँचे इसलिए अनेक नियम बनाएँ। किसानों का हित ध्यान में रखकर छत्रपति शिवाजी ने जमींदारी पद्धति नष्ट की तथा किसानों की जमीन नापकर उचित महसूल तय किया। गांव-गांव में जमीन का प्रकार अलग था इसलिए महसूल में थोडा बहुत बदलाव किया जाता था। जमीन नापना, उसकी उपजाऊ ताकद देखना तथा महसूल तय करना यह तीन प्रकार का कार्य छत्रपति शिवाजी के समय था। महसूल अनाज के रूप में भी लेने की पद्धति थी। खेती पर लगाए दूसरे सभी कर बंद करके 'राजभाग पचादुई' नाम से एक ही प्रकार का लगान तय किया। इसमें राज्य का हिस्सा लगभक २/५ था। इस लगान के संदर्भ में अ. व. कुलकर्णी लिखते हैं, ''बंटाई की योजना जहाँ लागू की गयी थी वहां रयत पर लागए गए अन्य कर बंद करके बंटाई के लगान में विलीन किए गए थे। इसमें राज्य का हिस्सा खेती की कुल उपज के २/५ 'राजभाग पचादुई' के अनुपात में वसुलने की प्रथा थी।''[१३]

महसूल में गरीब तथा निर्धन किसानों के प्रति छत्रपति शिवाजी सहानुभूति रखते थे तथा उन्हें कभी-कभी लगान माफ भी करते थे। इस प्रकार की महसूल पद्धति दूसरे राजाओं ने नहीं अपनायी थी। इसलिए छत्रपति शिवाजी के राज्य के किसान अत्यंत प्रसन्न

थे। राजा के प्रति उनके मन में स्वामीभक्ति जागृत हो गयी और छत्रपति शिवाजी के आर्थिक सुधार करने में किसानसहायक हुए। छत्रपति शिवाजी का राज्य सामान्य जनता का राज्य है यह महसूस हुआ।

४.१.२.२ व्यापार उद्योग :

प्रजा को समृद्ध बनाने के लिए तथा स्वराज्य के लिए छत्रपति शिवाजी ने व्यापार को बढावा दिया और नए उद्योग निर्माण किये। स्वदेशी व्यापारियों को व्यापार केंद्र निश्चित कर दिये तथा स्वदेशी कारीगर का माल जादा भाव से बेचा जाए इसके लिए ध्यान दिया। विदेशियों की वस्तुओं पर भारी आयकर लगाया जाता था। इसके पीछे उनकी स्वदेश की भावना थी। स्वदेशी माल की बिक्री कम हो गयी तो अपना कारीगर बेकार हो जाएगा यह भी छत्रपति शिवाजी जानते थे। छत्रपति शिवाजी की यह दृष्टि व्यापक थी। व्यापार और उद्योग को बढावा मिले इसलिए छत्रपति शिवाजी ने अनेक व्यापारी केंद्र बनाए। इसके संदर्भ में अ. व. कुलकर्णी लिखते हैं, ''शिवाजी के काल में कोंकण के प्रदेश में कई भीड भरे व्यापारी केंद्र थे। फैक्टरी रोकॉर्ड्स में ऐसे उल्लेख पाए जाते है कि चौल, दाभोल, कल्याण, भिवंडी, वेंगुर्ला और पेण आदि उद्योग तथा व्यापार के विकसित केंद्र थे।''[१४]

स्वराज्य का व्यापार सत्यता, सचोटी तथा नेक होना चाहिए यह छत्रपति शिवाजी की नीति थी। आय तथा व्यय व्यवहार पर कर लगाया जाता था। विदेशी व्यापारियों पर भारी कर लगाया जाता था। डच व्यापारियों को छत्रपति शिवाजी ने व्यापार करने की अनुमति दी लेकिन उस पर भारी कर लगाया। गोविंद पानसरे लिखते हैं, ''शिवाजी महाराज के समय महाराष्ट्र में डच व्यापारी व्यापार करते थे। उन्होंने व्यापार को अनुमति की मांग की। महाराज ने वह दी लेकिन कुछ निर्बंध लगाए। उसमें चुँगी का एक निर्बंध था।''[१५]

छत्रपति शिवाजी ने सन् १६६९ में दाभोल बंदरगाह अपने कब्जे में लिया। छत्रपति शिवाजी के समय यह बंदरगाह अत्यंत मशहुर था। रत्नागिरी जिले का मशहुर

बंदरगाह राजापुर एक प्रमुख व्यापार का केंद्र था। यहाँ सूरत की अपेक्षा वस्तुएँ सस्ते में मिलती थी। ''शिवाजी के कब्जे में राजापुर, दाभोल तथा केलशी के बंदरगाह थे जो मुंबई से किये जानेवाले व्यापार की दृष्टि से अत्यावश्यक माने जाते थे। अंग्रेजों की यह धारणा थी कि सूरत की अपेक्षा यहाँ वस्तुएँ अधिक सस्तें में मिल सकती है।''[१६]

छत्रपति शिवाजी ने अपने राज्य के विकास के लिए नौसेना का निर्माण किया। छत्रपति शिवाजी ने कल्याण, भिवंडी, वेंगुर्ला, मालवण आदि शहरों में जहाज बंधवाने का उद्योग शुरु किया। इस उद्योग से हजारों लोगों को रोजगार मिला। डॉ. सोमनाथ रोडे के शब्दों में, ''कल्याण, भिवंडी, पनवेल, वेंगुर्ला, मालवण आदि जगह पर जहाज निर्मिति का उद्योग शुरु किया। विविध प्रकार के जहाजों को यहां निर्माण होने लगा।''[१७]

छत्रपति शिवाजी के समय व्यापार की वस्तुएँ इस प्रकार की थी – अनाज गल्ला, मसालों के पदार्थ, कपडा, फल तथा अन्य पदार्थ, प्राणी तथा अन्य वस्तुएँ जो नित्य व्यवहार उपयोगी हो। व्यापार तथा उद्योग के व्यवसाय से राज्य कोष में कर के रूप में पैसा आता था। स्वराज्य कोष भरा रहे तथा देश कार्य के लिए उसका उपयोग सुनियोजित हो यह हमेशा छत्रपति शिवाजी का प्रयास रहा।

४.१.२.३कर प्रणाली :

छत्रपति शिवाजी ने जमीन महसूल के अलावा प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में अनेक कर निर्धारित किये और स्वराज्य की आर्थिक स्थिति सुधारने का कार्य किया। इनामपट्टी, मिरासपट्टी, देशमुखपट्टी जैसे प्रत्यक्ष कर थे। राज्याभिषेक के समय में सिंहासन पट्टी नामक कर लगाया गया था। व्यापार पर कर लगाया जाता था। इनमें बुनकर को मात्र पट्टी, चमार को पायपोशी इस प्रकार के कर रहते थे। अप्रत्यक्ष कर में चुंगी, बानगी, फसकी, फलकी, सेवाधारी आदि थे। इसके अलावा अनाज, फल, जानवर, नमक आदि की बिक्री पर भी अनेक कर थे जिससे स्वराज्य का उत्पन्न बढता था। इन करों को तय करते समय गरीब जनता को नुकसान न पहुँचे इसका ध्यान रखा जाता था।

इनामपट्टी के नाम से जो कर लगाया जाता था वह प्राय: नैमित्तिक होता था। इनामदारों को दी जानेवाली जमीन संभावत: कर मुक्त होती थी। फिर भी युद्ध जैसे आपात काल में राज्य को जब अधिक धन की आवश्यकता हो तब इनामदारों से यह कर वसूल किया जाता था। मरासपट्टी एक साथ राज्य के सभी प्रदेशों में नहीं लगाई जाती थी। यह भी एक प्रकार से नैमित्तिक कर था। मिरासदार के पास वंशपरंपरा से जमीन का स्वामित्व होता था। जो मिरासदार छोटी जमीन का मालिक था तथा उसे दी गई जमीन से उपज कम निकलती थी तो उस पर यह कर लागू नहीं किया जाता था। जो मिरासदार अपनी जमीन से बहुत मुनाफा कमाते थे, उन पर यह कर लागू होता था। सिंहासन पट्टी यह प्रासंगिक कर था। राज्याभिषेक समारोह के लिए यह कर लिया गया था, यह कर वतनदार तथा मिरासदारों से ही लिया जाता था। अ. रा. कुलकर्णी इसके संदर्भ में कहते हैं, ''राज्यभिषेक के वर्ष सभी वतनदारों एवं मिरासदारों पर सिंहसनपट्टी लगाई गई थी।''[१८]

छत्रपति शिवाजी ने अपनी बुद्धि से इस कर प्रणाली का उपयोग राज्य कोष वृद्धि के लिए किया। जकात कर अप्रत्यक्ष था। राज्य में लानेवाले तथा राज्य से बाहर जानेवाली वस्तुओं पर यह कर लगाया जाता था। आम तौर पर राज्य की सीमा लांघकर दूसरे राज्यों में भेजी जानेवाली चीजें चुंगी के दायरे में आती थीं। कई बार विदेशी व्यापारियों को अपना माल मराठी राज्य के प्रदेश से अन्य राज्यों में ले जाना पडता था। ऐसे समय में छत्रपति शिवाजी का शासन उन विदेशी व्यापारियों से चुंगी वसूल करता था।

इस प्रकार शिवाजी राजा ने विविध कर निर्माण करके राज्य की आर्थिक नींव मजबूत की।

४.१.२.४ अर्थ निर्माण के अन्य स्त्रोत :

छत्रपति शिवाजी एक चतुर शासक थे। अपनी विलक्षण बुद्धि तथा दूरदर्शिता से उन्होंने आय के अनेक मार्ग तैयार किये। स्वराज्य चलाने के लिए भारी रकम की आवश्यकता थी यह जानकर छत्रपति शिवाजी ने अपनी अपार बुद्धि से स्वराज्य का कोष

कभी खाली नहीं होने दिया। चौथ तथा चौथाई स्वराज्य के अर्थिक आय का एक स्त्रोत था। अपने प्रदेश की पैदावार का हिस्सा छत्रपति शिवाजी के राज्य को पास पडोस के राजा वतनदार देते थे क्योंकि छत्रपति शिवाजी उनका संरक्षण करते थे, तथा उन पर आक्रमण नहीं करते थे। ''मल्हारराव के अनुसार, शिवाजी नर्मदा तक चौथ वसूल करते थे। भूषण भी यहीं कहते हैं कि 'आय धर करी हद रेवा की।''[१९]

युद्ध में शत्रु की हार होती थी तो वह अपनी जान बचाने के लिए सब संपत्ति तथा प्राणियों को छोडकर भाग जाते थे। वह सब माल जप्त किया जाता था और राजकोष में रखा जाता था। अफजल वध प्रसंग में छत्रपति शिवाजी को हजारों रुपयों का माल मिला था। इसके संदर्भ में सोमनाथ रोडे लिखते हैं, ''खान के पास हाथी, ऊँट, घोडे तथा लाखों रुपयों के जड-जवाहिर मराठों को मिले। ...शिवाजी ने युद्ध में बहुमोल काम करनेवालों को भरपूर तोहफे दिये।''[२०]

गुजरात का प्रसिद्ध शहर सूरत अमीर शहर था। यह शहर अंग्रेज, डच जैसे यूरोपीय व्यापारियों का प्रमुख केंद्र था। धनवान व्यापारियों से यहाँ की बाजार पेठ हमेशा भरी-पूरी थी। इस शहर से औरंगजेब को भारी कर मिलता था। यहाँ के बंदरगाह से पार्शियन, अरेबियन, आफ्रीकन, चीनी तथा अन्य यूरोपियन व्यापारियों का व्यापार चलता था। आयात-निर्यात का वह प्रमुख केंद्र था। इस शहर के रक्षण के लिए इनायत खान नाम का सुभेदार था। वह बहुत विलासी था। इसका सूक्ष्म अध्ययन शिवाजी राजा ने किया और सूरत पर हमला किया। पहले तो उन्होंने व्यापारियों को सूचना दी थी कि अपनी-अपनी आमदनी देखकर हमें कुछ धन दे दो। जिन्होंने छत्रपति शिवाजी का कहना माना उन्हें आजाद कर दिया लेकिन जिन व्यापारियों ने छत्रपति शिवाजी का कहना नहीं माना उन्हें पूरी तरह से लूट लिया गया। सूरत लूट की सब धन राशी लेकर छत्रपति शिवाजी सकुशल लौट आते हैं। यह धनराशी एक करोड के आस-पास थी। डॉ. सोमनाथ रोडे इसके संदर्भ में कहते हैं, ''अंग्रेजों के पत्र में शिवाजी ने सूरत लूट की वस्तुओं में होन, माल, मोती, हिरे मिलाकर लगभग एक करोड के थे।''[२१]

सूरत लूटने का छत्रपति शिवाजी का मुख्य उद्देश्य औरंगजेब को शिकस्त देना था। साथ ही स्वराज्य का उत्पन्न बढे और उसका विकास हो यह भी था। सूरत के धन का उपयोग शिवाजी ने अपनी नौसेना निर्माण तथा जलदुर्ग बनाने के लिए किया।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने अपने बुद्धि चातुर्य से विविध मार्गों से धन एकत्रित किया तथा उसका उपयोग स्वयं के लिए न करके स्वराज्य के लिए किया।

४.१.३ धार्मिक योगदान :

मानव का सदाचार से युक्त जीवन का विकास करना धर्म का उद्देश्य होता है। ईश्वर को जानने का प्रयत्न विभिन्न धर्मियों ने विविध प्रकार से किया है। उनके धर्म साधना के प्रकार अलग हैं मगर, उनकी मंजिल एक ही है। सदाचार के नियम सभी धर्मों में समान ही हैं। राजनीतिक स्वार्थ के कारण तथा बाह्यांडबर से अलग-अलग धर्मियों से संघर्ष निर्माण होता है। इस संघर्ष के कारण मानव की अपरिमित हानि होती है। भारत वर्ष में विभिन्न धर्म के लोग निवास करते आए हैं। धार्मिक कट्टरता के कारण उनमें संघर्ष होते है। इन संघर्षों को नष्ट करने के लिए सहिष्णु नेता की आवश्यकता होती है। छत्रपति शिवाजी की भावना सहिष्णु थी।

अत: उन्होंने कभी भेदभाव न करते हुए अपने बुद्धि चातुर्य से समूचे धर्मियों को एकत्रित किया और स्वराज्य स्थापन किया। यह छत्रपति शिवाजी का अनमोल योगदान रहा है।

४.१.३.१ सर्वधर्म समभाव :

छत्रपति शिवाजी ने अपने व्यक्तिगत जीवन में हिंदू धर्म के आचरण का पालन निष्ठा से किया था। लेकिन अपने राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन में उनका दृष्टिकोण सर्वधर्म समभाव का था। छत्रपति शिवाजी का शासन अत्याचार के विरोध में था। किसी धर्म के विरोधी नहीं। छत्रपति शिवाजी का राज्य किसी एक धर्म का नहीं था।

छत्रपति शिवाजी के दरबार में मराठों को जितना सम्मान था उतना ही सम्मान मुसलमान तथा अन्य धर्मों के लोगों को था। छत्रपति शिवाजी का धार्मिक कार्य अत्यंत प्रगत तथा दूरदर्शी था। वह केवल अत्याचारियों का विरोध करते थे, वह किसी भी धर्म का हो। छत्रपति शिवाजी के नौसेना का प्रमुख दौलत खान था, उनका वकील काजी हैदर था, तोफखाना प्रमुख इब्राहीम खान था, उनका व्यक्तिगत सेवक मदारी मेहतर अत्यंत विश्वासु था जिसे छत्रपति शिवाजी के परिवार में सम्मान मिलता था। डॉ. वसंत मोरे के शब्दों में, ''शिवाजी ने अत्याचारी शासकों का विरोध किया। मुसलमान धर्मियों का नहीं किया। मदारी मेहतर उनका व्यक्तिगत सेवक था। मराठों के सिंहासन पर गिलाफ चढाने और उतारने का सम्मान मदारी मेहतर को था।''[२२]

धर्म समाज के लिए होता है। समाज का शोषण करनेवाली धर्म व्यवस्था ठुकराने का अधिकार समाज को है। छत्रपति शिवाजी ने समाज का अधिकार उन्हें वापिस दिया तथा समाज को शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान की। राजसत्ता धर्म से श्रेष्ठ है यह समाज को दिखाया तथा उनको अपने अधिकार की जानकारी दी। एक हिंदू राजा होने से भी उनमें धार्मिक कट्टरता नहीं थी। इसके विशेष संदर्भ में भगवानदास तिवारी कहते हैं, ''हिंदू राजा होने पर भी छत्रपति शिवाजी में धार्मिक कट्टरता या धार्मिक अनुदारता नहीं थी।''[२३]

छत्रपति शिवाजी के समय यवनों ने जबरन अनेक हिंदुओं को मुसलमान बनाया। छत्रपति शिवाजी ने उसका विरोध किया। प्रत्येक व्यक्ति को अपना धर्म प्रिय होता है और उसका पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का कार्य होता है। छत्रपति शिवाजी ने मानवतावादी धर्म का आचरण किया। अपने राज्य को संपन्न तथा प्रगत करने के लिए केवल मानवता धर्म की आवश्यकता है यह बात छत्रपति शिवाजी जानते थे।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी के मन में सर्वधर्म समभाव की भावना थी।

४.१.३.२ धर्म रक्षक :

छत्रपति शिवाजी के समय अपने देश पर मुस्लिम राजाओं का शासन था। अत्याचारी मुस्लिम राजा तथा उनके सरदारों ने स्वधर्म के विकास हेतु हिंदू धर्म को

अपरिमित क्षति पहुँचाई। छत्रपति शिवाजी के राज्य का मुख्य उद्देश्य सर्वधर्म समभाव था। लेकिन उन्होंने अपने हिंदू धर्म की रक्षा भी की। स्वधर्म रक्षा हेतु उन्होंने अपनी जान भी हथेली पर ली थी। इतना ही नहीं तो छत्रपति शिवाजी ने अपने हिंदू धर्म पालन का सही कार्य किया तथा उसकी रक्षा की। उनके एक इशारे से ही हजारों लोग अपने धर्म रक्षा हेतु छत्रपति शिवाजी का साथ देने को तैयार होते थे।

छत्रपति शिवाजी ने अपनी बुद्धि से हिंदुओं का संगठन किया था। उन्होंने आदर्श स्थापित किया कि जब हिंदू जनता संघटित होती है तो विराट यवनों का नाश कर देती है। छत्रपति शिवाजी ने यह संघटन दूसरे धर्म को नष्ट करने के लिए नहीं किया। तो हिंदू धर्म तथा संस्कृति का रक्षण करने के लिए किया था। सरदेसाई इसके संदर्भ में लिखते हैं, ''शिवाजी का मुख्य उद्देश्य धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करना था, प्रदेश प्राप्त करना नहीं। संपूर्ण भारत में हिंदू धर्म के रक्षणार्थ वे नि: संदेह अग्रगण्य थे।''[२४] अपने जीवन काल में शिवाजी ने हिंदू धर्म का रक्षण किया। जो यवन धर्मांधता से अत्याचार कर रहे थे उनको सबक सिखाया। अफजल खाँ, शाईस्ता खाँ तथा अन्य यवनों को ललकार कर अपने धर्म की रक्षा की।

४.१.३.३ धर्मउद्धारक :

भारत पर यवनों का आक्रमण होता था। धर्मांध यवन अपना शासन दृढ बनाने के लिए हिंदुओं को जबरदस्ती से मुसलमान बनाते थे। मुसलमान बनने के बाद हिंदू उसके प्रति क्रोधित होते थे इसलिए जबरन बनाए गए मुसलमान कट्टर बनते थे। लेकिन उसकी इच्छा होने के बाद भी वह फिर हिंदू नहीं बन सकते थे। हिंदू राजाओं ने तथा किसी ने भी धार्मिक कडे नियमों को तोडने कासाहस नहीं किया। जबरन बनाए गए मुसलमानों को वापिस अपने हिंदू धर्म में कोई स्थान नहीं था। लेकिन छत्रपति शिवाजी भारत के प्रथम ऐसे राजा थे जिन्होंने धर्मशुद्धिकरण कर फिर से हिंदू धर्म में आने का रास्ता खुला किया। इसके संदर्भ में गोविंद पानसरे लिखते हैं, ''शिवाजी ने मुसलमान हुए हिंदुओं को वापिस हिंदू किया। केवल हिंदू ही नहीं किया तो उनके साथ रिश्ता भी जोड दिया। वह धर्मांतर

कर गये थे इसलिए शूद्र हो गये थे तथा उनके साथ रिश्ता कैसे जोडा जाए ऐसा शिवाजी ने विचार नहीं किया।''[२५]

छत्रपति शिवाजी के सेनापति नेताजी पालकर आपसी बेबनाव से स्वराज्य छोडकर मुगलों को जा मिले थे। उसका धर्म परिवर्तन किया गया था। उसका नाम मुहम्मद कुलीखान रखा गया। उसने स्वधर्म में आने की इच्छा व्यक्त की। धार्मिक बंधन कडे होने के बाद भी शिवाजी राजा ने उसका शुद्धिकरण किया और उसे हिंदू बनाया।

छत्रपति शिवाजी ने अपने स्वराज्य के लिए स्वराज्य का भविष्य उज्ज्वल करने के लिए अपने सरनोबत का धर्म शुद्धिकरण किया। यह उनका कार्य अत्यंत क्रांतिकारी था। छत्रपति शिवाजी ने मुख्यत: अन्याय का प्रतिकार किया। उन्होंने हिंदुओं का संगठन किया तथा हिंदू धर्म तथा संस्कृति का रक्षण किया। इन सब कार्यों के द्वारा छत्रपति शिवाजी हिंदू धर्म का उद्धार करना चाहते थे। कवि भूषण इस संदर्भ में कहते हैं कि संसार के सभी हिंदुओं के उद्धार और तुर्कों के नाश के लिए वीर छत्रपति शिवाजी खौल उठते हैं-

''भूषण जहान हिंदुवान के उबरिबे को।
थुरकान मारिबो को वीर बलकत है।''[२६]

छत्रपति शिवाजी स्वधर्माभिमानी थे इसलिए उन्होंने यह कार्य किया। अपने धर्म का वे सम्मान करते थे, लेकिन दूसरे धर्म का कभी द्वेष नहीं करते थे। उनका धर्म संबंधी दृष्टिकोण उदार था। अत: हम यह कह सकते हैं कि छत्रपति शिवाजी सच्चे धर्म उद्धारक थे।

४.१.३.४समताधिष्ठित समाज का निर्माण :

छत्रपति शिवाजी के समय सामाजिक स्थिति विषम थी। देशमुख, देशपांडे, जागीरदार, देसाई, कुलकर्णी आदि वतनदार यवनी शासन के अधिपत्य में अपने-अपने प्रदेशों पर स्वतंत्र राज करते थे। गरीब जनता पर अनेक प्रकार के जुल्म करते थे। जनता

अत्याचार तथा गुलामी से त्रस्त थी। जनता का धन तथा आबरु भी सुरक्षित नहीं थी। इन वतनदारों का छत्रपति शिवाजी राजा को स्वराज्य स्थापना में विरोध था। छत्रपति शिवाजी कालीन हिंदू समाज में ऊँच-नीचता का भेदभाव था। उच्चवर्ग, निम्नवर्ग, आदि भेदहो गये। वर्ग प्रधान संस्कृति के कारण उच्च वर्ग निम्नवर्ग पर अत्याचार करना ही अपना कार्य समझता था। ऐसी परिस्थिति में छत्रपति शिवाजी एकमात्र राजा थे, जिन्होंने सब लोगों को समान दृष्टि से देखा। छत्रपति शिवाजी ने जाति को त्यागकर गुणों के आधार पर लोगों को परखा और उनका विकास किया। छत्रपति शिवाजी राजा ने ब्राह्मण, मराठा, नाई, कुणबी, रामोशी, गोंधळी, महार, मांग, वाणी, चमार, घिसाडी, मुसलमान आदि सभी को गुणों के आधार पर स्वराज्य के महान कार्य में स्थान दिया। डॉ. वसंत मोरे लिखते हैं, ''हिंदुओं में उँच नीचता के जो भेद थे, उन भेदों की अपेक्षा करके, जाति को छोड गुणों को महत्व देकर उन्हें विकास के समान अवसर प्रदान किये। वाई जिला-सातारा के दक्षिण-पश्चिम में छह मील पर स्थित 'बावधन' अथवा 'विराट गढ' के किले पर एक अछूत जनजाति के व्यक्ति को हवालदार के रूप में नियुक्त किया था। जिससे उसकी प्रतिष्ठा उच्च-वर्णियों के बराबर या उनसे भी श्रेष्ठ हो गई थी।''[२७] इसके साथ ही शिवा काशिद और जीवा महाला दोनों नाई जाति के थे तथा उन्होंने अपनी जान की पर्वा न करके छत्रपति शिवाजी की जान बचाई।

शिवकाल में यवनी राज्यकर्ता धर्म के नाम पर शासन करते थे। यह राज्यकर्ता अपने जीते हुए प्रदेशों की जनता पर अपना धर्म लादने का प्रयास करते थे। इससे मूल भारतीयों का दमन होता था। छत्रपति शिवाजी ने इस धर्म पतन रूपी अत्याचार का विरोध करने के लिए हिंदवी स्वराज्य की स्थापना की।

छत्रपति शिवाजी ने हिंदू राष्ट्र का निर्माण किया फिर भी उनमें धार्मिक कट्टरता नहीं थी। उनके शासन काल में विभिन्न धर्म के लोगों के प्रति उदारता तथा समान न्याय था। उनका राज्य धर्मनिरपेक्ष तथा समताधिष्ठित था। छत्रपति शिवाजी ने अपने स्वराज्य में जिन लोगों को साथी, सलाहकार सेवक, सेनापति चुना, उनमेंसब जातियों के तथा

अलग-अलग धर्मों के लोग थे। उनकी सेना में अनेक पठाण थे तथा कई मुस्लिम अधिकारियों को उँचे पद भी दिए गए थे। सिद्दी संबल, सिद्द मिश्री तथा दरिया सारंग, दौलत खाँ, सिद्दी हलाल तथा नूरखाँ छत्रपति शिवाजी के कुछ विशिष्ट मुसलमान अधिकारी थे। मुस्लिम धर्म के काजी को छत्रपति शिवाजी ने न्यायाधीश पद पर नियुक्त किया और उसका सम्मान किया। इस प्रकार छत्रपति शिवाजी की प्रजा में मुस्लिम भी हिंदू की तरह धार्मिक निरपेक्षता के कारण सुखी, संतुष्ट तथा स्वतंत्र निवास करते थे। इतना ही नहीं छत्रपति शिवाजी ने बाबा याकूत को अपना गुरु माना था। इसके संदर्भ में डॉ. वसंत मोरे लिखते हैं, ''हिंदू धर्म को छोडकर मुस्लिम, ईसाई तथा अन्य धर्मों के प्रति भी छत्रपति शिवाजी का व्यवहार उदारता का था। नूर बेग, मदारी मेहतर, इब्राहिम खाँ, काझी हैदर आदि अनेक मुस्लिम जाति के अधिकारी शिवाजी के स्वराज्य में निष्ठा से काम करते थे। इतना ही नहीं केलसी के बाबा याकूत छत्रपति शिवाजी के अध्यात्मिक गुरु थे।''[२८]

छत्रपति शिवाजी भारत के राष्ट्रनायक हैं। उनकी दृष्टि न हिंदुओं तक सीमित थी, न महाराष्ट्र तक। छत्रपति शिवाजी की दृष्टि संपूर्ण भारत तथा भारत में रहनेवाली सभी जाति-जनजाति तक व्यापक थी। छत्रपति शिवाजी प्रत्येक सेनानी को अपने परिवार का सदस्य मानते थे। विविध जाति के लोग उनके राज्य में संपन्न थे। राजा और प्रजा में कोई अंतर नहीं था। राजा जनता का सेवक होता है यह शिवाजी ने अपने कार्य से सिद्ध किया। इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने समताधिष्ठित समाज का निर्माण कर समाज को नई दिशा, नई प्रेरणा दी।

अत: छत्रपति शिवाजी का धार्मिक कार्य अत्यंत वैज्ञानिक व्यापक दिशादर्शक का है।

४.१.४ सांस्कृतिक योगदान :

भारतवर्ष की संस्कृति प्राचीन तथा आदर्श है। इन आदर्शों के बलपर संसार के नीति मूल्यों को सुरक्षित रख सकते है। भारत वर्ष में अनेक महापुरुषों ने अपने

आदर्शसांस्कृतिक आचरण से अपना व्यक्तित्व निर्माण किया है। उस व्यक्तित्व की प्रेरणा गुणीजन सतत लेते रहते हैं। ऐसे आदर्श आचरण के महापुरुषों का समाज पर भारी प्रभाव रहता है। छत्रपति शिवाजी अपनी संस्कृति का आचरण करनेवाले आदर्श महापुरुष थे। उनके आचरण की प्रेरणा हमेशा समाज ग्रहण करता आया है। उन्होंने प्रतिकूल परिस्थिति में स्वराज्य निर्माण कर अपनी संस्कृति की रक्षा की।

४.१.४.१ हिंदू संस्कृति रक्षक :

छत्रपति शिवाजी के समय अपने देश पर यवनों का शासन था। उन्होंने अपने शासनकाल में अनेक लोगों का धर्म परिवर्तन किया था। याने विशेष रूप से हिंदुओं का। हिंदू के श्रद्धा स्थानों को उद्धस्त करने में उनको संकोच नहीं होता था। पर स्त्रियों को उपभोग की वस्तु मात्र मानते थे। उनके इस अत्याचार से जनता भयभीत हो गयी थी। जनता के मन में विद्रोह की भावना निर्माण होती थी लेकिन कोई वीर पुरुष नेतृत्व नहीं करता था। छत्रपति शिवाजी के उदय से इस अत्याचार से समाज की मुक्ति हो गयी। छत्रपति शिवाजी ने इस विद्रोही भावना के साथ समाज का सफल नेतृत्व किया। हिंदू धर्म संस्कृति की उन्होंने रक्षा की। छत्रपति शिवाजी अपनी संस्कृति के प्रतीक है तथा उनमें सहानुभूति, स्वावलंबन, उत्साह और क्रियाशीलता की तेजस्विनी शक्ति है।

इसके पहले भी जिक्र किया है कि छत्रपति शिवाजी को गुलामी से नफरत थी। उन्होंने अपनी वीरता, बुद्धि, दूरदृष्टि आदि गुणों से स्वराज्य का निर्माण किया। समाज पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार से समाज की मुक्ति की। उनका स्त्री विषयक दृष्टिकोण उदार था। भारतीय संस्कृति में स्त्री को सम्मान है। छत्रपति शिवाजी ने स्त्रियों को समानता प्रदान की। किसी भी निर्णय को तय करने से पहले अपनी माता जीजाबाई की वह सलाह लेते थे। उनकी स्त्री संबंधी भूमिका स्पष्ट करते हुए श्रीमंत कोकाटे लिखते हैं, ''शिवाजी ने स्वराज्य की तथा दूसरे राज्य की स्त्रियों का आदर किया। जिसे यश चाहिए उसने स्त्री अभिलाषा छोड देनी चाहिए। स्त्री मराठों के देवालय की देवता है। इस देवता का हमें आदर करना चाहिए।''[२९]

छत्रपति शिवाजी ने देखा था कि यवन राजा हिंदू संस्कृति, धर्म आदि को हानि पहुँचाते थे। अनेक प्रसंगों में उनका अन्याय, अत्याचार दिन-ब-दिन बढता था। अत: छत्रपति शिवाजी के मन में इन अत्याचारियों के प्रति घृणा निर्माण हो गयी और उन्होंने स्वराज्य की स्थापना की। अपने धर्म, संस्कृति, समाज का रक्षण किया।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने अपने धर्म तथा संस्कृति का रक्षण किया। अन्याय-अत्याचार के खिलाफ आवाज बुलंद की। उन्होंने संस्कृति का स्वयं पालन किया और समाज को नई प्रेरणा दी। उनकी राजनीति, समाज के प्रति दृष्टि, देश-प्रेम जागृति की प्रेरणा, धर्म संस्कृति रक्षण, परंपरा का पालन अत्यंत आदर्श प्रिय था।

४.१.४.२ उदात्त सांस्कृतिक नीति :

छत्रपति शिवाजी हिंदू राजा थे। उन्होंने व्यक्तिगत जीवन में हिंदू धर्म का आचरण किया तथा सामाजिक जीवन में उनकी धर्म तथा सांस्कृतिक नीति उदात्त थी। उन्होंने अपने जीवन में कभी दूसरे धर्म का अपमान तथा तिरस्कार नहीं किया। उनकी इसी नीति और स्वभाव के कारण उनकी सेना में सर्वधर्म नीति और स्वभाव के कारण उनकी सेना में सर्वधर्म के लोग थे। शिवाजी ने भी उन्हें बडे विश्वास के साथ अपनी सेना में सम्मान दिया।

छत्रपति शिवाजी राजा ने अपने राज्य काल में अनेक धर्मियों को सम्मानित किया। साथ ही अनेक मंदिर तथा मस्जिदों को दान भी दिया। उन्होंने कभी किसी मस्जिद की ईट को हाथ भी नहीं लगाया। यह संस्कृति जीवित रहे इसलिए मंदिर तथा मस्जिद की देखभाल का उपाय किया। इसके संदर्भ में गोविंद पानसरे लिखते हैं, ''राज्य में देव-देवालय जगह-जगह पर थे। वहाँ दिया-बत्ती, पूजा-पाठ यथायोग्य किया। मुसलमानों के पीर, मस्जिद उनके धार्मिक विधि यथा योग्य चलाये।''[३०] जो बात मंदिर –मस्जिद की थी वहीं बात साधु तथा संतों की थी। छत्रपति शिवाजी ने अपने जीवन में अनेक मुसलमान साधु, फकीर, पीर आदि को सम्मानित किया। छत्रपति शिवाजी के गुरु में याकूत बाबा इस मुसमान संत का भी समावेश है।

जिस प्रकार शिवाजी राजा ने अपने राज्य में हिदू स्त्रियों का सम्मान किया उसी प्रकार दूसरे धर्म की स्त्रियों का सम्मान किया। छत्रपति शिवाजी एकामत्र राजा थे जिसकी नीति उदार थी। उन्होंने अपने जीवन में मानवता धर्म का पालन जान से भी ज्यादा किया। अन्य धर्मों के प्रति वही आदरभाव रखते थे। इसलिए स्वराज्य कार्य के लिए उन्हें सभी धर्मों के लोगों ने जान की परवाह न करते हुए हमेशा साथ दिया।प्रत्येक धर्म का आचरण अलग होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपना धर्म प्रिय होता है। छत्रपति शिवाजी ने प्रत्येक धर्म को संरक्षण दिया। इतना ही नहीं तो उनकी परंपरा, रीति-रिवाज आदि का सम्मान किया।

छत्रपति शिवाजी ने मंदिर-मस्जिद, राम-रहीम आदि का भेद नहीं किया। साथ ही दूसरे धर्म के धर्मग्रंथों का भी आदर किया। युद्ध में उन्हें कुरान की कापी मिलने पर उसे आदर से उठाकर किसी मौलवी को देते थे। इससे समाज की विचार-शक्ति का विकास होता है तथा एकता की भावना निर्माण होती है। इस प्रकार की नीति से धर्म संघर्ष भी नहीं होते। इस संदर्भ में डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं, ''शिवाजी का मुसलमान स्त्री, कुरान और मस्जिद के प्रति आदरभााव सांस्कृतिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता की ओर संकेत करता है।''[३१]

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी का सांस्कृतिक कार्य सभी धर्मों का सम्मान करनेवाला था। उन्होंने केवल हिंदू धर्म तथा संस्कृति का रक्षण नहीं किया तो सभी धर्म-संस्कृति को समान न्याय दिया। उनकी सांस्कृतिक नीति सहिष्णु तथा उदात्त थी।

४.१.४.३लोककला का जतन :

शिवकाल में छत्रपति शिवाजी ने अनेक गुणीजनों को आश्रय दिया था। उनके जरिए, भारत की विविध कलाओं को, रीति परंपराओं को कायम रखा। अपने दरबार में अनेक कवियों को उन्होंने सम्मानित किया तथा उनसे अनेक ग्रंथ निर्माण किये। भारतवर्ष विविध धर्मों का देश होने से उनके विविध रीति परंपराएँ थी। उन परंपराओं में त्यौहार, उत्सव, विवाह, चित्रकला, हस्तकला, पोवाडा, भजन आदि थे। छत्रपति शिवाजी के

समय में पवाडा (पोवाडा) तथा काव्य आदि प्रकार का साहित्य अत्यंत कम मात्रा में था। जिससे तत्कालीन संस्कृति की झलक दृष्टिगत होती है। इसके संदर्भ में वा. सी. बेंद्रे लिखते हैं, ''शिवशाही समय के पोवाडे अत्यंत कम है तथा शिवाशाही का ऐतिहासिक काव्य भी अत्यंत कम उपलब्ध है।''[३२]

छत्रपति शिवाजी तलवार बाजी के साथ कलम से पद्यरचना करते थे तथा कवियों को भी आश्रय देते थे। राजवाडे उनकी पद्य रचना और रूचि के संदर्भ में लिखते हैं, ''शिवाजी की नीति, न्यायी, पराक्रमी... पर्वत पर तथासागर पर किले निर्माण करना, स्वभाषा को बढावा देना, स्वयं पद्य रचना करना, कवियों को आश्रय देना, नये शहरों का निर्माण करना, स्वधर्म की रक्षा करना... यह कार्य करनेवाला लोकोत्तर पुरुष भूमंडल को अक्षय ऋणी रखनेवाले केवल छत्रपति शिवाजी ही थे।''[३३]

छत्रपति शिवाजी राजा ने स्वभाषा का प्रयोग किया तथा अपनी भाषा में फारसी के शब्दों को हटाकर सरल, स्पष्ट, अर्थबोध होनेवाली भाषा का निर्माण किया। अपनी भाषा सरल होने से लोगों को वह समझने लगी। भाषा शुद्धिकरण से लोगों में छत्रपति शिवाजी की प्रतिमा आदर्श बन गयी।

छत्रपति शिवाजी के शासन काल में रहन-सहन एकदम अत्यंत सामान्य थी। जब स्वराज्य प्राप्त होकर स्थिर हो गया तब उन्होंने सेना को वेशभूषा प्रदान की। वेशभूषा के संदर्भ में अ. रा. कुलकर्णी लिखते हैं, ''शिवाजी राजा की सेना की वेशभूषा सामान्य थी। स्वराज्य निर्माण के प्रथम चरण में तो कमर में लंगोट, सिर पर मुंडासा तथा बाहुपर कंबल ऐसी सामान्य वेशभुषा मावलों की थी। आगे जब सेना की नियमों के आधार पर निर्मिति हो गयी तब उन्हें पगडी, कुडता, पायजमा इस प्रकार की वेशभूषा दी गयी थी।''[३४]

अपनी सेना विलासिता में न रहकर सदा कर्तव्य दक्ष रहें इसलिए स्त्रियों को सेना मेंसाथ लेना मना था। यवनों की सेना सदा विलासिता में डूबी थी। यवनी सेना की छावनी भारी होती थी। उसमें अनेक महंगे कपडों का समावेश था। यवनों की छावणी के मुकाबले

छत्रपति शिवाजी के छावणी का कपडा सस्ता था। जो वस्तुएँ आवश्यक होती थी उन्हें ही साथ लिया जाता था। जिस वस्तु की आवश्यकता नहीं उसे साथ न लाने का आदेश था। छत्रपति शिवाजी की छावणी में केवल दो तंबू थे। एक में राजा स्वयं रहते थे दूसरे में अन्य लोग। छत्रपति शिवाजी के जो अंगरक्षक थे उनकी वेशभूषा में सर पर टोप, शरीर पर रेशमी अंगरखा, बाहु पर सोना या चांदी का कंगण, गले में चांदी की मालाएँ, कर्ण कुंडल आदि का समावेश था।

छत्रपति शिवाजी के सेना के पास नगाडे, ढोलक आदि प्रकार का साहित्य था। समय-समय पर उनका उपयोग विविध प्रयोजनों से किया जाता था। इन नगाडों का स्वर इतना भीषण था कि शत्रु पर उसका प्रभाव पडता था और वह छिप जाते थे। भगवानदास तिवारी कहते हैं, ''जिस दिन शहाजी के पुत्र शिवाजी के नगाडे बजते हैं, उस दिन उन नगाडों की ध्वनि सुन द्रविड प्रदेश के राजा जंगलों-कंदराओं में जाकर छिप जाते हैं और भय के मारे उनकी सेनाएँ तितर-बितर हो जाती है।''[३५]

इसके साथ ही छत्रपति शिवाजी के समय चित्रकला, हस्तकला, नक्शा निर्माण करने की कला, शिलालेख आदि कलाएँ विकसित हो गयी। उस समय के नक्शे किसी देश विशेष के न रहकर केवल लिखनेवाले की जानकारी तक ही सीमित रहते थे। ''नक्शा निर्माण करने की कला आज के युग जैसी प्रगत नहीं थी फिर भी जमीन के नक्शे निर्माण करना तथा किसी एक क्षेत्र का नक्शा के रूप में विवेचन करने की पद्धति शिवकाल में भी प्रसिद्ध थी।''[३६]

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने अपने जीवन में अनेक कलाओं का रक्षण किया, उनका विकास किया। साथ ही विविध गुणी जनों को आश्रय देकर संस्कृति तथा परंपरा की रक्षा की।

४.१.५ राजनीतिक योगदान :

छत्रपति शिवाजी महाराज के पूर्व हिंदुस्तान की राजनीति में कोई प्रबल संघटनकर्ता तथाशासक नहीं हुआ।दक्षिण में सैकडों वर्षों से चलनेवाला शालिवाहनों का

राज्य तेहरवीं शती के अंत में अल्लाउद्दीन खिलजी ने नष्ट कर दिया। अल्लाउद्दीन ने देश भर में अनेक प्रदेशों पर आक्रमण किये। उसके साथ ही अनेक शासकों का अत्याचार, अन्याय तथा गरीबी से जनता त्रस्त हो चुकी थी। तेरहवीं शती के अंत में छत्रपति शिवाजी महाराज कें जन्म तक देश की भयानक दुर्दशा हुई। छत्रपति शिवाजी की राजनीति, रणनीति आदर्श थी। तथा उनकी राजनीति में निम्न गुण थे।

४.१.५.१ लोकराज्य का निर्माण :

छत्रपति शिवाजी के समय छोटे-छोटे वतनदार अपने स्वार्थ के कारण विविध यवनों की सेवा में लीन थे। इस कमजोरी का फायदा उठाकर शत्रुओं ने अपना राज्य देशभर फैलाया। उस समय महाराष्ट्र में बीजापुर के आदिलशाह का राज्य था। छत्रपति शिवाजी के पिता शहाजी राजे भी इनकी सेवा में थे। लेकिन छत्रपति शिवाजी को गुलामी से नफरत थी तथा उनके मन में स्वराज्य-स्थापना की प्रेरणा निर्माण हुई। उन्होंने असंगठित मराठा समाज को संगठित किया। इस संगठन के संदर्भ में डॉ. वसंत मोरे लिखते हैं, ''शिवाजी ने श्रेष्ठ वीर परंतु झगडालू मराठों का असंभव लगनेवाला संगठन संभव बना दिया। हिंदुओं में उच्चनीचता के जो भेद थे, उन भेदों की अपेक्षा करके जाति को छोडगुणों को महत्व देकर उन्हें विकास के समान अवसर प्रदान किये।''[३७]

विरासत में राज्य पाना आसान है, लेकिन एक नये राज्य का निर्माण करना वास्तव में किसी पुरुष की श्रेष्ठता सिद्ध करता है। पुरुष में यदि पुरुषत्व है, तो वह अपने बाहुबल से एक नये साम्राज्य का निर्माण कर सकता है। यह छत्रपति शिवाजी ने सिद्ध कर दिखाया। गोविंद पानसरे इस संदर्भ में लिखते हैं, ''विरासत से अनेक राजा बन गए थे। शिवाजी विरासत से राजा नहीं बने थे। उन्होंने स्वराज्य निर्माण किया वे स्वराज्य संस्थापक थे। स्वराज्य निर्माण करना आसान नहीं। शिवाजी ने वह किया।''[३८] चारों दिशाओं से शत्रुओं से घिरा होने पर भी महान वीर छत्रपति शिवाजी ने अपनी कल्पना को मूर्त रूप दिया। छत्रपति शिवाजी की जन्मकालीन स्थिति को अगर नक्शे में देखा जाय तो उन्होंने किये हुए अप्रतिम साहस की कल्पना की जा सकती है। छत्रपति शिवाजी

का राज्य आदिलशाही, निजामशाही तथा कुतुबशाही के मध्य था। वह सभी शासक हिंदू विरोधी थे। लेकिन एकमात्र छत्रपति शिवाजी का ही साहस था कि उन्होंने अपना सबकुछ दाँव पर लगाकर अपने नये राज्य की स्थापना की तथा उसका विस्तार और सुरक्षा की।

छत्रपति शिवाजी केवल महाराष्ट्र के हीं नहीं अपितु सारे भारतवर्ष के आदर्श राजा थे। उनका राज्य समता, बंधुता, न्याय, स्वतंत्रता इन लोकतंत्र के गुणों से युक्त था। भारत विभिन्न जाति-उपजातियों का देश रहा है। उन सबको 'मावळा' इस शब्द से एकत्रित किया तथा जनता को दिखाया कि राजा जनता का सेवक होता है। श्री खेडेकर इस संदर्भ में लिखते हैं, ''छत्रपति का स्वराज्य विश्व का पहला लोकतंत्र राज्य है। राजा तथा उसका मंत्री-मंडल जनता का सेवक है यह विश्व में प्रथम शिवाजी ने जनता को समझाया तथा उपयोग में लाया।''[३९] लोकतांत्रिक राज्य लोगों का राज्य होता है। छत्रपति शिवाजी का राज्य जनता को अपना राज्य लगता था। राजा के प्रति निष्ठा रखनेवाले तथा जान कुर्बान करनेवाले हजारों वीर छत्रपति शिवाजी को मिले।

इतना ही नहीं तो अपनी व्यापक दृष्टि से छत्रपति शिवाजी ने व्यापार के केंद्र निर्माण किये, उद्योगों को बढावा दिया। जनता की आर्थिक उन्नति हो इसलिए व्यापार तथा उद्योग का विकास किया। डॉ. मोरे लिखते हैं, ''अपनी प्रजा की शांति, सहिष्णुता, सभी जातियों को समान अवसर, एक साहित्य और विशुद्ध शासन प्रणाली, व्यापार विकास के लिए एक जहाजी बेडा तथा मातृभूमि की रक्षा के लिए एक सुगठित निपुण सेना प्रदान करना लोकनायक शिवाजी का उद्देश्य था।''[४०] प्रजा के प्रति इतना व्यापक दृष्टिकोण रखने वाले छत्रपति शिवाजी एकमात्र राजा थे। प्रजा का दु:ख अपना दु:ख समझकर उसका निरासन करते थे।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने लोकतंत्र की स्थापना कर तत्कालीन राजाओं के सामने आदर्श स्थापित किया। जनता को स्वतंत्रता, न्याय, समता, बंधुता, स्वअधिकार आदि से विकसित किया।

४.१.५.२ जनसंगठन :

स्वराज्य निर्माण में लोकराज्य की संगठन शक्ति के बिना नहीं हो सकता। छत्रपति शिवाजी के समय हिंदू असंगठित थे। आपसी मतभेद तथा उँच-नीचता के कारण असंगठित हिंदू समाज का फायदा संगठित यवनों ने लिया। असंगठन के कारण हिंदुओं को पराजय स्वीकार करनी पडी और सदियों तक गुलाम बनना पडा। लेकिन मराठा हमेशा संघर्ष करता है, यह शिवाजी ने देखा और आपसी कलह में ही अपनी शक्ति का सर्वनाश करने की प्रवृत्ति को उन्होंने नष्ट किया। इस महाशक्ति का संगठन ही स्वराज्य खडा कर सकता है यह वह अच्छी तरह से जानते थे। अत: प्रथम उन्होंने आपसी कलह नष्ट किया। श्री पातीराम भट्ट इसके संदर्भ में संक्षिप्त में कहते हैं, ''आपसी कलह में हम लोग समय नष्ट न करें, पंडितजी।''[४१]

छत्रपति शिवाजी सहिष्णु राजा थे। बचपन से ही उनके मन में सर्वधर्म समभाव की दृष्टि थी। उनको केवल हिंदुओं का राजा कहना संकुचित होगा। उनकी सेना में तथा अधिकारियों में सभी धर्मों के लोग थे। मराठा, ब्राह्मण, महार, कोळी, साळी, भंडारी, मुसलमान आदि जातियों का कुशल संगठन उन्होंने किया। इसके संदर्भ में सी. गो. प्रभु लिखते हैं, ''पंत, हिंदवी स्वराज्य की हमारी संकल्पना केवल हिंदू का राष्ट्र ऐसी नहीं तो हिंदुस्तान में रहनेवाले मगर वो किसी भी धर्म के हो, किसी भी जाति के हो वे सब हिंदवी है। उनका राज्य वहीं हिंदवी राज्य।''[४२]

छत्रपति शिवाजी का स्वप्न भारत वर्ष की स्वाधीनता था। अत: इस स्वप्न को साकार करने के लिए वह रामसिंह तथा राजा जयसिंह को भी प्रेरित करते है। इतना ही नहीं तो बुंदेलखंड के राजा छत्रसाल को अपने पक्ष में लेकर अपना संगठन अधिक मजबूत उसे स्वतंत्रता की प्रेरणाा देकर अपनी संगठन शक्ति मध्य भारत तक व्यापक बनाते हैं।

अत: इस बात से स्पष्ट होता है कि छत्रपति शिवाजी केवल महाराष्ट्र तक सीमित संगठन नहीं कर रहे थे। वह भारतीय वीरों का संगठन करना चाहते थे।

४.१.५.३ अष्टप्रधान मंडल :

छत्रपति शिवाजी का व्यक्तित्व अनेक गुणों से युक्त था। चतुर वाणी तथा विद्याभ्यास इन गुणों के आधार पर छत्रपति शिवाजी ने अनेक सुधार किये। अपनी दूरदर्शिता से उन्होंने राजनीति के कडे नियम बनाएँ तथा उनको उपयोग में लाया। धूर्त, राजनीति, दूरदर्शी तथा विद्याभ्यास के बल पर उन्होंने 'अष्टप्रधान मंडल' स्थापित किया। 'अष्टप्रधान मंडल' ही छत्रपति शिवाजी की शासन व्यवस्था देखता था। 'अष्टप्रधान मंडल' की व्यवस्था प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन करने के पश्चात छत्रपति शिवाजी ने की। छत्रपति शिवाजी ज्ञानी थे, उनका ज्ञान अपार था। प्राचीन ग्रंथ उन्हें पूज्य थे तथा रामायण, महाभारत का वह आदर करते थे। अष्टप्रधान मंडल की स्थापना उन्होंने शुक्रनीति से ग्रहण की थी। इस संदर्भ में भगवानदास तिवारी कहते हैं, ''शिवाजी की शासन व्यवस्था अष्टप्रधान देखते थे। अष्टप्रधान की यह व्यवस्था शुक्रनीति व अन्य भारतीय ग्रंथों पर आधृत थी।''[४३]

अष्टप्रधान संबंधी कुछ नियम छत्रपति शिवाजी ने बनाए थे। उन नियमों के आधार पर इनकी नियुक्ति होती थी। सभी प्रधान मंत्रियों का चुनाव उनकी कार्यक्षमता पर निर्भर था तथा यह पद विरासत से किसी को भी नहीं दिया जाता था। जो प्रधान मंत्री चतुर तथा कार्यक्षम नहीं उसे निकाल दिया जाता था। इन प्रधानों को वेतन दिया जाता था, जागीर नहीं। प्रधानों को युद्ध करना अनविार्य था। न्यायाधीश तथा पंडितराव को छोडकर अन्य प्रधानों को युद्ध के क्षेत्र में अलग-अलग कार्य करने पडते थे। समय-समय पर अपने विभाग का काम छोडकर दूसरा कार्य भी महाराज उन पर सौंपते थे। इन प्रधानों के जो सहायक मंत्री थे उनका चुनाव केवल छत्रपति शिवाजी ही करते थे। किसी महत्वपूर्ण निर्णय पर सभी मंत्रियों को हस्ताक्षर (मुद्रा) करना अनिवार्य था। संयुक्त जिम्मेदारी से इस प्रकार के निर्णय छत्रपति शिवाजी करते थे। इसके बारे में डॉ. रोडे लिखते हैं, ''सभी महत्वपूर्ण दस्तों पर मुख्यप्रधान, अमात्य, सचिव, मंत्री, सुमंत आदि के हस्ताक्षर रहते थे।

शिवाजी महाराज ने अंग्रेजों से जो समझौते किये, उस पर सभी मंत्रियों के हस्ताक्षर का उल्लेख हेन्री ऑविझंडन ने किया है।''[४४]

'अष्टप्रधान मंडल' के सभी छोटे-बडे अधिकारियों पर छत्रपति शिवाजी प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष नियंत्रण रखते थे। किसी भी प्रधान पर सौंपी गई जिम्मेदारी उसे किसी भी हालत में निभानी पडती थी।

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी की रणनीति आदर्श तथा दिशादर्शक थी।

४.१.५.४ नौसेना निर्माण :

छत्रपति शिवाजी दूरदर्शी, वैज्ञानिक दृष्टि रखनेवाले चतुर शासक थे। नई रणीनीति से वह शत्रु को परास्त करते थे। उस समय विदेशियों के पास नौसेना थी। विदेशी नौसेना का छत्रपति शिवाजी ने सूक्ष्म अध्ययन किया तथा विदेशियों का समुद्रमार्ग से होनेवाला भविष्य का खतरा ध्यान में रखकर उन्होंने भारतीय नौसेना की स्थापना की। अपनी नौसेना से शिवाजी ने अंग्रेज, पुर्तुगीज, डच, हबसी आदि को समुद्र में ही रोका तथा परास्त किया। इस संदर्भ में तिवारी लिखते हैं, ''शिवाजी ने पैदल, और घुडसवारों के द्वारा ही शत्रुओं का सामना नहीं किया, बल्कि अपने जहाजी बेडे से फ्रान्सीसियों, अंग्रेजें, हबशी और फिरंगियों को मार-मारकर उनके युद्धपोतों को युद्धक्षेत्र से पराङमुख कर दिया।''[४५]छत्रपति शिवाजी की नौसेना प्रभावी, चतुर तथा कार्यक्षम थी। यह उनके विद्याभ्यास तथा दूरदृष्टि का फल था।

छत्रपति शिवाजी की नौसेना का मुख्यालय 'सिंधुदुर्ग' था। उन्होंने भिवंडी, कल्याण, पनवेल, आदि जगह पर जहाजों का निर्माण किया। जहाज निर्माण में जो लकडियाँ लगती थी वह पुराणी तथा जो पेड जीर्ण हो गये है उसका उपयोग करने का निर्देश दिया था। इस संदर्भ में नरेंद्र मारवाडे कहते हैं, ''अगर कोई पेड बहुत पुराना है, जीर्ण है, वह जनता के काम का नहीं है तो उसके मालिक की अनुमति से उसे उचित पैसा देकर तोडना चाहिए।''[४६]

छत्रपति शिवाजी की नौसेना विशाल थी, उसमें अनेक प्रकार की युद्ध नौकाएँ तथा जहाज थे। जो उचित समय में उसका उपयोग किया जाता था। डॉ. वसंत मोरे लिखते हैं, ''शिवाजी ने पाँच सौ जहाज बनाने के लिए दस लाख होन खर्च किये। उन जहाजों पर गोलाबारुद और तोपें सजाई। पडाव, मचवा, गलबत, होडी, महागिरी, पाल, जुग, गुराबा ऐसे कई प्रकार के जहाज बनाए और सागर पर नियंत्रण करने लगे।''[४७] अपनी विशाल नौसेना की निर्मिति से छत्रपति शिवाजी ने शत्रुओं पर धाक जमायी।

शिवाजी ने नौसेना का निर्माण भी किया तथा नौसेना के युद्ध में शामिल भी हुए। छत्रपति शिवाजी ने गोवा के दक्षिण में कर्नाटक का बंदरगाह 'बसनुर' पर अपनी नौसेना की सहायता से युद्ध किया। चंद्रशेखर शिखरे लिखते हैं, ''छत्रपति शिवाजी ने केवल नौसेना का निर्माण ही नहीं किया तो उन्होंने दि. ८ फरवरी १६६५ से २२ फरवरी १६६५ इस काल में सागर सफर कर कर्नाटक के सागर को बेट 'बसरूर' पर हमला किया था। इस युद्ध का नेतृत्व करते समय छत्रपति शिवाजी के साथ ५० जहाज थे।''[४८]

अत: शिवाजी राजा ने अपनी कुशाग्र बुद्धि से नौसेना की स्थापना की उसका सफल नेतृत्व किया तथा शत्रुओं को परास्त किया।

४.१.५.५ रणनीतिकार :

कम-से-कम सेना की मदद से विशाल सेना को परास्त करने को छत्रपति शिवाजी ने महत्व दिया। यवनों की विशाल सेना पर विजय हासिल करने के लिए उन्होंने 'छापामार' रणनीति का स्वीकार किया। उन्होंने परंपरागत रणनीति का त्याग किया तथा प्रत्येक युद्ध में नवीन तंत्र के सहारे शत्रु पर विजय प्राप्त की। इसके बारे में डॉ. मोरे कहते हैं, ''शिवाजी ने युद्ध के क्षेत्र में सिर्फ परंपरागत नीति का ही अनुकरण नहीं किया बल्कि युद्ध की अनेक नई विधियाँ एवं प्रणालियों का प्रयोग भी किया।''[४९] उनका रणनीति परिवर्तन का उद्देश्य बडे से बडे शत्रु का संपूर्ण नाश करना ही था। छत्रपति शिवाजी की 'छापामार' युद्धनीति भारतीय युद्धनीति में युगप्रवर्तन तथा अनुकरणीय है। वेशांतर करके शत्रु पर हमला करना, युद्ध में वापिस मुडकर थोडे समय बाद बेखकर शत्रु

पर हमला करना, रात के समय अचानक हमला करना आदि को छापामार रणनीति कहते हैं। यह सब इसलिए किया जाता था क्योंकि शत्रु की सेना विशाल थी तथा यवन शत्रु भी अधर्म का युद्ध करते थे।

अपनी चालाक रणनीति से शत्रु को गुमराह करके उस पर विजय पाना यह छत्रपति शिवाजी को ज्ञात था। अपने कार्य में असफलता मिलने पर ऐसा लगता है किराज्य का नाश होता है। लेकिन छत्रपति शिवाजी इसके विरुद्ध थे। मिर्झा राजा जयसिंह के साथ पुरंदर समझौता हुआ। २३ किले औरंगजेब को दिये लेकिन इसके पीछे छत्रपति शिवाजी की कुशल राजनीति थी। उन किलों पर सेना छत्रपति शिवाजी की ही थी लेकिन उनका वेतन औरंगजेब देता था। आगरा से वापिस आने के बाद कुछ ही दिनों में छत्रपति शिवाजी ने अपना हौसला बुलंद रखकर फिर से सत्ता काबिज की। यह उनकी चतुर रणनीति का ही परिणाम था।

छत्रपति शिवाजी ने प्रतिकूल परिस्थिति में स्वराज्य स्थापित किया। यवनों के अत्याचार तथा प्रजा का दु:ख छत्रपति शिवाजी देख नहीं सके तथा अपनी बुद्धि और दूरदर्शिता से यवनों को परास्त किया। उन्हें मुस्लिम राजाओं के साथ-साथ हिंदू वतनदारों का भी विरोध सहना पडा। व्यक्तिगत आकांक्षा से छत्रपति शिवाजी ने स्वराज्य स्थापन नहीं किया। छत्रपति शिवाजी आचार, विचार, धर्मशील तथा चारित्र्य संपन्न, प्रजादक्ष राजा थे। ''शिवाजी महाराज केवल महाराष्ट्र के नहीं तो समूचे राष्ट्र के नेता थे। व्यक्तिगत आकांक्षा से स्वराज्य स्थापन करके बाकी राजाओं की भूमि हस्तगत करने की उनकी इच्छा नहीं थी। तो आचरणशील, विचारशील, तथा धर्मशील 'जाणता राजा' थे। चारित्र्य संपन्न तथा जनप्रेमी राजा थे।''[५०]

इस प्रकार छत्रपति शिवाजी की राजनीतिक दृष्टि अत्यंत व्यापक थी। उन्होंने अपनी कुशाग्र बुद्धि, वीरता तथा दूरदर्शिता के कारण आदर्श राजनीति, कठोर अनुशासन को महत्व दिया। अत: छत्रपति शिवाजी का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक योगदान निरंतर प्रेरणादायी है।

४.२ महात्मा फुले का योगदान :

४.२.१ महात्मा फुले का सामाजिक योगदान :

महात्मा फुले केवल समाज सुधारक नहीं थे,वे सामाजिक क्रांति के नेता थे क्योंकि वे समानता की नींव पर जाति-पाति रहित और शोषण मुक्त समाज का निर्माण करना चाहते थे। वह अपनी लक्ष्यपूर्ति के लिए आजीवन संघर्ष करते रहे इसलिए उन्हें'सामाजिक क्रांति के अग्रदूत' कहा जाता है।

महात्मा फुले के सामाजिक सुधार तथा योगदान के संदर्भ में मुरलीधर जगताप जी कहते हैं कि,हजारों वर्षों से चली आई मानसिक दासता के कारण फुले जी का हर कार्य सिर पटक कर पहाड तोड़ने जैसा असंभव कोटि का था, लेकिन कभी भी हार ना मानते हुए वे लगातार प्रहार करते रहे। इस प्रकार जोतीराव पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने शूद्राति-शूद्रों में आत्मसम्मान जगाया और शूद्रों को बताया कि उनकी सामाजिक दासता उनके पूर्वजन्मों का फल नहीं है यह अशिक्षा और शताब्दियों से थोपी गई मानसिक दासता का फल है। महात्मा फुले का सामाजिक कार्य तथा सामाजिक योगदान काफी महत्वपूर्ण रहा है।

४.२.१.१ स्त्री-शिक्षा तथा नारी मुक्ति :

महात्मा ज्योतिबा फुले ने अपने शिक्षण काल से ही स्त्री-शिक्षा की कमी को अनुभव किया था। उन्हें ज्ञात था कि छत्रपति शिवाजी महाराज को योद्धा और आधुनिक भारत में एक महान साम्राज्य (मराठा शक्ति) का निर्माता बनाने में उनकी माता मांसाहेब जिजाबाई का ही हाथ था। उन्होंने इस बात को समझ लिया था कि, भावी पीढियों के निर्माण में माता (स्त्रियों) की शिक्षा बहुत आवश्यक है। इसलिए फुले ने सबसे पहले कन्या प्रशाला खोलने का निर्णय लिया। महात्मा फुले का मानना था कि,''जब तक महिलाएँ शिक्षित नहीं हो जाती तब तक समाज सच्चे अर्थों में शिक्षित नहीं हो सकता एक शिक्षित माता जो सुसंस्कार कर सकती है उन्हें हजार अध्यापक या गुरू नहीं कर सकते। इसलिए जब तक देश का आधा हिस्सा(नारी समाज) शिक्षित नहीं हो जाता तब तक हमारा देश कैसे प्रगति कर सकता है।''[५१]

''जोतीराव की कन्याशाला का प्रारंभ होने से पहले लगभग २०-२५ वर्षों से महाराष्ट्र में ईसाई पादरियों का शिक्षा-प्रसार का कार्य जारी था। उनसे कई मामलों में मतभिन्नता होने पर भी जोतीराव ने सोचा कि,पहले उनकी सुसंगत तथा क्रमबद्ध कार्यप्रणाली का निरीक्षण किया जाए और उसके बाद ही कन्याशाला शुरू की जाए। ठीक उसी समय उनके परम मित्र श्री सदाशिवराव गोवंडे का पुणे के सरकारी कार्यालय से पुणे से लगभग १०० किलोमीटर दूर अहमदनगर में स्थानांतरण हुआ। जब श्री गोवंडे कार्यग्रहण करने अहमदनगर गये तब जोतीराव भी उनके साथ गये। उस समय अहमदनगर ईसाई पादरियों के शिक्षा कार्य का एक बड़ा तथा महत्वपूर्ण केंद्र बना हुआ था। जोतीराव और गोवंडे अहमदनगर में चलाई जा रही मिशनरियों की कन्याशाला देखने गये, जिसका संचालन मिस फर्रार कर रही थी। इसी विदेशी मिशनरी महिला मिस फर्रार से ही दलित स्त्री-शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने की प्रेरणा महात्मा फुले को प्राप्त हुई थी।''[५२]

मिस फर्रार ने गोवंडे और जोतीराव को भारत में स्त्री-शिक्षा की दुर्दशा के विषय में बताया कि, यहां के लोग स्त्रियों के मानसिक विकास में बिल्कुल रुचि नहीं रखते। वे दोनों उनसे बहुत प्रभावित हुए कि एक विदेशी महिला भारत में स्त्री शिक्षा की दुर्दशा से इतनी चिंतित है। जोतीराव को आशा की किरण दिखाई दी। उन्होंने सोचा कि,पुना लौटकर वे भी ऐसे प्रयोग कर सकते हैं और दलित स्त्रियों के लिए पाठशाला खोलकर उसका प्रारंभ कर देंगे।

''जोतीराव ने अपने पूर्वनिश्चय के अनुसार अगस्त १८४८ में पुणे की बुधवार पेठ में श्रीभिड़े के मकान में अपनी कन्याशाला आरंभ की। 'बॉम्बे गार्डियन' नामक समाचार पत्र के तारीख २८ नवंबर १८५१ में प्रकाशित पत्र से इसकी पुष्टि होती है। इस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से नारी शिक्षा का कार्य आरंभ कर फुले ने सार्वजनिक क्षेत्र में कदम रखा। उस समय उनकी आयु मात्र २१ वर्ष की ही थी।''[५३]

पुणे में पहली कन्याशाला शुरू करने के बाद कट्टरपंथियों द्वारा महात्मा फुले का विरोध होने लगा था। तीव्र विरोध के बावजूद फुले अपने रास्ते पर निरंतर आगे बढ़ते

गये। ३ जुलाई १८५१ को उन्होंने बुधवार पेठ में स्थित चिपलुणकर के मकान में दूसरी कन्याशाला, १७ सितंबर १८५१ को रास्ता पेठ में तीसरी कन्याशाला और १५ मार्च १८५२ को वेतालपेठ में चौथी कन्याशाला शुरू की।

जोतीराव फुले ने अपने देशवासियों में शिक्षा का,विशेष कर स्त्री-शिक्षा का प्रसार कर के बड़े पैमाने पर प्रगति की है।ज्योतिबा फुले ने नारी शिक्षा को केवल कल्पना की बात न मानकर उन्होंने उसे मूर्त रूप देने हेतु कठोर परिश्रम किये। इस कार्य की शुरुवात अपने घर से की और अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को पहली शिक्षिका बनाकर क्रांती की ज्योत जलायी।

४.२.१.२ विधवा-विवाह को प्रोत्साहन :

धार्मिक कुप्रथाओं, प्राचीन मान्यताओं, सामाजिक विसंगतियों, अनवरत युद्धों, महामारी, अनमेल विवाह, बाल-विवाह आदि कारणों से विधवाओं की समस्या हर युग में विद्यमान रही। जोतीबा के पूर्ववर्ती और समकालीन सुधारकों ने विधवा-विवाह की समस्या पर काफी ध्यान दिया था। राजा राममोहन राय के प्रयत्नों से लॉर्ड विलियम बैटिंग सती प्रथा पर रोक लगा चुके थे। इस रोक के बाद विधवा समस्या अधिक गंभीर रूप से प्रकट हुई। पति की मृत्यु हो जाने पर स्त्री को जन्म भर घर में बैठना पड़ता था। उसे न तो अच्छे वस्त्र पहने की आज्ञा थी न वह श्रृंगार की अधिकारीणी थी। उसे घर में श्वेत वस्त्र धारण करने पड़ते थे। कहीं-कहीं विधवा स्त्रियों के सिर मुंडवा दिए जाते थे। उनका मुखदर्शन भी गलत माना जाता था। वह घर में कई तरह की शारीरिक यातनाएँ भोगती थी।

नारी स्वतंत्रता,नारी जागृति और नारी शिक्षा जोतीराव के मुख्य लक्ष्य थे। उनकी नजर से विधवा-विवाह की समस्या कैसे छूट पाती? ''जोतीराव ने सबसे पहले विधवा मुंडन बंद करने का निर्णय किया। उन्होंने मुंबई में नाइयों की एक सभा आयोजित की उसमें ४००-५०० नाई उपस्थित हुए थे। एक नाई ने कहा कि, 'ब्राह्मण ४-५ आनों के

लिए हमसे यह कुकर्म करवाते हैं। इस सभा में सर्वसम्मति से संकल्प पारित किया गया कि इसके आगे कोई भी नाई विधवा का मुंडन नहीं करेगा।''[५४]

विधवा मुंडन की तरह विधवा-विवाह भी एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न था। जोतीबा फुले ने इस दिशा में भी पर्याप्त कार्य किए। उन्होंने कहा कि विधवाओं का पुनर्विवाह करवाना एक सामाजिक दायित्व है। यह युग की ज्वलंत समस्या है। समस्त समाज के सभी वर्ग इस समस्या के समाधान में मदद करें। विधवाओं का समाज सम्मान करें। उन्हें यथा योग्य अपनाएँ उन्हें प्रश्रय दे। उन्होंने सिद्ध किया कि किसी भी धर्म ग्रंथ में विधवाओं के पुनर्विवाह पर रोक नहीं है।

महात्मा फुले का मानना था कि, ''आर्य संस्था मर्दों को भी विधुर होने पर पुनर्विवाह की अनुमति देती है परंतु बहनों को विधवा होने पर पुनर्विवाह का अवसर और अधिकार नहीं देती। फुले ने विधवाओं पर होने वाले इस सामाजिक अत्याचार का विरोध किया। फुले विधवा विवाह आंदोलन के सक्रिय समर्थक बन गये। उनकी प्रेरणा से ही ८ मार्च १८६० को पुणे में शेणवी जाति की एक विधवा और विदुर का विवाह हुआ था।''[५५]

४.२.१.३ बाल-हत्या प्रतिबंधक गृह की स्थापना :

महात्मा ज्योतिबा फुले ने विधवाओं के जीवन से जुड़ी हुई समस्याओं के निराकरण की दिशा में भी एक बड़ा ही क्रांतिकारी कदम उठाया। उन्होंने विधवाओं की अवैध संतानों के लिए सन १८६३ में'बाल-हत्या प्रतिबंधक गृह' की स्थापना की।

उस समय जवान विधवाओं के साथ अनैतिक आचरण की घटनाएँ भी समाज में बहुत होती थी। लंपट व चरित्रहीन पुरुष भोली-भाली विधवा स्त्री को बहला-फुसलाकर अनैतिकता के चंगुल में धकेल देते थे। उनके अनैतिक आचरण से बच्चे पैदा हो जाते थे। तब ऐसी विधवा स्त्रियां लोकलाज के भय से आत्महत्या कर लेती थी। विधवाओं की मजबूरी को समझ कर महात्मा फुले ने अपने घर में ऐसी विधवाओं के बच्चों के लिए 'बाल-हत्या प्रतिबंधक गृह' की स्थापना की।

महात्मा फुले ने आम लोगों के सूचनार्थ परचे छपवा कर वितरित कराये। इन परचों में लिखा था कि, ''विधवा बहनों,प्रसूति के पूर्व गुप्त रूप से हमारे यहां आ जाइए और सुरक्षित रूप में शिशु को जन्म दीजिए। आप अपने बच्चों को चाहे तो अपने साथ ले जा सकती हो या हमारे यहां रख सकती हो। हमारा अनाथ आश्रम तुम्हारे बच्चों की देखभाल करेगा।''[५६]

यह संस्था गर्भवती विधवाओं के लिए थी और उन्हें बदनामी,भ्रूण-हत्या एवं बाल-हत्या के अपराधों से बचाने के लिए निकाली गई थी। इससे एक और लाभ यह हुआ कि अवैध एवं अनाथ बच्चे मिशनरियों के अनाथ-गृहों में जाने बंद हो गये।

४.२.१.४ अछूतों के लिए पानी की व्यवस्था :

ज्योतिबा फुले ने समाज से अस्पृश्यता दूर करने के लिए तथा जातियों के कुचक्र को तोड़ने के हर संभव प्रयास किया था। उस समय अछूतों का सामाजिक जातिभेद की मार के कारण पेयजल को लेकर बुरा हाल था। ''पुना में उस समय जगह-जगह पर पीने के पानी के हौज होते थे जिन्हें पेशवाओं ने बनवाया था। इन हौज पर महार,चमार,मांग पानी नहीं भर सकते थे। तपती दोपहरी में कई बार वे पानी मांग-मांग कर थक जाते थे लेकिन उन्हें एक घूंट पानी भी मिलना मुश्किल हो जाता था। उस समय की नगरपालिका भी कोई स्थायी इंतजाम नहीं कर पा रही थी। केवल पानी के लिए शूद्रों की जो हालत होती थी उन्हें देखना-सहना ज्योतिबा के लिए संभव नहीं था। इसलिए सन १८६८ में उन्होंने अपने मकान में स्थित पानी का कुआं अछूतों के लिए खोल दिया। लेकिन पाप-पुण्य और पूर्व कर्मो के काल्पनिक भय से अछूतों को उस कुंए से पानी भरने की हिम्मत नहीं हुई। तब जोतीराव उन्हें हाथ पकड़कर उस कुएं के पास ले गए। उन्होंने उनसे पानी भरने को कहा और पानी से भरे बर्तन स्वयं उनके सिर पर रखे।''[५७]

इस तरह फुले ने पिछले हजारों वर्षों की मानसिक गुलामी से उनको मुक्त कराया। इस प्रकार फुले ने अपने इस कार्य के द्वारा भी सामाजिक न्याय को प्रस्थापित करने का यशस्वी प्रयास किया।

४.२.१.५सत्यशोधक समाज की स्थापना :

सत्यशोधक समाज के माध्यम से महात्मा फुले ने अपने चिंतन को कार्य रूप में परिणित कर आम जीवन में अवतरित किया। महात्मा फुले ने ''महाराष्ट्र भर में फैले हुए अपने मुख्य हितैषियों तथा अनुयायियों को एक पत्र भेजकर तिथि २४ सितंबर १८७३ को पुणे में एक सभा का आयोजन किया। उसमें गिने-चुने ५० से ६० लोग ही उपस्थित हुए थे। जोतीराव ने उस सभा में संगठन के उद्देश्यों का विस्तृत विवेचन करते हुए बताया कि,धार्मिक तथा सामाजिक गुलामी को जड़ से उखाड़ कर फेंकना और उपनिवेशवाद को समाप्त करना हमारे संगठन का मुख्य उद्देश्य होगा। पर्याप्त विचार-विमर्श और वाद-विवाद के बाद सत्यशोधक समाज के गठन का निर्णय किया गया। इस प्रकार तिथि २४ सितंबर १८७३ को समताधिष्ठित समाज के निर्माण के लिए सत्यशोधक समाज स्थापित हुआ।''[५८] यह संपूर्ण महाराष्ट्र में प्रसारित समाज-सुधार का पहला आंदोलन था।

४.२.१.६ सत्यशोधक समाज की मान्यताएँ :

सत्यशोधक समाज की प्रथम बैठक में ही फुले का सर्वसम्मति से अध्यक्ष के रूप में चयन किया गया था सत्यशोधक समाज की प्रमुख मान्यताएँ तथा नियम व सिद्धांत निर्धारित किए गए थे जो इस प्रकार हैं–

१) ईश्वर एक ही है, वह सर्वव्यापक निर्गुण निर्विकार तथा सत्य स्वरूप है। सारे मानव उसकी प्रिय संताने हैं।

२) प्रत्येक मानव को ईश्वर भक्ति करने का पूरा-पूरा अधिकार है जिस प्रकार माता-पिता को संतुष्ट और प्रसन्न करने के लिए किसी मध्यस्थ या दलाल की आवश्यकता नहीं होती,इसी प्रकार सर्वव्यापक भगवान की भक्ति के लिए किसी पुरोहित की आवश्यकता नहीं होती।

३) कोई भी मनुष्य जाति के आधार पर श्रेष्ठ नहीं होता,गुणों के आधार पर उसकी श्रेष्ठता निर्धारित होनी चाहिए।

४) भगवान सशरीर अवतार ग्रहण नहीं करते।

५) कोई भी धर्म ग्रंथ सर्वथा शाश्वत प्रमाण नहीं होता और ना ही वह ईश्वर प्रणित होता है।

६) पुनर्जन्म, कर्मकांडआदि का विधि विधान अज्ञानमूलक है।

''सभी जाति और धर्म के अनुयाई सत्यशोधक समाज के सदस्य बन सकते थे। सत्यशोधक समाज की साप्ताहिक बैठके बहुधा रविवार को हुआ करती थी। ताकि लोग सरलता से इसकी बैठकों में भाग ले सकें। सत्यशोधक समाज की बैठकों में नारी-शिक्षा,दलित महिला शिक्षा,स्वदेशी के प्रचार तथा पुरोहितों द्वारा समाज को गुमराह किए जाने पर चर्चाहोती थी। सत्यशोधक समाज ने स्पष्ट घोषणा कर रखी थी कि वह जाति-प्रांत,धर्म की संकीर्णता और मनुष्य द्वारा मनुष्य के हर प्रकार के शोषण के विरुद्ध है।''[५९]

अतः फुले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज का उद्देश्य था शूद्रों तथा अतिशूद्रों को ब्राह्मणी धर्म ग्रंथ के प्रभाव से मुक्ति दिलाना,जिनके कारण ब्राह्मण लोग उनको दासता की हालत में रखते थे। उनके अपने मानवीय अधिकारों को वापिस दिलाना,जिनसे उन्हें वंचित कर दिया गया था उनको मानसिक गुलामी से मुक्त करवाना।

सत्यशोधक समाज एक ऐसी संस्था थी जिसने आधुनिक भारत में एक सामाजिक,सांस्कृतिक आंदोलन का सूत्रपात कर अपनी आवाज सामाजिक दासता के विरुद्ध उठाई और सामाजिक न्याय की मांग की।

४.२.२ महात्मा फुले का शैक्षिक योगदान :

आधुनिक दृष्टि से जिसे हम शिक्षा कहते हैं,वह शिक्षा जोतीराव के जन्म से पूर्व अस्तित्व में ही नहीं थी। जहां उच्चवर्णियों की अधिक बस्ती होती थी, वहां कुछ शास्त्री निजी पाठशालाएँ चलाते थे। इन पाठशालाओं में संस्कृत, व्याकरण, विधि, चिकित्साशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, वेदशास्त्र, अलंकार और धर्म शास्त्र जैसे विषय पढ़ाए जाते थे। उस समय लोगों में यह धारणा बनी हुई थी कि समाज के निम्न जाति के लोगों को

शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार ही नहीं है। इसलिए उन्हें शिक्षा प्रदान करने के लिए उच्चवर्णीयोंने कभी विचार तक नहीं किया। कुछ कस्बों में बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने वाली पाठशालाएँ थी। वहा अध्यापकों द्वारा व्यापारियों और धनवानों के बच्चों को शिक्षा दी जाती थी। साहूकारी अथवा व्यापार करने के लिए कुछ पढ़ना लिखना आना चाहिए इतने ही सीमित उद्देश्य से यह पाठशालाएँ चलाई जाती थी।ज्योतिबा फुले भी इस अंधकारपूर्ण युग से गुजरे थे और कई कटु अनुभव उनको हुए थे।

ज्योतिबा स्पष्ट रूप से यह जानते थे कि,यहां के जटिल सामाजिक जीवन में सदियों की दासता और व्यापक गरीबी,धार्मिक कट्टरता,जाति-पाति,संप्रदायवाद और छुआछूत की भावना ने दलितों और मेहनतकश जातियों में शिक्षा अनुराग की मूल कल्पना को ही मृतप्राय बना डाला है। उनमें न कोई चेतना है,न उत्साह।

ज्योतिबा फुले का विवेक जागृत होने की वजह से उन्हें इस बात का पता चला कि, ''युगों से पिछड़े हुए अछूतों तथा स्त्रियों को ऊपर उठाना है,तो शिक्षा के अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। शिक्षा के सहारे ही वे यह जान लेंगे कि वह आज जहां है,वहां क्यों है?''[६०]

फुले ने शिक्षा का महत्व समझ लिया था केवल अशिक्षा के कारण शूद्र तथा नारी गुलामी का जीवन जी रही है ऐसा उनका स्पष्ट मत था उनका निम्नलिखित वचन उनके शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण को स्पष्ट करता है।

''विद्या बिन गई मति,

मति बिन गई नीति,

नीति बिन गई गति,

गति बिन गया वित्त,

वित्त बिन चरमराये शूद्र,

एक अविद्या ने किये इतने अनर्थ।''[६१]

शिक्षा का महत्व ना होने से तथा उसकी कमी के कारण सुधारों को जो नुकसान उठाना पड़ा एवं शिक्षा जनित अज्ञान के कारण उनकी जो अधोगति हुई है उसका वर्णन इस वचन के माध्यम से फुले ने किया है। ''भारत की शिक्षा-संबंधी सवालों की छानबीन करके उसमें सुधार के सुझाव देने के लिए अंग्रेज सरकार ने १८८२ में विलियम हंटर नामक व्यक्ति की अध्यक्षता में'हंटर कमिशन' नामक एक आयोग बनाया था। यह आयोग सार्वत्रिक क्षेत्रों में प्रमुख व्यक्तियों से मिलने,उनसे पूछताछ और चर्चा करने के लिए सारे देश में घूम रहा था। इस आयोग की सहायता के लिए ब्रिटिश भारत के सभी प्रांतों में एक समिति स्थापित की गई। अपने प्रांत की शिक्षा-संबंधी परिस्थिति की जानकारी इस आयोग को प्रस्तुत करना इन प्रांतीय समितियों का काम था। इसके अनुसार आयोग ने प्रत्येक प्रांत के शिक्षा-संबंधी सवालों की जानकारी लेकर शिक्षाविदों से विचार-विमर्श किया। कुछ लोगों ने लिखित रूप में अपने विचार आयोग के पास भेजे। जोतीराव भी इन्हीं लोगों में से एक थे।''[६२]

अपने प्रस्तुत प्रतिवेदन के आरंभ में जोतीराव ने स्त्रियों तथा शूद्रों की शिक्षा के लिए स्कूलों के नितांत अभाव की चर्चा की है। इस अभाव की पूर्ति के लिए स्वयं तथा उनकी पत्नी द्वारा आरंभ किए गए कार्यों एवं उनसे प्राप्त अनुभव का इसमें विवरण दिया गया है।

उस समय शिक्षा क्षेत्र में अंग्रेजों का आयात किया हुआ 'फिल्टर डाउन' सिद्धांत प्रचलित था। इस सिद्धांत के अंतर्गत माना जाता है कि, ''सरकार नगरों में रहने वाले ऊंचे वर्गों को अंग्रेजी के माध्यम से उनकी शिक्षा दें और गांव खेडों में रहने वाले बहुजन समाज को उसकी मातृभाषा में शिक्षा देने का दायित्व ऊंचे वर्गों को सौंप दिया जाए। लेकिन जातिभेद के कारण यह सिद्धांत विफल हो गया। जोतीराव ने इस सिद्धांत का कड़ा विरोध कर उसकी विफलता बताई और खतरों की भी चर्चा की। उन्होंने उस आयोग से निडरता से कहा, 'आप शिक्षा का प्रारंभ नीचे से ऊपर करें,ऊपर से नीचे नहीं।''[६३]

ज्योतिबा का कहना था कि,उच्च वर्ग अपनी शिक्षा की व्यवस्था खुद कर लेगा। सरकार को उसकी ओर अधिक ध्यान देने की जरूरत नहीं। इसकी जगह अगर वह प्राथमिक शिक्षा की ओर ज्यादा ध्यान देती है,तो अन्य वर्गों से उन्हें असंख्य प्रामाणिक और भले लोग कामकाज चलाने के लिए मिल जाएंगे।

४.२.२.१ प्राथमिक शिक्षा :

महात्मा फुले ने प्राथमिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया था। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि,जनता को दी जाने वाली प्राथमिक शिक्षा की हालत बहुत ही खराब है। सरकार की शिक्षा विषयक नीति ही मूलतः अव्यवहारिक और अदूरदर्शी होने के कारण यह हुआ है। प्राथमिक स्कूल है लेकिन उनकी तादाद पूरी नहीं है। जो पैसा सरकार शिक्षा के नाम पर इकट्ठा कर रही है उसका विनियोग ठीक नहीं हो रहा है। इस पुणे प्रांत के लगभग १० लाख बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की कोई सुविधा उपलब्ध कराई नहीं गई है।

शिक्षा का अभाव ही उनकी दरिद्रता,स्वावलंबन का अभाव और शिक्षित तथा बुद्धिमान लोगों पर निर्भर रहने की उनकी आदत का कारण है। किसान और दूसरे गरीब लोग प्राथमिक शिक्षा से कोई लाभ उठा नहीं पाते। उनमें से कुछ गिने-चुने लोगों के बच्चे ही प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में दिखाई पड़ते हैं परंतु वे विद्यालयों में अधिक समय तक नहीं रह पाते क्योंकि उनके माता-पिता अपनी दरिद्रता के कारण उन्हें जानवरों की रखवाली और खेती के काम में लगा देते हैं।

वे बच्चे विद्यालय में आकर नियमित रूप से पढें इसलिए सरकार ने उनके लिए कोई छात्रवृत्ति या इनाम की व्यवस्था नहीं की है। इस बारे में शिकायत करते हुए ज्योतिबा कहते हैं, ''मेरी ऐसी राय है कि, लोगों को प्राथमिक शिक्षा कुछ हद तक अनिवार्य ही की जाए। कम से कम १२ वर्ष की उम्र तक तो अनिवार्य करनी ही चाहिए।''[६४]

महात्मा ज्योतिबा फुले के अनुसार सरकारी विद्यालयों में जो प्राथमिक शिक्षा दी जाती है उसे मजबूत और संतोषप्रद नींव पर खड़ा करना चाहिए। विद्यार्थियों को वह

शिक्षा भविष्य में उचित और व्यवहारोपयोगी साबित होनी चाहिए। पाठ्यक्रम और शिक्षा प्रणाली में पूरी तरह सुधार किया जाना चाहिए।

४.२.२.२ शिक्षकों की नियुक्ति तथा वेतन :

ज्योतिबा फुले का ऐसा मानना था कि, ''प्राथमिक विद्यालय में फिलहाल जिन शिक्षकों की नियुक्ति की गई है,वे अधिकतर ब्राह्मण है। उनमें से कुछ सामान्य शिक्षक विद्यालय से उत्तीर्ण हुए हैं। बचे हुए अधिकतर शिक्षक अप्रशिक्षित हैं। उनका वेतन नगण्य है। उनका मासिक वेतन शायद ही कभी १० रुपये से अधिक होता है इसलिए उनका कार्य भी उसी के अनुसार अपर्याप्त और संतोषजनक होता है। फुले कहते हैं कि, प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक संभवतः अध्यापन की परीक्षा उत्तीर्ण हुए हों।''[६५]

अच्छे तथा योग्य लोग पढ़ाई के क्षेत्र में रहे इसलिए शिक्षकों का वेतन बढ़ाना जरूरी है। वह किसी भी हालत में १२ रुपये से कम नहीं होना चाहिए। बड़े गांव में वह वेतन १५ से २० रुपये होना चाहिए। साथ ही जिन स्कूलों के छात्र अधिक संख्या में उत्तीर्ण होंगे उन स्कूलों के अध्यापकों को वेतन के अलावा प्रोत्साहन पुरस्कार के रूप में विशेष वेतन दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि,फुले का दृष्टिकोण बहुत व्यवहारिक है। अच्छे शिक्षक को तैयार करने के लिए उसकी व्यक्तिगत और व्यवहारिक समस्याओं की तरफ भी ध्यान देना अत्यंत जरूरी है जिससे वो अपनी पूरी क्षमता का उपयोग कर सकें।

४.२.२.३ पाठ्यक्रम में सुधार :

जोतीराव फुले ने हंटर कमिशन को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाने के भी सुझाव दिए थे। ''उनके विचारों में प्राथमिक स्कूल के पाठ्यक्रम में मोडी (लिपि) तथा बाल-बोध (देवनागरी)में लेखन-वाचन, गणित, इतिहास-भूगोल, व्याकरण का प्राथमिक ज्ञान, कृषि का प्राथमिक ज्ञान, नीति और स्वास्थ्य से संबद्ध सरल पाठ आदि विषय सम्मिलित किए जाने चाहिए। बड़े शहरों की तुलना में ग्रामीण स्कूलों का पाठ्यक्रम कुछ कम होना चाहिए परंतु व्यवहारोपयोगिता की दृष्टि से उसमें कोई कमी

नहीं होनी चाहिए। विद्यार्थियों को कृषि संबंधी पाठों के साथ-साथ उसका प्रत्यक्ष व्यवहारिक प्रशिक्षण देने से संपूर्ण देश को बहुत लाभ होगा।

अँग्लो वर्नाक्युलर प्राथमिक विद्यालयों में जो किताबें हैं उनका सुधार और पुनर्रचना की जानी चाहिए क्योंकि वे व्यवहारोपयोगी नहीं है। उनसे उनकी प्रगति को गति नहीं मिल पाएगी। तकनीकी, नैतिक, स्वास्थ्य संबंधी, खेती संबंधी और कुछ उपयोगी कला के विषयों को भी इसमें बड़े पैमाने पर हिस्सेदारी हो ऐसी योजना बनानी चाहिए ऐसा महात्मा फुले का मत था।''[६६]

४.२.२.४ प्राथमिक शालाओं की निरीक्षण योजना में सुधार :

इन स्कूलों की निरीक्षण व्यवस्था सदोष है। साल में एकाध बार ही स्कूल की जांच की जाती है। उससे कोई लाभ नहीं। कम से कम हर ३ महीनों बाद स्कूल की जांच की जानी चाहिए। बिना पूर्व सूचना दिए ही अगर जांच के लिए जाते हैं तो और भी ठीक होगा ऐसा महात्मा फुले का मानना था।

''प्राथमिक शिक्षा पर खर्च होने वाली निधि पर शिक्षा विभाग के निदेशक का सामान्य तौर पर नियंत्रण होना चाहिए। जिला या स्थानीय बोर्ड में शिक्षित और बुद्धिमान लोगों की यदि नियुक्ति की जाती है तो कलेक्टर के मार्गदर्शन के तहत उनकी शिक्षा की निधि उनके हवाले दी जाए। जिला बोर्ड में अधिकतर अज्ञानी और अशिक्षित लोग ही नियुक्त किए जाते हैं उन्हें हटाकर वहां योग्य लोगों की नियुक्ति की जाए।''[६७]

ज्योतिबा फुले ने प्राथमिक स्कूलों की संख्या-वृद्धि के लिए भी सुझाव दिए थे जो इस प्रकार हैं–

१) उन सभी स्कूलों को उदार मन से अनुदान प्रदान किया जाए,जिनमेंपात्र शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी अथवा इस प्रकार के शिक्षक जिनमें पहले से ही विद्यमान हो।

२) स्थानीय करों से उपलब्ध धनराशि में से आधी रकम केवल प्राथमिक शिक्षा पर ही खर्च होनी चाहिए।

३) नगर पालिकाओं की सीमा में स्थित सभी स्कूलों को निजी खर्चे से चलाए जाने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। इसके लिए सरकार द्वारा विधिवत एक कानून भी पास करना उचित होगा।

४) प्रांतीय अथवा केंद्रीय कोष से पूरा अनुदान प्राप्त करने की युक्ति निकालनी होगी।

५) बड़े शहरों की नगर पालिकाओं को चाहिए उतना वे अपनी सीमा में स्थित सभी स्कूलों का पूरा व्यय स्वयं वहन करें।

इस प्रकार महात्मा फुले का शैक्षिक योगदान आज भी महत्वपूर्ण बने हुए हैं चाहे वह पाठ्यक्रम में सुधार की बात हो या निरीक्षण योजना की।

४.२.२.५ देशी पाठशालाओं की स्थिति :

महात्मा ज्योतिबा ने अपने निवेदन में प्राथमिक पाठशालाओं की स्थापना, उनके विकास, विस्तार तथा व्यवस्थित संचालन के लिए उपर्युक्त सुझाव को प्रस्तुत करने के उपरांत देशी पाठशालाओं की परिस्थितियों पर भी गहराई से विचार प्रकट किए हैं। ''उस समय देसी पाठशालाएँ परंपरागत प्राचीन ग्रामीण शिक्षा-प्रणाली पर चल रही थी। उसने विद्यार्थियों को साधारण गणित,मोडी (लिपि) में लेखन-वाचन तथा धार्मिक ग्रंथों के श्लोक-उद्धरणों को रटने का अभ्यास कराया जाता था। इन पाठशालाओं के शिक्षकों को शिक्षा-शास्त्र की थोड़ी भी जानकारी नहीं होती थी। अतः वे शिक्षा पद्धति में सुधार लाने के लिए सामान्यतः अयोग्य सिद्ध होते थे। फुले का यह मानना था कि,ऐसे लोगों से शिक्षा पद्धति में परिवर्तन लाने की आशा करना व्यर्थ होगा। पेट पालने का आखिरी रास्ता मानकर वह इस पेशे में आते हैं। जब तक विद्यमान शिक्षकों के स्थान पर प्रशिक्षण महाविद्यालयों से प्रशिक्षित शिक्षक नियुक्त नहीं किए जाते तब तक इन स्कूलों से कोई ठोस लाभ नहीं होगा। जहां ऐसे सुयोग्य शिक्षक हैं उन्हीं स्कूलों को अनुदान दिया जाए।''[६८]

इस प्रकार से जोतीराव ने पाठशालाओं को वास्तविक सुधार योग्य तथा सुशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति पर ही मुख्य रूप से निर्भर माना है।

४.२.२.६ उच्च शिक्षा :

उच्च शिक्षा के बारे में ज्योतिबा फुले का कहना था कि, सरकार खुले हाथ से उच्च शिक्षा के लिए खर्च करती है। लेकिन इससे बहुजन समाज की शिक्षा व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो रही है।मैं यह नहीं चाहता कि, जिन लोगों को मदद मिल रही है उन्हें वह न मिले। लेकिन दुर्लक्षित होने वाले एक पूरे वर्ग की ओर अगर सरकार ध्यान दें तो ठीक होगा। अभी इस देश की शिक्षा बाल्यावस्था में है। अगर उच्च शिक्षा के लिए किया जाने वाला अनुदान रोका गया तो शिक्षा प्रसार की दृष्टि से वह घातक होगा।

जोतीराव का मानना था कि,मध्यम तथा कनिष्ठ वर्ग के लोगों में शिक्षा की उल्लेखनीय प्रगति अब तक नहीं हो सकी। ऐसी अवस्था में इस वर्ग को अनुदान से वंचित रखना बहुत विपत्तिजनक होगा। यदि इन लोगों के लिए अनुदान बंद कर दिया जाएगा तो उन्हें अयोग्य तथा संकीर्ण दृष्टि के व्यक्तियों द्वारा संचालित स्कूलों में प्रवेश लेने के लिए विवश होना पड़ेगा। फलतः शैक्षिक कार्य की हानि हुए बिना नहीं रहेगी। जोतीराव का सुनिश्चित मत था कि,किसी भी स्तर की शिक्षा व्यवस्था को निजी प्रबंधकों को सौंपना अभीष्ट नहीं होगा। आने वाले बहुत समय तक सभी स्तरों पर दी जा रही शिक्षा और उसकी प्रबंध व्यवस्था को चाहे वह औद्योगिकी हो,चाहे प्रशासनिक,सरकारी नियंत्रण में रखना ही उचित होगा। प्राथमिक तथा उच्च दोनों स्तरों की शिक्षा के संवर्धन में अपेक्षित आस्था और कृपा दृष्टि केवल सरकार ही दिखा सकती है।

मुंबई विश्वविद्यालय का गौरव करते हुए फुले कहते हैं कि, 'मुंबई विश्वविद्यालय निजी तौर पर शिक्षा लेने वाले विद्यार्थियों को परीक्षा में बैठने की अनुमति देता है और यह लोगों के लिए एक वरदान ही है। उच्च शिक्षा के संबंध में भी विश्वविद्यालय के अधिकारियों द्वारा लोगों को इसी प्रकार का वरदान प्राप्त होगा ऐसी आशा है। बी.ए.,एम.ए.की उपाधि के लिए निजी तौर पर की गई पढ़ाई को विश्वविद्यालय यदि मान्यता देता है,तो कई युवा विद्यार्थी निजी तौर पर पढ़ाई करने का प्रयास करेंगे। उनके द्वारा ऐसा करने से शिक्षा का प्रसार तेजी से होगा।

छात्रवृत्ति देने की सरकार की पद्धति के संदर्भ में महात्मा फुले कहते हैं कि, ''सरकारी छात्रवृत्ति का प्रबंध इस प्रकार किया जाए कि जिन वर्गों में शिक्षा की जरा भी प्रगति नहीं हुई है,उन वर्गों के छात्रों को भी कुछ छात्रवृत्तियॉ मिलनी चाहिए। इससे अन्य वर्गों में शिक्षा प्रसार करने में सहायता मिलेगी।''[६९] ज्योतिबा फुले का मानना था कि,सरकारी महाविद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा का स्वरूप सर्वसाधारण जीवन की जरूरतें पूरी कर सके ऐसा नहीं है। उसमें भी व्यवहारिकता की कमी है। वह छात्रों को स्वतंत्र जीवन जीना सीखा नहीं पाती। जोतीराव की धारणा में उच्च शिक्षा की व्यवस्था इस प्रकार से की जानी चाहिए कि,उसकी प्राप्ति सहज और सर्वजन सुलभ हो।

शिक्षा संबंधी विचारों को समझने के बाद यह पता चलता है कि,महात्मा ज्योतिबा फुले एक महान शिक्षाशास्त्री भी थे। उनके द्वारा १९ वीं सदी में प्रस्तुत किए गए शिक्षा संबंधी विचार आज २१ वीं सदी में भी अनुकरणीय है और हमारे भारतीय समाज के लिए उतने ही महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास के लिए उन्होंने इस दृष्टिकोण से विचार प्रस्तुत किये। फुले के यह विचार देश की गरीब जनता के कल्याण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

४.२.३ महात्मा फुले का धार्मिक योगदान :

१९ वीं सदी के महान व्यक्तित्वों में महात्मा ज्योतिबा फुले का स्थान महत्वपूर्ण है। वे एक दूरदर्शी, सामाजिक चिंतक, क्रांतिकारी समाज सुधारक थे। वे महात्मा बुद्ध की तरह धर्म प्रवर्तक नहीं थे, किंतु उनका मानना था कि, समाज में धर्म पर अत्यधिक निर्भरता के कारण किसी प्रकार का सुधार तक संभव नहीं है। जब तक धर्म में सुधार ना हो तथा धार्मिक विचार उन्नत तथा बौद्धिकता पर आधारित ना हो। इसी कारण उन्होंने ईश्वर, धर्म, सत्य, पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक आदि सभी पर अपने विचार प्रकट किए तथा उसमें व्याप्त अंधविश्वास, कट्टरता आदि की आलोचना की।

भारतीय समाज में व्याप्त धार्मिक आस्थाओं, मान्यताओं, विश्वासों, कर्मकांड का आधार ईश्वर को ही माना जाता है। इस प्रकार भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक, राजनीतिक,

आर्थिक, शैक्षिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक, नैतिक आदि सभी प्रकार का शोषण ईश्वर पर ही आधारित था। महात्मा फुले का मानना था कि,जब तक ईश्वर से संबंधित स्वार्थीयों एवं पाखंडीयों की कल्पनाओं, अंधविश्वासों, कु-प्रथाओं को दूर नहीं किया जाता तब तक समाज में सुधार असंभव है। इसी कारण फुले ने ईश्वरवाद, देववाद, अवतारवाद, भाग्यवाद, पुनर्जन्मवाद, मूर्तिपूजा आदि की आलोचना कर उसके लिए धर्म के ठेकेदारों-पुरोहितों को जिम्मेदार ठहराया।

स्वार्थी ब्राहमण पंडितों ने आम लोगों शूद्रों एवं अतिशूद्रों को सदा के लिए गुलाम बनाए रखने एवं अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए यह सब इजाद किया तथा इसके समर्थन में अनेक झूठे ग्रंथों की रचना की, जिसमें केवल पाखंड और काल्पनिक कहानियां भरी पडी है, जिनके जाल में अनपढ़ अशिक्षित जनता को फंसाकर वे अपना उल्लू सीधा करना चाहते थे तथा प्राचीन काल से कर रहे थे ऐसा महात्मा फुले का मत था।

४.२.३.१ ईश्वर के स्वरूप के बारे में :

ज्योतिबा फुले नास्तिक नहीं थे लेकिन वे ईश्वर के अस्तित्व को मानते थे। वास्तव में ज्योतिबा प्रखर बुद्धिवादी थे और बुद्धि की सहायता से ईश्वर का अस्तित्व प्रमाणित नहीं किया जा सकता फिर भी ज्योतिबा फुले के साहित्य में ईश्वर का उल्लेख बार-बार मिलता है। उसे वे देवता,कभी कर्ता तो कभी परमेश्वर कहते हैं। लेकिन ईश्वर का उल्लेख वे निर्माणकर्ता (निर्मिक) इस शब्द से करते हैं। उन्होंने ईश्वर के लिए प्रचलित अल्लाह, गॉड, ब्रहमा आदि शब्दों में से किसी एक शब्द को नहीं अपनाया क्योंकि उनकी राय थी कि, इन शब्दों के मूल में आराधना भक्ति या पूजा करने के भिन्न-भिन्न विशिष्ट कर्मकांड है और यह कर्मकांड व्यर्थ और मनुष्य-मनुष्य के बीच सामाजिक दरार निर्माण करने वाले हैं।

ज्योतिबा फुले की ईश्वर विषयक कल्पना पूर्णतः निर्गुण निराकार थी। ठीक कबीर के जैसी। वे एकेश्वरवादी थे। वे मानते थे कि, ''अनंत सूर्यमंडल और ग्रहोपग्रहोंसहित समस्त प्राणी मात्रा का निर्माण करने वाली कोई एक शक्ति है। उन्होंने ईश्वर को जो

निर्मिक नाम दिया था वह निर्मिक - दयाधन है। उसने किसी मनुष्य को ऊंच या किसी को नीच नहीं बनाया। उसकी खोज करना व्यर्थ है क्योंकि वह अनंत है। हमारा जीवन अत्यंत अल्प तथा क्षणभंगुर है। भले ही उस निर्मिक ने मनुष्य को सभी प्राणियों में श्रेष्ठ बनाया हो किंतु अपनी श्रेष्ठ बुद्धि के बल पर भी मनुष्य उस निर्मिक की अपरंपार शक्ति को समझ नहीं सकता।''[७०]

इस प्रकार ईश्वर के स्वरूप के संदर्भ में महात्मा फुले अपने मौलिक विचार प्रस्तुत करते हैं ।

४.२.३.२ एकेश्वरवाद का समर्थन :

ज्योतिबा फुले एकेश्वरवादी थे। बहूदेवोपासना की कल्पना उन्हे मान्य नहीं थी। ईश्वर ही चराचर सृष्टि का निर्माता एवं नियंता है ऐसी उनकी धारणा थी। सभी मानव उस की संताने हैं। ईश्वर ही उनका पालनकर्ता,न्यायदाता एवं उद्धारक है।

एक ही निर्माणकर्ता द्वारा निर्माण किए हुए समस्त मानवों के लिए सार्वजनिक सत्यधर्म के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं है,क्योंकि वह मानव का एकमात्र स्वाभाविक तथा प्राकृतिक धर्म है-इस सूत्र को स्वीकार करने पर स्वाभाविक रूप से इस निर्माणकर्ता के स्वरूप और उसके अपने द्वारा निर्मित मानव से संबंधों के बारे में चर्चा करने की जरूरत होती है ।

ज्योतिबा का संकल्पित निर्माता चैतन्यवादियों के ईश्वर की अपेक्षा केवल नामभिन्नता के कारण ही नहीं तो सभी दृष्टियों से निराला और अलग है। सामाजिक जीवन और ईश्वर की परिकल्पना के बीच वाले संबंध द्वंद्वात्मक होते हैं। समाज,स्थल तथा काल के अनुरूप ईश्वर की परिकल्पना में आज बदलाव होता आया है और आज भी सामाजिक आदर्शों और ईश्वर संबंधी परिकल्पना में विसंगतियां उत्पन्न हुई है और जब तक उन्हें दूर किया नहीं जाता, तब तक सामाजिक परिवर्तन का रथ आगे बढ़ ही नहीं सकता।

इस विचार से यह स्पष्ट होता है कि, ज्योतिबा फुले एकेश्वरवाद का कट्टरता से समर्थन करते हैं।

४.२.३.३ बुद्धिप्रामाण्यवाद पर बल :

ज्योतिबा फुले बुद्धिवादी थे इसलिए धर्मों का अधिकांश व्यवहार भावनाओं के बल पर चलता है ऐसा उनका मानना था । वे अपने विवेचन में भावनाओं के बजाय तर्क और बुद्धि पर अधिक बल देते हुए कहते हैं कि, ''ईश्वर के प्रति पूज्यभाव और कृतज्ञता-बुद्धि अवश्य चाहिए लेकिन भाईचारे के साथ हम सभी से बर्ताव कर सके तो उस पूज्यभाव और कृतज्ञता के अलावा ईश्वर तथा धर्मपालन के लिए कुछ करने की आवश्यकता नहीं। धर्मपालन और ईश्वरस्मरण दोनों व्यक्ति के लिए निजी कर्म है।''[७१] उनके पालन के लिए किन्ही बाह्य कर्मकांडों की भावनाओं के प्रदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं।

४.२.३.४ इहवादी जीवन मार्ग :

फुले के मनुष्य केंद्री धर्म-विचारों के उद्देश्य सर्वथा इहवादी थे। मनुष्य जाति का ऐहिक सुख-संवर्धन और जीवन साफल्य यह उनका केंद्रवर्ती उद्देश्य था। फुले के लेखन में निर्माणकर्ता का उल्लेख यदि बार-बार तथा विभिन्न संदर्भों में आया है तो उनका रुख विशेष रूप से अलौकिक की अपेक्षा विश्व और निर्गुण, निराकार ईश्वर की अपेक्षा हाड-मांस से बने मनुष्य की ओर ही था।

ज्योतिबा का सत्यधर्म मत आस्तिक इहवादी धर्ममत है। निर्माणकर्ता ईश्वर को माननेवाला लेकिन उसके संबंधित सभी कर्मकांड को स्पष्ट रूप से नकार देनेवाला वह एक ऐसा जीवनमार्ग है जो सभी मनुष्य जाति का भला चाहता है। उस निर्मिक ने हर व्यक्ति को कुछ मानवीय अधिकार देकर पैदा किया है। इन मानवीय अधिकारों का उपयोग करने में ही व्यक्ति का सुख समाया हुआ होता है। एक और महत्वपूर्ण बात की ओर ज्योतिबा फुले संकेत करते हैं - ''मनुष्य अगर यह जान लें कि किस कृपालु 'निर्मिक' ने सभी स्त्री-पुरुषों को भाई-बहनों की तरह निर्माण किया है। भ्रातृ-भाव कि वह परम पवित्र

वृत्ति रही नहीं इसलिए इस जगत में सत्य का ऱ्हास होता गया और दुख की मात्रा बढ़ी।''[७२]

४.२.३.५ न स्वर्ग न नरक :

ज्योतिबा फुले इस बात में विश्वास करते थे कि, ''न स्वर्ग नाम की कोई वस्तु है,न ही नरक नाम की। कोई भी मनुष्य आज तक न स्वर्ग देखकर वापिस लौटा,न ही नरक देखकर। यह दोनों केवल कल्पना मात्र है ऐसा उनका मानना था। वह पाप और पुण्य के संदर्भ में भी यह बात कहते हैं कि, अपने सुख की प्राप्ति के लिए अन्य लोगों को शारीरिक या मानसिक पीड़ा न देना ही पुण्य है। अपने स्वार्थ के लिए धर्म के आगे आकर या धर्म का सहारा लेकर औरों को लूटना या फिर उनको धोखा देना ही पाप है। ''ईश्वर ने शुभ-अशुभ, पवित्र-अपवित्र जैसी बातों का निर्माण नहीं किया यह तो बस मानव के मन का द्वंद्वभाव है जो ईश्वर की सृष्टि पर इस तरह का भेद थोपता रहता है।''[७३]

४.२.३.६ धर्मग्रंथों के प्रमाण के संदर्भ में :

अपनी 'सार्वजनिक सत्यधर्म' पुस्तक में ज्योतिबा फुले कहते हैं कि, सभी धार्मिक पुस्तकें मनुष्यों द्वारा लिखी गयी हैं। इसलिए वे आदि से अंत तक सत्य नहीं हो सकती। कुछ पूर्वाहग्रस्त लोगों द्वारा इन पुस्तकों में परिवर्तन किया गया है ताकि वे तत्कालीन परिस्थितियों और अवसरों को पूर्ण कर सके। इसलिए धर्म सभी के लिए हमेशा एक समान मददगार नहीं बन सका।

धर्म ग्रंथों की आलोचना करते हुए महात्मा फुले कहते हैं कि, धर्म ग्रंथों में लिखी सभी बातें थोथी नहीं है। समय के अनुसार उनमें कुछ बातें सत्य अवश्य है,जो बातें सभी के लिए अच्छी है उनका स्वीकार किया जाए और जो कालबाह्य है उन्हें छोड़ दिया जाए। असल में ईश्वर एक ही है और विश्व के सभी स्त्री-पुरुष उसकी संताने हैं इसलिए धर्म के नाम पर मनुष्य-मनुष्य के बीच देश,वंश,पंथ,लिंग आदि के आधार पर विभेद करना ईश्वर योजना के विरुद्ध है।

इस प्रकार यह देखा जाता है कि,महात्मा फुले ने धार्मिक ग्रंथों के प्रमाण के संदर्भ में बहुत ही व्यवहारिक दृष्टिकोण को सामने रखते हुए धर्म ग्रंथ किस तरह प्रमाणित नहीं इसका विवेचन किया है।

४.२.३.७सार्वजनिक सत्यधर्म की संकल्पना :

ज्योतिबा फुले ने अपने जीवन के अंतिम काल में 'सार्वजनिक सत्यधर्म' नामक ग्रंथ लिखा। जिसका प्रकाशन उनकी मृत्यु के पश्चात हुआ। यह ग्रंथ प्रश्नोत्तर रूप में लिखा गया है।ज्योतिबा फुले ने सिर्फ किसी विशिष्ट समाज या लोगों का ही नहीं बल्कि उन्होंने संपूर्ण विश्व के मानव प्राणियों के लिए अपने मौलिक विचार इस ग्रंथ के माध्यम से प्रस्तुत किये। विश्व के मानव प्राणियों को सुखी रहने के लिए उनका आचरण महत्वपूर्ण है और यह आचरण सत्य पर आधारित होना चाहिए ऐसा उनका मानना था।

सत्य को ज्योतिबा फुले ने विशेष महत्व दिया तथा सत्यवर्तन करने का आग्रह किया है । सत्य ही महत्वपूर्ण है। सत्य ही सभी धर्मों का मैका है। सत्य ही सुख का आधार है। बाकी सब अंधकार है। सत्य का आचरण करने से कोई भी मनुष्य दुखी नहीं होगा यह ज्योतिबा ने स्पष्ट किया।

मनुष्य को सत्य का आचरण करना चाहिए ऐसा आग्रह फुले ने किया। सत्यपूर्ण आचरण करने से विश्व के सभी मानव प्राणी सुखी होंगे इस प्रकार का आशावाद उन्होंने व्यक्त किया। इसके साथ ही सत्यआचरण कौन सा है? सत्य आचरण करनेवाला किसे कहें? ऐसे प्रश्नों के माध्यम से सत्याचरण के ३३ नियम उन्होंने अपने सार्वजनिक सत्यधर्म इस पुस्तक में दिए हैं जो इस प्रकार हैं -

१) सभी मनुष्य प्राणियों का निर्माणकर्ता 'निर्मिक' है। स्त्री और पुरुष दोनों सभी अधिकार भोगने के लिए जन्मतः पात्र हैं।

२) स्त्री-पुरुष निर्माणकर्ता के अलावा किसी को भी ना माने, जैसे-ग्रह, उपग्रह, सूर्यमंडल, पत्थरों तथा धातुओं की मूर्तियां ।

३) निर्माणकर्ता को उसकी बनाई या मनुष्य की बनाई हुई कोई भी वस्तु अर्पित न की जाए।

४) निर्माणकर्ता की बनाई हुई सभी वस्तुओं का पूरा-पूरा उपयोग स्वयं किया जाए और अन्यों को भी करने दिया जाए।

५) दूसरों को तंग न किया जाए।

६) निर्माणकर्ता ने सभी स्त्री पुरुषो को मानव अधिकारों का धनी बनाया है, उनमें से किसी भी मनुष्य को या मनुष्य की टोली को किसी भी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह पर जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए।

७) निर्माणकर्ता ने सभी स्त्री-पुरुषों को धर्म तथा राजनीति की स्वतंत्रता और समान अधिकार दिए हैं, इसलिए हर एक को उनका लाभ लेने दिया जाए और अपने अधिकारों की तरह दूसरों के अधिकारों को भी स्वीकार किया जाए।

८) हर स्त्री को एक ही पति और हर पुरुष को एक ही पत्नी चुनने का अधिकार है। शेष सभी के साथ भाई-बहन जैसा बर्ताव किया जाए।

९) सभी को अपने विचार व्यक्त करने और लिखने का अधिकार है, इसलिए उन पर प्रतिबंध न लगाया जाए और हर एक इस बात की सावधानी बरतें कि अपने लेखन और विचारों से किसी को तकलीफ न हो।

१०) दूसरे के धर्म तथा विचार को हेय न समझा जाए।

११) नशीली चीजों के सेवन तथा मनुष्य - हत्या को निषिद्ध माना जाए।

१२) जूंओं, खटमलों, सर्पों, शेर-बाघ-भेडियों जैसे हिंसक और मनुष्य के लिए खतरनाक जीवों की हत्या को पाप न समझा जाए।

१३) व्यभिचार निषिद्ध है।

१४) अपने हित-साधन के लिए दूसरों का नुकसान करने हेतु झूठ न बोला जाए और झूठ बोलने वालों की मदद न की जाए।

१५) न चोरी की जाए, न चोर की मदद की जाए।

१६) धर्म से संबंधित अधिकार-पद हर एक को उसकी पात्रता और सामर्थ्य के अनुसार मिलने चाहिए।

१७) धर्म ग्रंथ सभी को उपलब्ध हो,उन्हें अपने ही पास रखकर दूसरों को न दिखाने की वृत्ति को त्याग दिया जाए।

१८) वंशगत श्रेष्ठता को मानकर अन्य लोगों को अपवित्र समझकर उन्हें नीच न माना जाए।

१९) सभी स्त्री-पुरुषों के धर्म, निवास-स्थान आदि की स्वतंत्रता को माना जाए और उनकी संपत्ति की रक्षा की जाए।

२०) पाठशाला में पढ़ाते समय अपने लोगों का वर्चस्व बनाए रखने के लिए अन्य लोगों के बालकों के साथ पक्षपात न किया जाए।

२१) न्यायदान करते समय अन्यायी लोगों की जाति-पाँति,वर्ण का विचार न करके अन्यायी को दंड दिया जाए।

२२) बूढ़े माता-पिता की सेवा की जाए।

२३) श्रम की प्रतिष्ठा को बढ़ाया जाए।

२४) स्वयं कोई भी व्यवसाय न करते हुए व्यर्थ ही धार्मिकता की शान बढाकर अज्ञानी जनों को धोखा न दिया जाए।

२५) धर्म के नाम पर की जाने वाली ढकोसलेबाजी निषिद्ध है।

२६) मन में कोई भी भेदभाव न रखते हुए सब के साथ शुद्ध मन से बर्ताव किया जाए।

२७) सभी धर्म एक-दूसरे के प्रति आदर भाव रखें।

२८) अपने हितों के लिए न्यायी राजा या नरेश अथवा प्रजा द्वारा स्वीकार किए गए मुख्य प्रतिनिधि के विरुद्ध विद्रोह करके हजारों परिवारों को परेशान न किया जाए।

२९) ग्रंथों पर विश्वास करके कोई किसी को नीच या अपना दास न समझे और किसी को दास समझकर उस पर कोई बोझ ना डालें।

३०) किसी व्यवसाय को बुरा या नीच ना माना जाए।

३१) जो स्त्री-पुरुष कृषि या किसी कला-कौशल के आधार पर उदर-पोषण करने को श्रेष्ठ मानते हैं, किसानों की सहायता कर उनका मान-सम्मान करते हैं, उन्हें सत्याचरण करनेवाले माना जाए।

३२) जो स्त्री-पुरुष अपना पेट पालने के लिए अज्ञानी जनों में कलह पैदा नहीं करते या कलह उत्पन्न करने वाले के पास भी नहीं फटकते, उन्हें सत्याचरण करनेवाले माना जाए।

३३) जो स्त्री-पुरुष बिना पक्षपात किए किसी भी कुष्ठरोगी, पंगु या अनाथ बालक की अपनी शक्ति के अनुसार सहायता करते है या सहायता करनेवाले का सम्मान करते हैं, उन्हें सत्याचरण करनेवाले माना जाए।

इन ३३ सूत्रों में सार्वजनिक सत्यधर्म के तत्व समाविष्ट है। इनसे यह ज्ञात हो जाता है कि ''अन्य धर्मों के प्रति आदरभाव और सहिष्णुता सार्वजनिक सत्यधर्म की विशेषता है। जोतीराव मानते हैं कि, हर व्यक्ति को अपना धर्म चुनने का अधिकार होना चाहिए इसलिए एक ही परिवार के सदस्यों का अलग-अलग धर्म हो सकता है।

जोतीराव का सार्वजनिक सत्यधर्म असल में विश्वधर्म है।''[७४]

इस धर्म में किसी भी प्रकार के दुराग्रह, अदावत, झूठी अहंता या हीनभाव, वर्चस्व या गुलामी के लिए कोई स्थान नहीं है। यह धर्म मनुष्य-मनुष्य के बीच लिंग, जाति, धर्म, वर्ण आदि के आधार पर पक्षपात करने का निषेध करता है और श्रम प्रतिष्ठा को अनन्य साधारण महत्त्व देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि, ज्योतिबा फुले की सार्वजनिक सत्यधर्म यह संकल्पना मानवतावादी और समतामूलक समाज व्यवस्था की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है।

४.२.४ महात्मा फुले का राजनीतिक योगदान :

विदेशी सत्ता के खिलाफ १८५७ का जो गदर हुआ था वह असफल होने के बाद भारत में अंग्रेजी सत्ता की जड़ें और अधिक मजबूती से जमती जा रही थी। अंग्रेजी पढ़ लिख कर जो पीढ़ी तैयार हो रही थी उस पर अंग्रेज,अंग्रेजीयन और अंग्रेजी राज तीनों का अनुकूल प्रभाव दिखाई दे रहा था। इसलिए अधिकांश लोग यह मान रहे थे कि,अंग्रेजों का राज एक वरदान ही है। तत्कालीन सभी श्रेष्ठ नेता भी यह मानते थे कि,अंग्रेजों का राज न्यायी और उदार है। लेकिन दादाभाई नौरोजी के पहले महाराष्ट्र में भी भास्कर पांडुरंग तर्खडकर जैसे एक विचारक थे 'जिन्होंने यह स्पष्ट किया था कि,अंग्रेज इस देश को लूट रहे हैं।'

राजनीतिक एकता जैसी कोई चीज इस राष्ट्र के पूर्व भारत में नहीं थी आवागमन के व्यापक साधनों के अभाव में ऐसी एकता का स्थापित होना संभव ही नहीं था। धार्मिक और सांस्कृतिक एकता अवश्य थी और भौगोलिक एकता भी कभी नहीं टूटी। लेकिन ब्रिटिश राज के कारण एक प्रबल मध्यवर्ती सत्ता निर्माण हुई। विभिन्न लोक सेवाओं और कानूनों द्वारा इस सत्ताने पूरे देश को व्यवस्था सूत्र में बांध दिया था। इस तरह पूरी देश की आबादी पर विदेशी सरकार का शासन स्थापित हो गया था।

अंग्रेज पूर्व राज-कारोबार के परिणाम महात्मा फुले ने देखे थे। ''लूटमार, मारकाट, डाकजनी आदि पेशवाओं और मुगल के काल में आम था। वे दोनों सत्ताए प्रजापालक नहीं थी। पेशवा तथा उनके सरदारों ने सामान्य जनता को धर्म के नाम पर भरसक लूटा था। अंग्रेजी सत्ता ने इस पद्धति से होने वाली लूट को रोका जरूर पर वे भीतर ही शोषण का एक भयंकर कु-चक्र चला रहे थे।''[७५]

इस प्रकार फुले सत्ता के कुचक्र का पर्दाफाश करते हैं लेकिन अंग्रेजों की अच्छाई का भी गुणगान इन शब्दों में करते हैं - ''अंग्रेजों के राज में सबके लिए समान कानून था। इसलिए ऊंच-नीच, अमीर-गरीब इत्यादि भेद कम होने से निम्न और असुरक्षित वर्गों को राहत मिली थी।ज्योतिबा फुले इस बात को महसूस ही नहीं बल्कि विश्वास करते थे

कि,अंग्रेजी राज सभी जुल्मों से निम्न वर्गों को मुक्ति देनेवाला राज है। इस राज के कारण पहले राज (पुरोहीतशाही) में विद्वेष के कारण धर्म संबंधी, नीतिसंबंधी, राज्य संबंधी या अन्य कई कारणों से प्रजा पर जो जुल्म होते थे,उनसे उसे हमेशा के लिए मुक्ति मिल गयी। इसलिए महात्मा फुले ने अछूतों को यह सलाह दी थी कि, किसी भी कीमत पर अंग्रेजों को त्यागो मत। उनके हमारे उपर महान उपकार है । यह महान उपकार याने की अंग्रेजों की निष्पक्षता थी।''[७६]

समाज दलित-वंचित तबके में किस प्रकार जागृति आयी इस संबंध में फुले लिखते हैं - ''अंग्रेजी राज में सर्व साधारण भारतीय जनता का बाद में जो प्रजातांत्रिक नवजागरण हुआ उसका एक प्रमुख अंश दलित वर्गों का जागरण और मूलभूत मानवीय अधिकारों के प्रति बढ़ता हुआ उनका एहसास भी था। उन्हें एहसास करा देने का महत्वपूर्ण कार्यज्योतिबा फुले ने किया था।''[७७]

ऐसा नहीं था कि, राजनीतिक स्वतंत्रता ज्योतिबा की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं थी,तत्कालीन राजनीति की डोर मुख्यतः ब्राह्मण नेताओं के हाथों में थी।ज्योतिबा का यह मानना था कि, अगर शासन व्यवस्था में उच्चवर्ण के ब्राह्मणादि लोग अधिक संख्या में जा बैठे तो, शूद्र-अतिशूद्र जहां जिस स्थिति में है वैसे ही रहेंगे। उन्हें क्या लाभ मिलेगा? उल्टे उच्चवर्णियों का दबाव बढ़ेगा और इसी दबाव से विषमता भी बढ़ेगी। रानडे, चिपलुणकर, आगरकर, तिलक, गोखले इत्यादि नेता राष्ट्र को केंद्र बिंदु मानकर अपने आचार-विचारों का उपयोजन करते थे।ज्योतिबा की बात कुछ अलग थी। राजनीति मेंज्योतिबा के लिए और उनके समाज के लिए स्थान बनने का समय नहीं था लेकिन फिर भी ज्योतिबा फुले ने गैरब्राह्मण समाजों की न्याय और हक की लड़ाई को एक राजनीतिक आंदोलन में परावर्तित कर दिया।

४.२.४.१ किसानों के शोषण का विरोध :

किसानों के बारे में ज्योतिबा की यह धारणा थी कि, ''बढ़ती हुई जनसंख्या मध्य और निम्न वर्गीय किसानों की दरिद्रता का एक प्रमुख कारण है। किसानों को उनके खेतों

में होने वाली उपज का मुआवजा ठीक-ठीक मिलना ही चाहिए, इसके लिए वे आग्रही थे। सरकार जो कर उनपर लादती है वह कम होने चाहिए। यंत्रों के कारण ही हस्तोद्योगों का नुकसान काफी मात्रा में हो रहा है इसलिए कुछ हद तक यंत्रों पर रोक लगे और यदि अगर वह नहीं हो रहा है तो कम से कम हस्तोद्योगों को सुरक्षा प्रदान की जाए। सेठों-साहूकारों के शोषण से किसानों को बचाकर उन्हें खेती का आधुनिक ज्ञान दिया जाए इन सब बातों के लिए वे सदा संघर्षशील रहे। ज्योतिबा की विचार-प्रणाली में किसानों का अहम् स्थान रहा है। किसानों के बेटे जब तक पढ़ लिखकर ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते तब तक आज की स्थिति से वे उभर नहीं सकते, इस बात का उन्हें पूरा भरोसा था। जितनी आत्मीयता के साथ उन्होंने अछूत और स्त्रियों की शिक्षा के लिए कोशिश की उतनी ही आत्मीयता से उन्होंने किसानों की शिक्षा के लिए भी की।''[७८]

ज्योतिबा ने निम्न वर्ग के सामाजिक उत्थान तथा उनकी शैक्षिक प्रगति के लिए जितना कार्य किया था उतना ही कार्य नितांत गरीब तथा साधन-हीन किसानों के आर्थिक उद्धार के लिए भी करना चाहा। इसके लिए वे निरंतर प्रयत्नशील रहे। उनका मन समस्याओं के समाधान की खोज निकालने में निरंतर डुबा रहा। परिणामतः उन्होंने सन १८८३ में 'शेतकऱ्यांचा आसूड' (किसान का कोड़ा) शीर्षक से एक ग्रंथ लिखा था जिसमें उन्होंने गरीब किसानों की आर्थिक दुर्दशा का ऐतिहासिक सर्वेक्षण किया। इसके कारणों को बहुत गहराई तथा बड़े मनोयोग से विश्लेषित किया। उनकी मान्यता में पेशवा राज में ब्राह्मण वर्ग ने निर्धन किसानों का बहुत शोषण किया, उनकी अशिक्षा, ज्ञान तथा गरीबी का बहुत अनुचित लाभ उठाया परंतु जैसे ही पेशवाओं का शासन समाप्त हुआ, वैसे ही महाराष्ट्र के अधिकांश सैनिक युद्ध-क्षेत्र से अपने-अपने गांवों को लौट पड़े। अर्थोपार्जन के लिए खेती करने के अतिरिक्त अन्य कोई साधन उनके पास नहीं थे। परिणामतः निर्धन खेतीहर किसानों का शोषण अधिक होने लगा जिसका तीव्र विरोध ज्योतिबा करते रहे ।

४.२.४.२ मिल-मजदूरों का संगठन :

ज्योतिबा हमेशा काम के सिलसिले में मुंबई जाया करते थे। दरअसल वे अपने निरीक्षण के जरिए मजदूरों की दुर्दशा से अच्छी तरह वाकिफ थे। मिल-मजदूर सूर्योदय से सूर्यास्त तक मिल के काम में लगे रहते थे। उन्हें खाना खाने के लिए ही थोड़ा समय मिलता था। त्यौहार के लिए भी छुट्टी नहीं मिलती थी तो उनकी व्यक्तिगत कठिनाइयों की बात ही छोडिए। मजदूरों के श्रम से ही मिल-मालिक अमीर हो रहे थे। ज्योतिबा फुले मिल-मालिकों के मजदूरों के प्रति व्यवहार से नाराज होकर मजदूरों को मिल मालिकों से मुक्ति दिलाने के बारे में सोचने लगे।

मुंबई के ही नारायण लोखंडे नामक उनके करीबी सहकर्मी थे जो सत्यशोधक समाज के सदस्य थे। साथ ही वे ज्योतिबा के 'दीनबंधू' पत्रिका के संपादक भी थे। नारायण राव का जन्म १८४८ में ठाणे के माली परिवार में हुआ था। वहीं उनकी स्कूली शिक्षा हुई। बाद में वे मुंबई आ गए और वहीं बस गए। उन्होंने रेल और डाकघर में कई साल नौकरी की। बाद में वे मांडवी के एक कपड़ा मिल मेंक्लर्क के रूप में काम करने लगे। वहां काम करते-करते उन्होंने मिल-मजदूरों की स्थिति का अध्ययन किया। मिल-मालिक मिल-मजदूरों के साथ जानवरों जैसा व्यवहार करते थे। १४ से १६ घंटे उनसे काम करवाते थे। वे मजदूर भी ऐसे मिल में काम करते थे, जहां सूरज की रोशनी तक पहुंच नहीं पाती थी। इस वजह से कई मिल-मजदूर बीमार पडकर कैंसर जैसी बीमारियों के शिकार होते थे। नारायणराव इस बात से नाराज थे कि, मिल-मालिक उनके इलाज के लिए पैसे नहीं देते थे। तब ज्योतिबा फुले की सलाह के बाद उन्होंने मिल-मजदूरों का संगठन करने और मिल-मालिकों के खिलाफ लड़ने का फैसला किया। ''आखिरकार नारायणराव की मेहनत रंग लाई। उन्होंने ज्योतिबा फुले के मार्गदर्शन में 'मिल हैंड एसोसिएशन सोसाइटी' नामक एक संगठन की सन १८७९ में स्थापना की। इस संगठन की स्थापना में नारायण राव को सोराबजी बंगाली नामक एक पारसी गृहस्थ द्वारा सहायता प्रदान की गई थी। नारायणराव के समर्थन मेंज्योतिबा इस संगठन से निरंतर जुडे रहे।''[७९]

उन्होंने अपने 'दीनबंधू' पत्रिका के माध्यम से मिल मजदूरों के उत्पीड़न को न्याय देने के लिए प्रयत्न किया।

४.२.४.३ पुणे नगरनिगम के सदस्य के रूप में कार्य :

मई १८५८ के आसपास पुणे नगरनिगम की स्थापना हुई और इसका नियमित संचालन शुरू हुआ। उस समय नगरपालिका के सभी सदस्य सरकार द्वारा नियुक्त किए जाते थे। यह सदस्य उच्च जाति के और अंग्रेजों से संबंध रखने वाले थे। इसलिए नगर पालिका के अंतर्गत आनेवाले सभी सुधार उच्च जातियोंवालों के विभाग में ही किए जाते थे। जिस विभाग में शूद्र रहते थे उस विभाग में बिजली, पानी और सड़कों की समस्या कायम रहती थी।

''ज्योतिबा गंजपेठ में रहते थे और उस समय गंजपेठ शूद्रों के निवास-स्थान के रूप में जाना जाता था। इस क्षेत्र में नागरि सुधारों की कोई गंध नहीं थी। शौचालय नहींथे,नाले नहीं थे, सड़कों की हालत खराब थी। पीने के पानी की सुविधा नहीं थी साथ ही स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं की कमी थी।ज्योतिबा ने इस बात को महसूस किया कि,यह सब इसलिए हो रहा है, क्योंकि नगरपालिका में निचली जातियों का कोई प्रतिनिधि नहीं है। उन्होंने नगरपालिका में कनिष्ठ वर्ग का प्रतिनिधि रखने के लिए आवाज उठाई।ज्योतिबा की इस मांग को कनिष्ठ वर्ग के सभी स्तरों का समर्थन मिलने लगा। नतीजा यह हुआ कि,सरकार नगरपालिका में एक कनिष्ठ वर्ग प्रतिनिधि नियुक्त करने के लिए सहमत हुई और आश्चर्यजनक रूप से सरकार ने ज्योतिबा को एक कनिष्ठ वर्ग प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त किया। इसके बाद ज्योतिबा फुले ने १८७६ से १८८९ तक पुना नगरनिगम में सदस्य के रूप में सराहनीय कार्य किया।''[८०]

नगरपालिका में काम करते समय ज्योतिबा का नजरिया हमेशा गरीबों,शूद्रों तथा वंचितों के प्रति जागरूक रहने का था।ज्योतिबा बड़े ही उत्साह और निडरता के साथ नगरपालिका के सदस्य के रूप में कार्य करते रहें।

४.२.४.४ शराबखानों पर सरकार का विरोध :

''शराब उन्नत समाज का शौक और गरीब समाज की मौत होती है ऐसी महात्मा फुले की धारणा थी। सरकार शराब की नई दुकानें खोलने के लिए परवाने जारी न करें इसके लिए उन्होंने सरकार का काफी विरोध किया। १७ जुलाई १८८० को ज्योतिबा फुले ने पुना नगरनिगम के कार्यकारी मंडल के अध्यक्ष प्लंकेट को एक पत्र लिखकर कहां कि, 'शराब की आदत नागरिकों के नैतिक आचरण में बाधा डालती है। इतना ही नहीं वह स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत घातक है। अधिकांश लोग मेरे इस मत से सहमत होंगे। जब से शराब के अड्डे शहर में खुले हैं तब से शराबखोरी इतनी बढ़ गई कि, इसने कई घरों का पूर्णतः सत्यानाश कर दिया है। अब यह दुर्गुण इस शहर के आदम में शुमार हो गया है। मैं, नगरपालिका को यह सूचना देता हूं कि, सरकार शराब की दुकान खोलने के लिए नए परवाने न दे और शराब के इन अड्डों से वे समाज का जितना नुकसान करते हैं,उस हिसाब से टैक्स वसूल करें।''[८१]

इस प्रकार महात्मा फुले ने आम लोगों के हित के लिए नगर पालिका के सदस्य के रूप में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

४.२.५ महात्मा फुले का साहित्यिक योगदान :

दलित वर्ग मुक्ति का प्रचार और बहुजन समाज का प्रबोधनफुले के आंदोलन के लक्ष्य थे। उन्होंने अपने छोटे-बड़े ग्रंथों का निर्माण इसी लक्ष्य सिद्धि के हेतु किया था। उनके साहित्य सर्जन का अंतरंग और बहिरंग तत्कालीन उच्चवर्णीय लोगों के साहित्य से भिन्न था।ज्योतिबा फुले ने जो भी कुछ लिखा उसका उद्देश्य लोगों को अपनी विद्वत्ता दिखाना नहीं था। वे कर्मठ, विचारक पुरुष थे। उनका हर विचार मनुष्य के आचरण से संबंधित था। उसमें सुधार लाने की लगन थी। उनके सारे साहित्य में यही विचार पाया

जाता है कि, सभी मनुष्य समान है और इस समाज में एक भी व्यक्ति किसी का गुलाम न रहे। उनका रचना संसार तथा साहित्यिक योगदान इस प्रकार है -

४.२.५.१ तृतीय रत्न (नाटक) :

महात्मा ज्योतिबा फुले की सर्वप्रथम साहित्यिक कृति 'तृतीय रत्न' नाटिका एक कालजयी रचना है। यह पाँच अंकों में लिखी नाटिका है। जिसका प्रकाशन १८५५ में हुआ। इस नाटक में यह बताया है कि, ''ब्राम्हण-पुरोहित वर्ग धर्म के नाम पर झूठे प्रलोभन देकर भोले-भाले,अनपढ़ शूद्रों को कैसे लूटते हैं और ईसाई पादरी निष्पक्ष धर्म के आधार पर अज्ञानी शूद्रों को सच्चा ज्ञान देकर किस तरह सही मार्ग पर लाते हैं। इस की कथावस्तु सरल है और घटनाएँ तथा पात्र इने-गिने है। इसके पात्र हैं - एक कुनबी औरत, उसका पति, विदूषक, पुरोहित और उसका भाई, एक पादरी और एक मुसलमान आदि।''[८२]

'तृतीय रत्न' के बाद जोतीराव ने फिर कभी नाटक नहीं लिखा यह उनकी पहली और आखिरी नाट्यकृति है।

४.२.५.२ पोवाड़ा छत्रपति राजा शिवाजी भोसले का :

''छत्रपति शिवाजी महाराज की जीवनी से प्रेरणा लेकर जोतीराव ने यह पोवाडा लिखा। यह सन १८६९ में प्रकाशित हुआ। इसकी छपाई मुंबई के 'ओरिएंटल प्रेस' में की गई थी। यह पोवाड़ा ३० पृष्ठों का है। भूमिका के दो पृष्ठ और आरंभिक ४ पृष्ठ अलग है। जोतीराव ने इस पोवाडे की रचना का विवरण दिया है। साथ ही उन्होंने इस पोवाडे को ८ अध्यायों में विभाजित किया है।''[८३]

इस पोवाडे में जोतीराव ने शिवाजी महाराज के जीवन की अधिकांश घटनाओं का धाराप्रवाही भाषा में वर्णन किया है। लेकिन इस वर्णन में भी उनका सामाजिक दृष्टिकोण झलकता है।

४.२.५.३ ब्राह्मणों की चालाकी (ब्राह्मणांचे कसब) :

सन १८६९ में जोतीराव ने एक और पद्यसंग्रह प्रकाशित किया जिसका शीर्षक है - ब्राह्मणों की चालाकी। यह संग्रह उन्होंने कुनबी, माली, महार, मांग आदि शूद्रादि-शूद्र जातियों को 'परमप्रेमपूर्वक' अर्पित किया है। इसकी भूमिका में बाबा पदमनजी ने लिखा है कि, ''श्री.जोतीराव ने लोगों को ब्राह्मणशाही की जाल से मुक्त करने हेतु यह पुस्तक लिखी है और उनका दूसरा उद्देश्य यह है कि,हमारी समदृष्टि अंग्रेज सरकार अपनी प्रजा में से इन अतिउपयोगी वर्गों को शिक्षा दें और उससे उनकी आंखें खोलकर उन्हें पंडे-पुरोहितों की दासता से मुक्त करें। यदि इन उद्देश्यों की पूर्ति हो जाए तो लेखक के श्रम सफल होंगे।''[८४]

इस पुस्तक में ९ पद्य हैं जो पोवाडों और अभंगों के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। पृष्ठ संख्या २० है। इन पदों में अज्ञानी और भोले-भाले किसानों के धार्मिक विश्वास का लाभ उठाकर अपना उल्लू सीधा करनेवाले पंडे-पुरोहितों का यथार्थ वर्णन है। लगभग हर पद्य में जोतीराव ने धार्मिक भोलेपन और कु-प्रथाओं पर करारी चोट की है।

४.२.५.४ गुलामी (गुलामगिरी) :

जोतीराव का यह चौथा ग्रंथ है जिसका प्रकाशन सन १८७३ में हुआ। जो गद्य स्वरूप में लिखा ग्रंथ है। जिसका शीर्षक है-गुलामी। इस ग्रंथ की भूमिका अंग्रेजी और मराठी दोनों भाषाओं में दी गई है। अंग्रेजी की पृष्ठ संख्या १२ है और मराठी की १०। मूल ग्रंथ के ५४ पृष्ठ है। इसका मुद्रण पुणे के 'सिटी प्रेस' में किया गया था। ग्रंथ का मूल्य १२ आने (७५ पैसे) था और शूद्रों तथा अतिशूद्रों को यह ६ आने में मिलता था। यह ग्रंथ जोतीराव ने 'अमरिका के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री. अब्राहम लिंकन से अभिभूत होकर लिखा था और 'यूनाइटेड स्टेट्स' के उन सदाचारी लोगों को अर्पित किया जिन्होंने हब्शी गुलामों को गुलामी से मुक्त करने के कार्य में उदारता, निरपेक्षता और परोपकारिता दिखाई।' साथ ही ''अर्पण पत्रिका में जोतीराव ने आशा प्रकट की है कि, उनके देशवासी इस कार्य का अनुकरण करके अपने शूद्र भाइयों को ब्राह्मण लोगों की दासता से मुक्त करेंगे।''[८५]

यह ग्रंथ जोतीराव और उनके सहयोगी श्री.धोंडीबा कुंभार के बीच हुए प्रश्नोत्तरों के रूप में है। इसके कुल १६ अध्याय हैं जिनमें से पहले नौ अध्यायों में ब्राह्मणी वर्चस्व का विवेचन है।

४.२.५.५ किसान का कोडा (शेतकऱ्यांचा आसूड) :

यह ग्रंथ जोतीराव फुले ने सन १८८३ में लिखा लेकिन उनके जीवन काल में इस ग्रंथ का प्रकाशन नहीं हो सका। यह ग्रंथ देश के मध्यम और कनिष्ठ स्तर के किसानों की पशुओं से भी गई-बीती अवस्था, उनकी आकाश को छूनेवाली समस्याओं और उनकी स्थिति सुधारने के लिए अंमल में लाए जाने वाले उपायों की 'कृषि गाथा' है।

इस ग्रंथ की भूमिका में जोतीराव लिखते हैं कि, ''यह ग्रंथ मैंने अंग्रेजी,संस्कृत तथा प्राकृत के कई ग्रंथों और वर्तमान अज्ञानी शूद्राति-शूद्रों की दयनीय स्थिति के आधार पर लिखा है। शूद्र किसानों की वर्तमान दयनीय स्थिति के जो अनेकानेक कारण है उनमेंसे कुछ कारणों का विवेचन करने हेतु यह ग्रंथ रचा गया है। लगभग सभी सरकारी विभागों में ब्राह्मण कर्मचारियों का प्राबल्य होने और सरकारी अंग्रेज कर्मचारी आरामपसंद होने से शूद्र किसान ब्राह्मणों द्वारा ठगे जाते हैं। इस ग्रंथ के अवलोकन से उनसे बचा जा सके इस उद्देश्य से इस ग्रंथ का शीर्षक 'किसान का कोडा' रखा गया है।''[८६]

इस ग्रंथ में जोतीराव ने चारों ओर से पीडित, सताये जानेवाले महाराष्ट्र के गरीब किसान के तंगहाल और दयनीय जीवन का चित्रण किया है।

४.२.५.६सार्वजनिक सत्यधर्म :

यह जोतीराव का अंतिम ग्रंथ है। इसका प्रकाशन सन १८९१ में हुआ। शरीर का दायाँभाग लकवे से बेकार हो जाने के कारण जोतीराव ने यह ग्रंथ बाएँ हाथ से लिखा।जोतीराव की 'वसुधैव कुटुंबकम' का सम्यक स्पष्टीकरण करनेवाला या ग्रंथ फुलेस्मृति है जो प्राचीन काल की 'मनुस्मृति' को काटता है।

ज्योतिराव ने सत्यशोधक समाज स्थापित कर सामाजिक आंदोलन का प्रयास किया। इस आंदोलन के मूल में उनका जन्म रचनात्मक विचार था, समाज की बहुसंख्यक जनता का सामाजिक शोषण बंद कर सभी मानवों को मुक्त करना। मानव-अधिकारों और मानवता के प्रतिष्ठापन के लिए जोतीराव द्वारा किया गया संग्राम, उसके मूल में बोये हुए शक्तिशाली परिवर्तन के बीज और उनके चारों ओर फैला हुआ उनके महात्मा का दिव्य वलय इन सभी की संपूर्ण अभिव्यक्ति सार्वजनिक सत्यधर्म पुस्तक में हुई है।

४.२.५.७ अन्य साहित्यिक योगदान :

पद्यलेखन :

१) भट-भिक्षुकों को सवाल - सन १८५१

२) निर्मिक की खोज - सन १८५३

३) विद्या शाखा के ब्राह्मण-पंडों का पोवाड़ा - सन १८६९

४) इंजीनियर शाखा के भट-पंडों का पोवाड़ा - सन १८७३

५) दस्यु का पोवाडा - सन १८९०

६) ब्राह्मणों की चालाकी (खंडकाव्य) - सन १८६९

गद्यलेखन :

१) सत्सार अंक १ और २ - सन १८८५

२) चेतावनी (इशारा) - सन १८८५

निबंध लेखन :

१) पुरोहित-ब्राह्मणों उत्तर दो - सन १८५१

२) मनुस्मृति का धिक्कार - सन १८५४

३) विधवाओं की भयानक अवस्था - सन १८७६

अभंग :

१) सत्ता तेरी रानी बाई - सन १८६९

२) मारवाड़ी-भटों की चालाकी - सन १८७३

३) भटों के मतलबी ग्रंथों की चालाकी - सन १८७३

४) भटों की चालाकी और शूद्रों का भोलापन - सन १८७३

५) २५० अखंड

पत्रलेखन :

१) न्या. म.गो. रानडे को पत्र - सन १८८६

२) मामा परमानंद को पत्र - सन १८८२

३) हंटर शिक्षा आयोग को निवेदन - सन १८८२

महात्मा फुले की ग्रंथ संपदा एवं उनके शीर्षक देखने के उपरांत जोतीराव के विचारों की दिशा स्पष्ट होती है। कबीर की तरह जोतीराव का साहित्य 'स्वांत सुखाय' नहीं है बल्कि विशिष्ट उद्देश्य पूर्ति के लिए उन्होंने साहित्य की रचना की है। उनके साहित्य के उद्देश्यों में शूद्र तथा अतिशूद्रों की दयनीय स्थिति के मूल में निहित कारणों को स्पष्ट करते हुए उनमें जागृति लाकर उन्हें सत्य का बोध कराना, शूद्र तथा अतिशूद्र समाज के पढ़े-लिखे युवकों को उनके सामाजिक कर्तव्यों के प्रति सचेत करना और सरकार को समझाना कि, जब तक पिछड़ी हुई जातियों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार नहीं किया जाता तब तक उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं हो सकता।

जोतीराव को अपने लेखन के पीछे अपनी विद्वत्ता दिखाने का उद्देश्य नहीं था बल्कि वे कबीर की तरह एक कर्मठ, प्रखर विचारक एवं सन्मार्गी पुरुष थे। महात्मा फुले केवल समाज सुधारक ही नहीं थे, वे महाराष्ट्र के आद्य साहित्यिक तथा सामाजिक क्रांति के अग्रदूत थे। वे समानता की नींव पर जाति-पाति विरहित और शोषणमुक्त समाज का निर्माण करना चाहते थे। अपनी लक्ष्य पूर्ति के लिए वे आजीवन संघर्ष करते रहे और अपने कार्य कर्तृत्व के बल पर महाराष्ट्र के शिल्पकार बनें।

४.३ छत्रपति शाहू महाराजा का भारतीय समाज के लिए योगदान

भारत वर्ष के एक अद्वितीय राजा छत्रपति शाहू महाराजा ने भारतीय समाज के लिए बहुत बड़ा योगदान दिया है। उन्होंने राज्यारोहण के पूर्व ही संपूर्ण देश और

कोल्हापुर रियासत की यात्रा की। उनकी यात्रा का उद्देश्य केवल देश भ्रमण नहीं, बल्कि राज्यारोहण के पश्चात् अपने देशवासियों के लिए क्या-क्या किया जा सकता है, उनकी क्या व्यवस्थाएँ हैं, इसका अवलोकन था। इसलिए वे देश और संस्थान के अत्यंत दुर्गम भागों में गये। वहां भारतीय समाज की दरिद्रता, अज्ञानता तथा दैन्य और अंधश्रद्धा को नजदीक से देखकर समझ गये कि राज्य करने का मतलब केवल राज्य के अंतर्गत शांतता एवं सुव्यवस्था स्थापित करना नहीं, बल्कि गरीब, दीन, दुर्बल प्रजा को सुख और समाधान के साधनों का निर्माण कराना है।

राज्यारोहण के पूर्व कोल्हापुर की प्रजा अपने राजा के रूप को देखने के लिए चातक पंछी की तरह प्रतिक्षा कर रही थी। अतः वह दिन भी आ गया और तिथि ०२ अप्रैल, १८९४ ई. को गव्हर्नर लॉर्ड हॅरिस की उपस्थिति में शाहू महाराजा का राज्यारोहण संपन्न हुआ। राज्यारोहण के पश्चात् ही महाराजा ने जनता के सुख-चैन और समाधान के लिए एक घोषणापत्र निकाला। जिसमें उन्होंने प्रजा के कल्याण में वृद्धि होती रहें, वह हमेशा तृप्त रहें और रियासत का उत्कर्ष होता रहें ऐसी आकांक्षाएँ व्यक्त की थी। इन आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जागीरदार, रिश्तेदार, इनामदार, कामगार, सरदार, व्यापारी तथा सभी प्रजाजनों से शुद्ध अंतःकरण और सच्ची राजनिष्ठा से सहायता करने की उम्मीद की गई थी।

शाहू महाराजा ने राज्यारोहण के समय प्रजा के सुख-चैन और समृद्धि की जो बात कहीं थी, वह औपचारिक न थी बल्कि उनके हृदय की सच्ची भावना थी। जिसका प्रत्यक्ष अनुभव राज्यारोहण के पश्चात् दस-बारह दिनों में इस बात से ही आ गया कि 'राजसत्ता का अधिकार राजवैभव एवं राजविलास का उपभोग लेना नहीं है, राजा उपभोग शून्य स्वामी होता है। जिसका कर्तव्य गरीब और अज्ञानी प्रजा का उद्धार करना होता है।' महाराजा ने राज्यारोहण के तुरंत बाद गाँवों, कस्बों में जाकर गरीब जनता की दयनीय स्थिति नजदीक से देखी। जहाँ उन्हें जनता की दरिद्रता, अज्ञानता, अंधश्रद्धा और दीनता के दर्शन पग-पग पर हुए। अतः इनकी स्थिति में बदलाव हेतु अनेक प्रश्न उनके सामने थे जिन्हें उन्होंने अपनी योग्यता से सुलझाए।

महाराजा शाहू का संपूर्ण जीवन प्रजाहित में समर्पित है। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां उन्होंने योगदान न दिया हो। हर एक क्षेत्र में कुछ-न-कुछ योगदान उनका रहा है। जिसमें शिक्षा, अस्पृश्योंद्धार, कृषि, भारतीय स्वतंत्रता, आरक्षण प्रणाली, छात्रावासों का निर्माण, अकाल निवारण, मल्ल निर्माण, उद्योग, संगीत, चित्रकला, नाट्य कला जैसे अनेक क्षेत्रों में उन्होंने बहुमूल्य योगदान दिया है। उनके इसी योगदान से हिंदुस्थान आज विकास की राह पर अग्रेसर है।

४.३.१ शिक्षा के क्षेत्र में योगदान :

अज्ञानरूपी अंधेरे को नष्ट करने का सबसे अलौकिक साधन या तत्व 'शिक्षा का उजाला' है। यह शाहू महाराजा भली-भाँति समझते थे किंतु इस शिक्षा से बहुजन समाज सदियों से वंचित था। अंधेरे में जी रहा था। अज्ञानता और दरिद्रता की खाई में पीस रहा था। शिक्षा के अभाव के कारण निर्माण हो रही इस अनर्थता को रोकने तथा अज्ञानता को दूर करने के लिए शिक्षा का प्रचार आवश्यक था। इसलिए शाहू महाराजा अखिल भारतीय मराठा शिक्षा परिषद के सम्मेलन में शिक्षा प्रतिबंध से अपने देश की हुई अधोगति का मुद्दा प्रतिपादित करते हुए कहते हैं, ''हमारा दृढ़ मत है कि शिक्षा ही हमारे लिए कल्याणकारी है। इतिहास कहता है कि किसी भी देश की उन्नति शिक्षा के बगैर नहीं हुई है। अज्ञान में डूबे देश में उत्तम राजनीतिज्ञ तथा योद्धा वीर कभी भी निर्माण नहीं होंगे। इसीलिए हिंदुस्थान में अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा की अत्यंत आवश्यकता है।''[८७]

महात्मा फुले के अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा के विचारों को शाहू महाराजा ने आगे ले जाने का काम किया है। उन्होंने सभी सामाजिक सुधारों तथा प्रगति की माँ शिक्षा को मानते हुए समाज के पिछडे वर्ग की बौद्धिक गुलामी नष्ट करने तथा उन्हें कम से कम प्रारंभिक शिक्षा उपलब्ध करवाने का जबरदस्त समर्थन किया। वे अपने एक भाषण में कहते हैं, ''पिछड़े वर्ग के लोगों की बुद्धि तथा ज्ञान पर यह जो भारी तथा जुलमी दास्य थोपा गया है उसे उखाड़ फेंकने की शक्ति बहुजन समाज में आना अनिवार्य तथा प्राथमिक शिक्षा की अत्यंत आवश्यकता है।''[८८]

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रिकीकरण हेतु छत्रपति शाहू महाराजा का ध्यान हमेशा शिक्षा विभाग की ओर लगा रहता था। इतनी उदारता उन्होंने किसी दूसरे खाते में नहीं दिखाई थी। वे शिक्षा का प्रचार करने का प्रयास कर रहे थे। उन्होंने अनिवार्य शिक्षा योजना पर लाख रुपयें खर्च करने की घोषणा की थी तथा शिक्षाविद्‌ों की समिति द्वारा बनायी नियमावली पर आधारित 'अनिवार्य शिक्षा कानून' लागू किया था। उनके इस कानून का उद्देश्य था, ''करवीर इलाके के हमारे सभी प्रजाजन लिखें-पढ़ें तथा वे अपनी स्थिति को पहचान कर सुधार करने में समर्थ हों।''[८९] इस कायदे के अंतर्गत शिक्षा के लिए योग्य आयु के बच्चों को पाठशाला में भिजवाने की सख्ती माँ-बाप पर की गई थी। यदि कोई इसका पालन न करे और अपने बच्चों को पाठशाला में न भेंजें तो उस से जुर्माना वसूलने की व्यवस्था भी की गई थी। आगे इस कानून पर अंमल करते हुए गांव-गांव में प्रारंभिक स्कूलों की स्थापना की गई। जहां इमारत उपलब्ध नहीं, वहां गांव के मंदिर, धर्मशाला की इमारतों में पाठशालाएँ प्रारंभ की गई। कहीं जगहों पर विशेष रूप से पाठशालाओं के लिए इमारतें बंधवायी गयीं। ''एक ही वर्ष में रियासत के गांव-गांव में कुल ९६ नवीन पाठशालाएँ प्रारंभ हुई। स्वयं शाहू महाराजा के हाथों चिखली गांव में पहली नवीन अनिवार्य पाठशाला का उद्‌घाटन समारोह हुआ। ...इस योजना के कारण प्राथमिक शिक्षा पहली ही बार लगभग पौना लाख देहाती लोगों के लिए फायदेमंद रही तथा उनमें से साढेचार हजार से भी अधिक बच्चें शिक्षा लेने लगे।''[९०]

शाहू महाराजा ने प्रारंभ में ही अपनी रियासत में अनिवार्य तथा मुफ्त शिक्षा के लिए एक विशेष स्वतंत्र विभाग की स्थापना की थी। उस पर डायरेक्टर और एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर जैसे वरिष्ठ अधिकारी नियुक्त किये थे तथा इस खाते को स्वयं अपनी निगरानी में रखा था। साथ ही रियासत के तहसीलदार, महालकरी, पटवारी आदि लोगों को प्रारंभिक शिक्षा आंदोलन में सम्मिलित कर उन्हें गांव-गांव भेजकर लोगों से अपने बच्चों को पाठशाला में भेजने हेतु तैयार करने और हर महिने में पाठशाला की जाँच-पडताल करके उसकी रिपोर्ट बनवाने के कार्य सौंपे थे। किंतु चिंता की बात यह थी कि गांव के

किसान अपने बच्चों को पाठशाला में भेजने के लिए तैयार नहीं थे। क्योंकि यह बच्चे उन्हें खेतीकाम करवाने में मदद करते थे। यदि ये पाठशाला जाए तो खेतीकाम में सहायता कौन करेगा? किसानों की जीविका खेती पर ही चलने से उन्हें पाठशाला की तुलना में खेती महत्वपूर्ण लगती थी। परंतुशाहू महाराजा ने इस पर भी रास्ता निकाला था। ''गांव के किसानों के बच्चें सुबह अथवा शाम को दो घंटे पाठशाला में आएँ तथा शेष समय कृषि कार्य में बिताएं।''[९१] इसके माध्यम से महाराजा की शिक्षा संबंधी नीति कितनी लचीली, सरल, सुलभ तथा वास्तववादी थी इसका पता चलता है।

कोल्हापुर रियासत के ज्यादा से ज्यादा बच्चें शिक्षित हों, उन्हें हर सुविधा मिले इसलिए शाहू महाराजा ने छात्रालय की स्थापना का निर्णय लिया। ताकि हर जाति-धर्म के लडके यहां रहकर अपनी शिक्षा प्राप्त कर सकें। साथ ही महाराजा ने इन बच्चों के खाने और रहने की व्यवस्था भी मुफ्त करवायी। इसी का फल था कि सन् १८९९ में राजाराम विद्यालय का छात्र पांडूरंग चिमाजी पाटील दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण करके परिस्थिति न होने के बावजूद महाराजा की कृपादृष्टि से पन्हाळा में स्थित महारानी व्हिक्टोरिया मराठा छात्रावास में आकर आगे की शिक्षा ले सका। महाराजा हमेशा चाहते थे कि रियासत का हर समाज शिक्षित हो, कोई शिक्षा में वंचित न रहें। बावजूद इसके मराठा समाज अनपढ़ ही था। इसलिए महाराजा ने मन-ही-मन यह निश्चय करके मराठा छात्रों के लिए एक विशेष आदेश निकाला। वह आदेश था, ''मराठा छात्रावास को चार हजार रुपयें नगद दिये जाए, आठसौं रुपयों की इमारत पूँजी स्वरूप दी जाए और विद्यार्थियों के भोजन का खर्चा निजी दरबार से हो...''[९२]

शाहू महाराजा यही पर नहीं रुके। उन्होंने रियासत की जनता को शिक्षित करने का जो संकल्प किया था, उसके लिए विविध जातियों के कार्यकर्ताओं को बुलाया, उनसे चर्चा की, उन्हें बताया आप अपनी-अपनी जाति की शिक्षा उन्नति हेतु छात्रावासों का निर्माण करें। इस कार्य के लिए जिस तरह के मदद की आवश्यकता होगी, आपको की जायेगी। शिक्षा के उत्कर्ष के लिए शाहू द्वारा स्वयं की दादी महारानी सकराबाई की थट्टी

देने का उल्लेख उदाहरण स्वरूप मिल जाता है। साथ ही स्कूल के पास मैदान आवश्यक था इसलिए कळबा तालाब के पास अडतालीस एकड़ जमीन तथा स्कूल चलाने के लिए आवश्यक तीन हजार रूपयों का प्रबंध महाराजा ने करवाया था। उन्होंने इस मैदान परिसर के बारे में दीक्षित से कहां था, ''दीक्षित, यहां बहुत कुछ करना है। क्रिडांगण (स्टेडियम), आश्रम, कृषि ऐसा बहुत कुछ करने जैसा है। अतः जगह बडी ही होनी चाहिए। भविष्य में यदि आपको कोई नयी योजना करनी हो तो जगह की वजह से काम बाकी न रहें। मैं जब-तक देता हूँ लीजिए। आगे हमारा कौन बताए? मैं रहूँगा-न-रहूँगा। आपका काम बढते रहना चाहिए।''[९३] यहां महाराजा द्वारा शिक्षा के लिए सब कुछ लूटा देने की उदार भावना स्पष्ट हुई है।

शाहू महाराजा ने स्त्री शिक्षा को भी प्रोत्साहन दिया था। उन्होंने लडकियों की निवास तथा भोजन की पूरी व्यवस्था दरबार से मुफ्त करवायी थी। साथ ही मेधावी लडकियों को आगे की शिक्षा हेतु प्रोत्साहन मिले, इसलिए चालीस रुपयों की कुल पांच विशेष छात्रवृत्तियाँ शुरु की थी। उन्होंने फिमेल ट्रेनिंग स्कूल की शिक्षिका रखमाबाई केळवकर की कन्या कृष्णाबाई को डॉक्टरी शिक्षा हेतु मुंबई के ग्रँट मेडिकल कॉलेज में भेजकर डॉक्टर बनाया था तथा कोल्हापुर के एडवर्ड मेमोरियल अस्पताल में वरिष्ठ वैद्यकीय अधिकारी के रूप में नियुक्त किया था। आगे वहीं केळवकर की कन्या, ''महाराजा के प्रोत्साहन तथा अर्थसहाय्य से शीघ्र ही उच्च वैद्यकीय शिक्षा हेतु इंग्लैड गयी और उच्च विद्याविभूषित हो पुनःश्च कोल्हापुर रियासत की सेवा में हाजिर हुई।''[९४] साथ ही महाराजा ने अपनी विधवा बहु इंदूमति देवी का व्यक्तित्व सर्वांगसुंदर तथा आत्मनिर्भर बनाने में अत्यंत कष्ट लिए थे। इसके लिए उन्होंने राज परिवार का तीखा विरोध अस्वीकार करके इंदुमतिदेवी को शिक्षा देने का साहसी निर्णय लिया था तथा उस पर अंमल भी किया था। महाराजा के इस निर्णय के संबंध में डॉ. अरुणा ढेरे कहती हैं, ''इस समय एक कर्ता सुधारक राजा तथा एक प्रगतिशील उदारमनस्क पुरुष के रूप में शाहू महाराजा का आचरण हमेशा ध्यान में रहनेवाला है। ...शाहू छत्रपति के स्त्री

शिक्षाविषयक कल्पनाओं को कार्यरत रखने इंदुमतिदेवी का जीवन मानो उत्तम प्रयोगशाला थी।''[९५] इंदुमतिदेवी को शिक्षा देने के पीछे महाराजा का सपना था कि, वह विद्वान बनें, उच्च वैद्यकीय शिक्षा ले तथा डॉक्टर बनकर अपनी ही रियासत में गरीब जनता की सेवा करें।

महाराजा ने उच्च शिक्षा की इच्छा रखनेवाले बहुजन समाज के अनेक जरुरतमंद युवकों को आर्थिक मदद तथा छात्रवृत्तियाँ दी थी। उसमें भारतरत्न डॉ. बाबसाहेब आंबेडकर, पी.सी. पाटील तथा अनेक विद्यार्थियों को अर्थ सहाय्य देने के आदेश भी उपलब्ध है। डॉ. जयसिंगराव पवार अपनी किताब राजर्षिशाहू - एक समाज क्रांतिकारी राजा में लिखते हैं, ''विद्वान शिक्षाविद् के रूप में प्रख्यात प्रि.सी. आर. तावडे को उच्च शिक्षा हेतु अमेरिका जाने तथा ख्यातिप्राप्त कलाकार, समाजसुधारक और नेता के रूप उदित हुए भाई माधवराव बागल को जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट में शिक्षा हेतु सहायता की। उसी तरह ये बातें भी दर्ज की गयी हैं कि महाराजा ने १९१४ ई. में एक तथा १९२० ई. में तीन विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा हेतु अमेरिका भेजा था। कुछ छात्रवृत्तियाँ कला, कानून, तंत्रज्ञान, वैद्यक विषयों में उच्च शिक्षा हासिल करनेवाले छात्रों के लिए रखीं थी। महाराजा ने केवल कोल्हापुर रियासत के ही नहीं तो रियासत बाहर के छात्रों तथा संस्थाओं को मुक्त हस्त से छात्रवृत्तियों तथा भेंट निधि देने के उल्लेख मिलते हैं। उदा. उन्होंने मद्रास में महान ब्राम्हणेत्तर नेता डॉ. नायक की स्मृति में रू. ५०००/- की निधि से 'डॉ. नायर मेमोरियल स्कॉलरशीप' प्रारंभ की थी। महाराजा ने रियासत बाहर की डेक्कन एज्युकेशन सोसायटी, श्री शिवाजी मराठा सोसायटी, ताराबाई मराठा बोर्डिंग (पुणे), श्री उदाजी मराठा बोर्डिंग, सोमवंशीय समाज बोर्डिंग (नासिक), चोखामेळा बोर्डिंग (नागपुर), बनारस हिंदू युनिव्हर्सिटी (काशी) आदि अनेक संस्थानों को ठोस अर्थसहाय्य दिया था। सारांशतः महाराजा ने अपने कार्यकाल में देश के शिक्षा प्रचार आंदोलन की भी सहायता के सभी तरह के प्रयत्न बडे उत्साह तथा ध्येयनिष्ठा से किए।''[९६]

छत्रपति शाहू महाराज के इस बहुमूल्य योगदान का फल उन्हीं के कार्यकाल में दिखाई देने लगा था। इसका प्रमाण विद्यार्थियों की संख्या में हुई वृद्धि से मिल जाता है। उनके राज्यारोहण के समय सन् १८९४ ई. में विद्यार्थियों की संख्या १०,८४४ थी, वह सन् १९२२ ई. में २७, ८३० हुई। साथ ही अस्पृश्य विद्यार्थियों की संख्या २३४ से २१६२ तक पहुँच गई। इसमें नौ गुणा से अधिक की वृद्धि हुई। अतः शाहू महाराजा की शिक्षा नीति का परिणाम केवल कोल्हापुर रियासत तथा उनके कार्यकाल तक सीमित नहीं था। वह उनके कार्य से प्रेरणा लेकर कर्मवीर भाऊराव पाटील से डॉ. पंजाबराव देशमुख तक के अनेक शिक्षा प्रसारकों ने शिक्षा आंदोलनों द्वारा शिक्षा रूपी ज्ञानगंगा को समस्त महाराष्ट्र के कोने-कोने में पहुँचाया। उन्होंने अनेक स्कूल, हायस्कूल तथा कॉलेजेस् स्थापित किये। इस प्रगति के पीछे शाहू महाराजा के विचार तथा कृति थी इसे भूलाया नहीं जा सकता।

संक्षेप में ज्ञानरूपी शिक्षा को भारतीय बहुजन समाज तक पहुँचाने का अनमोल कार्य छत्रपति शाहू महाराजा ने किया है।

४.३.२ अस्पृश्योंद्धार में योगदान :

एक ऐसी जाति जिसे धार्मिक या सामाजिक मर्यादा के विचार से छूना या उससे संपर्क रखना वर्जित माना गया हो, उस जाति को इस जाँच से मुक्त करने और उसे ऊपर उठाने में शाहू महाराजा का बहुत बड़ा योगदान है। एक समय की बात थी, शाहू वंश परंपरा से अस्पृश्य माने लोगों की छुआछूत न भी हुई तो वह हुई है यह समझकर स्नान करते थे। पर यही शाहू आगे चलकर अस्पृश्यता और जातिभेद के प्रतिरोध में बहुत बडा संघर्ष करते हैं। उनमें यह जो परिवर्तन हुआ वह अपने-आप या एक-दो वर्षों में नहीं हुआ। इससे पहले उन्हें वेदोक्त संघर्ष में वर्णवर्चस्ववादियों की जलन और चरित्रहनन से लेकर दुनिया से मिटा देने तक के अवैध तथा अनीतिपरक मार्गों से गुजरना पड़ा। इस संघर्ष ने उनकी वर्णवचस्ववादियों के प्रतिरोध में संघर्ष करने की मानसिकता अधिक दृढ़ और तत्वनिष्ठ थी। छत्रपति को शूद्र कहनेवाले वर्णवर्चस्ववादियों ने शूद्रातिशूद्रों को

पशुतुल्य जीवन जीने के लिए बाध्य किया था, उन शूद्रों की वेदना वे समझ सकें। शाहू को तीव्रता से यह अहसास हुआ कि, ब्राह्मणशाही के चंगुल से इन शूद्रातिशूद्रों को सबसे पहले मुक्त करना है। उनकी मानसिक और सामाजिक गुलामी नष्ट करनी है। किंतु ब्राह्मणशाही द्वारा थोपी गुलामी के विरुद्ध संघर्ष के लिए शूद्रातिशूद्रों को तैयार करना आसान नहीं था। क्योंकि यह सब अज्ञानी थे। उन्हें पहले ज्ञानी और मजबूत बनाना आवश्यक था। अतः यह कार्य शिक्षा के प्रचार-प्रसार के बिना संभव नहीं था। इसलिए ''शाहू महाराजा ने अपने संस्थान की सभी पिछडी जातियों के उद्धार हेतु शिक्षा साधन के माध्यम का स्वीकार किया और तद्नुसार १९०८ ई. में भास्करराव जाधव, महादेव डोंगरे, खंडेराव बागल, श्रीपतराव शिंदे आदि अपने नजदीकी लोगों को आगे बढ़ाकर अस्पृश्यों का छात्रावास (कोल्हापुर में) प्रारंभ किया। इसके लिए अस्पृश्य मानी जाति में 'विद्या प्रसारक मंडली' नामक संस्था की स्थापना भी की।''[९७]

शाहू महाराजा ने अस्पृश्य समाज की शिक्षा हेतु कुछ महत्वपूर्ण आदेश जारी किये थे। जिससे स्पष्ट होता है कि, उस समय एक 'रात्रिशाला' की शुरुआत उन्होंने चमार, महार आदि अस्पृश्य लोगों के लिए की थी। साथ ही तिथि ४ अक्तुबर १९०७ के आदेशानुसार कोल्हापुर में चमार तथा ढोर जाति की लडकियों के लिए स्कूल को मंजूरी दी थी। इतना ही नहीं पाठशाला के खर्चे के लिए रियासत की स्त्री शिक्षा के बजट में सालाना छियान्वे रूपये की व्यवसथा की थी और छात्रावास की इमारत हेतु जगह भी उपलब्ध करवायी थी। इस संदर्भ के एक आदेश में शाहू महाराजा कहते हैं, ''समस्त पिछडी जातियों में अस्पृश्य जाति जितनी दुर्भागी अन्य जाति नहीं है। परिणामतः इन लोगों की स्थिति में सुधार लाने विद्या प्रसारक जैसा दूसरा बलवान साधन नहीं है। एक वर्ष के अनुभव के आधार पर ऐसा प्रमाण मिला कि इनमें शिक्षित होने की योग्यता है। ...२४ नवंबर १९११ को सबसे महत्वपूर्ण आदेश जारी किया गया। उसके अनुसार सभी तरह की शिक्षा समस्त अस्पृश्य वर्ग के लिए मुफ्त की गयी। साथ ही दरबार की ओर से समय-समय पर होशियार विद्यार्थियों को विशेष छात्रवृत्ति दी जाने लगी। महाराजा ने ७

अप्रैल १९१९ के एक आदेशानुसार 'अस्पृश्य लोगों की दीनावस्था' समझते हुए उनकी शिक्षा हेतु 'उत्तेजन देने' उन्हें पुस्तकें, स्लेटस, पेन्सिल्स मुफ्त देने रु. ढाई हजार मंजूर किए। उसी में महाराजा ने प्रारंभ किए 'पटवारी क्लास' के अस्पृश्य विद्यार्थियों के लिए रु. आठ प्रतिमाह विशेष छात्रवृत्तियाँ घोषित की गई।''[९८]

इसी कालखंड में अस्पृश्यता को पूर्ण रूप से नष्ट करने के लिए शाहू महाराजा ने एक के बाद एक आदेश निकाले। जिसकी प्रतिध्वनि शिक्षा क्षेत्र में सर्वप्रथम सुनाई देने लगी। उन्होंने तिथि २८ सितंबर १९१९ को एक आदेश निकाला और अस्पृश्यों की स्वतंत्र पाठशालाएँ बंद की। बंद करने का उद्देश्य था, छुआछूत नष्ट करना। महाराजा ने उस आदेश में कहां था, ''करवीर इलाके में जागीरी के अतिरिक्त अस्पृश्य लोगों के बच्चों की स्वतंत्र पाठशालाएँ होती हैं। इस दशहरे से वे सब बंद की जाए तथा अन्य लोगों के बच्चों की तरह अस्पृश्यों के बच्चों को सरकारी शालाओं में दाखिल करवा लिया जाए। सरकारी शालाओं में छुआछूत का पालन नहीं होता, इसलिए सभी जातियों तथा धर्मियों के बच्चों को एक जगह बिठाया जाय।''[९९]

शाहू महाराजा ने अस्पृश्यता निर्मूलन के लिए इस तरह के अनेक आदेश निकाले थे। साथ ही अस्पृश्य समाज के छात्रों की मुक्तहस्त से आर्थिक मदद की थी। अपने पुत्र प्रिंस शिवाजी की स्मृति में सन् १९२० ई. में अस्पृश्य लोगों को शिक्षा हेतु उत्तेजित करने हेतु दस हजार रुपयों की प्रॉमिसरी नोट तैयार कर उसके ब्याज से प्रतिमाह पाँच रु. की आठ छात्रवृत्तियाँ शुरु की थी। जिसमें तीन अस्पृश्य लड़कियों के लिए थी। शाहू का यह कार्य केवल रियासत की लडकियों के लिए न था, रियासत के बाहर भी उन्होंने अस्पृश्य लडकियों को छात्रवृत्तियाँ दी थी। ''ऐसा नहीं कि महाराजा ने केवल अपने ही रियासत के अस्पृश्यों की चिंता की। उन्होंने रियासत के बाहर नासिक, नागपुर, आदि जगहों के अस्पृश्यों के अनेक छात्रावासों को उदार मन से आर्थिक सहायता करने के उदाहरण उपलब्ध हैं।''[१००]

अस्पृश्यों को ब्राह्मणों के मतलब उच्चवर्णियों के बराबरी तक लाने हेतु शाहू महाराज ने कितने ही साहसी तथा क्रांतिकारी निर्णय लिए थे। इसका प्रमाण भास्करराव जाधव के लेख में मिलता है। वे लिखते हैं, ''महाराजा ने अस्पृश्य बच्चों को योग्य पद्धति की धार्मिक शिक्षा देने की योजना भी विचारपूर्वक की। उनहोंने इस कार्य में आर्य समाज के स्वामियों का उपयोग करवा लिया। उन्होंने अपनी पद्धति से उन बच्चों को आर्य बनवाकर उपनयन किया तथा प्रथम बार ही उन्हें वेदों की संथा दी। परिणामतः इन बच्चों के मन में हल्केपन की दीन प्रवृत्ति नष्ट होकर अन्यों के बराबरी के होने का आत्मविश्वास निर्माण हुआ। इससे उनकी उन्नति होने लगी। ये बच्चे हायस्कूल में अन्यों के साथ बराबरी का आचरण करने लगे। तथा उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार किया जाने लगा। परिणामत: हायस्कूल में स्थित अस्पृश्यता नष्ट हुई।''[१०१] इस तरह शाहू महाराजा ने अस्पृश्यों के बच्चों का उपनयन करके उन्हें वेदों की संथा दी और उन्हें ब्राह्मणों के तथाकथित श्रेष्ठ स्थान तक ले आये। ऐसा परिवर्तन करनेवाले छत्रपति शाहू महाराजा हिंदुस्थान के पहले राजा है।

शाहू महाराजा द्वारा अस्पृश्योंद्धार, जातिभेद निर्मूलन और शिक्षा प्रसार आदि क्षेत्रों में किये गये कार्य सन् १९१८ ई. से अधिक गतिमान हुए। उन्होंने विशेषतः अस्पृश्योद्धार आंदोलन में एक से बढकर एक क्रांतिकारी कदम उठाकर अस्पृश्य समाज की सदियों की सामाजिक गुलामी नष्ट करने का भरपूर प्रयास किया। जिसके पीछे उनके मन में छिपा करुणाभाव और पुत्र प्रिन्स शिवाजी की दुर्घटना वश हुई मृत्यु थी, जिसने उनके जीवन को बदलकर रख दिया था और वे अंतर्बाह्य विरागी की तरह संन्यासी जीवन बिताने लगे थे। उनके मन में अब केवल उपकार हेतु जीवन जीने की भावना बाकी रही थी। वही भावना उत्तरोत्तर आगे बढ़ती गई और उन्हें लगने लगा कि उर्वरित जीवन दलित-पतितों के उद्धार हेतु प्रयुक्त हो। इसलिए मुंबई के गवर्नर को वे एक पत्र लिखते हैं, ''विशेषतः हमारे पुत्र की मृत्यु पश्चात् हमारी एक तीव्र इच्छा उद्‌भवित हुईहै। वह है गरीब वर्ग के कल्याण की दृष्टि से तुरंत उपायों की योजना करना। हम हमारी छोटी रियासत में लगभग सभी उपायों को कार्यान्वित कर प्रयत्न कर रहे हैं। लगता है कि एक

तरह की आंतरिक भावना हमारा मार्गदर्शन कर रही है तथा गरिबों के कल्याण हेतु हमें आगे ले जा रही है। यह कार्य करते समय हम अंशतः भी जीत गए तो मानेंगे हमारा जीवन सफल हुआ।''[१०२]

महाराज ने अस्पृश्यता निवारण हेतु हाजिरी तथा बिगारी पद्धति बंद की। साथ ही महार मिलकियत समाप्त कर उन्हें गुलामी से मुक्ति दिलाई। अस्पृश्यता का कानूनन निर्मूलन किया। यही उनके अस्पृश्योंद्धार कार्य का एक महत्वपूर्ण अंग था। इसके लिए उन्होंने समय-समय पर आवश्यक घोषणापत्र निकाले थे। यह घोषणापत्र निकालकर निष्क्रिय रहनेवालों में से वे नहीं थे। वे एक कार्यशील सुधारक थे। उन्होंने घोषणापत्रों में उद्घोषित तत्वों के अनुसार अप्रत्यक्ष नहीं, तो प्रत्यक्ष आचरण किया था। इसीलिए उन्होंने अपनी निजी सेवा तथा सरकारी नौकरियों में अस्पृश्यों को समाविष्ट करने कीनीति सामने रखकर कई लोगों को वकील व्यवसाय की सनद दी। इसके पीछे उनका उद्देश्य था, ''जो (वकील) सनद मैंने महार, मातंग, चमार आदि जाति के लोगों को दी है वह देने के पीछे मेरा उद्देश्य इतनाही है कि जो कार्य अस्पृश्य वर्ग के लोगों को कानून से अथवा तानाशाही से बंद किये गये हैं वे कार्य उनके लिए फिर खुले करना और उनकी स्थिति में सुधार करते हुए उनमें यह आत्मविश्वास निर्माण करना कि हम भी अन्य लोगों के समान हैं।''[१०३] स्पष्ट है कि शाहू महाराज अस्पृश्यों संबंधी द्वेषभाव दूर करने के लिए यह कार्य कर रहे थे।

अस्पृश्यता खत्म करने के लिए शाहू महाराजा ने रियासत के लष्करी दल में दो महार और दो मांग की नियुक्ति की थी। और अन्य सरकारी सेवा में भी अस्पृश्यों की नियुक्ति के आदेश जारी किये थे। ''अस्पृश्य जाति के लोगों को पटवारी के रूप में नियुक्त करने का हुक्म दिया है। इन लोगों में से जो लोग अपनी कार्यकुशलता तथा बुद्धि से आगे आयेंगे उन्हें एखाद विभाग का मुंशी तथा मुख्य मुंशी के पद दिए जाय।''[१०४] बिल्कुल साफ है कि, राजर्षिशाहू ने अस्पृश्यता उद्धार हेतु अनेक आदेश दिए थे। किंतु फिर भी इससे वे संतुष्ट नहीं थे। उन्हें लगता था कि अस्पृश्यों में अस्पृश्यों का

एखाद नेता निर्माण हो और वही नेता आत्मनिर्भरता के तत्व का अवलंबन कर अपनी जाति का उद्धार करें। अस्पृश्य यदि दूसरी जाति के नेताओं पर निर्भर रहेंगे तो उनके कार्य कभी सफल नहीं होंगे। क्योंकि दूसरी जाति का नेता आपको कभी आत्मनिर्भर नहीं बनने देगा। वह आपको गुलामी की जंजिरों से बांध देगा। इसलिए अस्पृश्यों को वरिष्ठ वर्ग के नेता का नेतृत्व अस्वीकार कर अपने ही वर्ग के नेता का निर्माण करना चाहिए। जिस तरह जानवर अपनी जाति के अतिरिक्त अन्य किसी जाति के नेता को स्वीकार नहीं करते उसी, प्रकार अस्पृश्यों को भी दूसरी जाति के नेता का स्वीकार नहीं करना चाहिए। तभी उनमें हिरणों जैसी स्वच्छंदता आयेगी इस तरह की महत्वपूर्ण बात शाहू महाराजा ने अनेक बार की थी।

छत्रपति महाराजा अस्पृश्यों के साथ-साथ समस्त बहुजन समाज का उद्धार चाहते थे। इसलिए वे अपने जीवन के अंतिम पांच-छह वर्षों में ब्राह्मणेत्तर आंदोलन का समर्थन कर अखिल महाराष्ट्र को सामाजिक दृष्टि से हिलाकर रखते हैं। परिणाम ब्राह्मण-ब्राह्मणेत्तर विवाद तीखा रूप धारण करता है। जिस पर अंग्रेज सरकार की सूक्ष्म दृष्टि थी। उन्हें महाराजा रियासत के भीतर बहुजनों का उद्धार करें, इसे कोई आपत्ति नहीं थी। किंतु रियासत के बाहर यदि वे सामाजिक आंदोलन में सहभाग ले तो उन्हें आपत्ति थी। महाराजा को रियासत के बाहर सभा सम्मेलनों में जाने के लिए मुंबई सरकार से अनुमति लेनी पडती थी। किंतु कई बार अनुमति नहीं मिलती थी। वे नाराज हो जाते थे। उनके इस नाराजगी के जवाब को प्रबोधनकार ठाकरे अपने संस्ममरण में लिखते हैं, ''महाराष्ट्र के अस्पृश्योंसहित तमाम पिछड़े बहुजन समाज का उद्धार करना हमारा पवित्र जीवन कार्य है। इन लाखों किसानों, कामगारों तथा मजदूर बंधुओं का सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक सुधार हुए बिना सरकार राजनीतिक अधिकारों की भाषा क्यों करें? किसको अधिकार देंगे? लेनेवाले कौन हैं और अनपढ़ ब्राह्मणेतरों को उसका अर्थबोध क्या होगा तथा फायदा भी क्या होगा? सरकार हमें पदच्युत करने की अप्रत्यक्ष धमकियाँ दे रही हैं। हम जानते हैं कि इसके पीछे किसका बहकावा तथा कारवाईयाँ हैं। आप हमें पदच्युत करने के

पूर्व हम ही आत्मसंतोष से राजगद्दी का इस्तीफा देंगे। परंतु एक बार हाथ में लिया ब्राह्मणेत्तर आंदोलन जान-जाने तक यह शाहू छोडनेवाला नहीं हैं।''[१०५]

शाहू महाराजा में अस्पृश्योंद्धार कार्य संबंधी 'सच्ची आत्मीयता' थी। उन्हें यह लोग ईश्वर मानते थे। इस ईश्वर के प्रति उनके मन में कितना पूज्यभाव था, इस बारे में धनंजय कीर ने लिखा है, ''शाहू को पिछड़े तथा अस्पृश्य वर्ग के लोग ईश्वर जैसा इसलिए मानते थे क्योंकि उनके प्रति शाहू को अलौकिक प्रेम तथा निष्ठा थी। वे गौतम बुद्ध, म. फुले तथा आंबेडकर को जिस तरह वंदनीय मानते थे वैसे ही शाहू को अपने उद्धारकर्ता के रूप में।''[१०६]

कीर का यह विधान अतिशयोक्ति नहीं कहा जा सकता। क्योंकि अस्पृश्यता से मुक्ति दिलानेवाला एक भी सत्पुरुष हजारों वर्षों में निर्माण नहीं हुआ था, जो शाहू के रूप में प्राप्त हुआ। उसने इस दुर्भागी वर्ग का कलंक पूर्णतः दूर कर उन्हें मनुष्य कहलाने का श्रेय दिया। उनके इस कार्य के बारे में कृतज्ञपूर्ण उद्‌गार निकालते हुए डॉ. बाबासाहब आंबेडकर कहते हैं, ''शाहू महाराजा जैसा सखा अस्पृश्यों को पहले नहीं मिला था तथा आगे मिलेगा या नहीं, इसकी आशंका है।''[१०७]

शाहू महाराजा अस्पृश्य समाज को ऊपर उठाने हेतु और उनमें स्थित हीन भाव नष्ट करने हेतु सभी तरह के प्रयास करने में डूब गए थे। अतः फिर उन्होंने फरवरी १९२२ में अखिल भारतीय अस्पृश्य परिषद के सम्मेलन में इन्हें एक अलौकिकता का संदेश दिया, वह संदेश था, ''आपको स्वयं का विकास करना सीख लेना चाहिए। श्री. आंबेडकर का आदर्श हर समय आंखों के सामने रखिए। गुलामगिरी, अस्पृश्यता की जंजीरे धीरे-धीरे पर पूर्णतः जल्द ही टूट जाएगी। किंतु शांति और परस्पर प्रेम अथवा दृढ़ निश्चय से अपने हक प्राप्त कीजिए।''[१०८] इसमें कोई दुमत नहीं कि शाहू महाराजा द्वारा दिया गया यह संदेश आज के नये भारत निर्माण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संक्षेप में बस इतनाही कि, शाहू महाराजा द्वारा किया गया अस्पृश्योंद्धार का कार्य अद्वितीय है। क्योंकि उन्होंने हिंदुस्तान की घृणास्पद अस्पृश्यता को जड़ से उखाड़ फेंकने

का महत्वपूर्ण कार्य किया। इसके लिए उन्होंने अस्पृश्यों के लिए पटवारी स्कूल का निर्माण किया तथा अनेक लोगों को वकील, तलाठी, मुंशी, पटवारी, पुलिस, नगरनिगम अध्यक्ष जैसे विविध पदों पर नियुक्त किया था। इन कार्यों के माध्यम से उन्होंने अस्पृश्योंद्धार में अपना बहुमूल्य योगदान देने का प्रयास किया था।

४.३.३ कृषि क्षेत्र में योगदान :

कृषि विकास में बहुत बड़ा योगदान शाहू महाराजा ने दिया है। वे जानते थे कि कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ की हड्डी है। इसलिए कृषि का विकास करना आवश्यक है। तभी रियासत की प्रजा सुखी और संपन्न होगी। किंतु अकाल की वजह से प्रजा दुखी थी। उनकी यह स्थिति देखते देखी नहीं जाती थी। इस बीच महाराजा इंग्लैंड गये। उन्होंने वहां की नहरें तथापानी वितरण की योजनाएँ देखी। वहां के इंजिनीअर तथा अन्य अधिकारियों से विचार-विमर्श किया। अत: अपने राज्य लौटकर प्रजा और कृषि के लिए बांध प्रकल्प का निर्माण करने का निश्चय किया। स्टेट इंजिनीअर दाजीराव विचारे से वे कहने लगे, ''हमने राज्यारोहरण के पश्चात् पूरे राज्य की यात्रा की। तब हमारी प्रजा अकाल के कारण झुलस रही थी। उनकी यह स्थिति देखने लायक न थी। तभी हमने मन-ही-मन निश्चय किया कि, अपनी प्रजा को आवश्यकता है प्रचुर जल की। कृषि अपनी अर्थव्यवस्था की रीढ की हड्डी है। कृषि और पीने के लिए यदि परिपूर्ण जल न मिले तो प्रजा सुखी और संपन्न नहीं होगी। प्रजा सुखी तो राजा सुखी, प्रजा संपन्न तो राजा संपन्न। राजा को प्रजा से कर वसुलने का अधिकार तभी प्राप्त है, जब प्रजा कर चुकाने के लिए सक्षम होगी। दाजीराव, इसीलिए हमारी दृष्टि पानी परियोजना कहां और कैसे लागू होगी इस पर निरंतर भटकती है। उसी में से हमने बांध परियोजना के लिए इन जगहों का चयन कर रखा है।''[१०९]

शाहू महाराजा शिकार के बहुत ज्यादा शौकीन थे। पर उन्हें हर समय प्रजा की ही चिंता लगी रहती थी। उन्होंने फेजिवड के जंगलों में शिकार करते समय प्रजा हित के लिए भोगावती नदी पर बांध निर्माण करने का स्वप्न देखा था। जिसके माध्यम से वहां

के आस-पास लगभग बीस हजार एकड़ से अधिक खेती सिंचाई में आनेवाली थी। साथ ही अकाल जैसी भयंकर स्थिति को रोकने में मदद होनेवाली थी। सब किसान सुखी थे। यह देखकर महाराजा के मुखमंडल पर भी प्रसन्नता झलक रही थी। दाजीराव विचारे महाराजा से बांध सौंदर्य के बारे में चर्चा कर रहे थे। वे बता रहे थे, इस बांध का सौंदर्य ताजमहल के सौंदर्य से कहीं अधिक है। यह सुनकर महाराजा कुछ समय के लिए चुप हो गये और फिर बोले, ''यह बांध का जो जलाशय है, उसे हमारी रानीसाहिबा का नाम... और नगरी को हमारी मर्दानी राजकन्या का नाम हो, ऐसा हमें लगता है। लक्ष्मी जलाशय और राधानगरी का लक्ष्मी जलाशय... इस जलाशय से हमारी रियासत के घर-घर में लक्ष्मी निवास करेंगी...''[११०]

शाहू महाराजा जानते थे कि कृषि के लिए जल संजीवनी है। इसलिए जलाशयों का निर्माण कर कोल्हापुर को हरा-भरा करने का महत्वपूर्ण कार्य महाराजा ने किया था। फिर भी अन्य देशों की तुलना में यहां का किसान पिछड रहा था। उसका उत्पादन बहुत ही कम था। अत: इसे बढाने और किसानों की स्थिति में सुधार लाने के लिए शाहू महाराजा ने कोल्हापुर में एक कृषि संस्था स्थापित की। तथा अनेक भाषणों के माध्यम से भी कृषि विकास और प्रगति पर ध्यान देने की बात कहने लगे। ''जिन्हें देश को समृद्ध करना है, उन्हें सबसे पहले अपनी कृषि विकास पर ध्यान देना चाहिए। अन्य देशों की तुलना में अपनी कृषि का उत्पादन अनुमानत: बहुत कम है... कृषि विकास हेतु विकसित कृषि अवजारों की अत्यंत आवश्यकता है।''[१११]

कोल्हापुर रियासत गन्ने की खेती और कोल्हू के लिए सब ओर प्रसिद्ध थी। किंतु कृषि करनेवाले किसानों के हाथ कोल्हू में अटक जाते, उँगलियाँ दब जाती, हाथ लूले बन जाते, असहाय वेदनाएँ उन्हें होती। महाराजा को किसानों का यह दुख-दर्द देखा नहीं गया। उन्होंने इस पर विचार मंथन किया। क्या इसे रोका नहीं जा सकता? और अपनी रियासत के कारीगारों को आवाहन करनेवाला एक घोषणापत्र निकाला। जिसमें कहां गया था कि, ''कोल्हू यंत्र में हाथ ना अटके अगर अटके भी तो उसे हानि ना पहुँचे, इस तरह की कोई यांत्रिक तरकीब यदि १ जनवरी, १८९६ ई. के अंदर कोई खोजें, जिसकी

तरकीब सुलभ, कम खर्चे में कार्यरत होनेवाली तथा ठीक रहेगी, उसे अच्छा खासा पुरस्कार दिया जाएगा।''[११२]

छत्रपति शाहू महाराजा के आवाहन पर नये-नये प्रकार के कोल्हू यंत्र दरबार में प्रस्तुत हुए। उसमें से सर्वोत्तम कोल्हू यंत्र का चयन कर उसके समान अन्य यंत्र निर्माण किये गये और वह यंत्र हर एक तहसील में भेजकर महाराजा ने रैयत के लिएएक दूसरा घोषणापत्र प्रस्तुत किया। ''नवीन तरकीबों से तैयार कोल्हू यंत्र के नमुने सभी लोग सुलभता से देखें इसलिए सभी तहसीलों के तहसीलदारों तथा महालकरियों के पास एक-एक नमुना भेजा है। उसे सभी लोग देख सकते हैं। फिर सभी लोग अपने-अपने कोल्हू यंत्र में वैसी सुविधा बनाएँ ताकि कोई दुर्घटना न हों। अत: सभी किसान इस तरकीब को देखकर अपने-अपने कोल्हू यंत्रों में सुधार करने की व्यवस्था करें और वैसा करने के लिए तहसीलदार लोगों को समझाए।''[११३]

महाराजा ने विदेशों में प्रत्यक्ष देखा था कि कृषि शास्त्रीय पद्धति से होती है। जहां धान का उत्पादन हमसे कहीं अधिक लिया जाता है। अत: अपने किसानों की खेती में भी आधुनिक ज्ञान का प्रसार हो, इसलिए राजर्षिशाहू ने अनेक उपक्रमों को अपने हाथों में लिया और कोल्हापुर रियासत में सुधारित कृषि पद्धति के प्रचार-प्रसार हेतु 'किंग एडवर्ड ॲग्रिकल्चरल इन्स्टिट्यूट' इस संस्था की स्थापना की। साथ ही आधुनिक कृषि औजारों का एक म्युजिअम शुरु किया। जिसके माध्यम से ''किसानों को सुधारित औजारों, बीज, रासायनिक खाद तथा आधुनिक कृषि कर्म की पद्धतियाँ आदि का ज्ञान एवं प्रशिक्षण देने के लिए विशेष कृषि अधिकारियों की नियुक्तियाँ की गई। कृषक वर्ग को आधुनिक कृषि के प्रति लगाव निर्माण हो जाए इसलिए रियासत में महालक्ष्मी रथोत्सव, ज्योतिबा यात्रा जेसे प्रसंगों पर 'कृषि प्रदर्शन' आयोजित किए जाने लगे। इन प्रदर्शनों के माध्यम से खेती के आधुनिक साधन, उत्कृष्ट उत्पादन के धान के नमुने, विवरणपत्रक आदि की प्रस्तुति की जाती थी। साथ ही उत्तम पैदाइश के जानवरों का प्रदर्शन आयोजित किया जाता था। कभी-कभी इन कृषि प्रदर्शनों के साथ विशेष 'विज्ञान प्रदर्शन' भी आयोजित किया जाता था।''[११४]

कृषक वर्ग की रुची विज्ञान संबंधी प्रदर्शनों में निर्माण हो, उनकी संख्या ऐसे प्रदर्शनों में बढ़े इसलिए शाहू महाराजा पर कार्यक्रमों का आयोजन करते थे। आधुनिकता कृषि क्षेत्र में आवश्यक थी। इसलिए शाहू पारंपरिक धान, गन्ना, चावल, जवार, फल्ली, दलहन आदि के बदले में प्रयोगशीलता के तौर पर चाय, काफी, रबर, इलायची, कोको आदि नये-नये उत्पादन लेने का सोचते हैं। ''उसके लिए उन्होंने रियासत की पश्चिम भाग में अधिक पर्जन्य वाले सह्याद्री पर्वतकतारों की ढलती जमीन पर चाय, काफी, रबर के बाग तैयार किए। इनमें से अपेक्षा से अधिक चाय के बागों के प्रयोग में यशप्राप्ति हुई। कोल्हापुर रियासत में उत्कृष्ट दर्जे की चाय का उत्पादन होने लगा। शीघ्र ही व्यापारी तत्व के आधार पर चाय का उत्पादन होने लगा और वह 'पन्हाळा टी क्र. ४' के नाम से रियासत के बाहर, विशेषत: हिंदुस्थान के राजा महाराजाओं के पास भेजा जाने लगा।''[११५]

संक्षेप में शाहू महाराजा द्वारा कृषि क्षेत्र में किये जा रहे नवनवीन प्रयोग केवल कोल्हापुर रियासत के कृषकों के लिए नहीं, बल्कि समस्त भारतीय किसानों के लिए थे। किसान केवल अपनी कृषि में पारंपरिक गन्ना, चावल, जवार न बो कर चाय, काफी, रबर की आधुनिक खेती करे, ऐसा शाहू महाराजा चाहते थे। इसलिए उन्होंने कृषिप्रधान समझनेवाले देश में कृषि का उद्धार यानी कृषिकार्य करनेवाले लोगों का उद्धार अर्थात देश का उद्धार यही सूत्र सामने रखकर कोल्हापुर रियासत और देश के कृषकों के लिए विविध सुविधाओं का निर्माण किया और देश की कृषि विकास में अपना अनमोल योगदान दिया।

४.३.४ भारत स्वतंत्रता में योगदान :

कोल्हापुर रियासत के राजा छत्रपति शाहू का भारतीय स्वतंत्रता में योगदान नहीं है, ऐसा कहना गलत होगा। क्योंकि उन्होंने भारत की स्वतंत्रता में प्रत्यक्ष रूप से न सही, अप्रत्यक्ष रूप से अपना योगदान दिया है, जिसे नकारा नहीं जा सकता।

शाहू काल यानी उन्नीसवीं शती के अंत और बीसवीं शती के आरंभ में स्वतंत्रता आंदोलन अत्यंत तेज था। सब ओर आंदोलन हो रहे थे। शाहू महाराजा इन आंदोलनों के

शत्रु अथवा विरोधी थे, ऐसा बिल्कुल भी नहीं। परंतु इसमें वे शामिल नहीं थे। इसका प्रमुख कारण था कि वे अंग्रेज साम्राज्यसत्ता के अधीनस्थ राजा थे। उन्हें अंग्रेजों का खुलेआम विरोध करना संभव न था। किंतु देश की स्वतंत्रता वे अवश्य चाहते थे। इसलिए देश की स्वतंत्रता में योगदान देनेवाले क्रांतिकारियों के प्रति वे सहानुभूति और प्रेम दिखाते हैं। उन्हें अपनी ओर से हर संभव मदद करने का अडिग निश्चय करते हैं। ''अंग्रेज अपने शत्रु है... अपने देश को ही लूटने के लिए गोरे साहब आये हैं। इसलिए इन लूटेरुओं को देश के बाहर निकालना ही चाहिए। बलवंतराव तिलक और उनके जैसे स्वतंत्र सेनानियों द्वारा चलाया जा रहा यह कार्य बहुत महान है। परकीय आक्रमणों के विरुद्ध, जुलमी सत्ताधिशों के विरुद्ध छत्रपति शिवाजी महाराजा ने अपनी तलवार निकाली। पूरी जिंदगी संघर्ष किया और अंतत: अपने रैयत का, अपना स्वराज्य निर्माण किया। उन्हीं की राजगद्दी के हम उत्तराधिकारी हैं। छत्रपति को परकीय सत्ता से लडते समय स्वकीयों से लडना पडा था। आज हमें भी अपने ही लोगों से लडना पड रहा है। यह लडाई खुले आम है। किंतु अंग्रेजों के विरुद्ध हम आमने-सामने नहीं लड सकते। इसलिए इस स्वतंत्रता की लडाई को हमारी ओर से जो संभव है वह आर्थिक मदद करने का निश्चय हमने किया है।''[११६]

शाहू महाराजा ने स्वतंत्रता संग्राम में योगदान देनेवाले क्रांतिकारी नेताओं को मदद की थी, यह लोकमान्य तिलक के सहयोगी काकासाहब खाडिलकर के माध्यम से स्पष्ट होता है। खाडिलकर लोकमान्य तिलक की प्रेरणा से नेपाल में जर्मन तंत्रज्ञान की मदद से बंदुके निर्मित करना चाहते थे। इस कार्य के लिए हजारों रुपयों की आवश्यकता थी, जिसकी जिम्मेदारी स्वयं तिलक, वासूकाका जोशी और खापर्डे आदि पर थी। इस कार्य के लिए शाहू महाराजा द्वारा गुप्त मदद हुई थी इसका एक संदर्भ मिलता है। ''लोकमान्य तिलक के इस बंदुक निधि के लिए शाहू महाराजा ने गुप्त पाँच हजार रुपयों की आर्थिक मदद भेजी थी, ऐसी साक्ष कोल्हापुर के 'शिवाजी क्लब' का एक संघटक गोपालराव पळसुले ने दी है। इस साक्ष का अनुमोदन लोकमान्य के पोते जयवंतराव तिलक ने दिया

है। उन्होंने कहा है कि, यह मदद शाहू महाराजा ने मिरज के राजेसाहब द्वारा भेज दी थी।''[११७]

स्वतंत्रता क्रांति के एक महान देशभक्त, बंगाल के क्रांतिकारी नेता बाबू अरविंद घोष को भी शाहू ने मदद पहुँचायी थी। घोष को मुझफ्फरपुर बॉम्ब स्फोट के पश्चात अंग्रेजों ने पकडकर आंतकवादियों की तरह पुलिस कोठरी में बंद कर दिया था। तब उसकी बहन उसके बचाव के लिए देशवासियों से मदद मांग रही थी। यह सुनकर शाहू दुखी और व्याकुल थे। क्योंकि उनके अंतस्तल की गहराई में अंग्रेजों संबंधी द्वेषभावना थी और सच्चे देशभक्त जो अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र क्रांति के मार्गपरचल रहे थे, उनके प्रति आत्मीयता। शाहू ने अपनी इस आत्मीयता की भावना को उनके नजदीकी विश्वसनीय सहकारियों के पास व्यक्त की थी। जिसका उल्लेख वा. द. तोफखाने अपने आत्मवृत्त में शब्दबद्ध करते हैं, ''अरविंद जैसे महान क्रांतिकारक संकट में है यह समझते ही शाहूमहाराज का अंत:करण व्याकुल हो उठा और उन्होंने बडौदा के एक मित्र खासेराव साहब जाधव के बंधु कै. माधवराव के द्वारा पांच हजार रुपये उनकी सहायता हेतु उस 'सहाय्य निधि' में गुप्त रूप से भेज दिये। यह सच्चाई स्वयं महाराजा ने हमें बताई थी, इसका उल्लेख वा. दा. तोफखाने ने अपने आत्मवृत्त में किया है।''[११८]

छत्रपति शाहू महाराजा भारतीय समाज को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति दिलाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने 'शिवाजी क्लब' के दामू जोशी, दामू दुसाने और रामचंद्र इन क्रांतिकारी युवकों को क्रांतिकारी आंदोलन चलाने के लिए मदद की थी। दामू जोशी फेरिस को खत्म करने का आदेश महाराजा से मांग रहा था। क्योंकि उसने शिवाजी महाराजा को लुटेरा कहा था। किंतु महाराजा संयम बनाये हुए थे। वह इसलिए कि उन्हें प्रजा हित के लिए बहुत कुछ करना था। यदि वे कुछ गलत कदम उठाते तो उनकी स्थिति भी चिमासाहब महाराजा की तरह हो जाती और उनका समाजसुधार का कार्य अधूरा रह जाता। इसीलिए उन्होंने इन क्रांतिकारियों की मदद हेतु बापूसाहब महाराजा तथा दिवाण सबनीस और विठ्ठल कीर्तिकर के बेटे को शिवाजी क्लब में नियुक्त किया था।

यह वास्तविकता दामू जानता था, इसलिए वह महाराजा से कहता है, ''महाराज, स्वतंत्रता आंदोलन के लिए आप क्या-क्या मदद करते हो, कैसे करते हो, यह क्या हमें पता नहीं? शिवछत्रपति के वंशज आप है। उनके पराक्रम और विचारों के उत्तराधिकारी भी आप है। अत: आपके आशीर्वाद हमारे मस्तक पर रहने दीजिए।''[११९]

इस प्रकार शाहू महाराजा द्वारा क्रांतिकारकों को मदद करने के अनेक संदर्भ मिल जाते हैं। पर इस संपूर्ण विवेचन के पश्चात् भी यही प्रश्न निर्माण होता है कि, क्या सच में शाहू महाराजा क्रांतिकारकों को मदद करते थे? इसका जवाब श्रीधर खैर के माध्यम से मिल जाता है। खैर ने शाहू महाराजा द्वारा समय-समय पर मिली आर्थिक मदद का उल्लेख स्वयं के द्वारा महाराजा को लिखे पत्रों में किया है। अत: अनुसंधानकर्ताओं की जाँच-पडताल के पश्चात् शाहू द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन के लिए की गई मदद और योगदान के संदर्भ में प्रा. डॉ. मंजुश्री जयसिंगराव पवार लिखती हैं, ''एक हिंदी संस्थानिक, अंग्रेजी राजसत्ता में राज्य करने का प्रयास करते समय हिंदुस्थान की आजादी हेतु लडनेवाले क्रांतिकारकों को शाहू महाराजा गुप्त तरीकें से मदद कर अपना योगदान स्वतंत्रता आंदोलन में देते थे, ऐसा हम संदर्भ के साथ और अडिगता से कह सकते हैं।''[१२०]

संक्षेप में एक हिंदभूमि का सुपुत्र तथा स्वतंत्रता के उदात्त धैर्य से प्रेरित छत्रपति शाहू महाराजा सशस्त्र क्रांति के पुरस्कर्ताओं को आर्थिक सहाय्य करना अपना राष्ट्रीय कर्तव्य समझते थे। इसी के माध्यम से उनके अंतकरण में छिपा स्वतंत्रप्रेम, देशप्रेम एवं देशनिष्ठा उजागर होती है।

४.३.५ आरक्षण के लिए योगदान :

आरक्षण के जनक और नायक दलित-पतितों के उद्धारकर्ता राजर्षि छत्रपति शाहू महाराजा ने संपूर्ण भारत की पिछडी जाति को शिक्षा और नौकरियों में पचास प्रतिशत आरक्षण देकर उनकी स्थिति में बदलाव लाने का बहुमूल्य कार्य किया था। शूद्रातिशूद्र यानी भारत के मूल निवासी चिरकाल से पूर्णत: शक्तिहीन थे। ऐसे शक्तिहीन समाज को

सदियों बाद पहली बार शक्ति के स्त्रोतों में हिस्सेदारी दिलाने का कार्य कोल्हापुर नरेश छत्रपति शाहू महाराजा ने किया था।

शाहू महाराजा ने सन् १८९४ ई. को कोल्हापुर रियासत की बागडोर अपने हाथों में ली, उस समय एक तरफ ब्रिटिश साम्राज्यवाद तो दूसरी तरफ ब्राह्मणशाही जोर-शोर से क्रियाशील थी। बहुजन समाज वर्ण व्यवस्था की चक्की में पीस रहा था। इनमें दलितों की स्थिति जानवरों से भी बदतर थी। शाहू महाराजा ने उनकी दशा में बदलाव लाने के लिए चार स्तरों पर काम करने का मन बनाया। पहला – उनकी शिक्षा की व्यवस्था, दूसरा – उनसे सीधा संपर्क करना, तीसरा – प्रशासनीक पदों पर उन्हें नियुक्त करना एवं चौथा – उनके हित में कानून बनाकर उनकी हिफाजत करना। अछूतों की शिक्षा के लिए एक ओर जहाँ उन्होंने ढेरों पाठशालाएँ खुलवायीं, वही दूसरी ओर अपने प्रचार माध्यमों द्वारा घर-घर जाकर उनको शिक्षा का महत्व समझाया। साथ ही उन्होंने दलितों की दशा सुधारने के लिए बलुतेदारी और वतनदारी प्रथाओं का अंत किया और भूमि सुधार लागू कर महारों को भू-स्वामी बनाने का हक दिलाया।

शाहू महाराजा के राज्यारोहण के समय कोल्हापुर रियासत मराठों की आवश्यक थी, किंतु उस पर युरोपियन, पारसी और ब्राह्मण आदि त्रिवर्गों का अधिकार था। राज्यारोहण के बाद इन त्रिवर्गों की सर्वाधिकारशाही खत्म करने की ठान शाहू ने ली थी, किंतु केवल युरोपियन और पारसी लोगों की ही सर्वाधिकारशाही खत्म हुई, ब्राह्मणों की अबाधित रही। इस बीच शाहू महाराजा ने अपनी रियासत कोल्हापुर स्टेट की जनगणना करवायी इस जनगणना के अनुसार कोल्हापुर स्टेट में १,०३,३८९ अछूत लोग थे। इस रिपोर्ट में अछूतों की दयनीय दिशा और अन्य पिछडों की कैफियत दर्ज थी। इसी जनगणना रिपोर्ट के आधार पर तथा त्रिवर्गों की सर्वाधिकारशाही खत्म करने के उद्देश्य से तत्कालीन ब्राह्मणों के प्रबल विरोध के मध्य तिथि २६ जुलाई १९०२ को अपने कोल्हापुर राज्य की शिक्षा तथा सरकारी नौकरियों में दलित-पिछडों के लिए पचास प्रतिशत आरक्षण लागू करने का अटल निश्चय शाहू महाराजा ने किया था और अपने

जन्मदिन के अवसर पर एक अभूतपूर्व घोषणापत्र जारी किया था। ''महाराजा की अनुज्ञा हुई है कि इस नीति के अनुसार इस हुक्म की तिथि से जो पद रिक्त हो जाएंगे, उनमें से पचास प्रतिशत पिछडें वर्गों के उम्मीदवारों को दिए जाएंगे। आज जिन-जिन कार्यालयों में पिछडे लोगों का अनुपात पचास प्रतिशत से कम है, उन कार्यालयों में अब से रिक्त होनेवाला पद पिछडें वर्ग के व्यक्ति को दिया जाएगा। प्रत्येक विभाग के प्रमुखों को इस हुक्म के बाद रिक्त पदों की नियुक्ति का तिमाही प्रतिवेदन प्रस्तुत करना आवश्यक है।''[१२१] आधुनिक भारत में जाति के आधार पर मिला यह पहला आरक्षण था।

राज्यारोहण के समय सन् १८९४ में कोल्हापुर रियासत के सामान्य प्रशासन में कुल ७१ पदों में से ६० ब्राह्मण अधिकारी नियुक्त थे। इसी प्रकार लिपिक के ५०० पदों में से मात्र १० पदों पर गैर-ब्राह्मण थे। इस असमानता को समानता में बदलने हेतु पिछडी जाति के लिए ५० प्रतिशत आरक्षण लागू किया गया था। साथ ही समानता प्रस्थापित हो इसलिए यह आदेश भी जारी किया था कि, ''सरकारी विभागों में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ और शालीनता का बर्ताव किया जाए। किसी प्रकार की छुआछूत नहीं होनी चाहिए। जो अधिकारी इस आदेश का पालन न करने के इच्छुक हो, वे छह महिने के भीतर त्यागपत्र दे दें।''[१२२]

संक्षेप में छत्रपति शाहू महाराजा हिंदुस्थान के इतिहास के पहले राजा थे, जिन्होंने शिक्षा और नौकरियों में पिछडी जाति को पचास प्रतिशत आरक्षण दिया था तथा प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं नि:शुल्क की थी और छात्रों के लिए नि:शुल्क छात्रावास खुलवाये थे।

४.३.६ छात्रालय स्थापना में योगदान :

छत्रपति शाहू महाराजा का छात्रालयों के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान रहा है। वे जानते थे कि बहुजन समाज में शिक्षा की कमी है और इसी अशिक्षित अज्ञानता ने उन्हें अधोगति की ओर जाने के लिए मजबूर किया है। अत: उन्हें इस गुलामगिरी एवं अज्ञानता से निकालना है तो उन्हें शिक्षा देनी आवश्यक थी। किंतु संपूर्ण समाज में

ब्राह्मण समाज को छोड़कर सभी ब्राह्मणेत्तर समाज में शिक्षा के प्रति बड़ी अनास्था थी। उच्च शिक्षा का तो सवाल ही नहीं था। बावजूद इसके कुछ लोगों ने विपरित स्थिति में जूझकर उच्च शिक्षा प्राप्त की। पर उन्हें ब्राह्मण नौकरशाही ने प्रशासकीय नौकरियों से उपेक्षित रखा। तब महाराजा ने अपने राज्य की नौकरियों में उनके लिए पचास प्रतिशत आरक्षित पदों की सुविधा निर्माण की। महाराजा को यह अंदेशा था कि पिछड़े व्यक्तियों को इस तरह उच्च शिक्षा के लाभ मिल जाए तो उनकी उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उम्मीद बढ़ेगी। उनका यह अंदेशा गलत नहीं था। साथ ही ''उच्च शिक्षा के प्रति पिछड़े समाज में आस्था निर्माण करने का एक और महत्वपूर्ण उपाय था। वह था, उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखनेवाले गरीब छात्रों की रहने-खाने की सुविधा के लिए छात्रालयों का निर्माण करना।''[१२३]

कोल्हापुर रियासत में मराठा समाज बहुसंख्य था। किंतु अन्य समाज की तरह वह भी शिक्षा में पिछड़ रहा था। देहातों में रहनेवाले इस मराठा समाज में दो-चार खानदानी पाटील सांपत्तिक दृष्टि से अच्छे थे। लेकिन उनमें भी शिक्षा के प्रति उत्साह नहीं था। इसके प्रमुख कारण के रूप में मराठा माँ-बाप के मन में इस प्रश्न का निर्माण होना था कि यदि बेटे को कोल्हापुर भेजे तो उसके रहने और खाने का प्रबंध कहां से किया जाए? इसी प्रश्न को सुलझाते हुए शाहू महाराजा ने सन् १८९६ में उच्च शिक्षा हेतु आए छात्रों के लिए कोल्हापुर में राजाराम कॉलेज को जोड़कर दरबार के खर्चे से एक छात्रालय की स्थापना की। यह छात्रालय आरंभ में सभी जातिधर्म के छात्रों के लिए था। इसमें ब्राह्मण छात्रों के साथ मराठा, जैन, मुस्लिम आदि समाज के छात्र प्रवेश लेते थे। किंतु छात्रालय की पूरी प्रबंध व्यवस्था ब्राह्मणों के हाथों में थी। इस कारण ब्राह्मणेत्तर छात्रों की संख्या धीरे-धीरे कम होती गई और वह शून्य पर आ पहुँची। अत: छात्रालय पूर्णत: ब्राह्मणों का हो गया।

शाहू महाराजा को शिक्षा क्षेत्र में निर्माण हुई ब्राह्मणों की यह एकाधिकारशाही खत्म करनी थी। इसी बीच सन् १८९९ की बात है। समाचार पत्र के माध्यम से वडगांव

के चिमणाजी पाटील का लड़का पांडुरंग मॅट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण हुआ है यह महाराजा ने पढ़ा तो वे आनंदित हुए। उन्होंने तुरंत सैनिक भेजकर उस लड़के पी. सी. पाटील को 'पन्हाळा' बुलाया, उसकी प्रशंसा की और कोल्हापुर में उसके रहने और खाने की व्यवस्था के बारे में पूछताछ की। पी. सी. पाटील ने जो बताया तो यह सुनकर देहात में रहनेवाले मराठा समाज का पाटील खानदान जिसे 'गांव का राजा' समझा जाता है, उसके लड़के की यह दुरावस्था है तो अन्य पिछड़ी जातियों की अवस्था कैसी होगी? इस विचार ने उन्हें अस्वस्थ कर दिया। उन्होंने तुरंत पी. सी. पाटील को आगे की शिक्षा व्यवस्था वे स्वयं करेंगे, इस तरह का आश्वासन दिया। वे यही नहीं रुके, दूसरे ही दिन रावसाहब दाजीराव विचारे, एक्झिक्युटिव्ह इंजिनिअर और रावसाहब भास्करराव जाधव, असि. सरसुभे इन अधिकारियों को बुलाकर उनके साथ मराठा छात्रों के लिए एक छात्रालय प्रारंभ करने के संबंध में विचार-विमर्श किया। ''शिक्षा में पिछड़े देहाती लड़कों के लिए छात्रालय स्थापित करने के संदर्भ में शाहू महाराजा ने पूना के न्या. रानडे और नाम. गोखले इन दो उदारमतवादी नेताओं से विचार विमर्श किया। इतना ही नहीं तो महाराजा ने मुंबई इलाके के शिक्षा विभाग के संचालक गाईल्स इस युरोपियन अधिकारी का मत भी जान लिया। गाईल्स साहब ने महाराजा की इस बात से सहमति दर्शायी। अत: महाराजा ने चाचा दत्ताजीराव घाटगे की अध्यक्षता में कोल्हापुर के प्रतिष्ठित मराठों की सभा बुलाई और मामासाहब खानविलकर, अप्पासाहेब म्हैसालकर, भास्करराव जाधव, दाजीराव विचारे, शिवाजीराव सावंत आदि प्रमख मराठा व्यक्तियों की सहायता से १८ अप्रैल १९०१ को 'व्हिक्टोरिया मराठा बोर्डिंग' नाम का कोल्हापुर का पहला छात्रालय स्थापित किया।''[१२४]

पी. सी. पाटील इस छात्रालय के पहले विद्यार्थी रहे। आगे चलकर वे पुणे के कृषि महाविद्यालय में प्रधानाचार्य हुए। साथ ही उन्होंने अमरिका की एम. एस्सी. और मुंबई विश्वविद्यालय की डी.एस्सी. जैसी सम्मानीय उपाधियों से विभूषित होकर देश के महान कृषि विशेषज्ञ के रूप में ख्याति प्राप्त की।

छात्रालय का नाम 'व्हिक्टोरिया मराठा बोर्डिंग' इस तरह जाति विशिष्ट होने के बावजूद यहां मराठा छात्रों के अलावा बहुजन समाज के विद्यार्थियों की कमी नहीं थी। इसमें मुस्लिम, जुलाहा, कोली, माली, गवली के छात्रों को उदार आश्रय दिया जाता था। इससे यहां व्हिक्टोरिया बोर्डिंग की सर्वसमावेशकता प्रतीत होती है।

शाहू महाराजा की छात्रालय की संकल्पना उस काल में महाराष्ट्र के समाजकार्य में एक नयी अभिनव बात थी। उसका महत्व बताते हुए डॉ. पी. सी. पाटील अपनी याद में लिखते हैं, ''स्वतंत्र मराठा छात्रालय की (व्हिक्टोरिया मराठा बोर्डिंग) अधिकृत स्थापना होने से पहले मुंबई इलाके में केवल बड़े-बड़े महाविद्यालयों से संलग्न क्लब (हॉटेल्स) होते थे। लेकिन एखाद जाति अथवा धर्मपंथ द्वारा चलाया जानेवाला छात्रालय महाराष्ट्र में तो अस्तित्व में नहीं था। आज पुणे जैसे शहर में जो एक-दो छात्रालय है, वे भी उस वक्त नहीं थे। इस दृष्टि से शिक्षा लेनेवाले छात्रों के लिए छात्रालयों की विशेषत: विभिन्न जातियों द्वारा अपनी-अपनी जाति के छात्रों की रहने की जिम्मेदारी लेकर उनके लिए कम खर्चे में छात्रालय स्थापित करने की यह अभूतपूर्व संकल्पना शाहू महाराजा की थी, ऐसा कहना चाहिए।''[१२५]

छत्रपति शाहू महाराजा केवल 'व्हिक्टोरिया मराठा बोर्डिंग' की स्थापना करके संतुष्ट नहीं हुए तो उन्होंने ''इसी साल यानी १९०१ ई. में 'जैन बोर्डिंग' की स्थापना की। उसके बाद महाराजा की प्रेरणा और सहायता से लिंगायत, मुस्लिम, अस्पृश्य, सुनार, जुलाहा, गौड सारस्वत, भारतीय इसाई, चां.का. प्रभू, वैश्य, ढोर, चमार, बढईकर, नाई, सोमवंशीय, आर्यक्षत्रिय, कोष्टि ऐसे विभिन्न जाति धर्मों के बीस छात्रालय स्थापित किए। प्रत्येक छात्रालय के लिए इमारत, खुली जगह, स्थायी आय के साधन उपलब्ध करवाकर गरीब छात्रों के जीविका की अच्छी व्यवस्था की गई।''[१२६]

शाहू महाराजा किसी भी सामाजिक कार्य का निर्णय पूरे समाज स्थिति का अध्ययन करके लेते थे। छात्रालय स्थापना के संदर्भ में भी उन्होंने ऐसा ही किया था। मन में चाहा और सरकारी अधिकारी को आदेश दिया, ऐसा उन्होंने कभी नहीं किया। वे जिस

जाति के लिए छात्रालय बनवाना चाहते, उस जाति के नेताओं अथवा प्रतिष्ठित लोगों से पहले अपना संपर्क बढ़ाते, उनसे विचार-विनिमय करते और उनमें अपनी जाति की उन्नति हेतु कुछ करने की भावना निर्माण करते। तत्पश्चात् उन्हें ही अपनी जाति के छात्रों के लिए छात्रालय स्थापित करने हेतु तैयार करते। उनका नेतृत्व महाराजा ने कभी नहीं किया था। वे चाहते थे कि हर एक जाति से उसी जाति का नेता निर्माण हो, वही उनके पास छात्रालय की संकल्पना लेकर आये। जब सभी नेतागण एकत्रित होकर छात्रालय की संकल्पना लेकर आते, तब महाराजा उनके प्रयासों की प्रशंसा करते, उन्हें प्रोत्साहन देते और हर तरह से मदद करने का आश्वासन देते।

शाहू महाराजा ने समाज के हर उपेक्षित जाति से नेता आगे आने की प्रतिक्षा की, पर लंबी नहीं। क्योंकि समाज में कई उपेक्षित जातियाँ थी जिनमें शिक्षा के प्रति आस्था जरुर थी, किंतु अपना उद्धार करने की इच्छा रखनेवाला नेता उनमें नहीं था। ऐसी स्थिति में शाहू महाराजा ने ''भास्करराव जाधव, महादेव डोंगरे, श्रीपतराव शिंदे, खंडेराव बागल, गणपतराव कदम आदि कार्यकर्ताओं को सक्रिय बनाकर अछूतों में शिक्षा के प्रति जागृति करने को उद्युक्त किया। महाराजा के प्रोत्साहन से ही उपरोक्त लोगों ने अछूतों के लड़कों के लिए सन् १९०८ ई. कोल्हापुर में 'मिस क्लार्क होस्टेल' नाम का स्वतंत्र छात्रालय स्थापित किया।''[१२७]

अछूतों के प्रति दया भाव को देखकर मुंबई के गव्हर्नर सर जॉर्ज क्लार्क की सुपुत्री का नाम इस छात्रालय को दिया था। मिस ने इस छात्रालय के लिए अपने नृत्य का एक विशेष समारोह करके पाँच हजार की जमा राशी महाराजा को दी थी। उसके इस मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण शाहू महाराजा ने उसका नाम अछूतों के छात्रालय को दिया था।

राजर्षि शाहू महाराज का स्वभाव, मन, व्यवहार, संकुचित कतई नहीं था। यदि होता तो वे केवल कोल्हापुर में ही छात्रालयों का निर्माण करते। उन्होंने अपना उदार राजाश्रय कोल्हापुर के बाहर भी सर्वत्र दिया था। यही उनके छात्रालय आंदोलन की

विशालता थी। ''उन्होंने महाराष्ट्र के पुणे, अहमदनगर, नासिक, नागपुर आदि स्थानों के अनेक छात्रालयों की उदार मन तथा मुक्तहस्त से अर्थसहायता की थी। उन्होंने अंत तक जगह-जगह के सामाजिक कार्यकर्ताओं को पिछड़े समाज के लड़कों के लिए छात्रालय स्थापित करने हेतु अर्थसहायता देने का कार्य जारी रखा। महाराजा के दिमाग पर छात्रालय की असाधारण धुन सवार थी। उन्होंने उस काल में एखाद सस्ता छात्रालय लंदन के छात्रों के लिए स्थापन किया जा सकता है क्या? इसका भी विचार किया था।''[१२८] मतलब स्पष्ट है कि महाराजा का दृष्टिकोण केवल भारत में शिक्षा लेनेवाले छात्रों तक सीमित नहीं था। बल्कि भारत के बाहर विदेशों में शिक्षा लेनेवाले छात्रों के लिए छात्रालय निर्माण करने की दूरदृष्टि उनके मन में थी।

संक्षेप में छात्रालय स्थापना के अनेक महत्वपूर्ण कार्यशाहू महाराजा ने किये थे। किंतु इन आंदोलन की फलनिष्पत्ति क्या हुई? समाज को इसने क्या दिया? इस प्रश्न का उत्तर देखें तो यही स्पष्ट हो जाता है कि इस आंदोलन ने महाराष्ट्र के साथ-साथ देश के नवनिर्माण में काफी बड़ा योगदान दिया था। ''इस आंदोलन ने आधुनिक महाराष्ट्र के निर्माण में सैकड़ों कार्यकुशल व्यक्ति निर्माण किए। कृषि विशेषज्ञ डॉ. पी. सी. पाटील से लेकर पंजाब के गव्हर्नर रैंग्लर डी. सी. पावटे तक, साहित्यिक ग. ला. ठोकल से लेकर शिक्षा विशेषज्ञ जे. पी. नाईक तक, लोकनायक बाळासाहब देसाई से लेकर कम्युनिस्ट नेता कॉ. मिरजकर तक विभिन्न क्षेत्रों में ख्यात सैंकड़ों व्यक्ति कोल्हापुर में शाहू महाराजा के छात्रालय में रहकर और शिक्षित होकर आगे बढ़े। कोल्हापुर के छात्रालयों ने साधारणतया पचहत्तर वर्षों तक महाराष्ट्र की राजनीति, सामाजिक आंदोलन, अर्थनीति, शिक्षा, कला आदि क्षेत्रों में आंदोलन का नेतृत्व करनेवाले व्यक्ति निर्माण किए। इन छात्रालयों के फलस्वरूप ही महाराष्ट्र में मुंबई और पुणे के बाद कोल्हापुर विद्याभ्यास का केंद्र बनकर विकसित हुआ। ये छात्रालय मुंबई-ठाणे से लेकर बेलगांव-धारवाड तक फैले बहुजन समाज को अपने बच्चों के भाग्योदय केंद्र लगने लगे। परिणामतः महाराष्ट्र के कोने-कोने से सैंकड़ो युवक कोल्हापुर की ओर आकर्षित हुए। इन छात्रालयों का योगदान

महाराष्ट्र की उच्च शिक्षा से विभूषित ब्राह्मणेत्तरों की पहली पीढ़ी के निर्माण में मूल्यवान रहा है। इन छात्रालयों ने शाहू काल में ही नहीं तो उनके बाद भी ब्राह्मणेत्तर समाज की तीन पीढ़ियाँ संस्कारित की। आज पश्चिम महाराष्ट्र में बहुजन समाज की सर्वांगीण प्रगति का जो समर्थ चित्र दिखता है, उसकी नींव शाहू महाराजा के छात्रालयों ने रखी है। महाराजा ने बहुजन समाज को अज्ञान की खाई से उठाकर ऊपर निकालने के लिए जिन अनेक उत्तालकों का प्रयोग किया, उसमें छात्रालय आंदोलन सबसे प्रभावी था। पिछले पचहत्तर वर्षों से बहुजन समाज के हजारों लड़के इन छात्रालयों में पढ़कर आगे आए। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि अगर ये छात्रालय न होते तो वे लड़के शिक्षा से वंचित ही रहते।''[१२९]

अत:शाहू महाराजा के छात्रालय आंदोलन की प्रेरणा से उन्हें शिष्य कर्मवीर भाऊराव पाटील ने शिक्षा में पिछड़े समाज के लिए जगह-जगह छात्रालय स्थापित किए। उनहोंने 'रयत शैक्षिक संस्था' स्थापित कर महाराष्ट्र के देहातों और बस्तियों में ज्ञान की गंगा बहायी। साथ ही गरीब विद्यार्थियों के लिए जगह-जगह हायस्कूलों और कॉलेजों के साथ छात्रालय स्थापित किये। 'कमाओं और सीखों' योजना के माध्यम से छात्रों के आत्मनिर्भर जीवन जीने का मंत्र दिया और अपने गुरु के कार्य को आगे बढ़ाया।

संक्षेप में कर्मवीर भाऊराव पाटील शाहू के छात्रालय आंदोलन की यश प्राप्ति है, यह कहना गलत नहीं होगा। क्योंकि उनके शैक्षिक कार्य की धारा सीधी शाहू महाराजा के आंदोलन से जुड़ी हुई थी।

४.३.७ अकाल तथा प्लेग हेतु योगदान :

शिवाजी चतुर्थ की रानीसाहिबा आनंदीबाई ने तिथि १७ मार्च १८८४ ई. में यशवंतराव यानी छत्रपति शाहू को विधिवत गोद लेकर उसे कोल्हापुर की राजगद्दी पर बिठाया। उसके पश्चात् शाहू ने धारवाड और राजकोट में अपनी शिक्षा पूरी की। शिक्षा के बाद २ अप्रैल १८९४ को करवीर राज्य के अधिकार अपने हाथों में लिये। राज्यारोहण के पश्चात् ही अपने लोककल्याणकारी उद्देश्यों की पूर्ति की शुरुआत करते ही उन्हें दो

प्राकृतिक अपदाओं से गुजरना पड़ा। वह आपदाएँ थी – अकाल और प्लेग। अकाल के कारण सारा जनजीवन अस्त-व्यस्त था। सब ओर लोग धान न होने की वजह से छटपटाकर मर रहे थे। इस परिस्थिति में अपने प्रजाजनों, उनके जानवरों को जीवित रखना राजर्षिशाहू का प्रथम कर्तव्य था। उस कर्तव्य के प्रति वे पूर्णत: सचेत थे, इसलिए उन्होंने धूप-प्यास की परवाह किये बिना अकाल पीड़ित भागों का दौरा किया और अपनी प्रजा का हौसला बढ़ाया। साथ ही म्हैसूर राज्य से धान की आयात करवायी, गांवों-गावों में सस्ते धान की दूकानें खुलवायी तथा अनेक रोजगार के कामों की शुरुआत की। ''किसानों को भूमिकर से मुक्ति देकर उनके ढोरडांगरों के लिए सस्ते चारे की व्यवस्था की। उनकी रोजगारी के लिए रास्ते, कुएँ, पोखरों के काम शुरु किए। प्लेग को हटाने के लिए गांव-गांव उठाकर उनका पुनर्वसन करना पड़ा। उन्हें 'लोग प्रबोधन' अभियान भी चलाना पड़ा। ताकि लोग प्लेग के शास्त्रीय ज्ञान से परिचित हो जाए। महाराजा ने इन दोनों संकटों से अपनी प्रजा को मुक्ति दिलाने के लिए एडी-चोटी का पसीना एक कर दिया।''[१३०]

सन् १८९९-१९०० में पुन: एक बार भीषण अकाल पड़ा। इसमें भी पहले की तरह उपाय-योजना की गयी। इसके अलावा महाराजा ने एक स्वतंत्र रूप से अकाल निवारण खाते का निर्माण कर उस पर भास्करराव जाधव जैसे कर्तबगार अधिकारी की नियुक्ति की। साथ ही तहसीलों की जगह अकाल निवारण के कार्यालय स्थापन किये और इसके माध्यम से अकाल निवारण की उपाय-योजना का कार्य किया जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि, ''शाहू महाराजा के अथक तथा नियोजनबद्ध प्रयत्नों से अकाल को परास्त किया गया। मुंबई इलाके में भीषण अकाल से हजारों लोग तिलमिलाकर मर रहे थे तब कोल्हापुर रियासत में एक भी भूखबलि नहीं हुई। इसका प्रमुख कारण यह था कि ऐसे अकाल में जो अपंग, वृद्ध तथा बेसहारा लोगों की भूखबलि होने की संभावना थी, उनके लिए महाराजा ने अपने राज्य में जगह-जगह नौ 'निराधार आश्रमों' की स्थापना की थी। महाराजा ने लगभग ५० हजार बेसहारा लोगों को इन आश्रमों में रोटी-कपड़ा

देकर 'जीवनदान' दिया था। इससे भी बढ़कर विशेष यह कि रास्तों, पुलों, तालाबों के ठिकानों पर काम करनेवाले मजदूर माता-पिता के नन्हें बच्चों को संभालने के लिए 'पालनाघर' निर्माण किए थे। आश्चर्य की बात है कि माता-पिता के काम पर चले जाने के बाद पेड़ की छाँव में भूख से व्याकुल छोटे बच्चों का क्रंदन भी इस राजा की दृष्टि से छूटा नहीं था।''[१३१]

छत्रपति शाहू महाराजा ने अकाल और प्लेग जैसे अस्मानी संकट से लोगों को बचाने के लिए निराधार आश्रम, पालनाघर सस्ते धान की दूकानें तथा जानवरों के लिए सस्ते चारे की व्यवस्था की थी किंतु इससे वे संतुष्ट नहीं हुए। क्योंकि उन्हें इन संकटों पर स्थायी रूप से हल निकालना था। इसलिए उन्होंने कुछ उपाय-योजनाएँ करने का निश्चय किया। ''अत: उन्होंने १९०२ ई. में अपनी रियासत के लिए अनोखी 'सार्वत्रिक इरिगेशन नीति' (Mass Irrigation Policy) घोषित की। तत्सम्बधी शीघ्र ही स्वतंत्र 'इरिगेशन' विभाग निर्माण करके विशेष 'इरिगेशन ऑफिसर' की नियुक्ति की गई। प्रस्तुत विभाग के माध्यम से रियासत के प्रत्येक गाँव का इरिगेशन की दृष्टि से सूक्ष्मता से अवलोकन किया गया । नए-पुराने कुएँ, नये तालाब तथा छोटे-छोटे बांध की योजनों शीघ्र अंमल में लायी जाने लगी।। बारिश के पानी का प्रत्येक स्त्रोत रोकने का प्रयास प्रारंभ हुआ। महाराजा ने इन सब प्रयत्नों को सुशोभित होनेवाली 'मुकुटमणि' जैसी भव्य योजना प्रस्तुत की। वह योजना थी कोल्हापुर के पश्चिम बाजू की सह्याद्री घाटी में भोगावती नदी का जलप्रवाह रोकनेवाली बांध की महत्वाकांक्षी योजना। आगे चलकर यही कोल्हापुर जिले की वरदायिनी योजना सिद्ध हुई।''[१३२]

छत्रपति शाहू महाराजा इस परियोजना को अपना जीवितकार्य समझते थे। जब वे सन् १९०२ में युरोप गये तब उन्होंने वहां की देश की स्थिति और समाज की स्थिति का सूक्ष्मता के साथ निरीक्षण किया तथा वहां की प्राकृतिक साधन संपत्ति के प्रत्येक स्त्रोत के उपयोग से वे प्रभावित हुए। अत: अपने यहाँ ऐसा क्यों नहीं हो सकता? इसका अनुकरण हम क्यों नहीं कर सकते? इस तरह के प्रश्न उनके मन में उठे और वे सोच-

विचार में पड़ गये कि, हमारे यहां सह्याद्री के माथे पर सैंकड़ों इंचों की बारिश होती है और वही से उद्‌गम लेनेवाली नदियाँ प्रचंड जलसंपत्ति लेकर समुद्र में पहुँचती है। यही नदियाँ बारिश के खत्म होते ही सूख जाती है। अत: ''सह्याद्री में बरसनेवाला बारिश का पानी रुकवाकर देश की उपजाऊ जमीन को दिया गया तो क्या यह भूमि सच्चे अर्थ में 'सुजलाम् सुफलाम्' नहीं होगी? 'सौ सुनार की एक लुहार की' न्याय से अकाल पर जीत हासिल करने, क्यूँ न नदी पर बड़ा बांध निर्माण किया जाए? यदि इच्छाशक्ति हों, तो इस दुनिया में कौन-सी बात असंभव है?''[१३३]

प्रबल इच्छाशक्ति के कारण ही शाहू महाराजा ने राधानगरी बांध जैसी महत्वाकांक्षी परियोजना को हाथ में लेने का साहस दिखाया। यह एक तरह से शिवधनुष्य ही था, क्योंकि उस समय राधानगरी बांध हिंदुस्थान का सबसे बड़ा बांध प्रकल्प था। इस तरह के बांध निर्माण का कार्य हाथ में लेने के लिए राजा का मजबूत दिल और दुर्दम्य इच्छाशक्ति का होना अत्यंत आवश्यक था। यह दोनों शाहू महाराजा में थे। साथ ही लोकल्याण की भावना उनके मन में थी। उन्होंने राधानगरी बांध परियोजना को पूर्ण करना अपना महत्वपूर्ण कार्य समझा था। इसका जिक्र वे अपने मित्र को लिखें एक पत्र में करते हैं, ''यह राधानगरी बांध की परियोजना पूर्णत्व के पश्चात् ही मेरा जीवित कार्य पूरा होगा!''[१३४]

शाहू महाराजा ने राधानगरी बांध के पहले बांस बांधों का निर्माण किया था किंतु इससे उनकी महत्वाकांक्षा पूरी नहीं हुई। इसलिए उन्होंने राधानगरी बांध जैसी परियोजना को हाथ में लिया। सन् १९०९ में इसके निर्माण का कार्य शुरु हुआ और १९१८ तक इस पर चौदह लाख रुपये खर्च किये गये। बांध के चालीस फीट तक के निर्माण कार्य में से खेती के लिए हर वर्ष छ: सौं दशलक्ष घनफीट पानी उपलब्ध होने लगा। आवश्यकता के अनुसार भोगावती (पंचगंगा) नदी में पानी छोडा जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि नदी के दोनों ओर बारह माह हरी-भरी खेती खिलने लगी। यह देखकर महाराजा का जो हरित क्रांति का स्वप्न था, वह अंशत: ही क्यों न हो पूरा हुआ।

संक्षेप में राधानगरी बांध परियोजना अकाल निवारण एवं कृषि विकास के लिए बहुत बड़ी योजना सिद्ध हुई।

४.३.८ विविध कार्य के लिए आर्थिक योगदान :

शाहू महाराजा द्वारा की गयी आर्थिक मदद के अनेक उदाहरण शाहू जीवनी के माध्यम से मिल जाते हैं। उन्होंने शिक्षा, कला, समाज नीति, पत्रकारिता, उद्योग आदि क्षेत्रों में काम करनेवाले व्यक्तियों को मुक्त हस्त से अर्थसहाय्य दिया था। ब्राह्मणेत्तर समाज को उच्च शिक्षा देनेवाली दक्षिण महाराष्ट्र के राजाराम कॉलेज और राजाराम हायस्कूल इन दोनों शैक्षिक संस्थाओं को उन्होंने राजदरबार से हर साल बीस हजार रुपये का आर्थिक अनुदान दिया था। साथ ही अपने संपूर्ण कार्यकाल में अनेक प्रतिभावान छात्रों को उच्च शिक्षा हेतु आर्थिक मदद की थी। इसमें डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर और पी. सी. पाटील सभी को ज्ञात है। इसके अलावा प्रसिद्ध शिक्षाविद् प्रि. सी. आर तावडे को अमेरिका में उच्च शिक्षा हेतु तथा समाजसुधारक नेते भाई माधवराव बागल को जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट में शिक्षा के लिए मदद की थी। सन् १९१४ और सन् १९२० को एक और तीन छात्रों को शिक्षा के लिए अमरिका भेजने का प्रबंध शाहू ने किया था।

छत्रपति शाहू महाराजा ने केवल कोल्हापुर रियासत के छात्रों और संस्थाओं को मदद नहीं की, बल्कि रियासत के बाहर के छात्रों और संस्थाओं को भी नि:स्वार्थ मन से उन्होंने मदद की। ''मद्रास में उन्होंने महान ब्राह्मणेत्तर नेता डॉ. नायर की स्मृति में पाँच हजार रुपये की 'डॉ. नायर मेमोरियल स्कॉलरशीप' शुरु की थी। बाहर की संस्थाओं में डेक्कन एज्युकेशन सोसायटी, श्री शिवाजी मराठा सोसायटी, ताराबाई मराठा बोर्डिंग (पुणे), उदाजी मराठा बोर्डिंग, सोमवंशीय समाज बोर्डिंग (नासिक), चोखामेळा बोर्डिंग (नागपूर), बनारस हिंदु युनिव्हर्सिटी (काशी) आदि अनेक संस्थाओं को महाराजा ने बहुत सारा अर्थसहाय्य दिया था।''[१३५]

शाहू महाराजा ने अपने जीवन में सार्वजनिक और वैयक्तिक दोनों प्रकार से मदद की। यदि कोई संकट में है तो उसे मदद करना वे अपना प्रथम कर्तव्य समझते। इसी

कर्तव्य को निभाते हुए उन्होंने तोफखाने को मदद की थी। तोफखाने में शिक्षाप्रेमी, प्रामाणिक, स्वामिनिष्ठ, सौजन्य, स्वार्थत्यागवृत्ति आदि विविध गुणोंवाले व्यक्ति थे। किंतु उनके निरपेक्ष स्वभाव की वजह से उन पर कर्ज हुआ था। तोफखाने जैसे स्वामिनिष्ठ, निरपेक्ष व्यक्ति पर कर्ज हुआ है, यह समझते ही उन्होंने तुरंत एक आदेश जारी किया, ''रा. तोफखाने हमारे हैं तथा उन्होंने लोगों के साथ कभी धोखाधडी का व्यवहार न करने से उन्हें रु. ३०००/- भेंट निधि दें। इन्हें गोखले तथा करमरकर गुरुजी की तरह हमारी चिंता हैं। परिणामत: उन्हें कर्जे में रखना उचित नहीं है। अत: उन्हें रु. तीन हजार अदा किए जाएं।''[१३६]

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर बहिष्कृत समाज को जागृत करने और उन पर हो रहे अन्याय-अत्याचार को वाणी देने हेतु चला रहे 'मुकनायक' वृत्तपत्र को भी शाहू महाराजा ने मदद की थी। महायुद्ध काल में कच्चे इस्पात के कारण कारखाना बंद पड़ने के संकट को देखकर महाराजा ने लक्ष्मणराव किर्लोस्कर को रियासत की पुरानी तोपें देकर उस कारखाने को जीवित रखा था। साथ ही स्टेट प्लीडर मल्हार बळवंत गर्दे की मृत्यु के पश्चात उनके छ: व्यक्तियों के निराश्रित परिवार को महाराजा ने आर्थिक मदद की थी। लड़का फर्ग्युसन कॉलेज, पुणे में पढ़ रहा था और घर में दो लड़कियाँ शादी की उम्र की थी। इस परिस्थिति में परिवार की जीविका चलाना कठीन है यह देखकर राजर्षिशाहू के ध्यान में आया कि, ''वकील ने सरकार की निरपेक्ष बुद्धि से सेवा की जब तक वकील की पत्नी जीवित थी तब तक प्रतिमाह दस रुपये तथा लड़के की शिक्षा हेतु प्रतिमाह तीस रुपये पांच वर्षों तक ऐसे कुल प्रतिमाह चालीस रुपये मंजूर किए।''[१३७] उस समय एक शिक्षक का वेतन सामान्यत: दस-बारह रुपये था। इससे ध्यान में आ जाएगा कि शाहू महाराजा द्वारा की गयी चालीस रुपयें की आर्थिक मदद कितनी बड़ी थी।

संक्षेप में शिक्षा, कला, पत्रकारिता, उद्योग, मल्ल निर्माण, कृषि आदि विविध क्षेत्रों में शाहू महाराजा ने बहुत बड़ा योगदान दिया था।

४.३.९ मल्ल निर्माण में योगदान :

मल्लों के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान शाहू महाराजा का रहा है। उसी का परिणाम है कि कोल्हापुर भूमि में अनेक मल्ल निर्माण हुए। इसलिए कोल्हापुर भूमि को 'मल्लविद्या का पीहर' और छत्रपति को 'मल्लविद्या के पालनकर्ता' तथा 'मल्लों के मल्ल' नाम से संबोधित किया जाने लगा। महाराजा स्वयं एक कुशल मल्ल थे। उन पर बचपन से ही मल्लविद्या के संस्कार हुए। जब वे शिक्षा हेतु राजकोट और धारवाड़ गये तब तक उनके साथ दो मल्ल थे। महाराजा ने राज्यारोहण के पश्चात् ही कोल्हापुर में मल्लविद्या की परम्परा को पुररुज्जीवित करने के निश्चय से करवीर में पहली बार कुश्ती का मैदान आयोजित किया। साथ ही राजमहल के परिसर में 'मोतीबाग' अखाड़े की स्थापना की। महाराजा ने सन् १८९७ ई. में पुत्र जन्मोत्सव के समय कोल्हापुर में एक विशाल अखाड़े का आयोजन किया। इसमें पंजाबी मल्लों को आमंत्रित किया गया था। किंतु इन ख्यात मल्लों से कोल्हापुर के सभी मल्ल पराजित हुए। इससे महाराजा दुखी हुए। अतः उन्होंने मन ही मन निश्चय किया कि, कोल्हापुर के मल्ल एक न एक दिन पंजाबी मल्लों को आसमान जरुर दिखाएंगे और यही से उन्होंने अपने कार्य का शुभारंभ किया।

महाराजा ने मल्लविद्या को उदार राजाश्रय दिया था। नव-नवीन अखाड़ों की स्थापना की थी। पुराने अखाड़ों को अनुदान दिया था और गुणी मल्लों का चयन कर उनकी खुराक और मेहनत की व्यवस्था की थी। मल्लों की शिक्षा हेतु विशेष उस्तादों की नियुक्ति कर उन्हें पंजाबी मल्लों के मल्लविद्या तंत्र आत्मसात करवायें थे। महाराजा की प्रेरणा से पुराना राजमहल, नवीन राजमहल तथा चौपाल माल आदि जगहों पर कुश्तियों के अखाडे आयोजित होने लगे। परिणाम रियासत की प्रजा मल्लविद्या की ओर आकृष्ट होने लगी। गांवों से कई युवक मल्लविद्या की उच्चशिक्षा हेतु कोल्हापुर आने लगे। उन्हें कोल्हापुर के राजा ने अपना उदार राजाश्रय प्रदान किया।

'शाहू खासबाग मैदान' का निर्माण शाहू महाराजा ने किया था। जब सन् १९०२ में वे सातवें एडवर्ड बादशाह के राज्यारोहण समारोह के लिए इंग्लैड गये, तब उन्होंने प्राचीन काल में रोमानों द्वारा बनाया कुश्तियों का अखाडा देखा और वे उसकी भव्यता से प्रभावित हुए। तभी उन्होंने अपनी राजधानी में उसी प्रकार का अखाडा निर्माण करने का

निश्चय किया। तत्पश्चात्, महाराजा ने कोल्हापुर में १९०७ ई. को कुश्ती अखाड़े का काम शुरु किया था जो १९१२ ई. में पूरा हुआ। इसी वर्ष हिंदुस्थान के तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ मल्ल इमामबक्ष तथा गुलाम माहिद्दीन के द्वंद्व से इस अखाड़े का उद्घाटन हुआ। आगे चलकर ''यह अखाड़ा 'शाहू खासबाग मैदान' नाम से ख्यात हुआ। उस समय शाहू महाराजा द्वारा निर्मित इस अखाड़े की तुलना का समस्त हिंदुस्थान में एक भी अखाड़ा नहीं था।''[१३८] महाराजा द्वारा निर्मित इस अखाड़े के कारण समस्त देश से, विशेषत: पंजाब, दिल्ली से ख्यात मल्लों के झुंड कोल्हापुर की ओर आकृष्ट होने लगे थे। कोल्हापुर हिंदुस्थान के मल्लों के लिए 'मल्लाविद्या का विश्वविद्यालय' बन गया था।

शाहू के राजाश्रय में सैंकड़ों मल्लों की एक पीढ़ि करवीर में उत्पन्न हुई। उन्होंने हमदूचाचा, भोला पंजाबी, नवरंगसिंग, आक्रम जैसे उत्तर के ख्यात मल्लों को चितपट कर पंचगंगा का पानी पिलाया। उनकी मल्लविद्या के क्षेत्र में स्थापित एकाधिकारशाही खत्म की और महाराजा के स्वप्न को पूरा किया। तत्पश्चात् महाराजा का इन उत्तर के मल्लों के प्रति आचरण ममत्वभरा ही था। ''महाराजा ने उत्तर के मल्लों के साथ अपने मल्लों जैसा ही ममत्वभरा आचरण किया। परिणामत: कुछ समय तक गुलाम माहिद्दीन, गुप्ता सिंग, रजब पैलवान, इमामबक्ष, कल्लू गामा, गुलाम कादर, वजीर पंजाबी, फकिरा पंजाबी, उस्मान पैलवान, बिंदू पैलवान, नथ्या पैलवान जैसे ख्यात मल्लों का कोल्हापुर के अखाड़ों में वास्तव्य रहा। महाराजा ने इन सभी मल्लों की खुराक के लिए पानी-सा पैसा खर्च किया। मल्लों की व्यवस्था के लिए हर वर्ष ३० हजार रुपयों जितनी बड़ी रकम का खर्चा होता था। (उस समय एक रुपयें में १०-१२ सेर दूध मिलता था। इतनी सस्ताई थी।) विशेष, कि यह खर्च महाराजा के 'निजी' खाते से होता था।''[१३९] इससे स्पष्ट होता है कि महाराजा ने केवल कोल्हापुर से आये मल्लों को राजाश्रय नहीं दिया था तो देश के सभी क्षेत्र से आये मल्लों को अपना उदार राजाश्रय दिया था।

मल्लविद्या के लिए योगदान और प्रोत्साहन देते समय शाहू महाराजा ने कभी मल्लों की जाति-पांति, धर्म-पंथ को नहीं देखा। इसी वजह से महार-मेहतर, बेरड-बुरुड समाज से अनेक मल्ल निर्माण हुए थे। किंतु चिंता की बात यह थी कि इन अस्पृश्य

समाज के मल्लों से छुआछूत की भावना के कारण उत्तर के मल्ल इनसे द्वंद्व करने से इन्कार करते। इस कारण इन मल्लों को प्रतिद्वंद्वी मिलना मुश्किल था। अत: महाराजा ने अस्पृश्य मल्लों की जाति कुश्ती शौकिन तथा उनके प्रतिद्वंद्वी मल्लों के समझ में न आये इस लिए एक तरकीब निकाली इस तरकीब के बारें में सामाजिक नेता गंगाराम कांबळे बताते हैं, ''मेहतर, महार, चमार इन नामों में अस्पृश्यता चिपकी है। अत: उसे भी उखाड़ने के लिए महाराजा ने इन जातियों के पैलवानों को नये नाम दिये थे। ये लोक कुश्ती के मैदान में कुश्ती खेलने हेतु लांग बांधकर तैयार हो जाए इसलिए आवाज दी जाती। तब महार पैलवान को पुकारते समय 'जाट' पैलवान तैयार रहे ऐसा जोर से पुकारा जाता था। चमारों को 'सरदार' और मेहतरों को 'पंडित' इस तरह के नाम दिये थे। इसके कारण अन्य जातियों के पैलवानों को हम महार, चमार अथवा मेहतर जातियों के पैलवानों के साथ कुश्ती कर रहे हैं, इस तरह की कल्पना भी उनके मन में नहीं आती थी। नहीं तो उनकी जाति की वजह से उन्हें प्रतिद्वंद्वी मिलना कठीन हो जाता।''[१४०]

शाहू महाराजा ने अस्पृश्यों को ऊपर उठाने के लिए कई प्रयास किये। बुरुड, राजपूत, कुंची कोरवी इन पिछड़े समाज के लोगों को नौकरियाँ दी। अपना सहयोग उन्हें दिया। शिकार के लिए जाते समय तथा शहर-गांव घुमते समय हर वक्त उन्हें अपने साथ लिया। इसी बीच एक बलवान लडके पर उनकी दृष्टि पड़ी। ''कौरवी जाति का हट्टा-कट्टा, तगडा नौजवान लडका रामू, महाराजा की दृष्टि में पडते ही वे उसे अपने राजवाडे के 'लाल अखाड़े' में लेकर आये और पैलवान की खुराक उसे शुरु कर एक नामांकित पैलवान बनाया। आगे चलकर रामू का 'कुश्तीराम' पैलवान के रूप में सब ओर नामलौकिक हुआ। उसके साथ-साथ कोरवी जाति को भी सामाजिक प्रतिष्ठा मिली।''[१४१]

शाहू महाराजा ने मल्लों से पुत्रवत प्रेम किया। इसका उदाहरण देवाप्पा के माध्यम से मिलता है। देवाप्पा कोल्हापुर का एक बलशाली मल्ल था। इससे महाराजा को 'रुस्तुम-ए-हिंद' यह सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने की उम्मीद थी। किंतु यह हैजे की बिमारी से पीड़ित हुआ। महाराजा उसकी यह दशा देखकर भावूक हुए। उन्होंने इसे बचाने के उद्देश्य से डॉक्टर से कहा, ''हमारे देवाप्पा को बचाओं। हम आपको उसके भार जितना सोना देते

हैं।''[१४२] इससे महाराजा के अंत:करण में मल्लों के प्रति कितना प्रेम था यह उजागर होता है।

महाराजा ने अपने समय में मल्लों के गुणों की भरपूर प्रशंसा की थी। उन्होंने कुश्ती के द्वंद्व में जीते मल्ल को अपना मूल्यवान साफा देकर सम्मानित तो किया ही, साथ-ही-साथ पराजित होनेवाले मल्ल को भी सम्मानित किया। ''तत्कालीन मल्लश्रेष्ठ इमामबक्ष तथा हसनबक्ष को प्रथम क्रमांक की कुश्ती लडने अखाडे में उतरने का आवाहन किया। इन दोनों मल्ल श्रेष्ठों ने महाराजा के शब्द का सम्मान रखते हुए अखाडे में छलांग लगायी और अपने रोमांचित करनेवाले द्वंद्व से रसिकों के मन पर कब्जा किया। इमामबक्ष ने द्वंद्व में जीत हासिल की। सर्वत्र जल्लोष हुआ। महाराजा ने अपना मूल्यवान साफा उसके माथे पर रख के उसका सम्मान किया। यद्यपि हसनबक्ष के पराजित होने पर भी महाराजा ने उसकी कुश्ती के असाधारण कौशल के लिए उसे भी शाब्बासी दी। इतना ही नहीं तो उसके माथे पर भी उसी तरह का मूल्यवान साफा बांधकर गौरव किया।''[१४३]

शाहू महाराजा ने मल्लों को अपनी ओर से हर संभव मदद की। इसी का फल था कि उनके राजाश्रय में अनेक उन्नत मल्लों की एक पीढ़ि उदित हुई। उन्होंने मल्लों को केवल राजाश्रय और आर्थिक मदद नहीं की, बल्कि उन्हें प्रोत्साहित भी किया। उनके भविष्य को उज्ज्वल बनाया। ''उन्होंने अनेक मल्लश्रेष्ठों को चांदी की गदों, सोने के कडे तथा मेडल्स प्रदान किए। कुछ मल्लों को हाथी पर सवार कर जुलूस निकाला। कुछ मल्लों को दरबारी सेवा में समाविष्ट किया। कुछ मल्लों को घरबार तथा खेतीमाल इनाम स्वरूप दिए। कुछ को पेन्शन प्रारंभ की। उनके लिए विशेष निधि का निर्माण किया गया। वृद्धावस्था में विशेष निधि से मल्लों को औषधोपचार तथा आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था की गई।''[१४४]

संक्षेप में, राजर्षिशाहू छत्रपति महाराजा के राजाश्रय में अनेक उच्च दर्जे के मल्ल निर्माण हुए थे। कल्लू गामा (उत्तर का कीर्तिमान मल्लवीर, मोतीबाग तालीम), जगज्जेता महमद गामा (आंतर्राष्ट्रीय कीर्ति का मल्ल, लाल अखाडा-नया राजवाडा), इमाम बक्ष

(जगज्जेता गामा का भाई, लाल अखाडा – नया राजवाडा), गुलाम मोहिद्दीन (पंजाबी मल्ल), गुस्तासिंग, रजब पैलवान, गुलाम कादर, वजीर पंजाबी, फकिरा पंजाबी आदि अनेक ख्यात मल्ल महाराजा के कारण तैयार हुए थे। इन्हें स्वयं महाराजा ने तालीम दी थी। उन्हें कुश्ती के दांवपेंच सीखाए तथा उनसे कुश्ती खेली थी। अत: शाहू महाराजा का यह कार्य अद्वितीय सिद्ध होता है, जो सामाजिक दृष्टि से दूरगामी परिणाम करनेवाला है।

४.३.१० उद्योग क्षेत्र में योगदान :

शाहू महाराजा का योगदान उद्योग क्षेत्र में भी रहा है। वे जानते थे कि देश की प्रगति और प्रतिष्ठा उस देश में होनेवाले व्यापार-उद्योग पर निर्भर होती है। इसलिए शाहू जब सन् १९०२ में यूरोप गये, तब उन्होंने इंग्लैंड, पॅरिस, व्हेनिस, लॉरेन्स, रोम तथा तुरीन आदि शहरों की यात्रा की। वहां के उद्योग तथा बांध प्रकल्प देखें और इस प्रगत विकास को देखकर दंग रह गये। तत्पश्चात् उन्होंने स्वदेश लौटकर अपने संस्थान में किन-किन क्षेत्रों में भौतिक प्रगति की जा सकती है, इसकी योजना बनायी और सबसे पहले गरीब, कृषि करनेवाले तथा मजदूरों के लिए खादी का उत्पाद कोल्हापुर में प्रारंभ किया। ''भारत जैसे देश में कपास का खादी वस्त्र ही सही है। यह सन् १९०६ में ही छत्रपति शाहू ने जान लिया और अपने संस्थान में कपडा मिल प्रकल्प सहकार तत्व पर प्रारंभ किया।''[१४५] अत: यह मिल प्रकल्प किसी लक्षाधीश के हाथों न सौंपकर उद्योग विकास के द्वारा स्वयं ही महानतम यश संपादन करने की प्रतिज्ञा ली। सबसे पहले उद्योग-धंधों एवं व्यापार को बढ़ावा देने के लिए कारीगर वर्ग को साथ लिया। उन्हें प्रोत्साहित किया और उद्योग प्रारंभ करने के लिए हर तरह की मदद करने का आश्वासन दिया। ''आर्थिक संपन्नता उद्योग पर आश्रित है। इसलिए लोगों को एक होकर सहकार मिल, सहकारी संस्थाएँ एवं सहकार बाजारपेठ की व्यवस्था निर्माण करनी चाहिए। कोल्हापुर संस्थान इसके लिए हर तरह की मदद करने हेतु तत्पर है।''[१४६]

महाराजा ने केवल प्रोत्साहन और आश्वासन नहीं दिया बल्कि आचरण भी किया। उन्होंने उद्योगशाला के निर्माण हेतु तीस हजार रुपयों से अधिक कीमतवाली प्रशस्त जगह

दी ताकि उद्योग विकास हो सके। उन्हें हमेशा लगता कि हम विशेषत: व्यापार-उद्योग में पीछे न रहें। अपने लोग व्यापार-उद्योग करें और अपने साथ-साथ देश को भी उन्नत करें। खामगांव में आयोजित 'अखिल भारतीय मराठा शिक्षा परिषद' के अधिवेशन में अपने अध्यक्षीय भाषण में अपने मराठा जाति बंधुओं को उपदेश करते हुए वे कहते हैं, ''यह स्थिति हमारे लिए संतोषजनक नहीं है कि व्यापार-धंदे तथा अन्य उच्चस्तरीय व्यवसायों से हम जुड़ जाए। सम्प्रति हम व्यापार-उद्योग से जुड़े ही नहीं हैं। बीसवीं सदी में राष्ट्र की उन्नति व्यापार तथा तत्सम्बन्धी आंदोलन पर निर्भर है। वस्तुत: पाश्चात्य देशों का 'व्यापार' धर्म ही बना है। हम समझते हैं, कि यहाँ धर्म 'बुद्धियुक्त स्वहित' है। यदि हमने व्यापार करने का साहस नहीं किया, तो हमारे सभी आंदोलन निस्तेज तथा निरर्थक होंगे। हमारा व्यापार सम्बन्धी आंदोलन पर पूर्ण विश्वास है और इसलिए हमने हमारे दोनों लड़कों तथा रिश्तेदारों को भी व्यापार में डाला है। हमें कहने में संतोष होता है कि उन्होंने वह धंधा बड़े आनंद से स्वीकार किया है। इतना ही नहीं तो वे उसमें अच्छी रीति से प्रगति कर रहें हैं।''[१४७]

शाहू महाराजा के कार्यकाल के प्रारंभ में कोल्हापुर रियासत की व्यापार स्थिति संतोषजनक नहीं थी। रियासत में प्रमुख बजारपेठ न होने से यहां निर्मित गुड राजापुर के बाजार में जाता था और वही से मुंबई तथा अन्य जगहों पर भेजा जाता था। इस कारण 'राजापुरी गुड' के नाम से यह गुड सब तरफ ख्यात हुआ। यानि गुड कोल्हापुर का और नाम राजापुर का इस तरह की स्थिति निर्माण हुई। शाहू महाराजा ने इस परिस्थिति में बदलाव लाने हेतु व्यापार को कोल्हापुर में ही स्थापित करने का निश्चय किया। इसके लिए उन्होंने ''रेल्वे स्टेशन के नजदीक, राज्यारोहण के दूसरे वर्ष में 'शाहूपुरी' नामक नवीन बाजारपेठ के निर्मिति कार्य को हाथ में लिया। कोल्हापुर, कागल, निपाणी के व्यापारियों को विशेष सुविधाएँ दी गई और उन्हें माल गोदाम में डालने के लिए प्रोत्साहित किया गया। यह नवीन बाजारपेठ केवल ५/७ वर्षों में बहुत उभरती गयी। व्यापारियों की बस्ती बढ़ी। अर्थ व्यवहार में वृद्धि हुई। रियासत के कृषि माल को रियासत में ही बाजारपेठ मिली।''[१४८] सन् १९०२ तक एक समृद्ध बाजारपेठ के रूप में यह सामने आयी। लाखों

रुपयों का कारोबार इसमें होने लगा। कोल्हापुर की यह बाजारपेठ आज भी पूरे देश में गुड़ की सबसे बड़ी बाजारपेठ है।

महाराजा ने सन् १९१७ ई. में एक नयी बाजारपेठ स्थापित कर उसे अपने जनक पिता जयसिंगराव घाटगे की स्मृति में 'जयसिंगपुर बजारपेठ' नाम दिया तथा उद्योग धंधों की वृद्धि के लिए अन्य स्थानों पर भी विशेष प्रयत्न किये। रायबाग नामक गांव के लिंगायत तथा मुस्लिम बुनकारों को तीन हजार रुपये बगैर ब्याज पांच वर्षों के लिए दिये। इतना ही नहीं, चालीस परिवारों को घर के लिए खुली जगह तथा व्यवसाय करने हेतु हर व्यक्ति को डेढ़ सौ रुपये महाराजा ने दिये। शाहू महाराजा द्वारा की गई उदार अर्थसहायता ने इन बुनकारों के उद्योग को अत्यंत कम अवधि में ऊंचाई पर पहुँचा दिया।

कोल्हापुर रियासत में नये उद्योग प्रारंभ करने की दृष्टि से महाराजा ने औद्योगिक सर्वेक्षण करवाया और स्वयं अनेक नये उद्योग शुरु किये तथा लोगों को भी प्रोत्साहन देकर कुछ उद्योग प्रारंभ करने के लिए कहा। इसी कारण कोल्हापुर में १९०५ तक खुशबूदार औषधी तेल उद्योग, मधुमक्षिका पालन उद्योग, काष्ठार्क उद्योग और कॉटन कपडा उद्योग जैसे उद्योग प्रारंभ हुए। इसमें खुशबूदार औषधी तेल उद्योग और काष्ठार्क तेल उद्योग को मुंबई के विशेषज्ञों द्वारा प्रशंसा मिली। परिणाम स्वरूप करवीर रियासत को चांदी का पदक प्रदान किया गया।

शाहू महाराजा ने विविध उद्योगों के लिए प्रशिक्षित मजदूर तैयार हो इसलिए 'राजाराम इंडस्ट्रियल स्कूल' की स्थापना की थी। इसी का परिणाम था कि रियासत में छोटे-बड़े व्यापारी और उद्योजक तैयार हुए। ''शिरोळ, इचलकरंजी, गडहिंग्लज आदिस्थानों में अनेक 'जिनिंग फैक्टरी' स्थापित हुई। सन् १९१२-१३ ई. के दरमियान रियासत की पहली ऑईल मिल, पहली सॉ मिल, पहली फाउँड्री फैक्टरी, पहली इलेक्ट्रिक कंपनी, पहली मोटर ट्रान्सपोर्ट कंपनी जैसे अनेक उद्योग शुरु हुए।''[१४९]

संक्षेप में, महाराजा के महत्वपूर्ण योगदान के कारण आज महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले ने विविध उद्योग व्यवसायों के माध्यम से हरितक्रांति एवं श्वेतक्रांति करने में अग्रक्रम

हासिल किया है। जिले के सभी किसानों को कृषि के लिए अर्थसहायता और साधन सामग्री की पूर्तता 'सरकारी जलसिंचन संस्था' करती है। कृषकों से दूध संकलन करने के लिए 'सहकारी दूध संस्था' तथा ऋण देने के लिए 'ग्रामीण क्रेडिड पूर्ति संस्था' निर्माण की गई है। अत: कोल्हापुर जिले में हुई इस नेत्रदीपक प्रगति के पीछे छत्रपति शाहू का बहुत बड़ा योगदान था जिसे आज भी भुलाया नहीं जा सकता। उन्हीं की दूरदृष्टि के कारण आज भारत देश उद्योग क्षेत्र में बहुत बड़ी प्रगति कर रहा है।

४.३.११ अन्य क्षेत्रों में योगदान :

शाहू महाराजा ने संगीत कला, चित्रकला, नाट्यकला तथा सिनेमा जैसी कलाओं के क्षेत्रों में योगदान देने से इन क्षेत्रों में उस समय में सुवर्ण युग का निर्माण हुआ।राजर्षिशाहू संगीतकला के भोक्ता थे। उन्हें यह कला विरासत में मिली थी। उन्होंने कला को बढ़ाने के लिए 'देवल क्लब' नामक संस्था की स्थापना की। सन् १८९२ में इस संस्था को जमीन देकर तथा इमारत निर्माण के लिए प्रचुर मात्रा में सहायता कर इस संस्था के लिए अपना योगदान दिया। आगे यह संस्था शाहू के आश्रय और प्रेरणा से अखिल भारतीय स्तर पर लोकप्रिय हुई। प्रसिद्ध संगीतज्ञ कुलकर्णी शाहूकालीन 'संगीत तथा नाट्य कला' पर बात करते हुए कहते हैं, ''आज देश में विविध संगीत घरानों के गायक-गायिका ख्यातकीर्त हुए हैं। करवीर नगरी में ही उनकी वंश परंपरा संवर्धित हुई है और राजर्षिशाहू महाराजा उनके मूल प्रणेता थे। आगे चलकर जब कोल्हापुर में महाराजा की कृपा से समृद्ध (विकसित) 'देवल क्लब' ख्यात हुआ, तब देश के प्रत्येक गायक-गायिका को लगता था, कि 'देवल क्लब' में अपना गायन हों। जो कलाकार 'देवल क्लब' में अपनी गायन-वादन की कला प्रस्तुत कर सका, वह देश के कीर्तिवलय में पहुंच गए।''[१५०] करवीर रियासत को देवल क्लब ने संगीत क्षेत्र में अखिल भारतीय स्तर पर पहुंचाने का एक महत्वपूर्ण कार्य किया। आगे यहां शाहू महाराजा ने गानमहर्षि अल्लादिया खाँ को लाकर महाराष्ट्र और कोल्हापुर के रसिकों को जयपुर घराने की गायकी दिखाई। कोल्हापुर अब संगीत क्षेत्र का विश्वविद्यालय बन गया था। इस विश्वविद्यालय में

अनेक प्रसिद्ध संगीतकार निर्माण हो रहे थे। केसरबाई उन्हीं संगीतकारों में से एक थी। इन्हें महाराजा ने अल्लादिया खाँ का गुरुत्व प्रदान करवाया। खाँ ने केसरबाई को संपूर्ण संगीत की शिक्षा प्रदान की। तत्पश्चात् यह अखिल भारतीय ख्याति की गायिका के रूप में प्रसिद्ध हुई। उन्हें सूरश्री, पद्मभूषण जैसे महत्वपूर्ण सम्मानों से विभूषित किया गया। केसरबाईको इस मुकाम पर पहुंचाने का पूरा श्रेय अल्लादिया खाँ और राजर्षि शाहू को है। ''गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी 'विश्वभारती' द्वारा 'सूरश्री' पुरस्कार देकर उनका गौरव किया। स्वतंत्र भारत ने उन्हें 'पद्भूषण' सम्मान से विभूषित किया। जिस तरह यह सम्मान उनकी स्वर्गीय गायकी का था, वैसा वह अल्लादिया खाँ और शाहू महाराजा के कलाक्षेत्र के महान कार्य का भी था।''[१५१]

शाहू महाराजा ने अल्लादिया खाँ के अलावा रजबअल्ली खाँ, हैदरबक्ष खाँ, अब्दुल करीब खाँ, मुगलेखाँ, हैदर खाँ, भूर्जी खाँ, नथ्थन खाँ और अंजनीबाई मालपेकर जैसे अनेक महान गायक-गायिकाओं को राजाश्रम दिया था। इन महान संगीतकारों ने शाहू महाराजा की प्रेरणा से शास्त्रीय संगीत में महान कार्य करते हुए कोल्हापुर के नाम को हिंदुस्थान में अमर किया।

संगीतकला के साथ-साथ महाराजा ने नाट्यकला को भी राजाश्रय दिया। उन्हें संगीतकला के समान नाट्यकला में रुचि थी। इसलिए उन्होंने राजाराम कॉलेज में नाट्यलेखन प्रतियोगिता आयोजित की। इस प्रतियोगिता में उन्हें वासुदेवशास्त्री खरे और गोविंद बल्लाळ देवल जैसे प्रतिभा संपन्न नाटककार प्राप्त हुए। अब राजर्षिशाहू के कार्य की ख्याति बाहर तक पहुंच गई और 'डोंगरे संगीत नाटक मंडली', 'किर्लोस्कर नाटक मंडली' जैसी बाहर की नाटक कंपनियाँ कोल्हापुर आकर अपनी कलों प्रदर्शित करने लगी। इन कंपनी के लोगों की संपूर्ण व्यवस्था मतलब मुँह धोने के साबुन से लेकर रोज के राशन तथा नाटकों के पर्दे तक महाराजा ने स्वयं कोल्हापुर दरबार से करवायी।

शाहू महाराजा को नाट्यकला से प्रेम तो था ही पर उससे जादा प्रेम उन्हें नाट्यकलाकारों से था। इसीलिए उन्होंने अपने पंसदीदा कलाकार केशवराव भोसले का

नाटक देखने के लिए कोल्हापुर रियासत में पच्चीस हजार प्रेक्षकों की क्षमतावाला खुला नाट्यगृह खासबाग मैदान में तैयार करवाया। नाट्यगृह निर्माण के पीछे उनका उद्देश्य यही था कि, केशवराव का प्रसिद्ध नाटक 'मृच्छकटिक' उनकी तमाम प्रजा देख सकें। केशवराव ने भी कोल्हापुर के इस राजा के प्रेम की खातीर अनेक नाट्यप्रयोग कोल्हापुर में किए। जिससे पूरी रियासत उनके गायन और नाट्यकला से मंत्रमुग्ध हो गई। महाराजा ने केशवराव के नाटक और गायन से प्रसन्न होकर बहुत सारा मानधन उन्हें दिया। वे एक दिलदार स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्होंने कोल्हापुर रियासत से मिले इस धन को धार्मिक कार्यों एवं 'देवल क्लब' जैसी संस्थाओं की सहायता में खर्च किया किंतु दुर्भाग्य की बात यह थी कि, ऐसे ख्यातकीर्त, गुणवान कलाकार की केवल बत्तीस वर्षों की आयु में ही मृत्यु हो गई। जिससे मराठी रंगभूमि के संगीतसूर्य का अस्त हुआ। इस दुःखद घटना की खबर से पहाड जैसे शाहू महाराजा अपनी आँखों से आँसूओं को नहीं रोक पायें। संगीतसूर्य केशवराव भोसले को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए वरेरकर मामा ने कहां है, ''पाँचवे बरस की उम्र में रंगभूमि पर आया और केवल बत्तीस बरसों की उम्र में रंगभूमि छोड़ के स्वर्गवासी हुआ। पूरी जिंदगी नाटक में बीती, परिणामत: शिक्षा बिल्कुल ही नहीं। परंतु, उनकी दृष्टि कितनी विशाल थी। उन्होंने मराठी रंगभूमि को उजाला दिया। नये नाटककार निर्माण किए। नये अभिनेता निर्माण किए। वे नये तंत्रज्ञों को, नवीन शिल्पज्ञों को प्रकाश में ले आए और उन्होंने मराठी रंगभूमि का स्वरूप सम्पूर्णत: बदल डाला। बड़े-बड़े गायक भी जिसके गान केसामने डर जों, ऐसा यह गायक उतना ही अभिनयकुशल था। भाऊराव कोल्हटकर के पश्चात् केशवराव जैसा अभिनेता नहीं हुआ। क्या आज ध्वस्त रंगभूमि को उजाला देने ईश्वर पुन: केशवराव को महाराष्ट्र में भेजेगा?''[१५२]

शाहू महाराजा सन् १९०२ में रोम गये। वहां उन्होंने एक विशाल नाट्यगृह को देखा। अत: मन ही मन निश्चय किया कि, इस तरह का नाट्यगृह अपनी रियासत में होना चाहिए। उन्होंने अपने इस स्वप्न को पूरा करने के लिए नाट्यगृह का निर्माण कार्य शुरु

किया। यह कार्य केवल तीन वर्षों में सन् १९१३ ई. में पूरा हुआ। रोमन नाट्यगृह के समान भव्य तथा वैभवशाली नाट्यगृह महाराजा के कारण कोल्हापुर रियासत में तैयार हुआ। इस नाट्यगृह का उद्घाटन सन् १९१५ में ''युवराज राजाराम महाराजा के हाथों तथा केशवराव भोसले के 'ललितकलादर्श' कंपनी के 'सौभद्र' नाटक एवं किर्लोस्कर कंपनी के 'मानापमान' नाटकों के प्रयोगों से हुआ। अब महाराष्ट्र की नाटक कंपनियों और कलाकारों को उनकी कला प्रदर्शित करने अपने अधिकार का एक मंच उपलब्ध हुआ। उस समय सारे हिंदुस्थान में पॅलेस थिएटर जैसा भव्य तथा राजाशाही थिएटर कहीं भी नहीं था।''[१५३] आगे इस थिएटर का नामकरण 'केशवराव भोसले नाट्यगृह' किया तथा उसके सामने केशवराव का स्मारक बनाया गया।

भारतीय सिनेमा जगत की शुरुआत सन् १९१२ में दादासाहब तोरणे के 'पुंडलिक' नामक सिनेमा के प्रदर्शन से शाहूकाल में हुई। तद् नंतर अगले ही वर्ष 'राजा हरिश्चंद्र' यह दादासाहब फालके का इतिहासख्यात सिनेमा प्रदर्शित हुआ। यद्यपि आज फालके भारतीय सिनेमा जगत् के जनक हैं। उन्होंने गोदावरी नदी किनारे सिनेमा कला की गंगोत्री को सम्मान दिलाया था किंतु इस कला हा सही रूप में विकास पंचगंगा तट की कोल्हापुर नगरी में हुआ है। इसी कारण यह करवीर नगरी आज भारतीय सिनेमा जगत का मायका बनी है।

कोल्हापुर माटी के मेधावी कलाकार कलामहर्षि बाबुराव पेंटर ने संपूर्ण स्वदेशी बनावट से पहला कैमरा तैयार किया। साथ ही करवीर में 'महाराष्ट्र फिल्म कंपनी' की स्थापना की। इस सिनेमागृह का उद्घाटन स्वयं छत्रपति शाहू महाराजा ने अपने कर कमलों से किया। साथ ही उनकी कंपनी को मंगलवार कस्बे में विशेष जगह दान स्वरूप देकर सिनेमा सृष्टि के लिए अपना योगदान दिया। आगे इस कंपनी ने वही पर अपनी दुनिया बसायी।

शाहू महाराजा के कार्यकाल में बाबुराव पेंटर जैसे असामान्य प्रतिभा के कलाकार का निर्माण होना शाहू और उनकी करवीर नगरी के लिए गौरव की बात थी। बाबुराव के

'सैरंध्री' सिनेमा के यश ने उन्हें और कोल्हापुर को हिंदुस्थान के कोने-कोने में पहुँचाने से शाहू महाराजा प्रसन्न थे। उन्होंने बाबुराव को आमंत्रित कर उनका विशेष सत्कार किया था। आगे बाबुराव के दिशा निर्देश से अनेक कलाकार निर्माण हुए उन्होंने मराठी सिनेमा जगत् में कोल्हापुर की ख्याति को राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाया।

शाहू महाराजा के कार्यकाल में कोल्हापुर ने चित्रकला जैसे ललितकला के क्षेत्र में भी विशेष कार्य किया। इस क्षेत्र के कला तपस्वी आबालाल रहमान थे। इन्हें अपनी असामान्य प्रतिभा के कारण 'व्हाइसरॉयज मेडल' मिला था। वे कोल्हापुर के 'कोटितीर्थ' प्रकृति सौंदर्य संपन्न जंगल परिसर में रहते थे। उनकी ख्याति को सुनते ही राजर्षिशाहू ने उन्हें आमंत्रित कर उनका गौरव किया। साथ ही उन्हें दरबार लाकर 'दरबार-चित्रकार' का पद प्रदान किया। तत्पश्चात' आबालाल ने राजघराने के अनेक स्त्री-पुरुषों तथा पशु पक्षियों के चित्र निकाले। ''महाराजा कभी-कभी 'शिकार' जाते समय आबालाल को साथ लेते थे फिर आबालाल घोडों, शिकार के साथ-साथ विविध पुशपक्षियों के चित्र निकालने में लीन हो जाते थे। उन्होंने राजघराने के स्त्री-पुरुषों के तथा बड़े विदेशी मेहमानों के भी चित्र (पोर्टेट) निकाले थे। उसी तरह पौराणिक और ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित चित्र बनाए थे। उनके चित्रों की संख्या १५-२० हजार से अधिक हैं।''[१५४] स्पष्ट है कि शाहू के राजाश्रय में आबालाल की कलंदर वृत्ति और उसकी महान योग्यता सामने आयी है। आज भी उनके प्रकृति चित्रों का ताजापन तथा रंगों की गहराई सुरक्षित है। उन्होंने निकाले हुए चित्र इक्कीसवीं सदी में भी निस्तेज नहीं हुए हैं। जो आज भी रसिकों को जडवत् बनाने की क्षमता या ताकत रखते हैं।

इसी समय कोल्हापुर में आनंदराव पेंटर और बाबुराव पेंटर यह दो कलाकार हुए। आनंदराव अत्यंत बुद्धिमान, कल्पक और जिद्दी स्वभाव के थे। इन्होंने अपनी तूलिका (ब्रश) की जबरदस्त ताकद से केशवराव भोसले के 'ललितकलादर्श', गोविंदराव टेंबे की 'शिवराज नाटक मंडली' और बालगंधर्व की 'गंधर्वनाटक मंडली' के वैभवशाली पर्दे तैयार किए। किंतु दुर्भाग्य से आनंदराव की असामायिक मृत्यु ने कोल्हापुर कलाक्षेत्र की

बहुत बड़ी हानि की। तत्पपश्चात बाबुराव ने चित्रकला क्षेत्र में अपनी प्रतिभा से अपनी शैली का निर्माण किया। इस शैली के प्रभाव से कोल्हापुर में आगे बाबा गरजबर, गणपतराव वडणगेकर, चंद्रकांत मांडरे, बाळ गजबर जैसे ख्यात कलाकारों का उदय हुआ। इसी काल में कोल्हापुर ने विनायक मसोजी नामक राष्ट्रीय स्तर पर अपनी कला को ले जानेवाला और एक प्रतिभावान कलाकार निर्माण किया। ''साक्षात शाहू महाराजा का प्रोत्साहन और अर्थसहायता जिन्हें मिली, ऐसे तीन ख्यातकीर्त कलाकार कोल्हापुर में हो गए। वे थे बाबा गजबर, दत्तोबा दळवी और माधवराव बागल। आगे चलकर दत्तोबा दळवी ने कोल्हापुर में 'दळवीज आर्ट इन्स्टिच्युट' नामक चित्रकला की शिक्षा देनेवाली संस्था की स्थापना की।''[१५५]

संक्षेप में, शाहू महाराजा ने संगीतकला, नाट्यकला, चित्रकला तथा सिनेमा जैसे कलाओं के विकास और समृद्धि हेतु अपना योगदान दिया। जिससे कोल्हापुर रियासत की कीर्ति 'कलापुर' के रूप में चहु ओर फैल गई। यह महाराष्ट्र के सांस्कृतिक जीवन की एक अनमोल घटना है। अत: यह कहना गलत न होगा कि, इस निर्मिति प्रक्रिया के प्रेरणास्थान छत्रपति शाहू महाराजा जैसा मर्मज्ञ तथा ज्ञानी ही था जिन्होंने इन कलाओं के क्षेत्रों में सुवर्णयुग का निर्माण करने में अपनी मूल्यवान भूमिका निभाई।

छत्रपति शाहू महाराजा के संपूर्ण अध्ययन के बाद यही निष्कर्ष निकलता है कि, उनके जैसा सामाजिक कार्य भारतीय समाज के लिए आज तक किसी अन्य व्यक्ति द्वारा नहीं हुआ है। तत्कालीन समय में जब वे विविध क्षेत्रों में योगदान दे रहे थे, तब उनके कार्यों को देखकर विरोधी भी भयभीत थे तथा उन्हें जान से मारने की धमकियां दे रहे थे। किंतु उनकी इस धमकियों से वे पीछे नहीं हटे, उन्होंने उनका डटकर सामना किया औरउन्हें जवाब दिया कि 'वे राजगद्दी छोड़ देंगे, मगर सामाजिक प्रतिबद्धता के कार्यों से कतई पीछे नहीं हटेंगे।' उनकी यही निडरता उन्हें अद्वीय बनाती है।

शाहू महाराजा ने अनेक क्षेत्रों में अपना योगदान दिया है। तत्कालीन समय में ब्राह्मणेत्तर समाज शिक्षा की तरफ आकृष्ट हो इसलिए उन्होंने अनिवार्य शिक्षा, मुफ्त

छात्रावास, छात्रवृत्तियाँ, फी माफी जैसी अनेक योजनों शुरु की। अस्पृश्योंद्धार कार्य को अत्यंत निरपेक्ष बुद्धि से चलाया। कृषि विकास हेतु बांध परियोजना तथा सुधारित कृषि पद्धति का प्रचार-प्रसार करनेवाली कृषि संस्था स्थापित की। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रत्यक्ष न सही अप्रत्यक्ष अपना योगदान दिया। अस्पृश्य जातियों के लिए सरकारी नौकरियों में पचास प्रतिशत आरक्षण प्रणाली की शुरुआत की। अकाल निवारण हेतु रस्ते धान की दूकानें, रोजगार निर्मिति और राधानगरी बांध परियोजना जैसे कार्य हाथों में लिए। मल्लों के निर्माण में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। कपडा मिल उद्योग, खुशबुदार औषधी तेल उद्योग, काष्ठार्क उद्योग, मधुमक्षिका पालन उद्योग और बाजारपेठ का निर्माण किया तथा संगीतकला, चित्रकला, नाट्यकला, सिनेमा आदि क्षेत्रों के विकास में भी राजर्षिशाहू ने सहयोग किया। अत: शाहू महाराजा के इस प्रजाहित के विशाल कार्यों को देखकर अनेक लोग उनके प्रति ऋण व्यक्त करते हैं। ऋण इसलिए नहीं कि, वे एक संस्थानिक राजा है, बल्कि इसलिए कि 'शाहू महाराजा मराठा नहीं, ब्राह्मणेत्तर नहीं, तो वे नवयुग के सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरुष हैं, वे महाराष्ट्र और हिंदुस्थान के विकास की एक बहुत बड़ी स्वाभाविक तरंग हैं।' उनके अमूल्य योगदान को भुलाया नहीं जा सकता।

४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का भारतीय समाज को योगदान :

किसी भी व्यक्ति का जन्म उसके बस की बात नहीं है। उसके पैदा होते ही जाति, वंश और धर्म उससे जुड़ जाते हैं। परंतु कर्म ही उसके जीवन को बनाते हैं और बिगाड़ते भी है। संसार के महापुरुषों के चरित्रों का अध्ययन करते समय यह बात हमारे ध्यान में अवश्य आती है कि कोई भी व्यक्ति जन्म से महान नहीं होता। यह महानता उसे अपने जीवन में त्याग और परिश्रम के आधारपर प्राप्त करनी होती है। यही महानता को प्राप्त करनेवाले शख्स का नाम है – डॉ. बाबासाहब आंबेडकर। सवर्णों की यातनाओं और भयावह कुंठाग्रस्त परिवेश से जूझते हुए, झिड़कियाँ खाते, अपमान का घूँट पीकर, कठोर परिश्रम कर, प्रतिबद्धता, दृढ़ निश्चय एवं प्रतिभा के बलबूते पर भारत के संवैधानिक,

राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक तथा वैचारिक अंगों को सक्षम बनाने का कार्य अगर किसी ने किया है तो वह नाम डॉ. बाबासाहब आंबेडकर का है।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने न केवल अछूत कहे जानेवाले, दलित पीड़ित, शोषित समाज को सक्षम बनाने का कार्य किया अपितु उन्होंने भारत तथा भारतीय समाज के लिए भी अतुल्य योगदान दिया है। समाज के लगभग हर क्षेत्र में बाबासाहब ने किसी-न-किसी प्रकार अपना योगदान देने का प्रयास किया है। अपने सामने प्रस्तुत कठिन परिस्थितियों का, संकटों का सामना भी डटकर किया है। उनके विचार हमें आज भी प्रासंगिक लगते हैं। इतना ही नहीं, आज भी हमें उनके हर क्षेत्र में किये गए कार्य प्रेरित करते हैं और साथ ही हमें दिशा देने का कार्य करते हैं। केवल नौकरी करने में डॉ. बाबासाहब आंबेडकर की रुचि नहीं थी। जिस विषमता और अपमान की आग में वे झुलस चुके थे उसके प्रति उनके मन में चिढ थी। दलितों को उनका मानवीय हक दिला देना उनके जीवन का लक्ष्य था। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के समय जाति-व्यवस्था का इतना अधिक प्रभाव लोगों पर था कि वे आंतरजातिय तो छोड़ों अपजाति-विवाह को भी मान्यता नहीं देते थे। मराठी के लोकप्रिय नाटककार, पत्रकार और लेखक प्र. के. अत्रे ने इन दिनों आंतर्जातीय विवाह किया था। प्र. के. अत्रे देशस्थ ब्राह्मण थे और उनकी पत्नी गोदुताई वैश्य थी। परंपरावादियों ने इस विवाह का विरोध किया। परंतु आंबेडकर ने अत्रे का अभिनंदन किया। जाति-व्यवस्था को तोड़ने के लिए आंतर्जातीय विवाह ही एकमात्र उपाय है ऐसी उनकी धारणा थी। उनके यह विचार हमारे लिए आज भी प्रासंगिक और मार्गदर्शक साबित होते हैं।

डॉ. आंबेडकर ने केवल अस्पृश्य या अछूत समाज के लिए ही कार्य नहीं किया। वरन् उन्होंने स्त्रियों के लिए भी कार्य किया। उनका योगदान न केवल भारतीय संविधान केा आकार देने में रहा बल्कि उन्होंने आजाद भारत में सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित करने की वह राह भी प्रशस्त की जिसके दम पर आज देश को दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में विश्व में सम्मान की निगाह से देखा जाता है। बाबासाहब के भारतीय

समाज को दिए योगदान का विस्तृत लेखा-जोखा हम निम्न प्रकार से एक-एक बिंदुओं के आधार पर देख सकते हैं।

४.४.१ अस्पृश्य तथा अछूत समाज के लिए योगदान :

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब अछूत तथा अस्पृश्यों के प्रति किसी भी प्रकार की आत्मीयता किसी के मन में नहीं थी। सड़कों की सफाई, सिर पर मैला ढोना, मृत जानवरों की चमड़ी निकालना आदि तरह के काम कर इस समाज को अपना अस्तित्व बनाये रखना पड़ता था। इस कारण बाबासाहब आंबेडकर ने पहला काम अस्पृश्यता को हटाने के लिए तथा इस वर्ग के लोगों में जागृति पैदा करने का किया। बाबासाहब भले ही अपनी शिक्षा के लिए विदेश क्यों ना गये हो? लेकिन उनका ध्यान देश में चल रही हर घटना और परिस्थिति पर होता था। सन् १९१९ में 'मुंबई टाईम्स' में लिखे पत्र में वे कहते हैं, ''स्वराज्य यह जैसे ब्राह्मणों का जन्मसिद्ध हक है, वैसे वह दलितों का भी है, इसे कोई भी स्वीकार करेगा। इसलिए सवर्ण-दलितों को शिक्षा देकर उनके मन की उँचाई और सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ायें। वास्तव में ऐसा करना उनका कर्तव्य है। जब तक यह नहीं होगा तब तक भारत में स्वराज्य की स्थापना सहज संभव नहीं है।''[१५६] उनका मानना था कि, जब तक अछूत कहा जानेवाला समाज शिक्षा, न्याय, प्रगति, समता के प्रवाह में नहीं आयेगा तब तक कोई भी और किसी भी तरह का आंदोलन सफल नहीं होगा। इसलिए समाज के हरेक वर्ग को जो दबा हुआ है, जो हाशिए से बाहर है उसे मानवीय अधिकार और हक देने होंगे तभी तो एक नये समाज और देश का निर्माण होगा।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर की प्रेरणा और मार्गदर्शन से अनेक दशकों से दासता में जकड़ा हुआ अस्पृश्य समाज अपने मानवी अधिकार प्रस्थापित करने के लिए स्पृश्य हिंदूओं के सामने लड़ने के लिए खड़ा हो गया। आज तक बेकार हुए अत:करण वाला और झुकी हई गर्दनवाला वह अस्पृश्य समाज जब स्वाभिमान, स्वावलंबन के निर्धारण से गर्दन ऐंठते हुए, अन्याय का सामना कर अनेक युगों में पहली बार संघर्ष के लिए

ललकारते हुए खड़ा हो गया, गुस्से की भाषा बोलने लगा कि अन्यायी धर्म के बंधन हमें स्वीकार नहीं। ''अस्पृश्यों के इस धर्मयुद्ध का अभूतपूर्व परिणाम हुआ। उनका स्वाभिमान जागृत हुआ। उन्हें यह मालूम पड़ा कि आत्मोद्धार के लिए संघर्ष करने से मनुष्य को मनुष्यता प्राप्त होती है। उन्हें यह भी स्वीकार होने लगा कि उन्नति और मानवता के अधिकारों के लिए दलितों का संघर्ष करना अटल है, आवश्यक है। यह समझ में आते ही उनके स्वाभिमान का खडग् अधिक तेज होने लगा।''[१५७] इस तरह अस्पृश्य समाज की जनता ने अपने नेता डॉ. आंबेडकर का उपदेश पूरी तरह से आचरण में लाना आरंभ किया। इसके लिए उन्हें तरह-तरह की कठिनाईयों का सामना भी करना पड़ा लेकिन वह पीछे नहीं हटे।

डॉ. आंबेडकर का यह दौर ऐसा था कि यहाँ कोई अछूत व्यक्ति सार्वजनिक जगह का पानी तक स्पर्श नहीं कर सकता था। ऐसी अवस्था में महाड़ का 'चवदार' तालाब सार्वजनिक घोषित किया गया और अस्पृश्यों के लिए खुला कर दिया। बावजूद इसके वहाँ के सनातनी लोग अस्पृश्यों को पानी भरने नहीं दे रहे थे। तब डॉ. आंबेडकर ने कहा, ''अब जनजागृति का पर्व समाप्त हो चुका है। अब प्रत्यक्ष कृति की जरुरत है।''[१५८] ऐसी स्थिति में डॉ. आंबेडकर ने सत्याग्रह का निर्णय लिया। महाराष्ट्र के हर एक जिले से पाँच हजार से अधिक दलित महाड़ पहुँचे। १५ वर्ष से लेकर ७५ वर्ष के सभी स्त्री-पुरुष इसमें शामिल हुए। इस विशाल जनसभा को संबोधित करते हुए डॉ. बाबासाहब ने कहा, ''अस्पृश्यों के सुधार के लिए दो बातों की अत्यधिक आवश्यकता है। उनके मन में पुराने मूर्खतापूर्ण और अंधश्रद्धा के जो विचार बैठे हुए है उन्हें साफ करना जरुरी है। आचार, विचार और उच्चार इनमें जब तक शुद्धता नहीं आयेगी तब तक अस्पृश्य समाज में जागृति और प्रगति के बीज बोए नहीं जा सकते। आज की स्थिति में उनके पथरीले मन से नये पौधे निकल नहीं सकते।''[१५९] डॉ. आंबेडकर केवल इतना कहकर नहीं रुके तो वे आगे कहते हैं कि दलितों को गांव में इज्जत नहीं है। उनकी अस्मिता खत्म हो चुकी है। किसी के फेंके हुए बासी टुकड़ों पर जीना उन्हें अब त्याग देना होगा। इसके लिए उन्हें

मृत जानवरों के मांस को खाने की वृत्ति छोड़ देनी होगी। आज प्रतिज्ञा करो कि हम उँच-नीच भेद को भूलेंगे। स्वावलंबी बनेंगे, खेती करेंगे, अस्मिता नहीं छोडेंगे। इस जनसभा के पश्चात डॉ. आंबेडकर ने 'चवदार तालाब' के पानी को स्पर्श किया। इसके साथ उन्होंने सत्याग्रह पूरा किया। यह घटना ऐतिहासक सिद्ध हुई। आज भी बाबासाहब के यह विचार और उनके सत्याग्रह को एक सामाजिक समता के पक्ष से देखा जाता है।

महाड़ का चवदार तालाब, मनुस्मृति का दहन, कालाराम मंदिर सत्याग्रह यह आंबेडकर के आरंभिक लड़ाई की तीन महत्वपूर्ण सीढ़ियाँ हैं। मनुस्मृति जलाकर परंपरागत अमानुषिक धर्म-नियमों के प्रतीकवत् ध्वंस से ही वे संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि स्वाधीन भारत का संविधान और 'हिंदू कोड' बनाकर एक नई उँचाई को प्राप्त किया। २० दिसंबर १९४६ को अखिल दलित विद्यार्थी फेडरेशन के विद्यार्थियों को भेजे गये उपदेश भरे संदेश में बाबासाहब ने लिखा है, ''दलित नवजवानों को जब कभी अवसर मिले तो वे यह सिद्ध करने का प्रयास करें कि वे बुद्धिमानी और योग्यता में किसी भी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा रत्ती भर भी कम नहीं है। साथ ही उन्हें सदा ही निजी स्वार्थ की ओर ध्यान देकर अपने समाज को स्वतंत्र, बलशाली और प्रतिष्ठित बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।''[१६०] बाबासाहब की हमेशा यह चाह रही कि दलित युवक पढ़े-लिखें और आगे बढ़े। साथ ही अपने समाज को भी आगे ले जाने में मदद करें। उन्होंने अस्पृश्य समाज में आंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन दिया। उन्होंने खुद भी अंतर्जातीय विवाह किया। वे सारे भारतीय अस्पृश्यों की भलाई के बारे में विचार करते थे। श्रम मंत्री बनते ही उन्होंने इस अवसर का लाभ उठाकर सारे भारतीय मजदूरों के कल्याण के लिए कानून बनाये। इतना ही नहीं, उन्होंने अस्पृश्यों की शिक्षा के लिए भारत सरकार से छात्रवृत्तियाँ दिलवाई और उच्च शिक्षा के लिए उन विद्यार्थियों को विदेश भिजवाने की व्यवस्था की।

अनुसूचित जाति और जमातियों के बारे में जब संसद के सामने रिपोर्ट रखी गयी और उस पर चर्चा शुरु हुई तो डॉ. आंबेडकर ने अस्पृश्यों के सुधार के लिए कुछ सुझाव पेश किये। यद्यपि वे जब चाहे तब संविधान में संशोधन करवाने के विरोधी थे, फिर भी

उन्होंने यह सुझाया कि संविधान में उचित संशोधन कर सारी बंजर भूमि को भारत सरकार अपने अधिकार में ले ले और अस्पृश्यों में बांट दें। इन सारे योगदान को देखकर ही तो उन्हें अस्पृश्यों तथा दलितों के उद्धारक के रूप में जानते हैं। सही मायने में उसी तबके के होने के कारण उन्हें सारी विपदाओं का पता था। अपने जीवन में डॉ. आंबेडकर ने हर क्षण पीड़ित, शोषित, दलित, अछूत, अस्पृश्य समाज के लिए सोचा और कार्य किया। इसलिए इस संदर्भ में उनका योगदान बहुत ही मौलिक माना जाता है।

४.४.२ सामाजिक योगदान :

समाज के पददलित अस्पृश्यों को मानवता का हक मिले इसलिए और अस्पृश्य समाज शिक्षा, धन, राजनीतिक सत्ता और उच्च संस्कृति से समृद्ध हो और देश में चल रहे स्पृश्यास्पृश्य का झगड़ा खत्म होकर, हमारा भारत देश सर्वशक्तिमान हो इसलिए उन्होंने अपने जीवन में भरसक प्रयास किये। आंबेडकर को वकील के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त होते ही गरीब जनता अपनी शिकायते लेकर बाबासाहब के पास पहुँचती थी। उन पददलितों का दु:ख और दैन्य देखकर उनका हृदय तिलमिला उठता था। वे उनका काम बहुधा मुफ्त में ही करते थे। प्रचंड व्यक्तित्व से युक्त उनके ज्ञानर्षि को देखकर वे दीन-दु:खी लोक हक्का-बक्का रह जाते थे। आंबेडकर ने निचली जातियों के लिए आरक्षण की मांग भी इसलिए की थी कि उन्हें आगे बढ़ने का मौका मिले, हर विकास का द्वार उनके लिए भी खुल सके। आरक्षण देने का उद्देश्य मात्र उनके सपनों को उड़ान भरने के लिए पंख देना था ना कि बैसाखी। आंबेडकर ने यह भी कहा था कि जिस दिन समाज में दलितों को समान अधिकार मिल जाएगा, उस दिन आरक्षण व्यवस्था को खत्म कर देना होगा। क्योंकि वे कभी नहीं चाहते थे कि उनके समाज के या आरक्षण प्राप्त समाज के लोग आरक्षण की बैसाखी लेकर हमेशा चले।

डॉ. आंबेडकर दूरदृष्टि और दूरगामी सोच के महापुरुष थे। उसी हिसाब से वे अपनी कार्य और योजनों बनाते थे। एक बार १२ फरवरी १९३८ को ग्रेट इंडियन पेनिनशुला रेलवे के दलित वर्गीय मजदूरों की सभा हुई। इस परिषद में २० हजार मजदूर

उपस्थित थे। इस आयोजन के अध्यक्ष के रूप में मजदूरों को संबोधित करते हुए डॉ. आंबेडकर ने उन नेताओं के पाखंड का पर्दाफाश किया जिनके कारण मजदूर आंदोलन अधोगति को पहुँचा था। उन्होंने अपने भाषण में कहा, ''इस मजदूर समाज को पूंजीपतियों और ब्राह्मणवादियों दोनों शत्रुओं का सामना करना पड़ता है। अपने विकास के लिए आप लोगों को स्वतंत्र संगठन का निर्माण करना होगा।''[१६१] सामाजिक विकास में पूंजीपति और ब्राह्मणवादी ही हमारे सच्चे शत्रु हैं ऐसा उन्होंने प्रतिपादित किया। इतना ही नहीं, कर्जदारों को साहूकारों के पाश से ऋण मुक्त कराने के लिए डॉ. आंबेडकर ने इन्हीं दिनों 'ए बिल टू रेग्युलेट मनीलँडर्स ॲक्ट' नामक बिल विधानसभा में पेश किया था। इस बिल में साहूकारों के लिए अनुज्ञा पद्धति तथा कर्ज देने के व्यवहार पर अनेक प्रकार के बंधन सुझाए गए थे।

महाराष्ट्र में कुछ लोग जान बूझकर यह प्रचार कर रहे थे कि डॉ. आंबेडकर महार समाज के नेता हैं और वे महारों के हित के ही काम करते हैं। लेकिन उन्होंने अपने कार्यों, विचारों और व्यवहार में किसी प्रकार का भेदभाव कभी नहीं किया। उन्होंने मानवाधिकार जैसे–दलितों एवं दलित आदिवासियों के मंदिर प्रवेश, पानी पीने, छुआछूत, जातिपांति, ऊँच-नीच जैसी सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के लिए कार्य किया। अछूतों का उत्थान करने के लिए 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' उनकी तरफ से पहला संगठित प्रयास था। वे उन्हें बेहतर जीवन के लिए शिक्षित करना चाहते थे। इसके बाद कई सार्वजनिक आंदोलन और जुलुस उनके नेतृत्व के तहत शुरु किए गए थे, जो समाज में समानता लाने के लिए थे। उस समय डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने विधानसभा में हर क्षेत्र, हर तबका तथा समाज के हर वंचित समुदाय के प्रश्न उपस्थित किए और उन्हें न्याय देने के अथक प्रयास किए। चाहे वह किसी भी धर्म या किसी से भी संबंधित क्यों ना हों?

डॉ. आंबेडकर जाति-व्यवस्था और वर्ण-व्यवस्था के शुरु से ही खिलाफ रहे हैं। उसे मिटाने का वे सुझाव देते हैं। वे कहते हैं कि, ''हिंदुओं का साहित्य कुछ विशिष्ट

वंशों के गान से भरा हआ है। एक जाति की श्रेष्ठता बतलाते हुए दूसरी जाति की निंदा की गयी है। एक की महानता बतलाते हुए दूसरे की निकृष्टता यहाँ स्पष्ट की जाती है। इस कारण एक जाति दूसरी जाति को अपना शत्रु मानती है। इस तरह हिंदू समाज केवल जाति की क्रमबद्धता ही नहीं है अनेक शत्रु गुटों का वह समूह है।''[१६२] इसलिए जाति व्यवस्था से जो दोष हिंदू समाज में आये उसका विस्तृत विश्लेषण करते हुए वे सवाल उठाते हैं कि क्या इन दोषों से हम मुक्त हो सकते हैं? जाति-व्यवस्था नष्ट कैसे की जा सकती है? जाति-व्यवस्था नष्ट करने के लिए सर्वप्रथम उपजातियाँ नष्ट करनी चाहिए, ऐसी एक धारणा है। यह धारणा कैसे गलत है इसे वे स्पष्ट करते है। उपजातियाँ नष्ट करने के इस प्रयत्न में जातियाँ अधिक मजबूत और शक्तिशाली बनेगी इसे वे सप्रमाण सिद्ध भी करते हैं। कुछ लोग अंतर्जातीय सहभोजन की कल्पना सुझाते हैं। आंबेडकर के अनुसार यह उपाय भी अधूरा है। बाबासाहब का कहना है कि, 'अंतर्जातीय विवाह' यही एकमात्र उपाय जाति-व्यवस्था तोड़ने के लिए है, ऐसी उनकी धारणा थी। इस तरह अन्य सामाजिक सुधार और उनका योगदान भारतीय समाज में रहा है, जिसे हम किसी भी तरह अनदेखा नहीं कर सकते।

४.४.३ राजनीतिक योगदान :

दलितों के मुक्तिदाता और भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. आंबेडकर का निधन हुए ६२ वर्ष हो चुके हैं, परंतु फिर भी भारतीय समाज पर तथा राजनीति पर उनके विचारों का गहरा प्रभाव हमें देखने को मिलता है। उनका कहना था कि, राजनीतिक सत्ता सामाजिक प्रगति की चाबी है और दलित संगठित होकर सत्ता पर कब्जा करके अपनी मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। राजनीतिक सत्ता का उपयोग समाज के विकास के लिए किया जाना चाहिए। इससे आगे वे कहते हैं कि, राजनीतिक सत्ता का मुख्य लक्ष्य सामाजिक और आर्थिक सुधार करना होना चाहिए। हमें पिछड़ों और आदिवासियों के साथ गठजोड़ करना चाहिए क्योंकि उनकी स्थिति भी दलितों जैसी ही है। उनमें फिलहाल राजनीतिक चेतना की कमी है। बाबासाहब के यह राजनीतिक विचार हमारे लिए आज भी दिशा देने

का काम करते हैं। आंबेडकर के संदर्भ में कहा जाता है कि, ''वे जनतांत्रिक व्यवस्था के जबरदस्त समर्थक थे। परंतु जनतंत्र बहुसंख्यकों के मतों पर निर्णय प्रक्रिया में परंपरा से नकारे गये समाज को स्थान मिलना असंभव ही है। इसलिए दलितों को उनके अधिकार प्राप्त करा देने के लिए, इस निर्णय-प्रक्रिया में हिस्सेदारी मांगना जरुरी ही नहीं अपरिहार्य भी था। १९१७ से वे लगातार इस निर्णय-प्रक्रिया में हिस्सेदारी मांग रहे थे। वे इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके थे कि जब तक दलितों को राजनीति में साझेदारी प्राप्त नहीं होगी तब तक उन्हें उनके अधिकार प्राप्त नहीं हो सकते। इसलिए वे राजनीतिक मोर्चे पर दलितों के हक की लड़ाई लड़ रहे थे।''[१६३] आंबेडकर के यह शब्द आज न केवल दलितों के लिए अपितु हर वर्ग के समुदाय के लिए मार्गदर्शन का कार्य करते हैं।

डॉ. आंबेडकर का चिंतन-मनन, लेखन-पठन अखंड चलता रहता था। वे जब राज्यसभा के सदस्य थे तब उन्होंने २६ अगस्त १९५४ को विदेश नीति पर आक्षेप लिया। उन्होंने रूस की अधिकार भरी नीति की कड़ी आलोचना की। साम्यवाद फैलने वाले दावानल के समान है। वह सब कुछ भस्म कर देता है। प्रजातंत्र भी भस्म हो जायेगा। यह कहकर उन्होंने युरोप के देशों और अमरिका की विदेश नीति का मार्मिक विवेचन किया। अंत में उन्होंने सभी सदस्यों को चीन के बारे में संकेत देते हुए कहा कि भारत पर आक्रमण तो होगा ही और यह आक्रमण वही लोग करेंगे जिन्हें हमला करने की आदत पड़ गयी है। माओ-त्से-तुंग ने बौद्धों के साथ जो व्यवहार किया उस पर आक्षेप लेते हुए डॉ. आंबेडकर ने कहा, ''राजनीति में पंचशील का कोई उपयोग नहीं है, कम से कम कम्युनिस्ट देशों में तो है ही नहीं। सारा एशिया आज युद्ध का मैदान बना हुआ है। इसलिए भारत को तुरंत प्रजातंत्रवादी देशों से हाथ मिला लेना बहुत जरुरी है।''[१६४] उनके यह विचार अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में वर्तमान समय में भी कितने प्रासंगिक लगते है, यह हमें बेशक समझ में आता है। केवल अंतर्गत राजनीति तक वे सीमित नहीं रहे अपितु उन्होंने अपने राजनीतिक विचारों को चहु ओर प्रसारित कर देश के हित में कार्य भी किया।

दलितों के हक के लिए बाबासाहब की लड़ाई शुरु थी, फिर भी राष्ट्रहित में बाधा हो, ऐसा कोई भी काम करने के लिए उनका सक्त विरोध रहता था। राजनीतिक बातों पर अपना मत प्रदर्शित करते हुए उन्होंने कहा, ''कुछ जगह अपने स्वतंत्र प्रतिनिधि हो, ऐसा मेरा मत है फिर भी इसके लिए स्वतंत्र मतदारसंघ हो इसे मेरा विरोध है। प्रादेशिक मतदारसंघ और स्वतंत्र मतदार संघ इसमें बहुत अंतर है। अभी अपने देश में प्रजातंत्र का अभाव होने के कारण आगे जनतंत्र पद्धति को बिजारोपित करने के लिए हमने उपरोक्त दो बातों को नजरअंदाज करना चाहिए। इसके लिए आरक्षित जगह, संयुक्त मतदारसंघ पद्धति योग्य है।''[१६५] डॉ. आंबेडकर के इन्हीं विचारों के आधार पर आरक्षित मतदारसंघ आज हमें देखने को मिलते हैं। इतना ही नहीं, सन् १९४२ में गांधी जी ने 'भारत छोड़ो' आंदोलन शुरु किया तो डॉ. आंबेडकर ने १९३० में ही भारतीय स्वतंत्रता की मांग की थी। अंग्रेजों द्वारा नामनिर्देशित प्रतिनिधि होते हुए भी जब राष्ट्र का प्रश्न निर्माण हुआ तो अंग्रेजों ने भारत छोड़ना चाहिए, ऐसी स्पष्ट भूमिका रखनेवाले डॉ. आंबेडकर एक राष्ट्राभिमानी व्यक्तित्व के महापुरुष थे। बाबासाहब ने कई मर्तबा अपने राजनीतिक विचारों से गोलमेज परिषद, पुणे करार आदि तथा अन्य माध्यमों से अपने विचारों को स्पष्ट किया है।

डॉ. आंबेडकर ने अपने राजनीतिक सफर में अनेक जनहित के काम किए। उनकी राजनीति ही जनता के लिए समर्पित थी। सामान्य, अशिक्षित लोगों को राह दिखाने हेतु उन्होंने २० जुलाई, १९२४ को 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' और मार्च १९२६ में समता सैनिक दल जैसे सामाजिक संघटन खड़े किए। उन्होंने भारत के श्रमिकों को न्याय देने के लिए १५ अगस्त १९३६ को 'स्वतंत्र मजदूर संघ' की स्थापना की। यह बाबासाहब के राजनीतिक सफर की प्रत्यक्ष शुरुआत ही थी। १९३७ में हुए पहले ही चुनाव में बाबासाहब की पार्टी ने मुंबई में १७ में से १४ सीटें हासिल की। आगे चलकर बाबासाहब स्वतंत्र भारत के पहले कानून मंत्री भी बने। इस समय उन्होंने राजनीतिक सत्ता का उपयोग भारतीय समाज के उत्थान के लिए किया। उनके संदर्भ में विश्वप्रसिद्ध लेखक

प्रा. एच. सी. हर्ट कहते हैं, ''साधारणत: तीस माह दामोदर डॅम के नियोजन के सभी बिंदु एक राजनीतिक व्यक्ति के हाथ में केंद्रित हुए थे। जिन्होंने अत्यंत दूरदृष्टि से और तीव्र गति से इस संदर्भ में निर्णय लिए, ऐसे मंत्री महोदय, डॉ. बी. आर. आंबेडकर का इस संदर्भ में योगदान मौलिक और असाधारण है।''[१६६] इस प्रकार बाबासाहब जहाँ भी गए अपने हाथों से सर्वजनहिताय कार्य किए। उनके इन्हीं कार्यों की वजह से उन्हें आज भी पहचाना जाता है।

बाबासाहब के राजनीतिक विचारों का केंद्रबिंदु 'मनुष्य' रहा है। इस मनुष्य की अस्मिता, स्वाभिमान और स्वतंत्रता की रक्षा सत्ता और राजनीति करें ऐसा उनका आग्रह था। मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो और समाज के प्रत्येक वर्ग को सत्ता में साझेदारी मिले, संसदीय प्रणाली में ही ऐसी राजनीति संभव है – ऐसी उनकी धारणा थी। प्रखर राष्ट्रीयता और जनतंत्र के प्रति अगाध निष्ठा उनके राजनीतिक विचारों का सार है। इसके लिए वे हर कीमत चुकाने के लिए तैयार है। इस तरह हमें डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के राजनीतिक विचारों की जान-पहचान तो होती ही है अपितु वे कितने प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है इसका भी अंदाजा आता है। राजनीति के संदर्भ में बाबासाहब का कहना है कि धर्म में भक्ति आत्मा की मुक्ति का मार्ग हो सकता है लेकिन राजनीति में, भक्ति या नायक पूजा पतन का निश्चित रास्ता है और वह अंतत: तानाशाही पर खत्म होता है।

४.४.४ आर्थिक एवं वित्तिय क्षेत्र में योगदान :

डॉ. आंबेडकर को आम तौर पर भारत के संविधान निर्माता, विधिवेता, समाज सुधारक तथा दलितों के मसीहा के रूप में जाना जाता है, किंतु उन्हें बहुत कम लोग अर्थशास्त्री के रूप में जानते हैं। सच कहा जाय तो वे भारत के पहले अर्थशास्त्री थे जिसने अर्थशास्त्र में 'लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स' तथा कोलंबिया विश्वविद्यालय से दो डॉक्टरेट की उपाधियाँ प्राप्त की। लंदन में उनके शोध-प्रबंध का विषय था 'भारतीय रुपये की समस्या : कारण एवं समाधान' यही उनका प्रबंध पुस्तक रूप में १९२५ में प्रकाशित

हुआ। आज भी हम इस शोध-कार्य का सार एवं महत्व देखते है तो बाबासाहब के आर्थिक योगदान के संदर्भ में डॉ. नरेंद्र जाधव कहते हैं कि भारतीय आर्थिक समस्याओं का निपटारा करने के लिए साथ ही भारतीय अर्थशास्त्रीय विचार विकसित करने के लिए डॉ. आंबेडकर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था की समस्या, वित्तिय प्रणाली और रुपये पर उनके कई महत्वपूर्ण काम है। भारतीय अर्थव्यवस्था को सुधारने के उद्देश्य से वर्ष १९२५ में गठित हिल्टन कमिशन के सामने उन्हें अपना पक्ष रखने के लिए बुलाया गया था। इसके अलावा उनके असंख्य लेख एवं भाषण न केवल उनके एक अग्रगणी अर्थशास्त्री होने को प्रमाणित करते है बल्कि इस से उनकी भारतीय अर्थव्यवस्था को सुधारने की उत्सुकता भी प्रमाणित होती है।

डॉ. आंबेडकर ने अपनी कृतियों में अंग्रेज सरकार की तत्कालीन कर नीति जैसे अत्यधिक भूमि लगान, नमक कर, इंग्लंड ड्यूटी, जागीरदारी व्यवस्था द्वारा किसानों का घोर आर्थिक शोषण तथा अंग्रेजों और भारतीय सरकारी अधिकारियों के वेतन में भारी अंतर आदि मुद्दों पर काफी आलोचनों की थी। इसी तरह सरकार की नशाबंदी नीति पर आलोचना करते हुए उन्होंने, ''१० मार्च १९२७ के दिन कहा था कि देश में देशी शराब निकालने की हाथ भट्टीयाँ अधिक बढ़ रही है और कारखाने पनप रहे हैं, इसका प्रमुख कारण शराब पर लगाया गया अत्यधिक कर है। देश की अर्थव्यवस्था पर विचार करते समय शराबबंदी के कारण जो नुकसान होगा उसकी पूर्ति कैसे की जा सकेगी और यह नशाबंदी की नीति किस तरह सफल होगी।''[१६७] इस तरह आंबेडकर ने नए पहलु अंग्रेज सरकार के सामने लाए। उनके मजदूर वर्ग को लेकर किये गए कार्य भी सर्वपरिचित है। बाबासाहब स्वयं एक मजदूर नेता थे। अनेक वर्षों तक वे मजदूरों की बस्ती में रहे। इसलिए उन्हें श्रमिकों की पूरी जानकारी थी। साथ ही एक मंजे हुए अर्थशास्त्री होने के कारण इन सवालों को सुलझाने के तरीके भी उन्हें मालूम थे। इसलिए उनके शासनकाल में मिल-मजदूरों, खान-श्रमिकों, चाय-बागान में काम करनेवालों आदि के लिए जितने सुधार किए गए उतने उनसे पहले किसी के कार्यकाल में नहीं हुए थे।

डॉ. आंबेडकर ने भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र को अत्यंत महत्वपूर्ण माना है। उनका कहना है कि कृषि के साथ हमें कृषि-सहायक व्यवसाय भी करने चाहिए। जैसे पशुधन, वन उत्पाद आदि चीजें व्यापार के लिए फायदेमंद साबित होगी। कृषि अर्थव्यवस्था में जमींदार एवं व्यापारी था। उन्होंने व्यवसाय की दृष्टि से कृषि को प्रमुख स्थान दिया। इसलिए उन्होंने कृषि का राष्ट्रीयकरण करना चाहिए ऐसा विचार भी रखा। इस संदर्भ में आंबेडकर कहते हैं, ''कृषि का विकास करने के लिए सरकार ने वित्तिय बँक के अंतर्गत किसान वर्ग को कृषि कर्ज की व्यवस्था करनी चाहिए। डॉ. बाबासाहब के विचार से ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए कृषि का विकास जैसे महत्वपूर्ण है उसी प्रकार कृषि पर आधारित उद्योग और लघुद्योग का विकास भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि राष्ट्र की संपत्ति में बढोत्तरी लाने के लिए कृषि का विकास साधना चाहिए।''[१६८] इस तरह आंबेडकर कृषि में सुधार एवं प्रगति के लिए अर्थशास्त्रीय दृष्टि से अपनी बातें रखते थे। उनकी इन्हीं सलाहों का उपयोग आज भी हमें होता हुआ दिखाई देता है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आंबेडकर की एक अर्थशास्त्री के रूप में योग्यता अंग्रेजों और पश्चिम के विद्वानों द्वारा कितनी सराही गयी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में वांछित अर्थव्यवस्था के बारे में उनके विचार काफी महत्व रखते हैं। डॉ. आंबेडकर प्रत्येक नागरिक के मूल आवश्यकताओं की पूर्ति किसी भी लोकतंत्र का प्रथम कर्तव्य मानते थे। वे साम्राज्यवाद और पूंजीवाद के खुले विरोधी थे। उनकी सोच में कार्ल मार्क्स और गौतम बौद्ध के विचारों का अद्‌भुत समन्वय है। वे पक्के यथार्थवादी थे। उनकी मान्यता थी कि मानव समाज में पूर्ण समानता नहीं लायी जा सकती। इसलिए वे धन-दौलत एवं अन्य प्रकार की सामाजिक-शैक्षिक असमानताओं को ही क्रमिक और तार्किक ढंग से दूर करना चाहते थे। इन बातों से यह साबित होता है कि बाबासाहब का भारतीय अर्थव्यवस्था में कितना अमूल्य योगदान है।

४.४.५ धार्मिक योगदान :

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर का जन्म मध्यप्रदेश के महू नामक गांव में हुआ। समाज में शूद्र और अस्पृश्य कही जानेवाली जाति में उनका जन्म होने के कारणवश उन्होंने जिंदगी भर अपार यातनों झेली। जब वे छोटे थे और स्कूल जा रहे थे, उस वक्त एक सवर्ण लड़का कहता है कि मुझे छू मत। यदि मेरी माँ को मालूम हो गया तो इस भयंकर सर्दी में भी वह मुझे नहलायेगी और पीटेगी भी। यह अनुभव जब उन्हें आया तो वे बहुत ही निराश हुए। आगे चलकर और भी कटु अनुभव उन्हें झेलने पड़े। इसलिए उन्होंने ठान लिया था कि मैं हिंदू बनकर पैदा जरुर हुआ हूँ लेकिन एक हिंदू के रूप में मरुँगा नहीं। यही अवसर पर वे पीड़ा और कष्ट से आहत होने के कारण धर्म परिवर्तन का महत्वपूर्ण निर्णय घोषित करते हैं। इसलिए डॉ. भालचंद्र मुणगेकर कहते हैं कि, ''बौद्ध धर्म स्वीकारना यह आंबेडकर के लिए सिर्फ एक धर्म परिवर्तन नहीं था बल्कि वह एक भारतीय सांस्कृतिक क्रांति थी।''[१६९] इस बात से आंबेडकर स्पष्ट कहते हैं कि मनुष्य धर्म के लिए नहीं अपितु धर्म मनुष्य के लिए है।

डॉ. आंबेडकर का सार्वजनिक जीवन सन् १९१७ से आरंभ हुआ। तब से लेकर १९३५ तक उन्होंने हिंदू धर्म में सुधार लाने के लिए अनन्य प्रयास किए। वे चाहते थे कि हिंदू धर्म अधिक उदारता से अछूतों को स्वीकार करे, उन्हें मानवीय अधिकार प्रदान करें। हिंदू धर्म के प्रति उनकी शिकायत थी कि वह विषमता का समर्थन करता है। उनका कहना था कि, ''जो धर्म विषमता का समर्थन करता है, उसके विरोध का निर्णय हमने लिया है। अगर हिंदू धर्म अस्पृश्यता का धर्म है, तो उसे समानता का धर्म बनना चाहिए। अगर हिंदू धर्म सामाजिक समता का धर्म बनना चाहता है तो अस्पृश्यों को मंदिरों में प्रवेश देकर बात बननेवाली नहीं है। इसके लिए चातुर्वर्ण्य निर्मूलन की नितांत आवश्यकता है। इस धर्म और समाज की विषमता की जड़ चातुर्वर्ण्य व्यवस्था है। चातुर्वर्ण्य ही अस्पृश्यता की जननी है। जातिभेद और अस्पृश्यता विषमता के अन्य रूप हैं। अगर इस जड़ को नष्ट नहीं किया गया तो अस्पृश्य वर्ग इस धर्म को निश्चित ही त्याग देगा।''[१७०] बाबासाहब के इस कथन से साफ तौर पर यह स्पष्ट होता है कि वे हिंदू धर्म की सीमाओं को बतलाते हुए उसमें शुद्धता का आग्रह कर रहे थे। तत्कालीन

विद्वतजनों से, धर्म-प्रमुखों से वे बार-बार अपील कर रहे थे कि हिंदू धर्म में स्थित इन दोषों को प्रयत्नपूर्वक हटाया जाए। वे स्वयं समानता की दिशा में इस धर्म को उन्मुख करने के लिए प्रयासरत थे।

डॉ. आंबेडकर धर्म के उद्देश्य को समझाते हुए कहते हैं कि व्यक्ति के सद्‌गुणों का विकास यही सच्चे धर्म का अंतिम उद्देश्य है। जिस कारण प्रजा का धारण होता है वही धर्म है – धर्म की इस व्याख्या में वे अपनी सहमती प्रकट करते हैं। प्रजा के धारण के लिए धर्म बंधुभाव, समता और स्वतंत्रता के सद्‌गुणों के संस्कार डाले, ऐसी अपेक्षा होती है। अपेक्षा ही नहीं, किसी भी धर्म की यही अहम् जिम्मेदारी होती है। हिंदू धर्म इन सद्‌गुणों के संस्कार पैदा नहीं करता इसलिए इसे नकारना पड़ता है। धर्म की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए बाबासाहब कहते हैं, ''मैं आपको फिर से यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं है। जो धर्म तुम्हें मनुष्य के रूप में स्वीकार करना नहीं चाहता, जो धर्म तुम्हें पीने के लिए पानी नहीं देना चाहता, वह धर्म धर्म कहलाने लायक नहीं होता। जो धर्म तुम्हारे भौतिक उत्कर्ष में बाधों पहुँचाता है, वह धर्म कहलाने लायक नहीं है।''[१७१] इतना कहकर वे नहीं रुकते बल्कि इसके आगे चलकर कहते हैं कि जो धर्म अपने अनुयायियों को अपने ही धर्मावलंबियों से मानवता का आचरण करना नहीं सिखलाता, वह धर्म न होकर एक बीमारी है। जो धर्म कुछ वर्गों को धनसंचय नहीं करने देता, हाथों में शस्त्र लेने की अनुमति नहीं देता, यह धर्म-धर्म न होकर मनुष्य जीवन की विडंबना है। जो धर्म अज्ञानियों को अज्ञानी, निर्धनों को निर्धन रहने की सीख देता हो, वह धर्म न होकर भयावह कैदखाना है।

अंतत: डॉ. आंबेडकर ने हिंदू धर्म के पाश से बाहर जाकर बौद्ध धर्म का स्वीकार करने का निर्णय जाहिर किया। उसके अनुसार लाखों की जनसंख्या नागपुर के दीक्षा भूमि में उमड़ी। इसी अवसर पर १५ अक्तूबर, १९५६ को ''८० वर्ष के वृद्ध महास्थविर चंद्रमणि और मगवी कफनियाँ पहने हुए चार अन्य भिक्षुओं ने पाली भाषा में डॉ. आंबेडकर और उनकी पत्नी को 'बुद्धं शरणं गच्छामि', 'धम्मं सरणं गच्छामि', 'संघं सरणं

गच्छामि' सरणत्रय कहलाते समय और जीवहत्या, चोरी, असत्य भाषण, अनाचार और मदद से अलिप्त रहने के बारे में पंचशील कहलाते समय तीन लाख से ज्यादा स्त्री-पुरुषों का समुदाय वह समारोह बड़ी उत्सुकता और तन्मयता से देख रहा था। आंबेडकर शपथ लेते समय बुद्ध की मूर्ति के सामने भक्तिभाव से नतमस्तक होकर खड़े थे। शपथविधि के पूरा होते ही उन्होंने भगवान बुद्ध के चरणों में सिर झुकाकर तीन बार प्रणाम किया। बुद्ध की मूर्ति को कमलपुष्पहार अर्पित किया। यह विधि समाप्त होने पर घोषित किया गया कि आंबेडकर ने बौद्ध धर्म में प्रवेश किया।''[१७२] इस तरह धर्म परिवर्तन कर बाबासाहब ने अस्पृश्य समाज को एक नये धर्म के अनुसार आचरण और व्यवहार करने हेतु प्रेरित किया। आंबेडकर के इस धार्मिक योगदान को कतई नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

४.४.६ शैक्षिक योगदान :

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर को राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने में उनके लेखन का अहम् योगदान रहा है। एक सामाजिक कार्यकर्ता और दलित समाज के महानायक के रूप में तो उस समय सिर्फ दलित समाज ही आंबेडकर की भूमिका को देख पा रहा था, लेकिन एक सजग चिंतक के रूप में वे अपने लेखों, पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से दुनियाभर में ख्यात हो चुके थे। डॉ. आंबेडकर चाहते थे कि अगर हमें अपने राष्ट्र की नींव रखनी है तो यहाँ की शिक्षा-व्यवस्था सुधारनी आवश्यक है। इसलिए उन्होंने शिक्षा के बजट में बढोत्तरी की भी मांग की थी। उनका मानना था कि हम इस समय शिक्षा पर जो खर्च कर रहे हैं, उसके अधिकांश भाग का वास्तव में अपव्यय हो रहा है। प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य यह है कि प्राथमिक विद्यालय में दाखिल होनेवाला हर बच्चा स्कूल तभी छोड़े, जब वह साक्षर हो जाए और अपने शेष जीवन में वह साक्षर बना रहे। बाबासाहब का कहना था कि पहले पढ़ो बाद में संघटित हो और उसके बाद संघर्ष के लिए तैयार हो जाओं। बिना ज्ञान और शिक्षा के संघर्ष से क्या हासील होगा? आंबेडकर दलितों के शिक्षा के प्रति हमेशा सोचते रहे वे निश्चय ही आधुनिक भारत के प्रमुख सिद्धांतकारों में विशेष महत्व रखते है।

वास्तव में शिक्षा एक आंदोलन है। अगर शिक्षा अपने जीवन के सार्थक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करती तो वह निरर्थक है। सच्ची शिक्षा तो समाज में मानवता की रक्षा करती है, आदमी को ज्ञान और समानता का पाठ पढ़ाती है। सच्ची शिक्षा समाज में जीवन का सृजन करती है। ''बाबासाहब की दृष्टि में तत्कालीन शिक्षा पद्धति उचित नहीं थी। मूल्य निर्धारण इस बात का होना चाहिए कि विद्यार्थी कक्षा में क्या सीख रहा है। लिखित परीक्षा से मौखिक परीक्षा को अधिक महत्व देना चाहिए।''[१७३] इसी तरह वे किसी की सिफारिश के आधार पर किसी को उत्तीर्ण करना एक अध्यापक के लिए उपयुक्त नहीं समझते।

डॉ. आंबेडकर शिक्षा के व्यवसायीकरण का विरोध करते थे। असेंबली में उस वक्त उन्होंने कहा कि उन आंकड़ों की जो मुझे यह जानकारी देते है कि इस (बॉम्बे) प्रेसिडेंसी में शिक्षा का प्रबंधन कैसे होता है, छानबीन करने से मुझे यह पता लगा है कि आर्टस कॉलेजों पर जो खर्च किया जाता है, उसका ३१ प्रतिशत भाग फीस से आता है। मिडिल स्कूलों पर जो खर्च होता है उसका २१ प्रतिशत भाग फीस से आता है। महोदय, मेरा निवेदन है कि यह शिक्षा का व्यवसायीकरण है। शिक्षा तो एक ऐसी चीज है कि सबको मिलनी चाहिए। शिक्षा विभाग ऐसा नहीं है, जो इस आधार पर चलाया जाय कि जितना वह खर्च करता है, उतना विद्यार्थियों से बसूल किया जाए। शिक्षा को सभी संभव उपायों से व्यापक रूप में सस्ता बनाया जाना चाहिए। आगे चलकर बाबासाहब ने ''समाज में स्थित सभी स्तर के घटकों के युवा पीढ़ी को उच्च शिक्षा मिले इसलिए उन्होंने 'पीपल्स एज्युकेशन सोसायटी' इस शिक्षा संस्था की स्थापना कर मुंबई में 'सिद्धार्थ महाविद्यालय' शुरु किया। मराठवाड़ा के शैक्षिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े विभाग में विद्यार्थियों के लिए औरंगाबाद जैसे शहर में शिक्षा की व्यवस्था की।''[१७४] समय-समय पर शैक्षिक उपक्रम द्वारा आंबेडकर ने विद्यार्थियों से संवाद भी किया। युवाओं ने अपने शैक्षिक हक के लिए जागृत होना चाहिए इसका एहसास दिलाकर युवा पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल रहे, साथ ही राष्ट्र की प्रगति कैसे संभव है इसका भी चिंतन उन्होंने विद्यार्थियों

के समक्ष किया है। उनके विचार से जीवन के भविष्य का निर्माण विश्वविद्यालय में होता है, इसलिए युवाओं ने उच्च शिक्षा ग्रहण करते समय सजग रहना चाहिए।

बाबासाहब शिक्षा को दो-धारी शस्त्र मानते हैं। चारित्रहीन और विनयहीन शिक्षित व्यक्ति पशु से भी अधिक भयंकर होता है। सुशिक्षित मनुष्य का ज्ञान और उसकी शिक्षा जनहित के विरोध में जा रही हो, तो ऐसा व्यक्ति समाज के लिए शाप साबित होता है। शिक्षासंबंधी उनके विचार सरकार की जिम्मेदारी की ओर स्पष्ट संकेत करनेवाले हैं। बाबासाहब कहते हैं कि, ''समाज के सबसे सामान्य शोषित और उपेक्षित व्यक्ति तक शिक्षा की सुविधों पहुँचनी चाहिए, ऐसा उनका आग्रह था। परंपरा से नकारे गए वर्ग को उच्च शिक्षा हेतु अधिक खर्च करना न पड़े। ऐसी व्यवस्था हो ऐसा उनका आग्रह था। विश्वविद्यालय की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा- स्नातक और छात्रों के पाठ्यक्रम द्वारा सांस्कृतिक प्रगति करने के लिए महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को एक होना जरुरी है।''[१७५] उनके विचारों का सही मायने में आज भी कोई सानी नहीं है। शिक्षा के बारे में वे कहते हैं – नि:शुल्क और अनिवार्य रूप से प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था हो। साक्षरता प्रचार के लिए अशिक्षित, प्रौढ शिक्षा की योजना हो। औद्योगिक शिक्षा पर विशेष बल हो। प्रादेशिक विश्वविद्यालयों की स्थापना हों। साथ ही दलित-अस्पृश्य और पिछड़ी जातियों के प्रतिभा-संपन्न और बुद्धिमान युवकों को उच्च शिक्षा के लिए सरकारी कोष की व्यवस्था हो। इस तरह बाबासाहब के शैक्षिक योगदान को देखते हुए यह साफ होता है कि वे शिक्षा के माध्यम से समाज में न्याय, समानता, भाईचारा, स्वतंत्रता और निर्भयता स्थापित करना चाहते है। वे जन्माधारित सामाजिक व्यवस्था के स्थान पर मूल्याधारित समाज बनाना चाहते थे। इन बातों से जाहिर होता है कि नैतिक मूल्यों का विकास अच्छी शिक्षा के माध्यम से ही संभव है।

४.४.७ संवैधानिक योगदान :

डॉ. आंबेडकर एक भारतीय विधिवेत्ता और बहुजन राजनीतिक नेता होने के साथ-साथ भारतीय संविधान के प्रमुख वास्तुकार भी थे। बाबासाहब का कहना था कि संविधान

वास्तव में व्यक्ति जीवन और शासन-प्रशासन की नैतिकता के नियमों का दूसरा नाम है। परंतु 'संवैधानिक नैतिकता' का मतलब प्राकृतिक भावना नहीं है, वह जन्मत: होती नहीं है, वह निर्मित और विकसित करनी पड़ती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वे रक्षा सलाहकार समिति और वाईसराय की कार्यकारी परिषद के लिए श्रम मंत्री के रूप में भी कार्यरत रहे। वे कानून मंत्री भी रहे। स्वतंत्रता के पश्चात उन्होंने संविधान निर्माण में अहम् भूमिका अदा की। २ अगस्त, १९४७ को आंबेडकर स्वतंत्र भारत के नए संविधान की रचना के लिए बनी संविधान मसौदा समिति के अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। संविधान के कार्य को उन्होंने कड़ी मेहनत और लगन के साथ पूरा किया। उन्हीं के प्रयासों के चलते पिछड़े व कमजोर तबकों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गयी।

१७ नवंबर, १९४९ को संविधान कार्य का तीसरा पठन होना था। विभिन्न सभासदों ने संविधान पर अपने विचार रखे। सभी सदस्यों ने अपने विचार प्रकट करने के पश्चात इस ऐतिहासिक भाषण में डॉ. आंबेडकर ने कहा, ''यह संविधान अच्छा हो बुरा, उसकी अच्छाई या बुराई उसका व्यवहार करनेवालों पर अवलंबित होगी। इसके पूर्व भारत ने अपनी स्वाधीनता अपने ही लोगों के देशद्रोह के कारण गंवाई थी। भारत के इतिहास से देशद्रोह के उदाहरण देते हुए उन्होंने उद्वीग्नता के साथ आव्हान दिया, हमें अपनी आजादी कायम रखने के लिए अपने खून की आखिरी बूंद तक पूरी लगन के साथ जुट जाना होगा।''[१७६] इसके पश्चात उन्होंने प्रजातंत्र की रक्षा के लिए क्या करना आवश्यक है इसका विश्लेषण किया। उनकी राय थी कि अब जनता को केवल संवैधानिक तरीकों से ही अपने सामाजिक और आर्थिक सवालों को सुलझाना चाहिए। सत्याग्रह या असहयोग का रास्ता हमें अराजकता की ओर ले जायेगा। यह बात भी सही है कि उनके अभाव में भी संविधान बन सकता था, परंतु ''डॉ. बाबासाहब की महानता अगर किसी बात में है तो इसमें कि जाति, धर्म, वर्ग, भाषा आदि विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ जब देश को भीतर से कुरेद रही थी तब विभिन्न संस्कृतियों की निष्ठाओं को नियंत्रित करते हुए एकसंघ राष्ट्र निर्मिति से प्रेरित होकर प्रत्येक की स्वतंत्रता को सुरक्षित और सर्वांगीण विकास के अवसर

प्राप्त करा देनेवाला संविधान उन्होंने प्रस्तुत किया।''[१७७] इस संविधान के अनुसार ही पिछले ७० वर्षों से इस देश का कारोबार एवं शासन-प्रशासन चल रहा है।

संविधान की इन सारी विशेषताओं के बावजूद वे यह कहते थे कि केवल संविधान में स्थित प्रावधानों के कारण देश प्रगतिशील अथवा कल्याणकारी नहीं बन सकता। उसके लिए राजनीतिज्ञों की प्रामाणिकता और प्रशासन की प्रतिबद्धता जरुरी होती है। उन्होंने कहा कि संविधान मिला, स्वतंत्रता प्राप्त हो गई, इसका अर्थ सब-कुछ प्राप्त हुआ, ऐसा नहीं होता। जनतंत्र रूपी वृक्ष किसी भी मिट्टी में फल-फूल नहीं सकता। उसके लिए जरुरी होती है मूल्यविषयक दृष्टि। इस मूल्य-दृष्टि का विकास जरुरी है। इस दृष्टि का विकास हम कितना कर पायेंगे, उस पर से ही संविधान की श्रेष्ठता सिद्ध होनेवाली है। 'भारतीय संविधान' बाबासाहब की इस देश को बहुत बड़ी देन है। इस देश की समाज-व्यवस्था में वे आमूल परितर्वन चाहते थे। परिवर्तन की यह प्रक्रिया संविधान द्वारा घटित हो ऐसी उनकी धारणा थी। इस संविधान का मसौदा तैयार करने के लिए उन्होंने अपनी बुद्धि दांव पर लगा दी थी।

२९ नवंबर, १९४९ को संविधान सभा ने संविधान को अपने राष्ट्र के लिए स्वीकार किया। अपने इस उपसंहारीय भाषण में संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने डॉ. आंबेडकर के कार्यों का गौरव भरा उल्लेख किया। इससे आगे डॉ. प्रसाद कहते हैं कि , ''अपनी गिरती हुई सेहत की परवाह न कर डॉ. आंबेडकर ने अपनी कार्य निपुणता से केवल अपने चुनाव को सार्थक ही नहीं किया, वरन् अपने पद को गरिमा प्रदान की।''[१७८] वास्तव में इस संविधान द्वारा उन्होंने शासकों, प्रशासकों, न्यायालयों तथा देश की सभी स्तर पर जनता पर कई जिम्मेदारियाँ डाल रखी हैं। मौलिक अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों को भी उन्होंने जोड़ा है। संविधान धर्म ग्रंथ की तरह पवित्र होते हुए भी जड़ या अपरिवर्तनीय नहीं है, न ऐसा उसे होना चाहिए। काल और परिस्थिति के अनुसार उसमें परिवर्तन अपेक्षित है। संविधान द्वारा स्थापित जनतांत्रिक सत्ता जब तक अस्तित्व में होती है, तब तक संविधान संशोधन भी होते रहेंगे। अत: कहना होगा कि

निश्चित तौर पर डॉ. आंबेडकर ने संविधान बनाते समय बहुत परिश्रम किए। तब जाकर उन्होंने हमें एक ऐसा संविधान दिया जो जाति, लिंग, नस्ल, धर्म और जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध करता है बल्कि सदियों से शोषित-वंचित वर्गों को सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक रूप से मुख्यधारा में लाने का अवसर प्रदान करता है।

४.४.८ अन्य क्षेत्रों में योगदान :

डॉ. आंबेडकर ने समता मूलक समाज की स्थापना करते हुए संविधान में जो प्रावधान किये, वह अतुलनीय है। संविधान की बदौलत ही देश में छूत-अछूत का भेदभाव मिटा है और देश नई उँचाईयों की ओर लगातार अग्रसर हो रहा है। राजनीति में महिलाओं की एक निश्चित भागीदारी के पीछे संविधान ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वे देशभर की जनता के लिए लागू होनेवाले धर्मातीत ऐसे समान नागरी कानून के वे आग्रही प्रतिपादक थे। विवाह, तलाक या उत्तराधिकार का कानून बनाते समय धर्म का आधार ही क्यों लिया जाए ऐसा उनका प्रश्न था। संसद में उन्होंने कहा, ''समान नागरी कानून होना ही चाहिए। हिंदू-मुसलमान और इसाई धर्म पर आधारित कानूनों में जहाँ मतभेद के मुद्दे है, उन्हें विचारपूर्वक हल करना चाहिए। सबमें कुछ समानता के मुद्दे भी है। केवल मतभेदों के मुद्दों से बात नहीं बन सकती। समान नागरी कानून हमारा अंतिम उद्देश्य है।''[१७९] बाबासाहब सबके लिए एक ही तरह का कानून बनाने का सोचते थे। उनके यही विचार को देखकर आज भी समान नागरी कानून के हक में बड़े पैमाने पर चर्चा और बहस होती हुई हमें दिखाई देती है।

बाबासाहब आंबेडकर ने हिंदू कोड बिल लाकर स्त्रियों के संदर्भ में बहुत से सकारात्मक निर्णय लेने की पहल की। इस बिल द्वारा वे स्त्रियों के लिए तलाक का अधिकार। हिंदू कानून के अनुसार विवाहित व्यक्ति के लिए एकाधिक पत्नी अर्थात बहुविवाह प्रतिबंध। अविवाहित कन्याओं और विधवाओं को बिना कोई शर्त के पिता या पति के संपत्ति पर उत्तराधिकारी बनाने का हक। अंतर्जातीय विवाह को मान्यता दी जाए।

इस बिल में अंतर्निहित ये न्यूनतम सिद्धांत धार्मिक रीति से विवाहित स्त्रियों को इन अधिकारों का उपयोग करने और लाभ उठाने का अवसर प्रदान करते हैं। हिंदू कोड बिल मुख्यत: स्त्री मुक्ति के लिए ही था। इस देश में स्त्री को जो गौण स्थान दिया गया है, उसे नष्ट कर स्त्री भी एक मनुष्य है ऐसी मानसिकता विकसित होनी चाहिए ऐसा उनका प्रयत्न था। दलित और स्त्री उनके चिंतन के प्रमुख केंद्रबिंदु थे। दलितों के लिए संवैधानिक व्यवस्था करने के बाद वे स्त्रियों के लिए वैसी ही व्यवस्था करना चाह रहे थे। हिंदू कोड बिल के अंतर्गत स्त्री को विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और दत्तक विधान की स्वतंत्रता देना चाहते थे। अंतर्जातीय विवाह को कानूनी संरक्षण देने की उनकी इच्छा थी। जो परिवार अन्य जाति के लड़के को दत्तक (गोद) लेना चाहते हैं उन्हें वे वैसी स्वतंत्रता देना चाह रहे थे। अर्थात इस प्रकार की व्यवस्था से वे स्त्री को पुरुष के बराबर लाना चाहते थे और ठीक इसी समय जाति-प्रथा को नष्ट करने की कोशिश भी कर रहे थे।

डॉ. आंबेडकर ने अपने विचार और वाणी को जनजन तक पहुँचाने के लिए 'बहिष्कृत भारत' नामक एक पाक्षिक पत्र का प्रारंभ किया। जिस प्रकार पंछियों को आकाश में उड़ने के लिए पंख की आवश्यकता होती है उसी तरह अपने विचारों को जन-मानस तक पहुँचाने के लिए अखबार जरुरी है, इसका उन्हें पूरा यक़ीन था। वे इस अखबार के संपादक भी थे। इस पाक्षिक पत्र का पहला अंक ३ अप्रैल, १९२७ को प्रकाशित हुआ। १५ नवंबर, १९२९ तक 'बहिष्कृत भारत' का प्रकाशन चलता रहा। अपने काम का सारा भार संभालते हुए डॉ. आंबेडकर इस पत्र का बहुतायत भाग स्वयं लिखते थे। अन्य समाचार-पत्रों के संपादकों से 'बहिष्कृत भारत' का संपादन निराला था। यह पैसा कमाने का व्यवसाय न होकर जनजागृति के लिए अविरल निष्ठा से और पूरी कर्तव्य-दक्षता के साथ, सारी प्रतिकूल अवस्थाओं में भी बाबासाहब तीन साल तक अखबार का यह जंजाल चलाते रहे। इसके साथ ही उन्होंने मूकनायक, समता, जनता और प्रबुद्ध भारत जैसे समाचार पत्र निकालकर अपने विचार समाज के कोने-कोने तक पहुँचाने के लिए अथक प्रयास किए।

स्वतंत्रतापूर्व तथा पश्चात के कई वर्षों तक मजदूर वर्ग की हालत सही नहीं थी। इस वर्ग की ओर विशेष रूप से ध्यान देनेवाला कोई मसीहा न था। ऐसे वक्त और परिस्थितियों के बीच आंबेडकर मजदूर-कल्याण के लिए प्रयासरत थे। ''मजदूरों के सद्‌गुण और दुर्गुण, उनकी जरुरतें और दु:ख उन्हें मालूम थे। मजदूर समिति की स्थायी समिति सर फेरोज खान नून के कार्यकाल में स्थापित हुई थी। उसमें मजदूर, सरकार और मालिक इन सबके प्रतिनिधी थे। उस समिति की बैठक मुंबई के सचिवालय में ७ मई १९४३ को मजदूर मंत्री डॉ. आंबेडकर की अध्यक्षता में हुई। उस समय एक महत्व की समस्या विचार-विमर्श के लिए रखी गयी थी। वह समस्या याने कम से कम युद्ध सामग्री बनाने का काम करनेवाले कारखानों में एक संयुक्त मजदूर-नियामक समिति नियुक्त करना। इस तरह की समितियाँ अमरीकी संयुक्त राज्यों और ब्रिटेन में विद्यमान थी। दूसरी महत्व की समस्या यानी सेवा योजना कार्यालय की (ेंप्लायमेंट एक्सचेंज) स्थापना करना। मजदूरों की कल्याण की दृष्टि से इसकी आवश्यकता थी। वह सेवायोजन कार्यालय स्थापित करने का प्रधान उद्देश्य यह था कि उस समय जो अनुभवी और अर्धशिक्षित तंत्रज्ञ अलग-अलग योजनाओं में से तैयार हो रहे थे, उन्हें नौकरी के लिए भटकना न पड़े और उन्हें नौकरी प्राप्त करने के मार्ग खुले रहे।''[१८०] इस तरह डॉ. आंबेडकर ने अनेक निर्णय भारतीय समाज तथा जनता के हित के लिए लिये। विभिन्न क्षेत्रों में किए गए कार्य निश्चित तौर पर आज भी समाज को दिशा देने के लिए पर्याप्त है।

४.४.९ संघर्षशीलता :

अनेक ऐसे महापुरुष हैं जिन्हें अपने जीवन में बहुत ही कम या नाममात्र तौर पर संघर्ष करना पड़ा हो। लेकिन एक ऐसा महानायक भी है जिन्हें अपने कदम-कदम पर संघर्ष करना पड़ा हो। उनका जीवन ही एक संघर्षयात्रा बना हो, इतना ही नहीं संघर्ष उनके रोम-रोम में बसा हो ऐसे महामानव है – डॉ. बाबासाहब आंबेडकर। एक साधारण परिवार में जन्म लेने के कारण तथा अतिशूद्र एवं अस्पृश्य होने की वजह से डॉ. आंबेडकर का जीवन कठिनाई तथा समस्याओं से भरा पड़ा था। उस समय की

परिस्थितियाँ अस्पृश्य वर्ग के शिक्षा के विरोध में थी। ऐसी स्थितियों के बीच इस महामानव ने जो कार्य किया, वह न केवल अस्पृश्य तथा अतिशूद्रों के लिए सीमित रहा बल्कि इसका लाभ हर भारतीय नागरीक को किसी न किसी रूप में अवश्य मिला है। डॉ. बाबासाहब को बचपन में पढ़ते समय से ही संघर्ष करना पड़ा। बाबासाहब के भीगते हुए पाठशाला में जाना पड़ता। पाठशाला की कक्षा में उन्हें तथा अन्य शूद्र बच्चों के लिए बैठने की भी अलग व्यवस्था होती थी। एक बार कक्षा में वे गणित का उदाहरण स्पष्ट करने के लिए फलक की ओर गये, तो फलक के पीछे से सारे खाने के डिब्बे सवर्णों के बच्चों ने निकाल लिए। इस व्यवहार से स्पष्ट होता है कि स्पृश्य हिंदू चींटीयों को शक्कर खिलाते थे। लेकिन इस बात का दु:ख है कि स्वधर्मियों के स्पर्श को वे अपवित्र मानते थे। उनकी परछाई तक उन्हें अपवित्र लगती थी। ऐसी संघर्षपूर्ण परिस्थितियों के मध्य उन्होंने अपनी लड़ाई शुरु की थी। अपने सम्मान तथा स्वाभिमान की लड़ाई के लिए डॉ. आंबेडकर अपने समाज बांधवों से कहते है कि, ''पढ़ो! संघटित हो जाओ! संघर्ष करो!''[१८१] डॉ. आंबेडकर दलितों को तथा अतिशूद्रों को पढ़ने के लिए, संघटित होने के लिए और उसके बाद संघर्ष के लिए प्रेरित करते हैं। उन्हें शिक्षा का महत्व ज्ञात होने के कारण ही वे शिक्षा को शेरनी का दूध कहकर संबोधित करते हैं। अपने जीवन के अनेक मंजीलों पर उन्हें संघर्ष करके ही जाना पड़ा।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर यह नाम हमारे संमुख आते ही हमें संघर्षपुरुष की याद आती है। डॉ. आंबेडकर को जीवन के हर क्षेत्र में संघर्ष किये बगैर कुछ प्राप्त नहीं हुआ। अपनी उपजीविका चलाने से लेकर छात्रावास तथा पत्र-पत्रिकायें और अन्य सामाजिक कार्य करने तक उन्हें कायम लड़ना पड़ा, संघर्ष करना पड़ा। डॉ. आंबेडकर दूसरी बार लंदन गये थे, तब उनकी आर्थिक स्थिति बहुत बिकट थी। वह अपनी पत्नी से एक पत्र में आर्थिक समस्या को लेकर कहते हैं – मैं खुद खाने के लिए मोहताज हूँ। तुम्हें भेजने के लिए मेरे पास कुछ भी रकम नहीं है। ऐसी कठिन परिस्थितियों में उनकी पत्नी ने भी उनके संघर्ष में बराबर का साथ निभाया। इस दौर में एक ओर म. गांधी राजनीतिक

स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे, तो दूसरी ओर डॉ. आंबेडकर सामाजिक समता एवं स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन-संघर्ष कर रहे थे। भारत के स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन-संघर्ष कर रहे थे। भारत के स्वतंत्रता के पश्चात जून १९५२ में कोलंबिया विश्वविद्यालय ने अपनी २०० वीं वर्षगांठ पर 'डॉक्टर ऑफ लॉज' यह सर्वोच्च उपाधि उन्हें देने की घोषणा की। इस उपाधि को लेने के लिए डॉ. आंबेडकर न्यूयॉर्क पहुँचे। विश्व के पाँच विख्यात व्यक्तिओं को यह उपाधि दी गई। ''भारतीय संविधान के शिल्पकार, मंत्रिमंडल के सदस्य, राज्यसभा के सदस्य, एक प्रमुख भारतीय नागरीक, एक महान समाज सुधारक और मानवीय अधिकारों के लिए संघर्षरत एक पराक्रमी पुरुष।''[१८२] सर्वोच्च उपाधि देते समय कोलंबिया विश्वविद्यालय ने उपर्युक्त शब्दों में उनका गौरव किया था। आज भी डॉ. बाबासाहब आंबेडकर यह नाम हमें संघर्ष और अपने ध्येय के प्रति प्रतिबद्धता के लिए प्रेरित एवं प्रोत्साहित करता है।

निष्कर्षत: हम देख सकते हैं कि डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने भारतीय समाज के हित के लिए और प्रगति के लिए असामान्य प्रयास किये हैं। शायद ऐसा कोई क्षेत्र नहीं होगा जिस विषय में उन्होंने सोचा न होगा। उनके विचार आज न केवल दलित समाज के लिए बल्कि पूरे भारतीय समाज के लिए उपयोगी हैं। उन्होंने शिक्षा पर खर्च बढ़ाने के लिए सरकार से अपील भी की। ताकि शिक्षा से ही देश का विकास संभव है। अगर हमें पूरे भारतीय समाज के इतिहास में से एक ऐसा आदमी चुनना हो जिसने दलितों के लिए शिक्षा और रोजगार का मार्ग प्रशस्त किया, उनके अधिकारों के प्रति उन्हें जागरुक बनाया, दूसरे समुदायों के शोषण से उन्हें मुक्त किया, बुद्धि के क्षेत्र में भी उनकी श्रेष्ठता साबित कर दी, इन तमाम विशेषताओं से युक्त अकेले आंबेडकर ही मिलेंगे। उन्होंने शिक्षा के बारे में म. गांधी, दयानंद सरस्वती या विवेकानंद की तरह शिक्षा शास्त्रीय ढंग से विचार नहीं किया लेकिन उन्हें जहाँ भी अवसर मिला, उन्होंने शिक्षा के बारे में अपनी स्पष्ट बात रखी और इसी प्रक्रिया में उनकी दलित समाज की शिक्षा को लेकर चिंताए भी

प्रकट हुई। भारतीय सविधान में भी उन्होंने ऐसे प्रावधान किए जो दलितों और वंचितों को शिक्षा और रोजगार से जोड़ने में मदद करें।

बाबासाहब ने प्रजातंत्र को जीवन का मूल्य मानकर समाज को बदलने का प्रयत्न किया। उन्होंने समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की उपासना करनेवाला, भारत से जुड़ा हुआ बौद्ध धर्म ग्रहण किया। राजनीतिक प्रजातंत्र को सामाजिक प्रजातंत्र बनाने का सपना चित्रित किया था। उन्होंने हजारों दरारों से भरी भारत रूपी इमारत का पुनरुत्थान करने का प्रयत्न किया। उन्होंने भारत को संविधान रूपी देवालय दिया है। उस मंदिर को संभालने का संपूर्ण उत्तरदायित्व हमारा है।

निष्कर्ष :

उपरोक्त अध्याय के अंतर्गत छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आदि समविचारी समाजसुधारकों के योगदान को प्रस्तुत किया हैं। छत्रपति शिवाजी ने किसान, बहुजनों के लिए कार्य किया। स्वभाषा के शुद्धिकरण को महत्व दिया उसी तरह समाज से अनिष्ठ रुढी, परंपराओं को नष्ट करने के लिए अंधश्रद्धा का विरोध किया। उन्होंने कर प्रणाली, महसुल में परिवर्तन के साथ व्यापार-उद्योग को बढावा देकर आर्थिकता के स्त्रोत निर्माण किए। सर्वधर्म समभाव स्थापन करके धर्म का रक्षण किया इसकारण धर्म उद्धारक के रूप में उन्हें जाना जाता है। लोककलाओं को जतन करके उन्होंने उदात्त सांस्कृतिक नीति का उदाहरण समाज के सम्मुख रखा। जनसंगठन करके लोकराज्य निर्माण किया उसमें अष्टप्रधान मंडल की स्थापना की। छापामार रणीनीति के अपनाव के साथ नौसेना का भी निर्माण उन्होंने किया।

महात्मा फुले ने जीवनभर किसान, दलित और बहुजनों के उद्धार का कार्य किया। उन्होंने स्त्री शिक्षा को महत्व देते हुए उसकी शुरुआत की। विधवा विवाह को प्रोत्साहन के साथ बाल प्रतिबंधक गृह की स्थापना की। अछुतों के लिए पानी की व्यवस्था की। प्राथमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा, प्राथमिक शालाओं को निरीक्षण योजना, पाठ्यक्रम में सुधार, देशी पाठशालाओं की स्थिति तथा शिक्षकों की नियुक्ति तथा वेतन आदि में सुधार

का कार्य भी महात्मा फुले ने किया। ईश्वर के संदर्भ में उन्होंने एकेश्वरवाद का समर्थन किया है। बुद्धि प्रमाण पर बल देते हुए उन्होंने सार्वजनिक सत्यधर्म की संकल्पना हमारे सामने रखी है। किसानों के शोषण का विरोध, मदिरालयों का विरोध, मिल मजदुरों का संगठन, साथ ही पुणे नगरनिगम के सदस्य के रूप में भी उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने 'तृतीय रत्न' (नाटक), पोवाडा शिवाजी राजे भोसले का, किसान का कोडा, गुलामगिरी, सार्वजनिक सत्यधर्म जैसे अनेक ग्रंथों का सृजन भी किया है।

शाहू महाराज ने अनेक क्षेत्रों में अपना योगदान दिया है। तत्काल में ब्राम्हणेत्तर समाज शिक्षा की ओर आकृष्ट हो इसकारण उन्होंने अनिवार्य शिक्षा, मुफ्त छात्रावास, छात्रवृत्तियाँ, फी माफी जैसी अनेक योजनाएँ शुरु की। अस्पृश्योद्धार कार्य को अत्यंत निरपेक्ष बुद्धि से चलाया। कृषि विकास हेतु बांध परियोजना तथा सुधारित कृषि पद्धति का प्रचार-प्रसार करनेवाली कृषि संस्था स्थापित की। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रत्यक्ष न सही अप्रत्यक्ष अपना योगदान दिया। अस्पृश्य जातियों के लिए सरकारी नोकरियों में पचास प्रतिशत आरक्षण प्रणाली की शुरुआत की। अकाल निवारण हेतु सस्ते धान की दुकानें, रोजगार निर्मिती और राधानगरी बांध परियोजना, जैसे कार्य हाथों में लिए। मल्लों के निर्माण में बहुत बडी भूमिका निभाई। कपडा मिल उद्योग, खुशखबर औषधी तेल उद्योग,काष्ठाक उद्योग, मधुमक्षिका पालन उद्योग और बाजार पेठ निर्माण कार्य तथा संगीतकला, चित्रकला, नाट्यकला, सिनेमा आदि क्षेत्रों के विकास में भी राजर्षि शाहू ने सहयोग किया।

अत: शाहू महाराजा के इस प्रजाहित के विशाल कार्य को देखकर अनेक लोग उनके प्रति ऋण व्यक्त करते है। ऋण इसलिए नहीं कि वे एक संस्थानिक राजा है, बल्कि इसलिए कि 'शाहू महाराजा मराठा नहीं, ब्राम्हणेत्तर नहीं, तो वे नवयुग के सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरुष है, वे महाराष्ट्र और हिंदुस्थान के विकास की एक बहुत बडी स्वाभाविक तरंग है।' उनके अमुल्य योगदान को भुलाया नहीं जा सकता।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने भारतीय समाज के हित के लिए प्रगति के लिए असामान्य प्रयत्न किए है। शायद ऐसा कोई क्षेत्र न होगा जिस विषय में उन्होंने सोचा न होगा। उनके विचार आज न केवल दलित समाज के लिए बल्कि पुरे भारतीय समाज के लिए उपयोगी है। उन्होंने सरकार से अपील भी की। ताकि शिक्षा से ही देश उन्नति कर सकता है। उन्होंने दलितों के लिए शिक्षा और रोजगार का मार्ग प्रशस्त किया, बुद्धि के क्षेत्र में भी उनकी श्रेष्ठता थी। भारतीय संविधान में भी उन्होंने ऐसे प्रावधान किए जो दलितों और वंचितों को शिक्षा और रोजगार से जोडने में मदद करें।

बाबासाहेब ने प्रजातंत्र को जीवन का मूल्य मानकर समाज को बदलने का प्रयत्न किया। उन्होंने समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की उपासना करनेवाला, भारत से जुडा हुआ बौद्ध धर्म ग्रहण किया था। उन्होंने हजारों दरारों से भी भरी भारत रूपी इमारत का पुनरुत्थान करने का प्रयत्न किया। उन्होंने भारत को संविधान रूपी देवालय दिया है। आदि महत्वपूर्ण कार्य के कारण उनके कार्य और विचारों को हम महान मानते है।

अत: छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. बाबासाहब आंबेडकर का भारतीय समाज के लिए अनमोल योगदान रहा है।

संदर्भ संकेत :

१. हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, डॉ. शिवकुमार शर्मा, पृ. ३२१

२. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र, पृ. २८३

३. दै. लोकमत, श्रीमंत कोकाटे, दि. १९-२-२०१० पृ. ४

४. छत्रपति शिवाजी, प्रभाकर माचवे, पृ. १२४

५. शिवाजी कोण होता?, गोविंद पानसरे, पृ. १९

६. दै. सकाळ, प्रदीप सोळुंके, दि. १९-२-२००

७. मराठ्यांचा इतिहास, डॉ. साहेबराव गाठाळ, पृ. १३९

८. शिवाजी के समय का महाराष्ट्र, अ. रा. कुलकर्णी, पृ. ९२

९. दै. सकाळ, दि. १९-२-२००९ मुखपृष्ठ

१०. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, वसंत मोरे, पृ. ६०४

११. प्रति इतिहास, चंद्रशेखर, पृ. ३

१२. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ६७

१३. शिवाजी के समय का महाराष्ट्र, अ. रा. कुलकर्णी, पृ. २३

१४. शिवाजी के समय का महाराष्ट्र, अ. रा. कुलकर्णी, पृ. १११

१५. शिवाजी कोण होता?, गोविंद पानसरे, पृ.२

१६. शिवाजी के समय का महाराष्ट्र, अ. रा. कुलकर्णी, पृ. १११

१७. मराठ्यांचा इतिहास, डॉ. सोमनाथ रोडे, पृ. १८७

१८. शिवाजी के समय का महाराष्ट्र, अ. अरा. कुलकर्णी, पृ. १४३

१९. भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशीलन, भगवानदास तिवारी, पृ. ३०७

२०. मराठ्यांचा इतिहास, डॉ. सोमनाथ रोडे, पृ. ६८

२१. वहीं, पृ. ९२

२२. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ६५४

२३. भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशीलन, भगवानदास तिवारी, पृ. ३००

२४. मराठों का नवीन इतिहास प्रथम खंड, गो. ग. देसाई, पृ. २६५

२५. शिवाजी कोण होता?, गोविंद पानसरे, पृ. ५३

२६. शिवाबानी, सं. राजनारायण शर्मा, पृ. १९१

२७. छत्रपति शिवाजी की प्रतिमा : कितनी प्रेरक कितनी सही, डॉ. वसंत मोरे, पृ. १०

२८. वहीं, पृ. ५८९

२९. दै. लोकमत, श्रीमंत कोकाटे, दि. १९-२-२०१० पृ. ४

३०. शिवाजी कोण होता?, गोविंद पानसरे, पृ. ३९

३१. हिंदी नाटक, डॉ. बच्चन सिंह, पृ. ९४

३२. शिवशाहीचा चर्चात्मक इतिहास, वा. सी. बेंद्रे, पृ. १८९

३३. राजवाडे दर्शन, वि. का. राजवाडे, पृ. ११०

३४. अशी होती शिवशाही, अ. रा. कुलकर्णी, पृ. ४४

३५. भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशील, भगवानदास तिवारी, पृ. २५२

३६. शिवशाहीचा चर्चात्मक इतिहास, वा. सी. बेंद्रे, पृ. १९९

३७. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ९०

३८. शिवाजी कोण होता?, गोविंद पानसरे, पृ. ०२

३९. शिवचरित्र, पुरुषोत्तम खेडेकर, पृ. ११५-११६

४०. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ६५४

४१. छत्रपति शिवाजी, श्री पुरुषोत्तम खेडेकर, पृ. ११५-११६

४२. सह्याद्रीला जेव्हा जाग येते, सी. गो. प्रभु, पृ. ३१

४३. भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशील, भगवानदास तिवारी, पृ. ३०४

४४. मराठ्यांचा इतिहास, डॉ. सोमनाथ रोडे, पृ. १७६

४५. भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशील, भगवानदास तिवारी, पृ. २५९

४६. आज्ञापत्र, नरेंद्र मारवाडे, पृ. ७२

४७. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. २०४

४८. प्रतिइतिहास, चंद्रशेखर शिखरे, पृ. ३२

४९. छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा, डॉ. वसंत मोरे, पृ. ३०१

५०. शिवछत्रपति : इतिहास तथा चरित्र खंड, भाग-१, प्रस्तावना

५१. युगपुरुष महात्मा फुले,मुरलीधर जगताप,पृ.३५

५२. वही, पृ. ३५

५३ .वही, पृ. ३६

५४. वही, पृ. ७२

५५. महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे चरित्र, पंढरीनाथ सीताराम पाटील, पृ .८१

५६. भारतीय साहित्याचे निर्माते महात्मा जोतीराव फुले, भास्कर लक्ष्मण भोळे, पृ. १७

५७. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ.मु.ब. शहा, पृ. ३२

५८. खरा महात्मा जोतीबा फुले, अजित पाटील, पृ. ५७

५९. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप, पृ. ८५

६०. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब.शहा, पृ. ७१

६१. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप, पृ. १३३

६२. वही, पृ. १३४

६३. वही, पृ. १३५

६४. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब. शहा, पृ. ७२

६५. वही, पृ. ७३

६६. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप, पृ. १३८

६७. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब. शहा, पृ. ७४

६८. वही, पृ. ७४

६९. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप ,पृ. १४०

७०. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब. शहा, पृ. ४२

७१. वही, पृ. ४८

७२. वही, पृ. ४८

७३. वही, पृ. ४६

७४. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब. शहा, पृ. ७८

७५. वही, पृ. ७८

७६. वही, पृ. ८०

७७. वही, पृ. १०२

७८. खरा महात्मा जोतीबा फुले, अजित पाटील, पृ. ८६-८७

७९. वही, पृ. ७९

८०. भारतीय समाज क्रांति के जनक महात्मा ज्योतिबा फुले, डॉ. मु.ब. शहा, पृ. ३४

८१. युगपुरुष महात्मा फुले, मुरलीधर जगताप, पृ. १५१

८२. वही, पृ. १५४

८३. वही, पृ. १५७

८४. वही, पृ. १६३

८५. वही, पृ. १६६

८६. वही, पृ. १७७

८७. राजर्षी श्रीशाहूमहाराजांची भाषणे, सं. भगवानराव बापूसाहेब जाधव, पृ. ५

८८. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाज क्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १३१

८९. वही, पृ. १३२

९०. वही, पृ. १३२-१३३

९१. वही, पृ. १३४

९२. शाहू – श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. १०६

९३. वही, पृ. १८२

९४. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १३५

९५. वही, पृ. १३५

९६. वही, पृ. १३७

९७. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ६०

९८. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ८२-८३

९९. वही, पृ. ८३

१००. वही, पृ. ८३

१०१. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ६२

१०२. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ८५

१०३.राजर्षी श्रीशाहूमहाराजांची भाषणे, सं. भगवानराव बापूसाहेब जाधव, पृ. प्रस्तावना २१

१०४. राजर्षि शाहू छत्रपति – एव समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ९५

१०५. वही, पृ. १०५

१०६. वही, पृ. १०६

१०७. वही, पृ. १०६

१०८. राजर्षी श्रीशाहूमहाराजांची भाषणे, सं. भगवानराव बापूसाहेब जाधव, पृ. ११०

१०९. शाहू – श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. १४८

११०. वही, पृ. १६७

१११. राजर्षी श्रीशाहूमहाराजांची भाषणे, सं. भगवानराव बापूसाहेब जाधव, प्रस्तावना पृ. ८

११२. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २४

११३. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २६-२७

११४. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १४३

११५. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २१५

११६. शाहू – श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. १३५

११७. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ४५

११८. वही, पृ. ४५

११९. शाहू – श्रीराम ग. पचिंद्रे, पृ. ११५३

१२०. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १८७

१२१. राजर्षिशाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ६८

१२२. पिछडों-दलितों के मुक्तिदाता राजा-शाहू महाराज, फारवर्ड प्रेस

१२३. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ७१

१२४. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ५३

१२५. वही, पृ. ५४

१२६. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ७३-७४

१२७. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ५५

१२८. वही, पृ. २७

१२९. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ७८

१३०. वही, पृ. २७

१३१. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २५

१३२. राजर्षि शाहू छत्रपति–एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २१३

१३३. वही, पृ. २१४

१३४. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १४२

१३५. वही, पृ. १०१

१३६. राजर्षि शाहू छत्रपति–एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १४६

१३७. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. १०७

१३८. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २२६

१३९. वही, पृ. २२६

१४०. राजर्षी शाहू छत्रपति – जीवन व कार्य, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. ७४

१४१. वही, पृ. ८४

१४२. राजर्षि शाहू छत्रपति–एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २२७

१४३. वही, पृ. २२७

१४४. वही, पृ. २२७

१४५. राजर्षी श्रीशाहूमहाराजांची भाषणे, सं. भगवानराव बापूसाहेब जाधव, पृ. १

१४६. वही, प्रस्तावना, पृ. ९

१४७. राजर्षि शाहू छत्रपति – एक समाजक्रांतिकारी राजा, डॉ. जयसिंगराव पवार, पृ. २१५-२१६

१४८. वही, पृ. २१६

१४९. वही, पृ. २१९

१५०. वही, पृ. २२९

१५१. वही, पृ. २३०

१५२. वही, पृ. २३५

१५३. वही, पृ. २३५

१५४. वही, पृ. २३९

१५५. वही, पृ. २४०

१५६. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३२१

१५७. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन चरित, धनंजय कीर, पृ. सं. ७५

१५८. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३२४

१५९. वही, पृ. सं. ३२४

१६०. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. १७७

१६१. वही, पृ. सं. १२१

१६२. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३५५

१६३. वही, पृ. सं. ३७५

१६४. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. २००

१६५. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : चरित्र व विचारधन, विवेक सौताडेकर, पृ. सं. ८१

१६६. वही, पृ. सं. १६५

१६७. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. ३४

१६८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार, डॉ. एस. एम. खंदारे, पृ. सं. १९

१६९. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : चरित्र व विचारधन, विवेक सौताडेकर, पृ. सं. १६७

१७०. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३६५

१७१. वही, पृ. सं. ३६७

१७२. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन चरित, धनंजय कीर, पृ. सं. ४७५

१७३. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. १८

१७४. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : चरित्र व विचारधन, विवेक सौताडेकर, पृ. सं. १४१

१७५. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३६०

१७६. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. १८६

१७७. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ४०१

१७८. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, वसंत मून, पृ. सं. १८७

१७९. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३५९

१८०. डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन चरित, धनंजय कीर, पृ. सं. ३४१

१८१. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : चरित्र व विचारधन, विवेक सौताडेकर, पृ. सं. १५८

१८२. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे रचनावली, खंड-१, संपा. डॉ. सुरेश माहेश्वरी, डॉ. शैलजा माहेश्वरी, पृ. सं. ३४१

पंचम अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव

पंचम अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव

भूमिका

५.१ सामाजिक प्रभाव

५.२ राजनीतिक प्रभाव

५.३ सांस्कृतिक प्रभाव

५.३.१ छत्रपति शिवाजी का सांस्कृतिक प्रभाव

५.३.१.१ देश-विदेश में बनी छत्रपति शिवाजी की मूर्तियाँ

५.३.१.२ छत्रपति शिवाजी पर बनायी गयी फिल्में

५.३.१.३ छत्रपति शिवाजी पर बने नाटक

५.३.१.४ छत्रपति शिवाजी पर बने धारावाहिक

५.३.१.५ छत्रपति शिवाजी महाराज के मंदिर

५.३.१.६ छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम पर सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ

५.३.१.७ छत्रपति शिवाजी के नाम पर नगर / स्थान

५.३.१.८ छत्रपति शिवाजी के नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार

५.३.१.९ छत्रपति शिवाजी के नाम पर सरकारी योजनाएँ

५.३.१.१० छत्रपति शिवाजी के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालय

५.३.२ महात्मा जोतीराव फुले का सांस्कृतिक प्रभाव

५.३.२.१ महात्मा फुले की स्थापित मूर्तियाँ

५.३.२.२ महात्मा जोतीराव फुले पर बनायी गई फिल्में

५.३.२.३ महात्मा फुले के जीवन पर आधारित नाटक

५.३.२.४ महात्मा फुले पर बने धारावाहिक

५.३.२.५ महात्मा फुले के नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ

५.३.२.६ महात्मा फुले के नाम पर स्थापित नगर / स्थान

५.३.२.७ महात्मा फुले के नाम पर दिए जानेवाले पुरस्कार

५.३.२.८ महात्मा फुले के नाम पर बनी योजनाएँ

५.३.२.९ महात्मा फुले के नाम पर लिये जानेवाले साहित्य सम्मेलन

५.३.२.१० महात्मा फुले के नाम पर स्थापित ग्रंथालय / वाचनालय

५.३.३ राजर्षि शाहू महाराज का सांस्कृतिक प्रभाव

५.३.३.१ राजर्षि शाहू महाराज की मूर्तियाँ

५.३.३.२ राजर्षि शाहू महाराज पर बनी फिल्में

५.३.३.३ राजर्षि शाहू महाराज पर बने नाटक

५.३.३.४ राजर्षि शाहू महाराज पर बने धारावाहिक

५.३.३.५ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर बनी सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ

५.३.३.६ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर बनें नगर / स्थान

५.३.३.७ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर दिए जानेवाले पुरस्कार

५.३.३.८ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर बनी योजनाएँ

५.३.३.९ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालय

५.३.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का सांस्कृतिक प्रभाव

५.३.४.१ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की देश-विदेशों में स्थापित मूर्तियाँ

५.३.४.२ डॉ. आंबेडकर पर बनायी गयी फिल्में

५.३.४.३ डॉ. आंबेडकर पर बने नाटक

५.३.४.४ डॉ. आंबेडकर पर बने धारावाहिक

५.३.४.५ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ

५.३.४.६ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित नगर / स्थान

५.३.४.७ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर बने राजनीतिक दल / संघटन

५.३.४.८ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार

५.३.४.९ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर चलाई जानेवाली सरकारी योजनाएँ

५.३.४.१० डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालय

५.४ शैक्षिक प्रभाव :

५.४.१ छत्रपति शिवाजी के नाम पर देशभर में स्थापित विश्वविद्यालय

५.४.२ महात्मा फुले के नाम पर देशभर में स्थापित विश्वविद्यालय

५.४.३ राजर्षि शाहू के नाम पर देशभर में स्थापित विश्वविद्यालय

५.४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर देशभर में स्थापित विश्वविद्यालय

५.४.५ छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू, डॉ. आंबेडकर के नाम पर महाराष्ट्र में स्थापित महाविद्यालय

५.४.६ छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू तथा डॉ. आंबेडकर के नाम पर महाराष्ट्र में स्थापित विद्यालय

५.४.७ छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का विभिन्न पाठ्यक्रमों में समावेश

५.४.८ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर के नाम पर स्थापित अनुसंधान केंद्र

५.५ साहित्यिक प्रभाव

५.५.१ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर पर साहित्यिक प्रभाव

५.५.२ छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू, डॉ. आंबेडकर का साहित्य पर प्रभाव

५.५.२.१ छत्रपति शिवाजी के चरित्र पर आधारित ग्रंथ

५.५.२.२ महात्मा फुले के चरित्र पर आधारित ग्रंथ

५.५.२.३ राजर्षि शाहू के चरित्र पर आधारित ग्रंथ

५.५.२.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के चरित्र पर आधारित ग्रंथ

५.५.३ छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू, डॉ. आंबेडकर पर आधारित शोध प्रबंध

५.५.३.१ छ. शिवाजी महाराज के कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध प्रबंध

५.५.३.२ म. फुले के कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध प्रबंध

५.५.३.३ रा. शाहू के जीवन कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध प्रबंध

५.५.३.४ डॉ. आंबेडकर के जीवन कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध प्रबंध

निष्कर्ष

पंचम अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव

भूमिका :

छत्रपति शिवाजी महाराज, महात्मा जोतीराव फुले, राजर्षि शाहू महाराज और भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर भारतीय समाज के जननायक हैं। ये वे महानायक हैं, जिनके चरित्र समाज के सामने एक आदर्श स्थापित करते हैं। ये ऐसे चरित्र हैं जो समाज को निरंतर प्रेरणा देते आये हैं। छत्रपति शिवाजी का जन्म १९ फरवरी १६३० का है और उनकी मृत्यू ३ अप्रैल १६८० में हुई। केवल ५० वर्षों का जीवन उनके हिस्से में आया परंतु उन्होंने अपने कार्यकर्तृत्व के बल पर 'कितना जिये के बजाय कैसे जिये' का आदर्श लोगों के सामने रखा। सामान्य जन-जातियों के लोगों को साथ में लेकर उनमें विश्वास भरकर मराठों का स्वराज्य निर्माण किया। छत्रपति शिवाजी महाराज ने ४०० साल पहले एक ऐसा मूर्तिमंत इतिहास लोगों के सामने रखा, जिसके लिए लोग आज भी उनके सामने नतमस्तक होते हैं। छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू तथा डॉ. आंबेडकर जैसे महापुरुषों ने भारतीय समाज को काफी प्रभावित किया है। यह प्रभाव निम्नानुसार देखा जा सकता है –

५.१ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर का सामाजिक प्रभाव :

हर साल १९ फरवरी को देशभर में छत्रपति शिवाजी की जयंती बड़े धूमधाम से मनायी जाती है। जयंती के उपलक्ष्य में सप्ताह भर विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। विद्यार्थियों के लिए निबंध, वक्तृत्व, वेशभूषा आदि प्रतियोगिताएँ, व्याख्यानमालाएँ, शाहिरी पोवाडे, नाटक, विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। १९ फरवरी के दिन देशभर में छ. शिवाजी की प्रतिमा का पूजन होता है,

जुलूस निकाला जाता है। इसमें स्त्री-पुरुष भारी संख्या में उपस्थित होते हैं। छत्रपति शिवाजी का जन्म महाराष्ट्र का होने के कारण महाराष्ट्र के घर-घर में जयंती हर्षोल्लास के साथ मनायी जाती है। परंतु महाराष्ट्र के बाहर भारत की राजधानी दिल्ली में, आग्रा में, पानिपत में, बेंगलुरु, म्हैसूर, तंजावर में छत्रपति शिवाजी महाराज की जयंती मनायी जाती है।

महाराष्ट्र में ऐसा एक भी शहर नहीं है, जहाँ छत्रपति शिवाजी की मूर्ति ना लगी हो। हर शहर के मुख्य चौराहे पर ही यह मूर्तियां लगायी गयी हैं ताकि रास्ते से हर आने-जानेवाला उनके सामने नतमस्तक होकर उनसे प्रेरणा पा सके। कई शहरों में सातारा, सोलापुर, पुणे, मुंबई, औरंगाबाद जैसे शहरों में छत्रपति शिवाजी महाराज का इतिहास ताजा करनेवाले स्मारक बनाये गये हैं। महाराष्ट्र के घर-घर में छत्रपति शिवाजी की तस्वीर लगायी जाती है ताकि नयी पीढ़ी के सामने उनका आदर्श बना रहे। छत्रपति शिवाजी महाराष्ट्र की जनता की अस्मिता का विषय बना हुआ है। इसी कारण बड़े-बड़े शहरों से लेकर छोटे-छोटे गांवों में भी उनकी जयंती उल्हास और उमंग के साथ मनायी जाती है।

म. फुले का जन्म ११ अप्रैल १८२७ को हुआ और २८ नवंबर १८९० को उनका देहांत हुआ। छत्रपति शिवाजी के उपरांत २०० वर्षों के बाद म. फुले का जन्म होता है। महापुरुषों का अक्सर परिस्थितियाँ ही जन्म देती है। म. फुले ने बहुजनों-स्त्रियों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये। नारी के शिक्षित होने से ही समाज धीरे-धीरे मानसिक गुलामी से मुक्त हुआ है। आज का समाज भी फुले दंपति के अमूल्य योगदान को समझ रहा है। ११ अप्रैल को म. फुले की जयंती मनायी जाती है। म. फुले की भी कई शहरों में मूर्तियां बनायी गयी हैं। अनेक घरों में उनकी प्रतिमाओं का पूजन होता है। इनकी जयंती पर भी विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

छत्रपति राजर्षि शाहू महाराज का जन्म २६ जून १८७४ को तो ६ मई १९२२ को उनका देहांत हुआ। राजर्षि शाहू के सामने एक ओर छत्रपति शिवाजी तो दूसरी ओर म. जोतिराव फुले का आदर्श था। म. फुले ने शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन की दिशा में

जो क्रांतिकारी कार्य किया है, उसी दिशा में राजर्षि शाहू पहल करते हुए दिखाई देते हैं। राजर्षि शाहू, म. फुले का ही कार्य आगे ले जाते हुए दिखाई देते हैं। म. फुले ने बहुजनों के लिए, स्त्रियों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये परंतु तत्कालीन समाज की आवश्यकता को ध्यान में लेकर हर निम्न जाति के लिए स्वतंत्र स्कूल और छात्रालय निर्माण करने का महत्वपूर्ण निर्णय छत्रपति शाहू ने लिया था। इतना ही नहीं भारत स्वतंत्र होने के बाद संविधान के माध्यम से दलित-वंचितों के लिए आरक्षण दिया गया, लेकिन राजर्षि शाहू महाराज ने उसके बहुत साल पहले १९०२ में ५० प्रतिशत आरक्षण अपने संस्थान के लिए लागू किया था। बहुजन समाज उनके इस ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकता। इसीलिए राजर्षि शाहू महाराज का भी समाज पर इतना प्रभाव है कि अनेक शहरों में उनकी मूर्तियां लगायी गयी हैं। उनकी जयंती के उपलक्ष्य में सार्वजनिक रूप से अनेक उपक्रमों का आयोजन किया जाता है।

सामाजिक सुधार की दिशा में भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेड़कर अगली कड़ी के रूप में हमारे संमुख उपस्थित होते हैं। डॉ. भीमराव आंबेडकर का जन्म १४ अप्रैल १८९१ को हुआ तो ६ दिसंबर १९५६ को उनका महापरिनिर्वाण हुआ। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर भारतीय संविधान के निर्माता हैं। पहले बाबासाहेब को दलितों के नेता या दलितोद्धारक कहा जाता था। लेकिन हरेक समाज, हरेक व्यक्ति के लिए भारतीय संविधान ने जो मूलभूत अधिकार प्रदान किये हैं, उनको देखकर समाज ने उनको राष्ट्रीय नेता के रूप में स्वीकार किया है। १४ अप्रैल को उनकी जयंती अखिल भारतीय स्तर पर मनायी जाती है। दलित समाज के जीवन में 'भीम जयंती' किसी त्योहार से कम नहीं हैं। दलित समाज के हर घर में बाबासाहेब की मूर्ति या प्रतिमा अवश्य मिलेगी। उनकी जयंती के उपलक्ष्य में कई कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। विद्यार्थियों के लिए विभिन्न प्रतियोगिताएँ, व्याख्यानमालाएँ, भीमगीत गायन तो आम बात हो गयी है, आज-कल तो युवा-विद्यार्थी १८ घण्टे अध्ययन कर बाबासाहेब को अपना आदर्श मानकर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। महाराष्ट्र के लोगों पर इन महापुरुषों का सबसे अधिक प्रभाव

परिलक्षित होता है। यहां गाँव या शहर परिवार कहीं का भी हो लोग अपने बच्चों को शिवाजी, जोतीराव, शाहूराव या भीमराव के नाम देते हैं। परिवार जनों की यह अपेक्षा होती है कि हमारे घर में भी कोई शिवाजी, जोतीराव, शाहूराव या भीमराव जन्म लें। उन्हीं से प्रेरणा पाकर अपने और अपने परिवार के नाम को रोशन करें। जैसे मुंबई के रेल स्थान को छत्रपति शिवाजी टर्मिनस नाम दिया गया है। मुंबई के अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे को छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा नाम दिया गया है। महाराष्ट्र के हर शहर में आपको शिवाजी नगर, फुले नगर, आंबेडकर नगर या भीमनगर अवश्य दिखाई देगा।

अनेक गांव, शहर, गली-मोहल्ले को इनके नाम दिये जा रहे हैं। अनेक शहरों के प्रमुख रास्तों को इनके नाम दिये गये हैं। अनेक चौराहे शिवाजी चौक, फुले चौक, शाहू चौक, आंबेडकर चौक नाम से ही जाने जाते हैं। अनेक महत्वपूर्ण प्रवेशद्वार इन्हीं के नाम से पहचाने जाते हैं। अनेक सामाजिक संघटन इन्हीं के नाम से बनाये गये हैं। अनेक सार्वजनिक संस्थान जैसे – छत्रपति शिवाजी स्टेडियम, छत्रपति क्रीडा मंडल, छत्रपति शिवाजी क्रीडा संकुल, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सामाजिक प्रतिष्ठान आदि कई नाम गिनाये जा सकते हैं।

छत्रपति शिवाजी महाराज का जन्म शिवनेरी दुर्ग पर हुआ था। १९ फरवरी को भारी संख्या में शिवनेरी पर लोग जमा हो जाते हैं। शिवाजी महाराज द्वारा स्थापित जितने भी गड़-किले देखने के लिए देश-विदेश से लाखों लोग आते हैं। डॉ. आंबेडकर के नाम से भी कई संस्थान बनाये गये हैं। उनकी जयंती पर या तो लोग उनके जन्मस्थान महु जाते हैं या अपने गांव-शहर में जयंती कार्यक्रम में शामिल होते हैं। दशहरे के दिन नागपुर दीक्षाभूमि में जाते हैं और ६ दिसंबर को चैत्यभूमि (दादर, मुंबई) में लाखों की संख्या में शामिल होकर लोग उनके सामने नतमस्तक होते हैं।

इन चारों महानायकों की कीर्तिपताका सात समंदर पार विदेशों में भी पहुँच चुकी है। विदेश के लोग भी इनसे काफी प्रभावित हुए हैं। छत्रपति शिवाजी महाराज की तलवार लंडन के म्युझियम में रखी गयी है, जिसको देखने के लिए भारतीय तथा विदेशी पर्यटक

लालायित रहते हैं। डॉ. आंबेडकर के लंडन स्थित घर को अंतर्राष्ट्रीय स्मारक घोषित किया गया है। विदेशों में भी छत्रपति शिवाजी और डॉ. आंबेडकर की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स इस संस्था में डॉ. आंबेडकर की मूर्ति स्थापित की गयी है तो ग्रेज इन लंडन में उनका भव्य चित्र लगाया गया है। यह चित्र हेझल मार्गल इस ब्रिटिश महिला ने बनाया है।भारतीय समाज पर इन चारों महापुरुषों का इतना प्रभाव है कि, समाज हर तबके में बच्चों का इनके नाम से नामकरण किया जाता है। हर परिवार में आपको शिवाजी, ज्योतिबा, शाहू या भीमराव जैसे नाम अवश्य मिलेंगे।

५.२ राजनीतिक प्रभाव :

छत्रपति शिवाजी-म. फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर ये वे महापुरुष हैं, जिनसे भारतीय समाज, विशेषकर महाराष्ट्र के लोग अत्याधिक प्रभावित हैं। भारतीय राजनीति भी इनसे बेहद प्रभावित है। भारत के संसद भवन में इन चारों महापुरुषों को स्थान मिल चुका है। महाराष्ट्र में तो कोई ऐसी पार्टी नहीं है जो इनको छोड़कर राजनीति करती है। छ. शिवाजी का नाम लेकर राजनीति करनेवाली अनेक पार्टियां मिलेगी इतना ही नहीं उन्हीं के नाम से अनेक राजनीतिक पार्टियां बनायी गयी हैं। शिवसेना, शिवसंग्राम जैसी पार्टियां तो सत्ता तक पहुँच चुकी है। शिवसेना तो दिल्ली सहित अनेक राज्यों में पहुँच चुकी है। भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस हो, राष्ट्रवादी काँग्रेस हो इन नेताओं को छोड़कर राजनीति नहीं होती।

महाराष्ट्र में म. फुले को आदर्श मानकर समता परिषद की स्थापना की गयी है, जो राजनीतिक-सामाजिक क्षेत्र में कार्यरत है। राजर्षि शाहू के नाम पर सीधे कोई पार्टी नहीं है परंतु हर पार्टी उनकी छवि का फायदा उठाना चाहती है। डॉ. भीमराव आंबेडकर ने तो स्वयं स्वतंत्र मजदूर पार्टी की स्थापना की। बाद में उन्होंने भारतीय रिपब्लिकन पार्टी का निर्माण किया, दुर्भाग्यवश वह एकसंघ नहीं रह पायी। अब उनके नाम पर कई राजनीतिक पार्टियां बनायी गयी हैं। उन्हीं से प्रेरणा पाकर महाराष्ट्र में दलित पँथर का निर्माण हुआ। रिपाइं अब (आठवले, खोब्रागडे, कवाडे) आदि गुटों में विभाजित है।

भारिप-बहुजन महासंघ के नाम से आंबेड़कर के एक पोते ॲड. बाळासाहेब आंबेडकर चलाते हैं तो उनके दूसरे पोते आनंदराज आंबेडकर रिपब्लिकन सेना के प्रमुख हैं। समता सैनिक दल मात्र बाबासाहेब से प्रेरणा लेकर आज भी कार्यरत है। उत्तर भारत में भीम आर्मी के नाम के सामाजिक संघटन ने राजनीति में अपना कदम रखा है।

भारत सरकार ने दिल्ली में जहाँ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का निवास स्थान था, वहीं उनके भव्य आंतर्राष्ट्रीय स्मारक का निर्माण किया है। अरब सागर मुंबई में २१२ मीटर की छ. शिवाजी की भव्य मूर्ति बनाकर समंदर के बीचोबीच एक भव्य स्मारक बनाने की घोषणा महाराष्ट्र सरकार ने की है। इस स्मारक में २१२ मीटर (६९६ फीट) की मूर्ति स्थापित होगी। कोल्हापुर में पहले ही शाहू पॅलेस बनाया जा चुका है। पुणे मे म. फुले का स्मारक बनाया जा रहा है तो मुंबई में इंदु मिल में डॉ. आंबेडकर का भव्य स्मारक बनाया जायेगा। इंदु मिल की १२ एकड भूमि में डॉ. आंबेडकर की दुनिया की सबसे उँची १३७.३ मी. (४५० फीट) मूर्ति होगी। इसे समानता की प्रतिमा (स्टैच्यू ऑफ इक्वेलिटी) कहा जायेगा। यहां आर्ट गॅलरी, बौद्ध स्तूप, पुस्तकालय, सभागार, संग्रहालय, साऊंड शो आदि बातें होंगी।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू महाराज और डॉ. भीमराव आंबेडकर से भारतीय राजनीति काफी प्रभावित दिखाई देती है। आज की वर्तमान राजनीति पर भी इन महानायकों का प्रभाव दिखाई देता है। यह भी कहा जा सकता है कि इन महापुरुषों के बगैर राजनीतिक दल आगे बढ़ ही नहीं सकते।

५.३ सांस्कृतिक प्रभाव :

छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. भीमराव आंबेडकर का भारतीय जनमानस पर गहरा प्रभाव देखा जा सकता है। विशेषकर महाराष्ट्र की जनता इन सबसे अधिक प्रभावित दिखाई देती है। सांस्कृतिक दृष्टि से महाराष्ट्र पहले से संपन्न रहा है। इन महापुरुषों का आदर्श नयी पीढ़ी के सामने रहे इसलिए विभिन्न माध्यमों के आधार पर

इनका चरित्र समाज के सामने लाया गया है। देश-विदेश में बनायी गयी उनकी मूर्तियां, उनके चरित्र पर आधारित फिल्में, नाटक, टी.वी. धारावाहिक, उनके नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ, उनके नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार आदि के आधार पर उनके प्रभाव को देखा जा सकता है –

५.३.१ छत्रपति शिवाजी का सांस्कृतिक प्रभाव :

५.३.१.१ देश-विदेश में बनी छत्रपति शिवाजी की मूतियाँ –

१. महाराष्ट्र के हरेक शहर में छत्रपति शिवाजी की मूर्ति है।

२. संसद भवन, नई दिल्ली, लखनौ विश्वविद्यालय, लखनौ

३. महाराष्ट्र भवन तथा महाराष्ट्र सदन, नई दिल्ली

४. गौंडवाड, बेळगांव (कर्नाटक)

५. बसवकलाण (कर्नाटक), हैदराबाद (तेलंगाना)

६. गोरक्षेप, माऊंट एवरेस्ट (नेपाल)

७. तवांग, अरुणाचल प्रदेश, छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई

८. राष्ट्रीय संरक्षण प्रबोधिनी (NDA), पुणे

९. सॅन होजे, कॅलिफोर्निया, अमेरिका

१०. कॉटरबुन्स, मॉरिशस

११. छिंदवाडा, मध्यप्रदेश,

१२. आग्रा, उत्तरप्रदेश,

१३. बंगलुरु, म्हैसूर (कर्नाटक)

५.३.१.२ छत्रपति शिवाजी पर बनायी गयी फिल्में –

१. बाल शिवाजी (१९८१), २. कल्याणचा खजीना (१९२४), ३. शककर्ता शिवाजी (१९३४), ३. शककर्ता (१९३४), ४. छत्रपति शिवाजी (१९५२),४. छत्रपति शिवाजी (१९५२), ५. शेर शिवाजी (१९५२), ६. सर्जा शिवाजी (१९८४), ७. मी शिवाजीराजे भोसले बोलतोय (२००९), ८. फर्जंद (२०१८), ९. फत्तेशिकस्त

(२०१९), १०. हिरकणी (२०१९), ११. तानाजी : द अनसंग वारियर (२०२०), १२. प्रभो शिवाजी राजा (ॲनिमेशन फिल्म २०१८), सरसेनापति हंबीरराव (२०२१), १३. भालजी पेंढारकर निर्मित गनिमी कावा, मराठा तितुका मेळवावा, महाराणी येसूबाई आदि

५.३.१.३ छत्रपति शिवाजी पर बने नाटक :

१. आग्र्याहून सुटका, २. बेबंदशाही – विष्णु हरी औंधकर (१९२०), ३. जाहले छत्रपति शिवराय – सुदाम तरस (१९२३), ४. तीर्थ शिवराय (संगीत नाटक), ५. रायगडाला जेव्हा जाग येते – वसंत कानेटकर, ६. शिवगर्जना – इंद्रजीत सावंत (२०१२), ७. शिवरायांचे आठवावे रूप – ऋषिकेश परांजपे, ८. शिवाजी अंडरग्राऊंड इन भीमनगर मोहल्ला – राजकुमार तांगडे (२०१३), ९. जाणता राजा (महानाट्य) – बाबासाहेब पुरंदरे १०. जाणता राजा (हिंदी महानाट्य) – बाबासाहेब पुरंदरे, ११. इथे ओशाळला मृत्यु – वसंत कानेटकर, १२. शंभूराजे – सुरेश चिखले, १३. शिवपुत्र संभाजी (महानाट्य) – महेंद्र महाडिक, १४. संगीत छत्रपति संभाजी – आत्माराम पाठारे, १५. मृत्युंजय अमावस्या (महानाट्य) –निलेख भिसे, १६. राजसंन्यास – राम गणेश गडकरी, १७. नरशार्दुल राजा संभाजी – इंद्रजीत सावंत

५.३.१.४ छत्रपति शिवाजी पर बने धारावाहिक :

१. वीर शिवाजी (हिंदी, २०११), कलर्स टी.वी. कुल भाग १८२ २. राजा शिव छत्रपति (मराठी, २०१७), कुल २१५ भागों में स्टार प्रवाह, ३. स्वराज्य रक्षक संभाजी (मराठी, २०१७) झी मराठी कुल ७७२ भाग, ४. स्वराज्य जननी जिजामाता (मरठी, २०१९), सोनी टी.वी. मराठी

५.३.१.५ छत्रपति शिवाजी महाराज के मंदिर :

१. श्रीशैलम (आंध्रप्रदेश), २. सिंधुदुर्ग किला (महाराष्ट्र), ३. पन्हालगड किला (महाराष्ट्र)

५.३.१.६ छत्रपति शिवाजी केनाम पर सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ :

१. आय.एन.एस.शिवाजी, लोणावला (महाराष्ट्र), भारतीय नौदल प्रशिक्षण केंद्र, २. छत्रपति शिवाजी महाराज नाट्यगृह, राजापूर, जि. रत्नागिरी, ३. छत्रपति शिवाजी उद्यान, पुणे, ४. छत्रपति शिवाजी महाराज सभागार, पुणे, ५. राजे शिव छत्रपति बालोद्यान, पिंपरी-चिंचवड, पुणे, ६. शिवसृष्टि, शिव-जिजाऊ उद्यान, पुणे, ७. शिवतीर्थ (मैदान) दादर, मुंबई ८. छत्रपति शिवाजी रुग्णालय, ठाणे, ९. शिवछत्रपति क्रीडानगरी, बालेवाडी, पुणे, १०. शिवछत्रपति क्रीडा संकुल, हिंजवाडी, पुणे, ११. शिवाजी मंदिर (नाट्यगृह), दादर, मुंबई, १२. छत्रपति शिवाजी सैनिक विद्यालय, मुंबई १३. छत्रपति सह. शक्कर कारखाना, इंदापुर, जि. पुणे १४. छत्रपति शिवाजी जलतरणिका, पुणे १५. शिवसागर (कोयना सागर का नाम) १६. शिवाजी क्रीडा संकुल, कोल्हापुर १७. शिवाजी स्टेडियम, कोल्हापुर १८. छत्रपति शिवाजी महाराज म्युझियम, मुंबई १९. शिवाजी स्टेडियम, दिल्ली २०. शिवाजी स्टेडियम, पानिपत (हरियाणा) २१. शिवाजी स्टेडियम, रॉबर्असन् (उत्तर प्रदेश) २२.शिवशाही (महाराष्ट्र राज्य बस सेवा)

५.३.१.७ छत्रपति शिवाजी के नाम पर नगर/स्थान :

१. महाराष्ट्र के हर शहर में शिवाजीनगर है। २. शिवाजीनगर, लुधियाना (पंजाब), ३. शिवाजी नगर, शोरापुर (कर्नाटक) ४. शिवाजी नगर, सिंकदराबाद (आंध्रप्रदेश), ५. शिवाजी नगर, हवेरी (कर्नाटक), ६. शिवाजी पार्क, मुंबई ७. शिवाजी पार्क, दिल्ली ८. शिवाजी पार्क, अलवार (राजस्थान), ९. शिवाजी पार्क मेट्रो स्टेशन, नई दिल्ली, १०. छत्रपति शिवाजी टर्मिनस, मुंबई (रेल्वे स्टेशन) ११. छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई

५.३.१.८ छत्रपति शिवाजी के नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार :

१. महाराष्ट्र सरकार द्वारा शिवछत्रपति क्रीडा पुरस्कार, २. महाराष्ट्र सरकार द्वारा शिवछत्रपति जीवन गौरव पुरस्कार, ३. संभाजी ब्रिगेड द्वारा शिव-शाहू पुरस्कार, ४. महाराष्ट्र सरकार द्वारा छत्रपति साहस पुरस्कार ५. महाराष्ट्र सरकार द्वारा शिवाजी वनश्री

पुरस्कार ६. महाराष्ट्र शाहिरी परिषद द्वारा शाहीर भूषण पुरस्कार ७. महाराष्ट्र शाहिरी परिषद शाहीर गौरव पुरस्कार ८. महाराष्ट्र शाहिरी द्वारा युवा शाहीर पुरस्कार

५.३.१.९ छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम पर सरकारी योजनाएँ :

१. छत्रपति शिवाजी महाराज किसान सम्मान योजना (महाराष्ट्र सरकार)

५.३.१.१० छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालय:

छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम पर स्थापित ग्रंथालय / वाचनालयों की संख्या २५७ है। इन सभी ग्रंथालयों को महाराष्ट्र सरकार की ओर से मान्यता प्रदान की गयी है। हर वर्ष इन ग्रंथालयों को महाराष्ट्र सरकार की ओर से वार्षिक अनुदान दिया जाता है।

५.३.२ म. जोतीराव फुले का सांस्कृतिक प्रभाव :

५.३.२.१ म. फुले की मूर्तियाँ :

१. मुंबई, पुणे, कोल्हापुर, सोलापुर, औरंगाबाद, नांदेड, बीड जैसे अनेक शहरों में म. फुले की मूर्तियाँ स्थापित की गयी हैं।

२. म. फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी (महाराष्ट्र)

३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद तथा सावित्रीबई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे आदि विश्वविद्यालयों में भी म. फुले की मूर्तियाँ लगायी गयी हैं।

५.३.२.२ म. जोतीराव फुले पर बनायी गयी फिल्में :

१. महात्मा फुले – लेखक-निर्देशक आचार्य अत्रे (१९५५) २. 'सत्यशोधक' मराठी फिल्म (अपूर्ण)

५.३.२.३ म. फुले के जीवन पर आधारित नाटक :

१. मी जोतीबा फुले बोलतोय – कुमार आहेर (एकपात्री २. सत्यशोधक – गो. पु. देशपांडे, निर्देशक – अतुल पेठे, ३. मी जोतीराव फुले बोलतोय – सिद्धार्थ मोरे, ४. आसूड - डॉ. सोमनाथ मुटकुळे ५. म. फुले की प्रेरणा से सत्यशोधकीय जलसे

५.३.२.४ म. फुले पर बने धारावाहिक :

१. सावित्रीजोती – सोनी टी.वी. (२०२०)

५.३.२.५ म. फुले के नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थान :

१. म. फुले सामाजिक संस्था, पुणे २. म. फुले समता परिषद, महाराष्ट्र ३. म. फुले नाट्यगृह, येवला, जि. नाशिक ४. म. फुले सांस्कृतिक भवन, पुणे ५. म. फुले सभागार, नाशिक ६. म. फुले सभागार, डॉ. बा.आं.म. वि. औरंगाबाद ७. म. फुले उद्यान, सांगली, नाशिक, वाशिम, कन्नड, पुणे ८. म. फुले सह. शक्कर कारखाना,

५.३.२.६ म. फुले के नाम पर स्थापित नगर/स्थान :

१. फुले नगर, येरवाडा, पुणे २. फुलेनगर, वाई ३. फुले नगर, नाशिक ४. फुले नगर, औरंगाबाद ५. फुले नगर, किनवट, नांदेड ६. फुले नगर, नांदगांव, नाशिक ७. फुले नगर, नागपुर ८. फुले नगर, अमरावती ९. फुले नगर स्मारक, खानवडी (महाराष्ट्र) १०. फुले वाडा, पुणे (महाराष्ट्र)

५.३.२.७ म. फुले के नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार :

१. महाराष्ट्र सरकार द्वारा जलमित्र पुरस्कार २. म. फुले स्मारक ट्रस्ट द्वारा फुले पुरस्कार ३. समता परिषद महाराष्ट्र द्वारा म. फुले पुरस्कार ४. महाराष्ट्र सरकार द्वारा सावित्रीबाई फुले पुरस्कार ५. म. फुले प्रतिभा संशोधन आघाडी द्वारा राजर्षि शाहू पुरस्कार ६. सत्यशोधक जागृति मंच द्वारा सत्यशोधक जीवन गौरव पुरसकार ७. फुले-आंबेडकर-शाहू विचारमंच द्वारा समाजरत्न पुरस्कार ८. सावित्रीबाई फुले स्वच्छ आंगणवाडी पुरस्कार

५.३.२.८ म. फुले के नाम पर बनी योजनाएँ :

१. महाराष्ट्र राज्य म. फुले जल व भूमि संधारण अभियान २. म. फुले जन आरोग्य योजना (महाराष्ट्र सरकार) ३. म. फुले कर्जमाफी योजना (महाराष्ट्र सरकार)

५.३.२.९ म. फुले के नाम पर लिये जानेवाले साहित्य-सम्मेलन :

१. म. फुले प्रबोधन मराठी साहित्य संमेलन २. फुले-आंबेडकरी साहित्य संमेलन ३. फुले-शाहू-आंबेडकर राष्ट्रीय साहित्य संमेलन ४. सावित्रीबाई फुले साहित्य संमेलन

५.३.२.१० म. फुले के नाम पर स्थापित ग्रंथालय / वाचनालय :

१. महाराष्ट्र सरकार द्वारा अनुदान प्राप्त ग्रंथालयों की संख्या ४७१ इन सभी ग्रंथालय / वाचनालयों को महाराष्ट्र सरकार की ओर से वार्षिक अनुदान प्रदान किया जाता है।

५.३.३ राजर्षि शाहू महाराज का सांस्कृतिक प्रभाव :

५.३.३.१ राजर्षि शाहू महाराज की मूर्तियाँ :

१. शाहू मार्केट यार्ड, कोल्हापुर, मिल कॉर्नर, औरंगाबाद ३. अकोट, जि. अकोला ४. कोल्हापूर जिले में सबसे अधिक मूतियाँ ५. छत्रपति शाहूजी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर ६. महाराष्ट्र भवन, संसद भवन, दिल्ली ७. पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

५.३.३.२ राजर्षि शाहू महाराज पर बनी फिल्में :

१. राजर्षि शाहू महाराज – नितीन देसाई

५.३.३.३ राजर्षि शाहू महाराज पर बने नाटक :

५.३.३.४ राजर्षि शाहू महाराज पर बने धारावाहिक :

१. लोकराजा राजर्षि शाहू – ५७ भागों में दूरदर्शन सह्याद्री (२००२)

५.३.३.५ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर बनी सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ :

१. राजर्षि शाहू पॅलेस, कोल्हापूर, २. शाहू अकादमी, पुणे ३. शाहू आर्ट गॅलरी, कोल्हापूर ४. शिव-शाहू-संभाजी उद्यान, पुणे ५. शाहू उद्यान, सातारा ६. राजर्षि शाहू कापड गिरणी (मिल), कोल्हापूर ७. राजर्षि शाहू कुश्ती अखाडा, कोल्हापूर ८. शाहू चित्रमंदिर, कोल्हापूर ९. राजर्षि शाहू केसरी कुश्ती प्रतियोगिता, कोल्हापूर १०. राजर्षि शाहू जलतरणिका, पुणे ११. कोल्हापूर का दूसरा नाम ही शाहू नगरी है १२. राजर्षि शाहू बँक, बीड १३. राजर्षि शाहू बँक, कोल्हापूर १४. शाहू सृष्टि, पिंपरी-चिंचवड, पुणे १५. शैक्षिक क्षेत्र में शाहू पॅटर्न (लातूर) १६. छत्रपति शाहू व्यायाम शाळा, कोल्हापूर १७. शाहू स्मारक, सिद्धार्थनगर, कोल्हापूर १८. शाहू स्मारक, शाहू मिल, कोल्हापूर (काम चल रहा है) १८. राजर्षि शाहू वैदिक विद्यालय, कोल्हापूर १९. राजर्षि छत्रपति

शाहू महाराज रेल टर्मिनस, कोल्हापूर २०. शाहू भवन, बलिया, बिहार २१. राजर्षि शाहू सह. शक्कर कारखाना, कागल जि. कोल्हापूर २२. शाहू टॉकीज, कोल्हापूर २३. सारथी (छत्रपति शाहू महाराज संशोधन, प्रशिक्षण व मानव विकास संस्था, पुणे)

५.३.३.७ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर बनें नगर/स्थान :

१. शाहू नगर, धारावी, मुंबई २. शाहू नगर, बीड ३. शाहू नगर, माहिम, मुंबई ४. शाहू नगर, बेळगांव, कर्नाटक ५. शाहू नगर, करमाळा, जि. सोलापूर ६. शाहू नगर, पिंपरी, पुणे ७. शाहू नगर, नाशिक ८. शाहू नगर, विजापूर (कर्नाटक) ९. शाहू नगर, मालेगाव १०. अमेठी जिले का नाम छत्रपति शाहूजी महाराज नगर किया गया था, जिसे पूर्ववत किया गया है।

५.३.३.८ राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर दिये जानेवाले पुरस्कार :

१. राजर्षि शाहू छत्रपति मेमोरियल ट्रस्ट द्वारा राजर्षि शाहू पुरस्कार २. २६ जून (शाहू महाराज जन्मदिन) 'सामाजिक न्याय दिन' के रुप में मनाया जाता है ३. महाराष्ट्र सरकार की ओर से १० वी १२वी के मेधावी छात्रों को 'राजर्षि शाहू गुणवत्ता पुरस्कार' राज्यस्तरीय प्रथम पुरस्कार – २.५० लाख रुपये

बोर्ड परीक्षा में प्रथम पुरस्कार – १.०० लाख रुपये

विभाग में आनेवाले को प्रथम पुरस्कार ५० हजार रूपये

जिले में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले को २५ हजार रुपये दिये जाते हैं।

४. बंधुता प्रतिष्ठान की ओर से राजर्षि शाहू न्याय पुरस्कार ५. सारथी द्वारा १०० छात्रों को एम.फिल. / पी-एच.डी. के लिए छात्रवृत्ति

५.३.३.९ राजर्षि शाहू के नाम पर बनी योजनाएँ :

१. महाराष्ट्र सरकार द्वारा राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज शिक्षण शुल्क छात्रवृत्ति योजना २. यूपीएससी, एन.डी.ए. और एन.ए. परीक्षा के लिए पूर्वतयारी प्रशिक्षण कार्यक्रम ३. सारथी द्वारा कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम ४. एम.फिल. / पी-एच.डी. शोधछात्रों

को यूसीजी की तरह छात्रवृत्ति योजना ५. आर्मी तथा पुलिस भरती के लिए पूर्व तयारी प्रशिक्षण योजना ६. यू.पी.एस.सी. की तैयारी हेतु दिल्ली में प्रशिक्षण सुविधा योजना

५.३.३.१० राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालय :

राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर स्थापित ग्रंथालय / वाचनालयों की कुल संख्या १५९ हैं। इन सभी ग्रंथालय / वाचनालयों को हर वर्ष महाराष्ट्र सरकार की ओर से वार्षिक अनुदान प्रदान किया जाता है।

५.३.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का सांस्कृतिक प्रभाव :

५.३.४.१ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की देश-विदेशों में स्थापित मूर्तियाँ :

१. बिंदु चौक, कोल्हापुर, २. महाड, जि. रायगड ३. रेल्वे स्टेशन, ठाणे ४. दीक्षाभूमि, नागपूर ५. चैत्यभूमि, दादर, मुंबई ६. जन्मभूमि, महु, मध्यप्रदेश ७. तिरुवनंतपुरम् ८. लेह, लदाख, ९. भडकल गेट,औरंगाबाद १०. देशभर के अनगिनत शहरों-गावों में डॉ. आंबेडकर की मूर्ति स्थापित है। ११. भारतीय संसद, नयी दिल्ली १२. इंदु मिल (डॉ. आंबेडकर स्मारक), मुंबई १३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद सहित अनेक विश्वविद्यालयों में।

५.३.४.२ विदेशों में स्थापित डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की मूर्तियाँ :

१. कोलंबिया विश्वविद्यालय, अमेरिका (१९९१) २. लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, लंडन (१९४४) ३. ओल्वर हॉम्पटन, ग्रेट ब्रिटन (२०००) ४. कोयासन विश्वविद्यालय, जपान (२०१५) ५. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर स्मारक, लंडन (२०१५) ६. यार्क विश्वविद्यालय, टोरांटो, कॅनडा (२०१५) ७. संयुक्त राष्ट्रसंघ, (२०१६) ८. युनिवर्सिटी ऑफ सिडनी, ऑस्ट्रेलिया (२०१६) ९. ब्रँडीज विश्वविद्यालय, बोस्टन, अमेरिका (२०१७) १०. युनिर्वर्सिटी ऑफ मेस्साच्युसेटस् एमहस्ट, अमेरिका ११. डॉ. आंबेडकर हायस्कूल, हंगेरी (२०१६) १२.दक्षिण अफ्रिका (२०१९)

५.३.४.३ डॉ. आंबेडकर पर बनायी गयी फिल्में :

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – निर्देशक डॉ. जब्बार पटेल, मूल चित्रपट अंग्रेजी (२००२) निर्मिति : भारत सरकार का सामाजिक न्याय विभाग तथा महाराष्ट्र सरकार डबिंग : हिंदी, मराठी, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगाली, उड़िया, गुजराती आदि भाषाओं में बजेट : इस प्रकल्प का कुल बजेट था ८९५ करोड रुपये २. युगपुरुष डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर (मराठी) १९९३ ३.डॉ. बी. आर. आंबेडकर (कन्नड) २००५ ४. भीम गर्जना (मराठी) १९९० ५. डॉ. आंबेडकर को समर्पित 'अ जर्नी ऑफ सम्यक बुद्ध' (हिंदी) २०१३

५.३.४.४ बाबासाहेब आंबेडकर पर बने नाटक :

१. मी डॉ. आंबेडकर बोलतोय – सिद्धार्थ मोरे (मराठी) २. प्रज्ञासूर्य - गुलाम ओव्हळ (एकपात्री) (मराठी) ३. युगपुरुष – सिद्यार्थ मोरे (मराठी) ४. चलो बुद्ध की ओर (मराठी) ५. रमाई - सिद्धार्थ मोरे (मराठी) ६. गांधी-आंबेडकर - प्रेमानंद गज्वी (मराठी) ७. वादळ निळ्या क्रांतीचे – रामनाथ चव्हाण (मराठी) ८. डॉ. भीमराव (महानाट्य) किरण गमणे-बागडे (मराठी) ९. राजगृहाची निळी स्पंदने – बोधी फाऊंडेशन (महानाट्य) (मराठी)

५.३.४.५ डॉ. बाबासाहेब आंबेडर पर बने धारावाहिक :

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – स्टार प्रवाह (मराठी) २०१९ २. एक महानायक : डॉ. बी. आर. आंबेडकर (हिंदी) &टी.वी. ३. डॉ. आंबेडकर डाक्यूमेंटरी (हिंदी), डी.डी. नॅशनल ४. संविधान – राज्यसभा टी.वी. (२०१४)

५.३.४.६ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ :

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मेमोरियल पार्क, लखनऊ (उत्तर प्रदेश) २. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्टेडियम, बारामती, जि. पुणे ३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सह. शक्कर

कारखाना, केशेगांव ४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रुग्णालय एवं अनुसंधान केंद्र, नागपुर ५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्मारक, महु (मध्यप्रदेश) ६. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर उद्यान, सावतंवाडी, जि. सिंधुदुर्ग ७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर प्रतिष्ठान, दिल्ली ८. भिमाचा किल्ला, चाळीसगांव, जि. जळगांव ९. महाराष्ट्र सरकार की ओर से विभिन्न जिलों में कुल १०५ छात्रालयों की स्थापना १०. महाराष्ट्र सरकार की ओर से हर जिले में डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय भवन ११. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सांस्कृतिक भवन, पुणे १२. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्मारक मुक्तिभूमि, येवला जि. नाशिक १३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर महापरिनिर्वाण स्मारक, एरोली, मुंबई १४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर महापरिनिर्वाण स्मारक, चैत्यभूमि, दादर, मंबई १५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर धम्मदीक्षा स्मारक, दीक्षाभूमि, नागपूर १६. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर राष्ट्रीय स्मारक, महाड, जि. रायगड १७. डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय स्मारक, दिल्ली १८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्मारक,आंबडवे, जि. रत्नागिरी १९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संकल्प भूमि, वडोदरा, गुजरात २०. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर स्मारक, लंडन २१. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय स्मारक, इंदू मिल, मुंबई २२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्टेडियम, सांगली २३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्टेडियम, नाशिक २४. डॉ. आंबेडकर स्टेडियम, नई दिल्ली २५. डॉ. आंबेडकर स्टेडियम, कर्नाटक २६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हवाई अड्डा, नागपूर २७. डॉ. भीमराव आंबेडकर हवाई अड्डा, मेरठ, उत्तर प्रदेश

५.३.४.७ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित नगर/स्थान :

१. आंबेडकर नगर जिला, उत्तर प्रदेश २. डॉ. आंबेडकर नगर (महू), मध्यप्रदेश ३. आंबेडकर नगर, जोधेपूर (राजस्थान) ४. डॉ. आंबेडकर नगर, दक्षिण दिल्ली ५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नगर, माणगांव, सिंधुदुर्ग ६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर चौक, सिल्लोड, जि. औरंगाबाद ७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नगर, जि. अकोला ८. डॉ. आंबेडकर रोड, ठाणे ९. डॉ. आंबेडकर मार्ग, सांगली १०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर

चौक, जाफ्राबाद, जि. जालना ११. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रास्ता, खडकी पुणे १२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नगर, मालेगांव, जि. वाशिम १३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर चौक, बीड १४. विश्वरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मार्ग, अंबड, जि. जालना १५. डॉ. बी. आर. आंबेडकर मार्ग, न्यू जर्सी, अमेरिका

५.३.४.८ डॉ. आंबेडकर के नाम पर बने राजनीतिक दल/संघटन :

१. आंबेडकर राष्ट्रीय कांग्रेस २. आंबेडकर समाज पार्टी ३. आंबेडकराईट पार्टी ऑफ इंडिया ४. भारतीय आंबेडकरी पार्टी ५. बहुजन समाज पार्टी ६. भीम आर्मी ७. भीम सेना ८. आंबेडकर स्टुडंट असोसिएशन ९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॅशनल स्टुडंट फेडरेशन १०. डॉ. आंबेडकर इंटरनॅशनल मिशन ११. आंबेडकर इंटरनॅशनल सेंटर १२. आंबेडकराईट मूव्हमेंट ऑफ कल्चर अँड लिटरेचर १३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर इंटरॅशनल असो., जपान १४. रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया १५. जयभीम, नेटवर्क, हंगेरी

५.३.४.९ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम दिये जानेवाले पुरस्कार :

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार (१५ लाख) भारत सरकार २. शाहू-फुले-आंबेडकर पुरस्कार (१५ लाख, रजतपत्र) महाराष्ट्र सरकार ३. डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार (१० लाख) भारत सरकार ४. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्मृति पुरस्कार (५ लाख) मारवाडी फाऊंडेशन, नागपुर ५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सामाजिक न्याय पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार) राज्यस्तर : प्रथम- ५ लाख, द्वितीय – ३ लाख, तृतीय – २ लाख, विभागीय स्तर - रू. १ लाख ६.बाबासाहेब आंबेडकर पुरस्कार (२ लाख गुजरात सरकार) ७. डॉ. बी. आर. आंबेडकर रतन पुरस्कार (१ लाख) दिल्ली सरकार ८. डॉ. आंबेडकर सामाजिक सेवा पुरस्कार (१ लाख) राजस्थान सरकार ९. डॉ. आंबेडकर न्याय पुरस्कार (५१ हजार) राजस्थान सरकार १०. डॉ. आंबेडकर शिक्षा पुरस्कार (५० हजार) राजस्थान सरकार ११. डॉ. आंबेडकर महिला कल्याण पुरस्कार (५० हजार) राजस्थान सरकार १२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर उत्कृष्ट ग्रंथालय पुरस्कार,

महाराष्ट्र सरकार अ) ५० हजार ब) ३० हजार क) २० हजार ड) १० हजार १३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समाजभूषण पुरस्कार, महाराष्ट्र सरकार संस्था के लिए – २५ हजार, व्यक्ति के लिए – १५ हजार १४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जीवन गौरव पुरस्कार (१० हजार) आंबेडकराईट मुव्हमेंट ऑफ कल्चर अँड लिटरेचर १५. डॉ. बी. आर. आंबेडकर पुरस्कार, डॉ. बी. आर. आंबेडकर स्पोर्ट फाऊंडेशन १६. डॉ. आंबेडकर आंतराष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी १७. डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, १८. डॉ. आंबेडकर प्रतिष्ठित सेवा पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी १९. डॉ. आंबेडकर फेलोशिप पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी २०. डॉ. आंबेडकर कलाश्री राष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी २१. डॉ. आंबेडकर सेवाश्री राष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी २२. डॉ. आंबेडकर साहित्यश्री राष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी २३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नोबेल पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी २४. डॉ. आंबेडकर चेतना पुरस्कार, चेतना असोसिएशन अॅड डॉ. आंबेडकर फेडरेशन २५. डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय पुरस्कार, चेतना असोसिएशन अॅड डॉ. आंबेडकर फेडरेशन २६. डॉ. आंबेडकर कला एवं साहित्य पुरस्कार, चेतना असोसिएशन अॅड डॉ. आंबेडकर फेडरेशन २७. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पुरस्कार, पुणे महानगर निगम २८. डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार, जीवक वेल्फेअर सोसायटी, नागपूर २९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समाज उत्थान पुरस्कार (१५ हजार) महाराष्ट्र सरकार ३०. कई सामाजिक संस्थाओं द्वारा डॉ. आंबेडकर के नाम पुरस्कार दिये जाते हैं।

५.३.४.१० डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम बनी सरकारी योजनाएँ :

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कृषि स्वालंबन योजना २. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विशेष सामाजिक प्रोत्साहन योजना ३. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्वाधार योजना ४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रोजगार प्रोत्साहन योजना (उत्तर प्रदेश) ५. बार्टी (डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संशोधन व प्रशिक्षण संस्था), पुणे (क) एम.फिल./पी-

एच.डी. के छात्रों के लिए डॉ. आंबेडकर छात्रवृत्ति कुल-१०० (ख) एम.फिल./पी-एच.डी. के छात्रों के लिए म. फुले छात्रवृत्ति कुल – १०० (ग) एम.फिल./पी-एच.डी. के छात्रों के लिए क्रांतिज्योति सावित्रीाबई फुले छात्रवृत्ति-१०० (घ)एम.फिल./पी-एच.डी. के छात्रों के लिए छत्रपति शाहू महाराज छात्रवृत्ति-५० (ङ)एम.फिल./पी-एच.डी. के छात्रों के लिए लोकशाहीर अण्णाभाऊ साठे छात्रवृत्ति-५० (च) एम.फिल./पी-एच.डी. के छात्रों के लिए संत गाडगेबाबा छात्रवृत्ति-५० कुल छात्रवृतियाँ -५००

६. यू.पी.एस.सी./एम.पी.एस.सी./बँक आदि स्पर्धा परीक्षा तैयारी हेतु प्रशिक्षण योजना ७. आर्मी/नेव्ही/पुलिस भरती हेतु निःशुल्क प्रशिक्षण योजना ८. कौशल विकास के लिए निःशुल्क प्रशिक्षण योजना ९. यू.पी.एस.सी. की मुख्य परीक्षा हेतु दिल्ली में मुफ्त प्रशिक्षण योजना

५.३.४.११ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालयः

महाराष्ट्र में कुल स्थापित ग्रंथालयों की संख्या – ३१२ इन सभी ग्रंथालय/वाचनालयों को हर वर्ष महाराष्ट्र सरकार की ओर से सरकारी अनुदान दिया जाता है।

५.४ शैक्षिक प्रभाव :

छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और बाबासाहेब आंबेडकर ये चारों महापुरुष भारतीय समाज के आदर्श हैं। अतः शिक्षा क्षेत्र भी इनसे काफी प्रभावित दिखाई देता है। राष्ट्रीय तथा अनेक राज्यों की प्रांतीय भाषाओं में इन महापुरुषों के चरित्र अथवा उनकी विचारधारा को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है। इसके पीछे इन महापुरुषों आदर्श चरित्र और विचार नयी पीढ़ी तक पहुँचे यही एक उद्देश्य है। इन महापुरुषों के नाम पर देशभर में कई शैक्षिक संस्थाएँ निर्माण की गयी हैं, जो ज्ञानदान का पवित्र कार्य कर रही है। कई विश्वविद्यालयों-स्कूलों का निर्माण किया गया है। सबसे पहले देशभर में स्थापित विश्वविद्यालयों की चर्चा करते हैं।

५.४.१ छत्रपति शिवाजी के नाम पर स्थापित विश्वविद्यालय :

१. शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापूर (महाराष्ट्र)

५.४.२ म. फुले के नाम पर स्थापित विश्वविद्यालय :

१. महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, जि. अहमदनगर (महाराष्ट्र)

५.४.३ राजर्षि शाहू के नाम पर स्थापित विश्वविद्यालय :

१. छत्रपति शाहूजी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

५.४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित विश्वविद्यालय :

१. बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनौ (उत्तर प्रदेश)

२. बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुज्जफरपुर

३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली

४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)

५. डॉ. बी. आर. आंबेडकर विधि विश्वविद्यालय, सोनीपत (हरियाणा)

६. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अर्थशास्त्र विश्वविद्यालय, बेंगलुरु (कर्नाटक)

७. डॉ. बी. आर. आंबेडकर सामाजिक शास्त्र विश्वविद्यालय, महू (मध्यप्रदेश)

८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर तंत्रशिक्षण विश्वविद्यालय, लोणेरे (महाराष्ट्र)

१०. डॉ. भीमराव आंबेडकर विधि विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

११. तमिलनाडू डॉ. आंबेडकर विधि विश्वविद्यालय, चेन्नई (तमिलनाडू)

१२. डॉ. बी. आर. आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा (उत्तर प्रदेश)

१३. डॉ. बी. आर. आंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद (तेलंगाणा)

१४. डॉ. बी. आर. आंबेडकर विश्वविद्यालय, श्रीकाकुलम (आंध्रप्रदेश)

५.४.५ छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा आंबेडकर के नाम पर महाराष्ट्र स्थापित महाविद्यालय :

१. छ. शिवाजी – ६४

२. म. फुले – २१

३. राजर्षि शाहू – १८

४. डॉ. आंबेडकर – १३४

५.४.६ छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा आंबेडकर के नाम पर महाराष्ट्र में स्थापित विद्यालय :

१. छ. शिवाजी – १७१

२. म. फुले – ४६२

३. राजर्षि शाहू – १६६

४. डॉ. आंबेडकर – ५७९

५.४.७ छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर का विभिन्न पाठ्यक्रमों में समावेश :

१. NCERT (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद) के पाठ्यक्रम में

२. CBSE(केंद्रीय माध्यमिक शिक्षण मंडल) के पाठ्यक्रम में

३. महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक शिक्षण मंडल के पाठ्यक्रम में

४. महाविद्यालयों के कला संकाय के पदवी तथा पदव्युत्तर पाठ्यक्रम में

५. विश्वविद्यालय के विभिन्न पदव्युत्तर (P.G. Courses) के पाठ्यक्रम में जैसे – (१) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में 'म. फुले तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विचारधारा' को बी.ए. और एम.ए. के पाठ्यक्रम में रखा गया है। (२) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय ने 'भारतीय संविधान' को सभी

संकायों के विद्यार्थियों के लिए आवश्यक (Compusury) रूप में लागू किया है। (३) बार्टी तथा सावित्रीबाई फुले विश्वविद्यालय, पुणे के संयुक्त तत्वावधान में 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर थॉट ऑन इंडियाज नैशनल सेक्युरिटी' इस विषय पर एक साल का पदव्युत्तर पाठ्यक्रम शुरु किया है।(४) बी.ए. सामाजिक शास्त्र के पाठ्यक्रम में इन महापुरुषों को स्थान दिया गया है। (५) विधि (Law) के सभी पाठ्यक्रम में भारतीय संविधान और डॉ. आंबेडकर को स्थान दिया गया है। (६) MPSC (महाराष्ट्र लोकसेवा आयोग) की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में (७) UPSC (संघ लोकसेवा आयोग) की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में

५.४.८ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर के नाम पर स्थापित शोध केंद्र :

१. छत्रपति शिवाजी अनुसंधान केंद्र, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापूर

२. छत्रपति राजर्षि शाहू अनुसंधान केंद्र, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापूर

३. सावित्रीबाई फुले अनुसंधान केंद्र, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

६. महात्मा फुले अनुसंधान केंद्र, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

७. सावित्रीबाई फुले अनुसंधान केंद्र, यशवंतराव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय, नाशिक

८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय, नाशिक

९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विश्वविद्यालय, नांदेड

१०. महात्मा फुले अनुसंधान केंद्र, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

११. म. फुले प्रतिष्ठान, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

१२. छत्रपति शिवाजी अनुसंधान केंद्र, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

१३. राजर्षि शाहू महाराज अनुसंधान केंद्र, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

१४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

१५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विश्वविद्यालय, नागपूर

१६. छत्रपति शिवाजी महाराज विचारधारा एवं व्यवस्थापन केंद्र, संत गाडगेबाबा अमरावती विश्वविद्यालय, अमरावती

१७. म. फुले अनुसंधान केंद्र, संत गाडगेबाबा अमरावती विश्वविद्यालय, अमरावती

१८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, संत गाडगेबाबा अमरावती विश्वविद्यालय, अमरावती

१९. छत्रपति शिवाजी महाराज अध्ययन केंद्र, कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगांव

२०. म. फुले अध्ययन केंद्र, कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगांव

२१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विचारधारा अध्ययन केंद्र, कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगांव

२२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी महिला विश्वविद्यालय, मुंबई

२३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, दिल्ली

२४. बाबासाहेब डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट (गुजरात)

२५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, पटना विश्वविद्यालय, पटना (बिहार)

२६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, केंद्रीय विश्वविद्यालय, केरल

२७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, तेजपुर विश्वविद्यालय, तेजपुर

२८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, अण्णामलाई विश्वविद्यालय, तमिलनाडू

२९. डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय अध्ययन केंद्र, भारतीय लोकप्रशासन संस्थान, दिल्ली

३०. डॉ. बाबासाहेब डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस (उत्तर प्रदेश)

३१. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (मध्यप्रदेश)

३२. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, अलिगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलिगढ़ (उ.प्र.)

३३. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, पंजाब विश्वविद्यालय, पतियाला (पंजाब)

३४. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, आंध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम (आंध्रप्रदेश)

३५. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, म. गांधी विश्वविद्यालय, केरल

३६. डॉ. आंबेडकरअनुसंधान केंद्र, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

३७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

३८. डॉ. बाबासाहेब अनुसंधान केंद्र, आचार्य नागार्जुन विश्वविद्यालय, गुंटूर (आंध्रप्रदेश)

३९. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धरमशाला (हिमाचल प्रदेश)

४०. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, म्हैसूर विश्वविद्यालय, म्हैसूर (कर्नाटक)

४१. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अर्थशास्त्र अनुंसधान केंद्र, मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास (तमिलनाडू)

४२. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता (पं. बंगाल)

४३. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)

४४. सिम्बॉयसिस द्वारा स्थापित डॉ. आंबेडकर स्मारक, पुणे (महाराष्ट्र)

४५. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद, राष्ट्रीय समाजकार्य तथा समाजविज्ञान संस्थान, भुवनेश्वर (ओरिसा)

४६. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अध्ययन केंद्र, पंजाब विश्वविद्यालय, चंदीगड

४७. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली

४८. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापूर (महाराष्ट्र)

४९. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अर्थशास्त्र अध्ययन केंद्र, पाँडेचरी विश्वविद्यालय, पाँडेचरी

५०. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बरौदा (गुजरात)

५१. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा (उत्तर प्रदेश)

५२. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र,विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (मध्यप्रदेश)

५३. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

५४. फुले-आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई (महाराष्ट्र)

५५. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (मध्यप्रदेश)

५६. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

५७. म. फुले अनुसंधान केंद्र, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

५८. डॉ.आंबेडकर विचारधारा एवं दर्शन स्कूल, डॉ. बी. आर. आंबेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (मध्यप्रदेश)

५९. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्या नगर (गुजरात)

६०. म. जोतीबा फुले अनुसंधान केंद्र, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

६१. म. जोतीबा फुले अध्ययन केंद्र, आचार्य नागार्जुन विश्वविद्यालय, गुंटूर (आंधप्रदेश)

६२. डॉ आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजाती विश्वविद्यालय, अमरकंटक (मध्यप्रदेश)

६३. डॉ आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, शेषाद्रीपुरम कॉलेज, बंगलुरु (कर्नाटक)

६४. डॉ आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, कर्नाटक विश्वविद्यालय,धारवाड (कर्नाटक)

६५. डॉ आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (जम्मू-कश्मीर)

६६. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, विजयंगारा श्रीकृष्णदेवराय विश्वविद्यालय, बल्लारी (कर्नाटक)

६७. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अध्ययन केंद्र, अलीपुरद्वार (पं. बंगाल)

६८. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, कृष्णम्मल महिला महा. कोइंमतूर (तमिलनाडू)

६९. डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय केंद्र, न्यू दिल्ली (भारत)

७०. डॉ आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, कर्नाटक मुक्त विश्व. मानसगंगोत्री (कर्नाटक)

७१. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, अविनाशलिंगम् हायर एज्युकेशन फॉर वूमन, कोईमतूर (तमिलनाडू)

७२. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र,मेंगलोर विश्वविद्यालय, मेंगलोर (कर्नाटक)

७३. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, शेषाद्रीपुरम कॉमर्स कॉलेज, बंगलुरु (कर्नाटक)

७४. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, मद्रास विश्वविद्यालय, (तमिलनाडू)

७५. डॉ आंबेडकर अध्ययन एवं अनुसंधान केंद्र, म्हैसूर (कर्नाटक)

७६. डॉ आंबेडकर अध्ययन एवं अनुसंधान केंद्र, बंगलुरु विश्वविद्यालय, बंगलुरु (कर्नाटक)

७७. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, विद्यांत हिंदू कॉलेज, लखनौ (उत्तर प्रदेश)

७८. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, कर्नाटक महिला विश्वविद्यालय, विजयपुरा (कर्नाटक)

७९. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, काकतिया विश्वविद्यालय, वारांगल (आंध्रप्रदेश)

८०. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, म. गांधी विश्वविद्यालय, कोट्टायम (केरल)

८१. डॉ आंबेडकर अध्ययन केंद्र, गुडविल ख्रिश्चन कॉलेज फॉर वूमन, बंगलुरु (कर्नाटक)

८२. म. फुले अनुसंधान केंद्र, डॉ. बी.आर. आंबेडकर समाजविज्ञान विश्वविद्यालय, महू (मध्यप्रदेश)

८३. डॉ. आंबेडकर अनुसंधान केंद्र, लंडन स्कूल ऑफ एकॉनॉमिक्स, लंडन

८४. डॉ. बी. आर. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क (अमेरिका)

८५. डॉ. आंबेडकर अनुंसधान केंद्र, कोलंबिया लॉ स्कूल, न्यूयॉर्क (अमेरिका)

५.५ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर का साहित्यिक प्रभावः

छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर के साहित्यिक प्रभाव को दो तरह से देखा जा सकता हैं। १) इन महानायकों पर साहित्य का प्रभाव और २) इन महानायकों का साहित्य क्षेत्र पर प्रभाव।

५.५.१ छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर पर साहित्य का प्रभावः

१) छत्रपति शिवाजी महाराज और साहित्य का उतना संबंध नहीं आया है, जितना अन्य चरित्रों का आया है। परंतु छत्रपति शिवाजी महाराज को साहित्यकारों के प्रति अत्यंत सहानुभूति थी। कवि भूषण और कवि कलश उनके समकालीन ही नहीं उनके दरबारी कवि थे। इन कवियों ने छत्रपति शिवाजी तथा संभाजी की शौर्य-गाथाएँ लिखी हैं। कवि कलश तो ना केवल दरबारी कवि थे बल्कि वे संभाजी के अंतरंग मित्र-सखा थे। छत्रपति शिवाजी ने स्वयं किसी साहित्यिक कृति का निर्माण नहीं किया है परंतु कवि भूषण और कवि कलश के प्रभाव से छ. संभाजी ने कई साहित्यिक कृतियों का निर्माण किया है। कवि भूषण छ. शिवाजी पर 'शिवराज भूषण' और 'शिवा बावनी' नामक दो काव्य ग्रंथ लिखें हैंश कवि कलश छ. संभाजी के अंतरंग मित्र थे। उन्हीं से प्रभावित होकर छत्रपति संभाजी ने बुधभूषण, सात सतक, नाखशिख जैसे ग्रंथ लिखें।छत्रपति शिवाजी का इससे अधिक साहित्य से संबंध नहीं आया है।

२) म. फुले तक आते-आते परिस्थितियों में काफी अंतर आता हुआ दिखाई देता है। अंग्रेजों के आने से मिशनरी स्कूलों में शिक्षा की व्यवस्था हो गयी। ऐसी ही एक स्कूल में म. जोतीराव फुले शिक्षा ग्रहण करते हैं। शिक्षा से ही उनकी तीसरी नेत्र खुल जाती है और उनमें एक व्यापक दृष्टिकोण आ जाता है। धर्म के नाम पर किस प्रकार से अधर्म फैला हुआ है। समाज का एक उच्चभ्रू वर्ग कैसे नीति और नियम बनाता है, पुरुषप्रधान व्यवस्था ने महिलाओं को किस प्रकार उनके हक और अधिकार छीनकर उनको किस प्रकार से वंचित रखा गया है। किसान और मजदूर को उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर कैसे लूटा जाता है। निम्नवर्णीय लोगों का कैसे यहाँ की व्यवस्था शोषण करती है। जाति और धर्म के नाम पर समाज को कैसे बाँटा जाता है। इन सारी बातों को म. जोतीराव फुले पहले समझने का यत्न करते हैं और परिवर्तन की दिशा में जीवनभर अपना अमूल्य योगदान देते हैं। साहित्य पढ़ते-पढ़ते साहित्य का महत्व स्वयं जान लेते हैं। परिवर्तन की दिशा में साहित्य का भी एक अनमोल स्थान है, इस बात को समझते हुए स्वयं साहित्य लेखन की दिशा में पहल करते हैं। आधुनिक युग का मराठी साहित्य का पहला कवि म. फुले को ही माना जाता है। छत्रपति शिवाजी महाराज पर पहला पोवाडा (शाहिरी गीत) लिखने का श्रेय भी आप को ही जाता है। म. फुले ने अत्यंत महत्वपूर्ण विषयों को लेकर अपनी लेखनी चलायी है। विभिन्न विषयों पर उनके द्वारा रचित साहित्य संपदा इस प्रकार हैं –

१. तृतीय रत्न (नाटक) १८५५

२. छत्रपति शिवाजीराजे भोसले का पोवाडा (शाहिरी गीत) १५६९

३. विद्याशाखा के ब्राह्मण पंतोजी का पोवाडा (शाहीरी गीत) १८६९

४. ब्राह्मणांचे कसब (वैचारिक ग्रंथ) १८६९

५. गुलामगिरी (उपन्यास) १८७३

६. किसान का कोड़ा (उपन्यास) १८८३

७. इशारा १८८५

८. अखंड (कविता) १८८७

९. सार्वजनिक सत्यधर्म (वैचारिक) १८९१

१०. सत्यशोधक समाज के तीसरे वार्षिक समारोह की रिपोर्ट १८७६

११. पुणे सत्यशोधक समाज की रिपोर्ट १८७७

१२. सत्यशाधक समाज, पुणे (निबंध)१८८९

१३. अकाल के संबंध में पत्रक १८७७

१४. हंटर शिक्षा आयोग के सामने निवेदन १८८२

१५. मराठी ग्रंथगार सभा को पत्र १८८५

१६. सत्सार अंक १ एवं २, १८८५

१७. मामा परमानंद को पत्र १८८६

१८. सत्यशोधक समाज विधि १८८७

१९. म. फुले का मृत्युपत्र (वसीयतनामा) १८८७

३) राजर्षि शाहू महाराज भी छत्रपति शिवाजी महाराज की भांति कलाप्रेमी और साहित्यप्रेमी अवश्य थे परंतु उन्होंने स्वयं किसी साहित्य का निर्माण नहीं किया है। एक राजा होने के नाते उन्होंने अपने कलाप्रेमी और साहित्यप्रेमी व्यक्तित्व का परिचय दिया है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अस्पृश्य समाज को आवाज देने की दृष्टि से 'मूकनायक' पत्र शुरु किया था। उसके केवल तीन अंक निकले। जब वह बंद होने की कगार पर था तो राजर्षि शाहू ने उसके लिए अपना आर्थिक योगदान दिया। ऐसी कई बातें उनके साहित्यप्रेमी होने का प्रमाण है।

४) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर एक ऐसे महापुरुष हैं जिन्होंने अनेक उपाधियाँ प्राप्त की। दुनियाभर के विद्वानों का साहित्य पढ़कर अपनी जिज्ञासा वृत्ति को कायम रखते हुए अपने

ज्ञान में श्रीवृद्धि की। डॉ. आंबेडकर म. फुले जी को अपना गुरु मानते हैं। अत: विचार का क्या मूल्य होता है, वे खुद जानते हैं। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अपना अनमोल विचार देकर ही निम्नवर्णीय समाज को अंधेरे से प्रकाश की ओर चलने का रास्ता दिखाया है। उनके द्वारा प्रतिपादित विचार और ग्रंथ समाज के लिए आज भी दिशादर्शक हैं। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर द्वारा लिखित ग्रंथ इस प्रकार हैं –

१. कास्ट इन इंडिया (१९१७)

२. स्मॉल हौल्डींग इन इंडिया अँड देअर रेमीडिज (१९१८)

३. द प्रॉब्लेम ऑफ रुपी (१९२३)

४. दि इन्हॉल्युशन ऑफ द प्रॉव्हिशनल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया (१९२४)

५. वेटींग ऑफ अव्हिजा (१९३५)

६. ॲनहिलेशन ऑफ कॉस्ट (१९३६)

७. मिस्टर गांधी अँड दी हमॅन्सीपेशन ऑफ दि अनटचेबल्स (१९४५)

८. रानडे, गांधी अँड जिन्ना (१९४३)

९. थॉट्स ऑन पाकिस्तान (१९४५)

१०. व्हॉट काँग्रेस अँड गांधी हॅव इन टू दि अनटचेबल्स (१९४५)

११. महाराष्ट्र एज ए लिंग्विस्टक स्टेट (१९४५)

१२. स्टेटस् अँड मायनारिटीज (१९४७)

१३. हू वेअर दि शूद्राज (१९४६)

१४. हिस्ट्री ऑफ इंडियन करंसी अँड बँकिंग (१९४७)

१५. द अनटचेबल्स : हू वेअर दे अँड व्हाय दि बिकम अनटचेबल्स (१९४८)

१६. थॉट्स ऑन लिंग्विस्टक स्टेट (१९५५)

१७. बुद्ध अँड कार्ल मार्क्स(१९४६)

१८. कम्यूनल डेडलॉक अँड वे टू सॉल्व इट (१९४५)

१९. बुद्ध अँड दि फ्यूचर ऑफ हिज सिलीजन (१९५०)

२०. फ्यूचर ऑफ पार्लियमेन्ट्री डेमोक्रसी (१९५१)

२१. लिंग्विस्टक स्टेटस् नीडस् फॉर चेक्स अँड बॅलेन्सेज (१९५३)

२२. बुद्धिज्म अँड कम्यूनिज्म (१९५६)

२३. दबुद्धा अँड हिज धम्मा (१९५७)

२४. हिंदू वूमन : राइजिंग अँड फॉल

२५. रिडल्स इन हिंदुइजम

२६. अ पिपल अॅट बे

२७. अनटचेबल्स ऑर द चिल्ड्रेन ऑफ इंडियाज गेटो

२८. कॅन आय बी अ हिंदू?

२९. हॉट द ब्राह्मिन्स हॅव डन टू दहिंदूज

३०. एस्से ऑफ भागवत-गीता

३१. इंडिया अँड कम्यूनिज्म

३२. रिव्हॉल्यूशन अँड काऊंटर रिव्होंल्यूयशन इन एन्शन्ट इंडिया

३३. कॉन्स्टिट्यूशन अँड कान्स्टिट्यूशनॅलिज्म

इस प्रकार हम देखते हैं कि, म. फुले साहित्य से इतने प्रभावित है कि वैचारिक ग्रंथों के साथ-साथ कई साहित्यिक रचनाओं को जन्म देते है। दूसरी ओर डॉ. आंबेडकर ऐसे विचारक हैं जो अधिकतर वैचारिक ग्रंथों का ही निर्माण करते हैं। इनके द्वारा लिखित ग्रंथ हमारे समाज की अनमोल निधि है।

५.५.२ छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर का साहित्य पर प्रभाव :

छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ये भारत के महान सुपुत्र हैं। समाज के सामने इनका आदर्श है। वे हमारे प्रेरणा पुरुष हैं। इन महान चरित्रों का प्रभाव समाज के सभी क्षेत्रों पर पड़ा है तो साहित्यिक क्षेत्र इनसे अछूता कैसे रह सकता है? बल्कि यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इन महानायकों के चरित्र

सही मायने में समाज तक पहुँचाने का दायित्व ही लेखकों ने निभाया है। साहित्यकारों ने साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से इन महापुरुषों की न केवल जीवनगाथा हमारे सामने रखी है बल्कि उनकी समृद्ध वैचारिक परंपरा को भी समाज तक पहुँचाने का अनमोल कार्य किया है। इन सभी चरित्रों पर विभिन्न भारतीय तथा पाश्चात्य भाषाओं में भरसक लेखन हुआ है।

५.५.२.१ छत्रपति शिवाजी के चरित्र पर आधारित ग्रंथ :

अ) छत्रपति शिवाजी चरित्र पर आधारित काव्य-ग्रंथ (हिंदी)

१. सिंहगढ़ विजय – बजेंद्र अवस्थी, स्वदेश प्रेम ग्रंथमाला, लखनौ (१९५७)

२. शिवाजी – मा. श. गोवलकर, इलाहबाद (१९७०)

३. वीर केशरी शिवाजी – कुलदीप चतुर्वेदी, ज्योति प्रकाशन, आजमगढ़ (१९६४)

४. भूषण-संग्रह – उदय नारायण तिवारी, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग (१९३९)

५. रक्त के अक्षर – शिवशंकर त्रिपाठी, लोकयन, इलाहबाद (१९६९)

६. शिवराज भूषण काव्य – का. पा. परब, गोवर्धनदास लक्ष्मीदास, मुंबई(१९९८)

७. शिवाजी – श्यामनारायण पांडेय, रामनारायण बेनी माधव, इलाहबाद (१९७०)

८. शिवाजी – प्रभाकर बिहारीलाल भारतीय, समीकरण, राजस्थान (१९७२)

९. शिवाजी – उमाकांत मालवीय, स्मृति प्रकाशन, इलाहबाद (१९७०)

१०. राष्ट्रपुरुष – केदारनाथ मिश्र, नवभारत प्रकाशन, पटना (१९७२)

११. भूषण ग्रंथावली – मिश्र बंधु, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (१९५८)

१२. भूषण मंजूषा – ब्रजकिशोर मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी (१९६३)

१३. भूषण – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी-वितान प्रकाशन, वाराणसी (१९६८)

१४. शिवा बावनी – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी-वितान प्रकाशन, वाराणसी (१९६८)

१५. भूषण ग्रंथावली – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी-वितान प्रकाशन, वाराणसी (१९६०)

१६. रत्नाकर – जगन्नाथ रत्नाकर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (१९६४)

१७. शिवा शौर्य - विजयानंद, सरस्वती प्रकाशन, गाजीपुर (१९८६)

१८. वीर सतसई - वियोगी हरि, साहित्य भवन लि. प्रयाग (१९४४)

१९. छत्रपति – परमानंद शर्मा, राष्ट्रभाषा मंदिर, जालंधर (१९४८)

२०. शिवराज भूषण – राजनारायण शर्मा, हिंदी भवन, इलाहबाद (१९६९)

२१. शिवा-प्रतिभा – रामचंद्र शर्मा, साहित्यसदन, तरीआरा (१९८६)

२२. शिवा बावनी – ओमप्रकाश शास्त्री

२३. अमर भारती जय – शिवसिंह सरोज, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ (१९५६)

२४. शिवा – मदन गोपाल सिंहल, गोपाल प्रिंटींग प्रेस, मेरठ

२५. श्री छत्रपति शिवाजी – प्रभात प्रकाशन, मथुरा (१९५८)

२६. छत्रपति शिवाजी – रामकुमार सिंह, पुस्तक संस्थान, कानपुर (१९७६)

मराठी :

१. इतिहास प्रसिद्ध पुरुषांचे व स्त्रियांचे पोवोडे – ॲक्वर्थ-शाळिग्राम, निर्णयसागर मुद्रणालय (१८९१)

२. शिवगान – श्री. दि. इनामदार, परिमल प्रकाशन, औरंगाबाद (१९८२)

३. राजा शिवाजी – महादेव मोरेश्वर कुंटे (भाग १ ते ६)

४. महाराष्ट्र गाथा – सं. कृष्णाजी कुलकर्णी – प्र. के. अत्रे, भारती प्रकाशन, मुंबई(१९६०)

५. ऐतिहासिक पोवाडे – यशवंत नरसिंह केळकर, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे (१९७९)

६. पोवाडे – पांडूरंग दत्तात्रय खाडिलकर, महाराष्ट्र सोसायटी, अहमदाबाद (१९३५)

७. शिवांजलि – जनार्दन गांधी, सौरभ प्रकाशन, कोल्हापूर (१९३५)

८. शिवशाहीचा अरुणोदय – पुरुषोत्तम वामन गोवाईळकर, यशवंत रामकृष्ण दाते, पुणे (१९३१)

९. मराठमोळा – जयवंत जगताप, जयवंत जगताप, पुणे (१९३९)

१०. श्री शिवाजी महाराजांचा पोवाडा – सं. भास्कराव जाधव, दासराम बुक डेपो, कोल्हापूर (१८९८)

११. शिवराज लीला – जोरवेळकर केशव, ज्ञानदीपक मुद्रणालय, (१९७४)

१२. गीत शिवायन – मधुकर जोशी, जोशी लोखंडे प्रकाशन, पुणे (१९७०)

१३. श्री छत्रपति काव्य – मोरेश्वर विठ्ठल जोशी, कर्नाटक मुद्रणालय, मुंबई(१९३१)

१४. श्री शिवस्मृति – दत्ता टेंभुर्णीकर, सोलापुर (१९७०)

१५. मराठ्यांची संग्राम गीते – दुर्गाप्रसाद तिवारी, गांधारी प्रकाशन, जळगांव (१९९६)

१६. शिवराज भूषण – दु. आ. तिवारी, काल किरण माला, जळगांव (१९३१)

१७. शिव-स्वप्न – प्रफुल्ल दत्त, संध्या प्रकाशन, दादर, (१९६१)

१८. मोगलावर मात – दाभाडे, ग्वालियर, (१९६२)

१९. श्री शिव गीतांजलि – स. ना. दिक्षित, महाराष्ट्र ग्रंथ भांडार, कोल्हापूर (१९७०)

२०. आहुति – न. शा. देशपांडे, शिवाजी विद्यापीठ प्रकाशन, कोल्हापूर (१९७२)

२१. शिवरायांचे चरित्र – रघुनाथ देशपांडे, सुधीर प्रकाशन करकंब, सोलापुर (१९७७)

२२. शिवप्रताप – महादेव नरवणे, शैलजा प्रकाशन, मुंबई(१९९३)

२३. गीत-छत्रपति – कवि प्रताप, श्री दास राय-रत्न प्रकाशन, दुधोंडी, सांगली (१९७४)

२४. म. फुले समग्र वाङ्मय, सं. य. दि. फडके, म. राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, (१९६९)

२५. शूर मर्दाचा पोवाडा – वसंत बापट, साधना प्रकाशन, पुणे

२६. गाथा शिवरायांची – ना. धो. महानोर, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई(१९९९)

२७. श्रीमंत छत्रपतींचे पोवाडे – रामचंद्र नरहर माळी, जैनेंद्र मुद्रणालय, (१९२२)

२८. शिवायन महाकाव्य – नारायण मोरे, सोमेय्या प्रकाशन प्रा. लि. मुंबई(१९७१)

२९. छत्रपति शिवराय - कवि यशवंत, कॉंटिनेंटल प्रकाशन, पुणे (१९६८)

३०. शिवाजी चरित्र – गणेश शास्त्री लेले, नारायणसागर मुद्रणालय, मुंबई(१८७३)

३१. अमरगीत – शाहीर अमर शेख, अभिनव प्रकाशन, जेरबाई(१९६५)

३२. शाहिरांचे छत्रपति शिवाजी महाराज – सं. बाबुराव शेटे, छ. शिवाजी स्मारक समिति, (१९८८)

३३. करवीर दरबार पिराजीराव सरनाईक यांचे पोवाडे – पिराजी सरनाईक (१९८३)

३४. श्री तुकाराम गाथा, सं. नाना महाराज साखरे, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९९०)

३५. राजा शिवाजी (खंडकाव्य), म. म. कुंटे

३६. शिवराय (खंडकाव्य), कवी यशवंत

संस्कृत :

१. पूर्णाल पर्व ग्रहणाख्यान – मूल परमानंद, सं. देवीसिंह चौहान

२. श्री शिवभारत – सं. दिवेकर सदाशिव महादेव

३.शाहेंद्र विलास – सं. श्रीधर व्यंकटेश, तंजावर

जीवनी (हिंदी) :

१. महाराष्ट्र केसरी शिवाजी – ताराचरण अग्निहोत्री, राजपूत अँग्लो ओरियंट प्रेस, आगरा (१९१४)

२. छत्रपति शिवाजी – माधव मुकुल उपाध्याय, हिंदी प्रकाशन, इलाहबाद (१९५८)

३. महाराज छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र – कार्तिक प्रसाद, काशी (१८९४)

४. वीर शिरोमणी छत्रपति शिवाजी महाराज – अवतार कृष्ण कौल, कलकत्ता (१९५२)

५. महाराज शिवाजी – केवलराम चटोपाध्याय, कलकत्ता (१९५२)

६. शिवाजी – काशीनाथ जोगलेकर, सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार (१९७२)

७. शिवाजी की योग्यता – गोपाल तामस्कर, हिंदी मंदिर, प्रयाग (१९४६)

८. छत्रपति शिवाजी – सत्यनारायण तिवारी, आदर्श हिंदी पुस्तकालय, इलाहबाद (१९५७)

९. छत्रपति शिवाजी, कालिकाप्रसाद त्रिपाठी, बालभारती प्रकाशन, इलाहबाद (१९५७)

१०. छत्रपति शिवाजी – गो. प. नेने, राजपाल एँड सन्स, दिल्ली (१९७४)

११. छत्रपति शिवाजी महाराज – मातासेवक पाठक (१९२९)

१२. छत्रपति शिवाजी महाराज – लालजी मिश्र, सन्मति प्रकाशन, मुंबई(१९९२)

१३. छत्रपति शिवाजी – विश्वनाथ राय, हिंदी पुस्तक एजन्सी, वाराणसी

१४. शिवाजी ओ मराठा जाति – शरत कुमार राय, ब्रह्म प्रेस, इटावा

१५. छत्रपति शिवाजी – लाला लजपतराय, देहाती पुस्तक भांडार, दिल्ली

१६. छत्रपति शिवाजी – लक्ष्मीधर वाजपेयी, प्रयाग – (१९७४)

१७. शिवाजी – भीमसेन विद्यालंकार, राजपाल अँड सन्स, दिल्ली (१९६९)

१८. शिवाजी – सत्यकाम विद्यालंकार, शिक्षा भारती, दिल्ली (१९८७)

१९. वीर केसरी शिवाजी – नंदकुमार शर्मा, हिंदी पुस्तक एजन्सी, कलकत्ता (१९८०)

२०. शिवाजी का आशिर्वाद – मनु शर्मा, अध्यापक प्रकाशन, लखनऊ (१९५६)

२१. वीर शिरोमणि शिवाजी – रामगोपाल शर्मा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (१९५९)

२२. शिवाजी – रामवृक्ष बेनीपुरी, हिंदी साहित्य भंडार, लहेरिया, सराय (१९८२)

२३. शिवाजी की योग्यता – श्रीयुत तरुण भारत, मध्यभारत पुस्तक एजंसी, इंदौर

२४. छत्रपति शिवाजी – प्र. ग. सहस्त्रबद्धे, राष्ट्रधर्म पुस्तक, लखनऊ (१९६८)

२५. महाराज शिवाजी – प्र. ग. सहस्त्रबुद्धे, कलकत्ता (१९७०)

२६. वीर शिवाजी – यादव सिंह, देहाती पुस्तक भांडार, दिल्ली

२७. छत्रपति शिवाजी – सुब्रह्मण्यम् मूर्ति, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग (१९९७)

२८. छत्रपति शिवाजी – श्रीनवास हर्डीकर, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली (१९७२)

जीवनी (मराठी) :

१. श्री शिवछत्रपतींचे सप्तप्रकरणात्मक चरित्र – भीमराव कुलकर्णी-मल्हार चिटणीस, सुविचार प्रकाशन मंडल, पुणे (१९६७)

२. छत्रपति शिवाजी महाराज – रं. म. जोशी, क्वालिटी प्रिंटर्स अँड पब्लिशर्स, पुणे

३. वीर शिवाजी –श्रीपाद जोशी, वैदिक शोध संस्थान प्रेस, होशियापूर (१९६१)

४. छत्रपति श्री शिवाजी महाराज, श्री. के. देवधर, ज्योत्सना प्रकाशन, मुंबई(१९९७)

५. छत्रपति शिवराय – शं. व. देवळे, कौस्तुभ प्रकाशन, नागपुर (१९९८)

६. श्री छत्रपति शिवराय चरित्र – गुरुनाथ देशमुख, संस्कृति संवर्धन मंडळ, नांदेड

७. असे घडले छत्रपति – अप्पाहेब पाठक, अरगडे-कुलकर्णी प्रकाशन, पुणे

८. राजा शिव छत्रपति – बाबासाहेब पुरंदरे प्रकाशन, पुणे (१९६५)

९. सभासदाची बखर – कृष्णाज अनंत सभासद

१०. श्री शिवराय – वि. स. वाळिंबे, मोरया प्रकाशन, मुंबई(१९९५)

११. महापुरुष छत्रपति शिवाजी – सय्यद अमीन, सिकंदर सय्यद अमीन, सांगली (१९७४)

१२. स्वराज्य संस्थापक श्री शिवराय – साने गुरुजी, साधना प्रकाशन, पुणे (१९९२)

१३. पुण्यश्लोक छत्रपति शिवाजी – बाळशास्त्री हरदास, यशवंत मुद्रणालय, पुणे (१९६४)

१४. कीर्तिवंत राजा – अरुण हरकारे, सत्यजय प्रकाशन, मुंबई(१९९९)

१५. शककर्ते श्री शिवछत्रपति महाराज – रघुनाथ विनायक हेरवाडकर, व्हीनस प्रकाशन, पुणे (१९६७)

१६. असे होते शिवराय – सौरभ म. कर्डे

१७. छत्रपति शिवाजी महाराज – दि. वि. काळे, पुणे (१९५९)

१८. छत्रपति शिवाजी महाराज – वा. सी. बेंद्रे, पार्श्व पब्लिकेशन, कोल्हापुर (१९७०)

१९. श्री राजा शिवछत्रपति – गजानन भास्कर मेहेंदळे

२०. शककर्ते शिवराय – विजय देशमुख

२१. शिवछत्रपति : समज-अपसमज – आनंद घोरपडे

२२. शिवाजी – सर यदुनाथ सरकार

२३. शिवराय – नादेवराव जाधव

२४. शिवाजी जीवन आणि काळ – गजानन भास्कर मेहेंदळे

२५. छत्रपति श्री शिवाजी महाराज – कृष्णराव अर्जुन केळुस्कर (१९०६)

२६. छत्रपति शिवाजी महाराजांच्या गोष्टी – श्रीकांत गोवंडे

२७. मराठा स्वराज्य संस्थापक श्री शिवाजी महाराज – चिंतामण विनायक वैद्य (१९३२)

२८. पराक्रमापलीकडे शिवराय – प्रशांत लवटे

२९. छत्रपति शिवाजी महाराज : चरित्र आणि शिकवण – शिवप्रसाद मंत्री

३०. शिव चरित्र – पुरुषोत्तम खेडेकर, जिजाई प्रकाशन

३१. विश्ववंद्य छत्रपति शिवाजी महाराज – श्रीमंत कोकाटे, जिजाई प्रकाशन

३२. छत्रपति शिवाजी महाराज (सचित्र), म. फुले इतिहास अकादमी, पुणे

३३. महाराष्ट्राला माहित नसलेले सम्राट शिवाजी - आनंद पाटील

३४. छत्रपति शिवाजी महाराज – नरहर कुरुंदकर, जीवन रहस्य, पुणे (१९८०)

३५. शिवछत्रपतींचे सप्त प्रकरणात्मक चरित्र – मल्हार रामराव चिटणीस,विनस प्रकाशन, पुणे

३६. कुळवाडीभूषण शिवराय – श्रीकांत देशमुख, हर्मिश प्रकाशन

३७. छत्रपति शिवाजी – निनाद बेडेकर, विश्वकर्मा पब्लिकेशन

३८. शिवछत्रपति – शिरीष गोपाळ देशपांडे, सरोजिनी अकादमी, पुणे

जीवनी (चरित्र) अंग्रेजी :

१. Challenging Desting Chatrapati Shivaji – A Biography – मेधा देशमुख भास्करन्

२. शिवाजी दि ग्रेट गोरिल्ला – आर. डी. पळसोकर

३. शिवाजी द ग्रँड रिबेल – डेनिस किंकडे (१९३०)

४. शिवाजी महाराज द ग्रेटेस्ट – हेमंतराजे गायकवाड

५. शिवाजी महाराज द मॅनेजमेंट गुरु - नामदेवराव जाधव

६. शिवाजी दि ग्रेट – बालकृष्णा, कोल्हापूर (१९३२)

७. शिवाजी दि पगमॅटिस्ट – के. एल. महाले, नागपुर (१९६९)

८. शिवाजी – सेतु माधवराव पगडी, मुंबई(१९८३)

९. शिवाजी दि मराठा : हिज लाईफ अँड टाइम – एच. जी. रॉलीन्सन, ऑक्सफोर्ड(१९१५)

१०. शिवाजी अँड हिज टाइम्स, जे. एन. सरकार, कोलकाता (१९६१)

कथासाहित्य (हिंदी)

१. शिवाजी – वीरेंद्र गुप्त, सर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली

२. बंदी शिवा – पन्नालाल इंदुरख्खा, दि नर्मदा बुक डेपो, जबलपुर

३. महाराष्ट्र वीर – बाबू रामप्रताप गुप्त, बर्मन प्रेस, कोलकाता

४. पूना में हलचल – बाबू गंगाप्रसाद गुप्त, काशी (१९०३)

५. वीरों की कहानियाँ – ब्रज बिहारीलाल गौड, आदर्श पुस्तक मंदिर, इलाहबाद

६. हमारे राष्ट्रनिर्माता शिवाजी - ब्रज बिहारीलाल गौंड, आदर्श पुस्तक मंदिर, इलाहबाद

७. सूर्य का रक्त – मनहर चौहान, उमेश प्रकाशन, दिल्ली (१९७१)

८. जय भवानी - मनहर चौहान, उमेश प्रकाशन, दिल्ली (१९७१)

९. अमिट रेखांएँ – अक्षयकुमार जैन

१०. शिवनेर केसरी – यादवचंद्र जैन, रणजीत प्रिंटर्स अँड पब्लिशर्स, दिल्ली (१९५९)

११. महाराष्ट्र उदय – बलभद्रसिंह ठाकुर, कलकत्ता, (१८६६)

१२. आदर्श सम्राट – सुदर्शनसिंह ठाकुर, गीता प्रेस, गोरखपुर (१९९९)

१३. मुगल दरबार के सरदार – ब्रजरत्न दास

१४. साहस कथाएँ – गो. प. नेने, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे (१९६८)

१५. रिहाई - एम. के. पाध्ये, दिल्ली

१६. जय अंबे – श्यामनारायण प्रसाद, आदर्श पुस्तक भांडार, कोलकाता (१९६३)

१७. छत्रपति शिवाजी – प्रभाकर माचवे, ग्रंथ विकास प्रकाशन, जयपुर (१९९८)

१८. शिवाजी विजय – बलदेव मिश्र, जीवन प्रभाव, मुंबई(१९०१

१९. पहला सूरज – भगवतीशरण मिश्र, राजपाल अँड सन्स, दिल्ली (१९८८

२०. मराठा तलवार याने किलेदार की लड़की – पशुपाल वर्मा, साजनिया अँड कंपनी, इंदौर (१९०३

२१. स्वराज्य प्रहरी छ. शिवाजी – विजया, प्रौढ विकास शिक्षा संस्थान, दिल्ली (१९९८)

२२. शिवाजी और रोशनआरा – कालीचरण शर्मा, आर्य बुक सेंटर, बरेली (१९१३)

२३. शिवाजी का आत्मदमन – काशीनाथ शर्मा (१९१२)

२४. दि ग्रेट मराठा – नरेंद्र शर्मा, दिल्ली (१९९६)

२५. छत्रपति शिवाजी – नरेंद्र शर्मा, दिल्ली (१९९६)

२६. सिंहगढ़विजय – चतुरसेन शास्त्री, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ (१९५२)

२७. सह्याद्री की चट्टाने – चतुरसेन शास्त्री, राजपाल अँड सन्स, दिल्ली (१९६५)

२८. वैशाली की नगरवधू – चतुरसेन शास्त्री, राजपाल अँड सन्स, दिल्ली (१९६५)

२९. छत्रपति शिवाजी – सत्यशकुन, सूर्य प्रकाशन, दिल्ली (१९८९)

३०. आदर्श सम्राट – सुदर्शन सिंह, गीता प्रेस, गोरखपुर (१९७८)

३१. छत्रपति शिवाजी – परमेश्वर प्रसाद सिंह, साहित्य केंद्र प्रकाशन, दिल्ली (१९७०)

३२. मराठा सरदार और रौशनआरा – सूर्यनारायण सिंह, लक्ष्मी व्यंकटेश्वर, मुंबई (१९५५)

३३. शिवाजी की नीतिकथाएँ – सिद्धांत शास्त्री सत्यकाम, देहाती पुस्तक भांडार, दिल्ली (१९५१)

कथासाहित्य (मराठी) :

१. राजधर्म - आबासहोब आचरेकर, योगिता प्रकाशन, पुणे (२०००)

२. सूर्यग्रहण – हरिनारायण आपटे, पुणे (१९२७)

३. सूर्योदय – हरिनारायण आपटे

४. उष:काल – हरिनारायण आपटे

५. शहेनशहा – ना. स. इनामदार, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, (१९९८)

६. राजेश्री - ना. स. इनामदार, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, (१९९८)

७. शिवरायांच्या स्फूर्तिकथा – शांताराम कर्णिक, मनोरमा प्रकाशन, दादर, मुंबई (१९९९)

८. १२१ शौर्यकथा - शांताराम कर्णिक, मनोरमा प्रकाशन, दादर, मुंबई (१९९९)

९. रणझुंजार – अनंत कामत, कोल्हापुर (१९७७)

१०. शिवरायांची नवरत्ने – ब. ना. कुंभार, नवमहाराष्ट्र प्रकाशन, पुणे (१९६८)

११. राजस राजकुमार – तारा कुलकर्णी, परिमल प्रकाशन, औरंगाबाद (१९८३)

१२. मोचनगड - रामचंद्र भिकाजी गुंजकर, लक्ष्मीनारायण प्रेस, मुंबई (१९४३)

१३. गड आला पण धीर गेला – बापू गोखले, पद्मजा प्रकाशन, पुणे (१९७३

१४. शिव सूर्यास्त – अशोक महादेव जोशी, इंडिया बुक कंपनी, पुणे (१९८०)

१५. बांधिले तोरण स्वराज्याचे – अशोक महादेव जोशी, इंडिया बुक कंपनी, पुणे (१९८०)

१६. संस्कार कथा – गजानन जोहरी

१७. शिंग फुंकले रणी – अनंत तिबिले – अमोल प्रकाशन, पुणे

१८. जिजाऊ – गो. म. दळवी, पारख प्रकाशन, बेळगांव, (१९९१)

१९. दर्या भवानी - गो. नी. दांडेकर मॅजेस्टिक बुक स्टॉल, मुंबई (१९७४)

२०. हर-हर महादेव - गो. नी. दांडेकर

२१. बया दार उघड - गो. नी. दांडेकर

२२. हे तो श्रींची इच्छा – गो. नी. दांडेकर, मॅजेस्टिक बुक स्टॉल, मुंबई (१९७५)

२३. शिवाज महाराजांच्या नवलकथा – शं. व. देवळे, श्री प्रकाशन पुणे, (१९८०)

२४. लक्ष्यवेध – रणजीत देसाई, पारख प्रकाशन, बेळगांव

२५. पावनखिंड - रणीजीत देसाई, मेहता प्रकाशन, कोल्हापुर (१९८१)

२६. श्रीमान योगी १ – रणजीत देसाई, देशमुख आणि कंपनी

२७. श्रीमान योगी २ – रणजीत देसाई, मेहता प्रकाशन, कोल्हापुर (१९८१)

२८. छत्रपति भाग १ तोरण – मनमोहन नातु, सुरस ग्रंथमाला, सोलापुर (१९७०)

२९. छत्रपति भाग २, प्रतापगड - मनमोहन नातु, सुरस ग्रंथमाला, सोलापुर (१९७०)

३०. छत्रपति भाग ३,आगऱ्याहून सुटका - मनमोहन नातु, सुरस ग्रंथमाला, सोलापुर (१९७०)

३१. छत्रपति भाग ४, सूर्य असा मावळला - मनमोहन नातु, सुरस ग्रंथमाला, सोलापुर (१९७०)

३२. स्वराज्याची स्थापना – माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९२२)

३३. स्वराज्याचा श्रीगणेशा – माधव नाथ कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे

३४. स्वराज्याचा कारभार – माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९२३)

३५. स्वराज्याची दुफळी - माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९२८)

३६. स्वराज्याची घटना - माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९६१)

३७. स्वराज्याचे परिवर्तन - माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९२५)

३८. स्वराज्यावरील संकट - माधव नाथ, वरदा प्रकाशन, पुणे (१९२३)

३९. आग्रा – बाबासाहेब पुरंदरे, महाराज शिवछत्रपति प्रतिष्ठान, सातारा, (१९७२)

४०. पुरंदरच्या बुरुजावरुन – बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे (१९८२)

४१. पुरंदऱ्याची नौबत – बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे (१९७९)

४२. लाल महाल - बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे (१९८०)

४३. शेलारखिंड - बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे (१९७२)

४४. सिंहगड - बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे

४५. राजगड -बाबासाहेब पुरंदरे, पुरंदरे प्रकाशन, पुणे

४६. महासती राणी पुतळा – प्रभाकर बागुल, चंद्रमौळी प्रकाशन, पुणे (१९०९)

४७. रत्नखाण – प्रभाकर बागुल, महल प्रकाशन, मुंबई (१९९९)

४८. साक्ष इतिहासाची – निनाद बेडेकर, पद्मगंधा प्रकाशन, मुंबई (१९९९)

४९. आणि आकाश पेटले – प्रभाकर मराठे, सरीता प्रकाशन, पुणे (१९७८)

५०. धैर्य समुद्र ढवळला – प्रभाकर मराठे, सरीता प्रकाशन, पुणे (१९७८)

५१. पुण्याची पहाट फुटे – प्रभाकर मराठे, सरीता प्रकाशन, पुणे (१९७८)

५२. रथ चालला पुढे - प्रभाकर मराठे, सरीता प्रकाशन, पुणे (१९७८)

५३. मंत्रयुद्ध – प्रकाश यादवाडकर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९९५)

५४. साहसी शिवछत्रपति – ह. भा. वाघोलीकर, जयंत आणि कंपनी, पुणे (१९८१)

५५. जाणता राजा : श्री शिवछत्रपति, रा. वा. शेवडे, अजब पुस्तकालय, कोल्हापुर, (१९८०)

५६. शिलवंत शिवराय – रा. वा. शेवडे, चंद्रकांत शेट्ये प्रकाशन, कोल्हापूर (१९८९)

५७. राजमाता – नलिनी सहस्त्रबुद्धे, श्री विशाखा प्रकाशन, पुणे (१९७४)

५८. शिवचरित्र चिंतनमाला – भाग १-४, साईजी, निर्मल प्रकाशन, पुणे (१९७४)

५९. शिवरायांचा आठवावा प्रताप – तु. ता. सावंत, इंद्रायणी साहित्य, पुणे

६०. छावा – शिवाजी सावंत, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे (१९९९)

६१. शिवशाहीची पहाट - वि. वि. हडप, साधीन साहित्य संस्था, (१९७४)

६२. संभाजी – विश्वास पाटील, मेहता पब्लिशींग हाऊस, पुणे

नाटक :

१. वीरार्य शिवाजी – शंकर शरण गुप्त, लखनऊ (१९७२)

२. छत्रसाल – चतुरसेन शास्त्री, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली (१९६२)

३. उत्सर्ग - ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान, इंडियन प्रेस, प्रा. लि. इलाहबाद (१९५८)

४. शिवनेर केसरी – यादवचंद्र जैन, रणजीत प्रकाशन

५. छत्रपति शिवाजी – अक्षयवट

६. छत्रपति शिवाजी - वेणिराम त्रिपाठी, मनबहाल प्रसाद सर्राफ, वाराणसी (१९६२)

७. क्रांति का देवता शिवाजी – विष्णु दत्त, प्रेम प्रकाशन, दिल्ली (१९६२)

८. छत्रपति शिवाजी – गोविंद दास, गुप्ता अँड कंपनी, दिल्ली

९. शिवाजी का सच्चा स्वरूप – सेठ गोविंद दास, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर

१०. सरजा शिवाजी – गोपालचंद्र देव, विद्याभवन, लाहौर, (१९३७)

११. दुर्ग विजय – प्रशांत बालसदन, नई दिल्ली, (१९५५)

१२. प्रतिशोध – हरिकृष्ण प्रेमी, हिंदी भवन, इलाहबाद (१९५६)

१३. शिवा साधना – हरिकृष्ण प्रेमी, हिंदी भवन, जालंधर (१९६०)

१४. अत्याचारी औरंगजेब – नत्थीलाल बेचैन

१५. वीर शिवाजी – न्यादरसिंह बेचैन, देहाती पुस्तक भांडार, दिल्ली

१६. शिवाजी मरहट्ठा - न्यादरसिंह बेचैन, देहाती पुस्तक भांडार, दिल्ली

१७. छत्रपति शिवाजी – पातीराम भट्ट, साहित्य निकेतन, कानपुर (१९७०)

१८. अफजल वध – मोहनलाल महतो, साहित्य सरोज, इलाहबाद (१९५०)

१९. शिवाजी – मिश्र बंधु, गंगा प्रकाशक, लखनऊ (१९३८)

२०. छत्रपति शिवाजी – वीरेंद्र कुमार मिश्र, रेती प्रकाशन, मुरादाबाद (१९९०)

२१. शिवाजी – श्यामबिहारी मिश्र

२२. शिवाजी - श्यामबिहारी मिश्र, शुकदेवबिहारी मिश्र

२३. सिंहगढ़ विजय – वैजनाथ राय

२४. वीर शिवाजी – बंसीधर लाला, आर्य पुस्तकालय, आगरा

२५. सरजा शिवाजी – रामकुमार वर्मा, साहित्य भवन, इलाहाबाद (१९६०)

२६. शिवाजी – रामकुमार वर्मा, साहित्य भवन, इलाहाबाद (१९६०)

२७. श्री छत्रपति शिवाजी - सुवर्णसिंह वर्मा, काशी (१९४९)

२८. छत्रपति शिवाजी – धर्मदत्त शर्मा, वाराणसी (१९६०)

२९. वीर छत्रपति शिवाजी - राजेंद्र मोहन शर्मा, गौड बुक डेपो, हाथरस (१९७८)

३०. वीर छत्रपति शिवाजी – राधावल्लभ शर्मा, श्याम प्रेस, हाथरस (१९६४)

३१. शिवा बावनी – हरिशंकर रामप्रसाद शर्मा

३२. शिवाजी और भारत – आरती प्रसाद सिंह, गांधी हिंदी प्रकाशन, दिल्ली

३३. अग्निपरीक्षा – चंद्रप्रकाश सिंह, अनुपम प्रकाशन, पटना (१९७२)

३४. पन्हाळगढ़ का किलेदार – कृष्णाजी लक्ष्मण सोमन, काशी (१९२२)

३५. शिवाजी – आत्माराम

नाटक (मराठी) :

१. बाल शिवाजीचे स्वप्न – योगेश्वर अभ्यंकर अरगडे-कुलकर्णी प्रकाशन, पुणे (१९७६)

२. बांधिली शिवरायांनी पूजा – चंद्रकांत अवेरे, त्रिदल प्रकाशन, मुंबई(१९७७)

३. मराठा राजा छत्रपति – आबासाहेब आचरेकर, त्रिदल प्रकाशन, मुंबई(१९७७)

४. आगऱ्याहून सुटका – वि. ह. औंधकर, परचुरे प्रकाशन, मुंबई(१९७२)

५. सरदार बाजी देशपांडे – नारायण बापूजी कानिटकर, शिवाजी छापखाना, पुणे (१८९४)

६. आकाशमिठी – वसंत कानेटकर, परचुरे प्रकाशन, मुंबई(१९८९)

७. तुझा तू वाढवी राजा – वसंत कानेटकर, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई(१९६९)

८. रायगडाला जेव्हा जाग येते - वसंत कानेटकर, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई(१९६९)

९. शिवपावित्र्य – श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकर

१०. गुणोत्कर्ष - वासुदेव वामन खरे, आर्यभूषण मुद्रणालय, मिरज (१९११)

११. तोफेच्या तोंडी – नानासाहेब गोखले, चित्रशाळा प्रकाशन, पुणे (१९५१)

१२. राजियाचा पुत्र अपराधी देखा – द. ग. घोडसे, ह. वि. मोरे प्रकाशन, मुंबई(१९६४)

१३. नाट्यरुप महाराष्ट्र - विठ्ठल दत्तात्रय घाटे, मॅकमिलन आणि कंपनी, मुंबई(१९२९)

१४. स्वराज्य साधन – ब. चि. घारापुरे, श्रीसमर्थ पब्लिशिंग कंपनी, नाशिक (१९२८)

१५. सरनोबत अर्थात शिवाजीचा उजवा हात – र. शा. चव्हाण, मुंबई(१९५१)

१६. तरुण शिवाजी – सी. न. ढवळे

१७. गरुडझेप – रणजीत देसाई - वसंत कानेटकर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९८८)

१८. स्वराज्याच्या सीमेवर – गुलाब नदाफ, फुले मुद्रणालय, इचलकरंजी, (१९८६)

१९. शिवाजीचा सिंह – ग. वा. परचुरे, ढवळे प्रकाशन, मुंबई(१९४८)

२०. दख्खनचा वाघ – भा. श्री. परांजपे, ढवळे प्रकाशन, मुंबई(१९५४)

२१. अजिंक्य छत्रपति – सी. गो. प्रभु, त्रिदल प्रकाशन, मुंबई(१९७५)

२२. नरवीर मालुसरे – विनायक भिलवाडीकर, इंदिरा मुद्रणालय, पुणे (१९०१)

२३. सावळ्या तांडेल – रत्नाकर मतकरी, दिनपुष्प प्रकाशन, मुंबई(१९४८)

२४. शिलवंत शिवराय – रा. वा. शेवडे

२५. पुत्र अमृताचा – सु. ग. शेवडे, धर्म सेवा प्रकाशन, मुंबई(१९९९)

२६. श्री शिवछत्रपति – वासुदेव कृष्ण साठे, विद्याविलास प्रकाशन, कोल्हापुर (१८९६)

२७. गरुडझेप - क्रांतीवीर सावरकर

२८. महाराष्ट्राचा सूर्योदय – पांडूरंग सावंत, त्रिदल प्रकाशन, मुंबई(१९७१)

इतिहास (हिंदी) :

१. शिवाजी के दरबार में अंग्रेजी एत्रची – मौरचरण गोस्वामी, प्रयाग (१९११)

२. भोंसला राजदरबार के हिंदी कवि – कृष्ण दिवाकर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (१९६९)

३. शिवाबावनी – भगीरथ प्रसाद दीक्षित, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ (१९२३)

४. भूषण का वीर काव्य – हरिश्चंद्र दीक्षित, शोध-प्रबंध प्रकाशन, दिल्ली (१९७१)

५. औरंगजेब तथा शिवाजी – सय्यद इकबाल अहमद, शुक्ल प्रकाशन मंदिर, जौनपुर (१९७५)

६. छत्रपति शिवाजी – सेतुमाधवराव पगडी, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे (१९७४)

७. छत्रपति शिवाजी महाराज – लालजी मिश्र, सन्मिति प्रकाशन, मुंबई(१९९२)

८. मराठा प्रभुत्व – बी. एन. लुनिया, अग्रवाल, आगरा (१९९२)

९. मुगल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण – इंद्रविधा वाचस्पति

१०. शिवाजी और उनका युग – सर यदुनाथ सरकार, शिवलाल अग्रवाल ॲड कंपनी, आगरा (१९६४)

११. मराठों का नवीन इतिहास – गोविंद सखाराम सरदेसाई(१९६७)

१२. शिवाजी का राजवंश – सर यदुनाथ सरकार (१९७३)

१३. राजा शिवाजी – गोविंद सखाराम सरदेसाई(१९६२)

१४. इतिहास के स्वर – रामकुमार वर्मा, आत्माराम अँड सन्स, नई दिल्ली (१९६९)

१५. राष्ट्रपुरुष : एक अनुशीलन – आनंद नारायण शर्मा, नवभारत प्रकाशन, पटना (१९७१)

१६. हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यास – श्यामनारायण सिंह, ग्रंथम प्रकाशन, कानपुर (१९७१)

इतिहास (मराठी) :

१. रायगडची जीवनगाथा – शां. वि. आळसकर, महाराष्ट्र राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, मुंबई(१९७४)

२. शिवचरित्र साहित्यरूप – शां. वि. आळसकर, भारत इतिहास संशोधक मंडळ, पुणे (१९५३)

३. शिवक्रांती – ना. रा. कदम, संस्कार सहित्यमाला, मुंबई (१९९९)

४. श्री छत्रपति शिवाजी महाराजांचे चरित्र – पांडूरंग बालाजी कवडे,नाशिक (१९६१)

५. शिवशाहीचा शोध – वसंत कानेटकर, परचुरे प्रकाशन मंदिर, मुंबई (१९९७)

६. छत्रपति शिवाजी महाराज – दि. वि. काळे, पुणे विद्यापीठ, पुणे (१९७१)

७. छत्रपति शिवाजी महाराज – नरहर कुरुंदकर, इंद्रायणी साहित्य, पुणे (१९९१)

८. मराठ्यांचा इतिहास भाग-२ – अ. व. कुलकर्णी, महाराष्ट्र विद्यापीठ ग्रंथ निर्मिति मंडळ, नागपुर (१९८४)

९. मराठ्यांचा इतिहास भाग-३ – अ. रा. कुलकर्णी, ग. ह. खेर, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे (१९८६)

१०. मराठ्यांचा इतिहास – कुलकर्णी-देशपांडे, स्नेहवर्धन पब्लिशिंक हाऊस, पुणे (१९९९)

११. अशी होती शिवशाही – अ. रा. कुलकर्णी, राजहंस प्रकाशन, पुणे (१९९९)

१२. शिवकालीन राजनीति आणि रणनीति – श्रीधर रंगनाथ कुलकर्णी, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई(१९९४)

१३. औरंगजेबाचा संक्षिप्त इतिहास – श. गो. कोलारकर, मंगेश प्रकाशन, नागपुर (१९९९)

१४. मराठ्यांचा इतिहास - श. गो. कोलारकर, मंगेश प्रकाशन, नागपुर (१९९९)

१५. शिवचरित्र : साहित्य खंड-६, गणेश हरि खरे, भारत इतिहास संशोधक मंडळ, पुणे (१९३७)

१६. शिवचरित्र : साहित्य खंड-११, गणेश हरि खरे, भारत इतिहास संशोधक मंडळ, पुणे (१९५७)

१७. शिवचरित्र : साहित्य खंड-१२, गणेश हरि खरे, भारत इतिहास संशोधक मंडळ, पुणे (१९६४)

१८. असा हा महाराष्ट्र - माधव गडगरी, मॅजेसिटक प्रकाशन, मुंबई (१९८८)

१९. सभासद बखर – स. रा. गाडगीळ-नरहर कुरुंदकर, विद्यामंदीर प्रकाशन, पुणे (१९६०)

२०. स्वराज्याची प्रभात – पुरुषोत्तम वामन गोवाईकर, गोवाईकर, सातारा (१९५७)

२१. शोध-शिव समाधीचा – गोपाळ चांदारकर, प्रफुल्लता प्रकाशन, पुणे (१९२०)

२२. आगऱ्याहून सुटका – अजीत जोशी, शिवप्रताप प्रकाशन, पुणे (१९९७)

२३. महाराष्ट्राची धारातीर्थे – महादेव शास्त्री जोशी, केशव वामन जोशी, पुणे (१९७५)

२४. ऐतिहासिक आख्यायिका, मो. व. जोशी, राजवाडे संशोधन मंडळ, पुणे (१९५०)

२५. परकियांच्या दृष्टितून शिवाजी – र. ग. जोशी

२६. शिवकालीन पत्र सार – संग्रह – शं. ना. जोशी, भारत इतिहास संशोधन मंडळ, पुणे (१९३७)

२७. रायगडावरील शिवाजी महाराजांच्या सिंहासनाची व इतर व्यवस्था – स. ना. जोशी, भारत इतिहास संशोधन मंडळ, पुणे (१९४०)

२८. आज्ञापत्र – प्रल्हाद नरहर जोशी, व्हीनस प्रकाशन, पुणे (१९६०)

२९. रायगड - के. शी. ठाकरे, निर्णयसागर प्रेस, मुंबई (१९५१)

३०. महान बंडखोर – भगवंत देशमुख, माहिती व नभोवाणी मंत्रालय, दिल्ली (१९६२)

३१. मराठ्यांची बखर - ग्रँट डफ, निर्णय सागर प्रेस, मुंबई (१९६६)

३२. महाराष्ट्रातील किल्ले – श्रीकांत तापीकर, स्नेहवर्धन पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९९८)

३३. श्री शिवभारत – सं. सदाशिव महादेव दिवेकर

३४. मराठा क्षत्रियांचा सचित्र इतिहास – के. भी. देशमुख, सुबोध ग्रंथमाला, अमरावती (१९२९)

३५. युगप्रवर्तक शिवराज आणि मराठ्यांची शौर्यगाथा – मा. म. देशमुख, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर (१९७२)

३६. मध्ययुगीन भारताचा इतिहास – मा. म. देशमुख, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर (१९७२)

३७. छत्रपति शिवाजी महाराजांची पत्रे – प्र. न. देशपांडे, सुषमा प्रकाशन, धुळे (१९८३)

३८. महाराजांच्या मुलुखात – विजय देशमुख, सौ. प्रज्ञा प्रमोद खानापुरकर, नागपुर (१९७८)

३९. थोरले महाराज – सुरेश देसाई, प्रभात प्रकाशन, मुंबई (१९९५)

४०. शिवचरित्र एक अभ्यास – सेतु माधवराव पगडी, शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापुर (१९७१)

४१. महाराष्ट्र आणि मराठे – सेतु माधवराव पगडी, जोशी आणि लोखंडे प्रकाशन, पुणे (१९६३)

४२. छत्रपति नि त्यांची प्रभावळ – सेतु माधवराव पगडी, परचुरे प्रकाशन, मुंबई(१९७६)

४३. श्रीं ची इच्छा – अ. ज. परब, युनिव्हर्सल पब्लिकेशन, कोल्हापुर (१९९५)

४४. छत्रपति शिवाजी महाराजांचे किल्ले – सुधाकर प्रभु, महाराष्ट्र शासन, मुंबई (१९५५)

४५. मराठ्यांच्या इतिहासातील कर्तबगार स्त्रिया – सुलोचना पाटील, मंगेश प्रकाशन, नागपुर (१९९७)

४६. शिवचरित्र साहित्य खंड १-७ – कृष्णाजी पुरंदरे आणि बळवंत आपटे, भारत इतिहास संशोधन मंडळ, पुणे (१९३८)

४७. राजा जयसिंग आणि शिवाजी महाराज – वा. सी. बेंद्रे, मुंबई मराठी गद्य संग्रहालय, मुंबई (१९६५)

४८. संभाजी राजे भोसले – वा. सी. बेंद्रे, मराठी ग्रंथ संग्रहालय, दादर, मुंबई (१९६६)

४९. छत्रपति शिवाजी महाराज (पूर्वार्ध- उत्तरार्ध) – वा. सी. बेंद्रे, मुंबई(१९७२)

५०. शिवाजीची राजनीति – भास्कर वामन भट, राजवाडे संशोधन मंडळ, धुळे (१९४१)

५१. युगप्रवर्तक शिवाजी महारज – वा. कृ. भावे, य. वा. भावे, पुणे (१९५५)

५२. शिवराज्य व शिवकाल – वासुदेव कृष्ण भावे, नारायण वासुदेव भावे, पुणे (१९५५)

५३. शिवछत्रपतींची न्यायनीति – टी. टी. महाजन, सन पब्लिकेशन्स (१९८८)

५४. श्री शिवछत्रपति - त्र्यंबक शंकर शेजवळकर, मराठा मंदिर प्रतिष्ठान, मुंबई (१९६४)

५५. शंभूराजे – सु. ग. शेवडे, धर्मसेवा प्रकाशन, मुंबई (१९९३)

५६. औरंगजेबाचा इतिहास – सर युदनाथ सरकार, महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृति मंडळ, मुंबई (१९७४)

५७. राजा शिवाजी – गो. स. सरदेसाई, मुंबई (१९५७)

५८. शिवकल्याण राजा – बाळ सामंत, परचुरे प्रकाशन, मुंबई (१९९८)

५९. वेध महामानवाचा – श्रीनिवास सामंत, देशमुख आणि कंपनी पब्लिशर्स, पुणे (१९९६)

६०. स्वराज्याचे छत्रपति आणि अष्टप्रधान मंडळ – अविनाश सोहनी, पूर्वा प्रकाशन, पुणे (१९८८)

६१. महाराष्ट्र कुल वंशावली – विद्या प्रकाश स्वामी, लक्ष्मी व्यंकटेश्वर प्रेस, मुंबई (१९५५)

६२. श्री शिव छत्रपति : एक संस्मरण – कऱ्हाड कला-वाणिज्य महाविद्यालय, कऱ्हाड (१९७५)

इतिहास (अंग्रेजी) :

१. लाइक ऑफ शिवाजी – ए. एस. टकारवाव, ऋषभ प्रकाशन, दिल्ली

२. शिवाजी द प्रॅग्म्यास्टीक – के. एल. महाले, पुणे (१९७४)

३. डिस्कवरी ऑफ इंडिया – पं. जवाहरलाल नेहरु, नाशिक (१९५९)

४. शिवाजी दि ग्रेट – बाल कृष्ण, आर्य बुक डेपो, कोल्हापुर (१९३९)

५. भोसले वंश चरित्र – व्ही. झी. गोपालन, सरस्वती महल, तंजावर (१९५१)

६. द महाराज – स्टीवर्ट गोरडम, केंब्रीज युनिर्वसिटी प्रेस, (१९९८)

७. द राइज अँड फुल मराठा पावर – एस. एल. करंदीकर, पुणे (१९६९)

८. द मराठाज् (१९६०-१८४८) – ए. आर. कुलकर्णी (१९९६)

९. छत्रपति शिवाजी आर्किटेक्ट ऑफ फ्रीडम – एन. एच. कुलकर्णी, छ. शिवाजी स्मारक समिति, दिल्ली

१०. द राइज अँड फॉल ऑफ द मराठा एम्पायर – आर. वी. नाडकर्णी, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई (१९६६)

११. स्टडीज इन मराठा हिस्ट्री – ए. जी. पवार, शिवाजी युनिवर्सिटी, कोल्हापुर (१९७१)

१२. शिवाजी ऑफ द इंडियन नॅशनल मूव्हमेंट – अनिल समर्थ

१३. छत्रपति शिवाजी – सेतु माधवराव पगडी, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे (१९७४)

१४. शिवाजीस विजीट टू औरंगजेब ॲट आगरा – सर यदुनाथ सरकार, इंडियन हिस्ट्री कॉंग्रेस, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री, युनिवर्सिटी ऑफ कोलकाता (१९६३)

१५. शिवाजी अँड हिज टाइम्स, यदुनाथ सरकार, ड्रियेंट लाँगमन लि. मुंबई (१९५२)

१६. इंग्लीश रेकार्डस ऑन शिवाजी – शिवाजी चरित्र कार्यालय, पुणे (१९५२)

५.५.२.२ म. फुले के चरित्र पर आधारीत ग्रंथ :

१) जीवनी (हिंदी) :

१. म. फुले – मु. ब. शहा

२. म. फुले – जियालाल आर्य

२) जीवनी (मराठी) :

१. महात्मा ज्योतिबा फुले – ग. द. माळी

२. महात्मा ज्योतिबा फुले – गिरिजा कीर

३. महात्मा ज्योतिबा फुले – गोविंद तळवलकर

४. महात्मा ज्योतिबा फुले – सुखदेव होळीकर

५. महात्मा ज्योतिबा फुले – धनंजय कीर

६. महात्मा ज्योतिबा फुले – नागेश सुरवसे

७. महात्मा ज्योतिबा फुले – निर्मळ गुरुजी

८. महात्मा ज्योतिबा फुले – पंढरीनाथ सीताराम पाटील

९. महात्मा ज्योतिबा फुले – भास्कर लक्ष्मण भोळे

१०. महात्मा ज्योतिबा फुले – रमेश मुधोळकर

११. महात्मा ज्योतिबा फुले – वसंत शांताराम देसाई

१२. महात्मा फुलेंची जीवनक्रांती – लीला घोडके

१३. म. फुले व्यक्तित्व आणि विचार – गं. बा. सरदार

१४. युगपुरुष म. जोतीराव फुले – बा. ग. पवार

कथासाहित्य (मराठी) :

१. गोष्टीरूप म. फुले – शंकर कऱ्हाडे

२. महात्मा – डॉ. रवींद्र ठाकुर (मराठी)

३. म. फुले यांच्या अप्रकाशित आठवणी – श्री गजानन बुक डेपो

४. युगार्त (जीवनीपरक उपन्यास) – भास्कर लक्ष्मण भोळे

५. महात्मा – डॉ. रवींद्र कमार (इंग्रजी)

कविता :

१. क्रांतिजागर : म. फुले यांची समग्र कविता – डॉ. रवींद्र ठाकूर

२. म. फुले यांची कविता : एक विचार मंथन – शशिशेखर शिंदे

नाटक :

१. आसूड - डॉ. सोमनाथ मुटकुले

२. क्रांतिबा फुले – रतनलाल सोनाग्रा (हिंदी)

३. क्रांतिबा फुले – अनु. फ. मु. शिंदे

४. म. जोतीबा फुले – शंकरराव (लोकनाट्य)

५. मी जोतीबा फुले बोलतोय – कुमार आहेर (एकपात्री)

६. सत्यशोधक – गो. पु. देशपांडे

वैचारिक ग्रंथ :

१. म. जोतीबा फुले आणि सावित्रीबाई फुले – अनुराधा गद्रे

२. म. जोतीबा फुले यांचा सार्वजनिक सत्यधर्म - गजानन बुक डेपो

३. म. जोतीबा फुले आणि त्यांचे कार्य - विठ्ठलराव भागवत

४. म. जोतीबा फुले – सूर्या अध्यापन साहित्य

५. म. फुले यांचे १०१ मौलिक विचार – नागनाथ कोतापल्ले

६. म. जोतीबा फुले : जीवन आणि कार्य - दिलीप कढीकर

७. म. जोतीबा फुले यांचे शेतीविषयक विचार – नूतन विभूते, मनोविकास, प्रकाशन

८. म. जोतीबा फुले – वसा आणि वारसा – भास्कर लक्ष्मण भोळे

९. म. जोतीबा फुले सार्वजनिक सत्यधर्म - विश्वनाथ शिंदे

१०. म. फुले आणि शेतकरी चळवळ – सुगावा प्रकाशन

११. म. फुले आणि सत्यशोधक – मा. प. बागडे

१२. म. फुले जीवन आणि कार्य - भारतीय विचार साधना प्रकाशन, पुणे

१३. म. फुले टीका आणि टीकाकार – नीलकंठ बोराडे

१४. म. फुले दुर्मिळ वाङ्मय आणि समकालीन चरित्रे – मा. गो. माळी

१५. म. फुले आणि शिक्षण – आ. ह. साळुंके

१६. म. फुले यांचा शोध व बोध – रा. ना. चव्हाण

१७. बहुजन संस्कृतिचे जनक म. जोतीराव फुले – प्रल्हाद लुलेकर

१८. म. फुले यांचे निवडक विचार – यशवंतराव चव्हाण प्रतिष्ठान, मुंबई

१९. म. फुले यांचे शैक्षणिक कार्य - तानाजी ठोंबरे

२०. जोतीपर्व - डॉ. नागनाथ कोतापल्ले

२१. म. फुले यांच्या कार्यात ब्राह्मणांचा सहभाग – विद्याकर वासुदेव भिडे

२२. म. फुले व सांस्कृतिक संघर्ष - भारत पाटणकर

२३. म. फुले व्यक्तित्व आणि विचार – गं. बा. सरदार

२४. म. फुले समग्र वाङ्मय – धनंजय कीर, म. राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, मुंबई

२५. म. फुले सामाजिक क्रांतीचे अग्रदूत – दत्ता जी. कुलकर्णी

२६. युगपुरुष म. जोतीराव फुले – बा. ग. पवार

२७. म. फुले व राजर्षि शाहू : वैचारिक प्रवास – हरिभाऊ पगारे

२८. ज्योति निबंध – लक्ष्मणशास्त्री जोशी

२९. म. फुले समग्र वाङ्मय – सं. य. दि. फडके, म. राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, मुंबई

अनूदित ग्रंथ (हिंदी) :

१. म. फुले – मुरलीधर जगताप

२. म. फुले : व्यक्ति और विचार, सं. हरी नरके

५.५.२.३ राजर्षि शाहू महाराज के चरित्र पर आधारित ग्रंथ :

१) जीवनी :

१. राजर्षि छत्रपति शाहू – माधवराव बागल

२. राजर्षि छत्रपति शाहू – पी. बी. साळुंखे

३. राजर्षि शाहू महाराज - धनंजय कीर

४. छत्रपति शाहू महाराज – कृ. गो. सूर्यवंशी

५. राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज – अप्पासाहेब पवार

६. राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज – जयसिंगराव पवार

७. राजर्षि शाहू छत्रपति - प्रा. डॉ. रमेश जाधव

८. कोल्हापूरचे शाहू छत्रपति : चरित्र व कार्य - एकनाथ केशव घोरपडे

९. लोकराजा राजर्षि शाहू महाराज – सुभाष वैरागकर

१०. छत्रपति शाहू महाराज – बी. ए. लठठे (अंग्रेजी)

२) कथा साहित्य

१. शाहू – श्रीराम ग. पचिंद्रे (मराठी)

२. प्रत्यंचा – संजीव (हिंदी)

३) नाटक/कविता :

१. शाहू महाराज – वृषाली खाडे (कविता)

४) वैचारिक ग्रंथ :

१. राजर्षि शाहू छत्रपति : अ सोशली रिव्होल्युशनरी किंग – सं. डॉ. जयसिंगराव पवार, डॉ. अरुण साधू

२. राजर्षी शाहू छत्रपति : जीवन व शिक्षण कार्य - प्राचार्य रा. तु. भगत

३. राजर्षि शाहू महाराज यांची सामाजिक विचारधारा व कार्य - रा. ना. चव्हाण

४. राजर्षि शाहू कार्य व काळ – रा. ना. चव्हाण

५. समाजक्रांतिकारक राजर्षि शाहू महाराज – डॉ. सुवर्णा नाइक निंबाळकर

६. लोकराजा राजर्षि शाहू महाराज – सुभाष वैरागकर

७. छत्रपति शाहू महाराज व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : समग्र पत्रव्यवहार – सं. डॉ. संभाजी बिराजे, विनिमय पब्लिकेशन, विक्रोळी, मुंबई

८. राजर्षि शाहू स्मारक ग्रंथ – सं. डॉ. जयसिंगराव पवार, शाहू स्मारक ग्रंथ समिति, कोल्हापूर (२००१)

९. राजर्षि शाहू : राजा व माणूस – कृ. घो. सूर्यवंशी

५.५.२.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के चरित्र पर आधारित ग्रंथ :

१) जीवनी (हिंदी) :

१. युगपुरुष अंबेडकर – राजेंद्र मोहन भटनागर

२. महामानव बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर – मोहनदास नैमिशराय

३. डॉ. आंबेडकर जीवन दर्शन – विजयकुमार पुजारी, गौतम पब्लिकेशन, दिल्ली

४. दलितों के मुक्तिदाता बाबासाहेब आंबेडकर – सोहनलाल शास्त्री, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

५. बोधीसत्व बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर जीवन और दर्शन – डॉ. अगने लाल, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

६. महान भारतीय महापुरुष : डॉ. भीमराव अम्बेडकर

७. अंबेडकर – प्रबुद्ध भारत की ओर – गेल ॲमवेट

८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सूर्यनारायण रणसुभे

९. दलित समाज के पितामह डॉ. भीमराव अंबेडकर – डॉ. सुनील योगी

जीवनी (मराठी) :

१. अनाथांचा नाथ डॉ. आंबेडकर – अजित पाटील

२. असे घडले ज्ञानसूर्य डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – व. न. इंगळे, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद

३. आपले बाबासाहेब – बी. व्ही. जोंधळे, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद

४. आंबेडकर – नलिनी पंडित, ग्रंथाली प्रकाशन, पुणे

५. क्रांती प्रेरणा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – योगेंद्र मेश्राम, परामिता साहित्य चळवळ, नागपुर

६. डॉ. आंबेडकर – तानाजी बाळाजी खरावतककर, रवि किरण छापखाना, कराची (पाकिस्तान)

७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – धनंजय कीर

८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – नाना ढाकुलकर, ऋचा प्रकाशन

९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – अनुराधा गद्रे, मनोरमा प्रकाशन

१०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सचिन खोब्रागडे, ऋचा प्रकाशन

११. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – राजा मंगळवेढेकर

१२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर चित्रमय चरित्र – धनंजय कीर, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई(१९८१)

१३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची आत्मकथा – शंकरराव खरात, इंद्रायणी साहित्य, पुणे (१९८७)

१४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे चरित्र – विजय जाधव, मनोरमा प्रकाशन

१५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर (भाग १ ते १३) – चांगदेव खैरमोडे, म. राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, मुंबई(१९५२)

१६. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर अस्पृश्यांचा उद्धारक – चांगदेव खैरमोडे, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९९१)

१७. दलितांचे बाबा – प्रल्हाद केशव अत्रे

१८. बहुआयामी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सुभाष गवई, ऋचा प्रकाशन

१९. भारतभूषण बाबासाहेब आंबेडकर – भा. कृ. केळकर, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९९४)

२०. महामानव डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर – डॉ. ज्ञानराज गायकवाड, रिया पब्लिकेशन, कोल्हापूर (२००६)

२१. मूकनायक डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – गंगाधर पानतावणे

२२. युगप्रवर्तक महामानव भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – नरेंद्र जाधव, बृहन्मुंबई महानगरपालिका, मुंबई(२०१६)

२३. समग्र आंबेडकर चरित्र (खंड १-२४) – बी. सी. कांबळे, कांबळे प्रकाशन, मुंबई(१९८४)

२४. समाजप्रबोधनकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सी. एच. निकुंभे

२५. सर्वदर्शी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सं. डॉ. पी. विठ्ठल / डॉ. नागोराव कुंभार

२६. ज्ञानयोगी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – वि. र. काळे, वसंत बुक स्टॉल, मुंबई(२००४)

२) कविता :

१. आंबेडकरी जाणिवांची आत्मप्रत्ययी कविता – गंगाधर पानतावणे

२. आंबेडकरी जलसे – भगवान ठाकूर

३. आंबेडकरी जलसा तडवळकरांचा - ज्ञानेश्वर ढावरे

४. आंबेडकरवादी कवितांचा नवा गंध – श्रीपाल सबनीस

५. भीमगीते – वामनदादा कर्डक

६. बाबासाहेब – यशवंत मनोहर, ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई(२०१७)

७. महाकवि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, वामन निंबाळकर, प्रबोधन प्रकाशन

८. शब्दफुलांची संजीवनी – सुहास सोनवणे

९. युगानुयुगे तूच – अजय कांडर, लोकवाङ्मय गृह, मुंबई

१०. नामांतर – सुमंत गायकवाड

३) कथासाहित्य :

१. अनुयायी – तु.ली. कांबळे, शिल्पा प्रकाशन, नागपुर (१९९२)

२. आंबेडकर यांचा रसिक स्वभाव आणि विनोदी प्रसंग – अमोल शिंदे, लोकवाङ्मय गृह, मुंबई

३. आंबेडकरवादी प्रतिभावंत – श्रीपाल सबनीस

४.उगवतीचा क्रांतीसूर्य - श्रीपाल सबनीस

५. गोष्टी बाबांच्या, बोल बाबांचे – रंगनाथ कुलकर्णी

६. चंदनाला पुसा – द. सा. गजघाटे, ऋचा प्रकाशन

७. डॉ. आंबेडकर आणि विनोद – दामोदर मोरे, ग्रंथाली, मुंबई(१९९४)

८. प्रबुद्ध – भा. द. खेर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९८९)

९. प्रज्ञासूर्य - शरणकुमार लिंबाळे

१०. महासूर्य - सुनील रामटेके

११. राष्ट्रपुरुष – अशोक मोडक, भारतीय विचार साधना (१९९०)

४) नाटक :

१. मी डॉक्टर आंबेडकर बोलतोय – सिद्धार्थ मोरे

२. युगपुरुष – सिद्धार्थ मोरे

३. चलो बुद्ध की ओर – सिद्धार्थ मोरे

४. रमाई – सिद्धार्थ मोरे

५. नवी कहानी (हिंदी-मराठी) – सिद्धार्थ मोरे

६. गांधी आणि आंबेडकर – प्रेमानंद गझवी

७. वादळ निळ्या क्रांतीचे – प्रा. रामनाथ चव्हाण

८. प्रतिकार– राम उगावकर

५) वैचारिक ग्रंथ (हिंदी) :

१. अंबेडकर : प्रबुद्ध भारत की ओर – गेल ॲमवेट

२. दलित समाज के पितामह डॉ. भीमराव आंबेडकर – सुनील योगी

३. पत्रकारिता के युग निर्माता भीमराव आंबेडकर – सूर्यनारायण रणसुभे

४. प्रखर राष्ट्रभक्त डॉ. भीमराव आंबेडकर – चंद्रशेखर भंडारी, एस. आर. रामस्वामी

५. बुद्धत्व के अग्रदूत डॉ. आंबेडकर – सी. डी. नाईक

६. राष्ट्रनिर्माता बाबासाहेब आंबेडकर – सं. विवेक कुमार, अशोक दास

७. यदि बाबा न होते - भदंत आनंद कौशल्यायन, गौतम पब्लिकेशन, दिल्ली

८. डॉ. बी. आर. आंबेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व – डी. आर. जाटव, समता साहित्य सृजन, जयपुर

९. युगपुरुष बाबासाहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर जीवन संघर्ष व राष्ट्र - शंकरानंद शास्त्री, गौतम पब्लिकेशन, दिल्ली

१०. डॉ. अम्बेडकर जीवन-दर्शन – विजयकुमार पुजारी, गौतम पब्लिकेशन, दिल्ली

११. दलितों के मुक्तिदाता बाबासाहेब आंबेडकर, सोहनलाल शास्त्री, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

१२. डॉ. आंबेडकर के अंतिम कुछ वर्ष - नानकचंद रत्तू, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

१३. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर स्मरण और स्मृतियाँ, नानकचंद रत्तू, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

१४. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर संघर्ष यात्रा एवं संदेश – डॉ. म. ला. शहारे, डॉ. नलिनी अनिल, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

१५. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर की सांस्कृतिक देन – डॉ. अगणे लाल, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

१६. बोधीसत्व बाबासाहेब : डॉ. आंबेडकर जीवन और दर्शन - सम्यक प्रकाशन, दिल्ली

मराठी :

१. आठवणीतले बाबासाहेब – योगीराज बागुल

२. आंबेडकर आणि भारतीय राज्यघटना – रावसाहेब कसबे, सुगावा प्रकाशन, पुणे

३. आंबेडकर आणि मार्क्स - रावसाहेब कसबे, सुगावा प्रकाशन, पुणे

४. आंबेडकर आणि हिंदुत्ववादी राजकारण – राम पुनियानी, अनु. सुकुमार दामले

५. आंबेडकर भारत (भाग-२) – बाबुराव बागुल, सुगावा प्रकाशन, पुणे

६. आंबेडकर यांचा रसिक स्वभाव आणि विनोदी प्रसंग – अमोल शिंदे, लोकवाङ्मय, मुंबई

७. आंबेडकर यांची राजकीय विचार – भ. द. देशपांडे, लोकवाङ्मय गृह प्रकाशन, मुबई

८. आंबेडकरी चळवळी संपली आहे का? – प्रकाश आंबेडकर

९. आंबेडकरी चळवळीचे विध्वंसक घटक – एल. वाय. औचरमल, वैभव प्रकाशन (१९९४)

१०. आंबेडकरी स्वकथने : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन – अनिल सूर्यक, सुगावा प्रकाशन, पुणे

११. आंबेडकरवाद – हर्ष जगताप, डायमंड प्रकाशन, मुंबई

१२. आंबेडकरांचे सत्याग्रह आणि ब्रिटिश सरकार – सी. एच. निकुंभे

१३. आंबेडकरांच्या सामाजिक आणि राजकीय चळवळी – कृष्णा मेणसे, लोकवाङ्मयगृह, मुंबई

१४. आंबेडकरवाद : तत्व आणि व्यवहार – रावसाहेब कसबे, सुगावा प्रकाशन, पुणे (२००४)

१५. आंबेडकरवादी मराठी साहित्य – यशवंत मनोहर, युगसाक्षी प्रकाशन, नागपुर (१९९९)

१६. आंबेडकरानंतर दलित चळवळींनी काय केले? – अविनाश आहेर, कोमल प्रकाशन, ठाणे (२००४)

१७. आम्ही ही इतिहास घडवला – उर्मिला पवार, मिनाक्षी मून

१८. क्रांतिप्रेरणा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – योगेंद्र मेश्राम, परामिता साहित्य चळवळ, नागपुर (१९८८)

१९. गांधी आणि आंबेडकर – गं. बा. सरदार

२०. ग्रंथकार भीमराव – सुहास सोनवणे

२१. ग्रंथवेडे आंबेडकर – उपानंद इंगोले, अशोक सार्वजनिक वाचनालय, यवतमाळ (१९९८)

२२. चार्वाक, बुद्ध आणि आंबेडकर – डी. वाय. हाडेकर, सुगावा प्रकाशन, पुणे

२३. छत्रपति शाहू महाराज व बाबासाहेब आंबेडकर : समग्र पत्रव्यवहार – संभाजी बिरांजे, विनिमय पब्लिकेशन, विक्रोळी, मुंबई(२०१९)

२४. ज्योतीराव – भीमराव – म. न. लोही, ऋचा प्रकाशन

२५. डॉ. आंबेडकर : एक चिंतन – मधु लिमये, अनु. अमरेंद्र नंदू धनेश्वर, रचना प्रकाशन, मुंबई

२६.डॉ. आंबेडकर, दलित आणि मार्क्सवाद : नवे आकलन, नव्या दिशा – उद्धव कांबळे, लोकवाङ्मयगृह प्रकाशन, मुंबई

२७. डॉ. आंबेडकर : शांततामय क्रांतीचे प्रणेते – राम खोब्रागडे

२८. डॉ. आंबेडकर आर्थिक विचार आणि तत्वज्ञान - नरेंद्र जाधव, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९९२)

२९. डॉ. आंबेडकर आणि काळाराम मंदिर सत्याग्रह – य. दि. फडके

३०. डॉ. आंबेडकर आणि त्यांचा धम्म – प्रभाकर वैद्य, शलाका प्रकाशन, (१९८१)

३१. डॉ. आंबेडकर आणि बौद्ध धम्म – संघरक्षित, अनु. विमलकिर्ती, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, (१९८६)

३२. डॉ. आंबेडकर आणि भारतीय राज्यघटना – रावसाहेब कसबे

३३. डॉ. आंबेडकर आणि विनोद : एक शोध – दामोदर मोरे, ग्रंथाली, मुंबई(१९९४)

३४. डॉ. आंबेडकर आणि समकालीन – सुहास सोनवणे

३५. डॉ. आंबेडकर आणि हिंदू कोड बिल – चांगदेव खैरमोडे, सुगावा प्रकाशन, पुणे

३६. डॉ. आंबेडकर दर्शन – मनीष कांबळे

३७. डॉ. आंबेडकर विचारमंथन – वा. ना. कुबेर, लोकवाङ्मयगृह प्रकाशन, मुंबई (१९८२)

३८. डॉ. आंबेडकर, संघ सरकार आणि जनता – शेषराव मोरे-रवींद्र मोरे, (१९९८)

३९. आंबेडकरांचा राष्ट्रवाद : वास्तव आणि विपर्यास – सी. एच. निकुंभे

४०. डॉ. आंबेडकरांचा वैचारिक वारसा – भास्कर भोळे

४१. डॉ. आंबेडकरांची भाषणे – प्रकाश खरात

४२. डॉ. आंबेडकरांचे अंतरंग – द. न. गोखले, मौज प्रकाशन

४३. डॉ. आंबेडकरांचे मारेकरी – अरुण शौरी-य. दि. फडके

४४. डॉ. आंबेडकरांचे मुस्लिमविषयक विचार – आनंद तेलतुंबडे, अनु. तुकाराम जाधव

४५. डॉ. आंबेडकरांचे शैक्षणिक विज्ञान – डी. वाय. हाडेकर

४६. डॉ. बाबासाहेब आणि आम्ही – अविनाश आहेर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९९६)

४७. डॉ. आंबेडकरांचे सामाजिक धोरण – शेषराव मोरे, राजहंस प्रकाशन, पुणे (१९९८)

४८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय महत्व आणि महात्म्य - दादू मांद्रेकर, (२०१७)

४९. डॉ. आंबेडकर वर्तमान संदर्भात – गजानन लोहवे

५०. बाबासाहेब आंबेडकर आणि २१वे शतक – गिरीश जाखोटिया, मॅजेस्टिक पब्लि. हाऊस, ठाणे

५१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि त्यांचे दलितेत्तर सहकारी – योगीराज बागूल, ग्रंथाली (२०१५)

५२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि लोणावळा – प्रभाकर ओव्हाळ, प्राजक्त प्रकाशन

५३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि हैदराबाद संस्थान – शेषराव नरवाडे, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९८८)

५४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : शिक्षणविषयक पत्रे - माधवी खरात

५५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची बौद्ध धर्मावर गाजलेली भाषणे – आचार्य सूर्यकांत भगत

५६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विश्वरत्न कसे? – शंकरराव नरवडे

५७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचा सांगाती – बळवंतराव वराळे, श्रीविद्या प्रकाशन, पुणे (१९८८)

५८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची निवडक भाषणे (भाग-१) – विजय सुरवाडे, लोकवाङ्मयगृह मुंबई

५९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे निवडक लेख – गंगाधर पानतावणे, प्रतिमा प्रकाशन

६०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या चळवळीची पार्श्वभूमी – चांगदेव खैरमोडे, श्रीविद्या प्रकाशन, पुणे (१९८८)

६१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अभिवादन ग्रंथ – गंगाधर पानतावणे

६२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : मानवतेचे कैवारी – रा. ह. देशपांडे, अनु. श्री. पु. गोखले, नवभारत प्रकाशन, मुंबई

६३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर-नियोजन, जल व विद्युत विकास : भूमिका व योगदान – सुखदेव थोरात अनु. दांडगे, काकडे, भानुपते, सुगावा प्रकाशन, पुणे (२००५)

६४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि राष्ट्रीय सुरक्षा – विजय खरे

६५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर गौरव ग्रंथ – दया पवार, म. राज्य साहित्य-संस्कृति मंडळ, मुंबई (१९९३)

६६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर त्यांच्याच शब्दात – ग. प्र. प्रधान

६७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर प्रेरणेचे साहित्य : अध्यक्षीय व इतर भाषणे – भाऊसाहेब अडसूळ, महाराष्ट्र बौद्ध साहित्य परिषद, मुंबई (१९७७)

६८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर म्हणतात : असा मी जगलो – ज. घो. संत

६९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचा जनतेला उपदेश व गोपळ बुवा वसंगकर यांचे उच्चवर्णियांविरुद्धचे पहिले विनंती पत्रक – रमेश रघुवंशी, रघुवंशी प्रकाशन, पुणे (१९८८)

७०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे वाङ्मयीन चिंतन – योगेंद्र मेश्राम

७१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आठवणींचे आत्मभान – हेमा राईरकर, सुगावा प्रकाशन, पुणे

७२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे मौलिक विचार – शंकरराव खरात, इंद्रायणी साहित्य, पुणे

७३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी केलेली घटनेची मीमांसा – बी.सी. कांबळे, अमृत महोत्सव प्रकाशन, मुंबई(१९६६)

७४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विचार उद्रेक – आसाराम सैंदाणे

७५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे अखेरचे संसदीय विचार – बी. सी. कांबळे, कांबळे प्रकाशन, मंबई(१९७३)

७६. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे अतिशय गाजलेले अग्रलेख – रमेश रघुवंशी, रघुवंशी प्रकाशन,पुणे (१९८७)

७७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे प्रासंगिक विचार – रमेश रघुवंशी, रघुवंशी प्रकाशन,पुणे (१९८७)

७८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची पत्रे – शकंरराव खरात, लेखन-वाचन भांडार, पुणे (१९६१)

७९. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे धर्मांतर – शंकरराव खरात, लेखन-वाचन भांडार, पुणे (१९६१)

८०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची समग्र भाषणे – क्षितीज पब्लिकेशन, नागपुर (२००२)

८१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर लिखित राम व कृष्णाचे कोडे आणि भास्करराव जाधव लिखित रामायणावर नवा प्रकाश – रमेश रघुवंशी, रघुवंशी प्रकाशन, पुणे (१९८९)

८२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि आम्ही – अविनाश आहेर, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे (१९९६)

८३. डॉ. बाबासाहेब आणि स्वातंत्र्य चळवळ – राजा जाधव, जयंतीभाई शहा, राजलक्ष्मी प्रकाशन, (१९९४)

८४. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर : अस्पृश्यांचा उद्धारक – चांगदेव खैरमोडे, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९९१)

८५. दलित चळवळीची वाटचाल – रावसाहेब कसबे, केशव मोरे स्मारक ट्रस्ट, मुंबई(१९८३)

८६. धर्मांतराची भीमगर्जना – अरुण कांबळे, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे (१९९६)

८७. पत्रकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – गंगाधर पानतावणे

८८. पत्रव्यवहारातून डॉ. आंबेडकर (खंड १-२) – विजय सुरवाडे

८९. पत्रांच्या अंतरंगातून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – माधवी खरात, श्री समर्थ प्रकाशन, पुणे (२००१)

९०. पण्यश्लोक डॉ. आंबेडकर षड्दर्शन – ना. रा. शेंडे, नचिकेत प्रकाशन, (२०१५)

९१. प्रज्ञा महामानवाची : डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समग्र लेखन कार्य (खंड १-२) – नरेंद्र जाधव, ग्रंथाली, मुंबई (२०१३)

९२. प्रज्ञासूर्य डॉ. आंबेडकर : समग्र वैचारिक चरित्र – नरेंद्र जाधव, ग्रंथाली, मुंबई (२०१४)

९३. प्रज्ञासूर्याच्या प्रकाशात – बबन जोगदंड, स्वयंदीप प्रकाशन

९४. फुले-आंबेडकरी चळवळीचे क्रांतीशास्त्र – मनोहर पाटील

९५. बहुआयामी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – प्रा. सुभाष गवई, ऋचा प्रकाशन

९६. बाबासाहेब आंबेडकर नियोजन जल व विद्युत विकास भूमिका व योगदान – सुखदेव थोरात

९७. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सहवासातील सुवर्ण क्षण – झुंबरलाल कांबळे व इतर

९८. बाबासाहेब यांची गाजलेली भाषणे – डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, विनिमय पब्लिकेशन्स

९९. बोल महामानवाचे ५०० मर्मभेदी भाषणे (खंड १-३), नरेंद्र जाधव, ग्रंथाली, मुंबई (२०१२)

१००. बोधीसत्व डॉ. बाबासाहेब धम्मदीक्षेचा इतिहास – प्रदीप मेश्राम, सुप्रिया प्रकाशन, (१९९३)

१०१. भारतभूषण बाबासाहेब आंबेडकर – भा. कृ. केळकर, सुगावा प्रकाशन, पुणे (१९९४)

१०२. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – म. श्री. दीक्षित, स्नेहवर्धन प्रकाशन

१०४. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जीवन, विचार, कार्य आणि परिणाम – यदुनाथ थत्ते, कौस्तुभ प्रकाशन, नागपुर (१९९४)

१०५. भारतातील आर्थिक सुधारणा आणि दलित – एक आंबेडकरी दृष्टिकोन – भालचंद्र मुणगेकर

१०६. भारतीय प्रबोधन आणि नव आंबेडकरवाद – श्रीपाल सबनीस

१०७. भीमप्रेरणा : भारतरत्न बाबासाहेब आंबेडकर यांचे १५० मौलिक विचार – अ. म. सहस्त्रबुद्धे, राजा प्रकाशन, मुंबई (१९९०)

१०८. महामानव डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर - ज्ञानराज गायकवाड, रिया पब्लि. कोल्हापुर (२००६)

१०९. मनुस्मृती, स्त्रिया आणि डॉ. आंबेडकर – सरोज कांबळे, सावित्रीबाई फुले प्रकाशन, (१९९९)

११०. मनुस्मृती, महिला व आंबेडकर – प्रतिमा परदेसी

१११. महामानव : आपला आदर्श, आपली प्रेरणा, माहिती व जनसंपर्क महासंचालनालय, मुंबई(२०१६)

११२. महाराष्ट्रातील आंबेडकरी राजकारणाचे समकालीन आकलन – डॉ. हर्ष जगताप व संघरत्न सोनवणे, डायमंड प्रकाशन, पुणे

११३. माणूस, समाज व बदल – डॉ. आंबेडकर यांचे सिद्धांत – सुधाकर गायकवाड

११४. मूकनायक डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – गंगाधर पानतावणे

११५. युगप्रवर्तक महामानव भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – नरेंद्र जाधव, बृहन्मुंबई महानगर पालिका, (२०१६)

११६. राष्ट्रपुरुष – अशोक मोडक, भारतीय विचार साधना प्रकाशन (१९९०)

११७. विचारयुगाचे प्रणेते : डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – गंगाधर पानतावणे

११८. शेतकऱ्यांचे बाबासाहेब – दत्तात्रय गायकवाड

११९. सत्य आग्रही आंबेडकर – सुहास सोनवणे

१२०. समग्र आंबेडकर चरित्र (खंड १-२४) – बी. सी. कांबळे, कांबळे प्रकाशन, मुंबई (१९८४)

१२१. समकालीन सहकाऱ्यांच्या आठवणीतील डॉ. आंबेडकर – विजय सुरवाडे, लोकवाङ्मय गृह प्रकाशन, (२००७)

१२२. समाजप्रबोधनकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सी. एच. निकुंभे

१२३. समाजशास्त्रज्ञ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – प्रदीप आगलावे, सुगावा प्रकाशन, पुणे

१२४. संविधान सभेत डॉ. आंबेडकर – जयदेव गायकवाड, पद्मगंधा प्रकाशन

१२५. सरस्वतीचा महान उपासक डॉ. आंबेडकर – पंडित अवचट, सौभाग्य प्रकाशन, पुणे (१९९०)

१२६. संसदपटू डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – बी.सी. कांबळे, कांबळे प्रकाशन, मुंबई (१९७२)

१२७. सावरकर–आंबेडकर : एक समांतर प्रवास – हेमंत चोपडे, विजय प्रकाशन, नागपुर

१२८. ज्ञानयोगी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – वि. र. काळे, वसंत बुक स्टॉल, मुंबई (२००४)

१२९. ज्ञानेश्वर आणि आंबेडकर – श्रीपाल सबनीस

१३०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि चळवळीची अस्सल स्त्रोत साधने खंड-१, राजरत्न ठोसर, विनिमय पब्लिकेशन्स, मुंबई (२०१८)

१३१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे कृषि चिंतन – डॉ. माधव जाधव

१३२. दलितेत्तरांचे बाबासाहेब आंबेडकर – डॉ. प्रल्हाद लुलेकर

वैचारिक ग्रंथ (अंग्रेजी) :

१. डॉ. आंबेडकर : पायोनियर ऑफ ह्यूमन राईटस – आर. डी. सुमन

२. थॉट्स अँड फिलॉसॉफी ऑफ डॉ. बी. आर. आंबेडकर – सी. डी. नाईक, स्वरूप अँड सन्स (२००३)

३. सोशिओ-इकॉनॉमिक अँड पोलिटिकल व्हिजन ऑफ डॉ. आंबेडकर – एस. एन. मिश्रा, कनसेप्ट (२०१०)

४. जॉग्रॉफीकल थॉट ऑफ डॉ. बी. आर. आंबेडकर – दिपक वानखेडे, गौतम बुक सेंट (२००९)

५. आंबेडकर, गांधी अँड पटेल : द मेकींग ऑफ इंडियाज इलेक्ट्रॉल सिस्टीम – राजा शेखर वादू, ब्लुमस्बेरी पब्लिकेशन, (२०१७)

६. द इसेंसियल रायटींग ऑफ बी. आर. आंबेडकर – विलेरियन रॉर्डरीग्स्

७. फिलॉसॉफी ऑफ डॉ. बी. आर. आंबेडकर – प्रदीप गोखले

८. आंबेडकरॅजिम : एस्सेज ऑन सलेक्ट इकॉनॉमिक अँड कल्चर इश्यूज – प्रवीण जाधव

९. आंबेडकर : अवेकींग इंडियाज सोशल कसिंयस – नरेंद्र जाधव

१०. आंबेडकर : हिज लाइफ अँड व्हिजन – डी.सी. व्यास

११. डॉ. बी. आर. आंबेडकर : द मॅसेह ऑफ द डाऊनट्रोडन – जनक सिंह

१२. डॉ. आंबेडकर अँड सोशल वर्क – आर. एन. राणा

१३. आंबेडकरर्स कन्वरजन – कलनॉर झिलॉट

१४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – वसंत मून

१५. डॉ. आंबेडकर – लाईफ अँड मिशन – धनंजय कीर (१९५४)

१६. द इस्सेनसियल आंबेडकर – डॉ. भालचंद्र मुणगेकर

१७. ह्यूमन राईटस् अँड इंडियन कॉन्स्टिट्यूशन : डॉ. बी. आर. आंबेडकर – इंड्यिूरींग लिगसीज – डॉ. एस. एस. धाकतोडे

१८. लाईफ अँड मिशन ऑफ बाबासाहेब आंबेडकर – संदेश वाघ

१९. कार्ल मार्क्स अँड बाबासाहेब आंबेडकर : अ कम्पॅरिटीव स्टडी- आर. के. क्षीरसागर

२०. द सोशल कॉन्टेक्सट ऑफ ऑन आयडॉलॉजी – आंबेडकर्स पोलिटिकल अँड सोशल थॉट्स – डॉ. मा. स. गोरे, सागे पब्लिकेशन्स (१९९३)

२१. थॉट्स ऑफ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – वाय. डी. सोनटक्के

विदेशी लेखकों के ग्रंथ :

1. Dr. Ambedkar and untouchablity : Analysing and Fiting castechristophe afferlot, Orient Blackswan (2006)

2. Understanding Cast : From Buddha to Ambedkar & Bevond Gail Omvet, Orient Blackswan, (2011)

3. Dalit and the Democratic Revoluation : Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in colonil India-Gail omvet SAGE Pub. (1994)

4. Building the Ambedkar Revolution : Sambhaji Tukaram Gaikwad and the Kokan - Dalits Gail Omvet, Bhashya Prakashan (2011)

5. Ambedkar :Towards and Enlightened India – Gail omvet, Penguin Group (2008)

6. Dr. Ambedkar and the Revival if Buddhism – Sangharakshita, Windhorse Publication (2017)

7. From untachable to Dalit : essays on the ambedkar movement – Doranne Jacobson, Eleanorzelliot, Susan Snow Wedly (1992)

8. Ambedkar's Conversion – Eleanor Zelliot (2005)

9. Dr. Babasaheb Ambedkar and the Untouchable Movement – Eleono Zelliot (2004)

10. Ambedkar World : The Making of the Babasaheb and Dalit movement – Eleanor Zelliot (2013)

11. Babasaheb Dr. Ambedkar : Smarika 1969) – R. D. Suman

12. Budhist Revilence in India : Aspects of the Sociology of Budhism Traver ling, America

13. Revilance of Ambedkarism in India – K. S. Chalpam

14. Dr. Ambedkar and untouchability – Jeferlot Kistopher, France

15. Ambedkar : Reformse and Revaluation Thomas Mathew, Misigun

16. Verdict in India - Beverli Nicols

17. Dr. Ambedkar and Mahar Movement – Dr. Elinor Zeliet, America

18. Gandhi and Ambedkar : A Study in leadership – Dr. Elinor Zeliet

19. Dr. B. R. Ambedkar a study injust society – James Massey (2003)

20. Mahar, Budhist and Dalit : Religious conversion and Socio-Political Emancipation – Johannes Beltz (2005)

21. Revival if Budhism in Modern India and the Role of Ambedkar and dalai Lama – Dr. L. Kenedi

फुले – आंबेडकर के नाम पर लिए जानेवाले साहित्य-सम्मेलन :

१. आंबेडकरी साहित्य संमेलन (१९९३ से)

२. आंबेडकरी युवा साहित्य संमेलन (२०११)

३. आंबेडकरी वैचारिक साहित्य संमेलन (२०१२)

४. प्रबुद्ध साहित्य संमेलन

५. प्रबोधन साहित्य संमेलन

६. प्रज्ञासूर्य साहित्य संमेलन

७. फुले-आंबेडकर विचार प्रसार-साहित्य संमेलन

८. फुले-आंबेडकर साहित्य संमेलन

९. फुले-आंबेडकरी विचारधारा परिषद साहित्य संमेलन

१०. फुले-आंबेडकरी कृषि साहित्य संमेलन

११. फुले-शाहू-आंबेडकर राष्ट्रीय साहित्य संमेलन

१२. आंबेडकर विचारवेध साहित्य संमेलन

१३. अस्मितादर्श साहित्य संमेलन

१४. अण्णाभाऊ साठे साहित्य संमेलन

१५. फुले-आंबेडकर-मार्क्स साहित्य संमेलन

५.५.३ छ. शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू, डॉ. आंबेडकर पर आधारित शोध-प्रबंधः

५.५.३.१ छ. शिवाजी महाराज के जीवन कार्य पर आधारीत पीएच.डी. शोध-प्रबंध –

१. प्राचीन मराठी वाङ्मयातील शिवाजी राजाचे चित्रण, ठोसर शिवाजी रामकृष्ण, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय, औरंगाबाद। (मराठी) शोध निर्देशक – प्रभाकर मांडे, १९९१

२. मराठी ऐतिहासिक कादंबरीतील शिवप्रतिमा १८७० ते १९७० शिराळकर उषा गोपाळ, एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय, मुंबई। (मराठी) शोध निर्देशक – इनामदार हेमंत विष्णु, १९७९

३. छ. शिवाजी महाराजांच्या सेनापतींचे सैन्यातील कार्य - एक चिकित्सक अभ्यास, नलावडे उज्वला विजय, टिळक महाराष्ट्र विद्यापीठ। (इतिहास) शोध निर्देशक – कुंभोजकर श्रद्धा, २०१६

४. ऐतिहासिक मराठी कादंबरीतील शिवाजी आणि शिवकालीन चित्रण १८७१ ते १९८१, गायकवाड मिरदेव जीजाबा, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे। (मराठी) शोध निर्देशक भोसले सुधाकर १९८३

५. मराठे शाहीतील पत्ररूप गद्याचे वाङ्मयीन समीक्षण, पवार सुधाकर, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर। (मराठी) शोध निर्देशक तोडमल एच. के., १९७४

६. हिंदी नाटकों में चित्रित छत्रपति शिवाजी, बाबर राजेंद्र, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर। (हिंदी) शोध निर्देशक – निकम शिवाजी, २००६

७. हिंदी उपन्यासों में चित्रित राजा शिवाजी, पाटील कृष्णा, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर। (हिंदी) शोध निर्देशक पाटील पांडुरंग २००२

८. शिवाजी के प्रशासन का पुनर्मूल्यांकन, रहमान शाजीया, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल युनिवर्सिटी। (इतिहास) शोध निर्देशक हितेंद्र प्रताप सिंग, २०१३

९. हिंदी साहित्य में वर्णित छ. शिवाजी महाराज के चरित्र का मूल्यांकन, मोरे व्ही. के., शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर। (हिंदी) शोध निर्देशक – दुबे चंदुलाल, १९७५

१०. हिंदी और मराठी काव्य में वर्णित छ. शिवाजी के चरित्र-चित्रण का तुलनात्मक अध्ययन, जाधव मोहन, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर। (हिंदी) शोध निर्देशक मोरे वसंत १९९१

११. मराठा सैन्य पद्धति (शिवाजी से पानिपत के तृतीय युद्ध तक), शंकर गणेश, यू.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय। (डिफेंस स्टूटर्जिकस्टडी) शोध निर्देशक नरेंद्र बहादुर सिंह, २००५

१२. Maharashtra in the age of Shivaji 1960 to 1980 a study of economic life, Kulkarni A. R., Dr. B.A.M. University, Aurangabad. (History) 1965

१३. The great Maratha warrior Chhatrapati Shivaji Maharaj a study on transfer marend leadership and institation building, Pulekar Deepali Nilesh, SNDT Women University, Research Guide Gavraskar V.V., 2018

१४. A Critical study of the life of Chha. Shivaji Maharaj as recored in Sanskrit literature, Rajebhonsale Suhasinidevi Shahajirao, Shivaji University. (Sanskrit) Research Guide Inamdar V. B., 1986

१५. Importance of management tenike of Chhatrapiti Shiviji on the battle ground a study, GaneshJanardarn Ghugare, Sri Jagdishprad……, Research Guide Shashi Morolia & Jadhav Baben Bhivsen, 2017

१६. Maratha architecture, Mate M.S.S.P. Pune University, 1957

१७. A Crified study of stratcgy and tacties adopted by Shivaji in his major compaigrs, Patil Prakash Ratan, Dalvi A. S., S.P. Pune University, Pune – Defences strategic Study. 2001

१८. House of Shivaji and Karnatak 1636 to 1707 AD, Sushma Ashok Arur, Satry Sripati, S.P. Pune University – (History) 1997

१९. Mysore-Maratha relations Under Shahji, shivaji, Sambhaji and Rajaram as Revelaled in kannada Sources, Muddachari B., Srikantsastri S. University of Mysore (History) 1959

२०. Chhatrapatis of Satara, Kadam Pratima, Kamble B. R.,Shivaji University (History) 1994

२१. A study of coins and seats of Chatrapati Shivaji, Josohi Kalpana, Shashikant Bhatt, Devi Ahilya vishwavidiyalaya – Academy of Indian Numistics and Sigliography, 2016

५.५.३.२ म.फुले के जीवन कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध-प्रबंध

१. महाराष्ट्रातील प्रागतिक विचार प्रवाह आणि महात्मा ज्योतिराव फुले, पवार कुसुम बाबुराव, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (राज्यशास्त्र) शोध निर्देशक – शिंदे जे. आर. २००४

२. महात्मा ज्योतिराव फुले यांच्या विचारांचा आधुनिक महाराष्ट्रातील प्रभाव, कांबळे आर. एस., डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (राज्यशास्त्र) शोध निर्देशक – क्षीरसागर आर. के. २००४

३. महात्मा फुले यांच्या वाङ्मयातील सामाजिक विचार, रामटेके एच. वाय., डॉ. बा. आं. म. वि., औरंगाबाद (मराठी) शोध निर्देशक व्यवहारे शरद, २००१

४. धनंजय कीर यांच्या चरित्र लेखनाचा चिकित्सक अभ्यास (विशेष संदर्भ म. फुले, राजर्षी शाहू व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर), मस्के सतिश श्रीराम, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक – लुलेकर पी. जी., २००८

५. महात्मा फुले यांचा शिक्षण विचार, गंधारे दत्तात्रय केशव, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, (मराठी) शोध निर्देशक मंचरकर आर. बी., २००२

६. महात्मा फुले आणि त्यांचा सत्यशोधक चळवळीचा चिकित्सक अभ्यास, अंबाडे किसन मारुती, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, (मराठी) गायकवाड डी. एस., १९९८

७. महात्मा फुले यांच्या विचारधारेतील स्त्रियांचे लेखन एक अभ्यास १८५० ते १९२०, बिडवे अर्चना गणेशराव, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक –देशमाने अशोक, २०१५

८. ज्योतिराव फुले विषयक चरित्र ग्रंथाचा अभ्यास, धीवर प्रमोद बबन, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक भाईलुमे राजाभाऊ, २०१५

९. मागासवर्गीयांच्या आर्थिक उन्नतीत महत्मा फुले आर्थिक विकास महामंडळाची भूमिका मराठवाडा एक चिकित्सक अभ्यास, राठोड सुभाष प्रभु, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (अर्थशास्त्र) शोध निर्देशक – खरात डी. बी., २०११

१०. सत्यशोधक समाज आणि महात्मा फुले यांचे समग्र साहित्य, भोसले माधव मारुती, शिवाजी विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक – पोवार सी. व्ही., २०१२

११. महात्मा फुलेंच्या साहित्याचा ग्रामीण कवितेवरील प्रभाव एक पुनर्मूल्यांकन, घोलप विठ्ठल रामराव, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक – आल्टे निशिकांत, २०१३

१२. मध्यकालीन इतिहास दलित सुधारक फुले एक ऐतिहासिक विश्लेषण, केसेरवानी शोभा, यू. पी. राजर्षि टंडन ओपन युनिवर्सिटी। (इतिहास) शोध निर्देशक चतुर्वेदी हेरांब, २०१०

१३. महात्मा ज्योतिबा फुले यांच्या वाङ्मयावर तथागत गौतम बुद्ध यांच्या विचारांचा प्रभाव, नवसागर सुधाकर भागोजी, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक –आल्टे एन. एम., २०१४

१४. महात्मा फुले समग्र वाङ्मय प्रेरणा आणि अविष्कार : एक अभ्यास, शिंदे संजय ज्ञानदेव, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय। (मराठी) शोध निर्देशक – धोंडगे दिलीप २००९

१५. महात्मा ज्योतिराव फुले यांच्या समग्र कवितेचा चिकित्सक अभ्यास, शिंदे सुरेश व्ही., शिवाजी विश्वविद्यालय। (मराठी) ठाकूर रविंद्र, २००३

१६. ज्योतिबा फुले का व्यक्तित्व एवं कृतित्व, बालकेश्वर, व्ही.बी.एस पूर्वांचल। (इतिहास) शोध निर्देशक – विजय प्रताप सिंह, २००६

१७. महात्मा कबीर और महात्मा ज्योतिबा फुले के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, मुंडे बाबु ज्ञानोबा, डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय। (हिंदी) शोध निर्देशक – ठाकुरदास एम. भी., २०१०

१८. गुजरात एवं राजस्थान में नारी उत्थान के विशेष संदर्भ में महात्मा ज्योतिबा फुले एवं अन्य समाज सुधारकों की प्रासंगिकता, नाई कृष्णा लाल, यूनिवर्सिटी ऑफ कोटा। (इतिहास) शोध निर्देशक – शशी अरोडा, २०१५

१९. महात्मा ज्योतिबा फुले एवं सावित्रीबाई फुले का भारतीय नारी शिक्षा का भारतीय नारी शिक्षा में योगदान, विजय लक्ष्मी जाटव, जिवाजी विश्वविद्यालय। (स्कूल ऑफ स्टडीज इन हिस्ट्री) शोध निर्देशक आदर्शक मिश्रा, २०१५

२०. Social And Political thought of Mahatma Jyotirao Phule, Shinde J.K., Dr. B.A.M. University. (Pol Sci.) Research Guide – Maiunddin K. 1980

२१. Prelems In translating Marathi poetry in to English a study of selected poems of Mahatma Jyotirao Phule, Raut Sunil Raosaheb, Dr. B.A.M. University. (English) Research Guide Khan A. G., 2013

२२. Jyotiba Phule's concept of Human rights, Singe Gundappa Chandappa, Gulbarga Univeristy. (Pol.Sci.) Research Guide S. A. Polekar, 2018

२३. Jyotirao Phule and Karl Marx a conceptual study of Cultural reconstruction, Anand kumar shivajirao, Research Guide : Khan Hameed. Dr. B.A.M.U. Aurangabad (English) 2014

२४. A Historical Study of the life and achievement of Jyotirao Phule, R. Umapathi. Research guide : C. Periasmai, Periyar University (History) 2007

२५. The Study of the economic ideas of Mahatma Phule, Raskar Bhima Ranganthrao, Research Guide : Ambhore Shankar, Dr. B.A.M.U., Aurangabad 2015

२६. an Empirical study of performance of Mahatama Phule Backword class Development corporation limited Mumbai with special reference of Kolhapur Dist., chandrakant Bhupal Kamble, Research Guide : Shrikrishana S. Mahajan 2013

२७. Role of Mahatma Phule backword class development orporation ltd in economic development of the backword classes in Maharashtra with special reforense to Nanded District., Suryawanshi Bhagwan Gaghobe, Research Guide : Suryawanshi Bhagwan Raghaba, Guide Gahelot B. R. SRTMU (Commerce) 2005

२८. The study of social and educational work of Mahatma Phule, Pawar Anil, Research Guide : Pardeshi Dattatraya Nilkanta. Sri. JJT Univeristy (Faculty of Fine Arts) 2015

२९. Social and Political ideas of Mahatma Phule, Patil A. P. Research Guide : Garde D. K., S.P. Pune University (Pol. Sci. & Pub. Admn.) 1969

३०. Comparative study of the work of sarvajanik Sabha and Satyashodhak Samaj, Kadam Santosh T. Research Guide : Jadhav M. J., Shivaji University (History) 2008

३१. Contribution of Phule and Shahu to caste and religion 1873 to 1922, Ambade Kisan Maruti, Research Guide : Gaikwad D. S., S.P. Pune University (History) 1998

५.५.३.३ राजर्षि शाहू के जीवन कार्य पर आधारीत पीएच.डी. शोध-प्रबंध :

१. छत्रपति राजर्षी शाहू महाराजांचे महाराष्ट्राच्या शैक्षणिक, सामाजिक व राजकीय क्षेत्रांतील योगदान, (राज्यशास्त्र), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद शोधछात्र रविशंकर चव्हाण, मार्गदर्शक डॉ. आफाक खान, वर्ष जून २००८

२. राजर्षी शाहू महाराजांची चरित्रे - एक विवेचक अभ्यास, (मराठी), पुणे विद्यापीठ, पुणे शोधार्थी जयश्री चौगुले, मार्गदर्शक डॉ. मधुकर मोकाशी, वर्ष सितंबर २०१०

३. राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज आणि ब्राह्मणेत्तर चळवळ : एक चिकित्सक अभ्यास (इ.स. १८७४-१९२२) (इतिहास), स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड, शोधार्थी प्रा. आर. एस. कोंडेकर, मार्गदर्शक डॉ. उत्तरम हनवते, वर्ष जुलै २००८

४. राजर्षी शाहू महाराजांच्या सामाजिक कार्याचा समाजशास्त्रीय अभ्यास, स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ,नांदेड (समाजशास्त्र), शोधार्थी ज्ञानोबा पडोळे, मार्गदर्शक डॉ. नारायण कांबळे

५. महर्षी विठ्ठल रामजी शिंदे व राजर्षी शाहू महाराज यांचे सामाजिक कार्याविषयी तुलनात्मक अभ्यास (इतिहास), टिळक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे संशोधक देवकाते बाळासाहेब, मार्गदर्शक डॉ. भामरे राजेंद्र वर्ष ऑगस्ट २०१७

६. छत्रपति शाहू महाराज आणि भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन, (इतिहास), स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड संशोधक प्रा. झेंडे दिनकर, मार्गदर्शक डॉ. जाधव एस. जी. डिसेंबर २००७

७. राजर्षी शाहू महाराज आणि ब्रिटिश सरकार यांच्यातील राजकीय संबंध : एक अभ्यास, (राज्यशास्त्र) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद संशोधक विठ्ठल देखणे, मार्गदर्शक डॉ. महेशकुमार मोटे, फेब्रुवारी २०१६

८. राजर्षी शाहू महाराजांची सामाजिक न्यायाबाबतची वाटचाल : एक समाजशास्त्रीय अभ्यास (समाजशास्त्र), स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड संशोधक रानबा आलटे, मार्गदर्शक डॉ. दिलीप खैरनार, वर्ष २००९

९. राजर्षी शाहू महाराजांच्या सामाजिक सुधारणांची राजकीय फलश्रुती, (राज्यशास्त्र) स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड संशोधक चिंचोले ओंकार, मार्गदर्शक डॉ. सौ. नंदिनी लडकलकर, सप्टेंबर २०१६

१०. भारत में छत्रपति शाहू जी महाराज के शैक्षिक योगदान विशेष रूप से दलितों के शैक्षिक उत्थान में (शिक्षा), बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी, शोधार्थी रेनू सिंह, मार्गदर्शक डॉ. जे. एल. वर्मा, वर्ष २००८

११. छत्रपति शाहू जी महाराज के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं शैक्षिक अवधारणाओं का ऐतिहासिक विश्लेषण, (१८७४-१९२२) (इतिहास) छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर शोधार्थी अम्बिका प्रसाद तिवारी, मार्गदर्शक, डॉ. सुबोध सक्सेना, वर्ष २००५

12. Economic policies and programmes of Rajarhi Chhatrapati Shahu Maharaj, Sivaji University, Kolhapur (Economics), Rahul Mhopare, Guide Prof. J. F. Patil June 2006

13. Shahu Chaatrapati of Kolhapur : A social Revolutonary 1874-1922 Shavaji University Kolhapur, M.D. Nalawade, Guide G. B. Delurkar

14. The study of educational thoughts and work of Chhatrapati Shahu Maharaj of Kolhapur, shivaji University, Kolhapur (Education) Prof. Jaisingrao B. Shinde, Guide Dr. K. S. Gurav June 1995

५.५.३.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के जीवन कार्य पर आधारित पीएच.डी. शोध-प्रबंध

१. डॉ. बी. आर. आंबेडकर यांचे मराठी वृत्तपत्रीय लेखन एक चिकित्सक अभ्यास, हातोडे रमेश, शोध निर्देशक – रमेश जाधव, डॉ. बा.आं.म.वि. (मराठी) २०१०

२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची राज्य समाजवादाची संकल्पना, खडसे यशवंत, शोध निर्देशक - क्षीरसागर आर. के., डॉ. बा.आं.म.वि. (राज्यशास्त्र) २००७

३. डॉ. बी. आर. आंबेडकर सामाजिक-राजकीय परिवर्तन, गायकवाड बालकृष्ण लक्ष्मण, शोध निर्देशक – निकम एस. एस.। डॉ. बा.आं.म.वि. (राज्यशास्त्र) २०१२

४. गांधी-आंबेडकर यांची सत्याग्रह चळवळ एक चिकित्सक अभ्यास, धाये राजेंद्र साहेबराव। शोध निर्देशक गवळी पी. ए.। डॉ. बा.आं.म.वि. (इतिहास) २००७

५. मराठी गद्यात्मक ललित लेखनातून व्यक्त होणारे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, पाटील भास्कर सुभाष, शोध निर्देशक – जाधव सुदाम, डॉ. बा.आं.म.वि. (मराठी) २००७

६. फुले-आंबेडकर विचारप्रणाली आणि मराठीतील दलित कादंबरी, कांबळे विलास, शोध निर्देशक विश्वनाथ शिवाजी विश्वविद्यालय (मराठी) १९९९

७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे वैचारिक लेखन, दीक्षित युवराज, शोध निर्देशक कुंभार प्रकाश, शिवाजी विश्वविद्यालय (मराठी) २००२

८. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर लेखन आणि भाषणे खंड १८ व भाग १२३ चा चिकित्सक अभ्यास, शिरसाठ मनोहर भिकाजी, शोध-निर्देशक लुलेकर पी.जी., डॉ. बा.आं.म.वि. – (मराठी) २००८

९. आधुनिक भारतातील मुस्लिमांचे राजकारण : गांधीजी आणि आंबेडकर, गिते सुनिता हनुमंतराव। शोध निर्देशक : पठाण झेड. ए., डॉ. बा.आं.म.वि. (इतिहास) २०१६

१०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या शैक्षणिक विचारांचा सद्यकालीन शैक्षणिक दृष्टीकोनातून अभ्यास, कांबळे भाऊसाहेब केरबा, शोध निर्देशक जगताप अनुपमा, सा.फु. पुणे विश्वविद्यालय, २०१६

११. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि भारतीय राजकारण १८९१-१९५६, सुधाकर लहुपंचाग, शोध निर्देशक-गायकवाड डी. एस., सा.फुले पुणे विश्वविद्यालय (इतिहास) १९९८

१२. सांप्रदायिकता आणि मुस्लिम या विषयी डॉ. आंबेडकरांच्या विचारांचा अभ्यास, दारवंडे संजय शंकरराव, शोध निर्देशक-उमर मोहम्मद, डॉ. बा.आं.म.वि. (राज्यशास्त्र) २०१४

१३. व्यक्तिमत्व विकासाच्या दृष्टिकोनातून शिक्षण आणि शहाणपण (सूज्ञता) यांचे संदर्भात म. गांधी,राष्ट्रसंत तुकडोजी व डॉ. आंबेडकर यांच्या विचारांचा तौलनिक अभ्यास, शाह बी. एस., शोध निर्देशक - मानेकर आर. बी., संत गाडगेबाबा अमरावती युनिवर्सिटी – (डिपार्टमेंट ऑफ एज्युकेशन) २००६

१४. आंबेडकरी चळवळ आणि दलित नाट्य सृष्टी,खिल्लारे एस.एन., शोध निर्देशक-कुंदप कन्हैया, शिवाजी विश्वविद्यालय (मराठी) १९९८

१५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे शैक्षणिक, सामाजिक, प्रेरणादायी, व्यक्तिमत्व आणि त्यांनी भारतीय संविधानात मांडलेल्या शिक्षण विषयक तरतुदींचे आविष्करण : एक अध्ययन, मगरे स्नेहलता तुकाराम, शोध निर्देशक – शेख एच.एम., डॉ. बा.आं.म. विश्वविद्यालय (डिपार्टमेंट ऑफ एज्युकेशन) २०१५

१६. आंबेडकरी विचारांच्या प्रभावातून निर्माण झालेली दलित कथा : एक विवेचक अभ्यास (बाबुराव बागुल, बंडू माधव, केशव मेश्राम, योगीराज वाघमारे, अमिताभ यांच्या संदर्भाने), गजरे विलास अण्णाराव, शोध निर्देशक - मस्केराज कुमार, एस.आर.टी.म.विश्वविद्यालय (स्कूल ऑफ लॅग्वेजेस ॲण्ड लिटरेचर) २०१५

१७. भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में आंबेडकर के चिंतन का प्रभाव, ज्ञानेंद्र विक्रम सिंह। शोध निर्देशक – राघोशरण सिंह, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००२

१८. डॉ. भीमराव आंबेडकर पर बौद्ध धर्म का प्रभाव, बेले राकेश कुमार, शोध निर्देशक - बेहर रामकुमार, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय (इतिहास) २००७

१९. बौद्ध धर्म और डॉ. आंबेडकर, कुंदन कुमार, शोधनिर्देशक – शैलेंद्र प्रसाद पंथारी, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (इतिहास) २००६

२०. गांधी एवं आंबेडकर एक तुलनात्मक अध्ययन, पांडेय ओंकारनाथ, शोधनिदेर्शक – प्रसाद राय, व्ही.बी.एस. विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००७

२१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन, सिंह अर्चना। शोध निर्देशक – सिंह रणजीत। व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००७

२२. दलित चेतना और डॉ. भीमराव आंबेडकर, सिंह मंगला प्रसाद, शोध निर्देशक – सिंह शेष कुमार। व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २०११

२३. डॉ. भीमराव आंबेडकर और सामाजिक न्याय, पवन रामजीत, शोधनिर्देशक –प्रसाद राय, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००६

२४. भारतरत्न बाबासाहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर का पुनर्मूल्यांकन, सिंह इंदरजीत, शोधनिर्देशक - सक्सेना आय. एस., बुंदेलखंड विश्वविद्यालय (इतिहास) २००७

२५. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में डॉ. भीमराव आंबेडकर की भूमिका, मिश्रा जय प्रकाश, शोधनिर्देशक - मिश्रा लक्ष्मी शंकर, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (इतिहास) २०१३

२६. सामाजिक परिवर्तन में पूना ॲक्ट की भूमिका, मनोज, शोधनिर्देशक – मधुरेंद्र कुमार, चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २०१५

२७. गांधी और आंबेडकर चिंतन एवं कृतित्व एक तुलनात्मक अध्ययन, त्रिपाठी श्रावण कुमार, शोधनिर्देशक - त्रिपाठी शशी मनी, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय – (राज्यशास्त्र) २००२

२८. गांधी और आंबेडकर के राजनैतिक दर्शन का समीक्षात्मक अनुशीलन, प्रजापती शाम नारायण, शोधनिर्देशक – दुबे विजय कांत, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय – (फिलोसॉफी) २००३

२९. डॉ. आंबेडकर के सामाजिक विचारों की प्रासंगिकता डॉ. आंबेडकर के विचारों पर आधारित एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, यादव सुजीत कुमार, शोधनिर्देशक चौहान साधुसिंह, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (समाजशास्त्र) २०१२

३०. डॉ. भीमराव आंबेडकर के शैक्षिक विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन, प्रकाश ओ. ए., शोधनिर्देशक – यादव रांबाती, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (एज्युकेशन) २००२

३१. भारतीय राष्ट्रवाद और डॉ. भीमराव आंबेडकर एक विवेचनात्मक अध्ययन, गुप्ता शिव कुमार, शोधनिर्देशक – सिंह देवेंद्र नारायण, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००८

३२. डॉ. बी. आर. आंबेडकर के शैक्षिक विचारों पर बौद्ध शिक्षादर्शन के प्रभावों का समीक्षात्मक अध्ययन, भूषण चंद्र, शोधनिर्देशक – तोमर जगतपाल सिंह, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (एज्युकेशन) २००१

३३. गांधी और आंबेडकर के राजनीतिक दर्शन में सामाजिक न्याय की धारणा एक तुलनात्मक अध्ययन, मिश्र अनुराग, शोधनिर्देशक – सिंह एस. के., व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००६

३४. वैदिक साहित्य धर्मक्षेत्र एवं पुराणों में उपलब्ध विरोधाभास के विषय में डॉ. आंबेडकर के विचार एक विवेचन, सुनीता, शोधनिर्देशक – मेहरा बलदेव सिंह, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय (संस्कृत) २०१५

३५. डॉ. भीमराव आंबेडकर के सामाजिक दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों का अध्ययन। सरोज विरेंद्र कुमार, शोधनिर्देशक – सिंह रामसेवक, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय – (शिक्षाशास्त्र) २००२

३६. डॉ. भीमराव आंबेडकर तथा अन्य सुधारकों के विशेष संदर्भ में समकालीन दलित वर्ग का जागकरण एवं उत्थान एक अध्ययन, जगदीश, शोधनिर्देशक – मिश्रा विश्वप्रकाश, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (इतिहास) २००३

३७. डॉ. भीमराव आंबेडकर के सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक विचारों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोन, देवी चंद्रलेखा, शोधनिर्देशक – सिंह मंजु, छत्रपति शिवाजी महाराज विश्वविद्यालय (समाजशास्त्र) २०१२

३८. स्वातंत्र्योत्तर भारत में सरदार वल्लभाई पटेल एवं डॉ. भीमराव आंबेडकर के योगदान का तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन, किरण, शोधनिर्देशक – सिंह रणजीत, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २०१४

३९. डॉ. आंबेडकर के संपादकीय का अंतर्वस्तु विश्लेषण (संदर्भ : मूकनायक एवं बहिष्कृत भारत), जमधडे भालचंद्र देविदास, शोधनिर्देशक – राय अनिल के. अंकित, म.गां.अं.हि.विश्वविद्यलय (पिलोवियन्स ॲण्ड पीस स्टडी) २००७

४०. भारत में सामाजिक समावेशन : नेहरु एवं आंबेडकर के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन, हेमा देवी, शोधनिर्देशक – साह बी.एल., कुमाऊं विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २०१५

४१. भारत की दलित राजनीति और डॉ. भीमराव आंबेडकर, आजाद चंद्र शेखर, शोधनिर्देशक - त्रिपाठी विष्णु चंद्र, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (राज्यशास्त्र) २००८

४२. आंबेडकर दर्शन और दलितोत्थान (पश्चिम निमाड के दलितों के विशेष संदर्भ में), शारदे मुकेश, शोधनिर्देशक – जगदीशचंद्र सिन्हा, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय (स्कूल ऑफ सोशल सायन्स)

४३. डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचारों के आधार पर दलितों के शैक्षिक उत्थान हेतु एक व्यावहारिक कार्य योजना का निर्माण, यादव संतोष कुमार, शोधनिर्देशक – उपाध्याय दयानंद, व्ही.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय (शिक्षाशास्त्र)२०१६

४४. Ambedkar on casteism and its historical, economical and philosophical implication, Saha Jhumu. Guide : Bhuimali Anil. Raigani Univerity (Philosophy) 2018

४५. The Social Philosophy of Dr. B. R. Ambedkar, Sugumar D. Guide : Rathinasalopathy. V. University of Madras (Philosophy) 1989

४६. Dr. Babasaheb Ambedkar role in the Bombay legislative council 1927-1939, S. Sorvoolaya Shivaputra. Guide : Kalekar V. L. S.R.T.M.U. (History) 2003

४७. Politicians Bureaucrats and Ambedkar Gram Vikas Yojana in Auraiya A Socialogical study, Kushwaha Anita. Guide : Pundir J. K., Choudhary Charan Singh University (Sociology) 2010

४८. Dr. Ambedkar thoughts for inclusive growth of India and analysis, Dube Rashmi. Guide : Parakh G. K. Vikarm University (School of Studies in Economics) 2016

४९. Social philosophy of Dr. B. R. Ambedkar, Chandraiah C. Guide : Rao M. V. Subba. Sri Venkateshwara University (Pol. Sci. & Pub. Admn.) 1989

५०. The influence of western liberal thinker on te thoughts of Dr. B. R. Ambedkar, Khabde D. T. Guide : Pathy T. V., Dr. B.A.M. U. (History) 1985

५१. Indian National congress and problem of depressed class with special reference to Mahatma Gandhi and Dr. B. R. Ambedkar, Nikam Shriram S. Guide : Shinde J. R., Dr. B.A.M.U. (Pol. Sci.) 1994

५२. Ambedkars perceptions of development an empirical sudy in Mysore District, Shiva Prasad E. Guide L Bsavaraja M. G., University of Mysore (Economics & Cooperation) 2016

५३. Dr. B. R. Ambedkar a study of his role as a social reformer and as an architect of the Indian constitution. Sinha Sunita. Guide : Jha Bhaskar Raiganj University (Pol. Sci.) 2017

५४. Dr. Bhimrao Ambedkar and Dalit Consciousness, Pandey Kavita, Guide : Dwivedi Ravindra Kumar, V.B.S. University (Pol. Sci.) 2006

५५. Empowerment of women a comparative study on the contributions of Basavewara and Dr. Ambedkar, Vijayalaxmi Shivaraya Gouda, Guide : Rathod P. B., Gulbarga University (Pol. Sci.) 2015

५६. Relevance of Dr. Ambedkars Economic philosophy, Rajkumar Ambaraya, Guide : Baswaraj Kumnoor. Gulbarga University – (Economics) 2017

५७. Ways of social justice ambedkar, Guandhi and Tagore A ceitical evoluation, Das Tanusri Guide : Bijoy Mukherjee, Visva Bharti University, (Philosophy & Retigion)

५८. An Indepth educational study of the life and work of Dr. Babasaheb Ambedkar with special reference to philophy and sociology of education, Leeta Fernandes Anna. Guide : Joshi N. M., S.P. Pune university (Education) 2003

५९. Womens emancipation and empowerment a critical examination of dr. B.R. Ambedkar social and political ideas, Yasmin. Guide : Sengupta Pradip Kumar and M. Yasin. University of North Bangal (Pol Sci.) 2008

६०. A study of the education contribution of B. R. Ambedkar in the context of socio cultural condition, Mogaria V. D. Guide : Yagnik M. K., Sardar Patel University (Education) 1996

६१. Justice and equality in Dr. B. R. Ambedkars vision of India, Mallik Chittaranjan. Guide : Mukherjee Anuradha and Banerjee Aparna. Jadovpur University, (Dept. of International Relations) 2011

६२. Writtings of Dr. B. R. Ambedkar on Varna system, Kamble Ramesh S. Guide : Pattar L. K., Karnataka University (Research center for womens studies) 2005

৬৩. Contribution of Dr. B. R. Ambedkar to the Indian economics thoughts and development an andytical study, Kamble Gautam Subana. Guide : Dandge R. G., Shivaji University (Dept. of Economics) 2008

৬৪. Dr. B. R. Ambedkar and the making of India a study in the context of his idea of just society, Sarkar Badal, Guide : Sengupta Pradip Kumar, University of North Bangal (Pol. Sci.) 2009

৬৫. Impact of Dr. Babasaheb Ambedkar thoughts on slected Dalit Autobiographies, Raibole Dhanajay sadashiv. Guide : Zade Manoj C, Dr. B.A.M.U. (English) 2015

৬৬. Dr. Babasaheb Ambedkar and Empowerment of women, S. Sharma Prakash, Guide : S. A. Palekar Gulbarga University (womens studies) 2017

৬৭. Dr. B. R. Ambedkar as an educational and social reformer , Ramadas V. Guide : K. Sivarajna. University of Calicut (Adult conting educations Extensiion services) 2002

৬৮. A study in the development of Dr. B. R. Ambdkars political Thought., Bhalerao H. M. Guide : Auti V. B. shivaji University (Pol. Sci.) 1986

৬৯. B. R. Ambedkars perception of democracy, Nayjot. Guide : Puri Rashmi, Panjab University (Dept of Gandhian Studies) 2007

৩০. Socio Religious philosophy of B.R. Ambedkar and the genesis of the neo Buddhist movement in India., Mandal Indramohan. Guide : Debnath Sailen. University of North Bangal. (History) 2003

৩১. The issue of caste in colonial India and the ideas and roles of Gandhiji and Ambedkar, Roy Joydip. Guide : Ghosh Ananda and Debnath Sailen. University of North Bangal (History) 2010

৬২. Dr. Ambedkars philosophy on human development, Subramanian S. Guide : Choudhuri Buddhadeb. University of Calutta (Dept. of Arts) 2002

৬৩. Dr. Ambedkar as a Journalist a study, Rajeev S. Guide : Balasubramanya A. S., Karnatak University (womens study) 2002

৬৪. Approaches to a socio political developments of the scheduled castes : a study of Mahatma Gandhi and B. R. Ambedkar. Nandakumaran V. K. Guide : Maharajan M., M.G.I.H. University (Study of peace Science) 2001

৬৫. Dr. Ambedkar and liberation of Indian women, Jadhav S. G. Guide : Kamble B. R. Shivaji University (History) 1994

৬৬. Concept of social justice a comparative study of Mahatma Gandhi and Babasaheb Ambedkar in the context of the national struggle for independence and social reconstruction, Bhuyan Nabanita. Guide : Reddi P.S., Gauhati University (Pol Sci.) 2004

৬৬. Bhartratna Dr. Babasaheb Ambedkars state socialismreflected in Indian conttitution, Gunratan Sadavarte. Guide : Ambhore Shankar. Dr. B.A.M.U. (Economics) 2013

৬৮. Modernisation of Buddhism the contribution of Ambedkar and Dalai lama XIV, Kenadi L. Guide : Norbu Dawa, JNU (School of International Studies) 1997

৬৯. Bharat Ratna Dr. B. R. Ambedkar 1891-1956 AD a tireless figher, Reddy G. N. Thimma Guide : Reddy K. Mallikarjuna. 2009

৮০. Ideas on social justice and economic equality A study of Nehru, Ambedkar and Jayprakash Narain., Thami Ambika. Guide : Sengupta Pradip Kumar. Univeristy of North Bangal (Pol.Sci.) 2008

८१. A critical study of thoughts of Dr. Babasaheb Ambedkar on issues related to Indias national security, Khare Vijay Shivram. Guide : Dalvi A.S., S.P.Pune University (Defence strategic Studies) 2002

८२. Socio political philosophy of Dr. B.R. Ambedkar, P.V. Rathnam. Guide : Prasad B. Sambasiva. Sri Venkateshwara University (Philosophy) 1994

८३. A study of the Revival of Buddhism in India, Ms. Le Thi Dieu Hien. Guide : Ranjana Kakkar. University of Allahabad (Medival & Modern History) 2016

८४. Dr. B. R. Ambedkar and reservation policy an analytical study, Bhagirath Lal. Guide : Sunil Kumar Jangir, Sre JJT Univesity (Fine Arts) 2014

८५. Analytical study of the economic Thought of B. R. Ambedkar with special reference to Indian economy, Prablhan M. S., Guide L Ranade P. S., Sant Gadgebaba Amrawati University (Commerce) 2004

८६. Discursive writing in Indian English a study of B. R. Ambedkar, Knagali Chandrama Shankaranand. Guide : Venugopal C. V., Kamatak University (English) 1992

८७. Dr. B.R. Ambedkars interpreatation of Buddha Doctrine Dhamma, Dabbole Jagannath Ramachandra. Guide : Joshi Tarkateerth Laxmanshstri. Shivaji University (Philophy) 1996

८८. Ambedkar and Indian nationalism : interface between culture tradition and democracy, Preetam. Guide : Radrigues Valerian. JNU (Center for political studies) 2009

८९. The study of the marginalized in the selected works of Dr. B. R. Ambedkar, Bhoge Prafullachandra Ramesh. Guide : Ambhore Uttam B. Dr. B.A.M.U. (English) 2016

९०. A study of educational thoughts and work of Dr. B. R. Ambedkar, Rajhans Shamshankar Sadashiv. Guide : Gurav K. S., Shivaji University (Education) 1995

९१. Dr. B. R. Ambedkar and Political mobilization of scheduled castes. Rathnaiah P. Venkata. Guide : Sri. Krishna S. Sri Venkatewara University (Pol. Sci. & Pub. Admn.) 1987

९२. Colonialism Nationalism and the emerging nation in English Epistolary writings of Mahatma Gandhi, Aurobindo Ghosh, Subbas Chandra Bose and Dr. Babasaheb Ambedkar, Gohil Hardeepshing Rajnitsingh. Guide : Ranganathn Balaji. Kranfigurai shyamji Krishna verma cachchh university (English) 2015

९३. Cast, society social justice and the constitution of India Dr. B.R. Ambedkars, Mohammad Taj. Guide : mathur L. N. Maharshi Dayanand University (Dept of Law) 2005

९४. Gandhi and Ambedkar on Untouchability a comparative study, Ratna Jony Guide : Sharma Manish. Punjab University (Gandhian & Peace studies) 2015

९५. Indian national congress and the depressed classes 1921 to 1947, Chahal Sarver kumar, Guide : Shukla S.P., Maharshi Dayanand University (History) 1999

९६. Reservation Policy : social justice – an empirical study of scheduled caste in three districts of Uttar Pradesh with special reference to Dr. B. R. Ambedkar, Khan Shoeb. Guide : Hayat Qaiser. Aligarh Muslim University (Dept. of Law) 2000

९७. Atrocities of scheduled castes and scheduled tribs in Karnataka since 1980 a case study of socio economic and political causes. Raju K. Keshava. Guide : Patil V.T., Karanta University (Pol. Sci.) 2003

९८. Compensatory discrimination in vaviour of scheduled castes and scheduled tribes under Indian constitution, Laxman G. Guide : Panthniak K., Osmania University (Faculty of Law) 2014

९९. Ambedkar and Gandhis vision of social transformation – a comparative study – Kumar Naresh. Guide : Sharma Vijay. Himachal Pradesh University, (Pol. Sci.) 2012

१००. Empowerment of backward classes through reservation policy with reference to dr. B. R. Ambedkar's Vision and challenges in current sociolegal Mitieu, Misra Ankit. Guide : mohammad Shabbir. Aligarh Muslim University (Dept. of Law) 2012

१०१. Dalit movement in India : centre, states and the alternatives 1947-2000, Jieun Lee Guide : Mukhrjee Mridula. JNU (School of Social Science) 2010

१०२. Dr. Ambedkar and Gandhiji their agenda for socio political transformation with special reference to the untouchables. Sagar R. B. Guide : Hegde V. S. Karnatka University (womens studies) 2002

१०३. A jurisprudential study of labour welfare and Dr. Ambedkar's vision in 21st centurys, Tariq Mohammad. Guide : Ahamad Akhaq. Aligarh Muslim University (Dept. of Law) 2006

१०४. Dr. B. R. Ambedkars contribution to Dalit Movement A critical study, N. Dayakar. Guide : G. Vedaparayana. Sri Venkateshwara University (Philosophy) 2005

१०५. Subultren perspectives of Gandhi and Ambedkar : contrast styles of their leaderships towards dalits, Thakur Sangita. Guide : Yadav B. D. Maharshi Dayanand University (History) 2006

निष्कर्ष :

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि, छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर का समाज के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और शैक्षणिक क्षेत्र पर अत्यंत गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। सामाजिक क्षेत्र इन चारों महापुरुषों से प्रभावित दिखाई देता है। राजनीतिक क्षेत्र पर भी इन महापुरुषों की गहरी छाप दिखाई देती है। सांस्कृतिक क्षेत्र में भी इनको लेकर काफी गतिविधियाँ दिखाई देती हैं। साहित्यिक क्षेत्र की बात करें तो हिंदी और मराठी दोनों भाषाओं के साहित्यकार छ. शिवाजी और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर से काफी प्रभावित दिखाई देते हैं। म. फुले तथा राजर्षि शाहू से मराठी की तुलना में बहुत कम लिखा गया है। शैक्षिक क्षेत्र मात्र इन चारों महामानवों की विचारधारा से काफी प्रभावित दिखाई देता है।

षष्ठ अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा एवं प्रभाव का मूल्यांकन

षष्ठ अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा एवं प्रभाव का मूल्यांकन

भूमिका

६.१ सामाजिक प्रभाव

६.२ राजनीतिक प्रभाव

६.३ सांस्कृतिक प्रभाव

६.४ शैक्षिक प्रभाव

६.५ साहित्यिक प्रभाव

षष्ठ अध्याय

छत्रपति शिवाजी-महात्मा फुले-राजर्षि शाहू-डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा एवं प्रभाव का मूल्यांकन

भूमिका :

छत्रपति शिवाजी महाराज, महात्मा जोतीराव फुले, राजर्षि शाहू महाराज और भारतरत्न डॉ. बाबासोब आंबेडकर महाराष्ट्र का ही नहीं बल्कि राष्ट्र का गौरव हैं। ये सभी राष्ट्रीय चरित्र होने से इनका समाज पर प्रभाव देखा जा सकता है। छत्रपति शिवाजी ने स्वराज्य की स्थापना करके एक आदर्श राज्य का निर्माण किया। जिसमें किसान, स्त्री के साथ आम जनता भी सुखी और सुरक्षित थी। अनेक नए-नए प्रयोग करके नए राज्य की नींव रखी। इस कारण जनता उन्हें एक लोककल्याणकारी और आदर्श राजा मानती है। उनके आचार-विचारों का प्रभाव आज भी जनमानस पर दृष्टिगोचर है।

महात्मा फुले ने स्त्री उद्धार और बहुजन हितार्थ जीवनभर कार्य किया। स्त्री शिक्षा के लिए तो उन्हें बहुत बडा संघर्ष करना पडा। उसी की फलश्रुति है आज महिला हर क्षेत्र में पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है। जायज है कि ऐसे महापुरुष के विचार और आचार का प्रभाव जनता पर हो। लोग आज महात्मा फुले के विचारों को लेकर चल रहे हैं। उनकी प्रतिमा आज भी लोगों के मन में है।

छत्रपति शिवाजी और महात्मा फुले के विचारों को लेकर अपना राज्य चलानेवाले, वंचित-बहुजनों को विकास को केंद्र में रखने वाले राजर्षि शाहू महाराज थे। उन्होंने आरक्षण, शिक्षा, छात्रावास, स्त्री उद्धार, अस्पृश्यों के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया। इस कारण समाज में उनके प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। आज भी आम जनता के दिलों में राजर्षि शाहू की प्रतिमा जैसी की वैसी ही बनी हुई है।

भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का अस्तित्व उपरोक्त तीनों महामानवों के बराबर ही है। उन्होंने भी वंचित, पीडित, दलित, बहुजनों के उद्धार का ही कार्य किया।

उनके लिए जीवन भर संघर्ष किया। अस्पृश्यों को उनके अधिकार दिलाये। इस कारण जनता आज उन्हें मसीहा के रूप में याद करती है। उनके विचारों के कारण हर कोई अपना अधिकार मांग रहा है।

इस प्रकार उपरोक्त चारों महापुरुषों की मूर्तियाँ आज भी लगाई जाती है। उनके नाम पर अनेक ग्रंथालय, संस्थाएँ, विश्वविद्यालय, योजनाएँ, राजनीतिक दल, अंतर्राष्ट्रीय स्मारक,अनेक ग्रंथ,एम.फिल., पीएच.डी. शोधप्रबंध भी लिखे जा रहे है। यह उनके कार्य और विचारों का प्रभाव ही कहा जाएगा। जिसे विस्तार से निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं।

६.१ सामाजिक प्रभाव :

इन चारों राष्ट्रीय चरित्रों के सामाजिक प्रभाव का यदि मूल्यांकन करें तो यह कहा जा सकता हे कि छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर की जयंती पूरे भारतवर्ष में हर्षोंल्लास के साथ मनायी जाती है। छत्रपति शिवाजी महाराज का राज्यविस्तार महाराष्ट्र के बाहर कर्नाटक, आंध्र, मध्य भारत तक विस्तारित होने से और आग्रा तक उनकी ख्याति होने से दिल्ली से लेकर हर राज्य की राजधानी में छत्रपति शिवाजी की जयंती मनायी जाती है। महात्मा फुले और राजर्षि शाहू महाराज का कार्यक्षेत्र भले ही महाराष्ट्र रहा हो लेकिन उनकी प्रतिमा भी भारत के कोने-कोने तक पहुँच चुकी है। इनकी जयंती भी महाराष्ट्र के साथ-साथ अन्य प्रांतों में भी मनायी जाती है किंतु भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने भारतीय संविधान को भारत के आम आदमी को सौंपते हुए दबे-पिचले, दलित-वंचित और स्त्रियों को जो हक और अधिकार दिये हैं, जिससे हर कोई यहाँ मुक्ति की सांस ले रहा है। इसीलिए डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर को आधुनिक भारत के निर्माता कहा जाता है। आज हर दलित-पिछडा-आदिवासी-ओबीसी-स्त्री मुक्ति की सांस ले रहा है। यह केवल डॉ. आंबेडकर जी द्वारा निर्मित संविधान के कारण हो सका है। संभवत: इसी कारण डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा गांव-गांव और घर-घर पहुँच गयी है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर को दलित-वंचित समाज अपना मसीहा मानता है। इसी कारण

भारत के हर गांव शहर में भारतरत्न भीमराव आंबेडकर की जयंती बडे धूमधाम से मनायी जाती है।

दिल्ली के संसद भवन से लेकर कई राज्यों के विधानभवन तक या राजधानी के शहरों से लेकर कस्बों तक इन महापुरुषों की मूर्तियाँ लगाई गयी हैं। स्वभाविक है डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के अनुयायी भारत भर में फैले हुए हैं, इनका कार्य भी संपूर्ण भारतवर्ष के लिए होने से डॉ. आंबेडकर की मूर्तियाँ अधिक मात्रा में देखने को मिलती है। इसी प्रकार अनेक गांव, शहर, गली-मोहल्ले को इन महापुरुषों के नाम देकर इनका गौरव किया गया है परंतु यहाँ भी भारतीय स्तर की बात की जाय और कुछ अपवाद छोड दिये जाय तो डॉ. आंबेडकर के नाम से ही अधिक मिलते हैं।

जहाँ तक अंतर्राष्ट्रीय प्रतिमा का सवाल है वहां छत्रपति शिवाजी और डॉ. आंबेडकर का प्रभाव आंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी देखा जा सकता है। लंडन के मुझियम में छत्रपति शिवाजी की तलवार और मूर्ति रखी गयी जो देशी-विदेशी पर्यटकों का आकर्षण का केंद्र बनी है। लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स में डॉ. आंबेडकर की मूर्ति लगायी गयी है तो ग्रेज इन लंडन में इनका भव्य चित्र लगाया है जो हेझल मार्गल इस ब्रिटिश चित्रकार ने बनाया है। डॉ. आंबेडकर के लंडन स्थित घर को अंतर्राष्ट्रीय स्मारक घोषित किया गया है। इस प्रकार इन महापुरुषों के सामाजिक प्रभाव को देखा जा सकता है।

६.२ राजनीतिक प्रभाव :

जहां तक भारतीय राजनीति का सवाल है, ये चारों महापुरुष राष्ट्रीय चरित्र होने से भारतीय राजनीति इनसे अछूती नहीं रह सकती। इन महापुरुषों के अनुयायियों को अपनी ओर खींचने के लिए इन चरित्रों की आवश्यकता को महसूस करते हुए राजनेता या राजनीतिक पार्टियां इन्हीं का नाम लेकर राजनीति करते आये हैं।

ये चारों महाराष्ट्र के भूमिपुत्र होने से यहां की राजनीति में तो उनका सबसे अधिक प्रभाव देखा जाता है। महाराष्ट्र में शिवसेना, शिवसंग्राम, संभाजी ब्रिगेड जैसी पार्टियाँ तो सीधे छत्रपति शिवाजी के प्रभाववश जन्मी हैं और उन्हीं के नाम से चलती हैं। म. फुले

के प्रभाव से 'समता परिषद' नामक संगठन बनाया गया जिसका महाराष्ट्र प्रांत में ओबीसी के संगठन के रूप में उसका प्रभाव है। राजर्षि शाहू महाराज के नाम से सीधे कोई पार्टी नहीं है परंतु कांग्रेस, राष्ट्रवादी कांग्रेस से लेकर कई छोटी-मोटी पार्टियां इनका नाम लेकर राजनीति करती है। डॉ. आंबेडकर सामाजिक नेता तो थे ही उसके साथ-साथ राजनीतिक नेता भी थे बाकायदा उन्होंने 'रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया' की स्थापना कर चुनाव भी लड़े थे। उनके बाद यह पार्टी कई खेमों में बंटकर अब उसके रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के (आठवले, खोब्रागडे, कवाडे आदि) कई गुट बन गये है। डॉ. आंबेडकर के पोते डॉ. बाळासाहेब आंबेडकर ने 'भारतीय रिपब्लिकन पार्टी-बहुजन महासंघ' नामक पार्टी से राजनीति करते हैं तो दूसरे पोते आनंदराज आंबेडकर 'रिपब्लिक सेना' के प्रमुख हैं। उत्तर भारत में 'भीम आर्मी' नामक सामाजिक संगठनने राजनीति में कदम रखा है। यदि राष्ट्रीय की बात करें तो छत्रपति शिवाजी के प्रभाव से बनी 'शिवसेना' तथा डॉ. आंबेडकर के प्रभाव से चलायी जा रही 'रिपब्लिक पार्टी ऑफ इंडिया', 'भीम आर्मी' और 'फुले-शाहू-आंबेडकर' के प्रभाव से 'बहुजन समाज पार्टी' का प्रभाव आज भी देखा जाता है।

दिल्ली में जहाँ डॉ. आंबेडकर का निवासस्थान था वहाँ भारत सरकार ने भव्य अंतर्राष्ट्रीय स्मारक बनवाया है। मुंबई के इंदुमिल में डॉ. आंबेडकर का भव्य स्मारक महाराष्ट्र सरकार बनाने जा रही है। अरब सागर के बीच छत्रपति शिवाजी का भव्य स्मारक महाराष्ट्र सरकार बनाने जा रही है जिसके लिए कुल १७०० करोड रुपये खर्च होंगे। कोल्हापूर में शाहू स्मारक और पुणे में म. फुले का स्मारक भी बनाने का संकल्प हुआ है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि महाराष्ट्र की ही नहीं बल्कि भारतीय राजनीति भी इन चार महापुरुषों से काफी प्रभावित दिखाई देती है।

६.३ सांस्कृतिक प्रभाव :

छत्रपति शिवाजी महाराज की जयंती, पुण्यतिथि, राज्याभिषेक दिन धूमधाम से मनाये जाते हैं। महाराष्ट्र के हर गांव-शहर से लेकर महाराष्ट्र के बाहर बेळगांव,

बसवकल्याण, विजापूर, बंगलुरु, म्हैसूर (कर्नाटक), हैदराबाद (तेलंगाना), माऊंट एव्हरेस्ट (नेपाल), तवांग (अरुणाचल प्रदेश), राष्ट्रीय संरक्षण प्रबोधिनी (एनडीए) पुणे, छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई,सॅन होजे, कॅलिफोर्निया (अमेरिका) कॉटरबुन्स (मॉरिशस), छिंदवाडा (मध्यप्रदेश), आग्रा (उत्तर प्रदेश), महाराष्ट्र भवन, संसद भवन, दिल्ली आदि जगह देश-विदेश में उनकी मूर्तियां लगायी गयी हैं।

अब तक छत्रपति शिवाजी पर 'बाल शिवाजी', 'कल्याणचा खजिना', 'शककर्ता शिवाजी', 'छत्रपति शिवाजी', 'शेर शिवाजी', 'सर्जा शिवाजी', 'मी शिवाजीराजे भोसले बोलतोय', 'फर्जद', 'फत्तेशिकस्त', 'हिरकणी', 'तानाजी : द अनसंग वारियर', 'प्रभो शिवाजी राजा' (ॲनिमेशन), 'गनिमी कावा', 'मराठा तितुका मेळवावा', 'महारानी येसूबाई' आदि १८ फिल्में बनी हैं।

'आग्र्याहून सुटका', 'बेबंदशाही', 'जाहले छत्रपति शिवराय', 'तीर्थ शिवराय' (संगीत), 'रायगडाला जेव्हा जाग येते', 'शिवगर्जना', 'शिवरायांचे आठवावे रूप', 'शिवाजी अंडर ग्राऊंड इन भीमनगर मोहल्ला', 'जाणता राजा' (महानाट्य मराठी), 'जाणता राजा' (महानाट्य हिंदी), 'इथे ओशाळला मृत्यू', 'शंभू राजे' 'संगीत छत्रपति शिवाजी', 'मृत्युंजय', 'अमावस्या', 'राजसंन्यास', 'नर शार्दुल राजा संभाजी' आदि १७ नाटकों का मंचन हुआ है।

'वीर शिवाजी' (हिंदी), 'राजा शिवछत्रपति' (मराठी), 'स्वराज्य रक्षक संभाजी' (मराठी), 'स्वराज्य जननी जिजामाता' (मराठी) आदि ४ धारावाहिक छ. शिवाजी पर बने हैं।

छत्रपति शिवाजी की प्रतिमा का जनमानस पर इतना प्रभाव है कि, पन्हालगड किला, सिंधुदुर्ग किला (महाराष्ट्र) और श्रीशैलम (आंध्रप्रदेश) में छत्रपति शिवाजी के मंदिर बनाये गये हैं।

महाराष्ट्र तथा महाराष्ट्र के बाहर कई सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ बनायी गयी हैं जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण संस्थाएँ इस प्रकार हैं –

आय.एन.एम. शिवाजी, लोणावळा (महाराष्ट्र), भारतीय नौदल प्रशिक्षण केंद्र, छत्रपति शिवाजी नाट्यगृह, राजापुर जि. रत्नागिरी, छत्रपति शिवाजी उद्यान, पुणे, छत्रपति शिवाजी सभागार, पुणे, राजे शिव छत्रपति बालोद्यान, पुणे, शिवसृष्टि पुणे, शिवतीर्थ (मुंबई), शिवाजी रुग्णालय (पुणे), शिवछत्रपति क्रीडानगरी (पुणे), शिवछत्रपति क्रीडा संकुल (पुणे), शिवाजी मंदिर (नाट्यगृह) पुणे, छत्रपति शिवाजी सैनिक विद्यालय पुणे, छत्रपति शिवाजी चीनी मिल इंदापुर (पुणे), छत्रपति शिवाजी जलतरणिका (पुणे), शिवसागर (कोयना का नाम), शिवाजी क्रीडा संकुल, कोल्हापुर, छत्रपति शिवाजी महाराज म्युझियम, मुंबई, शिवाजी स्टेडियम (दिल्ली, पानिपत, राबर्असन), शिवशाही (महाराष्ट्र राज्य बस सेवा) आदि। इसके अलावा महाराष्ट्र के हर शहर में शिवाजी नगर अवश्य है। महाराष्ट्र के बाहर लुधियाना (पंजाब), शोरापुर (कर्नाटक), सिकंदराबाद (आंध्रप्रदेश), हनेरी (कर्नाटक), शिवाजी पार्क (मुंबई, दिल्ली), अलवार (राजस्थान), मेट्रो स्टेशन (नई दिल्ली), छत्रपति शिवाजी टर्मिनस (रेल्वे स्टेशन, मुंबई), छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई जैसी महत्वपूर्ण संस्थाएँ शिवाजी के नाम पर हैं।

छत्रपति शिवाजी के नाम पर कई पुरुस्कार दिये जाते हैं। महाराष्ट्र सरकार की ओर से क्रीडा क्षेत्र के लिए शिवछत्रपति क्रीडा पुरस्कार, शिवछत्रपति जीवन गौरव पुरस्कार, छत्रपति साहस पुरस्कार, शिवाजी वनश्री पुरस्कार, महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा छत्रपति शिवाजी साहित्य पुरस्कार, महाराष्ट्र शाहिरी परिषद द्वारा शाहीर भूषण, शाहिर गौरव, युवा शाहिर पुरस्कार, संभाजी ब्रिगेड द्वारा शिव-शाहू पुरस्कार, छत्रपति शिवाजी महाराज किसान सम्मान योजना, अनुदानित (२५७) ग्रंथालय आदि उनके नाम पर हैं।

म. जोतीराव फुले की भी हर शहर में मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। विशेषकर उनके नाम पर स्थापित म. फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी (महाराष्ट्र), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र), सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे (महाराष्ट्र) आदि शिक्षा संस्थानों में म. फुले की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं।

म. फुले पर केवल दो फिल्में बनीं हैं – 'म. फुले', लेखक-निर्देशक प्र. के. अत्रे (१९५५), 'सत्यशोधक' नामक मराठी फिल्म अपूर्ण है। 'सावित्री-ज्योति' नामक धारावाहिक बनी है। 'मी जोतीबा फुले बोलतोय' (एकपात्री), 'सत्यशोधक', 'मी जोतीराव फुले बोलतोय', 'आसूड' और म. फुले की प्रेरणा से बने सत्यशोधक जलसे को देखा जा सकता है। फुले के जीवन पर आधारित केवल ४ नाटक मिलते हैं।

म. फुले के नाम से कई सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थान बनाये गये हैं किंतु ये सभी महाराष्ट्र में है। म. फुले सामाजिक संस्था, पुणे, महात्मा फुले समता परिषद, म. फुले नाट्यगृह, येवला (महाराष्ट्र) म. फुले सांस्कृतिक भवन, पुणे, म. फुले सभागार नाशिक, म. फुले सभागार, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, म. फुले उद्यान, सांगली, नाशिक, कन्नड, पुणे, म. फुले चीनी मिल आदि।

म. फुले के नाम पर महाराष्ट्र सरकार द्वारा जलमित्र पुरस्कार, म. फुले जल एवं भूमि संधारण अभियान, म. फुले जन आरोग्य योजना, म. फुले कर्जमाफी योजना, म. फुले स्मारक ट्रस्ट फुले पुरस्कार, समता परिषद म. फुले पुरस्कार, सत्यशोधक जागृति मंच सत्यशोधक पुरस्कार, फुले-शाहू-आंबेडकर समाजरत्न पुरस्कार, म. फुले प्रतिभा आघाडी राजर्षि शाहू पुरस्कार, महाराष्ट्र सरकार द्वारा सावित्रीबाई फुले पुरस्कार, सावित्रीबाई फुले स्वच्छ अंगणवाडी पुरस्कार आदि पुरस्कार दिये जाते हैं।

म. फुले के नाम पर म. फुले प्रबोधन मराठी साहित्य संमलन, फुले-आंबेडकरी साहित्य सम्मेलन, फुले-शाहू-आंबेडकर राष्ट्रीय साहित्य संमेलन तथा सावित्रीबाई फुले साहित्य संमेलन के रूप में हर वर्ष ४ साहित्य संमेलन लिए जाते हैं। म. फुले के नाम पर स्थापित सरकारी ग्रंथालयों की संख्या ४७१ है।

राजर्षि शाहू महाराज को भी महाराष्ट्र के हर शहर में मूर्तियाँ स्थापित की गयी है। महाराष्ट्र के बाहर छत्रपति शाहू जी महाराज कानपूर विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश) महाराष्ट्र भवन, संसद भवन (नई दिल्ली), सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणें में भी इनकी मूर्तियाँ स्थापित हैं। राजर्षि शाहू पर १ फिल्म बनी है पर इनके जीवन पर नाटक नहीं मिलता। 'लोकराजा राजर्षि शाहू' नामक १ धारावाहिक मराठी में बनी है।

सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थानों में राजर्षि शाहू पॅलेस, कोल्हापूर, शाहू अकादमी, पुणे, शाहू आर्ट गॅलरी, कोल्हापुर, शिव-शाहू-संभाजी उद्यान, पुणे, राजर्षि शाहू कपडा मिल, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू कुश्ती आखाडा, कोल्हापुर, शाहू चित्रमंदिर, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू कुश्ती प्रतियोगिता, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू जलतरणिका, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू बँक, कोल्हापुर, बीड, शाहू सृष्टि, पुणे, शाहू स्मारक, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू महाराज रेल टर्मिनस, कोल्हापुर, राजर्षि शाहू चीनी मिल, कोल्हापुर, शाहू टॉकीज, कोल्हापुर, कोल्हापुर का दूसरा नाम ही शाहू नगरी है। सारथी (छत्रपति शाहू महाराज संशोधन, प्रशिक्षण एवं मानव विकास संस्था) पुणे (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र के कई शहरों में शाहू नगर मिलेगा लेकिन महाराष्ट्र के बाहर शाहू नगर, विजापुर (कनार्टक), अमेठी (उत्तर प्रदेश) जिले का नाम बदलकर छत्रपति शाहू जी महाराज नगर किया गया था जो पूर्ववत किया गया है।

राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर कई पुरस्कार दिये जाते हैं जिनमें महाराष्ट्र सरकार द्वारा १०वीं, १२वीं के मेधावी छात्रों को राज्यस्तरीय 'राजर्षि शाहू गुणवत्ता पुरस्कार' दिये जाते हैं। राजर्षि शाहू छत्रपति मेमोरियल ट्रस्ट द्वारा राजर्षि शाहू पुरस्कार, बंधुता प्रतिष्ठान की ओर से 'राजर्षि शाहू न्याय पुरस्कार' सारथी संस्था द्वारा १०० छात्रों को एम.फिल./पीएच.डी. के लिए छात्रवृत्ति योजना। महाराष्ट्र सरकार द्वारा राजर्षि शाहू महाराज शिक्षण शुल्क (छात्रवृत्ति) योजना, यूपीएस्सी, एन.डी.ए. और एन.ए. परिक्षाओं के लिए पूर्वतयारी प्रशिक्षण योजना, आर्मी तथा पुलिस भर्ती हेतु प्रशिक्षण योजना, यूपीएस्सी तैयारी हेतु दिल्ली में प्रशिक्षण योजना आदि योजनाएँ उनके नाम से चलायी जाती हैं। राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर स्थापित सरकारी ग्रंथालयों की संख्या १५९ है।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की कीर्ति अब देश-विदेश में पहुँच चुकी है। हर गांव-शहर में डॉ. आंबेडकर की मूर्तियाँ देखने को मिलती हैं। कुछ महत्वपूर्ण स्थान इस प्रकार हैं – बिंदु चौक, कोल्हापुर, महाड, जि. रायगड, रेल्वे स्टेशन, ठाणे, दीक्षाभूमि,

नागपुर, चैत्यभूमि, दादर (मुंबई), तिरुवनंतपुरम् (केरल), लेह-लदाख, भारतीय संसद, नई दिल्ली, डॉ. आंबेडकर स्मारक, नई दिल्ली, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, इंदू मिल स्मारक मुंबई आदि स्थानों पर डॉ. आंबेडकर की मूर्तियां स्थापित की हैं। विदेशों में कोलंबिया विश्वविद्यालय, अमेरिका, लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, ओल्वर हॉम्पटन, ग्रेट ब्रिटन, कोयासन विश्वविद्यालय, जपान, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर स्मारक, लंडन, यार्क विश्वविद्यालय, टोरांटो (कॅनडा), संयुक्त राष्ट्रसंघ, सिडनी विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रेलिया, ब्रँडीज विश्वविद्यालय, बोस्टन (अमेरिका), मेस्साच्युसेटस एमहस्ट विश्वविद्यालय, अमेरिका, डॉ. आंबेडकर हायस्कूल, हंगेरी (दक्षिण आफ्रिका) आदि स्थानों में डॉ. बाबासाहब आंबेडकर की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं।

अब तक बाबासाहब के जीवन पर आधारित ५ फिल्में बनायी गयी हैं – डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर फिल्म मूल अंग्रेजी (हिंदी, मराठी, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगाली, उडिया, गुजराती आदि भाषाओं में डबिंग) युगपुरुष डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर (मराठी), डॉ. बी. आर. आंबेडकर (कन्नड), भीमगर्जना (मराठी), डॉ. आंबेडकर को समर्पित 'अ जर्नी ऑफ सम्यक बुद्ध' (हिंदी) आदि।

डॉ. आंबेडकर के जीवन पर आधारित २ धारावाहिक और २ डॉक्यूमेंटरी बनायी गयी हैं – डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर (मराठी), एक महानायक : डॉ. बी. आर. आंबेडकर (हिंदी), डॉ. आंबेडकर डाक्यूमेंटरी (हिंदी), डी.डी. नॅशनल और संविधान (राज्यसभा टीवी) आदि का उल्लेख मिलता है।

डॉ. आंबेडकर के जीवन पर अब तक कुल ९ नाटक बनाये गये हैं – मी आंबेडकर बोलतोय, प्रज्ञासूर्य (एकपात्री), युगपुरुष, चलो बुद्ध की ओर, रमाई, गांधी-आंबेडकर, वादळ निळ्या क्रांतीचे, डॉ. भीमराव (महानाट्य), राजगृहाची निळी स्पंदने (महानाट्य) आदि नाटक मिलते हैं।

डॉ. आंबेडकर के नाम पर स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ :

महाराष्ट्र सरकार की ओर से विभिन्न जिलों में कुल १०५ छात्रालय, महाराष्ट्र के हर जिले में सामाजिक न्याय भवन, डॉ. आंबेडकर स्टेडियम, बारामती, सांगली, नाशिक, नई दिल्ली, औरंगाबाद, बसवेश्वर नगर, बिजापूर, बंगलुरु,मुंबई, डॉ. आंबेडकर चीनी मिल, केशेगांव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रुग्णालय एवं अनुसंधान केंद्र, नागपूर, डॉ. आंबेडकर उद्यान, सावंतवाडी, भिमाचा किल्ला, चाळीसगांव, जि. जळगांव, डॉ. आंबेडकर सांस्कृतिक भवन, पुणे, डॉ. आंबेडकर स्मारक मुक्तभूमि, येवला, डॉ. आंबेडकर महानिर्वाण स्मारक, एरोली, मुंबई, चैत्यभूमि, दादर (मुंबई), दीक्षाभूमि (नागपुर), राष्ट्रीय स्मारक महाड (रायगड), डॉ. आंबेडकर स्मारक, आंबावडे (रत्नागिरी), डॉ. आंबेडकर संकल्प भूमि, वडोदरा (गुजरात), डॉ. आंबेडकर मेमोरियल पार्क, लखनऊ (उत्तर प्रदेश), डॉ. आंबेडकर प्रतिष्ठान, दिल्ली, डॉ. आंबेडकर स्मारक, महु (मध्यप्रदेश), डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय स्मारक, दिल्ली, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर स्मारक (लंडन), डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय स्मारक, इंदु मिल, मुंबई (प्रस्तावित), डॉ. आंबेडकर हवाई अड्डा, नागपूर, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

महाराष्ट्र के गांव-शहरों में एक आंबेडकर नगर अवश्य मिलेगा परंतु कुछ राज्यों में कुछ जिलों के नाम आंबेडकर नगर किये गये हैं – आंबेडकर नगर (उत्तर प्रदेश), आंबेडकर नगर (महु), मध्यप्रदेश, आंबेडकर नगर (राजस्थान), आंबेडकर नगर (दक्षिण दिल्ली), डॉ. आंबेडकर मार्ग, न्यू जर्सी (अमेरिका),

डॉ. आंबेडकर के नाम नाम पर लगभग १५ संगठन / दल कार्यरत हैं –

आंबेडकर राष्ट्रीय कांग्रेस, आंबेडकर समाज पार्टी, आंबेडकराईट पार्टी ऑफ इंडिया, भारतीय आंबेडकरी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, भीम आर्मी, भीम सेना, आंबेडकर स्टुडंट असोसिएशन, डॉ. आंबेडकर नॅशनल स्टुडंट फेडरेशन, डॉ. आंबेडकर इंटरनॅशनल मिशन, डॉ. आंबेडकर इंटरनॅशनल सेंटर, आंबेडकराईट मूव्हमेंट ऑफ कल्चर अँड लिटरेचर, डॉ. आंबेडकर इंटरनॅशनल असोसिशएन, जपान, रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया, जयभीम नेटवर्क (हंगेरी)

डॉ. आंबेडकर के नाम से देशभर में लगभग ३० से अधिक पुरस्कार दिये जाते हैं। डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार (भारत सरकार) शाहू-फुले-आंबेडकर पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार (भारत सरकार), मारवाडी फाऊंडेशन आंबेडकर स्मृति पुरस्कार, नागपुर, डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर पुरस्कार (गुजरात सरकार), डॉ. बी. आर. आंबेडकर रतन पुरस्कार (राजस्थान सरकार), डॉ. आंबेडकर उत्कृष्ट ग्रंथालय पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर समाजभूषण पुरस्कार संस्था तथा व्यक्तिगत (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर जीवन गौरव पुरस्कार (आंबेडकराईट मूव्हमेंट ऑफ कल्चर अँड लिटरेचर), डॉ. बी. आर. आंबेडकर पुरस्कार (बी. आर. आंबेडकर स्पोर्ट फाऊंडेशन), डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार (भारतीय दलित साहित्य अकादमी, दिल्ली), डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, भारतीय दलित अकादमी, डॉ. आंबेडकर प्रतिष्ठित सेना पुरस्कार, भारतीय दलित अकादमी, डॉ. आंबेडकर फेलोशिप पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, डॉ. आंबेडकर कलाश्री पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, डॉ. आंबेडकर सेवाश्री पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, डॉ. आंबेडकर साहित्यश्री पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, डॉ. आंबेडकर चेतना पुरस्कार, चेतना असोसिएशन अँड डॉ. आंबेडकर फाऊंडेशन, डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय पुरस्कार, चेतना असोशिएन एँड डॉ. आंबेडकर फेडरेशन, डॉ. आंबेडकर पुरस्कार, पुणे महानगर निगम, डॉ. आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार जीवन वेलफेअर सोसायटी, नागपुर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समाज उत्थान पुरस्कार, महाराष्ट्र सरकार, कई सामाजिक संस्थानों द्वारा डॉ. आंबेडकर के नाम से पुरस्कार दिये जाते हैं।

डॉ. आंबेडकर के नाम से कई सरकारी योजनाएँ चलाई जाती हैं –

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कृषि स्वावलंबन योजना, भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विशेष सामाजिक प्रोत्साहन योजना, बार्टी अर्थात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संशोधन एवं प्रशिक्षण योजना आदि योजनाएँ चलायी जाती हैं। डॉ. आंबेडकर के नाम से महाराष्ट्र में ३१२ ग्रंथालय स्थापित हैं।

६.४ शैक्षिक प्रभाव :

छत्रपति शिवाजी के नाम से देशभर में केवल ३ विश्वविद्यालय हैं – शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर, छत्रपति शिवाजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश), छत्रपति शिवाजी महाराज विश्वविद्यालय, नई मुंबई।

म. फुले के नाम पर भी देशभर में केवल एक विश्वविद्यालय स्थापित है – म. फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, जि. अहमदनगर (महाराष्ट्र)

राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर एक ही विश्वविद्यालय, स्थापित है – छत्रपति शाहूजी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम पर स्थापित कुल १४ विश्वविद्यालय हैं – १) बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनौ (उत्तर प्रदेश), २) बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार), ३)डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली, ४) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात), ५) डॉ. बी. आर. आंबेडकर विधि विश्वविद्यालय, सोनीपत (हरियाणा), ६) डॉ. बी. आर. आंबेडकर अर्थशास्त्र विश्वविद्यालय, बंगलुरु (कर्नाटक), ७) डॉ. बी. आर. आंबेडकर सामाजिक शास्त्र विश्वविद्यालय, महू (मध्यप्रदेश), ८) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र), ९) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर तंत्रशिक्षण विश्वविद्यालय, लोणेरे (महाराष्ट्र), १०) डॉ. भीमराव आंबेडकर विधि विश्वविद्यालय, चेन्नई (तमिलनाडू), १२) डॉ. बी. आर. आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा (उत्तर प्रदेश), १३) डॉ. बी. आर. आंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद (तेलंगाना), १४) डॉ. बी. आर. आंबेडकर विश्वविद्यालय, श्रीकाकुलम (आंध्र प्रदेश) आदि।

महाराष्ट्र में स्थापित महाविद्यालय – छ. शिवाजी -६४, म. फुले – २१, राजर्षि शाहू-१८, डॉ. आंबेडकर-१३४। विद्यालय – छ. शिवाजी-१७१, म. फुले-७६२,

राजर्षि शाहू-१६६, डॉ. आंबेडकर-५७९। पाठ्यक्रम – UPSC, MPSC, NCERT, CBSE के पाठ्यक्रम में चारों महापुरुषों का समावेश।

कई विश्वविद्यालयों में अतिरिक्त पाठ्यक्रम बनाये हैं। जैसे – डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय के बी. ए. तथा एम. ए. के पाठ्यक्रम में 'म. फुले तथा डॉ. आंबेडकर विचारधारा' का समावेश किया गया है। सभी संकायों के लिए 'भारतीय संविधान' प्रश्नपत्र को अनिवार्य किया गया है। बार्टी और सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय ने 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर थॉट ऑन इंडियाज नैशनल सेक्सुरिटी' नाम से पदव्युत्तर पाठ्यक्रम बनाया है। देशभर में अनुसंधान केंद्र – छ. शिवाजी. -५, म. फुले-१४, राजर्षि शाहू-२, डॉ. आंबेडकर-६८।

६.५ साहित्यिक प्रभाव :

म. फुले और डॉ. आंबेडकर ने स्वयं साहित्यिक-वैचारिक लेखन किया है। म. फुले ने लगभग ८ ग्रंथ लिखे हैं तो डॉ. आंबेडकर ने कुल ३३ ग्रंथ लिखें हैं।

छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर से प्रभावित साहित्य इस प्रकार हैं-

	छत्रपति शिवाजी	महात्मा फुले	राजर्षि शाहू	डॉ. आंबेडकर
कविता	६५	०२	०१	१०
जीवनी	७५	१६	१०	३५
कथा साहित्य	९५	०५	०६	११
नाटक	६३	०६	००	०८
इतिहास / वैचारिक	९४	२९	०९	१९०
साहित्य संमेलन	०१	०६	०१	१५
शोध-प्रबंध	२१	३१	१५	१०५

उपरोक्त बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि, छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू, तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर भारत के महान सुपुत्र हैं, राष्ट्रीय नेता है। छ. शिवाजी, म. फुले तथा राजर्षि शाहू इन तीनों के कार्य तथा प्रतिमा के प्रभाव से महाराष्ट्र में इनकी जयंती अत्यंत धूमधाम से मनायी जाती है। महाराष्ट्र के बाहर भी कई राज्यों में विशेषकर शहरों में भी कम-अधिक मात्रा में इन तीनों महापुरुषों की जयंती मनायी जाती है, यहाँ तक कि विदेशों में भी इनकी जयंती के कार्यक्रम होते हैं। परंतु भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर इन सबसे आधुनिक हैं। भारतीय लोकतंत्र को संविधान देने का अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य उन्होंने किया है। दीन-दलित, वंचित, आदिवासी, किसान, मजदूर, स्त्री इन सबके हक और अधिकार दिलाने हेतु बाबासाहेब ने अपना संपूर्ण जीवन समर्पित किया है। समाजिक समता के लिए और दलित समाज को इन्सान के रूप में पहचान दिलाने की दृष्टि से उन्होंने आजीवन संघर्ष किया है। पहले शिक्षित बनो, फिर संगठित हो जाओ और अपने हक और अधिकारों के लिए संघर्ष करो यह अनमोल संदेश उन्होंने ही दिया है। उन्हीं की बदौलत, दलित, वंचित आदिवासी समाज के लोग सम्मान की जिंदगी जी रहे हैं। वे सभी जानते हैं कि यह केवल बाबासाहेब के कारण ही संभव हो सका है। इसलिए वे सभी डॉ. भीमराव आंबेडकर को ही अपना मसीहा मानते हैं। इसी कारण भारत के कोने-कोने में उनकी प्रतिमा पहुँच चुकी है। डॉ. आंबेडकर नयी सदी के आयकॉन बन गये हैं। अत: भारतभर में उनकी जयंती बडी धूमधाम से मनायी जाती है। जहाँ तक अंतर्राष्ट्रीय प्रतिमा का सवाल है, इन चारों में से छत्रपति शिवाजी तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की प्रतिमा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुँच चुकी है। विदेशों में इनकी मूर्तियां बनायी गयी हैं, डॉ. आंबेडकर के नाम से तो लंदन में अंतर्राष्ट्रीय स्मारक बनाया जा रहा है। इनकी जयंती विदेशों में भी मनायी जाती है।

मुंबई में अरब सागर के बीच छत्रपति शिवाजी का भव्य स्मारक बनाया जा रहा है। भारत के संसद भवन में शिवाजी-फुले-शाहू-आंबेडकर इन चारों की मूर्तियाँ लगायी जा चुकी है। पुणे में म. फुले का तो कोल्हापुर में राजर्षि शाहू का स्मारक विकसित किया

जा रहा है। दिल्ली में डॉ. आंबेडकर का अंतर्राष्ट्रीय स्मारक बनाया जा रहा है तो मुंबई में डॉ. आंबेडकर के अंतर्राष्ट्रीय स्मारक का काम चल रहा है। इक्कीसवीं सदी में भी इन चार महापुरुषों से भारतीय समाज प्रभावित है।

भारतीय राजनीति पर भी इन चार महापुरुषों का प्रभाव दिखाई देता है। छत्रपति शिवाजी के प्रभाव से शिवसेना, शिवसंग्राम, छावा जेसे संघटन कार्यरत हैं तो फुले के प्रभाव से समता परिषद, बहुजन महासंघ, महुजन समाज पार्टी आदि संघटन कार्यरत हैं। डॉ. आंबेडकर के प्रभाव से भारतीय रिपब्लिक पार्टी, रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया, बहुजन समाज पार्टी, रिपब्लिक सेना, भीम आर्मी आदि संघटन आज भी राजनीति में सक्रिय दिखाई देते हैं।

छत्रपति शिवाजी महाराज पर १८ फिल्में, १७ नाटक, ४ धारवाहिक बने हैं। म. फुले पर २ फिल्में और १ धारावाहिक बनाये गये हैं। राजर्षि शाहू के नाम पर १ फिल्म और १ धारावाहिक तो है परंतु आश्चर्य है कि एक भी नाटक नहीं है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के जीवन पर ५ फिल्में २ धारावाहिक २ डाक्यूमेंटरी तथा ८ नाटक बनाये गये हैं। छत्रपति शिवाजी के प्रभाव से ऐतिहासिक पोवाडों का निर्माण हुआ, म. फुले के प्रभाव से सत्यशोधकीय जलसों का तो डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के प्रभाव से आंबेडकरी जलसों, दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य का निर्माण हुआ। इन सभी के नाम पर कई राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार दिये जाते हैं।

शैक्षिक क्षेत्र में भी इन चार महापुरुषों का काफी प्रभाव दिखाई देता है। छत्रपति शिवाजी के नाम पर देशभर में स्थापित ३ विश्वविद्यालय हैं। महात्मा फुले के नाम पर केवल १ विश्वविद्यालय है, राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर १ विश्वविद्यालय है तो डॉ. आंबेडकर के नाम पर १४ विश्वविद्यालय स्थापित हैं। महाविद्यालय की बात करें तो महाराष्ट्र में छ. शिवाजी के नाम पर ६४, म. फुले २१, राजर्षि शाहू १८ तथा डॉ. आंबेडकर के नाम पर १३४ महाविद्यालय स्थापित हैं। विद्यालय की बात करें तो छ. शिवाजी १७१ म. फुले ४६२, राजर्षि शाहू १६६, डॉ. आंबेडकर ५७९ हैं। UPSC

से लेकर CBSC तक और महाविद्यालय से लेकर स्कूल के पाठ्यक्रमोंमें इन चार महापुरुषों का अंतर्भाव है। देशभर में जो अनुसंधान केंद्र हैं, उनकी स्थिति इस प्रकार हैं – छ. शिवाजी-५, म. फुले-१४, राजर्षि शाहू-२, डॉ. आंबेडकर-६८। शिक्षा के क्षेत्र में भी डॉ. आंबेडकर का ही सबसे अधिक प्रभाव दिखाई देता है। म. फुले और और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पर साहित्य का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। इन्हें वैचारिक क्रांति के जनक कहा जाता है। म. फुले ने ८ और डॉ. आंबेडकर ने ३३ वैचारिक-साहित्यिक ग्रंथ लिखे हैं। मराठी साहित्य में म. फुले को आधुनिक युग के पहले कवि के रूप में सम्मान दिया जाता है। छत्रपति शिवाजी महाराज, म. फुले, राजर्षि शाहू महाराज तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ये चारों भारतीय जनमानस के महानायक हैं। अत: साहित्यिक क्षेत्र इनसे अछूता कैसे रह सकता है? अनेक भारतीय लेखकों ने इनसे प्रभावित होकर कई साहित्यिक-वैचारिक ग्रंथों का निर्माण किया है।

कविता अर्थात इनके जीवन पर आधारित काव्य ग्रंथों की बात करें तो छत्रपति शिवाजी पर ६५ ग्रंथ, डॉ. आंबेडकर पर १० ग्रंथ मिलते हैं, लेकिन जो स्वयं कवि थे उन म. फुले पर २ और राजर्षि शाहू पर केवल १ ग्रंथ मिलता है। जीवनी में भी छत्रपति शिवाजी पर ७५ ग्रंथ, डॉ. आंबेडकर पर ३५ ग्रंथ तो म.फुले पर १६ ग्रंथ मिलते हैं इनमें से केवल २ हिंदी है और राजर्षि शाहू के जीवन पर १० ग्रंथ तो मिल जाते हैं, किंतु ये सभी मराठी के हैं। हिंदी में एक भी जीवनी नहीं मिलती। कथा साहित्य में छत्रपति शिवाजी पर आधारित ग्रंथ ९५ हैं, डॉ. आंबेडकर के जीवन पर ११ ग्रंथ, तो म. फुले तथा राजर्षि शाहू पर क्रमश: ५ और ३ ग्रंथ मिलते है। नाटकों की यदि बात करें तो छत्रपति शिवाजी पर ६३ डॉ. आंबेडकर पर ८ म. फुले पर ६ तो राजर्षि शाहू पर एक भी नाटक नहीं मिलता। ऐतिहासिक/वैचारिक ग्रंथों की बात की जाय तो छत्रपति शिवाजी पर ९४ ग्रंथ, म. फुले पर २९ ग्रंथ, राजर्षि शाहू पर केवल ९ ग्रंथ तो डॉ. आंबेडकर पर सबसे अधिक १९० ग्रंथ मिलते हैं। इन चारों के जीवन कार्य पर आधारित पीएच.डी. उपाधि हेतु किये गये शोध-कार्य के शोध-प्रबंधों की संख्या इस प्रकार हैं –

छत्रपति शिवाजी -२१, म. फुले-३१, राजर्षि शाहू-१५, डॉ. आंबेडकर १०५। यहाँ भी यह देखा जा सकता है कि सबसे अधिक शोधकार्य डॉ. आंबेडकर पर हुआ है तो सबसे कम राजर्षि शाहू महाराज पर दिखाई देता है।

म. फुले और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर को दलित-वंचित समाज अपने प्रेरणास्त्रोत मानता है। इन्हीं से प्रेरणा पाकर दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य, महिला लेखन निर्माण हुआ है। अब तो दलित, आदिवासी, बहुतन समाज के स्वतंत्र साहित्य संमेलन होने लगे हैं। छत्रपति शिवाजी से प्रेरणा ग्रहण कर मराठा साहित्य संमेलन, राजर्षि शाहू पर स्वतंत्र रूप से नहीं किंतु 'फुले-शाहू-आंबेडकर साहित्य संमेलन' लिया जाता है किंतु म. फुले के नाम पर ६ साहित्य संमेलन और डॉ. आंबेडकर से प्रेरणा ग्रहण कर लगभग १५ साहित्य संमेलन आयोजित किये जाते हैं। इन चारों महापुरुषों के नाम से कई राज्य, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार दिए जाते हैं। इसमें भी सबसे अधिक राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार डॉ. आंबेडकर के नाम से दिये जाते हैं।

कुल मिलकार छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव दिखाई देता है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा साहित्यिक हर क्षेत्र पर इन चारों महापुरुषों की अमिट छाप दिखाई देती है। ये चारों महापुरुष आज भी प्रेरणाप्रद दिखाई देते हैं।

सप्तम अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

सप्तम अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

भूमिका

७.१ छत्रपति शिवाजी महाराज के विचारों की प्रासंगिकता

७.१.१ सामाजिक कार्य की प्रासंगिकता

७.१.२ राजनीतिक कार्य की प्रासंगिकता

७.१.३ आर्थिक कार्य की प्रासंगिकता

७.१.४ धार्मिक, सांस्कृतिक कार्य की प्रासंगिकता

७.२ महात्मा जोतिराव फुले के विचारों की प्रासंगिकता

७.२.१ धार्मिक,सांस्कृतिक स्थिति के संदर्भ में

७.२.२ राजनीतिक स्थिति के संदर्भ में

७.२.३ सामाजिक स्थिति के संदर्भ में

७.३ राजर्षि शाहू महाराज के विचारों की प्रासंगिकता

७.३.१ शिक्षा की सक्ति

७.३.२ आरक्षण के अविष्कारकर्ता

७.३.३ लोकतंत्र का मंत्र

७.३.४ समानता के लिए कार्य

७.३.५ स्त्री शिक्षा में वृद्धि

७.३.६ विधवा पूनर्विवाह एवं अंतरजातीय विवाह को बढावा

७.३.७ अंधश्रद्धा का विरोध

७.३.८ लोककल्याणकारी राजा

७.३.९ कलाओं को प्रोत्साहन

७.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की वर्तमान में प्रासंगिकता

७.४.१ राजनीतिक क्षेत्र

७.४.२ समानता को लेकर विचार

७.४.३ आर्थिक क्षेत्र

७.४.४ सामाजिक क्षेत्र

७.४.५ महिलाओं से संबंधित विचार

७.४.६ शिक्षा संबंधीत विचार

७.४.७ अधिकारों के संबंध में विचार

७.४.८ श्रमिक वर्ग के लिए कार्य

७.४.९ अस्पृश्यों तथा दलितों के मसीहा

७.४.१० छुआछूत के विरुद्ध संघर्ष

निष्कर्ष

सप्तम अध्याय

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू एवं डॉ. आंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

भूमिका :

भारत देश सदियों से महान व्यक्तियों के निर्माण की भूमि रही है। आज देश में हो या उससे भी आगे जाकर कहूँ तो वैश्विक स्तर पर भी भारतीय महापुरुषों की गाथा गाई जाती है। उसमें महत्वपूर्ण नाम छत्रपति शिवाजी, म. फुले, रा. शाहू, डॉ. आंबेडकर आते हैं। इनके साथ भी अनेक महापुरुष हैं जिनका योगदान महत्वपूर्ण रहा है। किन्तु उपरोक्त नाम एक समान विचारधारा में आते हैं।

छत्रपति शिवाजी महाराज ने स्वराज्य की स्थापना करके तत्कालीन समाज को अनेक आक्रमणकारियों के अन्याय, अत्याचार, शोषण से मुक्त करने का कार्य किया। समाज में समता स्थापित कर, धर्मनिरपेक्ष राज्य का निर्माण किया, उनके सद्सद्विवेक विचार और आचरण के कारण पूरा विश्व आज उन्हें अपना आदर्श मानता है।

शिवाजी के कार्य और विचारों की परीपाटी को लेकर म. फुले ने अपने समय में कार्य किया। जिन महिलाओं का आदर अपनी मां की तरह शिवाजी महाराज ने किया था उन्हें अन्याय, अत्याचार और शोषण की खाई से बाहर निकालने का कार्य शिक्षा की नींव रखकर म. फुले ने किया। इस कारण उन्हें स्त्री शिक्षा के आद्यजनक कहा जाता है। स्त्रियों के साथ-साथ वंचित बहुजनों के लिए भी म. फुले के योगदान को आज विश्व याद करता है।

राजर्षि शाहू महाराज भी इसी विचारधारा के व्यक्तित्व थे। राजा होकर भी सामान्य जनता, वंचित, बहुजन लोगों की शिक्षा, न्याय के लिए जीवनभर कार्यरत रहें। सामान्यों

के लिए शिक्षा को बढावा दिया और शिक्षा के साथ नोकरी में भी आरक्षण की शुरुआत की। इस कारण विश्व आज उन्हें आरक्षण के जनक के रूप में पहचानता है।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर भी इसी धारा की महत्वपूर्ण कडी है। जिन्होंने शिवाजी, फुले, शाहू के विचारों को लेकर अपने जीवन की परिक्रमा की। वंचित बहुजनों को उनके अधिकार देने का कार्य कानून के आधार पर किया। साथ ही भारत देश को लोकतंत्र स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण संविधान दिया। इस कारण उन्हें भी भारतीय संविधान निर्माता के रूप में विश्व भर में ख्याती मिली है। उनके योगदान को भी आज भारतीय समाज नहीं भूल सकता।

उपरोक्त महापुरुषों के कार्य और विचारों के आधार पर ही आज देश मार्गक्रमण कर रहाहै। उपरोक्त सभी महापुरुषों के कार्य और विचारों की प्रासंगिकता को निम्नलिखित रूप में विस्तार से देख सकते हैं।

७.१ छत्रपति शिवाजी महाराज के विचारों की प्रासंगिकता :

छत्रपति शिवाजी भारतीय जनमानस के हृदय सम्राट हैं। वह भारतीय राष्ट्रवाद के जनक थे। उनका चरित्र राष्ट्रीय मान बिंदु है। शिवाजी राष्ट्र प्रेमी और लोक-कल्याणकारी राजा थे। समाज उत्थान के लिए उन्होंने जिस क्षेत्र में कार्य किया उस क्षेत्र पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव छोड़ दिया। ७०० सालों की अपमानजनक पराजय की परंपरा को खंडित करके हिंदुओं के पुरुषार्थ को जगाया तथा नए युग का निर्माण किया। शिवाजी महाराज युगदृष्टा पुरुष तथा महान शक्तिशाली वीर,बहुजन उद्धारक, भारतीय नौसेना के संस्थापक, छापामार रणनीति के प्रवर्तक, भारतीय राष्ट्रवाद के जनक, दुष्ट संहारक, धर्मनिरपेक्ष, देश-प्रेमी, जन-प्रेमी, बुद्धिमान राजा थे। उन्होंने ४०० साल पूर्व व्यक्त किए गए सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक विचार आज भी कालजयी और उपयुक्त हैं। भारतीय इतिहास को नया मोड़ देनेवाले वह अमर महानायक रहे हैं। जब तक विश्व का अस्तित्व रहेगा, उन्हें याद किया जाएगा।

७.१.१ सामाजिक कार्य की प्रासंगिकता:

छत्रपति शिवाजी के समय की सामाजिक स्थिति विषमता से ओत-प्रोत थी। शिवाजी राजे ने बिखरे हुए हिंदुओं को एकत्र करके कुशल संगठन किया और स्वराज्य की स्थापना कर सामाजिक सुधार किए। छत्रपति शिवाजी के पहले से ही अधिकांश लोग यवनों की अधीनता में ही धन्यता मानते थे, उनके यहां नोकरी करते थे तथा अपने भाइयों और रिश्तेदारों पर अत्याचार करते थे। अपने मालिक को खुश रखने तथा जहागीर हासिल करने के लिए यह कार्य करते थे। ऐसी मानसिक स्थिति में जीने वाले लोगों का संगठन छत्रपति शिवाजी ने किया था। सर जदुनाथ सरकार लिखते हैं- 'उनके उदय से पहले मराठा जाति कई दक्षिणी राज्यों में परमाणु की भांति बिखरी हुई थी। उन्होंने इस शक्ति को एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में संगठित किया और यह कार्य चार बड़ी शक्तियों के घोर विरोध के बावजूद किया। किसी अन्य मध्यकालीन हिंदू ने इतनी कार्यक्षमता नहीं प्रदर्शित की।' इससे छत्रपति शिवाजी के संगठन शक्ति तथा शौर्य का परिचय हमें मिलता है।''[१] उस समय भारतीय समाज व्यवस्था में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान था। धर्म के नाम पर अनेक अनिष्ट परंपराओं तथा अंधश्रद्धा से समाज जीवन ग्रस्त था। शिवाजी राजा ने धर्म की परंपरागत मान्यताओं का खंडन किया और समाज को एक नए विचारों से परिपूर्ण दिशा की ओर अग्रेसर किया। उनका जीवन अत्यंत संघर्षशील रहा। शिवाजी राजा के समय का समाज यवनों की गुलामी में धन्यता मानने वाला था। भारतीय समाज संघर्षशील है और वह दूसरों की गुलामी कर रहा है। यह छत्रपति शिवाजी ने देखा था। उन्होंने भारतीय समाज को नई प्रेरणा से प्रभावित किया और स्वतंत्रता प्राप्ति का महामंत्र दिया। समाज हित में ही राज्य का विकास और विस्तार निर्भर होता है। राजकीय, आर्थिक विकास के साथ सामाजिक मूल्यों का विकास भी आवश्यक है। यह जानकर छत्रपति शिवाजी ने सदियों से चली आ रही पराजय की अपमानजनक परंपरा को खंडित किया और युग परिवर्तनकारी कार्य किया।

छत्रपति शिवाजी का अपने देश, समाज पर बहुत प्रेम था। समाज हित की दृष्टि से उन्होंने अनेक नए नियम बनाए। राजा पर प्रेम करने वाले और जनता को दु:ख देनेवाले लोग उन्हे पसंद नहीं थे। ऐसे लोगों को शिवाजी राजा मृत समझते थे।

आज समाज में ऐसे कितने लोग हैं जो शासकों से प्रेम करते हैं और सामान्य जनता को हानी पहुंचाते हैं। अत: आज के शासकों और समाज को छत्रपति शिवाजी के सामाजिक विचारों की नितांत आवश्यकता है। छत्रपति शिवाजी नैतिकता के आदर्श थे। राज्य की स्त्री को समानता से देखने वाले वह राजा थे। दुश्मनों की स्त्री को अपनी मां-बहन मानकर उसकी रक्षा करना छत्रपति शिवाजी अपना कर्तव्य समझते थे। युद्ध समय में उनकी सेना के साथ स्त्रियों को ले जाना मना था। दुश्मनों की सेना में अनेक स्त्रिया होती थी। सेनापतियों की पत्नियां, नृतकियाँ आदि को शत्रु युद्ध समय में भी साथ ले जाते थे। शत्रु की पराजय होने से उनकी स्त्रियां और बच्चे बेसहारा होते थे, उनको सम्मान के साथ उनके घरों तक पहुंचाने वाले शिवाजी नैतिक राजा थे। इस संदर्भमें लाला लजपतराय लिखते हैं- '३ अक्तूबर, सन १६७० सूरत लूटने के बाद लौटते समय दाउद खाँ ५००० सैनिकों के साथ शिवाजी महाराज का पीछा कर रहा है।....शिवाजी ने दाउद खां का सामना किया और उसे भगा दिया। शत्रु की सेना में मराठों का दल एक स्त्री के अधीन युद्ध कर रहा था। वह मराठा स्त्री शिवाजी के हाथ लग गई।उन्होंने उस मराठा स्त्री को बहुत आदर व सत्कार के साथ पुरस्कार देकर उसको उसके घर भिजवा दिया।'[२] कल्याण के दुर्ग विजय के बाद सेनापति की पुत्रवधू को आबाजी सोनदेव बंदी बनाकर शिवाजी राजा को भेंट देते हैं। उस समय शिवाजी राजा ने उस स्त्री को अपनी माता मानकर उसका सम्मान किया और उसे वापिस उसके परिवार के पास भिजवाया।

भारतवर्ष में आज स्त्री की इज्जत सुरक्षित नहीं है। अनेक बहू-बेटियों के साथ बलात्कार जैसा घिनौना कृत्य कर उन्हें मार दिया जाता है। शासनकर्ता को शिवाजी राजा जैसे कठोर नियम बनाकर, अपराधी को जल्द-से-जल्द कड़ी-से-कड़ी सजा देनी चाहिए। छत्रपति का शासन न्याय का शासन था। उनके राज्य में गरीब-अमीर ऐसा भेदभाव न होकर सबके लिए समान न्याय था। कोई स्वराज्य का अधिकारी प्रजा के साथ कुछ अन्याय करता तो उसको कड़े से कड़ा दंड दिया जाता था। भले ही वह आप्तजन क्यों ना हो। जैसे- ''रांजेगांव के पाटील ने एक लड़की पर अत्याचार किया, बेइज्जत हुई

लड़की ने आत्महत्या की। महाराज को यह बात समझते ही वह क्रोधित हो गए। पाटील को कारण पूछा तो पाटील ने कहा गांव मेरा है, मुझे कैसा रहना है, मैं तय करूंगा। आप कौन होते हैं हमें कारण पूछनेवाले। महाराज ने उसके हाथ पैर कांट दिए।''[३] इस तरह कोई व्यक्ति मदमस्त होता और प्रजा पर अन्याय करता तो वह उसको कड़ी से कड़ी सजा देते थे।

शिवाजी ने किसान, नारी आदि के साथ कोई भी अन्याय न हो इसकी सतर्कता बरती थी। बेलारी की विधवा सावित्री देसाई पर अत्याचार करनेवाले सेनापति सखूजी गायकवाड को सेनापति पद से हटाकर कठोर दंड दिया था। छत्रपति शिवाजी ने नैतिकता और न्याय निष्ठा का आदर्श समाज के सामने खड़ा किया था। छत्रपति शिवाजी ने समाज हित के लिए अपनी जान दांव पर लगा दी थी। अपने संपूर्ण जीवन में उन्होंने कभी सुख का अनुभव नहीं किया। हमेशा समाज हित को अपना उद्देश्य मानकर कार्य किया। छत्रपति शिवाजी को जनमानस, बहुजन-प्रतिपालक राजा माना जाता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि समाज में रहनेवाले सभी जाति के लोग तथा प्राणियों का भी शिवाजी महाराज ने रक्षण किया।

छत्रपति शिवाजी ने पुरंदर संधि इसलिए की थी कि अपने समाज व सेना की हानी न हो। शिवाजी लोकराजा थे। जनता का दु:ख अपना दु:ख समझ कर दूर करते थे। उन्होंने किसानों को अनेक सुविधाओं से युक्त किया और उनको उन्नति का नया मार्ग दिखाया। अकाल से बचने के लिए तालाब और कुओं का निर्माण कराया। तत्कालीन समय में कृषि ही उत्पादन का प्रमुख साधन था। इसलिए स्वराज्य में सुख और खुशहाली लानी है तो किसानों को बढ़ावा देना चाहिए, यह उन्होंने जाना था। इसलिए उन्होंने किसान हित के कई कार्य किए। जैसे- ''कम वर्षा के कारण संकट में घिरे किसानों को बीज, बैल खरेदी, कृषि उपयोगी साधन बनाने के लिए बीना ब्याज की नकद रकम कर्ज के रूप में दी और अधिकारियों से कहा कि जब तक किसानों की आर्थिक स्थिति कर्ज देने लायक नहीं होगी, तब तक मूल रकम की मांग भी न की जाए। किसानों की आर्थिक

स्थिति में सुधार नहीं हुआ तो उन्हें दिए गए कर्ज को माफ किया जाए।''[४] युद्ध समय में किसानों के अनाज को हानी न पहुंचे इसका निर्देश अपने सैनिकों को देनेवाले वह लोककल्याणकारी राजा थे। अन्याय का प्रतिकार कर अन्यायी को कठोर दंड देनेवाले आदर्श और नीतिमान राजा थे।

छत्रपति शिवाजी एक श्रेष्ठ और समाज सुधारक राजा थे। उनका प्रभाव आज भी जनमानस पर रहा है। भारत के प्रत्येक परिवार में अपने पुत्र का नाम गर्व से 'शिवाजी' रखा जाता है। माता-पिता की यह आकांक्षा रहती है कि अपना पुत्र भी शिवाजी राजा जैसा पराक्रमी, नैतिक और आदर्श जवान हो। लेकिन उनके जैसा दूरदर्शी, पराक्रमी और नैतिक वीर आज तक भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। छत्रपति शिवाजी ने कर्मठ धर्मनीति को त्यागकर अंधश्रद्धा का निर्मूलन किया। अपने देश के लोगों का जबरदस्ती से धर्म परिवर्तन किए जाने पर उन्हें पुन: अपने धर्ममें सम्मान दिया।

भारतवर्ष की स्त्री, बच्चे और प्रजा की सुरक्षा के कड़े प्रबंध उन्होंने किए। अपने आदर्श विचारों से समाज में देश प्रेम और एकता निर्माण करनेवाले वह क्रांतिकारक राजा थे। समाज में शांति और सुव्यवस्था स्थापित करने के लिए कठोर न्याय तथा प्रशासनिक व्यवस्था उन्होंने निर्माण की। समाज में प्रचलित अनाचार, भ्रष्टाचार, अत्याचार, अनीति तथा गुनाहगारी आदि को नष्ट कर, शिवाजी राजे ने सदाचारी एवं जनहित का राज्य निर्माण किया। विविध जाति धर्मों के लोगों को एक क्षेत्र में लाने तथा एक विचार से प्रेरित करनेवाले वह महान राजा थे। आज समाज के प्रत्येक व्यक्ति को उनके विचारों की आवश्यकता है। सामान्य जनता, राजनेता तथा विविध जाति के लोगों को शिवाजी राजा के कार्यों से प्रेरणा लेकर कार्य करना चाहिए। तभी एक सशक्त भारत का निर्माण हो सकता है।

७.१.२ राजनीतिक कार्य की प्रासंगिकता:

छत्रपति शिवाजी के पूर्व, हिंदुस्तान की राजनीति में कोई प्रबल संगठनकर्ता या शासक नहीं हुआ। दक्षिण में शालीवाहनों का राज्य तेरहवीं शताब्दी के अंत में अलाउद्दीन

खिलजी के आक्रमण से नष्ट हुआ। उत्तर में महाराणा प्रताप का राज्य भी यवनों के आक्रमण से ध्वस्त हुआ था। दोनों के आक्रमण से हिंदुस्तान में भयानक अन्याय, अत्याचारों से देश की दुर्दशा हो गयी। शिवाजी राजा के समय मराठा जाति असंगठित थी। सामर्थ्य होते हुए भी अनेक वीर यवनों की गुलामी कर रहे थे।

छत्रपति शिवाजी ने अपने व्यक्तित्व गुणों से वीरों में देश प्रेम जगाया और उन्हें संगठित किया। भारतीय राजनीति को एक नया मोड़ देकर आदर्श स्थापित करनेवाले शिवाजी राजा महानायक रहे हैं। उनके समय में अनेक सरदारों के पुत्र थे, जो पिता के साथ यवनों की नौकरी करते थे। छत्रपति शिवाजी की बुद्धि कुशाग्र थी। उन्हें दूसरों की गुलामी करके, अपनों को पीड़ा देना, मंजूर नहीं था। इसलिए उन्होंने जनता का दु:ख नष्ट करने के लिए नए साम्राज्य का निर्माण किया। विरासत में राज्य पाना आसान है लेकिन स्वकर्तृत्व से नए राज्य का निर्माण करना अत्यंत कठिन होता है। शिवाजी राजे ने यह सिद्ध कर दिखाया। अपने बाहुबल, बुद्धिबल एवं आत्मबल से। जन कल्याणकारी राज्य व्यवस्था निर्माण करने वाले शिवाजी राजा महामानव रहे हैं।

छत्रपति शिवाजी की सफल राजनीति में उनका गुप्तचर विभाग अनन्य महत्त्व रखता है। क्षेत्रों की गतिविधियों का पता लगाकर उचित समय पर उस पर हमला करने की नीति से शिवाजी राजा अजय रहे। शत्रु के दरबार में भी अपने गुप्तचर रख कर उसका भेद जानने में वह कामयाब रहे। सूरत मुहिम से पहले छत्रपति शिवाजी महाराज और माँ साहेब जिजाऊ के बीच इस योजना के संदर्भ में बातचीत होती है। मां साहेब जिजाऊ इस मुहिम के संदर्भमें चिंता व्यक्त करती है और कहती है- 'तुम भी कमाल करते हो, खुद अपने घर के लोगों को भी तुम कुछ पता नहीं लगने देते। नेताजी तो तुम्हारे सेनापति है बेचारे, उन पर भी विश्वास करते हो ? ''आप गलत समझ रही है, मां साहिब यह अविश्वास नहीं है, यह सुरक्षा है। हमारे गुप्तचर, हमारे इरादे जानते हैं, आज सूरत शहर में भी हमारे भेदिए घुसे बैठे हैं। हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। हमारे संगमेश्वरी जहाज आज सूरत के पासवाले समुद्र की ओर रवाना हो चुके हैं। मुहिम के

आयोजन में कहीं जरा भी अंदाजा चूक गया तो सफलता कैसे मिलेगी ?।''[५] आज भारतवर्ष का गुप्तचर विभाग मजबूत स्थिति में है। लेकिन भ्रष्टाचार के कारण उसमें भी प्रश्नचिह्न लगते हैं। स्वार्थ-लोलुप अधिकारी तथा सिपाहियों से गुप्तचर विभाग ग्रस्त है। इसलिए समाज में अनाचार और गुनाहों का प्रमाण बढ़ गया है। इसलिए आज शिवाजी राजा के विचारों की आवश्यकता महसूस होती है।

पुरंदर संधि के अनुसार शिवाजी राजा आगरा जाते हैं, किंतु आगरा जाने की उनकी राजनीति आश्चर्यजनक रही है। औरंगजेब के विरोधी रहे उसके दरबार के सेनापतियों तथा जनता को स्वतंत्रता की प्रेरणा देना और उनमें स्वाभिमान निर्माण करना, उनके संगठन से भारत वर्ष को स्वतंत्र करना, छत्रपति शिवाजी का उद्देश्य था। इसलिए उन्होंने औरंगजेब की किल्लत को ठुकरा कर दरबार के नियमों का उल्लंघन कर उसे अपमानित किया। राजपूत, सिख, जाट, बुंदेलों में आत्मबल निर्माण करना उनका उद्देश्य था। इसलिए शिवाजी राजा आगरा गए थे। उन्हें ज्ञात था कि औरंगजेब धोखेबाज है और अपनी जान की परवाह न करते हुए वह आगरा गए। शिवाजी की यह राजनीतिक चाल संपूर्णता सफल नहीं हुई। फिर भी पूरे देश में औरंगजेब के खिलाफ विद्रोह पैदा हुआ। इससे छत्रपति शिवाजी की राष्ट्रभक्ति तथा राष्ट्रीय एकात्मता का कार्य दृष्टिगत होता है। छत्रपति शिवाजी राष्ट्र निर्माण के कार्यमें कितने सतर्क थे? इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है। जो आज भी प्रासंगिक है।

'जनता का राजा' ऐसी छत्रपति शिवाजी की छवि थी। इसलिए स्वराज्य के प्रति निष्ठा रखनेवाले अनेक वीरों ने उनके एक इशारे पर जान की बाजी लगा दी। शिवाजी राजा कुशल संगठनकर्ता थे। गरीबों, दलितों, मावलों और छोटे-छोटे पाटीलों, देशमुखों की सेना बनाकर उन्होंने महान संगठन कार्य किया। अपनी पूरी ताकत से सभी शत्रुओं को परास्त करनेवाले वह महान वीर थे। आज भारत के नेतागण स्वार्थ के लिए धर्म, भाषा, जाति-प्रांत के आधार पर राजनीति कर रहे हैं। इससे राष्ट्रीय एकात्मता को हानी पहुंचती है। आज कई वादों-विवादों में देश फंसा हुआ है। इससे बाहर निकलने के बजाय राजनेता विवादों को बढ़ा रहे हैं। आज भारतवर्ष की राजनीति राष्ट्रीय एकात्मता के लिए पोषक

नहीं लगती। इसमें सुधार करने के लिए छत्रपति शिवाजी के राजनीतिक विचार आज भी प्रासंगिक है।

शिवाजी राजे ने अन्याय का विरोध किया। उनकी न्याय नीति सबके लिए समान थी। उनके स्वराज्य में कोई ऊंच-नीच नहीं था। सभी के लिए समान न्याय ही मिलता था। उनके इसी समान न्याय के संदर्भमें प्रसिद्ध इतिहासकार जदुनाथ सरकार कहते हैं कि- 'वैश्विक सहिष्णुता और समान न्याय से अपने सभी प्रजा का रक्षण ही शिवाजी की राजनीति का मुख्य उद्देश्य था।'[६] उनका संघर्ष किसी जाति से ना होकर स्वतंत्रता के लिए था। इसलिए विभिन्न जाति धर्मों के लोगों को एक सूत्र में बांधने का सफल कार्य शिवाजी राजे ने किया। आज के राजनेता और अधिकारियों को शिवाजी राजा की प्रेरणा से सर्वधर्म समभाव रुपी एकता का अनुकरण करना आवश्यक है। छत्रपति शिवाजी की जयंती हम प्रतिवर्ष मनाते हैं। उनकी याद में केवल उनकी तस्वीर पर फूल-माला पहनाकर भाषण देना ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि ऐसे महापुरुषों के गुणों को हमें अपने आचरण में लाने की आवश्यकता है, जो आज भी प्रासंगिक है।

'शिव जयंती' उत्सव आज उत्सव न रहकर राजनीति बन गया है। जिस महापुरुष ने कभी किसी का द्वेष नहीं किया वह 'शिव जयंती' उत्सव में होता है। ऐसे महापुरुष की हम आज दो जयंतियाँ मना रहे हैं। इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है? आज स्वार्थ लोलुप राजनेता छत्रपति शिवाजी का कार्य भूल गए हैं। उनके नाम से अपना किस प्रकार फायदा होगा यह देखा जाता है। आज हमारे नेता अपना जन्मदिन बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। वह अपना जन्मदिन तिथि के अनुसार नहीं बल्कि तारीख के अनुसार मनाते हैं। ऐसा होते हुए भी किसी महापुरुष, राष्ट्र-निर्माता की जयंती अपने राजनीतिक फायदे के लिए, तिथि के अनुसार और तारीख के अनुसार दो बार मनाना गलत है।

आगरा भेंट के पूर्व राजा जयसिंह शिवाजी के कुशल राजनीति के संदर्भमें औरंगजेब से कुछ महत्वपूर्ण बातें अपने पत्र में लिखता है। उस संदर्भमें जदुनाथ सरकार लिखते हैं- ''राजा जयसिंह ने औरंगजेब को लिखे पत्र में कहा था कि शिवाजी को कैद

करके या उसे मार कर कोई फायदा नहीं होगा। क्योंकि शिवाजी ने आगरा आने के पूर्व ही अपने राज्य की अच्छी व्यवस्था कर रखी है। उनका प्रधान मंडल उनके पीछे भी अच्छी तरह से राजकाज को संभाल सकता हैं।''[७] आज हमारे देश में छत्रपति शिवाजी के जैसे महान व्यक्ति के नाम पर सभी राजनीतिक दल अपने स्वार्थ के लिए उनके नाम का उपयोग करते हैं। उनके व्यक्तित्व के गुणों को त्याग कर केवल उनके नाम पर राजनीति करना आजकल आसान हो गया है। इतनी शक्ति शिवाजी राजे के चरित्र में है कि उनके नाम का जादू समाज मेंआज भी चलता है।

शिवाजी सहिष्णु नीति के राजा थे उनके समय में एक भी सांप्रदायिक दंगा नहीं हुआ। लेकिन आज उनके नाम की आड़ में सांप्रदायिक दंगे होते हैं। इससे सामान्य जनता का जनजीवन ध्वस्त होता है और अपरिमित हानी होती है। शिवाजी महाराज हमेशा चाहते थे कि राज्य में जनता की किसी भी तरह की हानि ना हो। इसके लिए उन्होंने सतर्क रहकर व्यवस्था की थी। इस के संदर्भ में चंद्रशेखर शिखरे लिखते हैं- ''शत्रु सेना से तथा अपनी सेना से सामान्य जनता की हानी ना हो। इसका विचार करनेवाले शिवाजी राजा सेना की अत्यंत उचित व्यवस्था रखते थे। इसलिए स्वराज्य के लिए अनेक वीर मर मिटने को तैयार हो गए।''[८] इस प्रकार कह सकते हैं कि शिवाजी महाराज का प्रजा के प्रति प्रेम था। उन्होंने जनहित और जनरक्षा हेतु दिन-रात कठोर परिश्रम करके एक सुखी और समृद्ध लोककल्याणकारी राज्य का निर्माण किया। आज छत्रपति शिवाजी के नाम पर 'शिवसेना' जैसे दल निर्माण हो गए हैं और 'शिवसंग्राम' जैसे संगठन हो गए हैं। उनके पुत्र संभाजी के नाम पर 'संभाजी ब्रिगेड', 'छावा' जैसे युवकों के संगठन हो गए हैं। आज छत्रपति शिवाजी के विचारों की देश को आवश्यकता है। क्योंकि आज के युवक ही भारत निर्माण का सफल कार्य कर सकते हैं। छत्रपति शिवाजी की बुद्धिमत्ता, राजनीति, जनप्रेम, दूरदर्शिता, संगठन कौशल, नैतिकता आदि की प्रेरणा लेकर राजनीति में परिवर्तन की आवश्यकता है।

छत्रपति शिवाजी की न्याय व्यवस्था पारदर्शी थी। अपराधी को उसके अपराध के अनुसार सजा दी जाती थी। इसलिए अपराध करने की हिम्मत किसी में नहीं थी। आज

भारतवर्ष की क्या स्थिति है? अपराधी सफेद कपड़े पहन कर खुलेआम घूमते हैं और बेगुनाह को सजा मिलती है। अनाचार, खून, डकैती, बलात्कार, सांप्रदायिक दंगों से आज संपूर्ण देश त्रस्त है। छत्रपति शिवाजी के राज्य काल में एक भी सांप्रदायिक दंगे का इतिहास में चित्र नहीं है। छत्रपति शिवाजी की इस नीति से भारतीय नेताओं ने राजनीति और कानून में सुधार करने की आवश्यकता है। शिवाजी की न्याय नीति आज आवश्यक है।

छत्रपति शिवाजी ने परंपरागत रणनीति को त्याग कर छापामार नीति, नयी रणनीति, अवसर पर पीछे हटने की रणनीति का उपयोग किया। कम सेना से विशाल सेना पर विजय पाने के लिए छत्रपति शिवाजी ने अपनी शोध दृष्टि से नयी रणनीति का आविष्कार किया। कुशल राजनीतिज्ञ अपने कम से कम सेना के बल पर युद्ध में अधिक सफलता प्राप्त करते हैं। शिवाजी ने भी छोटी सी सेना लेकर स्वराज्य की स्थापना की और धीरे-धीरे अपने स्वराज्य को विशाल बनाया। इसके पीछे उनकी कुशल रणनीति ही थी। शिवाजी जब भी किसी युद्ध के लिए जाते थे तब कम से कम सेना के बल पर ही युद्ध में विजय प्राप्त करते थे। उमरखेड में अपने कुशल रणनीति के बल पर शिवाजी महाराज ने कारतालब खां की ३०,००० सेना से ३०० सेना लेकर ही विजय प्राप्त की। जैसे- ''शत्रु सेना सही जगह पर आयी है। अब देर ना हो, यह महाराज ने पहचान लिया। इन्होंने अपनी सेना को आक्रमण का आदेश दिया। शिवाजी महाराज के पेड़, पौधों, घास में छुपें हुए ३०० सैनिक कारतालब खाँ के ३०,००० सेना पर टूट पड़े। खाँ की सेना चल-चल कर थक गई थी। उनकी तलवारें म्यान में ही थी। उनकी लड़ने की मानसिकता नहीं थी और अचानक हमला होगा, ऐसा सपने में भी उन्होंने नहीं सोचा था। सभी ओर अंधेरा था, इस अंधेरे में अपने आप को संभालना कठिन था। शिवाजी महाराज की सेना अनुभवी थी वह पहाड़ और पर्वतों से वाकिफ थे कारतालब खाँ की सेना अब पूरी तरह से फँस गई थी।''[९] इस तरह शिवाजी महाराज ने अपनी रणनीति का परिचय देकर अल्प सेना के बल पर कई युद्ध जीते। इससे उनकी रणनीतीज्ञता हमें ज्ञात होती है।

देश को विदेशियों से धोखा हो सकता है। इसलिए शिवाजी राजा ने नौसेना की स्थापना की। अनेक जलदुर्ग बनाए। शिवाजी राजा की स्थापत्य कला भी आश्चर्यजनक थी। प्रत्येक दुर्ग की रक्षा के लिए अलग प्रकार से स्थापत्य था। इसके कई उदाहरण आज भी हम देखते हैं। अनेक छोटे बड़े जहाजों और युद्ध नौकाओं का निर्माण उन्होंने किया। जिससे शत्रु के बड़े-बड़े जहाजों पर आक्रमण कर उन्हें घायल बना दिया। इस प्रकार छत्रपति शिवाजी की शोध दृष्टि अपार थी। उनका दुर्ग स्थापत्य कला का राज आज भी वैज्ञानिकों के सामने एक चुनौती है।

छत्रपति शिवाजी ने इतिहास के अध्ययन से अपनी प्रशासनिक व्यवस्था में रचनात्मक परिवर्तन किया और एक आदर्श व्यवहारिक अष्टप्रधान मंडल का निर्माण किया। प्रत्येक मंत्रियों को अलग जिम्मेदारियों से अवगत कराया और अपने कार्य का महत्व समझाया। शासन व्यवस्था और रयत में ऐसे संबंध स्थापित किए कि प्रत्येक व्यक्ति को शिवाजी राजा का राज्य अपना लगता था। जागीर प्रथा का उन्होंने विरोध किया और उसे नष्ट किया। राजकीय कर्मचारियों और सैनिकों को नकद वेतन दिया जाता था। तथा सभी जाति वर्गों के लोगों को सरकारी नौकरियोंमें समान अवसर प्राप्त थे। इसलिए कर्मचारियोंमें भ्रष्टाचार की भावना ही नहीं थी। छत्रपति शिवाजी ने अन्याय का विरोध स्वतंत्रता तथा धर्मनिरपेक्षता जैसे शाश्वत मूल्यों के लिए किया था। यह मूल्य और सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है। इसलिए शिवाजी राजा का कार्य वर्तमान और भविष्य के लिए भी कालजयी रहेगा।

७.१.३ अर्थिक कार्य की प्रासंगिकता:

स्वराज्य की स्थापना में जिस प्रकार शिवाजी की राजनीति, युद्ध नीति दृष्टिगत होती है। उसी प्रकार उनकी आर्थिक नीति भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। अर्थव्यवस्था पर ही सैन्य, सामर्थ्य, धर्म, अनुशासन और जनकल्याण आधारित होता है। छत्रपति शिवाजी अपनी दृढ़ अर्थव्यवस्था के बल पर ही स्वराज्य निर्माण में सफल हुए। उनकी कार्यक्षम अर्थनीति ही हिंदवी स्वराज्य की स्थापना और विस्तार में सफल रही। स्वराज्य निर्माण

करना, उसका विस्तार करना, एवं उसकी व्यवस्था आदि को धन की नितांत आवश्यकता होती है। अपने राज्य को कल्याणकारी बनाने के लिए छत्रपति शिवाजी ने आज की कैबिनेट मंत्री मंडल पद्धति जैसा मंत्रिमंडल बनाया था। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' का कार्य उन्होंने किया। इसके लिए लगने वाला धन भी अधिक था। मंत्रिमंडल के मंत्रियों, सैनिकों को नगद वेतन, अमात्य और सचिव को १५ हजार होन एवं बाकी लोगों को १० हजार होन वेतन दिया जाता था। शिवाजी को अपने शत्रुओं को काबू में रखने के लिए सुदूर सेना का निर्माण करना पड़ा। सेनापति और सैनिकों पर उन्हें बहुत बड़ा खर्च करना पड़ा। साथ ही शत्रुओं द्वारा स्वराज्य का हुआ नुकसान और जनता की हुई हनी के लिए भी, महाराज को अब धन की आवश्यकता थी। इतनी बड़ी हानि कहां से पूरी हो सकती है, यह सोचने के पश्चात, महाराज की नजर गयी सूरत पर और फिर सूरत जैसे बलाढ्य आर्थिक परिपूर्ण शहर को लूटने की मुहिम छत्रपति शिवाजी महाराज ने बनायी।इस संदर्भमें बाबासाहेब पुरंदरे लिखते हैं- ''महाराज का ध्यान इतनी दूर कैसे गया। उनको सूरत की धन संपत्ति चाहिए थी स्वराज्य के लिए। औरंगजेब की सेनाने ३ वर्ष जंगली सुअरोंकी तरह स्वराज्य को नुकसान पहुँचाया। इसकी पूर्तता के लिए महाराज को सूरत की ७५ प्रतिशत धन-संपत्ति चाहिए थी। शत्रुओं द्वारा हुए नुकसान की पूर्तता माँगने से नहीं होती है, विनती करने से भी पूरी नहीं होती है। जो पूरा स्वराज्य मिटाने को उतावले है, वह ऐसे मांगने से कभी भला क्या दे सकते हैं? इसलिए सीधे-सीधे उन पर छापा डालकर, दुश्मनों की धन-संपत्ति लूटकर लाने की योजना महाराज ने बनायी। पुणे से सूरत तक सभी प्रदेश मुगलों के कब्जे में था। जैसे कि दुश्मन के इलाके में डेढ़सौ मिल अंदर जाकर सूरत में पहुंचना यह एक बड़ा ही कठिन कार्य था। रास्ते में मुगलों के किलें, सैनिकों की छावनियाँ, कठिन रास्ते, नदियाँ, पर्वत थे फिर भी महाराज को सूरत की धन-संपत्ति चाहिए थी।'[१०] क्योंकि शत्रुओं द्वारा स्वराज्य की अधिक मात्रा में हानी हो चुकी थी।

स्वराज्य में मजबूत दुर्ग का महत्व जानकर उन्होंने अनेक नए दुर्गों का निर्माण किया। पुराने दुर्गों को मजबूत बनाया। पश्चिमी सागर तट के संरक्षण के लिए नौसेना का निर्माण किया। आरमार का गठन और दुरुस्ती के लिए तटों पर अनेक कारखाने खोलें। शस्त्रास्त्र और युद्ध सामग्री की निर्मिति के लिए कारखाने बनाए और इस साहित्य का बृहद् संचय किया।

छत्रपति शिवाजी की धार्मिक नीति उदार और सहिष्णु थी। सामाजिक एकता के लिए अनेक मंदिरों, मस्जिदों और तीर्थ क्षेत्रों को उन्होंने मद्द दी। अपने राज्याभिषेक समारोह में अनेक प्रकार के दान के लिए लग-भग डेढ़ करोड़ होन खर्च किए। उपर्युक्त सभी कार्यों के लिए धन की आवश्यकता थी। छत्रपति शिवाजी ने आय के नए मार्ग खोजकर कुशलता से नियोजन किया और सफलता प्राप्त की।

शिवकालीन अर्थव्यवस्था का प्रधान स्त्रोत खेती था। शिवाजी राजा ने किसानों को बीज, पैसा और खेती का साहित्य देकर उनका उत्साह बढ़ाया। जमीन की प्रतवारी की तथा जमीन नाप कर उसके उपजाऊ जमीन और बंजर जमीन ऐसे दो भाग किये। उसके बाद ही लगान निश्चित किया। किसानों की फसलों को क्षति न पहुंचे इसके निर्देश सेना को दिए। जमींदारी प्रथा को नष्ट किया और सामान्य किसानों की जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए प्रयास किए। सुधारों से किसान भी खुश थे और स्वराज्य को लगान भी अधिक मिलने लगा। वस्त्रहीन और रोटी को तरसने वाले किसानों के जीवन में आर्थिक उन्नति का प्रयास शिवाजी राजे ने किया। छत्रपति शिवाजी ने किसान हित ध्यान में रखकर अनेक सुधार किए। शिवाजी का स्वराज्य किसी सरदार वतनदारों का राज्य नहीं था। बल्कि वह किसान, मजदूर और धर्मनिरपेक्षों का राज्य था। जिसमें किसी भी तरह का धार्मिक भेदा-भेद नहीं था। कहीं पर भी ऊंच-नीच नहीं था। इस संदर्भ में शरद जोशी लिखते हैं- 'शिवपूर्वकाल में ऐसी परिस्थिति थी कि कोई भी प्रजा को लूट कर राज्य करता था। किंतु स्वराज्य निर्मिति करते समय तथा बाद में भी कभी कठोरता से, कभी सामंजस्य से, कभी गनिमी कावा से पूरी बुद्धि कार्यमें लगाकर, प्रथम किसानों का राज्य निर्माण किया, उसका

विस्तार किया, खोई हुई सुरक्षा को पुनः प्राप्त करा दिया।'[११] इस तरह शिवाजी महाराज के व्यक्तित्व में राष्ट्रभक्ति के, लोक कल्याणकारी राज्य के विशेष गुण पाए जाते हैं। आज भारत के किसानों की स्थिति अत्यंत दुख पूर्ण है। प्राकृतिक आपदा से खेती की बड़ी हानी होती है। अनाज को बेचने के लिए दलालों के पास जाना पड़ता है। इस प्रकार के व्यवहार से किसानों का कम और दलालों का बहुत फायदा होता है। किसान ऋण में ही अपनी जिंदगी गुजारते हैं और खेती से आए ना मिलने पर ऋण चुकाने में असमर्थ होते हैं। परिणाम स्वरूप उन्हें आत्महत्या करनी पड़ रही है। आज के शासनकर्ताओं ने अगर छत्रपति शिवाजी की कृषि नीति को अपनाया तो किसान स्वाभिमान से जीवन जी सकते हैं। यथा छत्रपति शिवाजी का आर्थिक कार्य आज भी प्रासंगिक है।

छत्रपति शिवाजी ने जनता को पानी की कमी महसूस ना हो इसलिए अनेक बांध व तालाबों का निर्माण कराया। उस समय अकालजन्य स्थिति से बचने के लिए शिवाजी राजा ने पानी का महत्व जानकर उस का संचय किया। बांध बनाने में जो मजदूर कार्य करते थे, उन्हें शिवाजी राजा तोहफें देते थे और उनका उत्साह बढ़ाते थे। दुर्ग निर्माण में प्रथमतः पानी की व्यवस्था उस समय देखी जाती थी। प्रतापगढ़ में जो तालाब शिवाजी राजा ने निर्माण किए, वह आज भी मौजूद है। मीठा तालाब, खराब तालाब नाम से यह तालाब शिवकाल में जाने जाते थे। तालाब निर्माण में भी शिवाजी राजा का वैज्ञानिक दृष्टिकोण दिखाई देता है। इस संदर्भ में इंद्रजीत सावंत लिखते हैं- 'स्वराज्य के दुर्ग पर निर्मित तालाब निसर्ग निर्मित नहीं है। तालाब जिस दुर्ग पर बनाने हो उसके निरीक्षण से वहां की खाई को बंद किया जाता था। यह बांध सीधा ना होकर अर्ध गोलाकार रहता था।' आज छत्रपति शिवाजी की जल नीति का महत्व जानकर महाराष्ट्र शासन ने 'शिवकालीन पानी संचय योजना' का निर्माण किया है। शिवाजी की जल नीति का अध्ययन कर उसका उपयोग सामान्य जनता के लिए करना ही शासन कर्ताओं का उद्देश्य रहा है। सामान्य जनों की उन्नति हो उसका विचार आज हो रहा है। स्पष्ट है कि शिवाजी राजा की जल नीति आज भी प्रेरक और प्रासंगिक है।

छत्रपति शिवाजी के समय अनेक प्रकार के कर भी थे। जिससे स्वराज की आय में बढ़ोतरी हो गयी। इसके साथ ही स्वराज के बाहर भी चौथाई जैसी वसूली की जाती थी। राज्य के हित के लिए शत्रुओं के प्रदेश में जाकर भी लूट की जाती थी। इसमें सामान्य लोगों को किसी प्रकार का कष्ट ना हो इसके प्रति शिवाजी सजग रहते थे। युद्ध में पराजित शत्रुओं की संपत्ति भी मिलती थी। वह राजकोष में जमा की जाती थी। आर्थिक आय के अनेक स्रोत शिवाजी राजा ने इसलिए निर्माण किए थे कि राष्ट्र को शस्त्र के साथ-साथ अनाज और वस्त्र भी मिले।

अपने राज्य के सर्वांगीण विकास के लिए शिवाजी राजा ने व्यापार को बढ़ावा दिया। अपनी राजधानी रायगढ़ को एक नया व्यापार केंद्र उन्होंने बनाया था।तत्कालीन व्यापार के संदर्भमें कॉ.गोविंद पानसरे लिखते हैं- ''अपने राज्य की वस्तुओं की खपत अधिक हो, इस कारण बाहरी राज्यों से आनेवाले माल के ऊपर अधिकांश कर लगाकर स्वदेशी वस्तुओं को संरक्षण देने का काम सभी आधुनिक देश करते आये है। किंतु सरंजामशाही के मध्ययुग में भी, शिवाजी महाराज ने ऐसा कर लगाकर देशी व्यापार को बढ़ावा देने का काम किया।''[१२] सागर के किनारे भी व्यापार के केंद्र निर्माण किए। जिससे भारतीय सागर मार्ग से व्यापार की वृद्धि हो गयी। छत्रपति शिवाजी के समय कोकण में चावल, दाभोल, कल्याण, भिवंडी, वेंगुर्ला और पेन आदि महत्वपूर्ण व्यापार केंद्र थे। शिवाजी राजा ने स्वदेशी व्यापार को संरक्षण दिया तथा विदेशी व्यापार का विरोध किया।

छत्रपति शिवाजी, स्वराज्य के लिए जो धन प्राप्त होता था, उसे राजकोष में जमा करते थे। अपने निजी खर्च के लिए उन्होंने स्वराज्य के धन का उपयोग कभी नहीं किया। शिवाजी स्वयं एक त्यागी, नि:स्वार्थी, देशप्रेमी तथा जनप्रेमी राजा थे। उनका राज्य जनता का राज्य था। इसलिए धन को राजकोष में रखकर उसका उपयोग स्वराज के लिए किया। आज हमारे देश को स्वतंत्र हुए ६० वर्ष हो चुके हैं। इन वर्षोंमें विज्ञान ने जमकर प्रगति की है, लेकिन यह प्रगति जनमानस की नहीं हो गयी। उच्च वर्ग ही देश की संपन्नता का अनुभव कर रहा है। जिस देश की अधिक आबादी गरीबी रेखा के नीचे जी रही हो उसे

विकसित देश नहीं कहा जा सकता। अपना भारत प्राकृतिक साधनों से संपन्न है। भारतवर्ष के लोग गांव में ही अधिक रहते हैं। आज गांव का विकास नहीं हुआ है। किसान, गरीब जनजाति, पिछड़े वर्ग के लोग बुरी तरह से जिंदगी गुजार रहे हैं। स्वतंत्र्योत्तर काल में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से योजनाबद्ध विकास की रूपरेखा तैयार होती रही। योजनाओं का फायदा सामान्य व्यक्ति तक पहुंचाने में शासनकर्ता असफल रहे इसलिए उच्च-वर्ग का विकास हुआ और गरीब जन, गरीब ही रहे। आज शिवाजी महाराज की अर्थनीति से प्रेरणा लेकर सामान्य जनमानस की उन्नति किस प्रकार होगी यह देखना अत्यावश्यक हो गया है। शिवाजी महाराज का आर्थिक कार्य आज भी प्रासंगिक लगता है।

आज व्यापार और उद्योग के क्षेत्र में भारतवर्ष प्रगति पथ पर है। अनेक बड़े-बड़े कारखानों का निर्माण हुआ है। इन उद्योगों के लिए दूसरे देशों से शासनकर्ता ऋण ले रहे हैं। इसकी सहायता से उत्पाद बढ़ रहा है, लेकिन भ्रष्टाचार के कारण भारत की अर्थव्यवस्था खोकली बन रही है। कम समय में अधिक पैसा कमाने की होड़ लगी है। इसके कारण विदेशी ऋण बढ़ता ही जा रहा है। आज भारत में प्रत्येक वस्तु नकली बन रही है, बाकी चीजों के साथ खाद्य-सामग्री भी बनावटी हो रही है। बच्चों के लिए आवश्यक दूध का निर्माण भी आज केमिकल से हो रहा है। यह सब नेता और अधिकारी ही कर रहे हैं। आज नैतिकता का ढाँचा गिर रहा है। आज की शिक्षा कृषि उद्योग विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्रों में विकास की योजनाएँ तैयार हो रही हैं। यह योजनाएँ भ्रष्टाचार के कारण सामान्य जनमानस तक नहीं पहुंच रही है। ऐसी स्थिति में आर्थिक सुधार की अपेक्षा करना बेकार की बात है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण करोड़ों, अरबों रुपयों के घोटाले हो रहे हैं। परिणाम स्वरूप आर्थिक स्थिति बिगड़ रही है।

आज भारत की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। पड़ोसी देशों से घुसपैठ हो रही है, आतंकवाद बढ़ रहा है, राज्य में सीमा प्रश्न से तथा सांप्रदायिकता के कारण दंगे हो रहे हैं। इनमें जान, माल की काफी हानी होती है। इससे आर्थिक स्थिति बिगड़ती है।

आज भारतवर्ष को छत्रपति शिवाजी के आर्थिक योजनाबद्ध कार्य की आवश्यकता है। सामान्य जनता को विकास का केंद्र मानकर उसका सफल निर्वाह करना आवश्यक है। किसी प्रकार के दंगे ना हो और आर्थिक हानी न हो इसके लिए कठोर कानून की आवश्यकता है। कृषि, व्यवसाय, उद्योग आदि के विकास का पुनरुत्थान आवश्यक है। भ्रष्टाचार को पूर्णता नष्ट कर विकास की योजनाएँ निम्न वर्ग तक पहुंचाने से ही भारत की आर्थिक उन्नति संभव है। वर्तमान युग में बेरोजगारी के कारण युवा पीढ़ी अकार्यक्षम बनती जा रही है, जिसका उपयोग राष्ट्र निर्माण में होना आवश्यक है। युवा पीढ़ी बेरोजगारी से परेशान होकर विनाश कृतियों की ओर आकर्षित हो रही है। शिवकाल में युवावर्ग साधनों के अभाव में भी कार्यक्षम था।

उपर्युक्त सभी समस्याओं को सुलझाने में छत्रपति शिवाजी के आर्थिक कार्य से प्रेरणा ग्रहण करना आवश्यक है। हमारे राजनेताओं और प्रशासनिक अधिकारियों को स्वार्थ का त्याग करना, राष्ट्रीय एकात्मता तथा अकार्यक्षमता आदि गुणों के विकास की नितांत आवश्यकता है। तब कहीं जाकर एक आदर्श, नीतिमान, भ्रष्टाचार रहित संपन्न भारत का निर्माण हो सकता है। इस स्थिति में छत्रपति शिवाजी का चरित्र अत्यंत प्रेरणादायी और प्रासंगिक है।

७.१.४ धार्मिक, सांस्कृतिक कार्य की प्रासंगिकता:

मध्य युग की समाज व्यवस्था धर्म पर आधारित थी। भारतवर्ष पर यवनों का शासन था। धर्म और संस्कृति किसी भी प्रकार से सुरक्षित नहीं थी। अंधश्रद्धा का विकराल रूप जनमानस पर था। अनीति से अनेक हिंदुओं को मुसलमान बनाया जाता था। छत्रपति शिवाजी ही ऐसे प्रथम राजा थे जिन्होंने अपने धर्म का रक्षण किया और दूसरों के धर्म का सम्मान भी किया। उन्होंने राजनीति और धर्म को पृथक रखा, राजनीति में सफलता पाने के लिए उन्होंने हिंदुओं के साथ ही मुस्लिमों को भी संगठित किया। अनेक मुस्लिम उनकी सेना में उच्च पदों पर सम्मान से कार्य करते थे। शिवाजी राजा का संघर्ष अन्याय, अत्याचार से था, किसी भी धर्म या जाति से नहीं।

छत्रपति शिवाजी के समय राजा अपने धर्म को ही श्रेष्ठ मानते थे और दूसरे धर्म की प्रजा को शत्रू मानकर उनको पीड़ा पहुंचाते थे। यवनों की इस नीति से रयत, अन्याय-अत्याचार से ध्वस्त हो गई थी। छत्रपति शिवाजी ने अपने आदर्श नीति से सभी जाति धर्मों के लोगों को अपना भाई माना। छत्रपति शिवाजी महाराज पर धार्मिक सहिष्णुता के संस्कार बचपन से ही मां जीजाबाई ने किए थे। इस संदर्भमें भगवती शरण मिश्र लिखते हैं- ''मैं चाहती हूँ कि शिवा को सभी धर्म गुरुओं का आशीर्वाद एक साथ प्राप्त हो। जिसमें उसे धार्मिक सहिष्णुता, संस्कार में ही प्राप्त हो जाए और आगे चलकर मध्यांध मुगलों, मुसलमानों की तरह धार्मिक कट्टरता का पोषक नहीं बन सभी धर्मों, सभी संप्रदायों के प्रति सच्ची श्रद्धा प्रदर्शित करें।''[१३] इससे यह पता चलता है कि शिवाजी को बचपन में ही धार्मिक उदारता की सीख मिली थी।

छत्रपति शिवाजी की धार्मिक भावना सहिष्णु और उदार थी। उन्हें मुस्लिम धर्म उतना ही प्रिय था, जितना हिंदू धर्म। उन्होंने अपने राज्य में जिन लोगों को संगठित किया था, उनमें अनेक जाति धर्मों के लोग थे। मुस्लिम, ब्राह्मण, मराठा, नाई, कोली, भंडारी, चरवाहें, मेहर, रामोशी, भील समाज आदि सभी लोग एक निष्ठा से उनके साथ थे। उनकी सेना में पठान थे और कई मुस्लिम अधिकारियों को उनके पद प्राप्त थे। मुंशी हैदर, सिद्धि संबल, दर्या सारंग, दौलत खां तथा सेनानायक, सिद्धि हलाल, नूर खाँ, उनका व्यक्तिगत सेवक मदारी मेहतर, न्यायाधीश काजी हैदर, आदि ने राज्य की उन्नति के लिए कठोर परिश्रम किए।

हिंदू धर्म के उद्धार के लिए उस समय छत्रपति शिवाजी ने जो कार्य किए वह क्रांतिकारी थे। जबरदस्ती मुसलमान बनाए गए हिंदुओं के लिए उन्होंने शुद्धीकरण का नया रास्ता निर्माण किया। बजाजी निंबालकर और नेताजी पालकर का धर्म शुद्धिकरण किया और उनके साथ अपनत्व के संबंध स्थापित किए। इस कार्य को सफल बनाने में शिवाजी राजा को बहुत विरोध हुआ। बाह्याडंबर के कारण उस समय धर्म के कड़े नियम थे। धर्म परिवर्तन के बाद किसी व्यक्ति को पुन: अपने धर्ममें वापसी का अधिकार नहींथा।

इस अंधश्रद्धा को शिवाजी राजा ने नष्ट किया और नए प्रगतिशील विचारों से जनता को संस्कारित किया। नेताजी पालकर के शुद्धिकरण के समय शिवाजी को धर्म-मार्तंड ब्राह्मणों ने विरोध किया था। उस समय शिवाजी राजा अंधश्रद्धा रूपी धर्म को ना मानकर अपना कार्य सफलतापूर्वक करते रहे।

शिवाजी राजे ने नेताजी और बजाज का धर्म शुद्धीकरण किया, उस समय कहीं भी दंगा नहीं हुआ। अंधश्रद्धा को नष्ट करने का शिवाजी ने जी जान से प्रयास किया। लेकिन वर्तमान समय में गणेश जी की मूर्तियां तक दूध पीने लगी है और गणेश जी की मूर्तियों को दूध पिलाने वालोंमें मुख्यमंत्री और वैज्ञानिक भी आम आदमी के साथ शामिल है। यह अपने देश की भयानक स्थिति है। अंधश्रद्धा, अंधविश्वास को दूर करने के लिए आज छत्रपति शिवाजी का धार्मिक, सांस्कृतिक कार्य प्रेरक और प्रासंगिक है।

छत्रपति शिवाजी ने शत्रुओं की स्त्री को भी अपनी मां-बहन माना। नैतिकता से परिपूर्ण उनका व्यक्तित्व था। निहत्थों पर उन्होंने कभी तलवार नहीं चलाई, दूसरे धर्म के धर्मस्थलों, धर्मग्रंथों को कभी उन्होंने हानी नहीं पहुंचायी। असहाय स्त्रियों, बच्चों के प्रति हमेशा सहानुभूति दिखाई। किसी की भी भावनाओं के साथ खिलवाड़ नहीं किया। वर्तमान समय में हम देख रहे हैं कि शिवाजी राजा के पुतले प्रत्येक जिलोंमें चौराहों पर खड़े किए हैं, उन्हें इसलिए रखा गया है, ताकि प्रत्येक व्यक्ति को उनसे प्रेरणा मिले। आज 'शिवजयंती' उत्सव मनाया जाता है, वह इसलिए कि आदमी उनके व्यक्तित्व के गुणों का अनुकरण करें। केवल प्रतिमाओं को हार पहनाकर, जुलूस निकालकर यह कार्य सिद्ध नहीं होगा। छत्रपति शिवाजी जैसे सदाचारी आचरण से ही आदर्श भारत का निर्माण हो सकता है।

छत्रपति शिवाजी ने भारतीय धर्म तथा संस्कृति का रक्षण किया, अपने देश की परंपराओं, रीति-रिवाजों का उन्होंने पालन किया। धार्मिक स्थानों को पूज्य माना और उनकी मरम्मत की। मुस्लिम बंधुओं के लिए उन्होंने रायगढ़ पर मस्जिद का निर्माण किया और एकता का संदेश दिया था। साथ ही उनकी देखभाल के लिए दान स्वरूप कुछ भूमि

भी दी, ताकि उससे उसका खर्चा किया जा सके। इस संदर्भमें काशीनाथ मड़वी लिखते हैं- ''संत हजरत पीर याकूब' इनके 'दरगाह' को पूजा, फूल एवं फकीर की तनख्वाह आदि के खर्च के लिए 'उंटभर केळसी' इस गांव की ६५३ एकड़ जमीन आज्ञापत्र द्वारा इनाम दी। साथ ही शिवाजी ने कोल्हापुर जिले के पाटगांव के मोनीबाबा के पुरोहितों को १८ होन सालाना देने की व्यवस्था की थी। इसके साथ ही शिवाजी ने संत रामदास स्वामी को परली का सज्जनगढ़ खाली करके दिया। उसी तरह आलंदी के ज्ञानेश्वर मंदिर को भी इनाम दिया।''[१४] इस तरह शिवाजी एक दानवीर राजा थे। भारतीय धर्म और संस्कृति का उदारता से उन्होंने निर्वाह किया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि छत्रपति शिवाजी ने भारतीय संस्कृति का रक्षण किया। वर्तमान समय में भारतीय संस्कृति का ऱ्हास और पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण हो रहा है। इससे नैतिकता और स्वाभिमान नष्ट हो रहा है। आज इससे बचने के लिए शिवाजी महाराज के चरित्र की प्रेरणा ग्रहण करना आवश्यक है।

उनका सांस्कृतिक कार्य आज भी प्रासंगिक है। छत्रपति शिवाजी ने भारतीय संस्कृति की रक्षा कर भारतीय राष्ट्रवाद का निर्माण किया। शिवाजी राजा राष्ट्रीय विचारों की गंगोत्री है।

छत्रपति शिवाजी श्रद्धालु थे अन्धश्रद्धालु नहीं। उनकी श्रद्धा मां जीजाबाई, उनके गुरु, तुलजा भवानी और प्रजा पर थी। जब अफजल खाँ के विकराल रूप से शिवाजी की सेना और प्रजा मेंडर छाया हुआ था तो शिवाजी महाराज ने प्रजा में नवसंजीवनी भरने के लिए तुलजा भवानी के मंदिर जाकर, तुलजा भवानी प्रसन्न हुई तथा विजयी होने का आशीर्वाद देकर, तलवार भेंट दी, ऐसा कहा। क्योंकि इससे सेना में विजय निश्चित अपनी ही होगी, ऐसा विश्वास पैदा हुआ। शिवाजी महाराज जानते थे कि प्रजा श्रद्धालु है। इसलिए उन्होंने कई मंदिर बनवाएँ। इस संबंध मेंडॉ. उत्तम सावंत लिखते हैं- ''छत्रपति शिवाजी महाराज यह शक्ति देवता के उपासक थे। इसलिए किलों को उभारते समय और दुरुस्ती करते समय उन किलों पर मंदिर बनवाए। इसलिए प्रतापगढ़ पर भवानी, राजगढ़ पर 'पद्मावती', तोरणा गड पर 'तोरणाई', सिंहागढ़ पर 'कोंडाणेश्वर', रोहिडा किले पर

रोहिडेश्वर, रायगढ़ पर जगदीश्वर यह प्रेरणा देवता किलों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।''[१५]

छत्रपति शिवाजी श्रद्धावान थे लेकिन अंधश्रद्ध नहीं थे। इसलिए परंपरागत हिंदुओं की अंधश्रद्धाओं का नाश करके उन्होंने भारतीयों के विकास का मार्ग खोलकर उसे अलौकिक किया। वर्तमान युग में युवा पीढ़ी समाजोपयोगी कार्य छोड़कर समाज विघातक कार्यों की ओर बढ़ती जा रही है। युवाओं पर ही भारत का भविष्य निर्भर है। दिशाहीन युवकों ने छत्रपति शिवाजी के चरित्र से प्रेरणा लेकर संपन्न भारत का निर्माण करना आवश्यक है। आज भारत में विज्ञान, तकनीकी, प्रगति के कारण एक ओर भौतिकता का प्रभाव बढ़ रहा है और धार्मिकता का प्रभाव कम होता जा रहा है तो दूसरी ओर उधार धार्मिकता नष्ट होकर कट्टर धार्मिकता पनप रही है। इस कारण प्रादेशिकवाद, भाषिकवाद, सांप्रदायिक दंगे हो रहे हैं। कट्टर धार्मिकता के कारण ही आज आतंकवाद की समस्या पूर्ण संसार का सिरदर्द बन गयी है। देश के विकास के लिए आज छत्रपति शिवाजी के धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता है। आज हम भूल रहे हैं कि हमारे महापुरुषों ने संस्कार की प्रेरणा दी थी। समता बंधुता और स्वतंत्रता छत्रपति शिवाजी का नारा था। शिवाजी के बाद भी आज तक अनेक समाज सुधारकों ने एकता का मंत्र दिया था। महात्मा गांधी, विनोबा भावे, बाबासाहेब आंबेडकर, राजर्षि शाहू, महात्मा फुले, सावित्रीबाई फुले आदि के कार्यों को हम भूल रहे हैं। संतों ने भी एकता का संदेश दिया था, संत तुकाराम, संत कबीर, संत नरहरीदास, गोरा कुंभार, चोखा मेला, ज्ञानेश्वर आदि ने समाज सुधार का कार्य किया था। उनके कार्य का महत्व अब समाप्तप्राय है। आज देश में शांति और व्यवस्था के लिए धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता है। आज भारत में राम-रहीम, मंदिर-मस्जिद के नाम पर हिंदू और मुस्लिम में संघर्ष हो रहा है। इसके कारण हजारों लोगों के घर उजड़ गए हैं, खून की नदियां बह रही है, हजारों लोगों की जानें चली गईहै, अनेक बेसहारा हो गए हैं, इस स्थिति का कारण धार्मिक कट्टरता है। जो हमारे देश की राष्ट्रीय एकात्मता को खतरा पैदा करती रही है।

आज राजनीति के नए संगठन बढ़ रहे हैं। भाषावाद और प्रांतवाद से समाज का विघटन होता है, नेताओं को इस बात की कोई चिंता नहीं है। अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए इस प्रकार के संगठनों का उपयोग किया जाता है, हर एक व्यक्ति दूसरों से सशंकित रहता है, विश्वास नष्ट होता जा रहा है, इससे देश की अपरिमित हानी होती है, राष्ट्रीय एकता, बंधुता नष्ट हो रही है। छत्रपति शिवाजी ने सैकड़ों वर्ष पूर्व अपने कार्यों के माध्यम से सर्वधर्म समभाव, धार्मिक उदारता, सदाचार, नैतिकता का आदर्श समाज में निर्माण किया था। छत्रपति शिवाजी के राज्य में विविध जाति वर्ग के लोग थे। प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म के अनुसार आचरण करने का पूर्ण अधिकार था। उनके उदार और सहिष्णु विचारों की आज संपूर्ण दुनिया को आवश्यकता है। इससे ही एक विशाल, संपन्न, नैतिक, समता का संदेश देने वाले देश का निर्माण हो सकता है। छत्रपति शिवाजी का कार्य जो कल से आज तक प्रेरणा देते आया है और भविष्य में भी देता रहेगा। उनके कार्य की प्रेरणा से युवाओं को अपना चरित्र निर्माण करना आवश्यक है। तब जाकर एक संपन्न और सशक्त देश का निर्माण हो सकता है। इसलिए छत्रपति शिवाजी का कार्य आज प्रेरक है और प्रासंगिक भी।

७.२ महात्मा फुले की प्रासंगिकता

महात्मा जोतीबा फुले क्रांतिकारी समाज सुधारक थे। उन्होंने जाति, लिंग, जायदाद सहित मानव द्वारा किए जाने वाले हर किस्म के भेदभाव एवं प्रजापति का पुरजोर विरोध किया।वे दलित, पिछड़े, किसान, मजदूर, महिला एवं मेहनतकश तबके के सच्चे हितैषीथे उन्होंने धार्मिक पाखंड, सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वास का पुरजोर विरोध किया। वर्तमान दौर में पूंजीवादी विकास के चलते आर्थिक विषमता तेजी से बढ़ रही है। जाति, लिंग एवं धर्म के आधार पर सामाजिक उत्पीड़न बढ़ रहा है। किसान, मजदूर, नौजवान की स्थिति दयनीय है। ऐसे में महात्मा जोतीबा फुले के विचार प्रासंगिक है । फुले कबीर को ही अपना गुरु मानते हैं और कबीर जैसे समाज सुधारकों की वैचारिक परंपरा को जनता तक पहुंचाने का प्रयास करते हैं। दीन-दलितों के उद्धार के लिए ही अपना सारा

जीवन समर्पित करते हैं। वे जानते थे कि लोग जब तक जागरूक नहीं होंगे तब तक ना शोषण का विरोध होगा, ना भेदभाव मिटेगा, ना अंधश्रद्धा मिट पाएगी। इसलिए फुले समाज के उपेक्षित लोगों के लिए शिक्षा के द्वार खोलकर उनको ज्ञानचक्षु प्रदान करते हैं। आधुनिक युग के समाज के लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। बहुजन समाज को जागृत कर अपनी आवाज बनाने का श्रेय तो फुले को ही देना पड़ता है। जरा देर के लिए हम यह सोचे कि अगर फुले नहीं होते तो? क्या समाज की जो तस्वीर हम देख रहे हैं, सामाजिक परिवर्तन देख रहे हैं वह संभव होता? यहां ही फुले की आवश्यकता और प्रासंगिकता स्पष्ट होती है।

धार्मिक शोषण से मुक्ति के लिए, समता स्थापित करने के लिए, सामाजिक भेद-भाव मिटाने के लिए, मानवीय मूल्यों के बीजारोपण के लिए फुले ने जो काम किया है उसे भुलाया नहीं जा सकता। इतना ही नहीं तो राजर्षि शाहू और डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर जैसे समाज चिंतकों ने फुले को अपना गुरु मानकर इनसे प्रेरणा ग्रहण की है और इन्हीं के पथप्रदर्शक बनकर इनके सपने को साकार करने की दृष्टि से ही सारा जीवन समर्पित कर दिया है। आज की तारीख में अनेक सामाजिक संस्थाएँ, सामाजिक कार्यकर्ता फुले के विचारों से प्रेरणा ग्रहण कर लोकजागृति सामाजिक संगठन और मानव मुक्ति के लिए संघर्षरत दिखाई देते हैं।

फुले आजीवन सामाजिक समता की लड़ाई लड़ते रहे। परंतु उनके समय लोकजागृति भी कम थी, शिक्षा का प्रारंभ उन्होंने ही किया था। अर्थात शिक्षा का प्रमाण अत्यल्प था। इसलिए लोग सामाजिक भय के कारण फुले के साथ आने के लिए डरते थे, हिचकिचाते थे। फुले स्वयं समता स्थापित करने की बात करते थे और लोग उनको विशिष्ट जाति का मानते थे। दुख: की बात तो यह है कि दलितोद्धार का कार्य उन्होंने आजीवन अपना कर्तव्य माना परंतु जहां इसके कारण उनकी अपनी जाति के लोगों ने ही उनके साथ चलने के लिए इन्कार किया वहाँ अन्य ऊँची जातियों की बात तो और दूर थी लेकिन आज हम देखते हैं कि समाज जब पढ़ लिखकर शिक्षित होने लगा है,

इतिहास पढ़ने लगा है, जाति धर्म के षड्यंत्र को समझने लगा है तो फुले के विचार और उसकी महानता को भी समझने लगा है। आज न केवल दलित समाज ने बल्कि संपूर्ण बहुजन समाज ने फुले के विचारधन को बखूबी से समझा है। सारा बहुजन समाज इस राज को अब समझ गया है कि फुले नहीं होते तो बहुजन समाज के लिए, नारियों के लिए शिक्षा के द्वार नहीं खुलते, शिक्षा ही नहीं मिलती, लोक जागृत नहीं होते और आज भी हम विशिष्ट समाज के गुलाम ही होते। समाज बदल तो गया है, अपने हक और अधिकार के प्रति जागरूक भी हो गया है किंतु सामाजिक भेदभाव पूर्णत: समाप्त हो गया है ऐसा नहीं है। दीन-दलितों को, महिलाओं को फुले-शाहू-आंबेडकर के कारण ही उनके अधिकार मिलने तो लगे हैं परंतु लोग आज भी उनकी ओर घृणा की दृष्टि से ही देखते हैं। बहुजन समाज शिक्षित तो हो रहा है लेकिन अभी भी यह प्रमाण अत्यल्प है। इस कारण आज भी बहुजन समाज अंधश्रद्धा की चंगुल में फँसा हुआ है। धार्मिक क्षेत्र में आज भी मानसिक गुलाम बनकर उसका शोषण किया जाता है। निरंतर जातीय और धर्मिय तनाव उत्पन्न किए जाते हैं और संगठित समाज को विघटित किया जाता है। राजनीतिक क्षेत्र में ऊँचे लोग आज भी उनकी गरीबी का फायदा उठाते हैं। किसान मजदूरों के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया है। किसान तो कर्ज के बोझ तले इतना दब गया है कि आत्महत्याकरने लगा है। जिस देश का अन्नदाता ही रोज आत्महत्या कर रहा हो उस देश का भविष्य कैसे उज्जवल होगा? इन सारी समस्याओं के समाधान की कुंजी ही म. फुले के विचार है। इसी कारण म. फुले के विचार निरंतर प्रेरणादायी है और प्रामाणिक भी।

७.२.१ धार्मिक स्थिति के संदर्भ में :

आज का युग आपा-धापी का युग है, तनाव का युग है। आधुनिक युग तक आते-आते समाज ने भले ही भौतिक रूप से प्रगति की हो लेकिन मानसिक दृष्टि से वह आहत ही है। जब-जब व्यक्ति दु:ख के बोझ से दब जाता है, तनाव में गिर जाता है तो मन:शांति के लिए भगवान की शरण में चला जाता है। आज इसी बात का फायदा उठाने

के लिए बड़े-बड़े बाबा महाराजाओंने नई धार्मिक इंडस्ट्री खोल दी है। लोगों के पास भौतिक सुख तो है लेकिन शारीरिक और मानसिक दृष्टि से समाज पंगु बन चुका है। मधुमेह, रक्तदाब, ह्रदयविकार जैसी बीमारियों ने लोगों को पीड़ा में और तनाव में जिंदगी जीने के लिए मजबूर किया है। तथाकथित बाबाओं ने आश्रम खोले हैं और सत्संग के साथ-साथ योगा का प्रशिक्षण दिया जाने लगा है। बाबा के आश्रमों द्वारा ऐसी औषधियाँ बनायी जा रही है जिससे बीमार लोग इस क्षेत्र की ओर आकर्षित होकर बाबा के भक्त बन सके।

यहां तक तो ठीक था लेकिन धीरे-धीरे यह लोग जब नाम और पैसा कमाते हैं तो राजनीतिक लोग इन्हें अपना हस्तक बनाकर इस्तेमाल करने लगे हैं। विशिष्ट पार्टियों के प्रचार अभियान में यह लोग अपना योगदान देने लगे हैं। कई बाबा तो राजनीतिक पार्टियों के सदस्य बनकर राजनीतिक अखाड़े में उतर चुके हैं। धर्म आज राजनीति का विषय बन गया है। राजनीति के कारण ही हिंदू-मुस्लिम एक दूसरे के सामने रास्ते पर उतर आते हैं। धर्म सहिष्णुता और सहानुभूति का नहीं बल्कि घृणा का विषय बन गया है। जो धर्म दूसरे धर्म को नीचा दिखाता है,हीन मानता है अन्य धर्मियों की घृणा करता है वह कैसा धर्म हो सकता है। इस दृष्टि से आज धर्म की व्याख्या ही बदल गई है। धर्म तो आज राष्ट्रीय नहीं, अंतरर्राष्ट्रीय राजनीति का विषय बन गया है। हरेक धर्म और धर्मीय एक दूसरे की ओर घृणा की दृष्टि से देखते हैं। ऐसी स्थिति में महात्मा फुले के विचार विशेष मायने रखते हैं।

म. फुले के प्रस्तुत विचार 'हिंदू-मुस्लिम-सिख-ईसाई हम सब है भाई-भाई' की भावना को ही दृढ़ करते हैं। लेकिन आज के वर्तमान युग में इन अनेक धर्मों में जातीयता निर्माण होकर यह लोग आपस में लड़ाई-झगड़े करने पर उतावले हो रहे हैं। उनको इस जातिवाद और धार्मिकता से बाहर निकालने का काम महात्मा फुले के विचार कर सकते हैं। इस के संदर्भ में तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी लिखते हैं- 'हिंदू व सीख और हिंदू तथा मुसलमान इनके दहशती संघर्ष से भारतीय प्रजातंत्र के ऐक्य तथा स्थैर्य को धोखा

निर्माण हो रहा है। जोतीराव का तत्वज्ञान इस संकट से हमें बाहर निकालने में समर्थ है।'[१६] भारतीय समाज की एकात्मता और अखंडता को अक्षुण्ण एवं मजबूत बनाने की दृष्टि से यह विचार अत्यंत महत्वपूर्ण है। फुले के यह विचार मानव धर्म की सही पहचान कराते हैं। यह विचार इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि वह सभी धर्म और धर्मानुयायियों में समता स्थापित करना चाहते हैं। हम किसी भी धर्म से हो परंतु जब हम एक दूसरे को गले लगाएंगे तो आपसी भेदभाव अपने-आप मिट जाएंगे। इस संदर्भ में तत्कालीन मुख्यमंत्री, महाराष्ट्र राज्य 'शरद पवार' (महाराष्ट्र राज्य) लिखते हैं – 'आज भी जाति, धर्म, वर्ण,राज्य, राष्ट्र के लिए झगड़े हो रहे हैं। मानवीय मूल्यों और मानवता का ऱ्हास होने की आज की स्थिति में फुलेजी के इन सुलझे हुए विचारों का मूल्य बहुत बड़ा है। आज के आधुनिक युग में तो इस विचारधारा का असाधारण महत्व है। फुले जी ने अपने 'सार्वजनिक सत्यधर्म' पुस्तक में कहा है कि सभी स्त्री-पुरुषों को एक दूसरे से, एक दूसरे को पसंद-नापसंद किए बिना, इस विश्व में सबको अपना एक परिवार मानकर मिल-जुलकर रहना चाहिए। मनुष्य को धर्म जन्म से नहीं बल्कि विचारों से स्वीकारना चाहिए। आज के धार्मिक कलह के युग में फुले जी के यह विचार हमें सोचने पर मजबूर कर देते हैं। वे मानव जीवन में धर्म या ईश्वर का स्थान व निजी स्तर पर मानते हैं। नए समाज-गठन के लिए वह ईश्वर और धर्म की आवश्यकता को नहीं मानते। वे सत्य को ही धर्म मानते हैं और उसी का आग्रह करते हैं।'[१७]

फुले आजीवन मानव मुक्ति की लड़ाई लड़ते रहें। इस मुक्ति में उन्होंने धार्मिक गुलामी से समाज की मुक्ति को अत्यंत महत्वपूर्ण माना। सभी धर्मियों को मनुष्य धर्म का सही पाठ पढ़ाते रहे और ईश्वर के नाम परकिए जाने वाले शोषण का,बाह्याडम्बरों का विरोध करते रहे, सामाजिक समता की मांग करते रहे। किंतु वे केवल समता की मांग नहीं करते बल्कि धर्म के ठेकेदारों को आह्वान करते हैं कि आम जनता का शोषण बंद करें, धर्म के नाम पर जो अधर्म फैल रहा है उसको रोके और सभी के साथ समान न्याय करें। अपने आचरण से सहिष्णुता और धर्म का सही रूप दुनिया के सामने लाए जो हमारी महान परंपरा का द्योतक हो लेकिन ना लोगों ने फुले की बात को ठीक से समझा और ना

ही उसका अंमल किया। परिणाम स्वरूप फुले को समाज के लिए नए धर्म का पर्याय लोगों के सामने रखना पड़ा। म. फुले ने 'सार्वजनिक सत्यधर्म' की स्थापना की जिसमें किसी भी जाति और धर्म का आदमी शरीक हो सकता था। 'सार्वजनिक सत्यधर्म' का ब्रीदवाक्य ही था-

'सत्य सभी का आदि–घर, सभी धर्मों का आश्रय घर।'

'सार्वजनिक सत्यधर्म' के माध्यम से फुले सभी के लिए धर्म का द्वार खोल देते हैं। इस धर्म में कोई भी आ सकता है जिसके शुद्धीकरण की भी कोई आवश्यकता नहीं। इस धर्ममें केवल जाति धर्म को ही समान स्थान नहीं है तो स्त्री-पुरुष भी समान माने गए हैं। इस दृष्टि से ही जोतीबा इस धर्म को सार्वजनिक बनाना चाहते हैं। जोतीबा का यह निर्णय क्रांतिकारी ही कहा जा सकता है। जोतीबा के 'सार्वजनिक सत्यधर्म' में धार्मिक ग्रंथ सभी को उपलब्ध कराने की बात की गई है, जबकि हिंदू धर्म में निम्न जनजाति और महिलाओं के लिए धर्मग्रंथ की बात निषिद्ध मानी गई है। वंशगत श्रेष्ठता के बजाय योग्यता के बल पर व्यक्ति का मूल्यांकन करने की बात भी इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। धर्म के नाम पर कोई भी ढकोसलेबाजी ना हो और सभी धर्मियों के प्रति आदर भाव रखा जाए ये बातें फुले की दृष्टि एवं महानता की परिचायक है। जोतीराव अपने धर्म को वैश्विक बनाना चाहते थे।जोतीराव के वैश्विक धर्म विषयक विचार की हमें आज भी आवश्यकता है। इसलिए ही म. जोतीराव फुले हमें अधिक प्रासंगिक लगते हैं।

महात्मा जोतीराव फूले ने लोगों के सामने एक ऐसा पर्याय रखा था जो सभी को एक सूत्र में बंध जाने में सहायक सिद्ध हो सकता था। परंतु उस समय समाज इतना जागृत भी नहीं था की हजारों वर्षों की गुलामी को और समाज की परंपरा को तोड़ सके। इसलिए जो लोग जोतीराव की बातों को स्पष्ट समझ सके वह मुठ्ठीभर लोग उनके साथ आए और बाकी लोग सामाजिक भय से हिचकिचाते रहे। लेकिन समाज के लिए यह एक महान संदेश था। आगे चलकर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर दीन-दलितों का नेतृत्व करते है और शोषण और गुलामी की लड़ाई समाप्त कर देना चाहते हैं, आसानी से वे धर्मत्याग की बात अपने अनुयायियों के सामने रखते हैं और हिंदू धर्म का त्याग कर हजारों लोगों

के साथ बौद्ध धर्म को अपनाते हैं। आज हम देख रहे हैं कि डॉ. आंबेडकर ने मानव मुक्ति की यह लड़ाई जीत ली है। उनके साथ जो पहले आए उनकी प्रगति भी हम देख रहे हैं और जिनजातियों ने हिचकिचाकर देर कर दी उनका समाज अब धीरे-धीरे प्रगति की दिशा में बढ़ रहा है। इस दिशा में न केवल आंबेडकर के बल्कि संपूर्ण दलित और बहुजन समाज के लिए फुले आज भी प्रेरणापुरुष हैं। जिनके विचार आज भी प्रासंगिक है।

यह तो फुले का ही प्रसाद है कि लोग आज अधिक से अधिक शिक्षा को महत्व दे रहे हैं। वह इस बात का अनुभव भी कर रहे हैं कि प्रज्ञाचक्षु से ही रास्ता प्रकाशमान होता है। ज्ञान से अच्छे-बुरे, सही-गलत की पहचान होती है। आज जब लोग शिक्षित होकर फुले-शाहू-आंबेडकर की विचारधारा को समझने लगे हैं। फुले के विचार समझने में समाज ने बहुत देर कर दी है। नहीं तो समाज की तस्वीर अधिक पुख्ता होती इस बात का एहसास भी लोगों को होने लगा है। फुले और आंबेडकर के बाद उन्हीं के पथदर्शक बनकर बहुजन समाज ने जब हिंदू धर्म को त्याग कर नया धर्म स्थापित करने की पहल शुरू की तो सबसे पहले यही विचार सामने आया कि क्यों नम. फुले द्वारा स्थापित 'सार्वजनिक सत्यधर्म' को ही अपनाया जाय? इसे तो नहीं अपनाया गया लेकिन इससे यह स्पष्ट होता है कि फुले के विचार लोगों को आज भी दिशादर्शक लगते हैं, प्रेरणादायी लगते हैं। फुले समाज बदलने की अपेक्षा करते हैं, धर्म बदलने की अपेक्षा रखते हैं, परंतु ना धर्म अपने आप में कोई परिवर्तन लाता है और ना ही समाज। फिर फुले नए समाज की स्थापना के लिए नया धर्म समाज के सामने रखते हैं। फुले के बाद डॉ. आंबेडकर धार्मिक परिवर्तन करते हैं। आज के वर्तमानपरिप्रेक्ष्य में भी अगर समाज किसी 'शिवधर्म' की मांग करता है और फुले तथा आंबेडकर को ही प्रेरणा पुरुष मानते हैं तो यह फुले की विचारधारा का ही परिणाम है। इसका दूसरा अर्थ यह भी है कि हिंदू धर्म आहत होने के लिए तैयार है परंतु बदलने के लिए तैयार नहीं है। इस दृष्टि से विचार किया जाए तो फुले जैसे व्यक्तित्व की और उनके विचारों की समाज को आज भी नितांत आवश्यकता प्रतीत होती है। फुले धर्मग्रंथ के पाखंड का विरोध करते हैं। उनके मतानुसार सृष्टि का निर्माण करता अर्थात निर्मिक एक ही है। उसका कोई भी रंग रूप नहीं है। वे

तैतीस कोटी देव की कल्पना को नहीं मानते। वह एकेश्वरवादी है। उनका मानना है कि ईश्वर ने ही यह सृष्टि रची है। अत: वह किस बात की अपेक्षा कर सकता है? वह सब कुछ उसी के द्वारा निर्मित है उसका अपना है। वह जब चाहे तब इसका उपभोग ले सकता है। यह तो स्वार्थी और भोंदू लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए शुरू किया हुआ है ताकि उनकी दुकानें चलें।

फुले सभी मानवों का एक ही धर्म मानते हैं। उनके अनुसार सत्य की राह ही ईश्वर की राह है। धर्मभेद, राज्यभेद छोड़कर सभी मानव एक हो और एक दूसरे के कल्याण की कामना करें ऐसी उनकी अपेक्षा है।

फुले सभी के साथ समान न्याय की मांग करते हैं। लोग जीवन का आनंद उठाये स्वयं सुखी हो और दूसरों को सुखी देखें। सभी सत्य की राह पर चलेंगे तो सब कुछ संभव है ऐसा उन्हें विश्वास है। सारे सुखी होने की भी वे कामना करते हैं। सभी के सुख के लिए संत ज्ञानेश्वर ने भी 'पसायदान' मांगा था। फुले भी सभी के सुख के लिए भीख मांगने के लिए भी तैयार है। यह उनकी महानता का ही परिचायक है। फुले ईश्वर को नहीं नकारते परंतु ईश्वर के नाम पर हो रहे शोषण का जरूर विरोध करते हैं। उनका दृष्टिकोण सदा वैज्ञानिक रहा है। पहला प्रश्न है कि अगर आपके जपानुष्ठान में इतनी शक्ति है कि बारिश गिरायी जा सकती है, तो जब भी सूखा पड़ता है तो पानी के बिना आर्यों की मृत्यु क्यों होती है? ऐसे समय वे स्वयं बचकर अन्यों को भी बचा सकते हैं? परंतु ऐसा नहीं होता। दूसरा प्रश्न है, कि सारे शूद्र अज्ञान में डूबे हुए हैं उन्हीं के अज्ञान का फायदा उठाकर आर्य भूदेव बनते हैं परंतु जोतीराव प्रश्न उठाते हैंकि अगर आप भूदेवता हैं तो आपको भीक मांगने की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? भगवान के पास तो सब कुछ होता है, उसे किसी चीज की कोई कमी नहीं होती फिर यह दर-दर भटकना क्यों?तीसरा प्रश्न है, अगर जपानुष्ठान के बलबूते पर स्त्रियों को बच्चे होते हैं तो शादी की और पति की ही क्या आवश्यकता थी? यह सारे के सारे प्रश्न आज समाज उठाने लगा है। क्योंकि जब लोगों की सद्सद्विवेक बुद्धि जागृत हो गयी है। फुले का यह वैज्ञानिक सत्य समाज के लिए भी दिशा दर्शक है।

समाज में इन क्रांतिकारी विचारों से परिवर्तन तो हो रहा है किंतु धर्म के नाम पर आज भी अज्ञानी लोगों का शोषण किया जाता है। फुले का कहना है कि ईश्वर और हमारे बीच किसी दलाल की आवश्यकता नहीं है परंतु हर जगह एक दलाल बैठा है जो लोगों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करता है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भी लोग पूरी तरह से बदलने के लिए तैयार नहीं है। शहर हो या गाँव हर जगह सीमेंट क्राँक्रिट के घर तो बन रहे हैं। परंतु आज भी हर घर की वास्तुशांति किए बगैर उस घर में रहने नहीं जाते। डॉ. आंबेडकर की राह पर चलने वाला बौद्ध धर्मीय समाज कर्मकांड से कुछ हद तक मुक्त हो चुका है लेकिन अन्य समाज अभी भी कर्मकांड में ही फँसा हुआ है। हाँ कुछ जागरूक लोगों ने पहल अवश्य की है परंतु उसे गति नहीं मिल पाई है। समाज के कुछ तबकों ने विवाह और श्राद्ध सत्यशोधक समाज की पद्धति से करना शुरू किया है। जैसे सामूहिक विवाह होने लगे हैं वैसे ही बगैर ब्राह्मण के भी विवाह होने लगे हैं परंतु यह प्रमाण अत्यल्प है। लोक लाज के भय से लोग आज भी डरते हैं। श्राद्ध के नाम पर किया जानेवाला ढकोसला आज भी जारी है।

फुले का कहना है कि ब्राह्मण के पास आत्मज्ञान तो नहीं है परंतु अहं अवश्य है। छल कपट से लोगों को लूटना ही इनका धर्म बन गया है। उसके दिल में ना किसी के प्रति दया है ना क्षमा। अपने आप को सर्वोच्च मानकर, शूद्रों को हीन मानकर गर्वमें वह चूर हो गया है। श्राद्ध के निमित्त मूक गाय के कत्ल का पाप करना और अपने आप को पुण्यवान मानना यह कहाँ की नीति है? ऐसा प्रश्न जोतीराव उठाते हैं। आज भले ही गाय वाली बात पुरानी पड़ गयी हो किंतु श्राद्ध के नाम पर हो रहा शोषण जारी है। इन सारी बातों को लोग आज समझने तो लगे हैं,वह बदलना भी चाहते हैं लेकिन लोक-लाज के भय से डरते हैं और न चाहते हुए भी वह सब कुछ करते हैं जो ब्राह्मण चाहता है, करवाता है। फुले के वैज्ञानिक विचार जनसमाज तक आज भी पूर्णरूपेण नहीं पहुँच पाए हैं। इसी कारण फुले के विचार समाज के लिए आज भी प्रासंगिक है।

फुले ने स्वर्ग-नरक की कल्पनाओं को मनगढ़ंत माना है। अर्थात आज के वैज्ञानिक युग में 'दुर्लभ मानुष जन्म है, मिले न बारंबार' वाली बात ही अधिक तर्कसंगत लगती है। इसलिए फुले इसी जन्म को सार्थक करने की अपील करते हैं।

स्वर्ग-नरक की कल्पना जान-बूझकर निर्माण की गई है ऐसा उनका कहना है। स्वर्ग और नरक मनुष्य द्वारा निर्मित कल्पनाएँ हैं। फुले का कहना है कि 'कहाँ है स्वर्ग किसने देखा है? जिस किसी ने देखा हो अनुभव किया हो वह हमें भी बताएँ क्योंकि हम कागज लेखी नहीं आँखिन देखी पर विश्वास करनेवाले हैं। अपने तर्क के बल पर लोगों को गुमराह करने हेतु तथाकथित धर्ममार्तंडों ने धर्मग्रंथों में जो भी लिखा हो क्या हम उनका विश्वास करें? क्या इन षड्यंत्रियों पर उनके चाल-चलन पर विश्वास किया जा सकता है? हर बात को बुद्धि की कसौटी पर कसने की दृष्टि तो हमें फुले ने दी है। इसलिए उनके विचार निरंतर प्रेरणादाई है।

फुले ने धर्मपाखंडियों के षड्यंत्र को बखूबी से समझा था। तैंतीस कोटि देवों के निर्माण के पीछे यही उद्देश्य रहा है कि अधिक से अधिक मठ मंदिरों का निर्माण हो और जिन मंदिरों के माध्यम से पंडों-पुरोहितों की रोजी-रोटी का प्रबंध हो। ईश्वर के नाम पर धन कमाया जाए और लोगों को भावनिक बनाकर उनके मन-मस्तिष्क पर निरंतर राज किया जाए, लोगों की मानसिकता न बदले इसका ध्यान रखा जाय। इन बातों को फुले बहुत पहले समझ गए थे।

जोतीराव कहते हैं ब्राह्मणों ने अपने हित के लिए कल्पना द्वारा देवों का निर्माण किया है, कर्मकांड से पाखंड रचा है। ग्रंथों में किन्नर-गंधर्व को नचा कर अज्ञानी लोगों को फंसाया है। गेरूएँ कपड़े पहनकर शुद्रातिशूद्रों को भोंदू साधुओं ने गुमराह किया है। शूद्रों का शोषण करना ही इन्होंने अपना एकमात्र धर्म माना है और शूद्रों को अधिकाधिक नंगा करने की कोशिश की है। लेकिन इन्हें इतिहास कभी माफ नहीं करेगा।

आज हम देख रहे हैं कि शिक्षित होने के कारण लोगोंमें जागृति आ गयी है। लोग इतिहास पढ़ने लगे हैं, पुराण और धर्मग्रंथों का अध्ययन कर रहे हैं। इन ग्रंथों में क्या-

क्या बातें लिखी है और क्यों लिखी है, इस बात को भी समझने लगे हैं। इसलिए सामान्य तबकों के लोग भी अब धर्म व्यवस्था को खुलेआम सवाल उठा रहे हैं। इतना ही नहीं तो झूठे इतिहास को नकार कर नया इतिहास, सही इतिहास लोगों के सामने लाने का प्रयास कर रहे हैं। यह महात्मा फुले के क्रांतिकारी विचारों का ही प्रतिफलन है। जिसका बीजारोपण कबीर जैसे समाज सुधारकों ने किया था और स्वयं फुले ने इस वैचारिक पौधे को अपने सिंचन से इतना परिपक्व बनाया कि इससे जन समाज के लिए अच्छे फल मिल सके। यह फल फुले की दूरदृष्टि का ही प्रसाद है। म. फुले ब्राह्मणों को हिंदू धर्म के वकील मानते हैं। अपने स्वार्थ के लिए धर्म की वकालत करना और निरंतर जन सामान्य को लूटते रहना ही इनका धर्म बन गया है। फुले यहाँ तक कह देते हैं कि ईश्वर के दरबार में ना किसी दलाल की न किसी वकील की जरूरत होती है। हमारी भक्ति सच्ची होनी चाहिए फिर ईश्वर स्वयं हमें मिलने चले आते हैं। इस बारे में जियालाल आर्य लिखते हैं- 'जोतीराव फुले हिंदू धर्म के देवी-देवताओं, पूजा-पाठ और व्रत त्योहारों को धार्मिक दृष्टि से कहीं अधिक वैज्ञानिक दृष्टि से देखते और सुनते थे। उनकी मान्यता थी कि तर्क की कसौटी पर परखे बिना देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना मनुष्य को गर्त में धकेलती है, आदमी नरक में जाता है, इस डर से लोग, जो पंडित कहे वही सही, को मानकर छूत-अछूत, ऊंच-नीच को मानते आ रहे हैं।'[१८] यह विचार ना केवल उस समय बल्कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी जैसे के वैसे हैं।

ब्राह्मणों ने पुराणग्रंथ लिखते समय अपने आप को श्रेष्ठ और शूद्रों को हीन दर्जा दिया है। लोग चाहे किसी भी समाज के क्यों न हो उनका संगठन ही न बन पाये इसकी व्यवस्था की गयी है। इसके लिए उन्होंने चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का निर्माण किया और हरेक को दूसरे से कनिष्ठ सिद्ध किया। ताकि यह एक दूसरे को हीन समझे, जातिगत भेदभाव में उलझते रहे और वह अपना उल्लू सीधा करते रहे। अपने आपको श्रेष्ठ साबित करने के लिए इन षड्यंत्रकारियों ने कुछ किंवदन्तियाँ या दंतकथाओं का आधार लिया है और कुछ ऐसी बातों को धर्मग्रंथों में ठूँस दिया है जिससे उनकी श्रेष्ठता और अन्यों की

कनिष्ठता सिद्ध की जा सके। एक दंतकथा इस प्रकार की है कि 'ब्राह्मणों का जन्म ब्रह्मा के मुख से तो शूद्रों का पैरों से हुआ है।' इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी बहुजनों की जगह हमारे पैरों के ही पास है। जिस प्रकार पुरुष नारी को अपने पैर की जूती मानता है और उस पर निरंतर अन्याय, अत्याचार करता है फिर भी उसे अपने पति को देवता ही मानना पड़ता है और सात जन्मों तक यही पति मिलने के लिए उपवास भी करना पड़ता है। अर्थात उसे गुलाम बनकर रहने के लिए बाध्य किया जाता है। ठीक उसी प्रकार पैर की जूती बनने के लिए, व्यवस्था के सामने झुकने के लिए बहुजन समाज को बाध्य किया जाता है।

फुले प्रश्न उठाते हैं कि कौन से ब्राह्मण है जो मुख से पैदा हुए हैं? जबकि विज्ञान यह कहता है कि हरेक का जन्म योनी से ही होता है। ऐसा कौन सा भगवान है जिसने कुछ लोगों को शुद्र बनाया? भगवान तो बनाते समय ऐसा भेद नहीं करता। ऋषि का कुल और गंगा का मूल नहीं पूछना चाहिए इस प्रकार की बातें पुराणों में लिखी है। शास्त्र का नाम देकर उसमें झूठ-मूट बातें लिख कर लोगों को डराया जाता है।फुले कहते हैं ब्राह्मणों ने इसी प्रकार छल-कपट कर विद्या अपने तक सीमित रखी और अन्यों को शिक्षा से दूर रखा। लेकिन अब यह षड्यंत्र लोग समझ चुके हैं। इसलिए अब यह सब कुछ नहीं चलेगा। कुल मिलाकर म. फुले के विचार आज के परिप्रेक्ष्य में अधिक ताजा है, अधिक वैज्ञानिक है। फुले ने धर्म और तत्संबंधी बातों की पूर्ण चिकित्सा की है। आज के वैज्ञानिक युग में उनके विचार समाज के लिए उपयुक्त सिद्ध हो सकते हैं। फुले के विचार मनुष्य को मनुष्य धर्म की पहचान कराते हैं। सभी धर्मियों को मानवता का पाठ पढ़ाते हैं। धर्म के नाम पर चल रहे पाखंड को मिटाना चाहते हैं। धर्म और ईश्वर के नाम पर चल रहे भावना के बाजार को रोकना चाहते हैं। अंधश्रद्धा को मिटाना चाहते हैं। सामान्य जनसमाज को शिक्षा के प्रभाव में लाकर उनका अज्ञान मिटाना चाहते हैं। जनता को उनकी गुलामी का एहसास दिलाकर उनमें प्राण फूंकना चाहते हैं। ताकि वे अन्याय, अत्याचार और शोषण का विरोध कर सके। फुले बहुजन समाज के लिए ना केवल शिक्षा

की बल्कि अंग्रेजी शिक्षा की भी मांग करते हैं। क्योंकि आधुनिक युग में आगे बढ़ना है, प्रगति करनी है तो वह सब कुछ आना चाहिए। जो इस स्पर्धा के युग में आवश्यक है। उपरोक्त सभी बातें समाज के लिए आज भी अत्यंत उपयुक्त है, दिशादर्शक है। अत: फुले के विचार आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक हैं

७.२.२ राजनीतिक स्थिति के संदर्भ में :

वर्तमान राजनीति का घिनौना रूप हम देखते हैं। आज की राजनीति मूलत: जातिगत राजनीति है। फुले-शाहू-आंबेडकर के महाराष्ट्र में उन्हीं का नाम लेकर यह राजनीति चलती है। कितनी विडंबना है कि जिन महात्माओं ने जातिप्रथा को नष्ट करने में अपना सारा जीवन समर्पित किया उन्हीं के नाम पर राजनीति करनेवाले दल भी जातीय समीकरण को देखकर ही उम्मीदवार देते हैं। स्वतंत्र प्राप्ति के पश्चात साठ साल बाद भी जाति को अनन्य साधारण महत्व आ गया है। उम्मीदवार की अन्य योग्यताएँ बाद में देखी जाती है सबसे पहले तो जाति को लेकर ही विचार-विमर्श किया जाता है।

फुले-शाहू-आंबेडकर के महाराष्ट्र में कुछ अच्छे निर्णय अवश्य लिए गए हैं परंतु उसके पीछे भी विशिष्ट राजनीति ही काम करती है। जैसे सबसे पहले मंडल आयोग की सिफारिशें महाराष्ट्र सरकार ने ही लागू की है। इस कारण निम्न जनजातियों को सत्ता में आने का मौका मिल गया है। पंचायत राज में महिलाओं के लिए ५० प्रतिशत सीटें आरक्षित करवाने वाला पहला राज्य भी महाराष्ट्र ही है। इससे जो सत्ता और राजनीति से कोसों दूर थे वे राजनीति के प्रभाव में आने लगे हैं। जिन महिलाओं को दूर रखा गया था, वह भी सत्ता की भागीदार बन रही है और अच्छे काम भी कर रही है। कई जगह महिलाओं ने पुरुषों से कई गुना अच्छा काम कर दिखाया है। लोगों में नारी ने एक विश्वास निर्माण किया है कि यदि मौका मिले तो यह सब कुछ कर सकती है। एक बात तो अत्यंत स्पष्ट है कि म. फुले ने इनके शिक्षा के द्वार नहीं खोले होते तो क्या यह संभव था? निम्नजन-जातियों में अपने एक और अधिकार के प्रति जागृति हो पाती? क्या संविधान ने जो मानवाधिकार उनको प्रदान किया है उसे प्राप्त करने के लिए इनकी

आवाज बुलंद होती? नि:स्संदेह यह सारा श्रेय महात्मा फुले को ही देना पड़ता है। फुले-शाहू-आंबेडकर का विचारधन ही महाराष्ट्र का सही विचारधन है। इसलिए महाराष्ट्र इनके प्रति सदा नतमस्तक होता आया है। इस प्रकार फुले-शाहू-आंबेडकर के विचारधन से कुछ रूप में परिवर्तन अवश्य हुआ है। लोगों को संवैधानिक अधिकार मिल तो रहे हैं परंतु इसके पीछे राजनीतिक तिकड़मबाजी देखने को मिलती है। कार्यकर्ता कितना भी प्रामाणिक क्यों न हो उसे टिकट मिलने की कोई गारंटी नहीं है क्योंकि अब राजनीति के लिए केवल प्रामाणिक कार्यकर्ता की नहीं साम-दाम-दंड-भेद नीति की आवश्यकता होती है। राजनीति में गुंडागर्दी इतनी बढ़ी है कि जो डर गया समझो वह मर गया। राजनीति में अब नोट के बदले ही वोट मिलते हैं। अर्थात जिसके पास पैसा हो वही राजनीति का हिस्सेदार बन सकता है। गरीब तबके का कोई आदमी राजनीति का हिस्सा नहीं बन सकता। हां वह किसी राजनीतिज्ञ का हथियार बन सकता है। ऐसी गंदी राजनीति या गुलामी को हमेशा के लिए महात्मा फुले मिटाना चाहते थे। जियालाल आर्य लिखते हैं कि- 'जोतीबा का मानना था कि भारत को गुलामी की बेडियाँ पहनाने का काम भारतीय परंपरावाद, सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यताओं ने किया है। हिंदुस्तान के शासकों, पुरोहितों ने कभी भारत को राजनीतिक एकता के सूत्र में आबद्ध करने का प्रयास तक नहीं किया। इसलिए छोटे-छोटे राज्य परस्पर लड़ते रहे। ऐय्याशी के नशे में मस्त रहें और जो भी बाहर से आया, बिना किसी विशेष प्रयास के उन पर अपना आधिपत्य स्थापित कर गया। ऐसे लोगों के हाथोंमें राज्य सत्ता सौंपने से अच्छा है कि कुछ दिन और अंग्रेज ही इस देश का शासन संचालित करते रहे और शूद्रों तथा गरीबों को बराबरी का हक दिलाएँ।'[१९]

डॉ. आंबेडकर ने जो संवैधानिक अधिकार प्रदान किया है, जिसके बलबूते पर राजनीति में सीटें आरक्षित की जा रही है और सत्ता में हिस्सेदारी मिल रही है उस अधिकार को राजनीतिक ठेकेदार छीन रहे हैं।

पंचायतराज व्यवस्था में फुले-शाहू-आंबेडकर की बदौलत आरक्षण तो मिल गया है परंतु लोगों की गरीबी और लाचारी का फायदा उठाकर उनको राजनीतिज्ञों द्वारा चुनाव के मैदान में उतारा जाता है, अपना राजनीतिक हथियार बनाकर इस्तेमाल किया जाता है। संविधान ने अधिकार तो दिया दबे-पीचे लोगों के लिए परंतु इसके माध्यम से सत्ता का भागीदार और कोई बन जाता है और अपना स्वार्थ सिद्ध करता है। महिलाओं की राजनीतिक हिस्सेदारी को लेकर भी यही बातें देखने को मिलती है। महिलाओं को राजनीति के मैदान में उतारा जाता है परंतु यह चुनकर आते ही उनका काम समाप्त हो जाता है। सरपंच बन जाती है महिला लेकिन उपसरपंच उसके सारे अधिकार छीन लेता है। अनेक बार सभापति होती हैं कोई महिला परंतु सभापति के पति ही उस कुर्सी पर बैठकर सारे काम करते हैं। फुले-शाहू-आंबेडकर के महाराष्ट्र में यह सब कुछ खुलेआम होता है और कोई कुछ कर नहीं पाता।

आजकल भाई-भतीजावाद और घराणेशाही ने सत्ता को अपने वश में कर लिया है। पहले यह बात कुछ विशिष्ट पार्टियों तक सीमित थी परंतु अब यह रोग सभी पार्टियों को लग चुका है। यहां तक की बड़े-बड़े नेता गण वह चाहे किसी भी पार्टीमें हो चुनाव में अपने बेटा-बेटी, पत्नी को खड़े कर देते हैं और एक दूसरे को मदद करते हैं। ऐसे मौंके पर विरोधी दलों की ओर से 'लूज' उम्मीदवार दिया जाता है। ताकि अपने मित्र की घराणेशाही चलती रहे। फिर वह भी इन महाशय को जब कभी मद्द की जरूरत हो करते रहते हैं। इस प्रकार सत्ता के भेडिए मजबूत-से-मजबूत बनते जा रहे हैं। सत्ता का फायदा उठा रहे हैं। भ्रष्टाचार के माध्यम से सरकारी धन लूट रहे हैं और सत्ता में पुनः वापिस आने के लिए वही धन बांट रहे हैं। सबसे दुखःद बात यह है कि फुले और आंबेडकरवादी कहने वाले भी स्वार्थमें लिप्त नजर आ रहे हैं। आंबेडकरवादी समाज भी कई खेमों में विभाजित हो गया है। लोग चाहते तो है एक ऐसा मजबूत संगठन जो अपना एक प्रभावशाली दबाव गुट हो, परंतु 'तोडों और राज करो' की राजनीति यह होने नहीं देती। जिन कार्यकर्ताओं को सत्ता में आने का मौका मिलता है, उनको इस बात का ध्यान रखना चाहिए की अपने समाज के दीन-दलितों की पिछड़े हुए की मदद करें, वह

सारी योजनाएँ उन तक पहुंचाएँ जो उनके लिए बनाई गयी है। उनकी समस्याओं की ओर ध्यान दें और सभागार में उनके प्रश्न उठाएँ दुर्भाग्यवश ऐसा चित्र देखने को नहीं मिलता। धीरे-धीरे यह कार्यकर्ता भी अपने स्वार्थमें अंधे बन जाते हैं और व्यवस्था के पक्ष में चले जाते हैं, राजनीतिज्ञों द्वारा मैनेज हो जाते हैं। सत्ता और पैसे के लिए अपना ईमान बेचने के लिए भी तैयार हो जाते हैं।

म. फुले तो पूर्णता सामाजिक कार्यकर्ता थे। परंतु पुणे नगर निगम में जनसमाज का प्रतिनिधित्व करने का मौका उन्हें भी मिला था। इस सुनहरे मौके का उन्होंने फायदा उठाया और जन सामान्य के साथ न्याय हो उस की भरसक कोशिश भी की। म. फुले दीन-दलितों, गरीबों की प्रताड़ना अपनी आँखों से देख चुके थे। सत्ता में बैठे ऊँची जातियों के लोग उनकी समस्याओं की ओर आँखें मूँदकर देखते थे। फुले स्वयं जन सामान्य के प्रतिनिधि थे, वह कैसे चुप बैठ सकते थे। नगर निगम की भरी सभा में स्पष्ट शब्दों में वे सवाल उठाने लगे। एक उदाहरण देखिए- 'लोग शिकायत करते हैं कि सदस्य पदों पर उँची जातियों के लोगों को ही नियुक्त किया जाता है, जिसके कारण नगरपालिका कभी कनिष्ठ वर्गों की परवाह नहीं करती और उन्हें आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं कराई जाती, नगरपालिका के जलपूर्ति विभाग के अधिकारी ब्राह्मण होते हैं, वह ब्राह्मणों की बस्तियों को भरपूर मात्रा में जल पूर्ति करते हैं और गरीबों की बस्तियों में हमेशा पानी की कमी होती है, बिजली और अन्य सुविधाएँ भी ऊँची जातियों की बस्तियोंमें ठीक से उपलब्ध हुआ करती हैं जबकि अन्यों को इनके लिए तरसना पड़ता है।'[२०] राजनीति में कार्य करने वाले राजनेताओं और कार्यकर्ताओं के लिए यह बातें अत्यंत प्रेरणादाई है।

केवल समस्याएँ उठाना ही सच्चे कार्यकर्ता का काम नहीं होता बल्कि उन पर उपाय खोजना और उन पर अंमल के लिए बाध्य करना उसका कर्तव्य होना चाहिए। म. फुले ने अपने कार्यकर्तृत्व से कई मिसालें कार्यकर्ताओं के लिए कायम की है। व्यसनाधीनता समाज को लगी बहुत बड़ी धुन है। जब तक समाज को इससे मुक्त नहीं किया जा सकता तब तक समाज की प्रगति ही संभव नहीं है।'सन १८८०में सरकार

मदिरालयों की संख्या बढ़ाने का विचार करने लगी थी। जोतीराव ने तिथि १८ जुलाई, १८८० को पुणे नगरपालिका की कार्यकारी समिति के अध्यक्ष श्री प्लैंकेट केट को इसके बारे में एक बड़ा पत्र लिखा जिसमें कहा गया था- नगरपालिका ने एक जनस्वास्थ्य विभाग खोला है और उस पर काफी पैसा खर्च किया जाता है। पहले पुणे नगर में बस्तियों के बीच मदिरालय नहीं थे, लेकिन अब उनकी संख्या बढ़ गई है। मद्यपान की लत न केवल नागरिकों के नैतिक आचरण बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है। इससे कई परिवार बर्बाद हो गए हैं। मेरा सुझाव है कि नगरपालिका मदिरालयों पर कर लगाए जिससे यह लतखोरी कम हो।जोतीराव के इस पत्र की खबर सारे नगर में फैल गयी। पुणे के 'ज्ञानप्रकाश' पत्र ने लिखा-'जोतीराव ने जिस समस्यां की ओर नगरपालिका का ध्यान दिलाया है, वह हमारी राय में बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए जोतीराव निस्संदेह बधाई के पात्र हैं।'[२१]

जोतीराव का यह कार्य उन कार्यकर्ताओं के लिए अत्यंत प्रेरणाप्रद है जो कार्यकर्ता सर्वांध बनकर मदिरालय बंद करने कि नहीं अपने नाम पर नया बार खोलने की अनुमति मांगते हैं। बार के भरोसे फिर कार आती है और धीरे-धीरे यह राजनीति में अपना कारोबार जमाते हैं जो केवल अपने और अपने तक ही सीमित होता है। समाज से इनका कोई नाता नहीं होता। ऐसे महाजन समाज के कार्यकर्ता म. फुले के चरित्र और विचारों को समझें तो उनको भी सही दिशा मिल सकती है। फुले के विचारों में इतनी शक्ति है कि बहुजन समाज के कई कार्यकर्ताओं ने इनसे प्रेरणा ग्रहण कर समाज के लिए अपना योगदान दिया है।

फुले के विचारों से प्रभावित होकर राजर्षि शाहू ने बहुजन समाज के प्रति अपना दायित्व निभाया है। हमारे देश में स्वतंत्र प्राप्ति के पश्चात ५० साल बाद पिछड़ी जनजातियों को ५० प्रतिशत आरक्षण दिया जाने लगा जबकि राजर्षिशाहू ने ५०साल पहले अपने संस्थान में निम्न जातियों के लिए ५० प्रतिशत आरक्षण का निर्णय लिया था। यह क्रांतिकारी निर्णय फुले के विचारों की विजय थी। किसानों के हित के अनेक

निर्णय उन्होंने लिए यह भी फुले के क्रांतिकारी विचारों का प्रभाव ही था। फुले के विचारों के कारण ही राजर्षि शाहू ने निम्न जनजातियों के हित में अनेक क्रांतिकारी निर्णय लिए। डॉ.आंबेडकर की शिक्षा का प्रबंध किया। आगे चलकर डॉ. आंबेडकर ने फुले को ही अपना गुरु माना और दीन-दलित समाज का संगठन कर सत्ता में अपना हिस्सा मांगा। संविधान बनाने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी आयी तो उसे सर्वसमावेशक बनाने की दृष्टि से अपना अनमोल योगदान दिया। डॉ. आंबेडकर जब कानून मंत्री बने तो उन्होंने सामाजिक न्याय के लिए भरसक प्रयास किये। यह सब कुछ म. फुले के समताधिष्ठित मूल्यों का और दूरदृष्टि विचारों का ही प्रसाद था। जिसका बीजरोपण म. फुले ने किया था उसके फल आज हम देख रहे हैं।

म. फुले के विचारों को लेकर आज कई संगठन बन रहे हैं और राजनीति में अपना हिस्सा मांग रहे हैं। अब तो म. फुले के विचार केवल महाराष्ट्र तक सीमित नहीं बल्कि उत्तर भारत में भी पहुंच चुके हैं। भारत भर के बहुजन समाजियों ने उन्हें प्रेरणादायी व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार किया है। महाराष्ट्र में तो जितने भी दीन-दलितों के या अन्य समाजवादी विचारों के दल अथवा संगठन है उनके प्रेरणा स्त्रोत फुले ही रहे हैं। फुले के समताधिष्ठितविचारों को ध्यान में रखकर ही महाराष्ट्र में समता परिषद की स्थापना की गयी है। गांव-गांव, गली-गली तक फुले के विचारों को पहुँचाने की कोशिश हो रही है। परिणाम स्वरूप निम्न जन-जातियों के साथ-साथ अब ओबीसी समाज भी संगठित होने लगा है, अपना हक मांगने लगा है। इन सारी बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज को राजनीतिक क्षेत्र में भी दिशा निर्देश देने के लिए, अपने हिस्से की रोटी मागने के लिए, म. फुले के विचार आज भी प्रासंगिक है।

४.२.३ सामाजिक स्थिति के संदर्भ में:

महात्मा फुले का जन्म अत्यंत विपरीत परिस्थितियोंमें हुआ था। सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक क्षेत्र में काफी उथल-पुथल चल रही थी। पेशवाओं का राज्य अय्याशी में डूबा हुआ था। जोतीराव के जन्म से कुछ ही वर्ष पहले महाराष्ट्र में पेशवा राज्य समाप्त

हो चुका था। शिवाजी महाराज द्वारा स्थापित राज्य की बागडोर लगभग सौ वर्षों तक ब्राह्मण पेशवाओं के हाथोंमें रही लेकिन उन्होंने शिवाजी महाराज की न्यायोचित तथा गुणग्राही शासन प्रणाली को नष्ट-भ्रष्ट कर उसे अन्यायपूर्ण और जातिप्रधान बनाया। इससे स्वाभाविक रूप से आंतरिक कलह बढ़ते गये। दूसरा बाजीराव रंगीन मिजाजवाला, स्वेच्छाकारी, दुराचारी, पराक्रमहीन राजा था। इनके पाँच ब्याह हो चुके थे। इसके बावजूद भी वे व्यभिचारिणी स्त्रियों से घिरे रहते थे। वे इतने स्त्री लंपट थे कि इनके अत्याचार से तंग आकर वाई नामक गांव की नारियों ने कुएँ में कूदकर अपने प्राण त्याग दिए थे। अगर राजा ही विलासिता और भोगलालसा में डूबा हुआ हो तो प्रजा से क्या अपेक्षा की जा सकती है।

पेशवा शासन के उत्तर काल में शासन के सभी उँचे पद ब्राह्मणों को दिए जाते थे। अन्य जातियों के लिए शासन में कोई स्थान नहीं था। शासनकर्ता होने के कारण ब्राह्मण शासन से अधिकाधिक लाभ उठाते थे। ऊपर से ब्राह्मणों को दान देना पुण्य कर्म माना जाता था। बाजीराव सहस्त्रों ब्रह्मभोजों का आयोजन करते और राज्य का धन ब्राह्मणों पर लुटाते। शासकीय व्यवस्था में देशमुख विशिष्ट क्षेत्र का अधिपति और पाटील गाँव का राजा हुआ करता था। देशमुखी अक्सर ब्राह्मणों के अधिपत्य में ही रही। जरा भी शर्म न करने वाले यह लोग ऐषों आराम की जिंदगी जी रहे थें तो चोंटी से एड़ी तक पसीना बहाने वाले किसान लगान और कर्ज के बोझ से दब गए थे। महाजन जो प्राय: ब्राह्मण हुआ करते थे किसानों-मजदूरों की मजबूरी का फायदा उठा कर उनको ऋण देते और उनकी जमीन हड़प लेते और किसानों को भी अपने यहाँ बंधुआ मजदूर बनाते। किसानों, मजदूरों की कई पीढ़ियाँ महाजन की सेवा में ही अपना जीवन बिताती। महात्मा फुले इस बात का विरोध करते है और साधारण को शिक्षित करने कि बात करते हैं। इस संदर्भ में मुरलीधर जगताप लिखते हैं- 'उन्होंने शिक्षा प्रचार के लिए १८ पाठशालाएँ खोली थी। जिनमें शुद्रातीशूद्र वर्ग के छात्र और महिलाएँ शिक्षा प्राप्त कर रही थी। जोतीराव चाहते थे कि शुद्रातीशूद्र वर्गों के लोगों को इस प्रकार शिक्षा दी जाए कि वे

अपनी सामाजिक समानता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों के लिए लड़ने को तैयार हो जाए और यह तभी हो सकेगा, जब शिक्षा के कारण वे समझ सकें कि अच्छा बुरा क्या है। अपना हित-अहित किसमें है।'[२२]

चार वर्णों और हजारों जातियों में बँटे हुए हिंदू समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोपरि था। ब्राह्मणों को छोड़ अन्य वर्णों के लोगों को शिक्षा का अधिकार नहीं था। धार्मिक ग्रंथों में धर्म संबंधी सारे अधिकार ब्राह्मणों को ही दिए गए थे। इसलिए धार्मिक मामलों में ब्राह्मण वचन देवता का निर्णय माना जाता था। तत्कालीन पेशवा राज्य के सभी ऊँचे पद ब्राह्मणों को ही दिए जाते थे और आगे चलकर अंग्रेजी राज्य में भी सभी वरिष्ठ पद ब्राह्मणों के ही हाथोंमें रहें। धर्म और राज्य से मिले अधिकारों का प्रयोग कर ब्राह्मणों ने अपने आप को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया। इस बात का भी प्रचार-प्रसार किया गया कि 'ब्राह्मण भले ही हो भ्रष्ट, फिर भी वह तीनों लोगोंमें श्रेष्ठ।'

ऊँची जातियों का समाज निम्न जाती को घोर घृणा की दृष्टि से देखता था। इन्हें अछूत माना जाता था। लोग इनकी परछाई से भी दूर भागते थे। ब्राह्मण जब अपवित्र हो जाते तो सारा पाप उस गरीब के मत्थे मढ़ा जाता। उसकी छी: थू की जाती जैसे वह मनुष्य नहीं कोई जानवर हो। मजदूर बनकर वह मंदिर बनाने का काम तो कर सकता था, लेकिन मंदिर में जाकर भगवान के दर्शन नहीं कर सकता था। अछूत और बाल बच्चों को शिक्षा का अधिकार ही नहीं था। दिन-रात ऊँची जातियों की सेवा करना ही उनका नित्यक्रम था। स्त्रियों को धर्मग्रंथ पढ़ने पर पाबंदी थी। उनका सारा जीवन नारकीय यंत्रनाओं से भरा हुआ था। सतीप्रथा जोरों पर थी। इस संबंध में जोतीराव ने स्वयं कहा था-'महिलाएँ तो अगणित संख्या में 'सती' जाती है। लेकिन आज तक किसी पुरुष को 'सता' जाते हुए नहीं देखा।'[२३]

विधवा विवाह को अनुमति नहीं थी और बालविवाह खुलेआम होते थे। समाज में आंधश्रद्धा फैली हुई थी। लोग अज्ञान में डूबे हुए थे इसलिए रूढी-परंपराओं से घिरे हुए थे। उनके अज्ञान का फायदा उठाकर उनका मानसिक शोषण किया जाता था। म. फुले

इन सारी स्थितियों को समझने के पश्चात सबसे पहले पिछड़े समाज और महिलाओं के लिए शिक्षा के द्वार खोलते हैं। क्योंकि वह जानते थे ज्ञान प्रकाश के बिना परिवर्तन संभव ही नहीं है। जैसे-जैसे यह लोग शिक्षा के प्रभाव में आ गए वैसे-वैसे ज्ञान के प्रकाश में इनके जीवन का अंधेरा नष्ट हुआ, उनकी तीसरी नेत्र खुली और यह दुनियादारी समझने लगे। इनकी चेतना जागृत होने लगी। अपने हक और अधिकार के प्रति वे जागृत होने लगे। सही-गलत का भी फैसला करने लगे। इस संदर्भमें धनंजय कीर लिखते हैं- 'जोतीराव फुले यह सामाजिक समता की क्रांति के आद्यजनक थे। उस सामाजिक क्रांति का जन्म पाश्चात्य शिक्षा और उसके साथ आये हुए समानता के विचारों सें हुआ था। सामाजिक, आर्थिक और राजकीय क्षेत्र में समानता के विचारों का प्रवाह धीरे-धीरे भारत भर फैलने लगा।'[२४] लोगों को ज्ञात होने लगा कि मिथ्या ग्रंथरचना करके ईश्वर के नाम हमें ठगा जाता है। धर्मग्रंथों का खोकलापन वह समझने लगे और हर बात को तर्क और वितर्क की कसौटी पर परखकर देखने लगे। यह एक तरह से म. फुले के विचारों की ही विजय थी। आज के वर्तमान युग में बहुत बड़ा सामाजिक परिवर्तन हुआ है। छुआछूत तो लगभग समाप्त हो गयी है। बहुजन समाज शिक्षा की शक्ति को समझ गया है। इसलिए शिक्षा का प्रमाण काफी मात्रा में बढ़ गया है। यह फुले-आंबेडकर की दूरदृष्टि का ही परिणाम है कि अधिक से अधिक पिछड़ा समाज शिक्षा के प्रवाह में आए। इसलिए संविधान के मुताबिक एस.सी./एस.टी. के साथ-साथ अब ओबीसी और घुमंतू जातियों को भी शिक्षा में आरक्षण की सुविधा और छात्रवृत्तियाँ भी दी जा रही है। नौकरियों में भी पिछड़ी जन-जातियों को लग-भग ५२ प्रतिशत आरक्षण दिया जाने लगा है। उच्चशिक्षा में भी अब यह प्रमाण धीरे-धीरे बढ़ रहा है। इन लोगों की आवाज बुलंद हो रही है। अब वे हर अन्याय, अत्याचार का मुँहतोड़ जवाब देने लगे हैं। विशेषकर जिन लोगों ने डॉ. आंबेडकर के कदमों में कदम मिलाए हैं वह बहुत जल्द गुलामी से मुक्त हुए। धर्मत्याग करने से उनके जीवन का कर्मकांड ही समाप्त हो गया। वे मानसिक गुलामी से मुक्त हो गये।

महिलाओं के जीवन में तो शिक्षा से इतना परिवर्तन आया है कि हर क्षेत्र में उसने पुरुषों की बराबरी का स्थान हासिल किया है। जमीन पर तो उसने अपनी मेहनत और लगन से असाध्य भी साध्य कर दिखाया किंतु वह अब आकाश में भी उड़ान भरने लगी है। यह एक अच्छा चित्र है कि भारत की यह तस्वीर बदल रही है। परंतु यह भी सच है कि जहां शहरों में गति के साथ परिवर्तन हो रहा है वहां ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग शिक्षा से बहुत दूर है। फुले इस बात को जानते थे कि जब तक ज्ञान का दिया घर-घर नहीं पहुँचेगा तब तक इनके जीवन का अंधेरा नष्ट नहीं हो सकता। म. फुले चाहते हैं कि पिछड़ा समाज चाहे किसी भी हालत में हो शिक्षा को सबसे अधिक प्राधान्य दे। साथ ही म. फुले, इन लोगों की शिक्षा के संदर्भमें कुछ विचार रखते हैं। इस के संदर्भ में जियालाल आर्य लिखते हैं- 'गरीब वर्ग के बच्चे, पढ़ाई के दौरान, गरीबी के कारण, जैसे ही कोई काम मिल जाता है, पढ़ाई को तिलांजलि दे देते हैं। ग्रामीण क्षेंत्र के बच्चें, जानवरों को चराने और खेती में मां-बाप की मदद करते हैं। पढ़ाई नहीं कर पाते तथा स्कूलों की संख्या बढ़ाने के साथ-साथ स्कूलोंमें विशेष आकर्षण का प्रावधान जैसे छात्रवृत्ति, छहमाही और वार्षिक पारितोषिक वितरण। आदि करना चाहिए जिससे गरीब किसान अपने बच्चों को स्कूल भेजें और उन्हें शिक्षा के प्रति लगाव हो। मेरे विचार से १२ साल तक के बच्चों के लिए प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य और निशुल्क कर देनी चाहिए।''[२५] उपरोक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि फुले शिक्षा को कितनी अहमियत देते थे। उनका कहना है कि कितनी भी दरिद्रता क्यों न हो, भिक्षा मांगकर क्यों न हो विद्या ग्रहण करनी ही चाहिए। वृद्ध विद्वानों से भी वह ऐसे बच्चों को मदद करने का आवाहन करते हैं। समाज में जो सक्षम है वह स्त्री और पुरुष दोनों के लिए स्कूल खोलें। इस पवित्र क्षेत्र में स्त्री-पुरुष ऊँच-नीच इस प्रकार का कोई भेद ना हो। शिक्षा के क्षेत्र में जो समाज का नहीं केवल अपना स्वार्थ देख रहे हैं और स्वार्थांध होकर लोगों का शोषण कर रहे हैं, इनकी अधोगति निश्चित है, ऐसा उनका कहना है।

म. फुले इतने दूरदृष्टि वाले थे कि अपने समय में ही वह जान गए थे कि अंग्रेजी भाषा को अत्यंत महत्व आने वाला है और वह विश्वभाषा बनने वाली है। आज के इस कंप्यूटर के युग में जिसे अंग्रेजी नहीं आती, कंप्यूटर नहीं आता वह आउटडेटेड है। राष्ट्रभर अपनी पहचान बनानी है, राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ जाना है तो राष्ट्रभाषा का ज्ञान आवश्यक है और मातृभाषा तो हमारी सही पहचान होती है। इसलिए फुले तीन भाषा के जानकार को सदगुण संपन्न मानते है।

जिन लोगों को सबकुछ मिला है समाज-ऋण चुकाने के लिए सामाजिक कार्यकर्ता बने अर्थात जिनको रास्ता मिल गया है वे दूसरों को रास्ता दिखाएँ। यह उन लोगों के लिए बहुत बड़ा सबक है जो केवल अपना और अपनों का ही ध्यान रखते हैं। इतना ही नहीं तो अपने समाज के साथ-साथ अन्य समाजों को भी रास्ता दिखाएँ, साथ लेकर चलें। उनके सामने सत्य-वचन और सत्य-वर्तन की मिसाल कायम करें। सत्य के बिना संसार में कोई भी बड़ा धर्म नहीं है, यह जोतीराव का कहना है। यह विचार आज भी समाज के लिए हितकारक है।

जोतीराव ने इस बात का भी अनुभव किया था कि बहुजन समाज जैसे अज्ञान के अंधकार में डूबा हुआ है, उसी प्रकार व्यसनों में घिरकर वह दिशाहीन बन गया है। व्यसनाधीनता की कीड़ आज भी नष्ट नहीं हो पाई है बल्कि अनेक परिवार इस लत के कारण बरबाद हो रहे हैं। वे जानते हैं कि जब तक समाज व्यसन मुक्त नहीं होता तब तक उसकी प्रगति ही असंभव है। क्योंकि जो कुछ वह कमायेगा उसे इस लतखोरी में बरबाद करेगा। यह चित्र म. फुले बदलना चाहते हैं।

जोतीराव का कहना है कि बंधुओं मद्यपान कर क्यों अपना घर-बार बरबाद करते हो। उसमें जो पैसा बरबाद करते हो वही पैसा ग्रंथ खरीदने के लिए खर्च करो जिससे तुम्हारे जीवन में प्रकाश आजाए। ग्रंथ पढ़ते समय में नया विचार मिलेगा जिससे हमारी सद्सद्विवेक बुद्धि जागृत हो जाएगी। सच-झूठ भी समझने में सक्षम होंगे, मनुष्य-मनुष्य में किसने और क्यों भेद उत्पन्न किया यह भी स्पष्ट हो जायेगा। इससे अपने भाइयों से ही जातिगत लड़ाई और वैरभाव अपने आप समाप्त हो जाएगा।

म. फुले के इन विचारों की फलश्रृति हम देख रहे हैं कि शिक्षा के कारण समाज की आंखें खुल गई है। कौन हमें आपस में लाडाता था इसका भेद भी खुल गया है। जो ओबीसी आपस में ही भिड़ जाते थे वह सारे षड्यंत्र को समझ कर संगठित होने लगे हैं। यह म. फुले के बहुमोल विचारों की विजय है, जिसकी आज भी आवश्यकता है। म. फुले जहाँ 'ख्रिस्त मोहंमद। मांग ब्राहमणांसी। धरावे पोटासी। बंधु परी।।' का संदेश देते हैं, वहीं सामान्य जनसमाज को उनके मानवाधिकार के प्रति सचेत करते हैं। वे यह भी समझाते हैं कि जन्मत:न ही कोई बुद्धिमान होता है न ही कोई मूढ़।

जोतीराव का कहना है कि ईश्वर ने मानव को बनाते समय एक जैसा ही बनाया है। उसने बनाते समय ऊँच-नीच का भेद नहीं माना। जन्म से ना कोई ऊँच होता है नानीच, ना बुद्धिमान और ना ही मूर्ख। जिनको शुद्र मानकर हीनता से देखा जाता है उनमें किस बात की कमी है? क्या वे पशु है? इसलिए उनके साथ पशुवत व्यवहार किया जाता है। हम क्यों भूल जाते हैं उनका मानवाधिकार? क्यों भूल जाते हैं हम हमारा मानवधर्म? यह प्रश्न आज भी व्यवस्था से पूछे जा सकते हैं। क्योंकि आज भी छूत-अछूत की भावना भले ही समाप्त हो गयीहो परंतु घृणा की दृष्टि आज भी कायम है। यही कारण है कि स्वतंत्र प्राप्ति के साठ साल बाद भी खैरलांजी जैसी घटनाएँ आज भी घटित होती है। लेकिन इसके बावजूद इस अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध देशभर के दलित-पीडित आवाज उठाते हैं और आंदोलन इतना तीव्र हो जाता है कि राजनीतिक व्यवस्था को अत्याचारों के विरुद्ध कारवाई करनी पड़ती है। यह उन महान नेताओं फुले-आंबेडकर के विचारों की ही विजय है कि लोग अपने मानवाधिकार के प्रति, अन्याय और अत्याचार के प्रति सचेत हो गए हैं, जागृत हो गए हैं।

म. फुले के विचार जितने प्रगतिशील हैं उतने ही वैज्ञानिक भी है। इसलिए यह विचार समाज के लिए आज भी लाभदायक हैं। फुले एक ओर उस जातिगत व्यवसायिक परंपरा को तोड़ना चाहते हैं और उनके लिए खींची गयी लक्ष्मणरेखा के बाहर आने की अपील करते हैं। वहीं दूसरी ओर 'मानवा उद्योग अनेक आहेत' कहकर हर आदमी को

उद्यमी बनाना चाहते हैं। बालों की मालिश से लेकर बूट की पॉलिश का कोई भी काम करें तभी हम प्रगति कर सकते हैं, इस प्रकार विचार रखते हैं। आज समाज के लिए ऐसे विचारों की आवश्यकता है। हाथ पर हाथ धरे रहने वालों को कुछ नहीं मिलता। ईश्वर भी उन्हीं के साथ होते हैं जो कामचोर नहीं बल्कि काम के पुजारी है। अंधश्रद्धा और कर्मकांड यह दो बहुजन समाज की बेडियां है, इन्हें त्यागकर ही वे मुक्त हो सकते हैं। इसलिए उसे मानसिक और शारीरिक दोनों दृष्टि से स्वच्छ होना होगा। तभी यह मानसिक और शारीरिक रोग समाप्त हो सकते हैं। इसके लिए फुले लोगों को ग्रंथों से नाता जोड़ने की अपील करते हैं ताकि मन सुदृढ़ हो, निरंतर स्वच्छ रहें ताकि मन सुंदर एवं स्वस्थ रहे।

आज के वैज्ञानिक युग में यह अत्यंत बहुमोल विचार है। स्वस्थ जीवन के लिए स्वच्छता अत्यंत महत्वपूर्ण है। अस्वच्छता के कारण हमारी दुर्गंध आती हो तो कौन हमें नजदीक आने देगा। रोगग्रस्त होने का मूल कारण ही अस्वच्छता है गांव-गांव चलाए जा रहे 'निर्मल ग्राम स्वच्छता अभियान' के लिए म. फुले के विचार दिशादर्शक सिद्ध हो सकते हैं।

म. फुले किसानों के हितैषी रहे हैं। किसानों को गुलामी से मुक्त करने के लिए ही उन्होंने 'किसान का कोड़ा' नामक ग्रंथ लिखा।किसानों के अन्याय का डटकर मुकाबला करनेवाले जोतीराव महाराष्ट्र के ही नहीं भारत के पहले समाज चिंतक है। इस देश का यह सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि अन्नदाता भूखा है और कर्ज के बोझ से दब कर आत्महत्या कर रहा है। फुले ने इस समस्या के समाधान के लिए कुछ सुझाव दिए थे। जो इस प्रकार है- 'किसानों को ऋणमुक्त किया जाए, उन्हें कम व्याज से ऋण दिए जाएं, साथ ही उत्तम बीज हल' औजार दिए जाए, देहातों के तेज लड़कों को चुनकर उन्हें अंतिम शिक्षा तक निशुल्क पढ़ाया जाए।' इन सुझावों को आज सरकार गंभीरता से लेती है तो भारत के किसानों की स्थिति में परिवर्तन आ सकता है और यह दुख:द तस्वीर बदल सकती है। इससे हमेंम. फुले की दूरदृष्टि का अंदाजा आ जाता है।

नारी के संदर्भमें भी जोतीराव के विचार अत्यंत विशाल थे। इसलिए वे सबसे पहले नारी शिक्षा की ही नीव डालते हैं। उन्हें मालूम था कि नारी जब तक शिक्षित नहीं

होती तब तक घर की तस्वीर बदल ही नहीं सकती। स्त्रीविषयक इस महान दृष्टीकोन के कारण ही फुले को पुरस्कृत किया गया। जिसके संदर्भमें धनंजय कीर लिखते हैं- 'ज्ञानप्रकाश' समाचार पत्र के २२ नवम्बर,१८५२ के अंक में लिखा था कि 'तिथि १६ माहे मजकुरी पाठशाला में बड़ा कार्यक्रम आयोजित करके, मेजर कैंडी ने 'सरकार बोर्ड ऑफ एज्युकेशन' की ओर से 'राजश्री' जोती गोविंद फुले, माळी इनको एक शालजोड़ी, पुरस्कार में दी। पुना में जो आज लड़कियों के स्कूल है, उनकी आरंभिक स्थापना जोतीबा ने की। इस कारण सरकार ने इस अच्छे कार्य के लिए उन्हें पुरस्कार दिया।''[२६] उनकी धारणा थी कि सभी प्राणियों में मनुष्य श्रेष्ठ है किंतु मनुष्य में नारी सर्वश्रेष्ठ है। वे स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व मानते हैं और स्त्री-पुरुष समानता के हिमायती है। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया और हरेक बात की शुरुआत अपने घर से की। बालविवाह का उन्होंने खुलकर विरोध किया। इन्हीं से प्रेरणा ग्रहण कर ताराबाई शिंदे ने 'स्त्री-पुरुष तुलना' नामक ग्रंथ लिखने का साहस किया। आज कई नारियाँ अपने प्रश्नों पर खुलकर लिख रही है और व्यवस्था से प्रश्न उठा रही है। यह सब म. फुले के विचार एवं कर्तृत्व का महाप्रसाद है जो नारी को मिला और धन्य हो गयी। यही कारण है कि सारा नारी समाज म. फुले एवं सावित्रीबाई के प्रति श्रद्धा से नतमस्तक होता है। सावित्रीबाई को तो यह 'आधुनिक सरस्वती' ही मानती है। इससे फुले दंपत्ति का भारतीय जनमानस पर कितना गहरा प्रभाव है इस बात का पता चलता है। जोतीराव ने जिस अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, नारी शिक्षा और व्यवसायिक शिक्षा पर जोर दिया है, उसकी आज भी इस देश को जरूरत है। विशेष बात यह है कि जोतीराव संख्यात्मक वृद्धी की अपेक्षा गुणात्मक वृद्धि की आशा रखते हैं। हम देख रहे हैं और अनुभव कर रहे हैं कि स्कूलों की संख्यात्मक वृद्धी तो बहुत हुई है। किंतु उनका गुणात्मक दर्जा अत्यंत निम्न स्तर का है। इसे सुधारने की आवश्यकता है।

म. फुले के विचार इसलिए महान थे कि उनकी कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं था। दु:खद बात यह है कि म. फुले के अनुयायियों में आज कथनीवाले तो बहुत मिल जाते हैं परंतु करनीवाला बड़ी मुश्किल से मिल जाता है। म. फुले का नाम लेकर

राजनीति करनेवाले, उनकी जय-जयकार करने वाले, प्रतिमाओं पर फूल-माला चढ़ानेवाले तो बहुत मिल जाते हैं लेकिन उनका सच्चा सामाजिक कार्यकर्ता बनने के लिए कोई तैयार नहीं है। आज जरूरत इस बात की है कि जोतीराव के विचारों को सच्चे अर्थों में समाज समझे, उनके वैचारिक आंदोलन के साथ जुड़े और समताधिष्ठित, स्वस्थ और सुगठित समाज के निर्माण में अपना अमूल्य योगदान दें। जो लोग जोतीराव को सचमुच एक प्रेरणादायी व्यक्तित्व मानते हैं, सचमुच कुछ कर दिखाना चाहते हैं, उन्हें जोतीराव की मूल प्रेरणा, उनकी सीख और जनसमाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को समझ कर ही आगे बढ़ना चाहिए। तभी उनका अधूरा सपना पूर्ण हो सकता है।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि म. फुले अपने समय से बहुत आगे थे। उनकी सामाजिक उन्नति और समताधिष्ठित समाज की संकल्पना आज भी पूर्ण नहीं हो पायी है। इसी कारण म. फुले के विचार कल भी प्रेरणादायी थे और आज भी प्रेरणादायी है। सुदृढ़ एवं स्वस्थ समाज के निर्माण में म. फुले के विचार दिशादर्शक और प्रासंगिक है।

महात्मा जोतीबा फुले ने भले ही अपना आंदोलन पश्चिमी भारत के एक ख़ास हिस्से में ही चलाया हो लेकिन उस समय दुनिया में रंगभेद के खिलाफ़ चल रहे आंदोलनों को भी उनका समर्थन था। इसका सबसे अच्छा उदाहरण उनकी किताब 'गुलामगिरी' के समर्पण से मिलता है, जिसको कि वो अमेरिका में नीग्रो लोगों (अश्वेत) को गुलामी से मुक्ति दिलाने वाले उन महान श्वेत लोगों के सम्मान में समर्पित करते हैं, जिन्होंने उस लड़ाई में उदारता, निष्पक्षता और आत्मत्याग का परिचय दिखाया था। अपने समर्पण में महात्मा फुले भारतवासियों से अपनी हार्दिक इच्छा व्यक्त करते हुए अपील करते हैं कि यहां भी लोग अमरिका के लोगों से प्रेरणा लेकर शुद्रों को ब्राह्मणवाद से मुक्ति दिलाएँगे।

आज भी लोग जोतिबा के कार्य से प्रभावित हो रहे हैं। जोतिबा ने 'गुलामगिरी'– नाम की भी एक पुस्तक लिखी। वर्ष १८७३ में प्रकाशित यह पुस्तक आज भी समाज में हो रहे भेदभाव पर खरी उतरती है। हाल ही में हुए अमरिकी राष्ट्रपति के भारत दौरे के

दौरान पूर्व उपमुख्यमंत्री छगन भुजबल ने मुंबई में बराक ओबामा को यह पुस्तक भेंट स्वरूप दी और उन्हें इसका सार बताया। इससे ओबामा भी प्रभावित दिखे और भारत से अनमोल भेंट कहकर इस किताब को स्वीकार किया।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि म. फुले कालजयी पुरुष है। एक भविष्य गढ़नेवाली दूरदृष्टि उनके पास है। वे समताधिष्ठित समाज के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। उनके पास एक विशाल मानवतावादी दृष्टिकोण है।फुले ज्ञान को अनन्य साधारण मानते हैं। सत्य पर उनका विश्वास है इसलिए समाज को सत्य की राह पर चलने की अपील करते हैं। म. फुले भावना से विचार को श्रेष्ठ मानते हैं और हर बात को विवेक की कसौटी पर परखने की सलाह देते हैं। ईश्वर को मानते हैं परंतु उसका अस्तित्व मंदिर-मस्जिदों में नहीं प्रकृति में ढूँढते हैं। श्रद्धा से नतमस्तक होते हैं किंतु कर्मकांड और अंधश्रद्धा को ठुकराते हैं। धर्म को मानते हैं लेकिन धर्मकी चिकित्सा भी करते हैं और मानवधर्म ही सच्चा धर्म मानते हैं। म. फुले के पास वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जिससे वह अच्छे-बुरे की परख करते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में जिन अमूल्य विचारों की समाज को आवश्यकता है वे बहुमोल विचार म. फुले के पास है। इन कालजयी विचारों की आज समाज को अत्यंत आवश्यकता है इसी कारण म. फुले के विचार आज भी प्रेरणादायी है, दिशादर्शक है और प्रासंगिक भी।

७.३ राजर्षि शाहू महाराज के विचारों की प्रासंगिकता :

महाराष्ट्र की पृष्ठभूमि वैचारिक रही, जिसमें फुले, शाहू, आंबेडकर की विचारधारा महत्वपूर्ण है। शिक्षा के क्षेत्र में सबसे पहले जागृति महात्मा फुले ने की, इसी कार्य से प्रेरणा लेकर राजर्षि शाहू, डॉ. आंबेडकर, कर्मवीर भाऊराव पाटील, पंजाबराव देशमुख आदि व्यक्तियों ने शिक्षा के क्षेत्र में कार्य किया। राजर्षि शाहू महाराज ने शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्र में कार्य किए। जिसके कारण समाज में परिवर्तन हुआ। शिक्षा, छात्रावास, छात्रवृत्ति, अस्पृश्यता निवारण, जातिभेद निर्मूलन, आरक्षण, विधवा पुनर्विवाह, अंतरजातिय विवाह, देवदासी परंपरा,

राजनीतिक विवाह विच्छेद, अंधश्रद्धा निर्मूलन आदि कार्य राजर्षि शाहू महाराज ने किए। समाज में समता स्थापित की, भारत को एक संघ बनाने में अहम भूमिका निभाई, जो काम राजर्षि शाहू महाराज ने १९वीं सदी में किया, उसे हम २१वीं सदी में भी नहीं कर पा रहे हैं। इसी कारण उनका कार्य वर्तमान समय में प्रासंगिक लगता है।

७.३.१ शिक्षा की सक्तिः

महात्मा फुले को 'शिक्षण सम्राट' नाम से जाना जाता है। इसी कार्य से प्रेरणा लेकर राजर्षि शाहू महाराज ने करवीर में शिक्षा को महत्व दिया। समाज में परिवर्तन लाना है, तो शिक्षा महत्वपूर्ण है। इसी कारण उन्होंने भारत में सबसे पहले २४ जुलाई, १९१७ को कानून बनाकर प्राथमिक शिक्षा निशुल्क की। प्रतिवर्ष'एक लाख' रू. शिक्षा पर खर्च करने का निर्णय लिया। जो लोग बच्चों को स्कूल नहीं भेजते, उन्हें दंड दिया। जो बच्चे काम की वजह से दिन में स्कूल नहीं जा सकते, उनके लिए रात की पाठशाला शुरू की। वर्तमान में शिक्षा की बहुत ही दयनीय स्थिति दिखाई देती है। प्राथमिक स्कूल में शिक्षक नहीं है। जो है वह पढ़ाते नहीं है। इस कारण गरीब लोगों के बच्चे शिक्षा से वंचित रहते हैं। जिसके पास पैसा है, वह प्राइवेट स्कूल में बच्चों को पढ़ा रहे हैं। इसी वजह से सरकारी प्राथमिक स्कूल बंद हो रहे हैं।

भारत सरकार ने प्राथमिक शिक्षा की सक्ति तो २०१० में की। वही काम राजर्षि शाहू महाराज ने १९१७ में करके उसकी नींव रखी थी। इसी से उनके विचार वर्तमान में कितने प्रासंगिक है, इस बात को हम समझ सकते हैं।

७.३.२ आरक्षण के अविष्कारकर्ताः

आरक्षण विषयक विचार सबसे पहले महात्मा फुले ने अंग्रेजों के सामने १८२२ में रखें। लेकिन उसे प्रत्यक्ष रूप में राजर्षि शाहू महाराज ने अस्तित्व में लाकर दिखाया। उन्होंने आरक्षण किसी जाति पर आधारित नहीं दिया, बल्कि जो समाज शैक्षिक, सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है उन्हें उसमें शामिल किया। बहुजन समाज को ५० प्रतिशत आरक्षण, २७ जुलाई, १९०२ में कानून बनाकर दे दिया। इस संदर्भ में डॉ.

रमेश जाधव लिखते हैं- 'शाहू छत्रपति इंग्लंड में थे, तभी उन्होंने पिछड़े समाज के लिए, संस्थान के नोकरियों में आरक्षित जगह देनेवाला क्रांतिकारक जाहीरनामा प्रसिद्ध किया था। इंग्लंड से साडे-तीन महीने की यात्रा समाप्त करके, ३१ अगस्त, १९०२ में वह कोल्हापूर में आए। उनके वापसी के सफर में अनेक जगह पर उनका स्वागत हुआ। विशेषत: कोल्हापूर-मिरज क्षेत्र में उनका बहुत ही हर्षोल्लास के साथ स्वागत हुआ। उन्होंने संस्थान के नोकरी में ५० प्रतिशत जगह पिछड़े जाति के लिए रखने का जो महत्वपूर्ण निर्णय लेकर वंचित, बहुजनों को स्वाभिमान के साथ जीने का अवसर प्राप्त करा दिया।''[२७] इसी कार्य के कारण उन्हें आरक्षण का जनक कहा जाता है। जिस तरह से राजर्षि शाहू महाराज ने जाति के आधार पर आरक्षण नहीं दिया, डॉ. आंबेडकर ने भी जाति के आधार पर आरक्षण नहीं दिया। जो समाज शैक्षणिक, सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है, उन्हें आरक्षण दिया। जीवन में शिक्षा जितनी महत्वपूर्ण है उतना ही बहुजनों के लिए आरक्षण। एकाध समय खाना नहीं मिलेगा तो गुजारा हो सकता है, लेकिन शिक्षा मिलनी ही चाहिए। शिक्षा से समाज के सभी द्वार खुलते हैं। वर्तमान में आरक्षण को लेकर आंदोलन निकल रहे हैं, जिसमें राजस्थान के 'गुजर', गुजरात के 'पटेल', हरियाणा के 'जाट' महाराष्ट्र के 'मराठा' आदि समाज दृष्टिगोचर है। यह वर्ग अधिकांश मात्रा में अपने-अपने क्षेत्र में प्रबल है। लेकिन उसमें कुछ पिछड़े लोग होंगे उन्हें आरक्षण दिया जा सकता है। क्या इसके बारे में सोचने की आवश्यकता है? इस वर्ग के अलावा भारत में कई वर्ग है, जो प्रबल है। लेकिन उस वर्गमें कुछ ऐसे लोग हैं, जिन्हें एक समय की रोटी तक नसीब नहीं है। ऐसे लोगों के बारे में सोचने की आवश्यकता है। वह चाहे किसी भी जाति या तबके का क्यों न हो। इसी से वर्तमान में राजर्षि शाहू महाराज के आरक्षण विषयक विचार कितने प्रासंगिक हैं, यह देख सकते हैं।

७.३.३ लोकतंत्र का मंत्र :

राजर्षि शाहू महाराज करवीर रियासत के राजा थे। उन्होंने अधिकारों का इस्तमाल प्रजा के लिए किया। जिस वर्ग पर अन्याय होता था, उन्हे न्याय दिया। बहुजनों के जीवन

में परिवर्तन किया, आम लोगों के लिए अपनी जान जोखिम में डाली, अंतिम समय तक बहुजन समाज की सेवा की और राजशाही में लोकतंत्र निर्माण किया। राजर्षि शाहू महाराज के कार्य को देखकर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कहते हैं- 'अस्पृश्य समाज एवं करवीर का मुझे अभिमान है, क्योंकि राजर्षि शाहू महाराज ने करवीर में ही लोकतंत्र की शुरुआत की।'[२८] वर्तमान में संविधान तो है, लेकिन आम लोगों को न्याय नहीं मिल रहा है। क्योंकि संविधान का अंमल सत्ताधारी नहीं करते। इसी कारण आज के समय में तानाशाही को बढ़ावा मिल रहा है। यह वास्तव चित्र है। न्याय व्यवस्था में राजनेता हस्तक्षेप कर रहे हैं, इस कारण लोकतंत्र होकर भी आम प्रजा को उचित न्याय नहीं मिल रहा है। इसलिए राजर्षि शाहू महाराज का कार्य और विचार आज भी प्रासंगिक लगते हैं।

७.३.४ समानता के लिये कार्य:

वर्ण भेद और जाति भेद प्राचीन समय से चले आ रहे हैं। इस वजह से पिछड़े वर्ग का शोषण उसी समय से होता आ रहा है। इस परंपरा को नष्ट करने के लिए राजर्षि शाहू महाराज ने पिछड़ी जाति के अनेक व्यक्तियों को महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया और समाज में समता स्थापित की। डॉ. जयसिंगराव पवार लिखते हैं- 'कोल्हापूर यह 'मराठा' संस्थान और शाहू छत्रपति यह 'मराठा' संस्थानिक, ऐसा समझा जाने पर भी, शाहू छत्रपति यह केवल मराठा समाज के राजा नहीं थे। वे शिव छत्रपति की तरह, अपने राज्य के हिंदू, जैन, मुस्लिम, पारसी, ख्रिश्चन आदि सभी जाति-धर्मो के राजा थे।'[२९] लेकिन वर्तमान समय में अस्पृश्यता मानी जाती है, जाति के नाम पर भेदभाव किया जाता है। जो काम राजर्षि शाहू महाराज ने १९१९ में करके दिखाया, वह हम आज भी नहीं कर पाए है। इसी से पता चलता है कि आज भी शाहू महाराज के विचारों की कितनी आवश्यकता है।

७.३.५ स्त्री शिक्षा में वृद्धी :

स्त्री शिक्षा की शुरुआत सावित्रीबाई फुले और महात्मा फुले ने की। उन्हीं का आदर्श लेकर राजर्षि शाहू महाराज ने स्त्री शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया। १९१९

में कानून बनाकर महिलाओं के लिए शिक्षा के साथ-साथ भोजन एवं रहने की मुफ्त में सुविधा भी दी, उन्हें छात्रवृत्ति दी। इसी वजह से 'आनंदीबाई जोशी' महाराष्ट्र की प्रथम डॉक्टर बन सकी। स्त्री को शिक्षा में स्थान देना चाहिए तभी समाज में परिवर्तन हो सकता है, समाज में उन्हें सम्मान मिल सकता है। ऐसा राजर्षि शाहू महाराज का मानना था। स्त्री शिक्षा विषयक राजर्षि शाहू महाराज महाराज के विचारों के संदर्भ में अशोक गोविंद लिखते हैं- 'स्त्री शिक्षा के कारण परिवार, समाज विकसित होता है इसी के साथ स्त्री को समाज में प्रतिष्ठा एवं सम्मान मिलता है।'[३०] इसी से स्त्री शिक्षा का महत्व बढ़ सकता है। वर्तमान में स्त्री शिक्षा को लेकर कोई भी गंभीर नहीं है। पुरुष की तुलना में स्त्री का प्रमाण शिक्षा के क्षेत्र में कम है। स्त्री शिक्षा और विकास को लेकर सरकार को ध्यान देना चाहिए तभी महिलाएँ शिक्षा के प्रवाह में आ सकती है। तभी शाहू महाराज ने जो स्त्री शिक्षा को बढ़ावा दिया था, वह पूर्ण रूप से साकार हो सकता है। शाहू महाराज के स्त्री शिक्षा के संदर्भ में जो विचार थे वे आज भी प्रासंगिक लगते हैं।

७.३.६ विधवा पुनर्विवाह एवं अंतरजातिय विवाह को बढावा :

भारत में प्राचीन काल से ही विधवा पुनर्विवाह और अंतरजातिय विवाह को मान्यता नहीं थी। इस प्रथा के विरोध में अनेक महापुरुषों ने संघर्ष किया और फिर इस प्रथा के बदलाव की नींव रखने में वे खरे उतरे। स्वयं राजर्षिशाहू महाराज ने 'चंद्रप्रभा बाई' का विवाह धनगर जाति के 'यशवंतराव होलकर' के साथ कराया। समाज में परिवर्तन हो इसलिए विधवा पुनर्विवाह, अंतरजातीय विवाह आदि के लिए कानून बनाए। केवल कानून बनाए नहीं उस पर अमल किया। संविधान में विधवा पुनर्विवाह, अंतरजातीय विवाह के संदर्भ में अनुच्छेद होकर भी उसका अंमल आज के जमाने में नहीं होता है, जो राजर्षि शाहू महाराज ने अपने समय में किया था। आज जो अंतरजातीय विवाह करते हैं, उन्हें अपनी जान तक गवानी पड़ती है। समाज उन्हें स्वीकार नहीं करता, यह वर्तमान का वास्तविक चित्र है। राजर्षि शाहू महाराज ने जो कार्य अपने समय में किया वह आज

संविधान के होते हुए भी समाज नहीं कर पा रहा है। इसलिए आज भी जाति-भेद को नष्ट करने के लिए शाहू महाराज के विचार प्रासंगिक लगते हैं।

७.३.७ अंधश्रद्धा का विरोध :

भारत देश में अंधश्रद्धा सदियों से चली आ रही है। इस कारण समाज में न तो प्रगति हो रही है न विकास, विषमता ही दिखाई देती है। अंधश्रद्धा को नष्ट करने के लिए शाहू महाराज ने अहम भूमिका निभाई थी। राजर्षि शाहू महाराज श्रद्धा रखते थे, अंधश्रद्धा नहीं। वे भगवान को मानते थे लेकिन इंसान के रूप में। समाज में ईश्वर के नाम पर बलि दी जाती थी, भगवान के नाम पर लड़कियों को मंदिर में छोड़ा जाता था, ऐसी प्रथा के माध्यम से शोषण होता था। समाज में अंधश्रद्धा का बोलबाला था। किसी भी कार्य की शुरुआत करने से पहले मुहर्त देखा जाता था, अभिषेक विधि की जाती थी, इसमें पैसा खर्च होता था, ऐसी व्यवस्था का विरोध शाहू महाराज ने किया। समाज में प्रबोधन किया। अंधश्रद्धा के संदर्भ राजर्षि शाहू महाराज कहते हैं- 'हिंदुस्तान के सभी भगवान जमीन में दफनाए बिना खेती अच्छी तरह से उत्पाद नहीं देगी, ऐसी मेरी धारणा है। खेती को लगनेवाला सभी पैसा, किसान देव-धर्ममें व्यर्थ खर्च करता है। किसान के कर्तृत्व एवं खेती के उत्पाद के लिए देव-धर्म सबसे बड़ी दिक्कत है। देहांती लोग सप्ताह में भगवान को अभिषेक करके पैसा खर्च करते हैं। हिंदुस्तान की आर्थिक एवं नैतिक प्रगति करनी है तो सभी भगवान को जमीन में दफनाना होगा।''[३१] इस तरह से राजर्षि शाहू महाराज ने अंधश्रद्धा का विरोध करके, समाज में श्रद्धा की नींव रखी। लेकिन आज भी समाज में अंधश्रद्धा उतनी ही फैली हुई है, जितनी प्राचीन काल में थी। इसलिए समाज से अंधश्रद्धा को खत्म करना है, तो आवश्यकता है, शाहू महाराज के विचारों की।

७.३.८ लोक कल्याणकारी राजा :

राजर्षि शाहू महाराज का कार्य और विचार आज भी प्रासंगिक है। करवीर में बहुजन समाज के शिक्षा का अभाव था, इस कारण बहुजनों को कई क्षेत्रों में काम करने के अधिकार नहीं थे। उन्हें अधिकार देने का काम राजर्षि शाहू महाराज ने किया, स्त्रियों

को परंपरा से मुक्त किया। इसी के साथ किसान, व्यापारी, मजदूर आदि को मद्द की। वे राजा होकर भी बहुजन समाज में मिल-जुल कर रहते थे। अंतिम समय तक प्रजा की सेवा करते रहे। बहुजन समाज के प्रति शाहू महाराज के मन में आत्मीयता और लगाव था। वे हमेशा आम जनता के हित की बातें सोचते थे। इसलिए वे एक लोक कल्याणकारी राजा के रूप में स्थापित हुए। आम जनता के प्रति उनके विचार और कार्य आज भी प्रासंगिक है।

७.३.९ कलाओं को प्रोत्साहन :

राजर्षि शाहू महाराज एक कलाप्रेमी राजा थे। उन्होंने नाट्य कला, संगीत, सिनेमा, चित्रकला, पवाड़ा, जलसा आदि कला को राजाश्रय दिया। इस कारण कई कलाकार निर्माण हुए। जिसमें अल्लादिया खाँ, रजबअली खाँ, मुगले खाँ, हैदरबक्ष खाँ, अब्दुल करीम खाँ, अंजनीबाई मालपेकर, केसरबाई केरकर, केशवराव भोसले, गणपतराव जोशी, दत्तोपंत हल्यालकर, आनंदराव पेंटर, बाबूराव पेंटर, रंगसम्राट, आबालाल रहिमान, दत्तोबा दतळी, बाबा गजबर, माधवराव बागल, विट्ठल विराजी डोणे, रामचंद्र नरहरी माली आदि कलाकार निर्माण हुए। इसी से कला के प्रति शाहू महाराज का अपार दृष्टिकोण दिखाई देता है। 'कला, संगीत और नाट्य क्षेत्र में भी उन्हें बड़ी रूचि थी। वे लोककलाओं और लोकनृत्यों में काफी दिलचस्पी रखते थे। कला के संवर्धन के लिए उन्होंने कोल्हापुर में १८८३ में 'गायन समाज' नामक संस्था की स्थापना की थी। उस संस्था को उन्होंने राज्यारोहण के बाद छः हजार की अनुदान राशि दी थी। वह उसके संरक्षक बने।''[३२] आदि कार्यों से, उनका कला के प्रति लगाव दृष्टिगोचर होता है। वर्तमान में कला की स्थिति क्या हुई है? इसे हम नजरअंदाज नहीं कर सकते। जो कार्य, कला के लिए राजर्षि शाहू महाराज ने किया, वह वर्तमान सरकार नहीं कर पा रही है। इस कारण शाहू महाराज के विचार और कला के प्रति अपार दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है।

७.४ भीमराव अंबेडकर की वर्तमान में प्रासंगिकता

भारत के संविधान निर्माता, चिंतक और समाज सुधारक डॉ. भीमराव अंबेडकर का जन्म मध्य प्रदेश के महू में १४ अप्रैल, १८९१ को हुआ था। उनके पिता का नाम रामजी मालोजी सकपाल और माता का नाम भीमाबाई रामजी सकपाल था। वे अपने माता-पिता की १४ वीं और अंतिम संतान थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन सामाजिक बुराइयों जैसे- छुआछूत और जातिवाद के खिलाफ संघर्ष में लगा दिया। इस दौरान बाबासाहेब गरीब, दलितों और शोषितों के अधिकारों के लिए संघर्ष करते रहे।

७.४.१ राजनीतिक क्षेत्र :

डॉ. भीमराव अंबेडकर भारत के आधुनिक निर्माताओं में से एक माने जाते हैं। उनके विचार व सिद्धांत भारतीय राजनीति के लिए हमेशा से प्रासंगिक रहे हैं। दरअसल वे एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था के हिमायती थे, जिसमें राज्य सभी को समान राजनीतिक अवसर दे तथा धर्म, जाति, रंग तथा लिंग आदि के आधार पर भेदभाव न किया जाए। उनका यह राजनीतिक दर्शन व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों पर बल देता है। इस संदर्भमें धनंजय कीर लिखते है – 'अंबेडकर को यह निश्चय ही मालूम था कि जितनी अधिक शिक्षा उतनी ही अधिक प्रगति और आपने लोगों को मौके भी उतने ही अधिक सुलभ होंगे। डॉ. अंबेडकर को यह भी लगता था कि अपने लोगों को राजनीतिक दृष्टि से समानता और राजनीतिक क्षेत्र में सामर्थ्य भी प्राप्त करा देने से उनकी शिक्षा की समस्या अपने आप ही सरकार की ओर से हल की जाएगी। इसलिए उन्हें अपना समय और बुद्धि और अस्पृश्यों की शैक्षिक प्रगति कर लेने की अपेक्षा उन्हीं राजनीतिक अधिकार प्राप्त कर देने के काम में लगा दी।'[३३] उनका यह दृढ़ विश्वास था कि जब तक राजनीति के साथ आर्थिक और सामाजिक विषमता समाप्त नहीं होगी, तब तक जनतंत्र की स्थापना अपने वास्तविक स्वरूप को ग्रहण नहीं कर सकेगी। दरअसल सामाजिक चेतना के अभाव में जनतंत्र आत्मविहीन हो जाता है। ऐसे में जब तक सामाजिक जनतंत्र स्थापित नहीं होता है, तब तक सामाजिक चेतना का विकास भी संभव नहीं हो पाता है। इस प्रकार डॉ.

आंबेडकर जनतंत्र को एक जीवन पद्धति के रूप में भी स्वीकार करते हैं, वे व्यक्ति की श्रेष्ठता पर बल देते हुए सत्ता के परिवर्तन को साधन मानते हैं। वे कहते थे कि कुछ संवैधानिक अधिकार देने मात्र से जनतंत्र की नींव पक्की नहीं होती। उनकी जनतांत्रिक व्यवस्था की कल्पना में 'नैतिकता' और 'सामाजिकता' दो प्रमुख मूल्य रहे हैं, जिनकी प्रासंगिकता वर्तमान समय में बढ़ जाती है। दरअसल आज राजनीति मेंखींचा-तानी इतनी बढ़ गई है कि राजनैतिक नैतिकता के मूल्य गायब से हो गए हैं। हर राजनीतिक दल वोट बैंक को अपनी तरफ करने के लिए राजनीतिक नैतिकता एवं सामाजिकता की दुहाई देते हैं, लेकिन सत्ता प्राप्ति के पश्चात इन सिद्धांतों को अमल में नहीं लाते हैं।

७.४.२ समानता को लेकर विचार :

डॉ. अंबेडकर समानता को लेकर काफी प्रतिबद्ध थे। उनका मानना था कि समानता का अधिकार धर्म और जाति से ऊपर होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को विकास के समान अवसर उपलब्ध कराना किसी भी समाज की प्रथम और अंतिम नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए। अगर समाज इस दायित्व का निर्वहन नहीं कर सके तो उसे बदल देना चाहिए। वे मानते थे कि समाज में यह बदलाव सहज नहीं होता है, इसके लिए कई पद्धतियों को अपनाना पड़ता है। आज जब विश्व एक तरफ आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है तो वहीं दूसरी तरफ विश्व में असमानता की घटनाएँ भी देखने को मिल रही हैं। इसमें कोई दो राय नहीं है कि असमानता प्राकृतिक है, जिसके चलते व्यक्ति रंग, रूप, लम्बाई तथा बुद्धिमता आदि में एक-दूसरे से भिन्न होता है। लेकिन समस्या मानव द्वारा बनायी गई असमानता से है, जिसके तहत एक वर्ग, रंग व जाति का व्यक्ति अपने आप को अन्य से श्रेष्ठ समझ संसाधनों पर अपना अधिकार जमाता है। यू.एन.ओ. द्वारा इस संदर्भमें प्रति वर्ष नस्लीय भेदभाव उन्मूलन दिवस मनाया जाता है, जो आज भी समाज में व्याप्त असमानता को प्रकट करता है। 'डॉ बाबासाहेब आंबेडकर को हमेशा ऐसे लगता था कि, भारतीय समाज में जब तक जातीयता है और जातिनिष्ठ उच्च-नीचता है, तब

तक भारत के सभी लोगों का हित करने वाला लोकतंत्र भी, लोकहित तथा देशहित नहीं कर सकता।'[३४]

भारत में इस स्थिति की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए संविधान के अंतर्गत अनुच्छेद१४ से १८में समानता का अधिकार का प्रावधान करते हुए समान अवसरों की बात कही गई है। यह समानता सभी को समान अवसर उपलब्ध करा सकें, इसके लिए शोषित, दबे-कुचलों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया। इस प्रकार अंबेडकर के समानता के विचार न सिर्फ उन्हें भारत के संदर्भ में, बल्कि विश्व के संदर्भ में भी प्रासंगिक बनाते हैं।

७.४.३ आर्थिक क्षेत्र :

दरअसल आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी, बेरोजगारी, आय एवं संपत्ति में व्यापक असमानता, अशिक्षा और अकुशल श्रम इत्यादि समस्याएँ व्याप्त हैं। अर्थव्यवस्था को लेकर डॉ. आंबेडकर के महत्वपूर्ण विचार को निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है-The problem of the rupee : 15 origin and its solution नामक अपनी रचना में डॉ. आंबेडकर ने १८०० से १८९३ के दौरान, विनिमय के माध्यम के रूप में भारतीय मुद्रा रुपये के विकास का परीक्षण किया और उपयुक्त मौद्रिक व्यवस्था के चयन की समस्यां की भी व्याख्या की। आज के समय में जब भारतीय अर्थव्यवस्था मुद्रा के अवमूल्यन और मुद्रास्फीति की समस्या से दो-चार हो रही है तो ऐसे में उनके शोध के परिणाम न सिर्फ समस्याओं को समझने में महत्वपूर्ण हो सकते हैं बल्कि वह इसके समाधान को लेकर आगे का मार्ग भी प्रशस्त कर सकते हैं। कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं कि- ''आंबेडकर संविधानिक और लोकतांत्रिक ढांचे पर अधिक चिंतन-मनन करते रहें। आर्थिक मसलों पर उनको सोचने का विचार-विधान उनका ज्यादा नहीं है। पर वे अनुसूचित जातियों, पिछड़े वर्गों की आर्थिक स्थिति के सही जानकार थे और खूब भीतर तक समझते थे कि इन जातियों का सामाजिक सम्मान क्यों नहीं है, क्योंकि इनके पास धन-दौलत की कमी है और कैसे यह मजदूर किसान वर्ग, शिल्पकार

वर्ग में रहकर यातना झेलते रहते हैं। इन जातियों के पास काम करने का हुनर है, पर इस हुनर की कद्र नहीं है। ऐसी स्थिति के कारण आंबेडकर अच्छी तरह समझते और जानते थे कि उन्हें सामाजिक, राजनीतिक अन्याय के साथ आर्थिक अन्याय के मोर्चे पर भी एक जबरदस्त लड़ाई लड़नी होगी।''[३५]

आंबेडकर ने १९१८ में प्रकाशित अपने लेख भारत में छोटी जोत और उनके उपचार (Small Holdings in India and their Remedies) में भारतीय कृषि तंत्र का स्पष्ट अवलोकन किया। उन्होंने भारतीय कृषि तंत्र का आलोचनात्मक परीक्षण करके कुछ महत्वपूर्ण परिणाम निकाले, जिनकी प्रासंगिकता आज तक बनी हुई है। उनका मानना था कि यदि कृषि को अन्य आर्थिक उद्यमों के समान माना जाए तो बड़ी और छोटी जोतों का भेद समाप्त हो जाएगा, जिससे कृषि क्षेत्र में खुशहाली आएगी। उनके एक अन्य शोध ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास (The Evolution of Provincial Finance in British India) की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। उन्होंने इस शोध में देश के विकास के लिए एक सहज कर प्रणाली पर बल दिया। इसके लिए उन्होंने तत्कालीन सरकारी राजकोषीय व्यवस्था को स्वतंत्र कर देने का विचार दिया। भारत में आर्थिक नियोजन तथा समकालीन आर्थिक मुद्दें व दीर्घकाल में भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए जिन संस्थानों को स्वतंत्रता के पश्चात स्थापित किया गया उनकी स्थापना में डॉ. आंबेडकर का अहम् योगदान रहा।

७.४.४ सामाजिक क्षेत्र :

आंबेडकर का सम्पूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा भी की, कि भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था, जाति-प्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालान्तर में आई विकृतियों के कारण उत्पन्न हुआ है, न कि यह यहाँ के समाज में प्रारम्भ से ही विद्यमान थी।

सामाजिक क्षेत्र में उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाये नहीं जा सकते जिसकी प्रासंगिकता आज तक जीवंत है। सामाजिक क्षेत्र में उनके विचारों की प्रासंगिकता को निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है-आंबेडकर ने वर्ण व्यवस्था को अवैज्ञानिक, अत्याचारपूर्ण, संकीर्ण तथा गरिमाहीन बताते हुए इसकी कटु आलोचना की थी। अंबेडकर का मत था कि समूह तथा कमजोर वर्गों में जितना उग्र संघर्ष भारत में है, वैसा विश्व के किसी अन्य देशों में नहीं है। इस व्यवस्था में कार्यकुशलता की हानी होती है, क्योंकि जातीय आधार पर व्यक्तियों के कार्यों का पूर्वमें ही निर्धारण हो जाता है। वे समाजसुधार का कार्य करते थे, कुछ जगहों पर विरोध भी हुआ। चांगदेव भवानराव खैरमोडे लिखते हैं - 'स्पृश्य व अस्पृश्य समाज में से बाबासाहब के सामाजिक आंदोलन पर समय-समय पर आलोचना होती थी। कुछ लोगों की आलोचना सद्बुद्धि एवं सद्हेतु रहती, तो कुछ लोगों की आलोचना केवल व्यक्तिगत भावना के बहाव में और बेताल अवस्था में की होती थी। लेकिन बाबासाहब अस्पृश्य समाज के और सवर्ण हिंदू के समाज के विरोधियों का सामना करते-करते अपना आंदोलन चला रहे थे। सामाजिक आंदोलन की प्रगति होनी चाहिए, इस बात की लोकजागृति हो चुकी थी और प्रत्यक्ष कार्य भी कुछ जगह हो रहा था। पंजाब में भाई परमानंद ने यह कार्य 'जात-पात तोडक मंडल' की ओर से चलाया था। ऐसा कार्य अपने हाथ से हो इसलिए बाबा साहब ने एक संस्था स्थापन करने का निश्चय किया था।'[३६]

अन्तर्जातीय विवाह का इस व्यवस्था में निषेध होताहै। सामाजिक विद्वेष और घृणा के प्रसार से इस व्यवस्था को बल मिलता है। उल्लेखनीय है कि इन भेदभावों के खिलाफ उन्होंने व्यापक आंदोलन शुरू करने का फैसला किया। उन्होंने सार्वजनिक आंदोलनों और जुलूसों के द्वारा, पेयजल के सार्वजनिक संसाधन समाज के सभी लोगों के लिये खुलवाने के साथ ही उन्होंने अछूतों को भी मंदिरों में प्रवेश करने का अधिकार दिलाने के लिये भी संघर्ष किया।

७.४.५ महिलाओं से संबंधित विचार :

डॉ. आंबेडकर भारतीय समाज में स्त्रियों की हीन दशा को लेकर काफी चिंतित थे। उनका मानना था कि स्त्रियों के सम्मानपूर्वक तथा स्वतंत्र जीवन के लिए शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। डॉ. आंबेडकर ने हमेशा स्त्री-पुरुष समानता का व्यापक समर्थन किया। यही कारण है कि उन्होंने स्वतंत्र भारत के प्रथम विधिमंत्री रहते हुए 'हिंदू कोड बिल' संसद में प्रस्तुत किया और हिन्दू स्त्रियों के लिए न्याय सम्मत व्यवस्था बनाने के लिए इस विधेयक में उन्होंने व्यापक प्रावधान रखे। ''आंबेडकर का वृहद चिंतन, संविधान में सभी नागरिकों को समान अधिकार दिलाए जाने के साथ-साथ महिलाओं की बराबरी के अधिकारों की वकालत भी करता है, जिसके लिए उन्होंने सन् १९५१में संसद में 'हिंदू कोड बिल', पेश किया।''[३७]

उल्लेखनीय है कि संसद में अपने हिन्दू कोड बिल मसौदे को रोके जाने पर उन्होंने मंत्रिमंडल से इस्तीफा दे दिया। इस मसौदे में उत्तराधिकार, विवाह और अर्थव्यवस्था के कानूनों में लैंगिक समानता की बात कही गई थी। दरअसल स्वतंत्रता के इतने वर्ष बीत जाने के पश्चात व्यावहारिक धरातल पर इन अधिकारों को लागू नहीं किया जा सका है, वहीं आज भी महिलाएँ उत्पीड़न, लैंगिक भेदभाव हिंसा, समान कार्य के लिए असमान वेतन, दहेज उत्पीड़न और संपत्ति के अधिकार ना मिलने जैसी समस्याओं से जूझ रही हैं।

इस संदर्भ में ध्यान देने वाली बात है कि हाल ही में समान नागरिक संहिता का प्रश्न पुन: उठाया गया है। उसका व्यापक पैमाने पर विरोध किया गया, जबकि डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने समान नागरिक संहिता का प्रबल समर्थन किया था।

७.४.६ शिक्षा संबंधित विचार :

डॉ. आंबेडकर शिक्षा के महत्व से भली-भाँति परिचित थे। दरअसल अछूत समझी जानेवाली जाति में जन्म लेने के चलते उन्हें अपने स्कूली जीवन में अनेक अपमानजनक

स्थितियों का सामना करना पड़ा था। उनका विश्वास था कि शिक्षा ही व्यक्ति में यह समझ विकसित करती है कि वह अन्य से अलग नहीं है, उसके भी समान अधिकार हैं। उन्होंने एक ऐसे राज्य के निर्माण की बात रखी, जहाँ सम्पूर्ण समाज शिक्षित हो। वे मानते थे कि शिक्षा ही व्यक्ति को अंधविश्वास, झूठ और आडम्बर से दूर करती है। शिक्षा का उद्देश्य लोगों में नैतिकता व जनकल्याण की भावना विकसित करने का होना चाहिए। शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो विकास के साथ-साथ चरित्र निर्माण में भी योगदान दे सकें। इसलिये डॉ. आंबेडकर ने शिक्षासे वंचित जनता के लिये शिक्षा के अनेक प्रयास किये जिनके संदर्भ में धनंजय कीर लिखते है – ''बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की कार्यकारिणी समिति की १४ जून, १९२८ को एक सभा बुलाकर 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' विसर्जित करने का प्रस्ताव मंजूर किया और बहिष्कृत वर्गमें शिक्षा का प्रसार करने के लिए 'भारतीय-बहिष्कृत-समाज-शिक्षण-प्रसारक-मंडल' शुरू करने का निश्चय किया। धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन करने के लिए 'भारतीय-बहिष्कृत-समाज सेवा समिति' नामक अलग संस्था स्थापित करना तय हुआ। इस प्रस्ताव के अनुसार अगले महीने दलितों के लिए प्राथमिक शिक्षा की मजबूत नींव पर रचना करने की दृष्टि से उन्होंने 'भारतीय-बहिष्कृत-शिक्षण-प्रसारक-मंडल' की स्थापना की। अपने लड़कों की दुय्यम शिक्षा पर होने वाला खर्च करने की अस्पृश्य समाज की क्षमता नहीं थी। उन लड़कों की सुविधा के लिए 'दलित-वर्ग-शिक्षण-संस्था' ने छात्रावास खोलने का कार्य हाथ में लिया। उस कार्यमें सहायता करने के लिए डॉ. आंबेडकर ने सरकार को बड़ी आत्मीयता से आवाहन किया।'[३८]

उल्लेखनीय है कि डॉ. आंबेडकर के शिक्षा संबंधित यह विचार आज शिक्षा प्रणाली के आदर्श रूप माने जाते हैं। उन्हीं के विचारों का प्रभाव है कि आज संविधान में शिक्षा के प्रसार में जातिगत, भौगोलिक व आर्थिक असमानताएँ बाधक न बन सके, इसके लिए मूल अधिकार के अनुच्छेद 21-Aके तहत शिक्षा के अधिकार का प्रावधान किया गया है, जो उनकी प्रासंगिकता को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रमाणित करती है।

७.४.७ अधिकारोंको लेकर विचार :

डॉ. आंबेडकर अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों पर बल देते थे। उनका मानना था कि व्यक्ति को न सिर्फ अपने अधिकारों के संरक्षण के लिए जागरूक होना चाहिए, अपितु उसके लिए प्रयत्नशील भी होना चाहिए, लेकिन हमें इस सत्य को नहीं भूलना चाहिए कि इन अधिकारों के साथ-साथ हमारा देश के प्रति कुछ कर्तव्य भी है। इसलिये उन्होंने अस्पृश्यों के मुलभूत अधिकारों की मांग करनेवाला जाहिरनामा प्रसिद्ध किया। 'उस जाहिरनामें का शीर्षक था-'हिंदुस्तान का भावी संविधान और अस्पृश्यता निर्मूलन योजना' इस मूलभूत अधिकारों के जाहिरनामे की मांग थी कि 'हिंदुस्तान के सभी प्रजाजन, कानून की दृष्टि से समान होकर उन सबके नागरिकत्व के अधिकार समान है। इस संविधान का अंमल जिस दिन होगा, उस दिन से अस्पृश्यता की वजह से हिंदुस्तान में अस्तित्व रखने वाला किसी भी प्रकार का कानून या उसका रूढार्थ; किसी भी प्रकार की रुढियां या प्रथाएँ, किसी भी प्रकार का करार या हुक्मनामा और उसके अनुसार किसी भी प्रशासन पर लादे गए कोई भी कानून- भेदभाव, जुर्माना या सजा, सब निरुपयोगी और रद्द समझे जाएंगे।' देश के प्रांतिक और केंद्रीय विधान मंडल में अस्पृश्य वर्गियों को उचित मात्रा में प्रतिनिधित्व मिलने का अधिकार हो। आम चुनाव पद्धति हो। पहले दस साल अलग चुनाव पद्धति से और बाद में आम चुनाव पद्धति से, लेकिन आरक्षित सीटों की व्यवस्थानुसार अपने लोक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार अस्पृश्यों को हो। सरकारी नोकरी में अनुपात सम्मत भर्ती करने और उस पर नियंत्रण करने के लिए, हिंदुस्तान के प्रत्येक प्रांत में एक लोक सेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन) नियुक्त किया जाए। कानून और व्यवहार में किसी भी प्रकार की जाति विशिष्ट विषमता ना हो। अस्पृश्यता की दूरी कानूनन नष्ट की जाए। अस्पृश्य वर्ग के कल्याण के लिए एक खास विभाग का निर्माण किया जाए। प्रांतीय और स्थानीय सरकार ने अस्पृश्यों के कल्याण की ओर ध्यान नहीं दिया तो उनके खिलाफ हिंदुस्तान सरकार या भारत मंत्री के पास शिकायत करने का अस्पृश्य प्रतिनिधियों या संस्थानों को अधिकार हो।'[३९] अधिकारों को लेकर उनके यह

विचार वर्तमान समय में और ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाते हैं। दरअसल वर्तमान विश्व में सरकारें अपने नागरिकों को विकास के समान अवसर प्राप्त करने के लिए कुछ मौलिक अधिकार प्रदान करती हैं, हालाँकि मौलिक अधिकारों के साथ-साथ मौलिक कर्त्तव्यों की भी बात की जाती है।

७.४.८ श्रमिक वर्ग के लिए कार्य :

बाबासाहेब सिर्फ अछूतों, महिलाओं के अधिकार के लिए ही नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज के पुनर्निर्माण के लिए भी प्रयासरत रहे। उन्होंने मजदूर वर्ग के कल्याण के लिए उल्लेखनीय कार्य किये। पहले मजदूरों से प्रतिदिन १२-१४ घंटों तक काम लिया जाता था। बाबासाहब द्वारा 'घोषणा पत्र निकालकर आश्वासन दिया गया कि, 'श्रमिकों के हित की दृष्टि से कानून बनाने की चरम कोशिश की जाएगी। नोकरियां देना, पदच्युत करना, कारखानों में बढ़ती देना, काम के अधिकतम घंटे और वेतन श्रेणी, अर्जित छुट्टी देना, श्रमिकों के सस्ते और आरोग्यदायी आवासों की व्यवस्था करना इत्यादि के बारे में कानून बनाए जाएंगे। बेकारी से मुक्ति मिले इसलिए भूमिहीनों को भूमि देकर उनके उपनिवेश स्थापित किए जाएंगे। जनहित के कार्य शुरू किए जाएंगे। औद्योगिक धंधों के केंद्र बड़े नगरों में निम्न-मध्य वर्ग को मकान का किराया कम देना पड़े, इसलिए कुछ इंतजाम किया जाएगा।''[४०]

उनके प्रयासों से प्रतिदिन आठ घंटे काम करने का नियम पारित हुआ। इसके अलावा उनके प्रयासों से मजदूरों के लिए इंडियन ट्रेड यूनियन अधिनियम, औद्योगिक विवाद अधिनियम तथा मुआवजा आदि से भी सुधार हुए। उल्लेखनीय है कि उन्होंने मजदूरों को राजनीति में सक्रिय भागीदारी करने के लिए प्रेरित किया। वर्तमान के लगभग ज्यादातर श्रम कानून बाबासाहेब के ही बनाए हुए हैं, जो उनके विचारों को जीवंतता प्रदान करते हैं।

७.४.९ अस्पृश्यों तथा दलितों के मसीहा :

डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर (१४ अप्रैल, १८९१ – ६ दिसंबर, १९५६) एक विश्व स्तर के विधिवेत्ता थे। वे एक बहुजन राजनीतिक नेता और एक बौद्ध पुनरुत्थानवादी होने के साथ-साथ, भारतीय संविधान के मुख्य शिल्पकार भी थे। वे बाबासाहब के नाम से लोकप्रिय हैं। इनका जन्म एक गरीब अस्पृश्य परिवार में हुआ था। एक अस्पृश्य परिवार में जन्म लेने के कारण उन्हें सारा जीवन नारकीय कष्टों में बिताना पडा। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अपना सारा जीवन हिन्दू धर्म की चतुर्वर्ण प्रणाली और भारतीय समाज में सर्वव्यापित जाति व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष में बिता दिया। हिंदू धर्म में मानव समाज को चार वर्णों में वर्गीकृत किया है। जो इस प्रकार है – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। शूद्रों को उनसे उच्च वर्ग के लोग अत्यधिक कष्ट देते थे। बाबासाहब ने इस व्यवसथा को बदलने के लिए सारा जीवन संघर्ष किया। ''अंबेडकर ने अस्पृश्यता निवारण के आंदोलन को राजकीय स्वरूप देकर उसमें एक तरह से क्रांति ही की। उनका यह कार्य अनमोल है। पांच हजार वर्षों तक, सात करोड अस्पृश्य, जानवरों से भी हीन जीवन जीते थे। मरे हुए जानवरों का मांस खाकर और समाज के गंदगी को साफ करके उनके मन और शरीर पूरी तरह से सड चुके थे। मरे हुए से बदतर हो चुके थे। इन सात करोड मृत शरीरों को जागृत कर उनमें नवचेतना और स्वाभिमान का दीप जगाया। साथ ही अपने अधिकार की लडाई लडने के लिए, दुष्ट समाज के विरद्ध विद्रोह का झंडा लेकर उन्हें खडा किया। वह आंबेडकर सात करोड दलितों को भगवान लगे तो उसमें क्या आश्चर्य?''[४१] उन्होंने बौद्ध धर्म को ग्रहण करके इसके समतावादी विचारों से समाज में समानता स्थापित कराई। उन्हें बौद्ध आंदोलन को प्रारंभ करने का श्रेय भी जाता है। चूँकि वे विश्व की एक बहुत बडी आबादी के प्रेरणा स्त्रोत हैं, इस लिए उन्हें विश्व भूषण कहना ही उपयुक्त है।

कई सामाजिक और वित्तीय बाधाएँ पार कर, आंबेडकर उन कुछ पहले अछूतों मे से एक बन गये जिन्होंने भारत में कॉलेज की शिक्षा प्राप्त की। आंबेडकर ने कानून की

उपाधि प्राप्त करने के साथ ही विधि, अर्थशास्त्र वा राजनीति शास्त्र में अपने अध्ययन और अनुसंधान के कारण कोलंबिया विश्वविद्यालय और लंदन स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स से कई डॉक्टरेट डिग्रियां भी अर्जित कीं। डॉ. आंबेडकर वापिस अपने देश एक प्रसिद्ध विद्वान के रूप में लौट आए और इसके बाद कुछ साल तक उन्होंने वकालत का अभ्यास किया। इसके बाद उन्होंने कुछ पत्रिकाओं का प्रकाशन किया, जिनके द्वारा उन्होंने भारतीय अस्पृश्यों के राजनैतिक अधिकारों और सामाजिक स्वतंत्रता की वकालत की। डॉ.आंबेडकर को भारतीय बौद्ध भिक्षुओं ने बोधिसत्व की उपाधि प्रदान की है, हालांकि उन्होंने खुद को कभी भी बोधिसत्व नहीं कहा।

अपनी जाति के कारण उन्हें इसके लिये सामाजिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा था। स्कूली पढ़ाई में सक्षम होने के बावजूद डॉ. आंबेडकर और अन्य अस्पृश्य बच्चों को विद्यालय में अलग बिठाया जाता था और अध्यापकों द्वारा न तो ध्यान ही दिया जाता था, न ही कोई सहायता दी जाती थी। उनको कक्षा के अन्दर बैठने की अनुमति नहीं थी, साथ ही प्यास लगने पर कोई ऊँची जाति का व्यक्ति ऊँचाई से पानी उनके हाथों पर नहीं डालता था, क्योंकि उनको न तो पानी, न ही पानी के पात्र को स्पर्श करने की अनुमति थी। लोगों के मुताबिक ऐसा करने से पात्र और पानी दोनों अपवित्र हो जाते थे। आमतौर पर यह काम स्कूल के चपरासी द्वारा किया जाता था जिसकी अनुपस्थिति में बालक आंबेडकर को बिना पानी के ही रहना पड़ता था।

७.४.१० छुआछूत के विरुद्ध संघर्षः

डॉ. आंबेडकर ने दलितों और अन्य धार्मिक समुदायों के लिये पृथक निर्वाचन और आरक्षण देने की वकालत की। १९२०में, बंबई में, उन्होंने साप्ताहिक मूकनायक के प्रकाशन की शुरूआत की। यह प्रकाशन जल्द ही पाठकों मे लोकप्रिय हो गया, तब, आंबेडकर ने इसका इस्तेमाल रूढिवादी, हिंदू राजनेताओं व जातीय भेदभाव से लड़ने के प्रति भारतीय राजनैतिक समुदाय की अनिच्छा की आलोचना करने के लिये किया। दलित वर्गों में शिक्षा का प्रसार और उनके सामाजिक आर्थिक उत्थान के लिये काम करना था।

सन् १९२६ में, वो बंबई विधान परिषद के एक मनोनीत सदस्य बन गये। सन १९२७ में डॉ. आंबेडकर ने छुआछूत के खिलाफ एक व्यापक आंदोलन शुरू करने का फैसला किया। उन्होंने सार्वजनिक आंदोलनों और जुलूसों के द्वारा, पेयजल के सार्वजनिक संसाधन समाज के सभी लोगों के लिये खुलवाने के साथ ही उन्होंने अछूतों को भी हिंदू मंदिरों में प्रवेश करने का अधिकार दिलाने के लिये भी संघर्ष किया। जिसे राजेन्द्र मोहन भटनागर अपने उपन्यास में गणेशोत्सव के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं- ''देवता तो सबके होते हैं, पुजारी जी, जैसे अग्नि, आकाश, धरा, वायु और पानी। वायु हम सब को छू रही है और हम सब एक साथ सांस ले रहे हैं तथा एक साथ सांस छोड़ रहे हैं। क्या इस समय किसी अछूत द्वारा निकाली गई सांस से आप बच सके हैं? ...क्या आकाश को बांट सकते हैं? क्या सूरज-चांद के प्रकाश को बांट सकते हैं? ...नहींना !फिर छुआछूत कैसी? क्यों? जब प्रकृति किसी के साथ छुआछूत नहीं मानती, तब आप क्यों उसके लिए लक्ष्मण रेखा खींचते हैं?...भीमराव आंबेडकर ने अपने तर्कों से उनकी चेतना को कुरेदना शुरू किया।''[४२] यह संघर्ष आज भी जारी है। तात्पर्य यही है कि जबतक दबे कुचले, अस्पृश्यों के प्रति सहानुभूतिपूर्वक न्याय नहीं किया जाता, बाबासाहेब की प्रासंगिकता बनी रहेगी।

डॉ. आंबेडकर का सम्पूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। अस्पृश्यों तथा दलितों के वे मसीहा थे। उन्होंने सदियों से पद-दलित वर्ग को सम्मानपूर्वक जीने के लिए एक सुस्पष्ट मार्ग दिया।

उन्हें अपने विरूद्ध होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति दी । उनके अनुसार सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दण्ड से भी कहीं अधिक दु:खदाई है । उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा भी की कि भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था, जाति प्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालान्तर में आई विकृतियों के कारण उत्पन्न हुआ है, न कि यह यहां के समाज में प्रारम्भ से ही विद्यमान था।

उन्होंने दलित वर्ग पर होने वाले अन्याय का ही विरोध नहीं किया अपितु उनमें आत्म-गौरव, स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, आत्म सुधार तथा आत्म विश्लेषण करने की शक्ति प्रदान की। दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाये नहीं जा सकते । पं. नेहरू के शब्दों में 'डॉ. आंबेडकर, हिन्दू समाज की दमनकारी प्रवृत्तियों के विरूद्ध किए गए विद्रोह का प्रतीक थे।'

निष्कर्ष :

छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर आदि को एक विचारधारा के महामानवों के रूप में देखा जाता है। छत्रपति शिवाजी भारतीय जनमानस के हृदय सम्राट है। वह राष्ट्रप्रेमी और लोककल्याणकारी राजा थे। उनके समय में सामाजिक स्थिति विषमता से ओतप्रोत थी। छत्रपति शिवाजी ने असंघटित हिंदुओं को संगठित करके स्वराज की स्थापना कर सामाजिक सुधार किए। तत्काल में यवनों के आक्रमण के कारण स्त्री सुरक्षित नहीं थी। उसे संरक्षण देकर अपने माँ की तरह सम्मान दिया। साथ ही किसानों के साथ ही कोई अन्याय न हो इसकी भी सतर्कता बरती थी।

छत्रपति शिवाजी के पूर्व हिंदुस्थान की राजनीति में कोई प्रबल संगठनकर्ता या शासक नहीं हुआ। उन्होंने अपने व्यक्तित्व गुणों से वीरों में देशप्रेम जगाया। अपने बाहुबल, बुद्धिबल एवं आत्मबल से जनकल्याणकारी राज्य व्यवस्था निर्माण करनेवाले शिवाजी राजा महामानव रहे है। वैश्विक सहिष्णुता और समान न्याय से अपने सभी प्रजा का रक्षण ही शिवाजी के राजनीति का मुख्य उद्देश्य था।

छत्रपति शिवाजी की आर्थिक नीति भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। अर्थव्यवस्था पर ही सैन्य, सामर्थ्य, धर्म, अनुशासन और जनकल्याण आधारित होता है। वे भी अपनी दृढ अर्थव्यवस्था के बल पर ही स्वराज निर्माण में सफल हुए।

मध्ययुग की समाज व्यवस्था धर्म पर आधारित थी। तत्काल में यवनों का शासन भारत भर था। धर्म संस्कृति किसी भी प्रकार से सुरक्षित नहीं थी। अंधश्रद्धा का विकराल

रूप जनमास पर था। अनीति से अनेक हिंदुओं को मुसलमान बनाया जाता था। छत्रपति शिवाजी ही ऐसे प्रथम राजा थे जिन्होंने अपने धर्म का रक्षण किया और दुसरों के धर्म का सम्मान भी किया। उनके कार्य की प्रेरणा लेकर युवाओं को अपना चरित्र निर्माण करना आवश्यक है। तब जाकर एक संपन्न और सशक्त देश का निर्माण हो सकता है। इसकारण शिवाजी का कार्य और विचार प्रेरक और प्रासंगिक है।

शिवाजी के विचारों का आधार लेकर ही महात्मा फुले ने समाज का कार्य किया। उन्होंने जाति, लिंग, जायदाद सहित मानव द्वारा किए जानेवाले हर किस्म के भेदभाव एवं प्रजापति का पुरजोर विरोध किया। वे दलित, पिछडे, किसान, मजदूर, महिला एवं मेहनतकश तबके के सच्चे हितैषी थे। उन्होंने धार्मिक पाखंड, सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वास का भी विरोध किया।

वर्तमान दौर में पूँजीवादी विकास के चलते आर्थिक विषमता तेजी से बढ रही है। जाति, लिंग एवं धर्म के आधार पर सामाजिक उत्पीडन बढ रहा है। किसान, मजदूर, नौजवान की स्थिति दयनीय है। ऐसे में महात्मा फुले के विचार प्रासंगिक है।

महाराष्ट्र की भूमि वैचारिक रही है। जिसमें फुले, शाहू, आंबेडकर की विचारधारा महत्वपूर्ण रही है। राजर्षि शाहू महाराज ने शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्र में कार्य किए। जिसके कारण समाज में परिवर्तन हुआ। शिक्षा, छात्रावास, आरक्षण, अस्पृश्यता निवारण, जातिभेद निर्मूलन, विधवा पुनर्विवाह, आंतरजातिय विवाह, देवदासी परंपरा, राजनीतिक विवाह विच्छेद, अंधश्रद्धा निर्मुलन आदि कार्य राजर्षि शाहू महाराज ने किए। समाज में समता स्थापित की, भारत को एक संघ बनाने में अहम भूमिका निभाई। जो काम राजर्षि शाहू महाराज ने १९ वीं सदी में किया, उसे हम २१ वीं सदी में भी नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए आज भी आवश्यकता है उनके आचार और विचारों की। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर न केवल दलितों के मसीहा हैं बल्कि वे नयी सदी के महानायक हैं। दलित वंचितों की उन्नति के लिए संविधानिक प्रावधान रखते समय उन्होंने अपनी दूरदृष्टिता का परिचय दिया है। जातिगत और वर्गगत

असमानता दूर करने की दृष्टि से उन्होंने भरसक प्रयास किये। उन्हीं के द्वारा प्रदत्त अधिकारों से ही दलित-वंचित-बहुजन, महिलाएँ आज चैन की सांस ले रहे हैं। डॉ. आंबेडकर ने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में जो अनमोल योगदान दिया है, जिसे भुलाया नहीं जा सकता। आज भी हर क्षेत्र के लिए डॉ. आंबेडकर हर क्षेत्र में प्रासंगिक बने हुए हैं।

संदर्भ संकेतः

१. शिवाजी और उनका युग- यदुनाथ सरकार, पृ. ३८०

२. छत्रपती शिवाजी - लाल लजपतराय, पृ. ७१-७२

३. राजे छत्रपति शिवाजी महाराज- वसंतराव मोरे, दैनिक पुढारी २८ अप्रैल २०१७ पृ. ४

४. रयतेचा राजा: छत्रपति शिवाजी महाराज, सं. डॉ. उत्तम सावंत पृ. १३०-१३१

५. श्रीमान योगी, रणजीत देसाई, अनुवादक- डॉ. वेदकुमार वेदालंकार

६. छत्रपति शिवाजी महाराज स्मृति ग्रंथ- प्र. सं. जयसिंगराव पवार, पृ. ९३

७. छत्रपति शिवाजी महाराज स्मृति ग्रंथ- प्र. सं. जयसिंहराव पवार, पृ. ४९

८. प्रति इतिहास - चंद्रशेखर शिखरे, पृ. १६५

९. रयतेचा राजा छत्रपति शिवाजी महाराज - विलास सोनवने, पृ. ८२-८३

१०. राजा शिवछत्रपती, 'पूर्वार्ध' - बाबासाहेब पुरंदरे पृ. ४५७-५८

११. शेतकऱ्याचा राजा शिवाजी आणि इतर लेख - शरद जोशी, पृ. ५८

१२. शिवाजी कोण होता - कॉ. गोविंद पानसरे, पृ. ३१

१३ पहला सूरज - भगवतीशरण मिश्र, पृ. ७२

१४. जगातील सर्वोत्तम राजा छत्रपति शिवाजी - काशीनाथ मढवी, पृ. ११३

१५. रयतेचा राजा छत्रपति शिवाजी महाराज - सं. डॉ. उत्तम सावंत पृ. ११८

१६. जोतिचरित्र - लक्ष्मण शास्त्री जोशी, पृ. ७९

१७. भूमिका, युगपुरुष महात्मा फुले - मुरलीधर जगताप, पृ.९-१०

१८. ज्योतिपुंज महात्मा फुले - जियालाल आर्य, पृ.१३७

१९. ज्योतिपुंज महात्मा फुले - जियालाल आर्य, पृ. ९१

२०. युगपुरुष महात्मा फुले - मुरलीधर जगताप पृ. ९४

२१. वही, पृ. ९५

२२. युगपुरुष महात्मा फुले - मुरलीधर जगताप, पृ. १३४, प्र. सं. ११ मई, १९९३

२३. युगपुरुष महात्मा फुले - मुरलीधर जगताप, पृ. ११

२४. महात्मा ज्योतिराव फुले - धनंजय कीर, पृ. ५३

२५. ज्योतिपुंज महात्मा फुले - जियालाल आर्य, पृ. १९७

२६. महात्मा जोतीराव फुले - धनंजय कीर, पृ. ५६

२७. शाहू छत्रपति -डॉ. रमेश जाधव, पृ. २०८

२८. राजर्षी शाहू : गौरव ग्रंथ -डॉ. रमेश जाधव, पृ.६९०

२९. राजर्षी शाहू छत्रपति: जीवन व कार्य -डॉ. जयसिंग पवार, पृ. १३२

३०. छत्रपति शाहू -अशोक गोविंदराव, पृ. १५

३१. वैज्ञानिक संस्कृतिचा दार्शनिक: राजर्षी शाहू छत्रपती -उत्तमराव मोहिते, पृ.४१

३२. छत्रपति शाहूजी सचित्र जीवनी - विमल कीर्ति,पृ. ५६

३३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जीवन-चरित्र - धनंजय कीर, पृ. १२५

३४. महामानव:डॉ.भीमराव रामजी आंबेडकर -डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड 'राजवंश', पृ. २९८

३५. डॉ.अंबेडकर समाज व्यवस्था और दलित साहित्य -कृष्ण दत्त पालीवाल पृ. ३२

३६. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर चरित्र, खंड २ -चांगदेव भवानराव खैरमोडे, पृ.१६८

३७. बाबा साहेब और हिंदू कोड बिल: महिलाओं की दशा सुधारने में मील का पत्थर बना एक कदम,AmarUjala,HindiNews

३८. डॉ बाबासाहेब आंबेडकर जीवन चरित्र -धनंजय कीर, पृ. १२३

३९. वही, पृ. १५१

४०. वही, पृ.२७२

४१. डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर खंड- १२ - चांगदेव भवानराव खैरमोडे पृ. १७७

४२. युगपुरुष अंबेडकर - राजेंद्र मोहन भटनागर, पृ. १३७

उपसंहार एवं निष्कर्ष

उपसंहार एवं निष्कर्ष

'जीवनी' शब्द 'जीवन' से बना है। इसे अंगेजी में 'बायोग्राफी', संस्कृत में 'चरित' तो मराठी में 'चरित्र' कहा जाता है। हिंदी पर्यायवाची कोश में 'जीवनी' को 'जीवन चरित', 'जिंदगीनामा', 'जीवन चरित्र', 'जीवन वृत्तांत', 'बायोग्राफी', 'सवाने उम्री' आदि नाम दिये गये हैं। जीवनी किसी व्यक्ति विशेष के समस्त जीवन का लेखा-जोखा होता है। जिसे अन्य लेखक साहित्यिक कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। जिसमें कल्पना कम यथार्थ अधिक होता है। जीवनी की प्रेरणा आदर्श व्यक्तिकी स्मृति को जगाना है। उसके पीछे कृतज्ञता का भाव होता है। धर्म, राजनीति, समाज, साहित्य, कला, अनुसंधान आदि क्षेत्र के अलौकिक व्यक्ति को जीवनी का विषय बनाकर प्रस्तुत किया जाता है।

गद्य साहित्य में जीवनी अत्यंत महत्वपूर्ण विधा मानी जाती है। जीवनी के कुल पांच तत्व हैं – वर्ण्य विषय, चरित्र-चित्रण, देशकाल-वातावरण, उद्देश्य, और भाषा शैली। इन्हीं पांच तत्वों के आधार पर जीवनी लिखी जाती है। जीवनी विधा का आरंभ 'भारतेंदु युग' से माना जाता है। स्वयं भारतेंदु जी ने 'विक्रम', 'कालिदास', 'रामानुज', 'जयदेव', 'सूरदास' आदि जीवनियां लिखीं हैं। इसी युग के कार्तिक प्रसाद खत्री ने 'अहिल्याबाई' तथा 'छत्रपति शिवाजी' की जीवनी लिखी है। द्विवेदी युग में वृंदावनलाल वर्मा ने भगवान बुद्ध का चरित्र लिखा। सूर्यकुमार वर्मा ने 'मुगल सम्राट अकबर' रामानंद द्विवेदी ने 'राणी लक्ष्मीबाई', केदारनाथ गुप्त ने 'गुरुनानक' आदि जीवनियां लिखीं हैं। छायावाद में रामनरेश त्रिपाठी ने 'गांधी कौन है?' चंद्रराज ने 'भगवान महावीर', मन्मथनाथ गुप्त ने 'चंद्रशेखर आझाद', इंद्र वाचस्पति ने 'जवाहरलाल नेहरु' आदि महत्वपूर्ण जीवनियां लिखी हैं। छायावादोत्तर काल में प्रतापनारायण चतुर्वेदी ने 'पृथ्वीराज चौहान', लक्ष्मण प्रसाद ने 'महात्मा गांधी', लाला लाजपतराय ने 'छत्रपति शिवाजी' आनंद कौशल्यायन की 'भगवान बुद्ध' यदुनाथ सरकार की 'शिवाजी', रामवृक्ष बेनीपुरी की 'सरदार वल्लभभाई पटेल', रतनलाल बंसल की 'भगतसिंह', राहुल सांकृत्यायन की 'स्तालिन', 'कार्ल मार्क्स', शिवरानी देवी की 'प्रेमचंद घर में', विजयकुमार पुजारी की

'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर' रंजन परमार की 'यशवंतराव चव्हाण' आदि। साठोत्तरी जीवनियों में श्रीनिवास बालाजी हार्डीकर ने 'नाना फडणवीस', 'राणी लक्ष्मीबाई' और 'तात्या टोपे' पर जीवनियां लिखीं हैं। कृष्ण हठीसिंह ने 'इंदु से प्रधानमंत्री', लक्ष्मीनारायण लाल की 'जयप्रकाश नारायण', कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर की 'इंदिरा गांधी', कमल सांकृत्यायन की 'महामानव महापंडित', सुलोचना रांगेय राघव की 'रांगेय राघव : अंतरंग परिचय', बिंदु अग्रवाल की 'स्मृति के झरोखे से' आदि महत्वपूर्ण जीवनियां मिलती हैं।

इक्कीसवीं सदी की जीवनियों में विष्णु प्रभाकर की 'अमर शहीद भगतसिंग', नितीन विश्वास की 'डॉ. बी. आर. आंबेडकर', गायत्री कमलेश्वर की 'कमलेश्वर मेरे हम सफर', आलोक भारद्वाज की 'महानायक अमिताथ', हरीश भिमानी की 'लता दीदी', कृष्णदेव झारी की 'युगकवि निराला', विष्णुचंद शर्मा की 'मुक्तिबोध', राजशेखर व्यास की 'मृत्युंजय भगतसिंह', रितु नंदा की 'राज कपूर', सुनयना की 'प्रेम चोप्रा' उल्लेखनीय जीवनियां लिखी गयी हैं।

मराठी जीवनी की शुरुआत १२७६ से मानी जाती है। 'लीळाचरित्र' मराठी की प्रथम जीवनी है जो चक्रधर स्वामी के जीवन पर आधारित है। संत नामदेव ने 'आदि, समाधि एवं तीर्थावली' के नाम से संत ज्ञानेश्वर की जीवनी लिखी है। शिवकाल में 'सभासद बखर' के नाम से छत्रपति शिवाजी की जीवनी लिखी गयी है। ब्रिटिश काल में कृष्णराव अर्जुन केळुसकर ने 'छत्रपति शिवाजी' की जीवनी लिखीं, बालकृष्ण भिडे ने 'तुकाराम', मा. अ. मुळे ने 'संत नामदेव', क्र. ना. आठल्ये ने 'विवेकानंद', वि. ळा. भावे ने 'नेपोलियन', 'टॉलस्टाय', 'रामतीर्थ' आदि जीवनियां लिखीं हैं।

स्वातंत्र्योत्तर कालखंड में ना. सी. फडके ने 'म. गांधी' और 'लोकमान्य तिलक', वा. कृ. भावे ने 'युगप्रवर्तक शिवाजी महाराज', बा. मो. पुरंदरे ने 'राजा शिवछत्रपति', वा. सी. बेंद्रे ने 'छत्रपति शिवाजी', 'छत्रपति संभाजी', बाबुराव काळे की 'यशवंतराव चव्हाण', दे. न्ना. तिलक की 'पंडिता रमाबाई', धनंजय कीर लिखित 'म. फुले', 'राजर्षि शाहू महाराज' और 'बाबासाहेब आंबेडकर', जयसिंगराव पवार की 'क्रांतिसिंह नाना

पाटील', 'राजर्षि शाहू महाराज', 'छत्रपति शिवाजी', मा. भि. काटकर की 'कर्मवीर भाऊराव पाटील', चांगदेव खैरमोडे की 'डॉ. आंबेडकर' महत्वपूर्ण जीवनियां हैं।

मराठी जीवनी के नायक प्रारंभ में संत, राजा-महाराजा, सरदार थे किंतु बाद में समाज सुधारक, शास्त्रज्ञ, लेखक, कलाकार आदि विभिन्न क्षेत्रों के महापुरुषों पर जीवनियां लिखीं जाने लगी। मराठी की कई जीवनियों का हिंदी में अनुवाद हुआ है। हिंदी-मराठी दोनों साहित्य में जीवनी विधा पर काफी लेखन हुआ है।

छत्रपति शिवाजी महाराज का समय अत्यंत उथल-पुथल का समय रहा है। सोलहवीं सदी में बहामनी राज्य के टुकडे होकर पांच शाहियों का निर्माण हुआ था। बरीदशाही, आदिलशाही, कुतुबशाही, इमादशाही और निजामशाही। यह कभी आपस में तो कभी विजयनगर से भिडते रहते। इमादशाही को निजामशाही ने तो बरीदशाही को आदिलशाही ने नष्ट किया। छत्रपति शिवाजी ने आदिलशाही, निजामशाही और मुगलों के साम्राज्य से लोहा लेकर अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। छत्रपति शिवाजी ने भूदुर्ग के साथ-साथ जलदुर्ग बनाकर अपनी दूरदृष्टिता का परिचय दिया। नौसेना, आरमार छत्रपति शिवाजी की ही देन है।

शिवराय के समय की सामाजिक स्थितियां अत्यंत विषम थी। तत्कालीन समाज गुलामी की शृंखला में बद्ध था। सत्ताधारी और उनके सैनिक आम जनता का शोषण करते थे, उन पर अन्याय करते थे। सरे आम बहु-बेटियों पर अत्याचार किये जाते थे। किसानों को लूटा जाता था। आम जनता त्रस्त हो चुकी थी। गुलामी की जंजीर तोड़ने हेतु किसी मसीहा की लोग राह देख रहे थे। इन्हीं परिस्थितियों ने छत्रपति शिवाजी को जन्म दिया। धर्म के संदर्भ में छत्रपति शिवराय ने सहिष्णुता एवं उदारता की नीति अपनाई थी। वे मंदिर के साथ मस्जिदों को भी दान देते। उन्होंने भेदभाव कभी नहीं किया।

सत्रहवीं सदी में शिवराय के उदय के पूर्व मुस्लिम शासकों ने हिंदू के मंदिर ध्वस्त कर मस्जिदों का निर्माण, धर्मांतर, अधिक लगान आदि से जनता को तंग किया था। ऐसी स्थिति में कोई महान व्यक्ति के अविष्कार की जनता राह देख रही थी। इन अत्याचारियों

से महाराष्ट्र को मुक्त करने हेतु छत्रपति शिवराय ने स्वराज्य निर्माण करने का संकल्प किया।

म. फुले कालीन परिस्थितियां भी काफी उथल-पुथल की रही हैं। छत्रपति शिवाजी महाराज ने जो स्वराज्य निर्माण किया था, उस महाराष्ट्र की बागडौर सौ वर्षों तक पेशवाई के हाथों में रही। छत्रपति शिवाजी ने जिस न्यायोचित एवं गुणग्राही शासन प्रणाली की नींव रखी थी, उसे पेशवाओं ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। जाति विहीन व्यवस्था को पुनः जाति प्रधान बना दिया गया। पेशवाओं का कार्यकाल ब्राह्मणों के एकाधिकार का घिनौना इतिहास है। जो राज्य समाजोन्मुख नहीं होता उसका अस्त होते देर नहीं लगती। पुणे के शनिवारवाडे पर अंग्रेजों का झंडा लहराया और एकाधिकारशाही, ऐय्याशी से बर्बर राज्य अस्तंगत हो गया। अंग्रेजों के आने से अनेक मिशनरी स्कूल खुलने से सामान्य जनों के लिए शिक्षा के द्वार खुले गये। डाक, तार, रेल, सडके, नहरें, सरकारी भवन निर्माण हुए। लेकिन अंग्रेजों की सत्ता आखिरकार गुलामी की सत्ता थी।

राजनीतिक दृष्टि से भले ही सत्तांतर दिखाई देता हो परंतु समाज व्यवस्था में कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। वर्ण व्यवस्था, अस्पृश्यता, स्त्री-शूद्रों पर शिक्षा बंदी, सति प्रथा जस की तस थी। शास्त्री-पंडों द्वारा अज्ञानी समाज का शोषण किया जाता था। स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार नहीं था। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था के कारण दीन-दलितों को शिक्षा के द्वार बंद थे, उन पर अन्याय-अत्याचार होते थे। उन्हें मनुष्य ही नहीं माना जाता था। समाज व्यवस्था की सारी बागडौर ब्राह्मणों के हाथों में थी। समाज की बदतर स्थिति और उसके कारणों की खोज ही म. फुले के चिंतन का विषय बना। म. फुले नामक व्यक्तित्व इन्हीं परिस्थितियों की उपज है।

मुस्लिम राजाओं की दृष्टि धार्मिक एवं राजनीतिक थी। जबकि अंग्रेजी सत्ता की नीति आर्थिक थी। इसी नीति ने साम्राज्यवाद को जन्म दिया। सन १८५७ के बाद अंग्रेजों ने राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक, प्रशासनिक नीतियों में बदलाव किया। छत्रपति भोसले घराणे की दो राजगद्दियां थीं, एक सातारा और दूसरी कोल्हापुर। संपूर्ण हिंदुस्तान की तरह

कोल्हापुर रियासत भी अंग्रेजों की छत्रछाया में थी। छत्रपति शाहू से पूर्व अंग्रेजों द्वारा नियुक्त दीवान द्वारा ही कोल्हापुर संस्थान का कारोबार चलता था। ये दिवान जालिम और धर्मांध थे। प्रशासन व्यवस्था में ब्राह्मणों का बाहुल्य था। समाज में छुआछूत, वर्णभेद बरकरार था। समाज में अंधश्रद्धा, अनिष्ट, रुढ़ि-प्रथाएँ, हिंदू-मुस्लिम विवाद, बालविवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, विधवा विवाह, लिंग भेद, बहुपत्नी प्रथा ने समाज को जकड रखा था। स्त्री केवल उपभोग्या थी।

शिक्षा केवल उच्च वर्ग तथा वर्ण तक सीमित थी। दलित वंचितों को स्त्रियों को शिक्षा के द्वार बंद थे। इस दिशा में म. फुले ने काम करना शुरु किया था। फुले दंपति ने ब्राह्मणों का विरोध सहकर सामाजिक परिवर्तन का कार्य जारी रखा। स्त्री- शूद्रादि को शिक्षा के द्वार खोल दिए, विधवा विवाह, बालविवाह, केशवपन जैसी कुप्रथाएं बंद की। सामाजिक समता की दिशा में सदा अग्रेसर रहे। धर्म कर्मकांड, पाखंड, अंधश्रद्धा के रूप में प्रचलित हो रहा था। ब्राह्मण, मठ-मठाधीश आरामदायी जीवन जी रहे थे। अंधभक्ति के नाम पर आम जनता का शोषण किया जाता था। इस दिशा में म. फुले पहले ही अग्रेसर हुए थे, एक अर्थ से म. फुले की विचारधारा का अंमल करने की दृष्टि से ही राजर्षि शाहू महाराज का जन्म हुआ।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कालीन परिस्थितियां भी अत्यंत विपरित थी। समाज अभी भी चातुर्वर्ण्य व्यवसथा में ही जकडा हुआ था, हाँ डॉ. आंबेडकर के गुरु म. फुले तथा राजर्षि शाहू महाराज ने इस दिशा में रास्ता तैयार करने का काम किया था। धर्म का संचालन करनेवाला ब्राह्मण था, राज्य का कारोबार चलानेवाला क्षत्रिय था, जो धनधान्य का व्यापार करता वह वैश्य था और जो इन तीनों वर्णों की सेवा करता था, उसे शूद्र कहा जाता था।

धर्म के नाम पर शूद्रातिशूद्रों का निरंतर शोषण किया जाता था। ये ना मुक्त संचार कर सकते थे न सम्मान की रोटी खा सकते थे। सभी हीन और निम्न दर्जे के काम शूद्रों द्वारा ही करवाये जाते। शिक्षा से उसे वंचित रखा गया था। जानवर की भांति उसके साथ

व्यवहार किया जाता था। वह गांव में रहकर भी गांव का हिस्सा नहीं था, समाज में रहकर भी 'मानव' के रूप में उसकी कोई प्रतिष्ठा नहीं थी। अशिक्षित होने से शूद्र समाज अज्ञानी, रुढीवादी, अंधश्रद्ध था। वह मानसिक गुलामी में जकड़ा हुआ था।

राजनीतिक दृष्टि से यह समाज सत्ता से कोसों दूर था। राजनीतिक दृष्टि से अंग्रेजों की गुलामी और सामाजिक दृष्टि से तथाकथित हिंदुओं की गुलामी उनके हिस्से में थी। अस्पृश्योद्धार उनके लिए शिक्षा का द्वार खोलने का कार्य म. फुले और राजर्षि शाहू ने शुरु किया था। म. फुले ने वर्णवादी व्यवस्था को चुनौति देकर एक नयी समातावादी व्यवस्था निर्माण करने का कार्य किया। अंग्रेजों के आने से, म. फुले ने शूद्रातिशूद्रों के लिए स्वतंत्र स्कूल खोलने से शिक्षा का रास्ता तो खुला पर वह काँटोभरा था। दर-दर अपमानित-प्रताडित होना पडता था। शूद्रातिशूद्रों को स्कूल में नहीं स्कूल के बाहर बिठाया जाता था। दलितों की बस्तियां या तो गांव के एक बाजू में होती थी या गांव के एक कोने में। किसी भी सार्वजनिक कार्यक्रमों में वे सम्मिलित नहीं हो सकते थे। खुले आम उनके बहू-बेटियों की इज्जत लूटी जाती थी। मंदिरों में इनको प्रवेश नहीं दिया जाता था। शादी-ब्याह में इनको मंडप के बाहर बिठाया जाता, खाना ऊपर से दिया जाता, जूठन ही इनको परोसा जाता। इन परिस्थितियों से स्वयं भीमराव आंबेडकर को गुजरना पडा, कई बार अपमानित प्रताडित होना पडा। यहीं से परिवर्तन के लिए संघर्ष का बीजारोपण हुआ और इन्हीं परिस्थितियों ने भारतरत्न डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर को जन्म दिया।

महापुरुष अक्सर विपरित परिस्थितियों की ही देन होते हैं। छत्रपति शिवाजी महाराज का समय १७वीं सदी का है। म. फुले तथा राजर्षि शाहू को १९वीं शती ने जन्म दिया तो डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर २०वीं सदी की देन है। छत्रपति शिवाजी महाराज ने राजनीतिक परिवर्तन के साथ सामाजिक परिवर्तन की दिशा में काम किया। १९वीं सदी में म. फुले ने अज्ञान तथा गुलामगिरी की शृंखलाएँ तोड़ने की दृष्टि से एक रास्ता तैयार किया और राजर्षि शाहू ने यही रास्ता प्रशस्त करते हुए अस्पृश्योद्धार और दलितोद्धार के कार्य पर अंमल किया। डॉ. आंबेडकर ने दलितों के दु:ख-दर्द को खुद भोगा था। अत:

उन्होंने अपने पूर्ववर्ती छ. शिवाजी, म. फुले तथा राजर्षि शाहू के कार्य विस्तार करने में ही अपना जीवन समर्पित किया।छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ये चारों भी भारतीय समाज के प्रेरणा पुरुष हैं। इतिहास साक्षी है कि प्रेरणा-पुरुषों को समाज निरंतर याद करता है। लेखक समाज का ही एक हिस्सा होता है। राष्ट्रीय पुरुषों से लेखक भी प्रभावित होता है और समय की मांग को ध्यान में रखते हुए वह इन चरित्रों को अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के सामने लाने का काम करता है। महापुरुषों के चरित्र से एक ओर लेखक प्रभावित होता है और दूसरी ओर समाज भी ऐसे चरित्रों से प्रभावित होता रहता है। लेखक इतिहास के आधार पर जीवनीओं को पढकर उन महान चरित्रों को समझने का प्रयास करते हैं।

छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पर भारतीय भाषाओं में अनेक जीवनियां लिखीं गयीं हैं। विशेषत: हिंदी-मराठी-अंग्रेजी जैसी महत्वपूर्ण भाषाओं में काफी जीवनियां मिलती हैं। छ. शिवाजी पर २८ (हिंदी) ३० मराठी तथा १० (अंग्रेजी) जीवनियां मिलती हैं। हिंदी में छत्रपति शिवाजी - लाला लाजपतराय, शिवाजी-रामवृक्ष बेनीपुरी यह दो जीवनियां अधिक पढी जाती हैं। मराठी जीवनियों में राजा शिव छत्रपति- बाबासाहेब पुरंदरे, छत्रपति श्री शिवाजी महाराज – कृष्णराव अर्जुन केळुसकर, छत्रपति शिवाजी महाराज – वा. सी. बेंद्रे, सभासद बखर – कृष्णाजी अनंत सभासद, श्री राजा शिवछत्रपति – गजाजनन भास्कर मेहेंदळे आदि जीवनियां अधिक पढी जाती हैं। मराठी में 'श्रीमान योगी' - रणजीत देसाई इस जीवनपरक उपन्यास को अधिक लोकप्रियता मिल चुकी है। इस पुस्तक का हिंदी में भी अनुवाद हो चुका है।

म. फुले की हिंदी में एकमात्र जीवनी म.फुले – जियालाल आर्य मिलती है। भारतीय समाजक्रांति के जनक म. फुले – मु. ब. शहा यह एक सटीक जीवनी मिलती है। म. फुले जीवन और कार्य - हरि नरके, युगपुरुष म. फुले ये मराठी जीवनियों के हिंदी अनुवाद हैं। मराठी में म. फुले पर १६ जीवनियां मिलती हैं। इनमें से महात्मा जोतीबा फुले- धनंजय कीर, म. जोतीबा फुले – भास्कर लक्ष्मण भोळे, म. फुले व्यक्ति आणि विचार - गं. बा. सरदार इन जीवनियों को अधिक मात्रा में पढा जाता है।

राजर्षि शाहू महाराज पर हिंदी में एक भी जीवनी उपलब्ध नहीं हैं। मराठी में १४ से अधिक जीवनियां उपलब्ध हैं परंतु राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज – जयसिंगराव पवार तथा राजर्षि शाहू महाराज - धनंजय कीर इन दो जीवनियों को अधिक मात्रा में पढा जाता है। अब हिंदी में प्रत्यंचा – संजीव का जीवनीपरक उपन्यास प्रकाशित हुआ है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पर हिंदी-मराठी-अंग्रेजी में कई जीवनियाँ उपलब्ध हैं। किंतु युगपुरुष आंबेडकर – राजेंद्र मोहन भटनागर, महामानव बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर – मोहनदास नैमिषराय, अंबेडकर-प्रबुद्ध भारत की ओर – गेल ऑमवेट आदि जीवनियां अधिक मात्रा में पढी जाती है। मराठी जीवनियों में डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – धनंजय कीर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – चांगदेव खैरमोडे, मूकनायक बाबासाहेब आंबेडकर – गंगाधर पानतावणे, युगप्रवर्तक महामानव भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – नरेंद्र जाधव आदि जीवनियों को अधिक मात्रा में पढा जाता है। धनंजय कीर लिखित म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. आंबेडकर की जीवनियाँ काफी लोकप्रिय हैं, इनका हिंदी में भी अनुवाद हो चुका है।

छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ये चारों भी प्रेरणादायी महापुरुष हैं। समाज के लिए इनका अमूल्य योगदान रहा है। छत्रपति शिवाजी एक आदर्श राजा, कुशल संघटक, उत्तम प्रशासक, नीतिमान तथा गतिमान नेतृत्व के रूप में विख्यात हैं। सभी जाति-धर्मों के लोगों को एकत्रित कर उनमें समता स्थापित करना, यवनों की गुलामी से लोगों को मुक्त कर लोगों को अपना लगे ऐसा स्वराज्य निर्माण करना, अपनी प्रशासन व्यवस्था तथा सेना में ब्राह्मण से लेकर शूद्र जातियों के लोगों को स्थान देना, राज्य संचालन हेतु चार सौ से अधिक दुर्गों का निर्माण करना, किसानों के लिए बीज, खाद आदि की सहायता करना, खेती के लिए पानी, सिंचाई की दृष्टि से बांध बंधवाना, अमीर-गरीब सभी के साथ समान न्याय करना, लोगों पर जादती करनेवाले को दंड देना, स्त्री-जाति को सम्मान देना, जल दुर्गों का निर्माण करना, युद्धनीति के लिए आरमार की स्थापना, सभी धर्मों के प्रति आदर करना, मंदिरों

के साथ-साथ मस्जिदों का निर्माण करना, मराठी भाषा को राजभाषा का दर्जा देना, सुप्रशासन की दृष्टि से अष्टप्रधान मंडल की स्थापना करना, एक लोककल्याणकारी राजा होने की दृष्टि से लोगों के लिए विभिन्न योजनाओं का अंमल करना आदि बातें छत्रपति शिवाजी महाराज के सामाजिक योगदान को रेखांकित करती हैं।

म. फुले समताधिष्ठित मूल्यों का बीजारोपण करनेवाले पुरोधा हैं। अस्पृश्योद्धार की दृष्टि से उन्होंने अनमोल कार्य किया है। स्त्री, शूद्रादि के लिए शिक्षा के द्वार खोलने का महत्वपूर्ण कार्य म. फुले ने किया है। अछूतों के लिए अपने घर का कुआँ खुला कर देना, बालविवाह रोककर विधवा विवाह को समर्थन देना, समताधिष्ठित समाज के लिए सत्यशोधक समाज की स्थापना करना, मिल मजदूरों को संघटित कर उनकी आवाज बुलंद करना, किसानों-मजदूरों के शोषण का विरोध करना, शूद्रातिशूद्रों को मानसिक गुलामी से मुक्ति देना, हरेक कार्य की शुरुआत अपने घर से करना, स्त्री-शिक्षा का प्रारंभ करते हुए अपनी पत्नी को अध्यापिका बनाना, अपनी लेखनी के माध्यम से तत्कालीन धार्मिक-सामाजिक व्यवस्था की धज्जियां उडाना, जातिभेद को हटाना, धार्मिक-सामाजिक शोषण से निम्न जन-जातियो को मुक्त करना, जातिविहिन, शोषण मुक्त समाज निर्माण करना, वर्णव्यवस्था को त्यागकर समतामूलक दृष्टि विकसित करना आदि महत्वपूर्ण कार्य म. फुले ने किया है।

म. फुले ने समतामूलक समाज निर्माण करने की दृष्टि से जो रास्ता प्रशस्त किया था, उसी दिशा में राजर्षि शाहू काम करते हुए दिखाई देते हैं। म. फुले एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं परंतु राजर्षि शाहू एक संस्थान के राजा हैं। म. फुले ने समतामूलक समाज का जो सपना देखा था, उस पर अंमल करते हुए राजर्षि शाहू इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य करते हुए दिखाई देते हैं। शिक्षा क्षेत्र में विभिन्न जन-जातियों के बच्चों के लिए स्कूल तथा छात्रालय निर्माण करना, अस्पृश्योद्धार की दृष्टि से आरक्षण का क्रांतिकारी निर्णय लेना, किसानों के हित के लिए विभिन्न योजनाएँ चलाना, अकाल तथा प्लेग निवारण हेतु कार्य, संस्कृत पाठशाला का निर्माण, सामाजिक-सांस्कृतिक उत्थान के

लिए आर्थिक सहायता, कृषि क्षेत्र के लिए जल-सिंचन, बीज-खाद सहायता, बाजार समितियों का निर्माण, उद्योग क्षेत्र के लिए प्रेरणा एवं सहायता आदि विभिन्न कार्य राजर्षि शाहू करते हुए दिखाई देते हैं।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नयी सदी के महानायक हैं। उनका संपूर्ण जीवन भारतीय समाज सुधार के लिए समर्पित था। उन्होंने दीन-दलितों के जीवन में ऊर्जा भरकर उन्हें अपने आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करना सीखाया। जातिविहिन समाज की स्थापना के लिए उनका अनमोल योगदान है। उन्होंने अन्याय-अत्याचार का विरोध, आत्मगौरव, स्वावलंबन, आत्मसुधार, आत्मविश्वास निर्माण की प्रेरणा दी। म. फुले को अपना गुरु मानते हुए वे उन्हीं के रास्ते को अधिक प्रशस्त करने का काम करते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने पिपल्स शिक्षा संस्था की स्थापना कर दलित समाज के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये। राजनीतिक क्षेत्र में पीछडे समाज के हक और अधिकार के लिए वेलडते रहें। मजदूर पार्टी, भारतीय रिपब्लिकन पार्टी की स्थापन कर लोगों को राजनीतिक संघर्ष सीखाया, 'मूकनायक तथा बहिष्कृत भारत' जैसे पत्रों के माध्यम से शूद्रातिशूद्रों को आवाज दी। संविधान के निर्माता बनकर दलित-पीडित समाज, स्त्री, किसान-मजदूर आदि सभी तबके समाज के लिए संविधानिक अधिकार प्रदान किये।

जलनीतिज्ञ, अर्थशास्त्रज्ञ, समाजशास्त्रज्ञ, जननायक, धुरंधर राजनेता, संविधान निर्माता, दीन-दलितों के मसीहा, संघर्ष योद्धा, दूरदर्शी नेता, समताधिष्ठित मूल्यों के हिमायती आदि विभिन्न रूपों में डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने भारतीय समाज के लिए अपना अमूल्य योगदान दिया है।

छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर भारतीय समाज के महानायक हैं। अपने व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के बलबूतें पर उन्होंने तमाम भारतीय समाज पर अपनी छाप छोडी है। ये चारों भी भाारतीय समाज के प्रेरणादायी महापुरुष होने के कारण भारतीय समाज के हर क्षेत्र पर इनका प्रभा देखा जा सकता है। सामाजिक,

राजनीतिक, धार्मिक-सांस्कृतिक, शिक्षा, साहित्य आदि अनेक क्षेत्रों में इन चरित्रों का गहरा प्रभाव देखने को मिलता है।

छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की जयंती पूरे भारतवर्ष में हर्षोल्लास के साथ मनाई जाती है। दिल्ली के संसद भवन से लेकर राज्य के विधानमंडल तक इन चार महापुरुषों की मूर्तियां लगायी गयी हैं। भारतभर में इनके अनुयायी फैले हुए हैं। छ. शिवाजी और डॉ. आंबेडकर का प्रभाव तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी देखा गया है। लंदन के म्युझियम में छत्रपति शिवाजी की तलवार रखी गयी है। तो उसी लंदन में स्थित डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर के निवासस्थान को अंतर्राष्ट्रीय स्मारक बनाया गया है। लंदन, अमरिका, जपान, कैनडा, ऑस्ट्रेलिया, हंगेरी, दक्षिण अफ्रिका आदि देशों में डॉ. आंबेडकर की मूर्तियां लगायी गयी हैं।

इन चारों महापुरुषों से भारतीय राजनीति पूरी तरह प्रभावित दिखाई देती है। छ. शिवाजी के नाम पर शिवसेना, शिवसंग्राम, संभाजी ब्रिगेड, म. फुले के प्रभाव वश बहुजन समाज पार्टी, समता परिषद और डॉ. आंबेडकर के प्रभाववश भारतीय रिपब्लिकन पार्टी, भारिप-बहुजन महासंघ, बसपा, रिपब्लिकन सेना, भीम आर्मी जैसी रजानीतिक पार्टियां कार्यरत दिखाई देती हैं।

छ. शिवाजी के जीवनपर १८ फिल्में, १७ नाटक, ४ धारावाहिक, ३ मंदिर, २५७ ग्रंथालय, महत्वपूर्ण संस्थान, कई सरकारी योजनाएँ बनायी गयी हैं।

म. फुले पर २ फिल्में, ४ नाटक, कई संस्थान, पुरस्कार, योजनाएँ ४ साहित्य संमेलन तथा ४७१ अनुदानित ग्रंथालय स्थापित किये गये हैं।

राजर्षि शाहू पर १ फिल्म, १ धारावाहिक, कई संस्थान, योजनाएँ पुरुस्कार और १५९ ग्रंथालय स्थापित हैं।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पर ५ फिल्में, २ धारावाहिक, २ डाक्यूमेंटरी, ९ नाटक, कई संस्थाएँ, सरकारी योजनाएँ, १५ राजनीतिक दल, ३० से अधिक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार ३१२ अनुदानित ग्रंथालय चलाये जाते हैं।

छ. शिवाजी के नाम पर ३ विश्वविद्यालय, म. फुले के नाम पर १, शाहू महाराज के नाम पर १ तो डॉ. आंबेडकर के नाम पर १४ विश्वविद्यालय स्थापित हैं।

महाराष्ट्र में छ. शिवाजी के नाम पर ६४ म. फुले पर २१, राजर्षि शाहू के नाम पर १८ तो डॉ. आंबेडकर के नाम पर १३४ महाविद्यालय स्थापित किये गये हैं।

स्कूलों की बात करें तो महाराष्ट्र में छ. शिवाजी १७१, म. फुले १६२, राजर्षि शाहू १६६, और डॉ. आंबेडकर के नाम पर ५७९ स्कूल स्थापित हैं।

महाराष्ट्र सरकार ने ओबीसी और पीछडे समाज के कल्याण हेतु महाजोती, सारथी और बार्टी जैसी संस्थाएँ स्थापित की हैं, जिनके द्वारा उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्तियां प्रदान की जाती हैं। देशभर में छ. शिवाजी के नाम पर ५, म. फुले पर १४ राजर्षि शाहू पर २ तथा डॉ. आंबेडकर पर ६८ अनुसंधान केंद्र स्थापित किये गये हैं।

साहित्यिक प्रभाव की बात करें तो इनमें से हरेक पर भारतीय भाषाओं में ग्रंथ लिखें गये हैं। मराठी में इन चारों महापुरुषों पर जीवनियां मिलती हैं। छ. शिवाजी तथा डॉ. आंबेडकर की जीवनियां हिंदी में भी मिलती हैं किंतु म. फुले तथा राजर्षि शाहू पर हिंदी में बहुत कम लिखा गया है। म. फुले पर एक-दो जीवनियां मिलती हैं परंतु राजर्षि शाहू पर एक भी जीवनी उपलब्ध नहीं है।

छ. शिवाजी पर २१, म. फुले पर ३१, राजर्षि शाहू पर १५ और डॉ. आंबेडकर पर १०५ शोध प्रबंधों के माध्यम से शोधकार्य संपन्न किया गया है।

महाराष्ट्र सरकार ने अरबी समंदर के बीच छत्रपति शिवाजी का, इंदु मिल, दादर (मुंबई) में डॉ. आंबेडकर का और फुलेवाडा, पुणे में म. फुले का भव्य स्मारक बनाने की घोषणा की गयी है, जिसका काम चल रहा है।

म. फुले और डॉ. आंबेडकर को दलित साहित्य का प्रेरणास्त्रोत माना जाता है। इन्हीं के प्रभाव से अब आदिवासी साहित्य, महिला लेखन निर्माण हुआ है। अब तो दलित, आदिवासी, बहुजन, महिलाओं के स्वतंत्र साहित्य संमेलन हो रहे हैं। फुले-शाहू-आंबेडकर की प्रेरणा से लगभग १५ साहित्य संमेलन आयोजित किये जाते हैं।

कुल मिलाकर छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक शैक्षिक हर क्षेत्र पर इन चार महापुरुषों की अमिट छाप है। ये चारों महापुरुष वर्तमान संदर्भ में भी प्रासंगिक और प्ररेणादायक हैं।

समन्वित निष्कर्ष :

१. 'जीवनी' शब्द जीवन से बना है, जिसे अंग्रेजी में 'बायोग्राफी', संस्कृत में 'चरित' तो मराठी में 'चरित्र' कहा जाता है।

२. जीवनी किसी व्यक्तिविशेष के समस्त जीवन का लेखा-जोखा होता है, जिसे अन्य लेखक कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है।

३. जीवनी के माध्यम से किसी महान नायक का चरित्र उद्घाटित कर समाज के सामने रखा जाता है, ताकि नयी पीढी इन महानायकों से प्रेरणा ग्रहण कर सके।

४. जीवनी की प्रेरणा किसी आदर्श व्यक्ति की स्मृतियों को जगाना है, जिसके पीछे कृतज्ञता का भाव होता है।

५. धर्म, राजनीति, समाज, साहित्य, कला, अनुसंधान आदि विभिन्न क्षेत्रों के महनीय व्यक्ति के चरित्र को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।

६. हिंदी में भक्तिकाल के कवि नाभादास रचित 'भक्तिमाला' को पहली जीवनी माना जाता है और मराठी में पं. म्हाइंभट लिखित 'लीळाचरित्र' को पहली जीवनी माना जाता है।

७. हिंदी-मराठी दोनों भाषाओं में जीवनी लिखने की समृद्ध परंपरा है।

८. छ. शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहब आंबेडकर भारतीय समाज के महानायक हैं। हिंदी-मराठी-अंग्रेजी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में इनकी जीवनियां लिखीं गयी हैं।

९. छत्रपति शिवाजी का जन्म १६३० का है, वह समय धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक दृष्टि से अत्यंत उथल-पुथल का रहा है। अत्यंत विपरित परिस्थिति में छ. शिवाजी ने न्यायोचित, गुणग्राही स्वराज्य की नींव रखीं।

१०. छ. शिवाजी के २०० साल बाद १८२७ में म. फुले का जन्म हुआ, ऐषोराम में जीनेवाले पेशवा और अंग्रेजों का शासन, वर्णव्यवस्था, अस्पृश्यता, स्त्री-शूद्रों को शिक्षा बंदी, धार्मिक पाखंड, सतिप्रथा, स्त्री-शूद्रों पर अन्याय अत्याचार इन विपरित परिस्थितियों ने म. फुले के व्यक्तित्व को जन्म दिया।

११. राजर्षि शाहू महाराज का जन्म १८७४ में हुआ। म. फुले ने सामाजिक समता का जो रास्ता तैयार किया था, उसे शाहू महाराज अधिक प्रशस्त करते हुए एक अर्थ से म. फुले के अधुरे कार्य का ही पूरा करने का काम करते हैं।

१२. म. फुले तथा राजर्षि शाहू ने जो रास्ता दिखाया था, डॉ. आंबेडकर उसी दिशा में अग्रेसर हुए। अज्ञान, वर्णवर्चस्ववाद, रुढीवाद, अंधश्रद्धा और स्त्री-शूद्रादि के शोषण के विरोध में संघर्ष करते हुए डॉ. आंबेडकर उपस्थित हुए।

१३. छ. शिवाजी १७ वीं म. फुले तथा राजर्षि शाहू १९ वीं तो डॉ. आंबेडकर २०वीं सदी की देन है। अक्सर विपरित परिस्थितियां ही महापुरुषों को जन्म देती है।

१४. छ. शिवाजी पर २८ हिंदी ३० मराठी तथा १० अंग्रेजी जीवनियां मिलती हैं।

१५. हिंदी में लाला लालपतराय लिखित 'छत्रपति शिवाजी' और रामवृक्ष बेनीपुरी लिखित 'शिवाजी' यह दो जीवनियों अधिक मात्रा में पढी जाती है।

१६. मराठी जीवनियों में राजा शिवछत्रपति – बाबासाहेब पुरंदरे, छत्रपति श्री शिवाजी महाराज – कृष्णराव अर्जुन केळुस्कर, छत्रपति शिवाजी महाराज – वा. सी. बेंद्रे, सभासद बखर – कृष्णाजी अनंत सभासद और श्री राजा शिवछत्रपति – गजानन

भास्कर मेहेंदळे यह जीवनियां अधिक पढी जाती हैं। रणजीत देसाई लिखित 'श्रीमान योगी' यह जीवनीपरक उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय है, इसका हिंदी में भी अनुवाद हो चुका है।

१७. म. फुले पर हिंदी में म. फुले – जियालाल आर्य और मु. ब. शहा लिखित समाज क्रांति के जनक म. फुले यह दो ही जीवनियां मिलती हैं।

१८. मराठी में म. फुले जीवनी आणि कार्य - हरि नरके, युगपुरुष म. फुले – मुरलीधर जगताप, महात्मा जोतीबा फुले – धनंजय कीर, म. जोतीबा फुले – भास्कर लक्ष्मण भोळे, म. फुले : व्यक्ति आणि विचार – गं. बा. सरदार इन जीवनियों को अधिक पढा जाता है। हरि नरके तथा मुरलीधर जगताप लिखित जीवनियों का हिंदी में अनुवाद हो चुका है।

१९. राजर्षि शाहू महाराज पर हिंदी में एक भी जीवनी नहीं मिलती। मराठी में राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज – जयसिंगराव पवार तथा राजर्षि शाहू महाराज – धनंजय कीर यह दो जीवनियां अधिक मात्रा में पढी जाती है। अभी हाल ही में संजीव लिखित 'प्रत्यंचा' नामक जीवनीपरक उपन्यास प्रकाशित हुआ है। जयसिंगराव पवार तथा धनंजय कीर लिखित जीवनियों का हिंदी में अनुवाद हुआ है।

२०. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नयी सदी के नायक हैं। हिंदी-मराठी-अंग्रेजी में ही नहीं बल्कि अनेक भारतीय भाषाओं में इनकी जीवनियां लिखीं गयीं हैं। हिंदी में युगपुरुष आंबेडकर – राजेंद्र मोहन भटनागर, महामानव बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर – मोहनदास नैमिषराय, आंबेडकर प्रबुद्ध भारत की ओर – गेल ॲमवेट आदि जीवनियों को अधिक पढा जाता है।

२१. मराठी जीवनियों में डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – धनंजय कीर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – चांगदेव खैरमोडे, मूकनायक बाबासाहेब आंबेडकर – डॉ. गंगाधर पानतावणे, युगप्रवर्तक महामानव भारतरत्न डॉ. आंबेडकर – डॉ. नरेंद्र जाधव आदि जीवनियों का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

२२. धनंजय कीर ने म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर की मराठी में लिखित जीवनियाँ काफी प्रामाणिक मानी जाती हैं। इनसे संबंधित तीनों जीवनियों का हिंदी में अनुवाद हुआ है।

२३. छत्रपति शिवाजी एक आदर्श राजा, कुशल संघटक, उत्तम प्रशासक, नीतिमान एवं गतिमान नेतृत्व के रूप में विश्वभर में विख्यात हैं।

२४. सभी जाति-धर्म के लोगों को एकत्रित कर उनमें समता स्थापित करना, शूद्रातिशूद्रों में विश्वास भरकर स्वराज्य निर्माण करना, ४०० से अधिक दुर्ग तथा जलदुर्गों का निर्माण करना, किसानों के लिए सहायता करना, मंदिर-मस्जिद को दान देना, स्त्री-जाति का सम्मान करना, आरमार की स्थापना करना, मराठी को राजभाषा का दर्जा देना, सुप्रशासन की दृष्टि से अष्टप्रधान मंडल की स्थापना करना, अमीर-गरीब के साथ समान न्याय करना आदि महत्वपूर्ण कार्य छत्रपति शिवाजी महाराज ने किये हैं।

२५. म. फुले वर्ण वर्चस्ववाद के विरोध में खडे होकर समताधिष्ठित समाज का निर्माण, अस्पृश्योद्धार, स्त्री-शूद्रादि के लिए शिक्षा के द्वार खोलना, बालविवाह, विधवा विवाह को समर्थन देना, सत्यशोधक समाज की स्थापना, धार्मिक पाखंड का पर्दाफाश कर शोषण का विरोध करना, किसानों-मजदूरों की आवाज बुलंद करना, स्त्री-जाति को सम्मान देना, जातिविहीन शोषणमुक्त समाज का निर्माण करना, अपनी पत्नी को स्वयं शिक्षित कर भारत की प्रथम अध्यापिका बनाना आदि बातों के लिए म. फुले का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है।

२६. राजर्षि शाहू महाराज एक राजा होते हुए भी म. फुले के बताये हुए रास्ते पर चलने का कार्य करते हैं। अस्पृश्योद्धार की दृष्टि से शूद्रातिशूद्रों को सम्मान देना, किसानों-मजदूरों के लिए योजनाएँ बनाना, सभी जन-जातियों के लिए स्कूल तथा छात्रालय का निर्माण, अपने राज्य में पिछडे समाज के लिए ५० प्रतिशत आरक्षण देने का क्रांतिकारी निर्णय लेना, संस्कृत पाठशाला का निर्माण करना,

धार्मिक शोषण का विरोध करना, वर्ण तथा जातिविहीन शोषण मुक्त समाज निर्माण करना, कृषि तथा उद्योग क्षेत्र को विकसित करना, समाज के सामाजिक-सांस्कृतिक उत्थान के लिए सहायता करना आदि महत्वपूर्ण कार्य राजर्षि शाहू महाराज ने किये हैं।

२७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर म. फुले तथा राजर्षि शाहू के अधुरे स्वप्नों को पूर्ण करने का काम करते हैं। शूद्रातिशूद्रों के जीवन में स्वाभिमान भरकर उनको गुलामी से मुक्ति देना, उनमें आत्मगौरव, स्वालंबन, आत्मविश्वास निर्माण करना, दलित समाज के लिए शिक्षा संस्था की स्थापना, किसान-मजदूरों को अपने अधिकार के प्रति जागृत करना, हिंदू धर्म का त्याग और बौद्ध धर्म को अपनाने का क्रांतिकारी निर्णय लेना, मजदूर पार्टी, रिपब्लिकन पार्टी के माध्यम से निम्न समाज को राजनीति में प्रतिनिधित्व मिलने हेतु संघर्ष करना, मूकनायक तथा बहिष्कृत भारत जैसे पत्रों के माध्यम से शूद्रातिशूद्रों की आवाज बुलंद करना, संविधान के माध्यम से स्त्री-शूद्रादि, किसान-मजदूर, बहुजन समाज के उद्धार हेतु प्रदत्त अधिकार प्रदान करना, अपने उत्तुंग व्यक्तित्व के माध्यम से जलनीतितज्ञ, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, जननायक, दीन-दलितों के मसीहा, दूरदर्शी नेता, समतादूत तथा संघर्ष योद्धा के रूप में अपना परिचय देना आदि विभिन्न क्षेत्रों में डॉ. आंबेडकर का भारतीय समाज के लिए अनन्य साधारण योगदान रहा है।

२८. छत्रपति शिवाजी, महात्मा फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर भारतीय समाज के प्रेरणा पुरुष हैं। इनमें से हरेक अपने पूर्ववर्ती नायक द्वारा बताये गये रास्ते को प्रशस्त करते हुए उनके अधुरे कार्य को आगे ले जाने का काम करता है। ये चारों भी समताधिष्ठित मूल्यों के पूजारी हैं। सामाजिक समता, शोषण-विरोध, गुलामी से मुक्ति, मानवतावाद की स्थापना, स्त्री-शूद्रादि का सम्मान, किसान-मजदूरों का सम्मान, घिनौनी रुढी-परंपराओं का विरोध, शोषण मुक्त समाज निर्माण की दिशा में इन सभी ने अपना अनमोल योगदान दिया है।

२९. १९ फरवरी को महाराष्ट और महाराष्ट्र के बाहर दिल्ली, हैदराबाद, बंगलुरु, म्हैसोर, आग्रा, बेलगांव आदि महत्वपूर्ण शहरों में छत्रपति शिवाजी की जयंती अत्यंत हर्षोल्लास के साथ मनायी जाती है।

३०. ११ अप्रैल को पूरे महाराष्ट्र में और उत्तर भारत के महत्वपूर्ण शहरों में म. जोतीराव फुले की जयंती बडी धूमधाम से मनायी जाती है।

३१. २६ जून को राजर्षि शाहू महाराज की जयंती महाराष्ट्र तथा महाराष्ट्र के बाहर दिल्ली, लखनौ, कानपुर आदि शहरों में मनायी जाती है।

३२. १५ अप्रैल को पूरे भारतवर्ष में भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की जयंत अत्यंत हर्षोल्लास के साथ मनायी जाती है।

३३. छत्रपति शिवाजी की जयंती को 'शिवजयंती', डॉ. आंबेडकर की जयंती को 'भीम जयंती', म. फुले की 'फुले जयंती' तथा राजर्षि शाहू की 'शाहू जयंती' के रूप में मनाया जाता है।

३४. जयंती के उपलक्ष्य में मूर्तियों का जुलूस, व्याख्यानमालाएँ, प्रतियोगिताएँ, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

३५. महाराष्ट्र के अनेक घरों में इन महापुरुषों की प्रेरणा से शिवाजी, जोतीराव, शाहूराव और भीमराव आदि नाम बच्चों को देना गौरवशाली माना जाता है।

३६. भारत के कई शहरों में शिवाजीनगर, फुले नगर, शाहू नगर, तथा आंबेडकर नगर या भीमनगर के जैसे शहर, गांव, गली-मोहल्ले दिखाई देते हैं।

३७. महाराष्ट्र के हरेक शहर में, संसद भवन, दिल्ली, महाराष्ट्र सदन, नई दिल्ली, लखनौ विश्वविद्यालय, लखनौ, गौंडवाड, बेळगांव, बसवकल्याण, म्हैसोर, तंजावर, बंगलुरु (कर्नाटक), हैदराबाद (तेलंगाना), तवांग (अरुणाचल प्रदेश), लखनौ, आग्रा (उत्तर प्रदेश), छिंदवाडा (मध्यप्रदेश), गोरक्षेप, माऊंट एव्हरेस्ट (नेपाल), राष्ट्रीय संरक्षण प्रबोधिनी (एनडीए)पुणे, सॅन जोस, कॅलिफोर्निया

(अमेरिका), कॉटरबुन्स (मॉरीशस) अर्थात देश-विदेशों में छत्रपति शिवाजी की मूर्तियाँ स्थापित की गयी हैं।

३८. शिवाजी के नाम पर महाराष्ट्र के बाहर शिवाजीनगर, लुधियाना (पंजाब), शिवाजी नगर, शोरापुर (कर्नाटक), शिवाजीनगर, सिकंदराबाद (तेलंगाना), शिवाजीनगर, हवेरी (कर्नाटक), शिवाजी पार्क दिल्ली, शिवाजी पार्क अलवार (राजस्थान), शिवाजी पार्क मेट्रो स्टेशन, दिल्ली, शिवाजी स्टेडियम, दिल्ली, शिवाजी स्टेडियम, पानिपत (हरियाणा), शिवाजी स्टेडियम, रॉबअर्सन (उत्तर प्रदेश), छत्रपति शिवाजी टर्मिनस (रेल स्टेशन), मुंबई, छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई आदि महत्वपूर्ण संस्थानों को छत्रपति शिवाजी का नाम दिया गया है।

३९. महाराष्ट्र सरकार की ओर से शिवछत्रपति क्रीडा पुरस्कार, शिवछत्रपति जीवनगौरव पुरस्कार, छत्रपति साहस पुरस्कार, शिवाजी वनश्री पुरस्कार, महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा छत्रपति शिवाजी साहित्य पुरस्कार दिये जाते हैं।

४०. महाराष्ट्र सरकार की ओर से छत्रपति शिवाजी महाराज किसान सम्मान योजना चलायी जाती है।

४१. महाराष्ट्र के हरेक शहर में तथा महाराष्ट्र के बाहर लखनौ के आंबेडकर पार्क में, संसद भवन, महाराष्ट्र सदन, नई दिल्ली में म. फुले की मूर्तियां स्थापित की गयी है।

४२. महाराष्ट्र सरकार द्वारा म. फुले के नाम पर जलमित्र पुरस्कार, सावित्रीबाई फुले पुरस्कार, सावित्रीबाई फुले स्वच्छ अंगणवाडी पुरस्कार आदि पुरस्कार दिये जाते हैं।

४३. महाराष्ट्र सरकार द्वारा म. फुले के नाम पर म. फुले जल व भूमि संधारण अभियान, म. फुले जन आरोग्य योजना, म. फुले कर्जमाफी योजना आदि योजनाएँ चलायी जाती हैं।

४४. महाराष्ट्र के लगभग सभी शहरों में, महाराष्ट्र के बाहर संसद भवन, महाराष्ट्र सदन, दिल्ली में, आंबेडकर पार्क, लखनऊ में, छत्रपति शाहू जी महाराज कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर में राजर्षि शाहू की मूर्तियां लगायी गयी हैं।

४५. महाराष्ट्र सरकार की ओर से राजर्षि शाहू का जन्मदिन 'सामाजिक न्याय दिन' के रूप में मनाया जाता है। महाराष्ट्र सरकार की ओर से 'राजर्षि शाहू गुणवत्ता पुरस्कार' प्रदान किये जाते हैं।

४६. महाराष्ट्र सरकार की ओर से राजर्षि शाहू महाराज छात्रवृत्ति योजना, सार्थी की ओर से कौशल विकास योजना, उच्च शिक्षा छात्रवृत्ति योजना आदि योजनाएँ चलायी जाती हैं।

४७. भारतरत्न डॉ. आंबेडकर की पूरे भारतवर्ष में मूर्तियां स्थापित की गयी हैं। विदेशों में कोलंबिया विश्वविद्यालय (अमेरिका), लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, लंदन, ओल्वर हाम्पटन, ग्रेट ब्रिटन, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर स्मारक, लंदन, यार्क विश्वविद्यालय, टोरांटो (कॅनडा), संयुक्त राष्ट्रसंघ, न्यूयॉर्क, सिडनी विश्वविद्यालय, सिडनी (ऑस्ट्रेलिया), युनिवर्सिटी ऑफ मेस्साच्युसेटस एमहस्ट, (अमेरिका), डॉ. आंबेडकर हायस्कूल हंगेरी, (दक्षिण अफ्रिका) आदि देशों में डॉ. आंबेडकर की मूर्तियां स्थापित की गयी हैं।

४८. डॉ. आंबेडकर समानता की प्रतिमा 'स्टॅच्यू ऑफ इक्वेलिटी' अंतर्राष्ट्रीय स्मारक, दादर मुंबई, डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय स्मारक, अलीपुर रोड, दिल्ली, डॉ. आंबेडकर पार्क, लखनऊ, भीम जन्मभूमि स्मारक, महू (मध्यप्रदेश), डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय स्मारक, लंदन आदि स्मारक डॉ. आंबेडकर के नाम से बनाये गये हैं।

४९. डॉ. आंबेडकर के नाम से महाराष्ट्र के बाहर डॉ. आंबेडकर स्टेडियम, दिल्ली, डॉ. आंबेडकर स्टेडियम, बंगलुरु (कर्नाटक), डॉ. आंबेडकर हवाई अड्डा, नागपुर, डॉ. भीमराव आंबेडकर हवाई अड्डा, मेरठ (उत्तर प्रदेश) आदि महत्वपूर्ण संस्थान बनाये गये हैं।

५०. डॉ. आंबेडकर के नाम से 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार' (भारत सरकार), फुले-शाहू-आंबेडकर पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार (भारत सरकार), डॉ. आंबेडकर सामाजिक न्याय पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), बाबासाहेब आंबेडकर पुरस्कार (गुजरात सरकार), डॉ. बी. आर. आंबेडकर रत्न पुरस्कार (दिल्ली सरकार), डॉ. आंबेडकर शिक्षा पुरस्कार (राजस्थान सरकार), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समाजभूषण पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर महिला कल्याण पुरस्कार (राजस्थान सरकार), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर उत्कृष्ट ग्रंथालय, पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार),डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर समाज उत्थान पुरस्कार (महाराष्ट्र सरकार), डॉ. आंबेडकर आंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार (जीवन वैल्फेअर सोसायटी, नागपुर) आदि राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार दिये जाते हैं।

५१. डॉ. आंबेडकर के नाम पर महाराष्ट्र सरकार द्वारा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कृषि स्वालंबन योजना, भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर विशेष सामाजिक योजना, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर स्वाधार योजना, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रोजगार प्रोत्साहन योजना (उत्तर प्रदेश), महाराष्ट्र सरकार द्वारा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर शोध एवं प्रशिक्षण योजना (बार्टी) आदि सरकारी योजनाएँ चलायी जाती हैं।

५२. छत्रपति शिवाजी के नाम से शिवसेना, शिवसंग्राम, संभाजी ब्रिगेड, छावा जैसे संघटन स्थापित किये गये हैं। म. फुले के प्रभाव से समता परिषद, बहुजन समाज पार्टी आदि संघटन काम करते हैं। राजर्षि शाहू के नाम पर कोईराजनीतिक संघटन नहीं है परंतु महाराष्ट्र की अनेक पार्टियां उनके नाम का उपयोग राजनीति के लिए करती हैं।

५३. डॉ. आंबेडकर के नाम से आंबेडकर राष्ट्रीय कांग्रेस, आंबेडकर समाज पार्टी, आंबेडकराईट पार्टी ऑफ इंडिया, भारतीय आंबेडकरी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, भीम आर्मी, भीम सेना, डॉ. आंबेडकर स्टुडंट असोसिएशन, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॅशनल स्टुडंट फेडरेशन, डॉ. आंबेडकर इंटरनॅशनल मिशन,

आंबेडकराईट मूव्हमेंट ऑफ कल्चर अँड लिटरेचर, रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया, भारिप-बहुजन महासंघ, रिपब्लिकन सेना, समता सैनिक दल आदि संघटन चलाये जाते हैं।

५४. छत्रपति शिवाजी के जीवन पर आधारित १८ फिल्में, १७ नाटक, ४ धारावाहिक, ३ मंदिर तथा २५७ सार्वजनिक ग्रंथालय निर्माण किये गये हैं।

५५. म. फुले के जीवन पर आधारित २ फिल्में, ४ नाटक, १ धारावाहिक, ४ साहित्य संमेलन और ४७१ सरकारी अनुदान प्राप्त ग्रंथालयों का निर्माण किया गया है।

५६. राजर्षि शाहू के जीवन पर १ फिल्म १ धारावाहिक मिलते हैं परंतु इनके जीवन पर एक भी नाटक नहीं मिलता। इनके नाम से महाराष्ट्र में १५९ सार्वजनिक ग्रंथालयों का निर्माण किया गया है।

५७. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के जीवन पर ५ फिल्में, २ धारावाहिक, २ डाक्यूमेंटरी, ९ नाटक, १५ साहित्य संमेलन तथा ३१२ सरकारी अनुदानित ग्रंथालय स्थापित किये गये हैं।

५८. पूरे भारत वर्ष में छत्रपति शिवाजी के नाम पर ३ विश्वविद्यालय, म. फुले के नाम पर १, राजर्षि शाहू महाराज के नाम पर १, तो डॉ. आंबेडकर के नाम पर कुल १४ विश्वविद्यालय स्थापित किये गये हैं।

५९. महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी के नाम से ६४, म. फुले के नाम पर २१, राजर्षि शाहू के नाम पर १८ तो डॉ. आंबेडकर के नाम पर १३४ कॉलेज चलाये जाते हैं।

६०. महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी के नाम पर १७१, म. फुले के नाम पर ७६२, राजर्षिशाहू के नाम पर १६४ तो डॉ. अंबेडकर के नाम पर ५७९ स्कूल स्थापित किये गये हैं।

६१. महाराष्ट्र सरकारने म. फुले के नाम पर बहुजन समाज के कल्याण हेतु 'महाजोती', राजर्षि शाहू के नाम पर मराठा समाज के उत्थान हेतु 'सारथी', तथा डॉ. आंबेडकर के नाम से दलित-वंचितों के कल्याण हेतु 'बार्टी' नामक संस्थान स्थापित किये गये हैं।

६२. देशभर के विभिन्न विश्वविद्यालयों में छ. शिवाजी के नाम पर ५, म. फुले के नाम पर १४, राजर्षि शाहू के नाम पर २ तथा डॉ. आंबेडकर के नाम पर ६८ अनुसंधान केंद्र चलाये जाते हैं।

६३. छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर से साहित्य क्षेत्र भी काफी प्रभावित हुआ है। केवल हिंदी-मराठी में ही नहीं बल्कि अनेक भारतीय भाषाओं में इन पर ग्रंथ-रचनाओं का निर्माण हुआ है। छत्रपति शिवाजी पर हिंदी-मराठी में अनेक जीवनियां लिखीं गयी हैं परंतु म. फुले तथा राजर्षि शाहू पर मराठी की अपेक्षा हिंदी में बहुत ही कम लिखा गया है। म. फुले पर एक-दो जीवनियां मिलती तो हैं परंतु राजर्षि शाहू पर मूल हिंदी में लिखी हुई एक भी जीवनी नहीं है।

६४. विभिन्न विश्वविद्यालयों में छत्रपति शिवाजी पर २१, म. फुले पर ३१, राजर्षि शाहू पर १५ तो डॉ. आंबेडकर पर १०५ पीएच.डी. के शोध-प्रबंध के माध्यम से शोधकार्य संपन्न किया गया है।

६५. महाराष्ट्र सरकार ने अरबी समंदर में छत्रपति शिवाजी का, इंदु मिल दादर, मुंबई में डॉ. आंबेडकर का तथा पुणे में म. फुले का भव्य स्मारक बनाने की घोषणा की है। जिसका काम चल रहा है।

६६. छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर पर निम्नानुसार ग्रंथ हैं-

साहित्य प्रकार	**छ. शिवाजी**	**म. फुले**	**राजर्षि शाहू**	**डॉ. आंबेडकर**
कविता संग्रह	६५	०२	०१	१०

जीवनी	७५	१६	१०	३५
कथा साहित्य	९५	०५	०६	११
नाटक	६३	०६	००	०८
ऐतिहासिक/वैचारिक	९४	२९	०९	१९०

इससे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि म. फुले तथा राजर्षि शाहू पर केवल ०२ और ०१ ही काव्य संकलन मिलते हैं। राजर्षि शाहू पर हिंदी में एक भी जीवनी नहीं मिलती तो मराठी-हिंदी दोनों भाषाओं में उन पर कोई नाटक नहीं लिखी गयी।

६७. साहित्य संमेलनों पर भी इन चार महापुरुषों का प्रभाव देखा जा सकता है। छत्रपति शिवाजी की प्रेरणा से ०१ म. फुले के प्रभाव से ०६ राजर्षि शाहू से प्रभावित ०१ तथा डॉ. आंबेडकर के प्रभाव से १५ साहित्य संमेलन होते हैं।

६८. म. फुले तथा डॉ. आंबेडकर को दलित साहित्य का प्रेरणा स्त्रोत माना जाता है। दलित साहित्य से प्रेरणा पाकर आदिवासी साहित्य, महिला लेखन निर्माण हो रहा है। इनके अपने स्वतंत्र साहित्य संमेलन हो रहे हैं।

६९. म. फुले तथा राजर्षि शाहू का प्रभाव महाराष्ट्र में अधिक दिखाई देता है परंतु छत्रपति शिवाजी तथा डॉ. आंबेडकर का प्रभाव देश-विदेश में भी देखा जा सकता है।

७०. छत्रपति शिवाजी, म. फुले, राजर्षि शाहू तथा डॉ. आंबेडकर इन चारों महापुरुषों का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव दिखाई देता है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा साहित्यिक सभी क्षेत्र पर इनकी अमिट छाप दिखाइ देती है। ये चारों महापुरुष आज भी प्रासंगिक और प्रेरणाप्रद हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ सूची

छत्रपति शिवाजी महाराज

मूल ग्रंथ (हिंदी)

१. गुर्ती सुब्रम्हण्यम, छत्रपति शिवाजी, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग (१९९७)

२. जोगळेकर काशीनाथ, शिवाजी, सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय, भारत सरकार (१९७२)

३. त्रिपाठी कालिकाप्रसाद,छत्रपति शिवाजी, बालभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (१९५७)

४. देसाई रणजीत, श्रीमान योगी, राधाकृष्ण प्रकाशन (२०१२)

५. नेने गो. प.,छत्रपति शिवाजी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (१९७४)

६. पुरंदरे बाबासाहेब, राजा शिवछत्रपति पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध, (अनूदित), आर्या पब्लिशिंग कंपनी

७. बेनीपुरी रामवृक्ष, शिवाजी, हिंदी साहित्य भंडार, तहेरीया (१९८२)

८. मिश्र लालजी, छत्रपति शिवाजी महाराज, सन्मती प्रकाशन, (१९९२)

९. लजपतराय लाला, छत्रपति शिवाजी, हिमाचल पुस्तक भंडार, (२००९)

१०. विद्यालंकार भीमसेन, शिवाजी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (१९६९)

११. विद्यांलकार सत्यकाम, शिवाजी, शिक्षा भारती प्रकाशन, दिल्ली (१९८७)

१२. शर्मा रामगोपाल, वीर शिरोमणी शिवाजी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (१९५९)

मूल ग्रंथ मराठी :

१३. देवळे शं. रा., छत्रपती शिवराय, कौस्तुभ प्रकाशन, नागपुर (१९९८)

१४. देसाई रणजीत, श्रीमान योगी, मेहता पब्लिशिंग हाऊस (१९६८)

१५. पाटील मदन, महाराज साहेब, स्वामी पब्लिकेशन्स, पुणे (२००७)

१६. पुरंदरे बाबासाहेब, राजा शिवछत्रपती पूर्वार्ध व उत्तरार्ध, पुरंदरे प्रकाशन, (२०१५)

१७. बेंद्रे वा. सी., छत्रपति शिवाजी महाराज पूर्वार्ध व उत्तरार्ध, पार्श्व प्रकाशन (२०१३)

१८. भावे वासुदेव, युगप्रवर्तक शिवाजी महाराज (यांचे चरित्र), वर्धा प्रकाशन (२००७)

१९. मेहेंदळे गजानन, शिवछत्रपतींचे आरमार, परम मित्र पब्लिकेशन्स (२०१०)

२०. मेहेंदळे गजानन, श्रीराजा शिवछत्रपति भाग १ व २, डायमंड पब्लिकेशन्स (२००८)

२१. रेणु सरण, छत्रपति शिवाजी, अंकुर प्रकाशन (२०१६)

२२. वाळींबे वि. स., श्री शिवराय, मोरया प्रकाशन, मुंबई (१९९५)

२३. सय्यद अमीन, सिकंदर सय्यद अमीन, महापुरुष छत्रपति शिवाजी, सांगली (१९७४)

२४. साने गुरुजी, स्वराज्य संस्थापक श्री शिवराय, साधना प्रकाशन, पुणे (१९९२)

२५. सोनावणे विलास, रयतेचा राजा छ. शिवाजी महाराज, लोकायत प्रकाशन, सातारा (२०१५)

२६. सभासद कृष्णाजी अनंत, सभासद बखर, वरदा प्रकाशन (२०२०)

२७. हारकारे अरुण, किर्तीवंत राजा, सत्यजय प्रकाशन, मुंबई (१९९९)

सहायक ग्रंथ : (हिंदी)

२८. गव्हाणे विष्णु, हिंदी और मराठी नाट्य साहित्य में अंकित छत्रपति शिवाजी का चरित्र चित्रण, शैलजा प्रकाशन, कानपुर (२०१२)

२९. दीक्षित भगीरथ प्रसाद, शिवाबावनी, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ (१९२३)

३०. पाटील कृष्णात, हिंदी उपन्यासों में छत्रपति शिवाजी, विद्या प्रकाशन, कानपुर (२०१३)

३१. भुपटकर प्र. रा., हिंदी और मराठी के ऐतिहासिक नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी (१९७०)

३२. मोरे वसंत, छ. शिवाजी की साहित्यिक प्रतिमा; कितनी सही कितनी प्रेरक, शिवसंग्राम प्रकाशन, कोल्हापुर (२००२)

३३. वाडेकर जयश्री, छत्रपति शिवाजी महाराज की सामाजिक चेतना, शुभम पब्लिकेशन (२०२०)

३४. शर्मा अनंत नारायण, राष्ट्रपुरुष : एक अनुशीलन, नवभारत प्रकाशन, पटना (१९७१)

३५. सय्यद अहमद इकबाल, औरंगजेब तथा शिवाजी, शुक्ल प्रकाशन मंदिर, जौनपुर (१९७५)

३६. सरकार सर जदुनाथ, शिवाजी और उनका युग, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, आग्रा (१९६४)

३७. सरदेसाई गोविंद सखाराम, मराठों का नवीन इतिहास, (१९७२)

३८. सिंह चंद्रावती, हिंदी साहित्य में जीवन चरित्र का विकास, इंडियन प्रेस इलाहाबाद (१९५८)

३९. सिंह शाम नारायण, हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यास, ग्रंथम प्रकाशन, कानपुर (१९७१)

४०. हार्डिकर श्रीनिवास, मराठा राज्य की स्थापना अथवा छत्रपति शिवाजी, नॅशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली (१९७२)

सहायक ग्रंथ (मराठी)

४१. कानेटकर वसंत, शिवशाहीचा शोध, प्रचूर्य प्रकाशन, मुंबई (१९९७)

४२. कुलकर्णी अ. रा.,असी होती शिवशाही, राजहंस प्रकाशन, पुणे (१९९९)

४३. कुलकर्णी डॉ. अ. रा., शिवकालीन महाराष्ट्र, राजहंस प्रकाशन (२०१२)

४४. ग्रॅट डफ (अनु. डेव्हीड केपन), मराठ्यांची बखर, वर्धा बुक्स (२०१५)

४५. दातार माधव, महाराष्ट्र, राजहंस प्रकाशन (२०१८)

४६. देशमुख मा.म., युगप्रवर्तक शिवराज आणि मराठ्यांची शौर्यगाथा, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर (१९६८)

४७. पगडी सेतु माधवराव, शिवचरित्र एक अभ्यास, शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापुर (१९७१)

४८. पाटील मदन, जिजाऊसाहेब, श्री स्वामी पब्लिकेशन्स, पुणे (२००७)

४९. पानसरे गोविंद, शिवाजी कोण होता? लोकवाङमय गृह (२०१६)

५०. भावे वा. कृ., महाराष्ट्राचा सामाजिक इतिहास : शिवकालीन महाराष्ट्र, वरदा प्रकाशन (२०१०)

५१. मढवी काशीनाथ, जगातील सर्वोत्तम राजा छत्रपति शिवाजी, संस्कृती प्रकाशन (२०१२)

५२. मोरे सदानंद, गर्जा महाराष्ट्र, सकाळ प्रकाशन (२०१३)

५३. मोहीते वीर, मराठ्यांच्या सांस्कृतिक क्रांतिचा इतिहास, जिजाई प्रकाशन (२००७)

५४. साळुंखे आ. ह., पुरंदरेची इतिहासद्रोही बखर, लोकायत प्रकाशन, (२०१६)

५५. साळुंखे नीरज, छत्रपति शिवाजी महाराजांचे साम्राज्य, लोकायत प्रकाशन, सातारा (२०१९)

महात्मा फुले

मूल ग्रंथ (हिंदी)

५६. आर्य जियालाल, जोतिपुंज महात्मा फुले, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली (२०१०)

५७. जगताप मुरलीधर, युगपुरुष महात्मा फुले, म. फुले चरित्र साधने प्रकाशन, समीती, मुंबई (१९९३)

५८. मेश्राम एल. जी., महात्मा जोतिबा फुले रचनावली भाग १ और २, राधाकृष्ण प्रकाशन (२०१५)

५९. शहा मु. ब.,भारतीय सामाजिक क्रांतीचे जनक, महात्मा जोतिबा फुले, राधाकृष्ण प्रकाशन (२००२)

मूल ग्रंथ (मराठी)

६०. कीर धनंजय, महात्मा जोतिराव फुले, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई (२००५)

६१. नरके हरी, महात्मा फुले समग्र वाङ्मय, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि सांस्कृतिक मंडळ (१९९)

६२. पाटील पंढरी, म. जोतीराव फुले यांचे चरित्र, साकेत प्रकाशन (२०१७)

६३. फुले म. जोतीबा, गुलामगिरी, कौशल्य प्रकाशन (२०१४)

६४. फुले म. जोतीबा, शेतकऱ्यांचा आसूड, कौशल्य प्रकाशन (२०१४)

सहायक ग्रंथ (हिंदी)

६५. जोशी लक्ष्मणशास्त्री, जोति चरित, (अनु. प्रशांत पांडे), नॅशनल बुक ट्रस्ट, २०१२

६६. जोंधे संजय, ज्योतिबा फुले : जीवन और विचार, दखल प्रकाशन, (२०१५)

६७. शेंडगे सुधाकर, म. कबीर और म. फुले, अतुल प्रकाशन, कुंज विहार, कानपुर (२०११)

सहायक ग्रंथ (मराठी)

६८. कीर धनजंय, महात्मा जोतिराव फुले, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई (२००८)

६९. कीर धनंजय, महात्मा जोतीराव फुले, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई (२०१५)

७०. कुऱ्हाडे शंकर, महात्मा फुले, साकेत प्रकाशन (२०१६)

७१. कोत्तापल्ले नागनाथ, शेतकऱ्यांचा आसूड, मेहता पब्लिशिंग हाऊस (२०१६)

७२. चव्हाण रा. ना., चव्हाण रमेश, म. फुले, सत्यशोधक समाज व सामाजिक प्रबोध, पुणे (२००९)

७३. जोशी लक्ष्मणशास्त्री, जोतिचरित्र, नॅशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (२००४)

७४. तुपेरे सारीपुत्र, आधुनिक भूमिपुत्र जोतिराव फुले आणि शेकऱ्यांचा आसूड,एक्सप्रेस पब्लिशिंग हाऊस, कोल्हापूर (२०१३)

७५. नरके हरी, आम्ही पाहिलेले महात्मा फुले, म. जोतिराव फुले चरित्र साधने प्रकाशन समीती, मुंबई (२०१८)

७६. नरके हरी, महात्मा फुले गौरव ग्रंथ, म. जोतिराव फुले चरित्र साधने प्रकाशन समीती, मुंबई (२०१८)

७७. नरके हरी, महात्मा फुले : साहित्य आणि चळवळ, म. जोतीराव फुले चरित्र साधने प्रकाशन समीती, मुंबई (२०१८)

७८. पाटील अजित, खरा महात्मा जोतिबा, सायन पब्लिकेशन्स (२०१४)

७९. भोळे भास्कर, महात्मा जोतिराव फुले, साहित्य अकादेमी (२०१७)

८०. वैद्य प्रभाकर, महात्मा फुले आणि त्यांची परंपरा, लोकवाङ्मय गृह (२०१६)

८१. सरदार गं. भा.,महात्मा फुले : व्यक्तित्व आणि विचार, सप्तश्री प्रकाशन (२०२०)

राजर्षि शाहू महाराज

मूल ग्रंथ (हिंदी) : छ. शाहू महाराजा की कोई जीवनी हिंदी में नहीं है।

८२. पवार जयसिंगराव, राजर्षि शाहू छत्रपति : एक समाजक्रांतिकारी राजा, अनुवाद पद्मा पाटील, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधिनी कोल्हापुर (२०१६)

मराठी

८३. कीर धनंजय, राजर्षी शाहू छत्रपती, पॉप्युलर, प्रकाशन, मुंबई (२०१६)

८४. जाधव रमेश, लोकराजा शाहू छत्रपति, सुरेश एजन्सी, पुणे (२०१५)

८५. पचिंद्रे श्रीराम, शाहू, अनुबंध प्रकाशन, पुणे (२०१०)

८६. पवार जयसिंगराव, राजर्षी शाहू छत्रपति ; जीवन व कार्य, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधीनी प्रकाशन (२०१२)

सहायक ग्रंथ (हिंदी)

८७. सिंह श्यामसुंदर, छत्रपति शाहू जी महाराज : संघर्ष और इतिहास, सम्यक प्रकाशन, (२०१६)

८८. संजीव, प्रत्यंचा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली (२०१९)

मराठी

८९. आंबेडकर बाळासाहेब, बहुजन चळवळ विचारसरणी आणि पक्षसंघटना, कौशल्य प्रकाशन (२०११)

९०. करपे आर. एन.,राजर्षी शाहू महाराज आणि वर्तमानातील संदर्भ, चिन्मय प्रकाशन (२०१२)

९१. कीर धनंजय, राजर्षी शाहू छत्रपती, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई, प्रथम संस्करण २००८

९२. चव्हाण रा. ना.,लोकनेते राजर्षी शाहू महाराज : काळ आणि कार्य, रमेश चव्हाण, पुणे (२०१३)

९३. चव्हाण वैशाली (संपादक), लोकनेते राजर्षी शाहू महाराज काळ आणि कार्य, कोथरुड प्रकाशन, पुणे प्रथम संस्करण २००२

९४. जोशीअ. म., प्रदक्षिणा : खंड पहिला, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे प्रथम संस्करण १९७८

९५. देसाई संजीव प. (संपादक), राजर्षी शाहू छत्रपतीचे निवडक आदेश भाग २, संचालक, पूराभिलेख विभाग, महाराष्ट्र शासन, एल्फिन्स्टन महाविद्यालय, मुंबई, प्र. संस्करण १९८९

९६. पवार जयसिंगराव (संपादक), राजर्षी शाहू गौरव ग्रंथ, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधिनी प्रकाशन, कोल्हापुर, प्रथम संस्करण २००१

९७. पवार जयसिंगराव, राजर्षी शाहू स्मारक ग्रंथ, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधीनी प्रकाशन, कोल्हापूर (२००७)

९८. पाटील पद्मा, कादम्बिनी, गंधबहार प्रकाशन, कोल्हापुर, प्रथम संस्करण १९९८

९९. पानसरे गोविंद, राजर्षी शाहू : वसा आणि वारसा, लोकवाङ्मय प्रकाशन, मुंबई, प्रथम संस्करण २००७

१००. बोरगावकर वसंतदा, प्राचीन मराठीतील चरित्र लेखन, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे, प्रथम संस्करण १९७२

१०१. भवर अशोक गोविंदराव, आधुनिक महाराष्ट्राचा उदय (१९१८-१९६०), कल्पना प्रकाशन, नांदेड, प्रथम संस्करण २००६

१०२. भोळे भा. ल., छत्रपती शाहू महाराज, श्रीगंधर्व प्रकाशन, प्रथम संस्करण २०१०

१०३. शिंदे, आरक्षण सत्य व विपर्यास, चिन्मय प्रकाशन, औरंगाबाद प्रथम संस्करण २००८

१०४. साळुंके आर. बी., राजर्षी शाहू गौरवग्रंथ, महाराष्ट्र राज्य शिक्षण संस्था, मुंबई

१०५. साळुंखे नानासाहेब, शाहूंच्या आठवणी, वृषाली प्रकाशन, प्रथम संस्करण, २०१५

बाबासाहेब आंबेडकर

मूल ग्रंथ (हिंदी)

१०६. कमाल के. एल.,कर्मयोगी आंबेडकर, कल्याणी शिक्षा परिषद (२०१२)

१०७. कीर धनंजय, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जीवन चरित, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई (२०१६)

१०८. भटनागर राजेंद्र मोहन, युगपुरुष आंबेडकर, राजपाल प्रकाशन (२००७)

१०९. मून वसंत, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, नॅशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (२०११)

११०. मेश्राम एल. जी., और बाबासाहेब ने कहा, १ से ५ खंड, राधाकृष्ण प्रकाशन (२०१५)

१११. लिंबाळे शरणकुमार, प्रज्ञासूर्य : डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, वाणी प्रकाशन (२०१३)

मराठी

११२. अिंगळे व. न.,असे घडले ज्ञानसूर्य, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, साकेत प्रकाशन (२०१३)

११३. आंबेडकर बी. आर.,बुद्ध आणि त्यांचा धम्म, आनंद प्रकाशन (२०१६)

११४. आंबेडकर बाबासाहेब, माझी आत्मकथा, कौशल्य प्रकाशन (२०१६)

११५. आंबेडकर सविता भीमराव, डॉ. बाबासाहेबांच्या सहवासात, तथागत प्रकाशन (२०१३)

११६. खरात शंकरराव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची पत्रे,इंद्रायणी साहित्य प्रकाशन, पुणे (२०१४)

११७. खरात शंकरराव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची आत्मकथा, इंद्रायणी साहित्य प्रकाशन, पुणे (२०१३)

११८. खैरमोडे चांगदेव, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर, (भाग १ ते १२), सुगावा प्रकाशन (२०१३)

११९. जाधव नरेंद्र, प्रज्ञासूर्य, डॉ. आंबेडकर, डॉ. नरेंद्र जाधव, ग्रंथाली प्रकाशन (२०१४)

हिंदी

१२०. धर्मवीर, डॉ. आंबेडकर के प्रशासनिक विचार, वाणी प्रकाशन (२०१५)

१२१. पालीवाल कृष्णदत्त, डॉ. आंबेडकर समाज-व्यवस्था और दलित-साहित्य, किताबघर, दिल्ली (२००७)

१२२. भाली एल. आर., डॉ. आंबेडकर : कलम का कमाल, भीम पत्रिका पब्लिकेशन्स (२०१४)

१२३. लुलेकर प्रल्हाद, गैर दलितों के भी उद्धारक : बाबासाहेब, मूल लेखक डॉ. आंबेडकर, (अनूदित), सम्यक प्रकाशन (२०१३)

१२४. विश्वास नितीश, राष्ट्रनेता : डॉ. बी. आर. आंबेडकर, वाणी प्रकाशन (२०१४)

१२५. श्यामलाल, आंबेडकर और दलित आंदोलन, रावत पब्लिकेशन्स (२०१५)

१२६. सिंह मोहन, डॉ. भीमराव आंबेडकर : व्यक्तित्व के कुछ पहलु, लोकभारती प्रकाशन (२०१४)

सहायक ग्रंथ (मराठी):

१२७. आगलावे प्रदीप, समाजशास्त्रज्ञ डॉ. आंबेडकर, सुगावा प्रकाशन (२००९)

१२८. आल्टे इंद्राजित, अर्थशास्त्रज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१२९. एरंडे व्ही. एल., राज्यशास्त्रज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३०. कटारे मोतीराम, फुले आंबेडकरी चळवळ आणि साहित्य चिंतन, गोदा प्रकाशन (२०१३)

१३१. खराट संभाजी, प्रशासक डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३२. खरे विजय, अंतर्गत सुरक्षातज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३३. खरे विजय, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि राष्ट्रीय सुरक्षा, सुगावा प्रकाशन (२०१०)

१३४. खरे विजय, संरक्षणतज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३५. खेर भा. द., प्रबुद्ध, अमोल पब्लिकिशंग हाऊस, पुणे (२०१८)

१३६. गायकवाड दत्तात्रय, जलतज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३७. गायकवाड ज्ञानराजा, दलितांचे व राष्ट्राचे हितकर्ते डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१३८. गायकवाड ज्ञानराज, महामानव डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर, रिया पब्लिकेशन्स (२०१३)

१३९. घोडेस्वार राम, चैत्यभूमी, बहुजन साहित्य प्रसार केंद्र (२०१५)

१४०. चोपडे बी. ए., संपा. नवयुगनिर्माते : भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, कैलाश पब्लिकेशन्स, औरंगाबाद (२०१६)

१४१. चौधरी राजेश, भारताचे संविधान, चौधरी लॉ पब्लिशर्स (२०१६)

१४२. जाधव नरेंद्र, बोल महामानवाचे (खंड २ व ३), ग्रंथाली प्रकाशन (२०१२)

१४३. जाधव मधुकर, आंबेडकरी चळवळ आणि समकालीन विचार, गोदा प्रकाशन (२०१३)

१४४. ढसाळ नामदेव, आंबेडकरी चळवळ आणि सोशालिस्ट कम्युनिष्ट, शब्द पब्लिकेशन (२०१५)

१४५. नाईकवाडे अशोक, भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, विद्याभारती प्रकाशन (२०१२)

१४६. निकम श्रीराम, गांधी-आंबेडकर, लोकवाङ्मय गृह (२०१७)

१४७. पठाण यू. म., द्रष्टे शिक्षणतज्ञ डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, नॉलेज मिशन प्रकाशन, (२०१६)

१४८. पवार दया, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर गौरव ग्रंथ, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडळ, मुंबई (१९९९)

१४९. फडके य. दि., डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि काळाराम मंदीर सत्याग्रह, सुगावा प्रकाशन (२०१४)

१५०. बागुल योगीराज,डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि त्यांचे दलितेत्तर सहकारी (भाग १), ग्रंथाली प्रकाशन (२०१५)

१५१. मनोहर यशवंत, नवसंस्कृतीचे जनक डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१५२. रतु नानक चंद, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : अनुभव आठवणी, साकेत प्रकाशन (२०१८)

१५३. लिंबाळे शरणकुमार, प्रज्ञासूर्य, दिलीपराज प्रकाशन (२०१४)

१५४. लिंबाळे शरणकुमार, शतकातील दलित विचार, दिलीपराज प्रकाशन (२००७)

१५५. विद्यार्थी डॉ. आंबेडकर, डॉ. विजयकुमार पोटे, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन (२०१६)

१५६. शहापूरकर भूषण, राष्ट्रभक्त डॉ. आंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नॉलेज मिशन प्रकाशन, (२०१६)

१५७. सुरवाडे विजय, समकालीन सह. आठवणीतील डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, लोकवाङ्मय गृह (२०१४)

१५८. सूर्या अनील, आंबेडकरी स्वकथने : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, सुगावा प्रकाशन (१९९६)

१५९. सौताडेकर विवेक, महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, विद्याभारती प्रकाशन (२०१६)

पत्रिकाएँ

१. अखिलेश, तद्भव, १८/२०१, इंदिरा नगर, लखनऊ २२६०१६ उत्तर प्रदेश

२. आर्डे व. रा., अंधश्रद्धा निर्मूलन वार्तापत्र, सहारा चौक, संजयनगर, सांगली

३. त्रिपाठी ब्रजेंद्र, समकालीन भारतीय साहित्य –साहित्य अकादेमी, रवींद्र भवन, ३५ फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली ११०००१

४. लीलाधर मंडलोई, नया ज्ञानोदय, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

५. नवल हरीश, गगनांचल, भारतीय संस्कृति संबंध परिषद, नई दिल्ली

६. परिवर्तनाचा वाटसरु, गणेशनगर, येरवडा, पुणे

७. भारद्वाज प्रेम, पाखी, बी-१०७, सेक्टर ६-३, नोएडा २०१३०३ उ.प्र.

८. मिश्रा अशोक, बहुवचन, म. गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)

९. वाक्, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

१०. शंभुनाथ, वागर्थ, भारतीय भाषा परिषद, ३६ ए, शेक्सपियर सरणी, कोलकाता

११. वाजपेयी लक्ष्मीशंकर, साहित्य अमृत, आसफ अली रोड, नई दिल्ली ११०००२

१२. शंकर, परिकथा, ९६, बेसमेंट फेज ३, इरोज गार्डन, सूरजकुंड रोड, नई दिल्ली ११००४४

१३. सहाय संजय, हंस, अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. २/३६, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-२

१४. सिंह विक्रमादित्य, सरस्वती सुमन, १, छिब्बर मार्ग, आर्य नगर, देहरादून, २४८००१

वेबसाईटस् :

1. www.wikipedia.org
2. www.mr.vikaspedia.in
3. www.bookganga.com
4. www.hindi.webdunia.com
5. www.marathi.webdunia.com
6. www.mr.m.wikipedia.org
7. www.shodhganga.inflibnet.ac.in